Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GYANODAYA SEP-DEC 1967 G.K.U.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविताएँ, भँवरमल सिंघीका लेख व ममता कालियाकी कहानी विशेष उल्लेखनीय हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ चिट्ठियाँ....

[हर्षवदन शाह : गोल्डन बीयर-के पुरस्कार-विजेता श्री एम० एफ़० हुसैनसे लिये गये प्रेमचन्द गोस्वामीकी भेंट-वार्ताके सामयिक प्रकाशनके लिए बधाई।
—अहमदाबाद]

[प्रेम चन्द चन्दोला : जाने क्यों अगस्तका ज्ञानोदय बहुत भाया। बाहरी और भीतरी सज्जा दोनोंने खूब आकर्षित किया। परिवर्तनके परिवर्तनका निखार झलकने लगा है। अबके सभी उच्चकोटिके लेखोंके लिए साधुवाद। कहीं-कहीं रचनाओंके प्रारम्भ और बॉक्समें प्रयुक्त नया और नन्हा टाइप बहुत प्यारा लगा। सच, श्रीराम वर्माकी कविताएँ वक्तव्यके अभावमें अटपटी लगतीं। पुराने नामों और लम्बी कविताने प्रभावित नहीं किया। पुष्प-धन्वाका 'बोलते प्रतिबिम्ब' स्तम्भ अच्छी सूझ और सुन्दर संचय है। 'एक पत्थर-दो पत्थर-तीन पत्थर'का अभाव घर-भरमें खटका। उत्सुकता लम्बी खिंच गयी है। हुसैनके इण्टरव्यूसे कलाके समसामयिक पक्षोंकी काफ़ी जानकारी मिलती है। 'क्रॉस सैक्शन'से परिलक्षित होता है कि मराठी युवालेखन काफ़ी सजग है।
—नयी दिल्ली]

[मोहनजीत : 'लंच-टाइम' निश्चय ही एक अद्भुत रचना है। कृतिकी प्रशंसाके लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। इसे पढ़ते समय मुझे अल्बेयर कामूके 'क्रास परपजेज़'की याद हो आयी। आजके मानवकी क्रूरता और खोखलेपनकी संवेदनाका चित्रण एकांकीका सौन्दर्य और वैशिष्ट्य है।
—अमृतसर]

[घनश्याम रंजन : कृश्नचन्दरजीका 'एक पत्थर-दो पत्थर-तीन पत्थर' अच्छा चल रहा है। शम्भूनाथ सिंहका एकांकी बड़ा सशक्त है।
—लखनऊ]

[स्वर्णकिरण : ज्ञानोदयके पिछले जितने अंक देख सका हूँ उन सबसे जुलाई '६७ का प्रस्तुत अंक बीस प्रतीत हुआ। कुरूप वर्तमानका उच्छृंखल स्वीकार, भोगे हुए क्षणोंका प्रस्तुतीकरण, परम्परा-विद्रोह, नवता-मोह आदिका प्रतिबिम्ब अधिकांश रचनाओंमें दीखता है, जो शुभ है। पहले भँवरमल सिन्घीको 'कला, अ-कला और अश्लीलता' के [illegible] विचारोत्तेजक सामग्रीके प्रस्तुतीकरणके लिए बधाई। लेख पढ़[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेना चाहिए। उदाहरणार्थ, मैं अज्ञेयके कथनको कि 'पूरा देखना अश्लील नहीं, अधूरा देखना अश्लील है और अश्लीलताका प्रश्न समाज-दर्शन, नीति-जगत्, धर्म-क्षेत्रका प्रश्न है न कि साहित्य और कला-जगत्का—' अश्लीलताका मापक समझता था जो कदाचित् देश और कालकी सीमाओंसे आबद्ध होनेके कारण संशोधनकी अपेक्षा रखता है। सिंघीजीने लैनर कैण्डलकी प्रेम-कविता पुस्तकका हवाला देकर—पुस्तकके वर्ण्य-विषय 'सारा ब्रह्माण्ड एक मैथुन प्रक्रिया है' को सामने रखकर—अश्लीलताकी ओर जो अंगुलि-निर्देश किया है कि इसपर सैन-फ्रैंसिसकोके न्यायालय-द्वारा मुक़दमा चलाया जा रहा है, एक सुधी विचारक वस्तुतः स्तम्भित हो सकता है कि ऐसा क्यों? इन्होंने ठीक ही बतलाया है कि पश्चिमकी स्वतन्त्रतामें भी एक छलना है, आत्मप्रवंचना है। रमेश कुन्तल मेघ चिन्तनकी ताज़गी लिये हुए 'अस्वीकृतिका अकाव्यात्मक काव्यशास्त्र' काव्यात्मक शैलीमें आजकी साम्प्रतिक कविता और कविके उच्छृंखल वर्तमान-प्रेमको रेखांकित करते हैं। कविताओंमें अजितकुमारकी 'असफलता' वीरेन्द्र मिश्रकी 'छन्न' तथा भवानीप्रसाद मिश्रकी 'शरीर और सपना' मुझको विशेष प्रभावित कर सका। कथन-उपकथन 'हज़ार मौतें—एक अपराजित हस्ताक्षर : फ्रांज काफ़्का' रेखाचित्रात्मक अच्छी ही हैं। कहानियाँ भी अच्छी ही हैं, खासकर सुदर्शन चोपड़ाकी कहानी 'खास पाहुना', यहाँ खास पाहुना बाऊजीका अन्त आँसू तहसीलता है, हरवंश और रीनाके चरित्र भी बड़े सशक्त बन पड़े हैं। मुझे शिकायत है तो कहानियोंमें यत्र-तत्र घुसेड़े गये व्यर्थके अँगरेज़ी शब्दोंके प्रयोगसे। —पटना]

●

[रामप्रकाश वर्मा : जुलाई मासका ज्ञानोदय विशेष रूपसे रोचक लगा। अमृता प्रीतमकी 'कैनीका सफ़र' अबतक पढ़ी कुछ सबसे अच्छी कहानियोंमें-से है। और कहानियाँ भी सुन्दर हैं। लगता है, वे रोचकताके क्रममें लगी हैं, क्योंकि 'बच्चा' तक पहुँचकर कहानी ढीली पड़ जाती है। कथन-उपकथनके अन्तर्गत आपके द्वारा प्रस्तुत 'हज़ार मौतें : एक अपराजित हस्ताक्षर' भी बहुत रोचक था। १९६६ के हिन्दी उपन्यासपर चर्चाकी प्रथम क़िस्त उबाने-वाली लगी, सम्पादकीय नोटके शब्दोंमें वह पूर्वग्रहीत और इन्वाल्वड् तो थी ही, प्रेमचन्दका अत्यधिक उल्लेख उसे और भी बोझिल बना देता है। 'वर्षा-मंगल' कोशिश करनेपर भी नहीं पढ़ सका। —बम्बई]

●

[चक्रधर नलिन : इधर ज्ञानोदयकी साहित्यिक सामग्री बहुत भा रही है। मुख-पृष्ठों एवं छाया-रेखांकनका तो कहना ही क्या। जुलाईके अंकमें, वीरेन्द्रजी एवं भवानीप्रसाद मिश्रकी कविताएँ, भँवरमल सिंघीका लेख व ममता कालियाकी कहानी विशेष उल्लेखनीय हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ चिट्ठियाँ....

[हर्षवदन शाह : गोल्डन बीयर-के पुरस्कार-विजेता श्री एम० एफ़० हुसैनसे लिये गये प्रेमचन्द गोस्वामीकी भेंट-वार्ताके सामयिक प्रकाशनके लिए बधाई।
—अहमदाबाद]

[प्रेम चन्द चन्दोला : जाने क्यों अगस्तका ज्ञानोदय बहुत भाया। बाहरी और भीतरी सज्जा दोनोंने खूब आकर्षित किया। परिवर्तनके परिवर्तनका निखार झलकने लगा है। अबके सभी उच्चकोटिके लेखोंके लिए साधुवाद। कहीं-कहीं रचनाओंके प्रारम्भ और बॉक्समें प्रयुक्त नया और नन्हा टाइप बहुत प्यारा लगा। सच, श्रीराम वर्माकी कविताएँ वक्तव्यके अभावमें अटपटी लगतीं। पुराने नामों और लम्बी कविताने प्रभावित नहीं किया। पुष्प-धन्वाका 'बोलते प्रतिबिम्ब' स्तम्भ अच्छी सूझ और सुन्दर संचय है। 'एक पत्थर-दो पत्थर-तीन पत्थर'का अभाव घर-भरमें खटका। उत्सुकता लम्बी खिंच गयी है। हुसैनके इण्टरव्यूसे कलाके समसामयिक पक्षोंकी काफ़ी जानकारी मिलती है। 'क्रॉस सैक्शन'से परिलक्षित होता है कि मराठी युवालेखन काफ़ी सजग है।
—नयी दिल्ली]

[मोहनजीत : 'लंच-टाइम' निश्चय ही एक अद्भुत रचना है। कृतिकी प्रशंसाके लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। इसे पढ़ते समय मुझे अल्बेयर कामूके 'क्रास परपजेज'की याद हो आयी। आजके मानवकी क्रूरता और खोखलेपनकी संवेदनाका चित्रण एकांकीका सौन्दर्य और वैशिष्ट्य है।
—अमृतसर]

[घनश्याम रंजन : कृश्नचन्दरजीका 'एक पत्थर-दो पत्थर-तीन पत्थर' अच्छा चल रहा है। शम्भूनाथ सिंहका एकांकी बड़ा सशक्त है।
—लखनऊ]

[स्वर्णकिरण : ज्ञानोदयके पिछले जितने अंक देख सका हूँ उन सबसे जुलाई '६७ का प्रस्तुत अंक बीस प्रतीत हुआ। कुरूप वर्तमानका उच्छृंखल स्वीकार, भोगे हुए क्षणोंका प्रस्तुतीकरण, परम्परा-विद्रोह, नवता-मोह आदिका प्रतिबिम्ब अधिकांश रचनाओंमें दीखता है, जो शुभ है। पहले भँवरमल सिन्घीको 'कला, अ-कला और अश्लीलता' के [illegible] विचारोत्तेजक सामग्रीके प्रस्तुतीकरणके लिए बधाई। लेख पढ़[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेना चाहिए। उदाहरणार्थ, मैं अज्ञेयके कथनको कि 'पूरा देखना अश्लील नहीं, अधूरा देखना अश्लील है और अश्लीलताका प्रश्न समाज-दर्शन, नीति-जगत्, धर्म-क्षेत्रका प्रश्न है न कि साहित्य और कला-जगत्का—' अश्लीलताका मापक समझता था जो कदाचित् देश और कालकी सीमाओंसे आबद्ध होनेके कारण संशोधनकी अपेक्षा रखता है। सिंघीजीने लैनर कैण्डलकी प्रेम-कविता पुस्तकका हवाला देकर—पुस्तकके वर्ण्य-विषय 'सारा ब्रह्माण्ड एक मैथुन प्रक्रिया है' को सामने रखकर—अश्लीलताकी ओर जो अंगुलि-निर्देश किया है कि इसपर सैन-फ्रैंसिसकोके न्यायालय-द्वारा मुक़दमा चलाया जा रहा है, एक सुधी विचारक वस्तुतः स्तम्भित हो सकता है कि ऐसा क्यों? इन्होंने ठीक ही बतलाया है कि पश्चिमकी स्वतन्त्रतामें भी एक छलना है, आत्मप्रवंचना है। रमेश कुन्तल मेघ चिन्तनकी ताज़गी लिये हुए 'अस्वीकृतिका अकाव्यात्मक काव्यशास्त्र' काव्यात्मक शैलीमें आजकी साम्प्रतिक कविता और कविके उच्छृंखल वर्तमान-प्रेमको रेखांकित करते हैं। कविताओंमें अजितकुमारकी 'असफलता' वीरेन्द्र मिश्रकी 'छन्न' तथा भवानीप्रसाद मिश्रकी 'शरीर और सपना' मुझको विशेष प्रभावित कर सका। कथन-उपकथन 'हज़ार मौतें—एक अपराजित हस्ताक्षर : फ़ांज काफ़्का' रेखाचित्रात्मक अच्छी ही हैं। कहानियाँ भी अच्छी ही हैं, खासकर सुदर्शन चोपड़ाकी कहानी 'खास पाहुना', यहाँ खास पाहुना बाऊजीका अन्त आँसू तहसीलता है, हरवंश और रीनाके चरित्र भी बड़े सशक्त बन पड़े हैं। मुझे शिकायत है तो कहानियोंमें यत्र-तत्र घुसेड़े गये व्यर्थके अँगरेज़ी शब्दोंके प्रयोगसे। —पटना]

●

[रामप्रकाश वर्मा : जुलाई मासका ज्ञानोदय विशेष रूपसे रोचक लगा। अमृता प्रीतमकी 'कैनीका सफ़र' अबतक पढ़ी कुछ सबसे अच्छी कहानियोंमें-से है। और कहानियाँ भी सुन्दर हैं। लगता है, वे रोचकताके क्रममें लगी हैं, क्योंकि 'बच्चा' तक पहुँचकर कहानी ढीली पड़ जाती है। कथन-उपकथनके अन्तर्गत आपके द्वारा प्रस्तुत 'हज़ार मौतें : एक अपराजित हस्ताक्षर' भी बहुत रोचक था। १९६६ के हिन्दी उपन्यासपर चर्चाकी प्रथम क़िस्त उबाने-वाली लगी, सम्पादकीय नोटके शब्दोंमें वह पूर्वग्रहीत और इन्वाल्वड् तो थी ही, प्रेमचन्दका अत्यधिक उल्लेख उसे और भी बोझिल बना देता है। 'वर्षा-मंगल' कोशिश करनेपर भी नहीं पढ़ सका। —बम्बई]

●

[चक्रधर नलिन : इधर ज्ञानोदयकी साहित्यिक सामग्री बहुत भा रही है। मुख-पृष्ठों एवं छाया-रेखांकनका तो कहना ही क्या। जुलाईके अंकमें, वीरेन्द्रजी एवं भवानीप्रसाद मिश्रकी कविताएँ, भँवरमल सिंघीका लेख व ममता कालियाकी कहानी विशेष उल्लेखनीय हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छा होता, आप विदेशी भाषाओंकी सामान्य गतिविधियों, [illegible]कारों, साहित्यिक आयोजनों तथा महत्त्वपूर्ण प्रकाशनोंसे मेरे-जैसे व्यक्तियोंको भी परिचय देते रहते तथा उसके लिए एक कॉलम स्थायी रूपसे कर देते ।
—रायबरेली]

●

[पुरुषोत्तमलाल खेतान : युवालेखन : ५—उर्दू, पिछली परम्परामें बहुत ही लचर है और सम्पादककी व्यक्तिगत रोमाण्टिकताने ही शायद चयनमें भूलालिंगन कर लिया है । सभी कविताएँ ले-देकर रोमाण्टिक न होनेकी सायास कोशिशमें रोमाण्टिक हो जानेकी नियतिसे संकुचित अवबोधका कंकाल मात्र बनकर रह गयी है। असग़र शरीफ़की पहली ही कहानी इस योग्य थी कि उसे कहानियोंके ढेरसे अलग किया जा सके—इस स्थापनासे बुद्धिका सहमत होना क़तई ज़रूरी नहीं है । ज़रा यह भी बतानेकी कोशिश करें कि नाखूनोंके बढ़ने या कटवाने, दोनों स्थितियोंमें विशेषता आखिर किसमें होती है : यदि आधुनिकताके स्वास्थ्यकी दृष्टिसे एक कुशल नापितकी निर्मोह यत्नशीलतासे तथाकथित इस प्राचीन पुंगव कहानी-नाखूनको सम्पादक काट ही देते तो क्या उनकी और नवोन्मेषातुर हिन्दी पाठककी रुचिमें कोई खींचातानी हो जाती ? कुल मिलाकर यह उर्दू कहानी आजके परिवेशसे कटकर अपने लिजलिजे वंशानुक्रम संस्कारसे अधिकाधिक सम्पृक्त है, निरर्थक भी ।
—कलकत्ता]

●

[रामकुमार भ्रमर : मूल खोज यह नहीं की जानी है कि 'ज्ञानोदय'के जुलाई-अगस्त अंकोंमें प्रकाशित लेख १९६६ के हिन्दी उपन्यास: शीर्षकहीन चर्चामें जिन उपन्यासों व 'औपन्यासिक भ्रमों' की चर्चा की गयी है, उनकी सूची आलोचकने स्वयं तैयार की थी या उसे वह सम्पादककी ओरसे प्राप्त हुई थी । विचार उसपर होना है, जो सामने है । यहाँ चर्चित दोनों लेखोंके चर्चक महाशय जब भी और जहाँ भी कुछ लिखते हैं, वह पूर्वाग्रही और इन्वाल्व्ड ही होते हैं । 'ज्ञानोदय'-सम्पादकको उन्हें छूट देनेकी आवश्यकता थी क्या ? वह तो पूर्वाग्रही और इन्वाल्व्ड होते ही । इस पूर्वाग्रहके ढाँकनेके तरीक़े भी उनके अपने हैं । जुलाई अंकमें उन्होंने लिखा है कि उपन्यासको उपन्यास होना चाहिए, न कि उपन्यास-जैसी कोई सम्भावना या भ्रम''''। अब यह चर्चककी मर्ज़ी है कि किस औपन्यासिक भ्रमको उपन्यास कह दे और किस उपन्यासको भ्रम कहकर लुप्त कर दे । चर्चकके अनुसार 'मन वृन्दाबन' (लक्ष्मीनारायण लाल) उपन्यास है, 'वे दिन' (निर्मल वर्मा) औपन्यासिक भ्रम ।
—नयी दिल्ली]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यक
तथा
की]

और
सभी
तिसे
इस
होना
ाने,
ष्टिसे
नको
कोई
अपने
त्ता]

कोंमें
औप-
वह
दोनों
ल्ड
पूर्वा-
ुलाई
कोई
न्यास
बन'

की]

ज्ञानोदय

ज्ञानोदयका वार्षिक विशेषांक
पूजा-दिवालीके अवसरपर–
"शेष शताब्दी विशेषांक"
नवम्बर १९६७
""इस शेष शताब्दीके भविष्य, बहुआयामी
रोमांचक कल्पनाएँ-सम्भावनाएँ""
विशेषांकसे ग्राहक बननेवालोंको
विशेष सुविधा
पृष्ठ : लगभग ३०० :: मूल्य : ३ रुपये

रामजाने जी

निम्नांकित नम्बर तथा दिनांकके अनुसार मनोआर्डरसे १५.००/चेकसे बैंक-कमीशन सहित १६.०० भेज दिये हैं। कृपया मुझे 'शेष शताब्दी विशेषांक' नवम्बर १९६७ से ग्राहक बना लीजिए तथा विशेष उपहार-योजनानुसार निम्नलिखित सामग्री उपर्युक्त शुल्कमें भेजिए—

१.	'शेष शताब्दी विशेषांक'	३.००
२.	दिसम्बर १९६७ से अक्तूबर १९६८ तकके ११ अंक	१६.५०
३.	महानगर विशेषांक १–२ (अथवा कोई पुराना उपलब्ध विशेषांक)	४.००
		२३.५०

नाम..

पता..

....

मनीआर्डर-रसीद/चेक-नम्बर ....
दिनांक..........................

हस्ताक्षर ....

वार्षिक विशेषांक
नवम्बर १९६७
पृष्ठ : ३००
मूल्य : ३.००
वार्षिक : १५.००

२५ अक्तूबर '६७ को प्रकाश्य

। रि । क । ल्प । ना

। दो-तिहाई रास्ता : एक नहीं
की-रशियन शक्तियोंके सामर्थ्य-
हायड्रोजन बमके दुधारे हथियारके
की तरह चन्द्रलोककी ओर उठते
कुहरा, मशीन आटोमटन और
दूसरी ओर उसका अवमूल्यन,
संयुक्त राष्ट्रसंघका रेफ़रीकी
लियत—अपनी लाठीके बल अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रवि	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
०	०	०	०	०	१	२
३	४	५	६	७	८	९
१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०

व्यवस्थापक,
मासिक 'ज्ञानोदय',
९, अलीपुर पार्क प्लेस,
कलकत्ता-२७
CALCUTTA-27
(INDIA)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक विशेषांक
नवम्बर १९६७
पृष्ठ : ३००
मूल्य : ३.००
वार्षिक : १५.००

'शेष शताब्दी विशेषांक'

२५ अक्तूबर '६७ को प्रकाश्य

प । रि । क । ल्प । ना

हम जिस तारीखपर खड़े हैं उसके पीछे है बीसवीं शताब्दीका दो-तिहाई रास्ता : एक नहीं दो—भयंकर विश्व युद्धोंका तूफ़ान, पूर्व-पश्चिम तथा अमेरिकी-रशियन शक्तियोंके सामर्थ्य-साधनकी प्रतिद्वन्द्विताके बीच तीसरे विश्वयुद्धका खतरा, एटम-हायड्रोजन बमके दुधारे हथियारके छूट गिरनेका हॉरर, विज्ञानके हाथों चमत्कारोंकी आतिशबाजीकी तरह चन्द्रलोककी ओर उठते स्पुतनिक, मानवीयता और भावनाके लोकपर जमता हुआ कुहरा, मशीन आटोमटन और कम्प्यूटरके सामने एक ओर मानव-क्षमता और क्षिप्रता तो दूसरी ओर उसका अवमूल्यन, गुलामीकी सलाखोंको तोड़कर अपना परचम फहराते देश, संयुक्त राष्ट्रसंघका रेफ़रीकी तरह युद्धको बचाये रखनेवाला यत्न—कुछ अभिनय, कुछ असलियत—अपनी लाठीके बल अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी दुनियाको जीत लेनेका दम्भ करनेवाले देश, हिटलर-मुसोलिनीकी तानाशाही और हिरोशिमाका ध्वस्त खण्डहर''''सामाजिक सन्दर्भोंके बीच टूटता और जूझता हुआ आदमी, परिवारके बदलते हुए परिवेश, फ़ैशनकी दुनियामें स्ट्रिपटीज़के करिश्मे''''एक जीवन शराब-खोरी और अनैतिक मान्यताओंका, एक और जीवन ज़िम्मेदारी, संघर्ष और कौलेप्सका'''' 'तरक़्क़ी' की काया इतनी ऊँची कि लोकालोकके पार सिर उठाये खड़ी है, 'तनज्जुली' की खाई इतनी गहरी कि ऊपरके लोकालोक भी उसमें विलीन हो जायें।

और इस दो-तिहाई रास्तेके आगे शताब्दीका वह एक-तिहाई रास्ता शेष है जहाँ उत्थान और पतन, निर्माण और विनाश दोनोंकी अकूती सम्भावनाएँ हैं। न हमने कलियुगको सामने रखा है, न ही जार्ज आरवेलकी तरह सोचा कि एक समयावधिके बाद क्या होगा, हमने वर्तमानको सामने रखकर "शेष शताब्दी"की परिकल्पना की है कि अगले ३३ वर्षोंमें क्या-क्या होता जायेगा, या क्यासे क्या हो जानेकी सम्भावना है। भविष्यकी बात ज़रूर की जा रही है लेकिन दृष्टि सुदूर भविष्यपर नहीं, निकट भविष्यपर है जिसका वर्तमानसे आत्मीय सम्बन्ध है और जहाँ वायवी कल्पनाको कोई स्थान नहीं है।''''

बीते हुए दो-तिहाई समयके अन्धकार-पक्षको देखते हैं तो भविष्यपर, दुर्भाग्यकी तरह घिरती भयावहतापर पहले आँखें ठहरती हैं लेकिन आदमीकी शक्ति और शाश्वत प्रगति-शीलताको दृष्टिमें रखकर जब सामनेकी तरफ़ देखते हैं तो आँखें चमकने लगती हैं : यह लाल बटनका आंतक समाप्त होकर रहेगा'''ये गृह-युद्ध और शीत-युद्ध आगे चलकर दम तोड़ देंगे''''दुनिया दूरीकी दृष्टिसे और भी छोटी होती जायेगी और सीमाकी दृष्टिसे विस्तृत''''। अपना यह देश हज़ार रंग बदलेगा : इसी शताब्दीमें अभी छह आमचुनाव और होने हैं'''यदि वर्तमान संविधानकी लीकपर ही सोचते चलें, तो—इसी शताब्दीमें देशकी आबादी ५५ से ९५ करोड़ हो जानी है। इसी शताब्दीमें अभी तीन दशक और दिशा-परिवर्तनके लिए आनेवाले हैं''''उस युगके दशक जहाँ एक दशकमें इतने परिवर्तन हो सकते हैं जो पिछली शताब्दीके १०० वर्षोंमें भी न हुए हों।

इसी तारीखपर बदलते देश और देशोंके नक्शे, कल्पित और अकल्पित समाज, नये विक-सित होते परिवार, बदलते हुए नाते-रिश्ते, प्रणय और परिणयके कायाकल्प, निरन्तर विस्तृत होती दूरदृष्टिकी कल्पना करते सहसा रोमांच हो आता है। भविष्यके बारेमें सोचते, आँखोंमें कोलम्बस-सी क्षमता आ जाती है। "शेष शताब्दी"की परिकल्पना इसी निकट भविष्यकी पूर्विका है।''''हमें इसकी चिन्ता नहीं कि यह सामग्री-संयोजन ब्ल्यु प्रिण्ट-जैसा लगेगा या यूटोपिया-जैसा। हमारे प्रयासमें न अतीतको नकारा गया है, न ही वर्तमानको लाँघनेकी कोशिश की गयी है, न ही कोई भविष्यवाणी ही इसमें संकलित की गयी है—हाँ, आपको ऐसे बिन्दुपर ज़रूर खड़ा कर दिया गया है जहाँसे आप अगले एक-तिहाईको देखनेका प्रयत्न कर सकें,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजके उस परिवेशमें जिसके सैकड़ों चौराहोंपर हज़ार-हज़ार मार्गसंकेत, तीर-चिह्नोंके नियोन जगमगा रहे हैं कि इन संकेत-सूचक प्रकाश-चिह्नोंको पीठ देकर उन शिखरोंकी ओर बढ़ें जो रहस्यमय हैं, अजाने हैं और जिनपर डग भरनेका रोमांच तेनजिंग और हिलेरीकी अनुभूतियोंका रूपान्तरण है।....

प्र। मु। ख। शी। र्ष। क

■ **विविध दृष्टि :** ० एक तिहाईके पीछे दो तिहाई : बीसवीं शताब्दीके ६७ वर्षोंका एक संक्षिप्त सिंहावलोकन ० इक्कीसवीं शताब्दीके प्रथम दिन : मेरी कल्पनाका विश्व एक प्रश्न-रेखासे कटा हुआ विश्व ० अगले तीन दशकोंका देश : १० प्रश्न, १० व्यक्ति ० आँखों-आँखोंका खेल : एक चित्र-कथा ० बग़ैर आँखोंके सपने : कुछ अमूर्त चित्रोंके करिश्मे ० चलता हुआ इण्टरव्यू : अपने-अपने-सपने (भाँति-भाँतिके लोगोंसे भेंट—केन्द्रीय मन्त्रीसे म्युनिसपैलिटीके मेहतर तक, ज्योतिषीसे जेबकतरे तक—कि शेष शताब्दीमें क्या होगा ?) ■ **राजनीतिक कोण :** ० अगले युद्ध—ठण्डे और गरम ० भविष्यका फलाफल : भारतकी जन्मपत्री ० 'पलमें परलै होयगी' : ० जो सोचा था—ग़लत ! अब जो सोचता हूँ—वह ?.... ■ **वही घर : वही समाज :** ० सबके मर जानेपर एक ख़त ० शताब्दीके अन्तिम मनु : नयी समाज-व्यवस्था ० इकतीस दिसम्बर १९९९ के दिन : एक लड़कीकी डायरी ० अपने कटघरे : एक निराशावादीका आकाशभाषित ० फ़ैशनके नये कट : एक प्रदर्शनीकी रिपोर्ट ० 'यन्नवतामुपैति': मिस वर्ल्ड—२०००का प्रेस-वक्तव्य ० नीत्शे : अन्तिम पलायन तक... ■ **समस्याएँ :** ० नये भाषा-फ़ार्मूले : सोचें तो ! ० 'घेराव' का अगला अध्याय : समूह-शक्तिके नये ब्रह्मास्त्र ० अहम् मसले थे ही नहीं ० साझा बाज़ार दुनियाका.... ■ **एकांकी :** ० डूबती हुई धरती ० एक और सोनोरा (एक अर्धकल्पना).... ■ **फन्तासी :** (शेष शताब्दीके परिप्रेक्ष्यमें) ० केवल एक इमारतकी ओर....० प्रेमका नया त्रिकोण ० अन्तिम भूकम्प ० प्रयोगशालामें प्राणोंका निर्माण : किस सीमा तक.... ■ **कहानियाँ :** ० कलके रोशनदान : प्रेम, पड़ोसियोंके सम्बन्ध, एक विश्व, आजकी नयी परम्परा जो कल दक़ियानूसी हो जायेगी.... ■ **सन्दर्भ :** ० 'कल' 'कल' के लिए जो कहा गया था.... ० यदि इतिहास स्वयंको दुहराये ० प्रत्येक 'नया' किसी पुरानेकी पुनरावृत्ति है ?.... ■ **विज्ञान :** ० चन्द्रलोकके ड्राइंग-रूम ० एक घण्टेमें दुनियाका सफ़र ० भूलसे : सर्वनाश ० नये समीकरण.... ■ **कविताएँ : शेष शताब्दी :** ० पाँच कविताएँ ० अगली कविताके नमूने ० तीन लम्बी कविताएँ.... ■ **व्यंग्य :** ० दुबारा फल चखनेका मज़ा ० तब कहानी ऐसे शुरू होगी ० शतरंज उसने बिछायी है.... ० एक परिवर्तित संविधान.... ■ **साहित्य-पथ :** शेष शताब्दी : एक दार्शनिक व्याख्या ० बीसवीं सदी—कालके अथाह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सागरमें एक बिन्दु ! ० 'समय' उसका नाम है ० एक टुकड़ा ज़मीन : उपन्यासकारोंकी दृष्टि ० आजकी कवितामें कलका उजेला ० महाभारतकी भाषामें कलकी दिशा····
■ ललित रचना : ० एक सिनेरियो : निषिद्ध अंश ० पूरी शताब्दी : पढ़नेकी मेज़पर ० कामसूत्रका परिवर्द्धित संस्करण···· ■ यात्राएँ : ० वहाँके लोग ० रास्तेके संस्मरण····
■ अन्य : ० नये रचनाकारोंके पृष्ठ····

नये रचनाकारोंके लिए विशेष निमन्त्रण

आज जिनकी उम्र २०–३० के आसपास है वे २०वीं शताब्दीके शेष एक-तिहाई—३३ वर्षोंके प्रति अपनी आजकी मन:स्थिति, अनुभव और आकांक्षाओंके आधारपर भविष्यकी एक सुचिन्तित कल्पना कहानी, कविता या अन्य किसी विधामें प्रस्तुत कर सकते हैं। वे सोच सकते हैं कि बीट–बीटल्स–हिप्पीज़ और भूखी–दिगम्बर पीढ़ीके बाद उनकी पीढ़ीका क्या नाम होगा ? राजनीतिकी चौखटपर खड़ा देश अपनी दूर-दृष्टिसे सही नेताको चुनकर तरक्की कर सकेगा या गृहदाहका दृश्य उपस्थित करेगा ? जो काम आज संयुक्त राष्ट्रसंघ नहीं कर पा रहा है क्या उसके लिए नयी पीढ़ीकी कोई ताकत उभरकर सामने आयेगी या तीसरा विश्वयुद्ध दोनों गोलार्द्धोंको ग्रस लेगा ? आजके परिवार, प्रेम, विवाह, विच्छेद, नाते-रिश्ते कौन-सी शकल पा जायेंगे ? दुनिया मानवता-जैसी सार्वभौम भावनाका आदर करती हुई एक विश्वकी दिशामें आगे बढ़ेगी या कटे हुए केंचुवेकी तरह टुकड़े-टुकड़े बँटकर खण्डित जीवन जीनेके लिए बाध्य होगी ?····विज्ञानकी दिशामें आगे बढ़ते हम मशीन-मानव बन जायेंगे या कविता–कला–दर्शनका सहारा सबसे अधिक मज़बूत हो जायेगा ?···

आप इनमें-से किसी एक बिन्दुपर खड़े होकर अपनी युवा दृष्टिसे "शेष शताब्दी" को देखिए····जो अपेक्षित लगे और जो उपेक्षित हो जाये उसे रचना-रूपमें हमें लिख भेजें। चुनी हुई रचनाएँ नवम्बर १९६७ में प्रकाश्य ज्ञानोदयके "शेष शताब्दी विशेषांक"में प्रकाशित की जायेंगी।

[वार्षिक ग्राहक बननेवाले ग्राहकोंके लिए
विशेष आकर्षण]

सम्पर्क करें :

९, अलीपुर पार्क प्लेस
कलकत्ता-२७

ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सितम्बर १९६७

वर्ष : १६

अंक : ३

पूर्णांक : २३१

●

वहाँ उजाड़ हवा है
जिसके भूरे तलमें
जगह-जगह—
पीले जंगली फूलोंके कारण
कटा-पिटा दीखता रास्ता !
—मुक्तिबोध

●

●

मुखपृष्ठ : देवदत्त

●

सज्जा :
बीरेश्वर बनर्जी
मदन सरकार

९, अलीपुर पार्क प्लेस
कलकत्ता—२७

●

■ विशेष स्तम्भ :

■ अन्य :

■ कहानियाँ :

■ अन्य कथा-विधा :

■ कविताएँ :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[कवि जेम्स लैंग्स्टन ह्यूजका नाम नीग्रो-साहित्यमें महत्त्वपूर्ण है। उनके तपे हुए जीवन, सधे हुए लेखन और ऊर्ध्वमुखी चिन्तनसे कविको पहचाना जा सकता है। सोमा वीराने जब यह इण्टरव्यू लिया था श्री ह्यूजने अपने जीवन-सूत्र बतलाये थे। लेकिन उसके केवल दो सप्ताह बाद ही कविकी मृत्यु हो गयी। यह कथन-उपकथन अब श्रद्धांजलि है।]

कलके मन्दिरोंका

प्रख्यात-नीग्रो कवि, लैंग्स्टन ह्यूजसे मेरा प्रथम परिचय अमरीकी पी० इ० एन०की एक कॉक-टेल पार्टीमें हुआ। उस दिन कामसे छुट्टी कुछ देरसे मिली थी। होटल पियेरके उस जगमगाते कमरेमें पैर रखते ही देखा कि सामनेके एक कोनेमें किसी एक व्यक्तिको केन्द्र बनाकर, आठ-दस व्यक्तियोंका एक समूह-सा बन गया है। देखकर कुछ विस्मय हुआ। जहाँ प्रायः सभी दो-दो, तीन-तीनकी टोलियोंमें बँटकर गप्पें ठोकते हैं, वहाँ किसी एक व्यक्तिका ऐसे आकर्षण-का केन्द्र बन जाना कौतूहलकी ही बात है।

किन्तु लम्बी-लम्बी अमरीकी महिलाओं और पुरुषोंसे जो घिरा खड़ा था, मेरे छोटे क़दमें टँकी आँखें उसका चेहरा नहीं पकड़ सकीं। हाथमें 'ऑरेंज जूस'का एक गिलास थाम उपन्यास लेखिका मिस जौयच्यूटको जा पकड़ा, "मिस च्यूट, क्या आज पार्टीमें कोई विशेष अतिथि आये हैं ?"

कभी-कभी साधारण शब्दोंका अर्थ भी सुननेवालेकी समझमें नहीं आता। मिस च्यूटने कुछ विस्मित, कुछ प्रश्न-भरी दृष्टिसे मेरी ओर देखा। मेरी आँखें जिस ओर टिकी थीं, उस ओर देखकर ही वे मेरी बात समझ सकीं—"ओह ! वे लैंग्स्टन ह्यूज हैं। आओ, तुम्हारा परिचय करा दूँ।"

परिचय शब्दोंसे मिलता है ? शक्लसे ? या जीवनके इतिहाससे ?

ह्यूजका जन्म १ फ़रवरी सन् १९०२ को, मिस्सूरी स्टेटके जौपालिन नगरमें हुआ था। सन् १९२९ में उन्होंने पैनसेलवेनिया स्टेटकी लिंकन युनिवर्सिटीसे बी० ए० की डिग्री ली; और तीन बार, सन् १९४३, १९६३ और १९६४में उन्हें लिंकन युनिवर्सिटी, होवर्ड युनिवर्सिटी और वेस्टर्न रिज़र्व युनिवर्सिटीसे डी० लिट्० की उपाधि मिली। अबतक उनकी बत्तीस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधक : लैंग्स्टन ह्यूज

सोमा वीरा

पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, और आठ रिकार्ड-एलबम बन चुकी हैं। पुस्तकोंमें प्रमुख हैं—नॉट विदाउट लाफ़्टर (उपन्यास); आस्क योर मामा, सेलेक्टेड पोयम्स, द ड्रीम कीपर, द पैन्थर एण्ड द लैश (कविता संग्रह); द वेज़ ऑफ़ व्हाइट फ़ॉक्स (कहानी-संग्रह); आइ वण्डर ऐज़ आइ वण्डर (आत्म-कथा), फ़ाइव प्लेज़ बाइ लैंग्स्टन ह्यूज (नाटक संग्रह); सिम्पिल्स अंकिल सैम (प्रहसन-कथाएँ); फ़ेमस अमेरिकन नीग्रोज़, फ़ेमस नीग्रो म्यूज़िक मेकर्स (जीवन-कथाएँ); फ़र्स्ट बुक ऑफ़ अफ़्रीका, फ़र्स्ट बुक ऑफ़ राइम्स (बाल कथाएँ); फ़ाइट फ़ॉर फ़्रीडम और पिक्चोरियल हिस्ट्री ऑफ़ द नीग्रो (इतिहास)। इसके अतिरिक्त उनकी अनेक कविताएँ और कहानियाँ चुने हुए प्रतिनिधि कहानी-संग्रहों और कविता-संग्रहोंमें प्रकाशित की जा चुकी हैं। वे न्यूयॉर्क पोस्ट और शिकागो डिफ़ेण्डर-जैसे लोकप्रिय समाचार-पत्रोंके विशेष संवाददाता रह चुके हैं और टेलिविज़न तथा रेडियोपर पचासों लोकप्रिय प्रोग्रामोंमें भाग ले चुके हैं।

किसी विशेष व्यक्तिसे प्रथम बार मिलते हुए कभी थोड़ा झूठ बोल देना क्षम्य है।

"आपका नाम बहुत दिनसे सुनती आ रही हूँ। मिलनेकी बड़ी इच्छा थी।"

सिरपर लटकते झाड़-फानूसकी रोशनी उनके मुखपर खिलती मुसकानको जगमगा डालती है, "बड़ी खुशी हुई आपसे मिलकर। आप भारतसे हैं, या पाकिस्तानसे ?"

"भारतसे। क्या आपने लखनऊका नाम सुना है ?····सुना है, आप बहुत घूमे हैं। क्या आप भारत भी हो आये हैं ?"

ह्यूजके भ्रमणका वृत्तान्त सुनकर यह विस्मय किया जा सकता है कि उन्हें लिखनेका समय कब मिल पाता है। वे दस बार, अमरीकाके एक छोरसे दूसरे छोर तक घूमकर, यहाँके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगभग सभी प्रमुख स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयोंमें भाषण दे चुके हैं, और कई बार युरॅप, एशिया और अफ़्रीकाके अनेक देशोंके चक्कर लगा अपनी कविता सुना आये हैं। चार महाद्वीपोंके रंगमंचोंपर प्रस्तुत उनके प्रमुख नाटकोंमें से कुछ हैं—मलैटो, सिम्पली हैविनली, शेक्सपियर इन हारलम, ब्लैक नेटिविटी, ट्रबुल्ड आइलैण्ड और द बैलैड ऑफ़ द ब्राउन किंग।

उनके घूमनेकी कहानी शुरू हो गयी थी शैशवमें ही, किन्तु उसका महाकाल आया था सन् १९२२ में जब कि फ़र्स्ट-इयरकी पढ़ाई पूरी होनेसे पहले ही उन्होंने कोलम्बिया कॉलेजसे नाम कटा लिया था। किन्तु जब वे नौकरियाँ तलाश करने चले तो उन्हें केवल निम्नतम दर्जेके काम ही मिले। आखिर वे अफ़्रीका जानेवाले एक जहाज़ पर 'स्टीवर्ड' बन गये। वर्षों वे एक देशसे दूसरे देश भटकते रहे, कभी कोई नौकरी मिल जानेपर मामूली तरह गुज़ारा करते; कभी न मिलनेपर फ़ाक़े करते।

जब वे अमरीका लौटे, उन्होंने सोचा कि अर्जित अनुभवोंको अच्छी तरहसे समझ पानेके लिए उन्हें पुनः कॉलेजमें नाम लिखा लेना चाहिए—कि कॉलेज-शिक्षा पानेपर वे अधिक अच्छे लेखक बन सकेंगे। कॉलेजकी फ़ीसके लिए पैसे जमा करनेके लिए वे वाशिंगटनमें नौकरी खोजने लगे। पहली नौकरी उन्हें एक लॉण्ड्रीमें मिली। दूसरी एक होटलमें तश्तरियाँ धोनेकी।

"क्या आपसे एक 'रिक्वेस्ट' कर सकती हूँ?"

"कहिए न। अनुरोध बिना ही।"

"मेरे देशवासियोंको आपका परिचय पाकर खुशी होगी। क्या अपनी पत्रिकाके लिए मैं आपका 'इण्टरव्यू' ले सकती हूँ?"

उनके भरे मुखपर फिरसे हँसी छा जाती है, "यहाँ? इस भीड़में?"

उस मुसकानमें उस बूढ़ी नानीकी मुसकानकी छाया है, जिसे अपने ख़ानदानपर और अपने नीग्रो होनेपर गर्व था। उन्होंने अपनी नानीका ताम्बई रंग और काले बाल पाये हैं। उनका क़द अन्य अमरीकियोंके अनुपातसे नाटा है, और शरीर भरा-भरा। देखनेसे लगता नहीं कि उनकी आयु ६५ वर्ष है। वे अधिकसे अधिक ४६-४७ वर्षके लगते हैं। कभी वे बोलते हैं धाराप्रवाहिक रूपमें, कभी शब्दोंको तौल-तौलकर।

केवल एक प्रश्नके उत्तरमें मैंने ह्यूजका स्वर कण्टकित होते देखा—बम्बईसे प्रकाशित 'पोयट्री इण्डिया' के अक्तूबर-दिसम्बर (१९६६) अंकमें, मीनाक्षी मुकर्जीने 'सूर्येर प्रतिवेशी' पुस्तककी समीक्षा करते हुए लैंग्स्टन ह्यूजके विचारोंका उल्लेख किया है कि त्वचाके रंगके आधारपर आधुनिक अमरीकी नीग्रो, अफ़्रीकी नीग्रोसे तादात्म्य नहीं स्थापित कर सकता।

ह्यूजने कहा, "किसीके कथनको 'आउट ऑफ़ कान्टेक्स्ट' उद्धरण देनेसे ही ऐसी ग़लतफ़हमियाँ पैदा हो जाती हैं। अफ़्रीकियोंसे हम तादात्म्य क्यों नहीं अनुभव करें! अवश्य ही अनुभव करते हैं। और इसीलिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि हम एक हैं। इसीलिए कि किसी जमानेमें हम वहींसे आये थे। हम इस बातको कैसे भूल सकते हैं'''मैंने कहा सिर्फ़ यह है कि लिखते समय लेखकको यह भूल जाना चाहिए कि उसकी त्वचाका रंग क्या है, उसे सिर्फ़ इस बातका अहसास रहना चाहिए कि वह लेखक है: 'बी० ए० राइटर फ़र्स्ट ईविन व्हेन डीलिंग इन रेशियल मैटिरियल।' तभी रचनामें सचाई और सौन्दर्य आ सकता है।"

आधुनिक अफ़्रीकी कविताके विषयमें ह्यूजका कथन है; "उसपर अफ़्रीकी व्यक्तित्वकी छाप है, और उसकी लगभग सारी भावनात्मक कान्तिको शामिल किया जा सकता है, केवक एक शब्द 'नीग्रीटयुट में—या सार्त्रके शब्दोंमें 'एण्टी-रेसिस्ट रेसिज़्म' में--उस विश्वासमें, जिसमें काले अफ़्रीकाने स्वयं अपने-आपको पुनः खोजा है।

ह्यूज़का विचार है कि आधुनिक अफ़्रीकाको समझना हो तो होशियारी इस बातमें है कि आधुनिक अफ़्रीकी कविकी आवाज़ सुनी जाये। इसलिए, क्योंकि आधुनिक अफ़्रीकी कविता, आजके अफ़्रीकाकी 'एमोशनेल क्लाइमेट'को व्यक्त करती है। वह दरशाती है अफ़्रीकी नीग्रोका गर्व और प्यार, अफ़्रीकी 'हैरिटेज'में--आत्मिक, शारीरिक और आध्यात्मिक सभी रूपोंमें।

आधुनिक अफ़्रीकी कविताकी प्रगतिके विषयमें ह्यूज कहता है: "इट इज़ मूविंग अवे फ़ॉम द बेंच ऑव द मिशनरी स्कूल टु वाक अब्रॉड बिनीथ द कोको पाम्स एण्ड लिसन फ़ॉर इन्सिपिरेशन टु द नेटिव सांग्ज़ इन मेनी टंग्ज़। सून अफ़्रीकन पोयट्री विल कैप्चर द एसेन्स ऑव दीज़ सांग्ज़ एण्ड रिक्रियेट देम ऑन पेपर। मीनव्हाईल इट वॉक्स विद ग्रेस एण्ड अलरेडी इज़ बिगनिंग टु एचिव एन इण्डिविज्युलिटी ऑफ़ इट्स ऑन"।

ह्यूज़ अफ़्रीकी नीग्रोके विषयमें इतने अधिकारसे बोल सकता है, केवल इसलिए नहीं कि उसने उन्हें अति निकटसे परखा है, बल्कि इसलिए भी कि उसने अफ़्रीकी और अमरीकी नीग्रोको एक-दूसरेके सहारेसे समझा है। अपनी इस समझ और योग्यताके कारण वह अमरीकी-नीग्रोका 'प्रतिनिधि कवि' बन गया है। उसकी इस विशेषताका उल्लेख करते हुए, इण्डियाना युनिवर्सिटीसे प्रकाशित 'फ़ाइव प्लेज़ बाई लैंग्स्टन ह्यूज' की भूमिकामें वेब्रस्टर स्मोलेने कहा है:

"लैंग्स्टन ह्यूजके नाटकोंकी दुनिया अन्य किसी भी नाटककारकी दुनियासे एकदम भिन्न है, और इसकी खोज, सिर्फ़ अपने-आपमें ही, एक आनन्दप्रद, अद्भुत और समुन्नत करनेवाला अनुभव है।

"अन्य किसी भी लेखकने अमरीकाके, विशेषकर उत्तरी अमरीकाके, नीग्रोकी जिन्दगीका इतनी अच्छी तरह चित्रण या विश्लेषण नहीं किया है। सदा 'छोटे आदमियोंके प्रति अधिक रुचि रखते हुए, ह्यूज अपनी जातिके उन लोगोंके विषयमें लिखना अधिक पसन्द करता है, जो आर्थिक खतरोंके किनारोंपर लटकते हुए जिन्दगी बसर करते हैं। और, यद्यपि किसी अन्यमें अपने आत्मीयोंकी शक्ति और गरिमाके सम्बन्धमें इतनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आस्था नहीं, किन्तु ह्यूजकी रचनाओंमें शायद कोई ही 'मिलिटेण्ट' या 'तार्किक' कही जा सकती है : वह कलाकार है, 'प्रोपेगैण्डिस्ट' नहीं। वह सभी रंगकी त्वचाओंके नीचेसे झाँकनेवाली मानवीय कमज़ोरियोंके प्रति सदा सहनशील रहा है।"

इन कमज़ोरियोंको समझने और पकड़ पानेकी शिक्षा ह्यूजको शैशवमें ही मिलनी प्रारम्भ हो गयी थी। उनके पिताको नीग्रो होनेके कारण मिस्सूरी स्टेटमें वकालत करनेकी इजाज़त नहीं मिली। ह्यूजके जन्मके कुछ दिन बाद ही, वे मैक्सिको चले गये। अपनी जिन्दगीके शेष तीस वर्ष उन्होंने वहीं वकालत की, और इस लम्बी अवधिमें केवल एक बार ही अमरीका आये।

अतः ह्यूजका पालन-पोषण उनकी माँ और नानीने किया। नौकरीकी खोजमें उनकी माँको प्रायः ही एक शहरसे दूसरे शहर भागना पड़ता रहा। वे लोग जौपलिनसे बफ़ैलो गये। वहाँसे न्यूयॉर्क, लारेन्स सिटी, कैन्सास सिटी, टोपेका, कोलोराडो स्प्रिंग्स, शिकागो, क्लीवलैण्ड....हर नगर बदलनेके साथ स्कूल बदलते, किन्तु यदा-कदा किसी ही कक्षामें उन्हें कोई नीग्रो साथी मिलता। कुछ अध्यापक उनके साथ अच्छा व्यवहार करते। कुछ नहीं। कुछ बालक पत्थर लेकर उन्हें मारने दौड़ते। कुछ बीच-बचाव भी करते। जल्दी ही उन्होंने यह सीख लिया कि सभी 'गोरों'को सिर्फ़ 'गोरे' होनेके कारण ही नापसन्द नहीं करना चाहिए।

उनकी नानी ओबरलीन-कॉलेजमें शिक्षा पानेवाली प्रथम नीग्रो बालिका रही थीं। उनके कुछ पूर्वज रेड इण्डियन थे, और वे देखनेमें बहुत-कुछ उनके जैसी ही लगती थीं—ताँबे जैसा रंग और लम्बे, घने-काले बाल। जब लैंग्स्टन छोटे थे, वे उन्हें उन नीग्रोकी कहानियाँ सुनाया करती थीं जो नीग्रोको गुलामीसे मुक्त करनेके लिए लड़े थे, मरे थे। वे अपने अधिकारोंके प्रति बड़ी सचेत थीं, और उनका वह स्वभाव लैंग्स्टनकी माँने भी पाया था। जब वे बारह सालके थे, उनकी मृत्यु हो गयी, किन्तु वे आज तक उनको ऐसे याद करते हैं, जैसे वे आज भी ज़िन्दा हों।

अपनी स्कूली शिक्षा पूरी करनेके लिए लैंग्स्टनने अनेकों प्रकारकी नौकरियाँ कीं—उन्होंने अख़बार बेचे, पचास सेण्ट हफ़्तेपर होटलोंके हॉल और 'टायलेट्स' साफ़ किये। 'स्टॉक बॉय' और 'डिलिवेरी बॉय'का काम किया।

सोमालियासे अमरीका-भ्रमणके लिए आये हुए एक नीग्रो कवि और उनकी पत्नी हमारे निकट आ खड़े हुए हैं। उन दोनोंको अँगरेज़ी नहीं आती। वे ह्यूजसे फ्रेन्चमें बातें करते हैं। कवि-पत्नीने चटक रंगोंवाली एक अफ़्रीकी पोशाक पहन रखी है। दूरसे देखनेपर, पहली दृष्टिमें यह भ्रम हो जा सकता है कि वह साड़ी पहने हुए है। वास्तवमें वह साड़ीका ही हलका-सा रूपान्तर है। उनकी 'मरदानी' बातोंको सुनना छोड़,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह हलके स्वरोंमें मुझसे बातें करती है, "आप भी लिखती हैं ?....मैं तो चाहकर भी नहीं लिख पाती। आपने कैसे लिखना शुरू किया....?"

ह्यूजने लिखना कैसे शुरू किया, यह भी एक कहानी है। उन दिनों वे इलिनौयके एक छोटे-से स्कूलमें छठी कक्षामें पढ़ते थे। विद्यार्थियोंने कक्षाके सभी पदाधिकारियोंका चुनाव कर लिया था, किन्तु उनकी यह समझमें नहीं आ रहा था कि 'क्लास-पोयट' किसे चुनें। क्लासमें ऐसा कोई नहीं था जिसने कोई कविता लिखी हो, या जिसकी शक्लसे यह लगता हो कि वह कभी कविता लिख सकता है। कक्षामें केवल दो नीग्रो विद्यार्थी थे। अधिकांश अमरीकी यह समझते हैं कि सभी नीग्रोको संगीतके तरन्नुमका जन्मजात अहसास होता है, और वे सभी लय-तालमें नाच और गा सकते हैं। यह सोचकर कि जिसे तरन्नुमका पैदायशी ज्ञान हो, वह निश्चय ही कविता लिख सकता है, उन्होंने लैंग्स्टनको 'कक्षा-कवि' चुन लिया।

बालक लैंग्स्टनने कभी सपनेमें भी कविता लिखनेका विचार नहीं किया था, किन्तु सिरपर यह ज़िम्मेदारी आ पड़नेपर उसे निभाना उन्होंने अपना कर्त्तव्य समझा। उन्होंने घर जाकर कुछ पंक्तियाँ लिखीं, जिनमें कहा कि उनके स्कूलके अध्यापक बहुत अच्छे हैं और उनकी कक्षा सभीमें सर्वश्रेष्ठ है। 'ग्रैजुएशन सैरेमनी'के समय जब वह कविता उन्होंने स्टेजपर पढ़ी तब निश्चय ही खूब ज़ोरसे प्रशंसात्मक तालियाँ बजायी गयीं।

उसके बाद कभी-कभी मौजमें आनेपर वे कविताएँ लिखने लगे। हाई स्कूलमें, अपनी अँगरेज़ीकी क्लासमें, उन्होंने कार्ल सैण्डबर्ग, एमी लावेल, वाशेल लिण्डसे आदि कवियोंकी रचनाएँ पढ़ीं। उनसे प्रभावित हो, उन्होंने गम्भीरतापूर्वक कविता लिखनेका निश्चय किया। और उन्होंने 'प्रेम' पर कविताएँ लिखीं। पड़ोसमें खड़ी स्टीलकी फ़ैक्टरियोंपर लिखीं। और जिन बस्तियोंमें, वे अपनी ज़िन्दगीके दिन गुज़ारते थे, उनपर लिखीं।

उन्नीस वर्षकी आयुमें, दसवीं कक्षाकी परीक्षा देनेके बाद, घर जाते समय जब ट्रेनमें बैठे, उसे धीरे-धीरे मिसिसिपी नदीके लम्बे पुलको पार करते देख रहे थे, उन्हें उन दिनोंकी याद आयी जब उस नदीके किनारोंपर नीग्रो गुलामोंकी तरह बेचे जाते थे......"तब मैं अन्य नदियोंके विषयमें सोचने लगा जिनका हमारे इतिहासमें विशेष स्थान रहा है--कांगो, नाइजर और नील, अफ़्रीकामें और मेरे दिमाग़में खयाल आया कि मैंने नदियोंको जाना है, और मैंने उसे अपनी जेबमें रखे एक लिफ़ाफ़ेकी पीठपर लिख डाला।"

पन्द्रह मिनिटमें चलती ट्रेनकी घड़घड़ाहटके बीच ही वह कविता पूरी हो गयी। 'द नीग्रो स्पीक्स ऑफ़ रिवर्स' (नीग्रो नदियोंकी बात कहता है) शीर्षक यह कविता बहुत अधिक लोकप्रिय हुई, और अभीतक उनकी सभी रचनाओंमें सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है।

[शेष पृष्ठ १५७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्र जीवन-अनुभव और उत्कट जीवन-आस्था....

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी

"...किसी विशिष्ट जीवन-दर्शन या कला-पद्धतिका पीछा पकड़नेवाले साहित्यिकोंकी अपेक्षा स्वतन्त्र जीवन-अनुभव और उत्कट जीवन-आस्थासे समन्वित साहित्य-सृष्टा, जिन्होंने अपनी कृतियोंमें मानवकी नैतिक, बौद्धिक और भावात्मक चेतनाको एक साथ सम्मान दिया है, अधिक समादृत हुए हैं।"

जन्म : सन् १९०६ ईसवी
(भाद्रपद अमावस्या)

मृत्यु : २१ अगस्त १९६७

अन्तिम पत्र : अन्तिम इच्छा

पं० शान्तिप्रिय द्विवेदी

"मैं महीनोंसे अस्वस्थ हूँ...अपनी वर्तमान परिस्थितिमें मुझे अपनी रचनाओंके भविष्यके सम्बन्धमें चिन्ता हो रही है। मैं चाहता हूँ कि कोई प्रतिष्ठित संस्था मेरी रचनाओंको स्वाध्यायियोंके लिए एक स्थानपर क्रमबद्ध सुरक्षित कर दे और मेरे बाद स्वयं ही मेरी रचनाएँ प्रकाशित कर सुलभ करती रहे।

यदि स्वस्थ हो सका तो परमात्माको धन्यवाद। अन्यथा मेरे बाद कोई शोक-प्रदर्शन अथवा किसी प्रकारकी शोक-सभा न की जाये। इस ढोंगसे मुझे चिढ़ है। इस कृत्रिमतासे मेरी आत्माको और कष्ट होगा।"

जन्म : सन् १९०६ ईसवी

मृत्यु : २१ अगस्त १९६७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिकतापर इस बार वर्ष-प्रारम्भसे ज्ञानोदयने एक-एक कर विविध लेखकोंके विचार प्रकाशित किये हैं। श्री कुबेरनाथ रायके प्रस्तुत विश्लेषणमें कई चौंकानेवाली बातें आप पढ़ेंगे : 'कुण्ठा, निराशा, अकेलापन, अभिशप्त स्थिति, मूल्योंकी पराजय, क्रोध, विद्रोहके लिए महाभारतकी थीममें अपार अवसर है··· हिन्दू होना आधुनिक होनेमें सहायक है····।' अगले अंकमें हम कुछ सामग्री और देंगे तब आप देख सकेंगे कि 'आधुनिकता'का विश्लेषण और 'आधुनिक' का विश्लेषण दो अलग बातें हैं···

आधुनिकता : कुछ सीमाएँ और अकर्मसे कर्मकी ओर

—कुबेरनाथ राय

भारतमें ग़लतफ़हमीवश आधुनिकतापर नक़ली या दिखावटी होनेका आक्षेप लगाया जाता है। इस ग़लतफ़हमीके कई मज़बूत कारण हैं। सबसे बड़ा कारण है : आधुनिकताके नामपर नयी पीढ़ीमें फैलता हुआ स्वैराचार जिसका आधुनिकतासे कोई तथ्यतः सम्बन्ध ही नहीं है। 'स्वैराचार' एक विलास या मौज-शौक़ है, जब कि आधुनिकता एक यन्त्रणा है, एक ऐसा स्वभाव है जिसमें अस्मिता निरन्तर प्रश्नके दर्दको भोग रही है। नयी पीढ़ीमें काफ़ी लोगोंने आधुनिकताको एक सुविधाके रूपमें ग्रहण कर लिया है, जब कि आधुनिकताको एक अभिशप्त लाचारी, एक नियतिके रूपमें ग्रहण करना ही सही वरण है। असली यायावरके पीछे सुविधावादी नक़ली यायावरोंके कारण आधुनिकता बदनाम हो गयी है। दूसरा कारण कुछ और गहरा है। नयी आधुनिकता जो महायुद्धोंके द्वारा उत्पन्न मूल्य-तिरस्कार या मोहभंगसे जन्म लेती है, मूल्योंके प्रति तटस्थता और कभी-कभी अस्वीकृतिका दर्शन है। अतः पुराने आधुनिकोंको जो विगत सुधारवादी मूल्योंको—जैसे वर्णभेद-नाश, नारी-मुक्ति, समाजवाद आदिको—जीवन-दर्शन बनाकर चलते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, यह अस्वीकृतिप्रधान नयी आधुनिकता शत्रुवत् खलती है। खलना भी स्वाभाविक ही है, क्योंकि सामूहिक सन्दर्भमें इसके पास कोई पॉजिटिव (स्वीकारात्मक) विश्व-दृष्टि नहीं, यह शुद्ध व्यक्तिनिष्ठ चिन्तन है--अलग-अलग, विलग-विलग, खड़े प्रमथ्युओं-की जिज्ञासा, यन्त्रणा और विद्रोह-भर है। ऐसी हालतमें इसे नक़ली और दिखावटी कहकर दण्डित किया जाता है। यदि इस नयी आधुनिकताको कोई अधूरी कहे तो मुझे कोई एतराज़ नहीं। यह 'अधूरी' और 'सीमित' दृष्टि है ही। परन्तु यह नक़ली नहीं--अपने प्रामाणिक रूपमें जहाँ यह मिली है वहाँ इसकी सच्चाई साबित हो गयी है।

आधुनिकता जिसे मैं एक बोध-प्रक्रिया, एक स्वभाव या संस्कार-प्रवाह मानता हूँ, किन कारणोंसे सम्पूर्ण नहीं, क्यों 'सीमित' है, या अधिक स्थूलभाषामें 'अधूरी' है, एवं उसकी सीमाएँ क्या हैं—यहाँ इन तथ्योंपर हम एक विहंगम दृष्टिपात करेंगे।

भारतीय परिवेशमें आधुनिकता कमज़ोर और सीमित इसलिए लगती है कि इसका बहुत अंशोंमें 'अकाल-प्रसव' के रूपमें जन्म हुआ है और दूसरी बात यह कि इसके जन्म-के बाद भी इसे बौद्धिक, वैचारिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि देनेकी चेष्टा नहीं हुई है, फलतः यह सम्पूर्ण गुम्फके रूपमें प्रकट न होकर सीमित सर्जनात्मक-विधाओंके खास अंगोंमें यथा नयी कविता और नयी कहानीमें ही समाप्त हो जाती है। जब हम कहते हैं कि यह अकाल-प्रसव-जैसी लगती है (भले ही न हो, पर लगती वैसी ही है,) तो हमारा क्या तात्पर्य है? विकासकी तीन धुरियाँ हैं—औद्योगिक, यान्त्रिक (टेक्नो-लॉजिकल) और वैज्ञानिक। युरॅपमें जब आधुनिकताका जन्म हुआ तो ये विकास-धुरियाँ अपनी चरम सम्पृक्त अवस्थामें थीं। बिना इनकी चरम सम्पृक्तिके आधुनिकताका पुष्ट और नॉर्मल जन्म सम्भव नहीं। परन्तु भारतमें आधुनिकता इनके चरम सम्पृक्त स्तरपर नहीं प्राथमिक स्तरपर ही जन्म लेती है। फलतः सामूहिक स्तरपर इसके वरण और आस्वादनके लिए जो संस्कार चाहिए वे अभी यहाँपर विकसित ही नहीं हो पाये हैं—वे विकसित होंगे तब, जब यहाँपर भी औद्योगिक, यान्त्रिक और वैज्ञानिक धुरियोंमें चरम विकासका सम्पृक्त क्षण उपस्थित हो जायेगा। फलतः यहाँपर बहुमतको आधु-निकता कोई बोध देनेमें असमर्थ है, अभी वह 'शॉक' ही मारती है। 'बोध' का सम्प्रेषण 'शॉक' (मानसिक धक्का) के बादवाला चरण है। इसके लिए साहित्यकार और उपभोक्ता दोनोंको 'मुक्त' होना चाहिए--एकतरफ़ा मुक्तिसे सम्प्रेषण नहीं होता है—'शॉक'-भर मिलता है। अखिल भारतीय लेखक सम्मेलन ('६५), उद्योगमण्डल (केरल) में अज्ञेयने कहा था—"भारतीय साहित्यकार देशके मुक्त होनेसे पूर्व ही 'मुक्त' हो गया था।" हाँ, यह मुक्ति, अर्थात् पूर्व-ग्रहों, विधि-निषेधों, अतीतपरक मूल्योंसे 'मुक्ति' और मोहभंग नक़ली नहीं। पर यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकाल-प्रसव-जैसा है। फिर भी यह नक़ली नहीं, क्योंकि ऐसा होना भारतीय सन्दर्भोंके हिसाबसे भले ही अकाल-प्रसव हो, पर विश्वगत सन्दर्भोंके हिसाबसे एक नॉर्मल घटना है। स्मरण रहे कि आजका बुद्धिजीवी दुहरी ज़िन्दगी जी रहा है। उसके जीवनके दो समकेन्द्रिक सन्दर्भ वृत्त हैं। एक तो है भारतीय सन्दर्भ और दूसरा है विश्वगत सन्दर्भ। एक किसानके लिए यह दूसरा सन्दर्भ कोई अर्थ नहीं रखता, पर आजके शिक्षित बुद्धिजीवीके लिए इसका भी प्राणवान् और जैविक महत्त्व है। उसके संस्कारोंमें विश्वचिन्तनके तन्तु जैविक रूपसे सक्रिय हैं। इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता—अन्यथा वह नीग्रो-समस्या, वियतनाम और सार्त्रको लेकर कलकत्ता-दिल्ली ही नहीं, ग़ाज़ीपुरमें बैठकर भी चिन्तित क्यों होता? आजका बुद्धिजीवी विश्वगत संघातोंसे अपनेको मुक्त नहीं रख सकता। और यदि ऐसी बात है तो ठीक ही हुआ है कि विश्वके अन्य बुद्धिजीवियोंकी तरह हिन्दी, बँगला, मराठीका बुद्धिजीवी भी सन् '३० के ठीक बादवाले वर्षोंमें ही 'मुक्त' हो गया जब कि उससे आस-पासका सन्दर्भ उस मुक्ति-वरणके लिए तब सर्वथा अक्षम था और आज भी अंशतः है। अतः विश्वगत सन्दर्भोंके परिप्रेक्ष्यमें यह 'मुक्ति' और इसका विकासमान रूप 'आधुनिकता' एक नॉर्मल घटना है। यानी यह नक़ली नहीं। यह उसकी सीमा है या उसकी बदक़िस्मती है या नियति है कि निकटके परिवेशके हिसाबसे वह अकाल-प्रसव-सी लगती है। हरएक सत्य सापेक्ष होता है, और अपने ख़ास सन्दर्भमें ही ठीक होता है। विश्वगत सन्दर्भमें भारतीय साहित्यकारकी मुक्ति और आधुनिकता स्वाभाविक घटना है, पर भारतीय सन्दर्भमें 'अकाल-वसन्त' है। अकाल-प्रसव या 'अकाल-वसन्त'को भारतीय मन धूमकेतु-सा अशुभका प्रतीक मानता आया है। यही प्रतिक्रिया आधुनिकताके बारेमें भी हुई है।

■

आधुनिकता-बोधके भारतीय सन्दर्भमें एक और बड़ी कमी यह रही कि इसका सम्बन्ध रचनात्मक साहित्यसे ही रहा। इसके लिए वातावरण और पृष्ठभूमि तैयार करनेके लिए इस देशकी दार्शनिक चिन्ता आगे नहीं बढ़ी। दरअसल इस देशमें दार्शनिक चिन्ता नामकी वस्तु वैष्णव आचार्योंके बाद लुप्त ही हो गयी है। दार्शनिक अध्ययन-अध्यापन बाक़ी रहा, पर दार्शनिक चिन्तन ख़तम हो गया। यहाँ तक कि विवेकानन्द, अरविन्द और राधाकृष्णन् भी चिन्तनका आभास मात्र प्रस्तुत करते हैं या बहुत हुआ तो पुनर्व्याख्या प्रस्तुत करते हैं—पर 'अस्तित्व' और 'स्वयं' के सम्बन्धमें नये प्रश्न और नये सिरेसे प्रश्न उनके द्वारा उठाया नहीं गया। ये एकाडेमिक हिन्दू दार्शनिक ही रहे—स्वतन्त्र हिन्दू-दर्शन या अन्य स्वतन्त्र दर्शनका इनके द्वारा जन्म नहीं हो सका। मैं यह नहीं कहता कि यह काम घटिया या कम महत्त्वपूर्ण है। यह महत्त्वपूर्ण रहा और हमारे जातीय अस्तित्वके लिए सदैव महत्त्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्ण रहेगा पर यह विकासमान जीवन-प्रक्रियासे तभी संयुक्त हो सकेगा जब कि इसकी लीकसे हटकर कोई चैलेंज या कोई नया स्वतन्त्र आदर्श आये। कहनेका तात्पर्य यह कि जो प्रश्नाकुलता युरॅपके साहित्यिक आधुनिकता-बोधमें है, वही दार्शनिक बोधमें भी, बल्कि उसके प्रखर रूपमें, वहाँ विद्यमान है। युरॅपने न केवल बोह्लेअर, एलियट और सार्त्र तथा कामूको पैदा किया बल्कि 'स्व' और 'अस्तित्व' के प्रश्नपर चिन्तित अनेक दार्शनिकोंको भी साथ-साथ उपस्थित किया। कीर्कगार्द, सार्त्र, कार्ल यास्पर्स, बूबर, पाल टिलिथ, हसरेल, हीडेग्गर आदि ईसाई, ग़ैर-ईसाई, आस्तिक-नास्तिक विचारकोंका जत्था सर्जनात्मक साहित्यके साथ उभरता है। 'मार्क्स बनाम आत्मा' के प्रश्नपर (जो मूलतः 'अधिनायक बनाम मानवीय आत्मा'का प्रश्न है) बहुत-कुछ सोचा-विचारा गया। 'समाज और व्यक्ति', 'मनुष्य और इतिहास' आदि युग्मोंके आधार-पर भी दार्शनिक चिन्ताने 'अस्तित्व'का प्रश्न सामने रखा और उसकी व्याख्या की। ऐसी दार्शनिक हलचल और ऐसा वातावरण भारतमें नहीं दिखाई देता। कहीं-कहीं एकाध फुटकर आवाज़ (यथा आचार्य रजनीश) इधर-उधरसे भले आवे। इस तरह भारतके सर्जनात्मक साहित्यमें अभिव्यक्त आधुनिकताको दार्शनिक चिन्ताके श्मशानमें उगना पड़ा, श्मशानमें उगी हुई ख़ूबसूरत चम्पाकी तरह—भौंरे जा नहीं पाते और ख़ूबसूरतीके बावजूद साधारण प्रेमी हिचकता है कि यह श्मशानमें उगी है। इसे अन्तमें यायावर और औघड़ ही प्यार करेंगे।

युरॅपमें आधुनिकता सम्पूर्ण गुम्फके साथ उपस्थित होती है। नैतिक, दार्शनिक, सामाजिक और ऐतिहासिक चिन्तन सर्जनात्मकके साथ-साथ समानान्तर या पृष्ठभूमिमें चलता है, इसीसे उसका बोध खण्डित या आभासमात्र नहीं होता जब कि भारतमें यह खण्डित बोध ही रहता है क्योंकि इसके अन्य आयाम अनुपस्थित हैं। आधुनिकताके सम्बन्धमें थोड़ा-बहुत चिन्तन सर्जनात्मक लेखकों-द्वारा ही उपस्थित किया गया है। सम्पूर्ण जीवनको अर्थवान् बनानेवाले आत्ममन्थनका यहाँ भी अभाव लगता है। आधुनिकताके सन्दर्भमें सम्पूर्ण जीवनको वरण न करके, उनकी वर्त्तमान परतसे ही अपनेको संयुक्त करके अनेक लेखकों और कवियोंने नमूना पेश किया है, वह दुहरे रूपमें खण्डित बोधको देता है। पहले तो इसे दार्शनिक, समाज-शास्त्री और साधक नहीं मिले, केवल कवि और कहानीकार ही मिले, और दूसरी बात यह कि ये कवि और कहानीकार भी वर्त्तमानकी ऊपरी परतको सम्पूर्ण जीवन मानकर अपना आधुनिक बोध पेश करते रहे—फलतः जो चीज़ हाथ लगी उसमें दुहरा अभाव, दुहरी कमज़ोरी, रही—पृष्ठभूमिगत और स्वयंगत। नतीजा यह हुआ कि आधुनिकता-बोध कोई 'बोध' न होकर 'शॉक' बना रहा—'ज्ञान' नहीं, महज़ एक 'मानसिक धक्का'।

हम कह चुके हैं कि आधुनिकता एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वभाव है, संस्कार-प्रक्रिया है या दृष्टिभंगी है। इसके भीतर सही आत्मान्वेषण तब होगा जब 'सम्पूर्ण जीवन'को इसके भीतर रखकर समझा जाये—सम्पूर्ण जीवनमें वर्त्तमानकी ऊपरी परत ही नहीं, अतीत भी रहता है। अतः अतीतकी पुनर्व्याख्या आधुनिकता-बोधके माध्यमसे—यह सर्जनात्मक साहित्यका महत्त्वपूर्ण विषय होना चाहिए। परन्तु केवल डॉ० धर्मवीर भारतीका 'अन्धायुग' एक अस्तिपक्षका सबूत है। इसमें मैथिलीशरण गुप्तकी तरह 'स्वर्ण पुरातन'का मोह नहीं, अतीतको आधुनिकता-बोधके माध्यमसे समझनेका प्रयत्न है, और इस प्रयत्नका उद्देश्य है—वर्त्तमानकी पकड़को और गहरी और अर्थगर्भी बनाना। पर ऐसी कृतियाँ भारतीय साहित्यमें कितनी हैं? 'अन्धायुग' का महत्त्व इसीमें है कि इसमें अतीतके माध्यमसे आधुनिकताका सही बोध प्रस्तुत किया गया है। इसका महत्त्व इस सन्दर्भमें वही है जो छायावादी सन्दर्भमें 'कामायनी' का, उत्तर छायावादी मानववाद-के सन्दर्भमें 'कुरुक्षेत्र' का है। 'कामायनी', 'कुरुक्षेत्र', 'उर्वशी' और 'अन्धायुग' प्रयोगकी दृष्टिसे और अतीतकी पुनर्व्याख्याकी दृष्टिसे समान महत्त्वके हैं। परन्तु क्या 'अन्धायुग' पर ही सन्तोष कर लेना ठीक होगा? यह तो एक उदाहरण-भर है। 'महाभारत' की थीम ही ऐसी है कि वह नये अस्तित्व-बोध-का उपर्युक्त मिथक बन सकती है और कोई सशक्त उपन्यासकार युधिष्ठिरको नायक बनाकर, या दुर्योधनको नायक बनाकर वह सब कुछ कह सकता है, व्यक्त कर सकता है, जिसे सारे आधुनिकतापन्थी दर्शन व्यक्त कर रहे हैं। आधुनिकता-बोधकी यन्त्रणा और महाभारतमें व्यक्त मानवीय अस्तित्वकी यन्त्रणामें बहुत-कुछ साम्य है। आत्मान्वेषण, आत्मसंघर्ष, आस्वादनके तात्कालिक बोध-दर्शन, कुण्ठा, निराशा, अकेलापन, अभिशप्त स्थिति, मूल्योंकी पराजय, क्रोध, विद्रोह आदिके लिए इसकी 'थीम' में अपार अवसर पड़ा है।

पुस्तकालय
077997
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

युरॅपके आधुनिकता-बोधकी एक मुख्य भाव-भूमि है: 'आत्मा' (या 'मूल मानवीय प्रकृति' या 'स्वयं'—चाहे जिस नामसे पुकारें) और 'आत्मिक गिरावट' या 'आत्मिक मूल्य-विकार'। अर्थात् 'मनुष्यकी भीतरी मूल प्रकृति एवं उसकी आत्मिक नस्ल खराब हुई है और आत्मा कट-कटकर गिर रही है मानो इसे गैंग्रीन हो गया है'—इस भावकी अभिव्यक्ति युरॅपके आधुनिकता-बोधसे उत्पन्न सर्जनात्मक साहित्यमें प्रचुर रूपमें हुई है। भारतीय साहित्यके सन्दर्भमें इस 'आत्मिक ह्रास' या आत्मिक गिरावट (स्पिरिचुअल डिके) का अहसास आधुनिकता-बोध प्राप्त साहित्यकारोंने बहुत कम या नहींके बराबर किया है। इसका भी एक बड़ा ही विचित्र कारण है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युरॅपमें आधुनिकता भौतिक समृद्धि और भौतिक शक्ति-सम्पन्नतासे उत्पन्न होती है। भौतिक सम्पन्नताके लिए मानवीय और आध्यात्मिक मूल्योंकी बलि देनी पड़ी। फलत: भौतिक सम्पन्नताका लक्ष्य रखनेवाले जन-समूहको मानवीय मूल्य खोखले और निरर्थक लगे। उन्होंने उनका तिरस्कार कर दिया। इस प्रकार वहाँके, उसी जन-समूहके अल्पमत यानी संवेदनशील साहित्यकार-वर्ग-को लगा कि वे ऐसे युगमें जी रहे हैं जिसमें 'भौतिक सम्पन्नता आत्मिक हानि' का समीकरण ही सही है। युरॅपमें कवि और लेखकको लगा कि यह सौदा घाटेका रहा, या उसे लगा 'आत्मा' का सिपाही होनेके नाते वह आत्मिक हानिके खिलाफ़ लड़ाई छेड़े। फलत: वह भौतिक सम्पन्नताको शंका-की दृष्टिसे देखने लगा (—वर्ड्सवर्थ, रस्किन, कार्लाइल, गेटे, टॉलस्टाय और एलियट) और यह भौतिक समृद्धिके प्रति शंका विकसित होकर 'कर्म' के प्रति शंका बन गयी। सारा युरॅप घोर 'कर्म'के नशेमें मत्त था, उस समय कीर्कगार्द अकेले सोच रहा था। बादमें उस अकेलापनकी सार्थकता महसूस हुई और यही कारण है कि युरॅपके अनेक कवि-लेखक 'अकर्म' प्रधान बौद्ध-दर्शनकी ओर, 'योग'की ओर, 'ज़ेन' की ओर मुड़े। इस ज्वरग्रस्त कर्मशीलताके बीचमें स्थिर शान्त बिन्दुकी खोज जारी हुई। 'कर्म'के प्रति शंका और अनास्थाका चित्र एलियट और डब्ल्यु० एच० आडेनके अनेक पद्य-नाटकों-में (यथा 'कॉकटेल पार्टी' और 'एसेण्ट आॅफ़ एफ़-६') मिलता है। सारे अस्तित्ववादी साहित्यमें 'अकर्म'का दर्शन कहीं-न-कहीं, गौण रूपसे ही सही, विद्यमान है।

पर 'कर्म'के प्रति ऐसी शंका करनेका अवसर भारतीय आधुनिकतावादीको नहीं मिल सकता है। युरॅपकी आधुनिकताका जन्म भौतिक सम्पन्नतासे होता है, तो भारत-में मोहभंग, विद्रोह, अनास्था आदि आधु-निकताके संस्कार भौतिक विपन्नता और अभावग्रस्ततासे उपजते हैं। वे धनी हैं इस-लिए आधुनिक हैं; और हम ग़रीब हैं इसलिए आधुनिक हैं। यह परिवेशगत मौलिक अन्तर आधुनिकता-बोध और मोहभंगके दर्शनको बहुत दूर तक प्रभावित करता है। हम देखते हैं कि मनुष्य भूखों मर रहा है और गैरिकवसन तथा गान्धी टोपी मौज मार रहे हैं और वे सारे मूल्य जो गैरिक-वसन और गान्धी टोपीसे जुड़े हैं, हमें कमीने और लुच्चे ज्ञात हुए। इस प्रकार सारे मूल्यों (आध्यात्मिक और राष्ट्रीय आदर्शों) के प्रति हमारा मोह भंग हुआ। अत: यहाँपर आत्म-चिन्तन, आत्मयन्त्रणा नहीं क्रोध और परम्परा-भंजनके लिए ही उपयुक्त अवसर मिला। पर युरॅपमें यह मोह भंग हुआ—क्रोध नहीं, स्वयंपर पश्चात्तापके रूपसे। महायुद्धोंमें मानवीय मूल्योंकी पराजय दिखी—समाजमें तथा-कथित महापुरुषोंका पाखण्डपूर्ण चरित्र सामने आया—'इन सबके लिए दोषी कौन? स्वयं हम, जो यह सब विश्व-बाजारको दखल करनेके लिए या अधिकसे अधिक भोगके लिए कर रहे हैं।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युरॅपको लगा कि उसने अपनी आत्मा भौतिकताके शैतानके हाथों बेच दी है—ऊब-भरे भोगके लिए। इस प्रकार मोहभंगको पश्चात्ताप और आत्मचिन्तनकी जमीन मिली। इस ज़मीनपर क्रोधसे अधिक आत्म-यन्त्रणाका अवसर था। इस प्रकार दोनों स्थितियोंका मौलिक अन्तर मोहभंग और आधुनिकता-बोध (जिसका एक अंश मोहभंग भी है) को प्रभावित करता रहा।

भारतीय सन्दर्भमें 'कर्म' या 'अतिकर्म'-को शंकाकी नज़रोंसे देखनेका सवाल ही नहीं उठता है। यहाँपर तो हम 'कर्म' के अभावमें पल रहे हैं। जो कुछ हमारा कर्म है, वह हमें एक मुट्ठी अन्न देनेमें भी समर्थ नहीं—यह 'अकर्म'से भी बदतर हैं। इस 'कर्म' और 'अकर्म'के बीच निर्जीव जीवनको यत्र-तत्र नयी कविता और नयी कहानीमें संकेत रूपसे यहाँ व्यक्त किया है। पर यह युरॅपकी आत्मिक स्थितिसे बिलकुल अलग स्वभावकी आत्मिक स्थिति ज्ञात होती है।

यहाँ न केवल आत्मिक स्तरपर, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक स्तरपर भी 'कर्म' और 'अकर्म' के बीचकी स्थिति भयानक प्रश्न-चिह्न है। 'कर्म' और 'अकर्म'के बीच जीनेवाला कोई जानदार भारतीय युवक जब 'अकर्म' के घेरेको तोड़ता है, तो वह राजनीतिमें प्रवेश करता है। पर जैसा कि कहा जा चुका है कि भारतीय राजनीतिकी ट्रेजेडी यह है कि यह 'शब्द'गत है यथार्थगत या 'अस्तित्व'गत नहीं। अस्तित्वसे इसका कोई ताल्लुक़ ही नहीं। पहले यह दोष महज़ वामपन्थी चिन्तनका था जिसमें 'वाम', दक्षिण', 'वर्ग' 'बूर्ज्वा', 'इतिहास', 'जनता', 'समाजवाद' आदि शब्दोंका कोई निश्चित अर्थ नहीं और न वे यथार्थ स्थितिको व्यक्त करते हैं। वे अवसरानुकूल पार्टी या डिक्टेटरकी 'झक' या 'आकांक्षा'को व्यक्त करते हैं—यथार्थ क्या है, यह व्यर्थका झमेला है। ठीक यही बात आज 'धर्म-निरपेक्षता', 'प्रगति', 'राजनीति', 'समाजवाद', 'जनता', 'देश', 'मानववाद' आदि शब्दोंको लेकर कांग्रेस, सोशलिस्ट, स्वतन्त्र, जनसंघ आदि राजनीतिक दल कर रहे हैं। इनका चिन्तन सगुण स्वीकारात्मक और अस्तित्वपरक नहीं, यथार्थ नहीं—सब कुछ आँकड़ों और शब्दोंका खेल है। जब भारतीय युवक 'अकर्म' को तोड़कर 'कर्म' के नाम विद्रोह करता है, बग़ावत-दंगा-फ़साद करता है, जुलूस निकालकर गोली खाता है तो यह महज़ अराजकता और अस्तित्व-निरपेक्ष विद्रोह-भर होकर रह जाता है। 'कर्म'की जगहपर 'केआस'की स्थापना होती है। और इसके अप्रत्यक्ष प्रभावके फलस्वरूप साहित्यमें दो चीज़ें आती हैं—खीझ और अवसाद। आधुनिकता-बोध ले-देकर इसी खीझ और अवसादपर चुक जाता है।

■

तीन अवस्थाएँ होती हैं: सृष्टि, स्थिति और प्रलय। 'अकर्म' स्थिति है, तो दिशाहीन, नियमहीन विद्रोह प्रलय। दोनोंका अन्त अवसाद और खीझमें होता है। क्या आधुनिकता-बोधका उद्देश्य अवसाद और खीझ ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ? क्या सृष्टिके क्षेत्रमें इसकी कोई भूमिका नहीं हो सकती ? इस 'अकर्म' को टूटना है। इसे 'कर्म' की ओर उन्मुख होना है। क्या इस दिशामें आधुनिकताकी कोई भूमिका हो सकती है ? यह बड़ा ही हठीला सवाल है, जो शरारतवश बार-बार तंग करता है। क्या इस दिशाहीन, नियमहीन, विद्रोह और खीझ तथा अवसादके बीच एक स्वीकारात्मक दर्शन, एक दृष्टिकोण, या एक वेल्तानशाउंग (विश्व-दृष्टि) विकसित करनेका अवसर मिल सकता है जो 'अकर्म'के घेरेको तोड़े और साथ ही सही कर्मकी प्रेरणा दे सके ?

अकर्मसे कर्मकी ओर प्रस्थान करनेकी दो दिशाएँ हैं : 'ध्यान' और 'विद्रोह'। उक्त प्रश्नका उत्तर ध्यान और विद्रोहके भीतर ढूँढना होगा।

कुछ सीमाएँ :
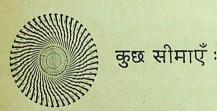
अकर्मको तोड़नेके लिए 'ध्यान' या 'विद्रोह'को—और आदर्श स्थिति तो होगी 'ध्यान' और 'विद्रोह' को परस्पर पूरक रूपमें—अंगीकार करना होगा।

इस समाधानपर कुछ विस्तारसे सोचनेकी ज़रूरत है। छिछले, एकांगी शिक्षित (अशिक्षित कहनेमें संकोच होता है) या अर्धशिक्षित बुद्धिजीवी जो 'देह ही आत्मा है' में विश्वास करते हैं भले ही ध्यानको कर्म न मानें, पर 'ध्यान' भी निश्चय ही कर्म है। यदि 'मनुष्य = शरीर' ही नहीं, 'मनुष्य = शरीर + मन + मनातीत (आत्मा)' है तो ध्यान भी निश्चय ही कर्म है। यदि 'मनातीत' को छोड़कर 'मन' पर भी विश्वास करें तो भी ध्यान एक कर्म है। यदि कविता लिखना एक कर्म है, कहानीका प्लॉट सोचना एक कर्म है, तो ध्यान भी एक कर्म है। यह कर्मकी मानसिक और आत्मिक शैली है। विद्रोह शारीरिक, मानसिक और आत्मिक तीनों शैलियोंमें व्यक्त होता है, जब कि ध्यानके लिए शारीरिकका अवसर नहीं। विद्रोह भी अपने भावगत पहलूमें ध्यान है। कहनेका तात्पर्य यह कि भारतीय सन्दर्भमें आधुनिकताको अस्तित्ववादका अकर्मप्रधान दर्शन अस्वीकार करके कर्मप्रधान दर्शनकी खोज (क्वेस्ट) करनी होगी। और यदि कर्मका सतही वरण हुआ तो फिर वही पराजय और दिशाहीनता उत्पन्न होगी जिसके खिलाफ़ कर्मका वरण किया गया है। कर्मका वरण गहरेमें उतरकर करना होगा। अर्जुनने युद्धका, हत्याका वरण किया पर मनकी उस गहराईमें उतरकर जहाँ पाप और कुण्ठाका विष नहीं—अनासक्ति है। यहाँपर भी कर्मका, 'विद्रोह'का, वरण गहराईमें, ध्यानमें, उतरकर करना होगा, तभी सही कर्मकी प्रेरणा मिलेगी। अन्यथा कर्म 'अतिकर्म' या 'अपकर्म' में या निरर्थक कर्ममें भटक जायेगा और फिर यह प्रयोग भी उसी भाँति असफल होगा जैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्क्सवादी मानववाद-द्वारा लायी गयी वर्ग-क्रान्ति। इससे भी मनुष्यका उदय न होकर नया मोहभंग, नया पाश एवं नयी क़ैदकी सृष्टि होगी। इसीलिए विद्रोहके साथ-साथ 'ध्यान'-की भी ज़रूरत महसूस होती है। ध्यान ही ऐसा कर्म है जिसके द्वारा हम गहराई प्राप्त कर सकते हैं—विद्रोहका वरण सतहपर न करके मूलके गर्भमें उतरकर सकते हैं। अर्जुनका ध्यान स्थूल भाषामें 'गीता' की संज्ञासे पुकारते हैं और उस ध्यानसे जो बोध मिला वह है अनासक्ति और उससे जिस कर्मका वरण उन्होंने किया वह है युद्ध। हमारे कर्मके बारेमें तो हमारी आइडिया साफ़ है: विद्रोह। पर वह किस 'बोध'के सहारे हो और कौन-सा 'ध्यान' उस बोधको जनम दे सकता है—यही है हमारे लिए 'क्वेस्ट' या 'खोज' की 'थीम', हमारी अनुसन्धान-यात्राकी मंज़िल। यह अकर्मप्रधान अस्तित्ववादके आगेका चरण होगा। तथ्य तो यह है कि अस्तित्ववादने भी कामूके माध्यमसे अपनी अकर्मकी स्थितिको तोड़कर विद्रोहका दर्शन वरण कर लिया है।

यहींपर 'यायावर बनाम संन्यासी'का प्रश्न आता है। यहींपर 'गैरिक वसना' वाणीका महत्त्व ज्ञात होता है। आधुनिकता यायावरको, रसके आखेटकको, रसके 'लोफ़र' को भी, स्वीकृत करनेको तैयार है—बल्कि ये ही उसकी सभाके राजगन्धर्व हैं, परन्तु संन्यासीको देखकर वह हिचकती है। सबूत है 'आँगनके पार द्वार'का आधुनिकता-पन्थी आलोचकोंके द्वारा तिरस्कारपूर्ण स्वागत। परन्तु मुझे लगता है कि यह तिरस्कार बहुत सही दृष्टिकोण नहीं। सूक्ष्म दृष्टिसे देखा जाये तो लोफ़र या यायावर और संन्यासी शैलीके हिसाबसे दोनों एक ही हैं। ये दोनों ही नील आकाश-तले विचरते हैं; गिरती वर्षा, बरसती धूपका पान करते हैं; मुक्त और स्वच्छन्द रहते हैं; मौज लेते हैं। लोफ़रसे यायावर, यायावरसे संन्यासी, यह तो शुभका आरोहण है, एक विकास है, अवरोहण या दुर्गति नहीं। हाँ, देखना यह है यह संन्यासी-भाव ईमानदार है या आरोपित। अर्थात् यह लोफ़र और यायावरके बोधोंकी आत्मिक यन्त्रणासे होकर फूटता है या नहीं; यह 'स्व' के द्वारा भोगा गया फ़र्स्ट हैण्ड है या बाहरसे लिया हुआ आरोपित सेकेण्ड हैण्ड है। इस बातकी जानकारीके लिए कोई कसौटी नहीं, पाठक या आस्वादककी अनुभव-क्षमताके अतिरिक्त। संन्यासी-भाव आधुनिकताका ही एक आयाम है। संन्यासी-भावके सारे संस्कार गहरे आत्मिक बोध (डीप स्पिरिचुअल एक्सपीरियन्स) के रूपमें आते हैं। यहाँ 'आत्मिक' (स्पिरिचुअल) को हम धार्मिक या आध्यात्मिक घेरेके बाहर 'मनातीत' (शरीर और मनके प्रवाहोंके आगे) के तटस्थ अर्थमें लेते हैं। 'आत्मा' शब्द पुराना होनेसे सदैव धर्म या अध्यात्मकी ओर संकेत देता है। पर और कोई शब्द भी नहीं है जो 'मनातीत'-को व्यक्त कर सके। यह कठिनाई है।···· धार्मिक अनुभूति भी मनातीत आत्मिक है और वह आधुनिकता-बोधमें अपने शुद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्विकार रूपमें (जैसा 'फ़ोर क्वार्ट्रेट्स'में व्यक्त है) उसी तरह स्वीकृत है जिस तरह अन्य तटस्थ (न्यूट्रल) मनातीत अनुभूतियाँ। उदाहरणके लिए अनासक्ति एक ऐसी 'मनातीत' मनःस्थिति है जो धार्मिक हो भी सकती है, नहीं भी। अपने शुद्ध-रूपमें यह तटस्थ ही रहेगी।

लोफ़र मनकी उस अवस्थामें जाग्रत रहता है जिसमें चरम लक्ष्य है—ऐहिक आस्वादन, नैतिकता-निरपेक्ष ऐहिक आस्वादन। 'आस्वादन' ही उसका लक्ष्य है। यायावर अवस्थामें आस्वादन लक्ष्य नहीं साधन है। आस्वादनके माध्यमसे वह शेष मूल्योंसे 'मुक्ति' खोजता है। संन्यासी-अवस्थामें इस आस्वादनसे भी वह मुक्त है। आस्वादनसे मुक्तिका अर्थ होता है—अपनेसे भी मुक्ति। यायावर-अवस्थामें वह रस-प्रवाहके आवर्त्त चक्रपर घूर्मित है—पर संन्यासी-भाव-बोधकी अवस्थामें वह आवर्त्त-चक्रके छल्लोंपर घूमते-घूमते केन्द्र-बिन्दुपर पहुँच गया है जहाँ एक ही बिन्दुपर वह घूमता है और वह शान्त पर गतिहीन बिन्दु है। यहाँ वह क्वेस्ट या खोजका बोध प्राप्त कर लेता है। एलियटके 'फ़ोर क्वार्ट्रेट्सकी अन्तिम कवितामें यही बिन्दु व्यक्त है। अतः यह ध्यान-योग नयी कवितामें बहिष्कृत नहीं। बहिष्कृत है वह बोध जो महज़ पुरानी शैलीका आरोपण है। जिस बोधके पीछे कोई नयी आत्मिक यन्त्रणा, प्रश्नका दर्द और दर्दसे उद्भूत शान्त केन्द्र-की अनुभूति हो—जिसमें आत्माभिज्ञानका दर्द और दर्दका शान्तबोधमें निर्वाण हो, वह आधुनिक बोध है। 'तेरे घरके द्वार बहुत हैं किससे होकर आऊँ मैं' (गुप्तजी) आधुनिक बोध नहीं, पुराने टैगोरी बोधका आरोपण है। परन्तु यह 'दीप अकेला गर्वभरा मदमाता....', 'आज तुम शब्द न दो, न दो....' या 'मतियाया सागर लहराया....' आदिमें व्यक्त 'स्वयं'से मुक्ति, 'अहं'से याचना तथा 'अस्तित्व'का समर्पण आदि अपने पीछे उलझी अर्थगर्भी प्रक्रियाकी परत-पर-परत समेटे चलते हैं। संकेत इतने समृद्ध हैं कि इनकी पृष्ठभूमिमें गहरी आत्म-यन्त्रणाकी अनिवार्य उपस्थितिका स्पष्ट भान हो जाता है। इन्हें कोई नहीं कहेगा कि ये आधुनिक नहीं। 'आँगनके पार द्वार' की टाइटिल-कविता, तथा शब्द, मौन और अस्तित्वको लेकर लिखी गयी कविताएँ समृद्ध आत्मिक प्रक्रियाकी उपज हैं। 'असाध्य वीणा'का आधुनिकता-बोध कमज़ोर लगता है। पर इसका कारण बहुत-कुछ इतिवृत्तात्मक कथावस्तु है। यदि ध्यानके माध्यमसे सिर्फ़ यही बोध होता है कि मैं वामन हूँ, यतीम हूँ, इस 'अस्तित्व'के क्रूर चक्रके नीचे चूहे-जैसा दुबका हूँ तो दरअसल यह एकहरा बोध है। ध्यानके माध्यमसे सम्पूर्ण बोध वही है जो ऊपरके बोधके साथ-साथ एक पूरक बोध भी दे कि मैं वामनके साथ-साथ विराट् भी हूँ—मौक़ा पड़नेपर मेरे अन्दरका त्रिविक्रम पुरुष भी सामने आ सकता है; चूहा तो नॉर्मल अवस्थामें हूँ पर चरम स्थितिमें विनायक भी हूँ। ऐसे बोधवाला ध्यान निश्चय ही 'कर्म' है—कर्मका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सही और गहरेमें वरण है। (देखिए 'मेघ दुपहरी' : भारती, 'सातगीत वर्ष'की अन्तिम कविता)। ऐसा बोध जो ध्यान प्रदान करे वही श्रेयस्कर है, क्योंकि यह बोध हमें कर्मके मोरचेपर लाकर खड़ा कर देता है।

■

जिस तरह सही युद्ध अनासक्तिसे लड़ा जाता है, वैसे ही सही विद्रोह ध्यानसे संयुक्त होता है। यह ध्यान सारे जनसाधारणके अन्दर भी प्रस्फुटित हो, ऐसा मानना व्यावहारिक नहीं होगा। महाभारतकी लड़ाईमें प्रत्येक सिपाही अर्जुनवाली अनासक्तिसे लड़ रहा था, ऐसा मानना आधारहीन तथ्य होगा। विद्रोह तो जनसाधारणके द्वारा चालू होगा ही—जैसे लड़ाई अकेले सेनापति-द्वारा नहीं, सम्पूर्ण सेना-द्वारा ही लड़ी जा सकती है। परन्तु वह बुद्धिजीवी अल्पमत, जो विद्रोहका नियमन या वातावरण सर्जन करेगा, यदि विद्रोहके मूल्योंकी गहरी पहचानसे सम्पृक्त रहेगा तो विद्रोहके लक्ष्यपर (वह लक्ष्य और कुछ नहीं मनुष्य है) पहुँच पायेगा अन्यथा नहीं। मूल्योंकी इस गहरी पहचानके लिए आरोपित किताबी थ्योरियाँ, यूटोपिया नहीं, ध्यानका माध्यम ग्रहण करना होगा। 'ध्यान'का अर्थ यहांपर बिलकुल ही तटस्थ क़िस्मका है। 'ध्यान' का सीधा-सादा अर्थ है—'स्व'के और अगल-बग़लके सम्पूर्ण 'अस्तित्व'-बोध (यथार्थ मानवीय स्थितिका बोध) से सम्पृक्त मन-द्वारा मूल्योंकी निजी खोज (क्वेस्ट) और निजी उपलब्धि। सम्पूर्ण अस्तित्व-बोधके अन्दर अतीत और वर्तमान तथा भविष्य तीनों आ जाते हैं। वर्तमानके हरएक क्षणमें अतीत 'स्मृति'के रूपमें तथा भविष्य 'सम्भावना' के रूपमें रहता है। अतः स्मृति, वर्तमान अस्तित्व और सम्भावना तीनोंके गुम्फको सम्पूर्ण अस्तित्व कहते हैं। 'निजी खोज'से मेरा तात्पर्य है—पूर्व आरोपित थ्योरियोंसे निरपेक्ष और भिन्न ढंगसे आत्मचिन्तन। ऐसे ध्यानके द्वारा सम्पृक्त मन यदि कर्म (जो विद्रोह हो या युद्ध हो) में प्रवृत्त होता है, यदि कर्म वातावरण-सृजन और नियमन करता है तो वह कर्म कभी भी 'अपकर्म' नहीं बनेगा।

विद्रोहको सदैव सगुण रूपमें देखना चाहिए। यह मनुष्यकी आत्माका प्रधान गुण है। पर आजतक लोग विद्रोह और क्रान्तिमें भेद नहीं करते हैं। परन्तु दोनोंमें सूक्ष्म भेद है जिसे कामूने अपने विद्रोह-दर्शनमें व्यक्त किया है। क्रान्ति थ्योरियों, निर्गुण (एबस्ट्रैक्ट) सिद्धान्तों और अस्तित्व (तात्कालिक मानवीय स्थिति) से निरपेक्ष निर्गुण शब्दोंपर आश्रित रहती है। इस क्षण-क्षण परिवर्त्तित देश-कालके परिवेशमें, जब कि यह जानना मुश्किल है कि अगले क्षणका 'अस्तित्व' कैसा होगा, एक सार्वकालिक यूटोपिया और सार्वकालिक मूल्य-पद्धतिका दावा पेश करना और उस दावेके आधारपर क्रान्ति लाना अन्तमें जाकर आत्मप्रवंचना ही सिद्ध होता है। सबूत हैं इतिहासमें आयी हुई क्रान्तियाँ जिनका उपसंहार मोह-भंगके रूपमें हुआ है। अतः हमें इस निर्गुण-विधाको छोड़कर विद्रोहकी सगुण और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तात्कालिक विधाको अपनाना होगा तब मोहभंग या निराशाको कम अवसर मिलेगा। विद्रोह सगुण और तात्कालिक समस्यापर ध्यान देता है तो क्रान्ति भविष्यकी निर्गुण यूटोपियापर। दोनोंकी कार्य-प्रणालीमें इसीसे भेद हो जाता है। अन्नके ठीकसे वितरणकी समस्या, भूमि-समस्या, वेतन और बोनसकी समस्या, गोली-काण्डपर जाँचकी समस्या आदि सगुण और तात्कालिक समस्याएँ हैं, इन्हें लेकर 'विद्रोह' किया जाये तो अधिक कामयाबी होगी और इसमें मोह-भंगका अवसर नहीं। यही कारण है कि समाजवादी आन्दोलनके इतिहासमें मजदूर-वर्गके लिए जन-क्रान्तियोंसे अधिक लाभदायक हुआ है ट्रेड-यूनियन-मूवमेण्ट। क्योंकि ट्रेड-यूनियन-मूवमेण्टकी समस्याएँ सगुण और तात्कालिक रहती हैं। पर इसका तात्पर्य यह नहीं कि विद्रोह-दर्शनमें जन-क्रान्तिको स्थान नहीं। जन-क्रान्ति यदि सगुण और यथार्थ स्थितियोंको दृष्टिगत रखकर हो तो भी वह बृहत्तर विद्रोह ही है। परन्तु जन-क्रान्तिका आधार सात-समुद्रपार १९वीं शतीमें लिखी गयी कोई किताब हो तो वह जन-क्रान्ति नहीं, वह धोखेकी टट्टीका शिकार है। यह ऊपरसे आरोपित क्रान्ति होगी, क्योंकि इसके जन्मकी भूमि सगुण और यथार्थ 'अस्तित्व' नहीं। इसलिए यह सफल-असफल दोनों हालतोंमें ज़ोर-ज़बरदस्ती और अत्याचारपर ही निर्भर रहेगी। चीनमें ऐसा ही हुआ है। इधर भारतमें कुछ छोटे-छोटे 'विद्रोह' हुए हैं। परन्तु खेद है कि उनमें अराजकताकी भी मिलावट हो गयी थी। विद्रोह और अराजकता-में भी अन्तर होता है। अराजकता महज़ ध्वंस, रस-लोभके लिए की जाती है, परन्तु विद्रोह 'कुछ' या 'किसी' सगुण तथ्यके लिए ही हो सकता है। यह महज़ मौज-शौक़के लिए, ध्वंसके लिए नहीं होता।

वर्तमान विद्रोही राजनीतिज्ञोंमें डॉ॰ राम मनोहर लोहियाका विद्रोह-दर्शन बहुत-कुछ सगुण और तात्कालिक स्थितियोंपर आश्रित है जैसे-रेलवेका तीसरा-क्लास, अँगरेज़ी बनाम हिन्दी, सस्ता खाद्य, ग़रीबी, वग़ैरह-वग़ैरह। उनकी आँकड़ा-परस्ती सगुण है, यथार्थ स्थितियोंके भीतर आँकड़ोंका मूल्यांकन करती है। इसीसे मैं उनके चिन्तनको 'अस्तित्व' परक मानता हूँ शब्दपरक नहीं। परन्तु जितना ही यह सन्तोषकी बात है, उतना ही खेदकी बात है कि उनके दलमें विद्रोह और अराजकताका भेद समझनेवाले बहुत कम हैं। और कभी-कभी तो व्यवहारमें उनका दल ठीक उसका उलटा करता है जो डॉ॰ लोहिया कहते हैं। डॉ॰ लोहिया जाति-वादके घोर शत्रु हैं, जैसा कि आजका कोई ईमानदार बुद्धिजीवी होगा, पर ज़िला-स्तरकी राजनीतिमें उनके शिष्य-प्रशिष्य भी इस जाति-भावका उतना ही उपयोग करते हैं, जितना और लोग। सिद्धान्तके लिए जिस गहरे बोध और ध्यान-योगकी ज़रूरत है उसकी ट्रेनिंग गान्धीजीने अपने शिष्योंको दी थी। इसीसे कहा जाता है कि उन्होंने मिट्टीसे जानदार आदमी पैदा किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गान्धीजीने व्यक्ति-दर-व्यक्ति सम्पर्क-द्वारा अपने 'बोध' का वितरण किया; महज़ वचनका ही नहीं 'बोध'का भी ! यह वितरण डॉ० लोहिया या आजका कोई विद्रोही विचारक नहीं कर पा रहा है। 'वचन' का वितरण चल रहा है, पर 'बोध' का वितरण 'ध्यान'की ट्रेनिंग, जिसके लिए शायद आजके घोर ज्वरग्रस्त क्षुब्ध राजनीतिक वातावरण-में समयाभाव भी है, आजका कोई राज-नीतिज्ञ नहीं कर पा रहा है। यह हमारे 'स्थापित' और 'विद्रोही' दोनों चिन्तन-पक्षों-की कमज़ोरी है।

■

मैं कुण्ठाहीन भावसे स्वीकारता हूँ कि मैं हिन्दू हूँ। मेरी धारणा है कि अपनी पैदाइश-को, अपने बापको, वही इन्कार करता है जिसके मनमें चोर छिपा होता है, जो भीतर-ही-भीतर किसी हीनता-ग्रन्थिसे पीड़ित होता है। हिन्दी साहित्य और भारतीय साहित्यमें ऐसे लोग काफ़ी हैं और मैं उनकी नाराज़गी-की परवाह भी नहीं करता हूँ। पर सवाल उठता है : क्या हिन्दू रहते हुए भी कोई आधुनिक हो सकता है ? मेरा हठ नहीं है कि मुझे आधुनिक माना जाये, पर इस सवालका मुझे जवाब देना होगा तो कहूँगा : "हाँ, निश्चयपूर्वक हाँ।" यदि ऑडेन, एलि-यट ईसाई होते हुए भी साथ-ही-साथ आधु-निकता बोध-सम्पन्न हो सकते हैं तो फिर हिन्दू होते हुए भी क्यों नहीं कोई आधु-निकता-बोध अर्जित कर सकता ? हाँ, हिन्दू-से मेरा तात्पर्य मनुस्मृतिके आचार्योंका चम-रौंधा जूता ढोनेवाला हिन्दू नहीं, मेरा तात्पर्य 'नये हिन्दू'से है। राममोहन राय पहले 'नये हिन्दू' थे।

आधुनिकता-बोधकी प्रधान शर्त्त है—'स्व' की एकान्त और निर्विकार स्वीकृति। 'स्व' मनुष्यके आन्तरिक, मानसिक और मनातीत संस्कार-प्रवाहोंका समवाय है। इसे हम कामचलाऊ ढंगसे 'आत्मा' भी कह सकते हैं। यह स्वीकृति निर्विकार यानी लाभ-हानि आदि स्वार्थपूर्ण चिन्तनसे निरपेक्ष होती है। अन्यथा यह स्वीकृति ध्यान और विद्रोहकी सहायक न होकर 'लेसे फ़ेअर' बन जायेगी। 'स्व' की गरिमाको ही राज-नीतिकी भाषामें व्यक्तिकी गरिमा कहते हैं, जो प्रजातन्त्रकी आधारशिला है और अधि-नायकवाद या निर्गुण यूटोपियाआश्रित क्रान्ति इसी गरिमाका हनन करना चाहती है। विद्रोह-दर्शन इसी गरिमाको स्वीकृत करनेके लिए ध्यानका सहयोग वरण करता है। कोई भी ऐसी व्यवस्था, कोई ऐसा बोध, कोई भी ऐसा सिद्धान्त जो 'स्व'के इस निर्वि-कार रूपको अस्वीकृत करता है, अत्याचार और अमानुषिकताकी भूमिका तैयार करता है। 'अस्तित्व'को (सगुण मानवीय स्थिति-को) समझनेके लिए भी यही 'स्व'का माध्यम आवश्यक है।···· जहाँतक हिन्दू जीवन-दर्शनका सवाल है इस 'स्व'को वह नये-पुराने किसी भी जीवन-दर्शनसे अधिक गहरेमें स्वीकृत करता है। उदाहरणके लिए, हिन्दू जीवन-दर्शनमें विद्रोहको त्यागकी शैलीमें व्यक्त किया गया है क्योंकि यह त्याग भोगकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिपाटीसे विद्रोह है : अतः त्याग भी एक तरहका विद्रोह ही हुआ। और इस त्याग-दर्शनको एक सामाजिक दायित्वके रूपमें 'महाभारत' (१-११५-३६) के एक श्लोकमें बड़ी ही सटीक अभिव्यक्ति दी गयी है :

"त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्
ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत"

"परिवारके लिए एक व्यक्तिका त्याग कर देना चाहिए, उसी भाँति ग्रामके लिए परिवार और जनपदके लिए ग्रामका—परन्तु आत्माके लिए सम्पूर्ण पृथ्वीका त्याग कर देना उचित है।"

यहाँ 'आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्'में 'स्व' गरिमा और अस्तित्वकी गहरी स्वीकृति है। 'आत्माके लिए पृथिवीका त्याग कर दो' का अर्थ यह नहीं कि व्यक्तिके क्षुद्र स्वार्थोंके लिए दुनियाके स्वार्थोंका बलिदान कर देना चाहिए। यदि इसका यह अर्थ निकाला जाये तो श्लोकके शेष अंशोंमें खप नहीं पायेगा। श्लोकके चारों चरणोंमें महान्‌के लिए लघुका त्याग करना बताया गया है। 'एकसे बड़ा है परिवार, परिवारसे बड़ा है ग्राम, ग्रामसे बड़ा है जनपद, परन्तु आत्मा पृथिवीसे भी महान् है।' यह आत्मा विकार-ग्रस्त व्यक्ति नहीं। बल्कि यह व्यक्तिके अन्दर निहित वह 'स्व' है जो उसके लाभ-हानिवाले पहलूसे परे स्थित है, जो उसकी आन्तरिक, मानसिक और मनातीत शक्तियों और संस्कारोंका समवाय या समाहार है, जिसके माध्यमसे वह दया-मया, प्रेम और सौन्दर्य-बोधको अनुभूत करता है। मैं यह माननेके लिए तैयार नहीं कि हम मनके जिस स्तरपर बैंक बैलेन्स या बोनस-वेतनका चिन्तन करते हैं, लोभ-लालचका आस्वादन करते हैं, उसी स्तरपर हम शील, सौजन्य, करुणा आदिका भी बोध करते हैं। ऐसा सोचना असंगत है। 'आत्मा'का यहाँपर सीधा-सादा अर्थ यही हुआ—व्यक्तिके अन्दर-का वह 'स्व' जो उदात्त भावोंके परिवेशमें ही सक्रिय होता है जो दर्शन-कला और साहित्यका सृजन तथा उपभोग करनेकी क्षमता रखता है, जो निर्विकार है। यह 'आत्मा' बिलकुल अकेले रहती है। यह अकेलापन निर्वासन नहीं। यह नित्य अकेला-पन है जो कवि या दार्शनिकके बोधकी प्राप्ति-के लिए आवश्यक है। हिन्दू जीवन-दर्शन इस अकेलापनको निर्वासनके शापके रूपमें न स्वीकृत करके 'स्व' की नित्य अवस्था या आत्माके स्वभावके रूपमें स्वीकृत करता है। इसीसे वह अकुण्ठित भावसे 'आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्'का आदर्श उपस्थित करता है। इस आदर्शके परिवेशमें जीनेवाले आदमीको आधुनिकता-बोधके अर्जनमें इस आदर्शसे सहायता ही मिलेगी, कठिनाई नहीं होगी। साथ-ही-साथ वह घोर क्षुद्र व्यक्तिवाद ('लेसे फ़ेअर') का भी शिकार नहीं होगा। उक्त श्लोकके मर्मको मैंने इसी रूपमें समझा है। मुझे लगता है ठीकसे हिन्दू होना आधु-निक होनेमें सहायक है, बाधक नहीं।

■ ■

नालबारी, कालेज,
नालबारी, असम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरियाया ताल / इन्दु जैन

बंग की धरा हरी
नम और साँवली
घास-पात भरी ।

बच्चे मानचित्र पर उगाते हैं
जूट, डाभ, बाँस, धान, पान की लकीरें
बन जातीं प्यारी, गर्वीली तसवीरें ।

दिखते हैं किन्तु यहाँ
तोंद या आँत
पीठ लगे पेटों की पाँत की पाँत ।
इनमें चकरायी अकेली खड़ी मैं
बंगीय आँखों को लगती हूँ—
दानव या बौना,
बम्बई से लाया गया भेल का दोना ।
इस विरोध, व्याकृति में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताल-मेल आँकती,
बालों में उलझे मच्छर निकालती—
रह जाती
सोयी भी जागती।

जहर-रंग काई-भरे तालकी छाती पर,
अँधियाते बादल पर,
सर्पीले बालों,
सपनीली आँखों के मर्मान्तक जालों पर,
कथ्य पर, अकथ्य पर
एक व्यग्र, क्रुद्ध हाहाकार-सा उगलती
हरियाली।
—कब थी प्रतीक वह सृजन की?

■

१६, दरयागंज,
दिल्ली-६

अनगाया गीत।

—जानकीवल्लभ शास्त्री

छोटे-से सपने का अनगाया गीत!
स्वर भरता अन्तर में अनगुँजा अतीत!!
टेसू फूले थे नभ-वन में
सूरज रज-भरा, झरा तम में,
लरज रहा था खग के मन में संगीत!
छोटे-से सपने का अनगाया गीत!!

रुनझुन पगडण्डियाँ समेटतीं उछाह!
धेनु-चरण-रेणु-तले मुँदी चरागाह!!
वेणु फूँकता था चरवाहा,
जिसका छिछलापन अनथाहा,
श्रम-कण तन, मन सावन,–भरा वारिवाह!
धेनु-चरण-रेणु-तले मुँदी चरागाह!!

निंदियारी ज़िन्दगी हुई-सी गुमराह!
जलते-से स्पर्श छहर सर्द गन्धवाह!!
छितराया रेशमी अँधेरा,
चन्दा ने उझक-उझक हेरा,
कोई नवजात मचल सोयी-सी चाह!
निंदियारी ज़िन्दगी हुई-सी गुमराह!!

■

चतुर्भुज स्थान, मुज़फ़्फ़रपुर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकविता-सन्दर्भ : एक चर्चा । श्याम परमार

अकविताकी चर्चा किसी वादकी चर्चा नहीं है। इसे काव्यान्दोलन या प्रवाद कहना भी अनुचित होगा। आरोपके लिए अकविताके प्रश्नको गुट या आन्दोलन कहनेमें बहुतोंको आसानी होती है। सहज उद्भूत किसी वैचारिक प्रक्रियाको पूर्वाग्रहोंसे मुक्त दृष्टिसे आत्मसात् करना प्रायः कठिन होता है। उसे सतही स्थितियोंके आधारपर हलके स्तरकी आलोचनाका विषय बना लेना स्वाभाविक है। ऐसा उनके लिए और भी अधिक अनुकूल होता है जो पूर्ववर्ती काव्यान्दोलनोंसे प्रतिष्ठा अर्जित कर चुके हैं। आलोचनाके दायरेमें, सुविधाके लिए, इस प्रकार जो सामयिक धारणाएँ बनायी या बना ली जाती हैं उनके फलस्वरूप प्रायः परिवर्तित होती हुई काव्य-प्रवृत्तियोंके सूक्ष्म आयाम बहुत समय तक निश्चिह्नित बने रह सकते हैं।""ऐसी स्थितिमें अकविता शब्दमें रंजित 'अ'की निहितीको निषेधके अर्थमें ग्रहण किया जाना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुतोंको स्वाभाविक लगता है। 'अ'में असुरक्षाकी प्रतीति भी सतही खयालसे अधिक भासित नहीं होती। किन्तु तथ्य यह है कि अकविता सम्पूर्ण रूपसे निषेध काव्य नहीं है। समस्त आरोपोंके बावजूद वास्तविकता अब यह है कि 'अकविता' शब्द क्रमशः हिन्दी कवितामें उभरते हुए नये अन्दाज़के लिए एक पारिभाषिक शब्द हो चला है। अतएव अकविता कविता-विरोधी शब्द नहीं रह गया। उसे 'एण्टी' या 'नॉन पोएट्री' कहना भी उतना ही ग़लत है जितना कि यह आरोपित करना कि अकवितामें कविता नहीं है।

"""अकविता अन्तर्विरोधोंकी अन्वेषक कविता है। इसे पूर्ववर्ती काव्य-प्रवृत्तियोंसे अलग सन्दर्भमें समझना होगा, क्योंकि यह विच्छेदकी द्योतक प्रतिक्रिया है: विच्छेद अपनी औपचारिकतासे, उन सतत मान्यताओंसे जिनका सन्दर्भ अब व्यर्थ होता जा रहा है। स्पष्ट है, अनुभूतिकी संचेतना व्यक्तिको उसके बोझिल अतीतसे काटती है। ऐसा उस स्थितिमें सम्भव होता है जब निजी मन:स्थितियोंको व्यक्ति स्पष्ट निर्ममताओंसे ग्रहण करे और परम्पराओंके सूत्रोंको अन्धासक्तिसे थामे नहीं, तथा वह स्वयंसे अलग न होकर केवल कविताके रूपमें ही अपनी दोहरी सत्तासे मुक्त हो जाये अथवा मुक्त होनेकी छटपटाहट अनुभव करे।

यन्त्रोंके व्याप्त प्रभुत्वके प्रति मनुष्यकी तमाम गतिविधियाँ आश्रित होती गयीं। आश्रयकी इस अवश्यम्भावी नियतिने उसके भावना-जगत्की रीढ़को तोड़ दिया। संवेदनाएँ ऊपरी और अनुपयुक्त होती गयीं। तथाकथित नयी कविता जिस बौद्धिकताके मार्गसे संवेदनाको ग्रहण करती रही उसका अन्दाज़े-बयाँ वयस्क बुद्धिकी कैशोर्य-करुणासे संचित रहा। अवाक् होता हुआ नयी कविताका मन प्रत्येक क्षणानुभूतिको सम्पूर्ण ललकसे पकड़नेके लिए आतुर और उन्मुक्त अवश्य रहा, किन्तु प्रमेय (थियोरम) की तरह 'क्वाड एरड डिमान्सट्रेण्डम' की परिणतिमें, मोपासियन फ़िनिशका कामी और रूमानी व्यंग्यका पोषक बनकर, चमत्कारी प्रयोगोंमें ही कविताके नावीन्यको सहेजता रहा।

उन्नीस सौ सैंतीसके पश्चात् छायावादी सौन्दर्य-दृष्टि यथार्थकी ओर आकृष्ट होने लगी। राष्ट्रीय चेतनासे सम्पृक्त काव्यधाराने 'गौरवशाली' अतीतको प्रश्रय देनेके साथ ही देशकी ग़रीबी और पीड़ाओंको भी देखा, मगर यह दृष्टि यथार्थकी ओर मात्र संवेदना-विगलित ही रही। 'ग्राम्या'में पन्त पहली बार जीवनकी वास्तविकताओंकी ओर मुड़े। भाषा और विषय दोनों दृष्टियोंसे उनके काव्यने नयी कविताके लिए एक भावभूमिकी सृष्टि की। रामविलास शर्माकी कतिपय कविताओंसे होती हुई देशज शब्दोंकी गन्ध नयी कवितामें आयी। लेकिन देशकी सामाजिक चेतनाके साथ राजनयिक तेज़ी और अर्थ-व्यवस्थाओंकी परिवर्तित स्थितियोंके परिणामस्वरूप जो समस्याएँ सामने आ रही थीं उनके लिए तत्कालीन कविताके प्रतिमान पर्याप्त नहीं थे। शिल्प और शब्द पंगु हो गये थे। यहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकर प्रयोगकी सम्भावनाएँ स्पष्ट हुईं। छन्दमुक्त शैली और मुक्त वृत्तोंमें देशज एवं बाह्य छन्द-प्रकारोंको विकृत कर तुकान्त विराम और गद्यवत् छोटी-बड़ी पंक्तियोंमें प्रायोगिकताको प्रमाणित किया गया। 'तार सप्तक' (१९४३) छायावादके मध्यवर्ती विकासका एक पक्ष था और उसका आगामी पक्ष नयी कविता हुआ। अतः गीतकी दुनिया-में आँख खोलनेवाला छायावाद अपनी परि-णतिमें 'नया गीत' तक आया। उसमें व्यक्त बौद्धिक उन्मेष आज भी, अनेक पुराने अभि-प्रायों और व्यंजनाओंमें, देशज अभिवृत्तिका ही सूचक है।

आजकी कवितामें जिस ढंगसे वस्तु-सन्दर्भोंको स्वीकृति दी जा रही है या दी जा सकती है, वह 'अर्थ-लोप' की स्थिति नहीं होगी। उसे संवेदना-विहित, बेलौस और निर्मम मनःस्थिति कहना अधिक उचित होगा। वह ऐसी स्थिति होगी जिसमें साक्षात्-के प्रति निर्णायक एवं निश्चयात्मक कथ्यकी क्षमता है—मगर किसी अन्तिम स्वीकृति और उपादेयताकी तनिक भी आकांक्षा नहीं। आक्रोश यहाँ एक उबाल होगा—उद्बुद्ध क्रोधका रूमानी लहजा। किसके प्रति आक्रोश? तीव्र प्रतिक्रियाओंका सार्थक महत्त्व ही कितना है? परिणति हर स्थिति-में जब निरर्थक ही साबित होनी है तब किसके प्रति कैसा आरोप? यन्त्रके काले पंजोंमें फँसा हुआ मनुष्य जीनेके लिए जिन नियन्त्रित दिशाओंमें समाधान खोजता है, वे सभी दिशाएं दरकी हुई हैं। उनका खोखलापन भावप्रवण आभावृत्तोंसे समय-समयपर ढँक दिया जाता है। नयी कविता-ने परम्परा-विच्छिन्न जिस स्थितिको 'स्वप्न-भंग' की करुणामें जीया उसका अकविताकी संचेतनासे कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता। गिरिजाकुमार माथुरने नयी कविताकी 'स्वप्न-भंगकी स्थिति' को 'वस्तु-सत्ताके साक्षात्कारकी पहली सीढ़ी' घोषित कर आज-की समस्त अस्वीकृतियोंको, लगता है, छाया-वादके उत्तरार्द्धसे जोड़ना चाहा है। मगर वास्तविकता यह है कि उसका अन्त तथा-कथित नयी कविताके साथ सातवें दशकके आरम्भमें ही हो गया। उसे 'प्रक्रियाकी नियति' उसी सन्दर्भमें माना जा सकता है जिसमें नयी कविताका अवसान हुआ। उसके निरन्तर बने रहनेकी विडम्बनाको अब अतर्क्य एवं भाव-विह्वलता-विहीन सन्तुलित विक्षोभ-द्वारा बहुत-कुछ काट दिया गया है। यन्त्रस्थ मानव-नियतिकी ऊलजलूलताओंको कविताका माध्यम अब वह सुरुचि नहीं दे सकता जिसकी भ्रान्ति नयी कवितामें बहुत समय तक बनी रही। अकवितामें अब निरु-द्वेग प्रतिक्रियाएँ लक्षित होती हैं। उसके लिए अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाएँ व्यर्थ हो जाती हैं। वह अपने समयके बहुल सन्दर्भोंको हर स्थितिमें सन्तुष्ट दृष्टिसे स्वीकार नहीं कर पाती। मस्तिष्ककी सतत व्यस्तता उसकी अभिव्यक्तिको बहुत-कुछ अमूर्तकी ओर ले जाती है, और जहाँ वह ताज़गीके क़रीब आती है उसकी व्यंजना सीधी और स्पष्ट होती है। तब वह प्रत्येक नावीन्यके लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने परिचित सन्दर्भोंको पराया बना लेता है। यह एक प्रकारसे अनुतापकी प्रतिक्रिया है जो आजके काव्यमें अनावृत होने लगी है।

नयी कविताने जिन सतही अनुभूतियों-को उपादेय समझा वे 'प्रकट सत्य' की जायी हैं। वे भोगी हुई सार्थकताएँ नहीं, बल्कि परानुभूतियोंके हिन्दी संस्कार हैं। नयी कविताकी आधुनिकता आँख मूँदकर ओढ़ी गयी 'आवाँगार्द' की मूल्यहीनता थी।

अकविता अवाक् मनकी प्रक्रिया नहीं है। सांस्कृतिक अवमूल्यनकी जिस अवस्थामें आजका व्यक्ति-मन सार्थक वास्तविकताओं-को 'एबसर्ड' मानता है, उस अवस्थामें वैज्ञा-निक उपलब्धियाँ और दिशाहारी दौड़में निरत बौद्धिक चेतना अनेक महत्त्वपूर्ण घट-नाओंको व्यर्थ मानती है। उन्नीसवीं शताब्दी-के मध्यमें स्वयं दास्तोवस्कीने अतर्क्य अर्थ-हीनताकी स्थितिको मनुष्यके लिए वांछित माना था, क्योंकि एब्सर्ड स्वाभाविक तत्त्व है। इसलिए बौद्धिक नियमोंसे बद्ध ज्यामिति-रूपा व्यवस्थाके वह सख्त खिलाफ़ रहा। सौन्दर्यकी जिस शक्तिको वह तर्कातीत व्यवस्थाकी रक्षाके लिए स्वीकार किये रहा वह खण्डित और गतिमान वस्तु थी। उसमें परिवर्तनशीलता सदैव सम्भाव्य रही।

अतएव व्यर्थता और निरर्थकताके प्रति अकविताकी प्रतिक्रिया प्रकटतः उद्वेग-विहीन ही होती है। यह जड़ताकी द्योतक स्थिति नहीं, अपितु उस भ्रमसे मुक्ति है जिसमें पूर्ववर्ती कविताकी पीढ़ी विज्ञानकी अवाक् और मूल्यहीनताकी मिथ्या उपलब्धियोंमें रस लेती रही। अकविता सापेक्षको 'वास्तविक स्थिति' में स्वीकारती है, उसका मूल्यांकन नहीं करती, उसे प्रतिष्ठा नहीं देती। प्रतिष्ठा और उपलब्धिका अहसास उसके परिवर्त्य क्रमको जर्जर करता है, उसमें जड़ताको प्रश्रय देता है।

मनुष्यका अस्तित्व भटकावके रास्तेसे गुज़र रहा है। स्पेंग्लरने जिस 'हिम-बिन्दु'की कल्पना की थी, वह आजकी संस्कृतिमें आ गया है। टूटन और अन्ध विकासकी बहुमार्गी दौड़में मनुष्यका आन्तरिक तत्व सड़ने लगा है। एक खोखले अस्तित्व और आहत शून्यमें उसका भविष्य खड़ा है। किर्केगार्दने (१८१३–५५), जो कि दास्तोवस्कीके पूर्व हुआ, मनुष्य-जन्मको नियति-द्वारा लादा हुआ दण्ड स्वीकार किया है, और उसके लिए किर्केगार्द मानता है कि हर व्यक्ति दुनियासे बदला लेता है। बदलेकी इस भावनामें मनुष्य विवशताओंकी यातनासे गुज़रता है। उसे दिशाएँ अवरुद्ध लगती हैं। वेदनासे आवृत्त उसके अस्तित्वकी नियति बँधे हुए व्यक्तिकी भ्रान्ति है। अन्ततः उसका स्वातन्त्र्य माया-दर्पणका थोथा अभिशाप सिद्ध होता है।

अन्तरिक्ष-भेदन और आणविक शक्तिके नियमनके साथ ही मनुष्य जितना भौतिक उपलब्धियोंको प्राप्त करता है उतना ही वह साहित्य एवं कलाके प्रति अस्तित्ववादी तत्त्वोंसे ग्रस्त होता है। आवश्यक नहीं कि उसकी चेतना केवल स्थूल वैज्ञानिकतासे ही परिभाषित हो। बौद्धिक स्तरपर वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस दर्शन अथवा वैचारिकताको उपलब्ध करना चाहती है उसके लिए साहित्य-शास्त्र-की उच्चासीन मान्यताओंसे मुक्त होकर उसका वैज्ञानिक माध्यमोंसे सीधे सम्पर्कित होना बहुत अपेक्षित है। क्योंकि उसके बिना वैज्ञानिक सम्भावनाओंमें बद्ध महत्तर स्वप्नकी अन्तिम परिणति कल्पित नहीं की जा सकती। निश्चय ही वह एक व्यापक विस्फोटके रूप-में घटित हो सकती है। अतः वैज्ञानिक व्यवस्थाके प्रति आस्थावान् वहींतक हुआ जा सकता है जहाँतक कि उसका विस्फोट-बिन्दु नहीं आता। आस्थाप्रद विश्वासोंके माध्यमसे हम अन्ततः विनाश और शून्यको ही प्राप्त करेंगे, ऐसा प्रायः लगता है।

इस सन्दर्भमें अकविता पके हुए निश्चय-की निर्वैयक्तिकता है। बँटे हुए व्यक्तित्वका शोधन है। अनिर्णयका व्यक्ति-निरपेक्ष एवं अनास्थापरक बोध है। अकविता 'वेस्टलैण्ड' की त्रासदीका आगामी चरण है, उसका अन्तिम समाधान नहीं। ईलियटकी भाँति आत्मसंघर्ष कर शान्ति-बिन्दुकी तलाश करना अकविताके लिए अब सम्भव नहीं लगता। बन्ध्या आत्माके फलवती होनेकी प्रतीक्षाका अब प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि समूची व्यवस्था एक ऊब-भरी अनिवार्यता बन गयी है। मनुष्यके भीतर एक 'तिरेसिअस' उद्विग्न है और वह अपनी अनुभूतिकी गवाही देकर समग्र यथार्थको उद्देश्यरहित प्रक्रियाकी अनिवार्यताके रूपमें स्वीकार कर लेता है। मगर इस तिरेसिअसकी कोई परम्परा नहीं—उसका अतीत जगह-जगह कटा हुआ है और जिन क्रम-सन्दर्भोंसे उसका सिलसिला अतीतके वर्तमानसे आजके वर्तमान तक जुड़ता है उसके जीवन-सूत्र लगभग सूख गये हैं। ईलियट स्वयं उस परम्पराका निर्वाह नहीं कर सका जिसमें उसका अटूट विश्वास था और जिसे वह प्रयोगके रूपमें पुनर्भाषित करनेकी निरन्तर संवर्द्धना करता रहा।

अस्तित्वकी जिस निजी सत्ताको सिद्धान्तों-की रूढ़ पद्धतियों-द्वारा आरोपित किया गया है उसे बाह्य अभीप्सासे मुक्त नहीं कहा जा सकता। उस 'व्यक्ति-सत्ता'को पारस्परिक सम्पर्कों एवं आक्रान्त बाह्यके भीतरसे 'निजी वास्तविकताओं' में उपलब्ध करना अकविता-की सम्भावित दिशा हो सकती है। यास्पर्सकी दृष्टिमें जो बाह्य संघर्ष अस्तित्वके लिए अनि-वार्य शर्त है, उनसे हटकर अन्तर्मुखी विवश-ताओंकी दिशाहीनतासे निश्चय ही इन 'निजी वास्तविकताओं' की रोशनी अलग है। दर्शन-की भूमिपर कविताओंकी यह दिशा मार्टिन हेड-गर और ग्रेबील मार्शलसे अवश्य कुछ अंशोंमें सहमत हो सकती है। समग्र बाह्य, व्यक्ति-रुचियाँ, व्यवहार, सम्बन्ध और सामान्य नियमन मनुष्यके अनियत अस्तित्वको कुछ उत्तरदायित्वोंसे बाँधते हैं। बन्धनकी यह स्थिति व्यक्तिपरक अस्तित्वको कई रूपोंमें विनष्ट करती है। हम अनेक बाहरी आवरणों-के भीतर टूटते रहते हैं। टूटनकी अभिव्यक्ति-के लिए जिन माध्यमोंका इस्तेमाल किया जाता है वे भी अभिव्यक्ति-प्रक्रियामें वास्त-विक तथ्योंको अलग कर देते हैं। प्रयोजनीय स्थिति तक आते-आते फिर एक विच्छेदकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थिति बन जाती है। इसे अलगाव या छुपावकी स्थिति भी कहा जा सकता है। हेडगर छुपावकी इस स्थितिका कारण बाह्य अवस्थाका भय मानते हैं। अधुनातन काव्य-की सम्भावित कोशिश इस भयसे मुक्त होकर विच्छेदको कम करना है। मृत्युको अनिवार्य मानकर भी अपने निजत्वको पूर्ण विवेकके साथ स्वीकार कर लेना....और विच्छेदकी त्रासदीको पहचानकर भी पूर्ण 'नास्तिभाव'की पदार्थगत नियतिको स्वीकार कर लेना...। किन्तु इस स्वीकृतिमें भी अस्तित्वका सम्बन्ध शरीरसे अलग नहीं होगा। शरीर सापेक्ष 'मैं' के प्रति अकविता-का दिशा-संकेत इस प्रकार अस्तित्ववादी मान्यताके विपरीत है। इसलिए ग्रेबील मार्शल जब भ्रान्तियोंके निराकरणपर बल देता है, तब वह परावर्तित अनुभूतिकी आवश्यकताको स्वीकार करता है। इस सन्दर्भमें अकविता प्रथम अनुभूतिका अहसास अथवा कच्ची अनुभूति नहीं, बल्कि शरीर और 'मैं' के समझौतेकी प्रतिक्रिया है। अस्तित्ववादी चिन्तनकी अन्धी अनुकृति यह कविता कभी नहीं हो सकती। जहाँ वह है वहाँ वह अकविता नहीं—अनुकृति ही होगी। समाजकी निरर्थक हुई मान्यताओं, कौटुम्बिक प्रवंचनाओं तथा साहित्यिक एवं राजनयिक खोखलेपनसे सम्बद्ध व्यवस्थाके प्रति ऐसी कविता वस्तुतः (अनुकृति न होनेपर) क्षुब्ध मनकी वास्तविक अभिव्यंजना ही होगी।

क्षुब्ध मनकी यह अवस्था विसंगति-बोधके प्रति उस हद तक नैराश्यकी ओर नहीं जाती जहाँ आत्महत्याके रूपमें व्यक्ति-स्वातन्त्र्यको चरमोपलब्धि स्वीकार किया जाता है। वास्तविकताओं और तार्किक ज्ञान-के बीच अलगावकी स्थितिसे घबराकर मानसिक आत्महत्या तक बढ़ जानेसे कोई नतीजा नहीं निकलता। बीटनिकोंके औघड़ धन्धों और क्षुधित पीढ़ीकी ग़लीज़ क्षुधा आत्महत्याकी जीवित चेष्टा है—सम्भोग, वीर्यपात, पसीना और पेशाबके भीतर खुलती प्रयत्नज कविता बेहूदगियोंकी रोमाण्टिक अदासे अधिक कुछ नहीं। कामूने आत्महत्याके समाधानको तमाम विसंगतियोंके होते हुए भी निष्प्रयोजनीय माना है। बीमारी ला-इलाज होनेपर उसे दवाकी आवश्यकता नहीं होती। मात्र ऐसा बोध ही ज़रूरी है कि हमें जीना है और अच्छे ढंगसे जीना है। यहाँतक कि साहित्य और कलाके बूर्जुआ ढकोसलोंको समझते हुए भी आख़िर यह खयाल क्यों आता है कि तमाम बकवासोंको हम समयके सहारे छोड़ दें, सिर्फ़ चेतनाके साथ अभिशप्त होकर भी स्थितप्रज्ञ बने रहें। कामूके निष्कर्षमें एक आक्रोशी निर्णय है, और ऐसा रहस्य गुम्फित है, जो विस्फोट-की प्रतीक्षा कर रहा है। इसलिए विसंगतियोंमें जीवनके प्रति संसवित-भावको स्वीकार लेना क्यों बुरा है ? दोनों स्थितियाँ एक दूसरेसे जुड़ी हुई हैं। एब्सर्डिटी—यन्त्रणा, प्रवंचना, मृत्यु, अभिशप्ति, अतर्क्य स्थितियाँ, अर्थ-हीनताएँ—सब जीवनकी चेतनाको उद्बुद्ध करती हैं और सभी वरेण्य हैं। वरेण्य विद्रोह-भावसे, क्योंकि वही भाव स्वतन्त्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्तित्व-भावकी ओरसे व्यक्त अस्वीकृतिका प्रमाण है। यह 'नेमिसिस' भाव अवश्य है, पलायन नहीं। हम जीते किसलिए हैं? अगर टूटना ही एक मात्र नियति है तो यह बाहरी ढोंग किसलिए? जीनेका बोध संसक्ति है, आस्था है और अस्तित्ववादी दर्शनके बीचकी विश्वस्थ एवं विक्षुब्ध स्थितप्रज्ञता है। यह वही स्थिति है जिसे प्रबुद्ध व्यक्ति अपने युक्तियुक्त तर्कको व्यर्थ पाकर उपलब्ध करता है :

घूँट घूँट
'साइनाइड' पीता हूँ
एक बिसे सोल के
फटे जूते का
टूटा हुआ फीता हूँ
(मन को समझाता हूँ क्रान्ति का पलीता हूँ)
[प्रभाकर माचवे : दो 'मत' = एक हाँ]

प्रश्न यह है कि पूरी तरह अस्तित्वमें आनेके पूर्व ही अकविताके स्पष्टीकरणकी आवश्यकता क्यों हुई? इसके दो कारण हैं : एक तो यह कि अकविताके नामसे अनेक भद्दी और बीटनिक ढंगकी रचनाओंका प्रकाशन और दूसरा यह कि अकविताके प्रति अधकचरे और लघु पत्रिकाओं-द्वारा 'अ' प्रत्ययका निषेधके अर्थमें प्रयोग। जबकि अकविता पूर्णतः नकारात्मक नहीं है, न ही 'अ + कविता' है। 'अकविता' के पाँच अंकों-में प्रकाशित सभी कविताएँ भी अकविताके स्तरकी नहीं कही जा सकतीं। इसलिए स्पष्टीकरणकी दृष्टिसे धुन्धसे आवृत वस्तु-स्थितियोंके सम्बन्धमें चर्चा करना आज बहुत ज़रूरी लगता है।

यह सच है कि हम एक तरह 'नहींत्व'—'नास्तिभाव'—में जीते हैं। क्योंकि मनुष्य चेतन है और स्वयंको विश्लेषित करते समय वह 'वह' नहीं रहता जो वह विश्लेषण-के पूर्व होता है। निरन्तर अपनेसे छूटते जाना—नहींके सिलसिलेमें आगामी 'नहीं'के लिए बढ़ना उसकी नियति है। अकविता तमाम 'नहींत्व'के बाद आगामी विलयनकी भूमिका है। उसका प्रयत्न 'कविता जो हो सकती है' उसके लिए है। इसलिए अकविता पूर्ण अस्तित्वके उत्तरदायित्वकी कविता है। इसका लक्ष्य शून्यतामें नहीं, बल्कि अस्तित्व-को पारस्परिक सम्बन्धोंमें परीक्षित करना है। उसका एकान्तिक भोग सामूहिक नियति-से बद्ध है और उसीमें वह वरणके लिए स्वतन्त्र है। अकविता उस स्वातन्त्र्यकी अभिव्यक्ति है जिसमें उसके पाठककी भी 'सब्जेक्टिविटी' निहित है। 'नीत्शेके ऊँट' (मिथ्या मूल्योंको ढोनेवाला व्यक्ति) को यह सीधी-साधी बात समझमें आना मुश्किल है। क्योंकि जिस ईश्वरके मर जाने-की घोषणा नीत्शे कर चुका है, उस ईश्वरको बहुतोंने पहले ही मार डाला था। ऐसा ईश्वर उस व्यवस्थामें मर गया जो तेज़ीसे फैलती गयी और उसका अवशिष्ट व्यक्तिमें जीवित पशुत्व एवं समाजकी अन्धी चेष्टाओं-में समा गया।

अलबर्ट श्वाइत्ज़रने जिसे 'आध्यात्मिक पराधीनता' कहा है वह हमारी पिछली पीढ़ी-को विरासतमें मिली थी। दक्षिण भारतके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समूचे संस्कारोंमें वह आज भी है। मगर 'आन्तरिक स्वतन्त्रता' की अभिव्यक्ति निश्चय ही हमारी पराधीनताको कचोटती है। अकविताके रूपमें हम इस प्रकार तीव्र संघर्षसे गुज़रते हैं। श्वाइत्ज़रने जिसे 'वैराग' कहा है वह वैज्ञानिक व्यवस्था और बहुविध ज्ञानके बीच व्यक्तिको अन्तर्मुखी बनाता है। वह बाह्य सम्बन्धोंसे समझौता करके भी भीतरसे तटस्थ हो जाता है। बाहरी हीनताओंसे उत्पन्न नैराश्यके बावजूद भी व्यक्तिको जीवित रहना है। अतएव केवल कुढ़न और आत्मघाती दर्शनमें विश्वास करना फिरसे उसी नैराश्यकी ओर लौटना है। जीनेके लिए समस्त बाहरी दम्भोंका, जो व्यवस्थाको अन्धे गर्तकी ओर ढकेलते हैं, मज़ाक़ उड़ाकर जीना ही बेहतर लगता है। अवसादोन्मत्त होना कमज़ोर प्रतिक्रिया है। अवरोधोंके प्रति कुपित होना और बिखरी मन:स्थितियोंको लेकर आसबोर्नके नाटक 'लुकबैक इन ऐंगर' (१९५६) के प्रमुख पात्र जिमी पोर्टर अथवा एमिसके उपन्यास 'लकी जिम' के नायककी भाँति अन्यायके प्रति क्षीण उदासीनता भी एक प्रकारका पलायन है। पलायनके इस आत्मकेन्द्रित स्वरूपकी परिणति मात्र व्यक्ति तक ही सीमित होती है। कविताके स्तरपर यह अनुभूतिकी प्रथम प्रतिक्रिया है। इसमें व्यक्ति अनुभवके आघातसे विमुख हो जाता है। मुक्तिबोधने कलाके तीन क्षणकी अनुभूति की है: "कलाका पहला क्षण है--जीवनका उत्कट तीव्र अनुभव-क्षण। दूसरा क्षण है--इस अनुभवका अपने कसकते-दुखते हुए मूलोंसे पृथक् हो जाना और एक ऐसी फ़ैण्टैसीका रूप धारण कर लेना मानो वह फ़ैण्टैसी अपनी आँखोंके सामने ही खड़ी हो। तीसरा और अन्तिम क्षण है--इस फ़ैण्टैसीके शब्दबद्ध होनेकी प्रक्रियाका आरम्भ और उस प्रक्रियाकी परिपूर्णावस्था तक गतिमानता।" मुझे लगता है, कलाका दूसरा और तीसरा क्षण दोनों अन्योन्याश्रित हैं। तीसरा भेद बहुत सूक्ष्म है और वह दूसरेसे केवल शब्दबद्ध होनेकी प्रक्रियामें ही अलग होता है। दूसरा क्षण अनुभवके मूलसे व्यक्तिकी सम्पृक्तिको पृथक् करता है। अनुभवकी वैयक्तिक पीढ़ीसे इस क्षेत्रमें वह अपनेसे अलग खड़ा होता है। निर्वैयक्तिकताका यह क्षण ही अकविताकी वर्तमान सृजन-प्रक्रियाका प्रमुख क्षेत्र है। इस क्षेत्रके बहुत निकट संवेदनाका क्षेत्र है और उसके अधिक क़रीब होनेसे निर्वैयक्तिकताका संवेदन ग्रस्त हो जाना बहुत सम्भव है। मुक्तिबोधने दोनों क्षणोंके बीच 'कल्पनाके एक रोल' की अवस्था अनुभव की है। क्योंकि कल्पना यहाँ व्यक्तिको पीड़ाओंसे मुक्त करती है। इस प्रकार व्यक्तिबद्ध पीड़ाओंसे मुक्ति प्राप्त करनेकी अनुभूति कल्पनाके माध्यमसे व्यक्तिको उच्चतर स्थितिमें ले जाना है। यह प्रक्रिया अकविताके लिए निराधार हो गयी है। उससे सम्बद्ध तीसरा क्षण अकविताके लिए और भी अनावश्यक हो गया है। कवितामें अब 'भाव-सम्पादन' करना व्यर्थका प्रयास भासित होता है। तीसरे क्षणकी शब्द-साधना', काटछाँट,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ-परम्पराका [illegible] 'फ़िनिश'का लक्ष्य सभी दूसरे क्षणके निर्वैयक्तिक होनेकी प्रक्रिया साहित्यको जीर्ण एवं औपचारिक व्यवस्थाकी ओर लाते हैं। तथाकथित नयी कवितामें इस आग्रह-रक्षाकी परिणति यह हुई कि वह कलाके पहले और तीसरे क्षणके बीच झूलती रही। इस सन्दर्भमें कलाका दूसरा क्षण ही अन्तिम एवं महत्त्वपूर्ण क्षण लगता है। प्रथमानुभूतिके धक्केसे मुक्त होकर व्यक्ति इसी क्षणमें निर्वैयक्तिक होता है और तदाकारितासे मुक्त 'मनके तत्त्वके साथ तटस्थताका रुख़' उसे उपयुक्त लगता है।

अकविता स्वाभाविक कविता-दिशा है। इसे पीढ़ियोंके संघर्षसे जोड़ना भूल होगी, क्योंकि यह किसी दायित्वके प्रति प्रतिबद्ध-स्थितिसे मुक्त है—निस्संग है। नयी कविताकी संवेदनशीलता और सौन्दर्य-दृष्टिके चामत्कारिक बिम्ब-सम्पुजनसे इसकी सत्ता विलग है। इसका वस्तु-जगत् कविके एकदम निकट है और कार्डियोग्रामके चौखाकेमें टूटती हुई लकीरोंकी तरह खण्डित है। अनिबद्ध कलाकी भाँति अकविता राजनीतिके भ्रष्ट प्रतिमानोंसे मुक्त है। यह किसी पूर्वापर दार्शनिक मान्यताओंके प्रति आस्थावान् भी नहीं है। इसका दर्शन यथार्थकी आडम्बर-विहीन अभिव्यंजनासे जुड़ा हुआ हो सकता है। अभी कविताकी शक्ति चुकी नहीं। इसलिए इसके सहज विकासमें अनेक सम्भावनाएँ निहित हैं। कथ्यके अनेक आयाम इसे मिल जायेंगे। भाषा, फ़ॉर्म और कथनकी [illegible]ताके लिए आजतककी 'कविता' और उससे सम्बन्धित प्रतिश्रुतियोंसे ऊपर नये क्षेत्रकी तलाश है। अगर ऐसी कविता गद्यके क़रीब आकर भी कुछ व्यंजित करती है तो वह उसकी तत्कालीन उपलब्धि ही है जो भविष्यमें अनुपलब्धि हो सकती है। कविताका अच्छा सदैव छनकर आता है। अकवितामें इससे अलग कोई अपवाद होने नहीं जा रहा है। सिर्फ़ इतना स्पष्ट है कि साधारण और असाधारणमें अकविता कोई भेद नहीं पाती। जिसे पिछली कविताने असाधारण अनुभूति कहा—वह आजकी मनःस्थितिके लिए साधारण हो गयी और दोनों तरहकी स्थितियोंमें भेद-प्रभेदके प्रश्नपर आजका व्यक्ति अपना सिर नहीं खपाता। उसे वैचारिक मान्यताओंका दास बननेसे भी कुछ उपलब्ध नहीं होता। पहलेसे ही उसकी पीढ़ीपर इस तरहकी अनेक चीज़ोंका बोझ है जो अपने-आपमें हर बार कसौटीपर व्यर्थ सिद्ध हो रहा है। छोटे-छोटे दुःख और असीमित बाह्यके बीच अपनेको सहज कर लेनेका एक ही उपाय है कि हम अपनेको मानदण्डोंसे मुक्त करें अथवा व्याख्यासम्मत कला और काव्यसे अलग कर लें। अभिव्यक्तिके लिए जो सुखद हो—अर्थवत्ता और अर्थेतर कैसी भी स्थितिमें वही अकविताके क्षेत्रकी वस्तु है।

शब्दोंके प्रयोगकी कुछ सहज-संयोगिक अवस्थाएँ यदि अर्थेतर स्थितियोंमें व्यक्त होकर ब्रेख्तके अतियथार्थवादकी झलक देने लगें तो वे अकविताके क्षेत्रसे बाहर नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होंगी। तर्कसम्मत बोध और संवेद्य मनस्के परे भी कुछ अवस्थाएँ वास्तविक सत्यके रूपमें होती हैं, जिन्हें विशेष अन्तश्चेतना ही अनुभव करती है। इन अवस्थाओंके प्रति संयोजित तर्क और बोध व्यर्थ होते हैं। क्योंकि तब हमारे समाधानका रास्ता उन्हीं चिन्तन-पद्धतियोंसे होकर जाता है, जिन्हें वास्तविक प्रतीतियोंमें छोड़ चुके होते हैं। कवितामें ऐसे बिम्ब-स्थल या तो बाह्य सत्यकी आँखोंमें ऊलजलूल होंगे या एकदम सपाट—यकायक गद्यवत् और उनका प्रभाव भी क्षीण होगा। अर्थसम्मत बोध उन्हें पढ़ते ही बाँध लेनेमें असमर्थ होता है। बहुतोंके लिए ऐसे स्थलोंको काव्यकी कोटिमें स्वीकार करना मुश्किल होता है।

स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय हिन्दी कविता द्वैत-मनकी कविता है। उसके असन्तोषकी भूमि है सामाजिक विघटन और प्रतिरोधकी व्यवस्थाका राजनयिक खोखलापन। असलमें यह कविता अभीतक वेतनभोगी बुद्धिजीवीकी कविता है जो या तो सरकारी-अर्द्ध-सरकारी दफ़्तरोंमें काम करता है या व्यावसायिक पत्रिकाओंके बँधे-बँधाये वेतनपर पलता है। उसकी स्वानुभूतिका क्षेत्र नौकरियोंमें उत्पन्न कुण्ठाएँ, नागरिक जीवनकी विडम्बनाएँ, अनुपयोगी शिक्षा-संस्कार, अर्थाभाव, अतृप्ति एवं बहुत-सी सामाजिक मान्यताओंसे मुक्त होनेकी छटपटाहट तथा त्वरित उपलब्धियोंकी यशाकांक्षाएँ हैं। इन स्थितियोंसे न 'अज्ञेय' मुक्त हैं न आजका अकविता-लेखक।

इसी वेतनभोगी बुद्धिजीवीकी आधुनिकता अधकचरी और प्रवृत्तिमार्गी है। '६०के बाद इसमें प्रतिरोधके माध्यमसे जो उखड़ापन आया वह मात्र सहानुभूति ही नहीं, बल्कि कुछ अंशोंमें आरोपित भी है। उसके द्वैत-मनकी स्थिति जीवन-यापन और साहित्य-सृजनमें अलग-अलग है। वह एक मनसे समस्त रूढ़ियोंके साथ मुण्डन और विवाहकी रस्में निभाता है तो दूसरे मन समूची मान्यताओंके प्रति घोर अनास्था दिखाता है। मनकी इन विरोधी परतोंके अनेक उदाहरण आजकी कवितामें लक्ष्य किये जा सकते हैं। इसीलिए तथाकथित नयी कविता जहाँ 'अकविता'की स्थितिसे विलग होती है उस बिन्दुको पिन पाइण्ट नहीं किया जा सकता। उसे उन विधागत रूपोंमें चिह्नित किया जा सकता है जिनमें वेतनभोगी स्रष्टाकी मूल्यसापेक्ष अनुभूतियाँ विगलित मनःस्थितियोंसे ऊपर उठकर विक्षुब्ध हुई होती हैं। वही विक्षोभ सन्तुलनसे क्षत हुए बिना अव्याहत काव्याभिव्यक्तिके सहज प्रयत्नमें विपुल आयामी सिद्ध होता है। उसका निस्संग व्यवहार सृजन स्तरपर एक ओर जहाँ जटिल होता है, वहीं अपेक्षासे अधिक सरल और सीधा होता है। शब्दोंकी सत्ता जटिल स्थितिमें अधिकसे अधिक दिशाओंकी ओर विकेन्द्रित होती है। कविता व्यक्तिके अतलातलसे शुरू होकर बाह्यको पकड़ती है। उसका केन्द्र-बिन्दु है अस्तित्वकी प्रतीति....इसलिए प्रक्रियाका स्वरूप मर्यादा-बुद्धिसे सम्बन्धित न होकर आन्तरिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिखरावके स्तरसे आरम्भ होता है। अभि-व्यक्ति यहाँ काव्यके रूढ़ प्रतिमानोंसे प्रतिबद्ध नहीं होती। कभी-कभी तो ऐसा लगता कि सम्पूर्ण कविता स्पष्ट कुछ नहीं कहती, बल्कि शब्दों और पदोंकी बनावट एक बड़े या अनेक बिम्बोंकी एक साथ सृष्टि करती है। जैसे अनेक रंग, बेतरतीब सामग्री, गत्ते, चिन्दियाँ, कीलें, रेखाएँ कुल मिलाकर 'कोलाज़'में करते हैं। पाठक सिर्फ़ शब्द-सन्दर्भोंसे ऐसी कविताओंमें अपने संस्कारों और अनुभूतियोंके अनुकूल शब्दोंकी अपरिमित शक्तिका भावन करता है।

नयी कविता जहाँ समाप्त होती है वहींसे अकविताका आरम्भ होता है—यह दावा अपने-आपमें एक भ्रान्ति है। नयी कविताके अनेक समर्थ कवि-लेखकोंने इस बातको बल देकर कहा भी है कि सन् साठके पश्चात् हिन्दी कवितामें नवीन प्रवृत्तियोंका उदय हुआ।

सबसे अधिक उल्लेखनीय प्रवृत्ति इस सन्दर्भमें मात्र अकविता है जिसपर पिछले तीन-चार वर्षोंसे बराबर चर्चा हो रही है। इस तरहके विवादमें नयी कवितासे कविता-की चर्चाके विच्छिन्न होनेका उल्लेख स्वयं नयी कविताके कवियोंको अखरने लगा। अपनेसे अलग होती हुई प्रवृत्तिकी चर्चाने उनमें जिस विच्छेदका दर्द पैदा किया उसका परिणाम यह हुआ कि एक प्रश्न पेश किया गया : 'क्या अकविताकी प्रवृत्ति नयी कविता-में पहलेसे थी ?' क्योंकि अकविताकी तरह नयी कविताने अपनी पूर्ववर्ती कवितासे विच्छेदको नये सौन्दर्य-बोध और भाषाके नये संस्कार-द्वारा व्यक्त किया है। पद्यसे गद्यकी ओर बढ़कर एवं अनेक नकारात्मक साक्षात्कारोंको स्वीकार करके उसने अपने विद्रोही स्वभावको खुला क्षेत्र दिया। मगर यह सब '६०के बाद ही सबसे अधिक तीव्र रूपमें लक्ष्य किया गया। इस तरहका दावा करनेके पीछे एक गहरी कुण्ठा और 'पराजय का दर्द' है। इसका अर्थ यह हुआ कि नयी कविताकी स्थिति इसके पूर्व अस्पष्ट और धुँधली थी। उसके सम्बन्धमें लिखे गये कई लेख व्यर्थ थे, क्योंकि तबतक अर्द्धविकसित नयी कविताको ही वे उपलब्धि मानते रहे और यह कि अकविता अब उन्हीं व्याख्याओं-की दृष्टिमें सहसा नयी कविताकी ही वास्त-विक परिणति हो गयी अथवा अकविताके रूपमें नयी कविताका सही दिशामें विकास उन्हें नज़र आने लगा। इस तर्कके आगे उन्हें अकविता कोई नयी चीज़ नहीं लगती। नयी कविताको ही जब हर नयी बातका श्रेय लेना है तो ऐसे कमज़ोर तर्कका आश्रय स्वाभाविक लगता है। उसे गम्भीर नहीं लेना चाहिए।

मगर '६०के बाद प्रकाशित होनेवाले कविता-संग्रहों और फुटकर कविताओंसे किसी स्पष्ट दिशाका संकेत नहीं मिलता। सूक्ष्म व्यंजना, सीधी-साधी भाषा, अनास्था, विद्रोह और एबसर्ड-जैसी बहुत-सी बातोंके मध्य नयी कविताके ढंगकी कविताएं तब भी देखनेमें आती रहीं इसलिए एक मिली-जुली प्रवृत्तिके बीच मोटे सन्दर्भके भरोसे हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'६०के बादके पार्थक्यको अनुभव करते हैं। इस मोटे सन्दर्भको नयी कविताके व्यापक और लचीले परिवेशके अन्तर्गत स्वीकार करनेकी आसक्ति बिखरी चर्चाओंमें देखी गयी। इस विच्छेदका दर्द 'अज्ञेय'को भी '६० के बाद बेहद कुरेदने लगा। शब्दकी अर्थवान् सत्ताकी बात और परम्पराके प्रति सतत मोहके पीछे उनका लक्ष्य यही है कि जो कुछ नया है, वह उनसे ही सम्बन्धित है।

इस विषयको यों भी समयके खण्डोंमें बाँटना ग़लत लगता होगा। अकविता स्वभावी अनेक सन्दर्भ हमें पूर्ववर्ती कविताओं-में मिल जाते हैं और यह कि आजकी अकविता या कविताके परम्परागत अर्थमें आचार्यों और रूढ़धर्मा आलोचकोंके समक्ष अस्वीकृत कवितामें भी हमें नयी कविताके छायावादी अन्दाज़ और नव रहस्यवादकी भावभूमि भी मिलती जाती है। अतएव साहित्यकी प्रवहमान अभिरुचियोंको वाटर-टाइड कम्पार्टमेण्टमें नहीं बाँधा जा सकता। उन्हें दशकोंमें बाँटना भी अब उचित नहीं लगता। एक दशकमें कविताकी कई प्रवृत्तियाँ एक साथ आवर्तित होती हैं—उन्हें केवल स्थूल प्रवृत्तियोंकी दृष्टिसे समझा जा सकता है। कवितामें आज तो व्यक्तियोंकी खोज करना होगा। भाषा, शिल्प और शैली पुराने आधार हैं। अब आधार सिर्फ़ यह होगा कि व्यक्ति भाषाका उपयोग करते हुए खुदको किस तरह खोलता है। आगामी कविता कैसी होगी इसकी भविष्यवाणी हमें नहीं करना है। इसपर अगर विचार करना ही है तो हमें कवि-पाठक (या श्रोता) के सह-सम्बन्धोंके नये सन्दर्भमें सोचना होगा। कविता अब और भी अधिक पढ़ने और देखनेकी चीज़ होती जायेगी।

अकविता प्रतिष्ठाकामी काव्य नहीं है। यह कोई वाद, शैली या शिल्पका आन्दोलन नहीं है। यह तो स्वीकृत कविताकी औप-चारिकताको झकझोरनेकी स्वाभाविक दिशा है। एक तीव्र प्रतिक्रिया है कि कविताकी भावी सम्भावनाएँ इसके निमित्त खुल सकें।

'अकविता' शब्द, जहाँतक मुझे ज्ञात है, नयी कविताके पक्षधरोंके बीच बीटनीक ढर्रेकी ऊलजलूल कविताओंका उपहास करने-की दृष्टिसे पहले-पहल प्रयुक्त किया गया। इस बातमें फिर भी कोई महत्त्व नहीं कि इस शब्दका सर्वप्रथम प्रयोग किसने कब और क्यों किया। आलोचनाके स्तरपर नामका उपयोग मात्र पार्थक्य सूचित करनेके लिए है, और 'अकविता' शब्द अब पूर्ववर्ती कवितासे निश्चय ही उस अलगावकी स्थिति-को पुष्ट करता है। पार्थक्यके नाते अकविता समग्रता विहीन, विवश, अनगढ़ एवं सीमा-न्तक अनुभूतिकी अभिव्यक्ति है। 'तीसरा सप्तक' (१९५९) तथाकथित नयी कविता-की परिणति है। उसकी विवशता अब इस स्तरपर उद्घाटित होती है कि उसे आगेका स्वयंसे कटा हुआ लगता है। अकविताका प्रश्न जब उभरकर सामने आया तो इस पीढ़ीने (जिसे अज्ञेयने शायद 'वाक्'में 'परा-जित पीढ़ीके कवि' कहा है) उसे अपनेसे सम्बद्ध करनेकी चेष्टा की :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शायद कल किसी के कन्धों पर
चढ़ कर मेरा बौना अहम्
विवश हाथ फैलाये

—सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

कहा गया है कि "नयी कविताके एक दौरका समाप्त हो जाना नयी कविताका समाप्त हो जाना नहीं है।" (परमानन्द श्रीवास्तव : धर्मयुग)। काव्य दृष्टिसे परिवर्तन सप्तकोंके कवियोंमें अवश्य आया। शायद उनमें-से हर सचेत कविने 'अभिव्यक्तिके खतरे' उठानेका साहस किया और अपनी सृजन-प्रक्रियाको आसन्न-स्थितिसे टकराया।

अकविता इन तीनों सप्तकोंके पैमानेसे अलग है। यह कालधर्मी कविता है, जिसके लिए कई बाह्य कारण उत्तरदायी हैं। इनका सीधा प्रभाव कविताको औपचारिकतासे विलग करनेकी प्रतिक्रियाओंमें घटित हुआ। अकविताने अपने समयकी प्रचलित उन काव्योपचारिकताओंको नष्ट किया जो 'नयी कविता' में रूढ़ हो गयी थीं। ये औपचारिकताएँ सौन्दर्यवादी रुझानें थीं, अपने क्षुद्रत्व (छोटेपनका भाव) में आदमीकी लिजलिजी संवेदनाएँ थीं, अन्तर्विरोधोंकी फ़ाइडियन जिघांसाएँ थीं, विज्ञानके प्रति चमत्कृत दृष्टि थी और '४७ के बाद आज़ादी-प्राप्त काँग्रेसकी महत्त्वाकांक्षाओंके अन्धे विकासके समाधानकी तरह छायावादसे मुक्त होनेकी थोथी श्लाघा थी। इन सबके साथ सूक्ष्म रागात्मिकाएँ थीं जिनके सूत्र छायावादसे टूटे नहीं थे, बल्कि नयी सीधी-साधी भाषामें ज़्यादा स्पष्ट होकर सामने आये थे।

अकविताके लिए तथाकथित नयी कविताकी उपलब्धि अब निर्वीर्य और ठण्डी हो चुकी है। वह मुक्तिबोधकी लम्बी कविताओंकी तटस्थ मनःस्थितिसे गुज़र रही है, मगर उनकी बहुतेरी संवेदनाओंसे मुक्त है। मसलन कविता अब नंगी है। उसे किसीका लिहाज़ नहीं रहा। किसका, किसलिए लिहाज हो ? लिहाज़के कारण स्वयं अपनी जर्जरताको दम्भी औपचारिकताओं-द्वारा उघाड़ चुके हैं। इसलिए जब '६० के बाद सैकड़ों कविताओंको पूर्वाग्रहोंसे ऊपर उठकर देखते हैं तो उनका अधिकांश जो कहना चाहता है वह तीक्ष्ण मालूम होता है। उनमें अच्छी या बुरी कविताका प्रश्न नहीं उठता। अपनी बातके लिए उपयुक्त शब्द पा सकनेके पश्चात् कई कविताओंमें जो ईमानदारी है उसे यहाँ देखना होगा। बहुत कुछ पाठकके हक़में है कि वह नये मुहावरोंको समझे। क्योंकि जिस बिन्दुपर आजका कवि खड़ा है वह स्पष्ट नहीं है। सामाजिक, आर्थिक और राजनयिक कारणोंसे जिन ग्रन्थियोंको उसने अपने स्वभावसे जोड़ा लिया है उनकी प्रतिक्रिया उसकी भाषामें आयी है। उसका स्वर दूसरा है। भंगिमा दूसरी है, और कभी-कभी तो उसे अपने शब्द भी कम जान पड़ते हैं। मुझे अज्ञेयके 'अर्थगर्भ मौन' के उपयोगकी बात इस सन्दर्भमें अधिक समीचीन जान पड़ती है चाहे 'अज्ञेय' ने इसे किसी और अभिप्रेतमें इसको स्पष्ट करना चाहा हो। लेकिन मैं समझता हूँ, शब्दोंमें निहित अर्थका उपयोग जहाँ पर्याप्त नहीं होता वहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविताकी भाषा शब्दोंकी स्वीकृत अर्थवत्तासे अलग हो चलती है। अकविताके एक अंशमें ऐसा हुआ है। यदि अज्ञेयकी बात लें कि 'कविता शब्दोंके बीच नीरवतामें होती है' तो हम एक ऐसी अति तक पहुँचते हैं, जहाँ रहस्यके सूत्र खुलनेकी पूरी सम्भावनाएँ हो सकती हैं। मगर कविता कोई जादू नहीं—न किसी नव रहस्यवादकी ओर लौटनेकी कोशिश है। वह एक उखड़ा-उखड़ा निस्संग प्रयास है। इसलिए कोई भी कविता पूर्ण नहीं होती, बल्कि यों कहा जा सकता है कि कई अकविताएँ मिलकर स्वीकृत अर्थमें एक कविताकी सृष्टि करती हैं। (इस नाते हमारे समक्ष नयी कविताके मुक्तिबोध एक अपवाद हैं)। श्रीकान्तमें कुछ अकविता भाव है ('भटके मेघ' की परवर्ती कवितामें)। कैलाश वाजपेयीमें आजका कवि कई कविताओंमें एक ही कविता करता है। वह बार-बार खुदको छलता है। उसका अनुताप रूढ़ मुहावरोंकी पकड़में नहीं आता, इसलिए वह निखालिस गद्यमें अपनी बातको नंगा करता है। उसका बस चले तो वह अपने आवेशको एक अनजानी भाषामें सम्प्रेषित करनेसे भी नहीं चूके। इस प्रकार वह रूढ़धर्मा पाठच-वृत्तिसे बदला भी लेता है। जगदीश चतुर्वेदी अपने सीमित मुहावरोंमें वही करता है। मुद्राराक्षसने इधर कुछ कविताएँ (स्टिल लाइफ़, न्यूड आदि) लिखकर यही किया। विष्णुचन्द्र शर्मा और चन्द्रकान्त देवतालेमें भी वही तल्खी है। सौमित्र मोहनमें पर्याप्त असम्पृक्ति है। राजीवका आत्मनिर्वासन इससे बाहर नहीं है। अन्ततः लिखना ही अनिवार्य स्थिति है। मगर इस बातको शायद कोई स्वीकारे कि 'मौन-द्वारा भी सम्प्रेषण हो सकता है'—(अज्ञेय)। तब वह मौन किसपर घटित होगा? सम्प्रेषणकी भूमि क्या होगी? तब लेखककी 'दोहरी सम्पृक्ति' कैसे होगी? वह दो मोर्चोंपर कैसे लड़ेगा?

अकविता '६० के बादकी उस व्यापक प्रवृत्तिका बोध कराती है जिसे चिह्नित करनेके लिए समय-समयपर अनेक नाम दिये जाते हैं। नया कवि पूर्ववर्ती काव्य परम्परासे कई मानेमें कट गया है। उसकी सेक्स अनुभूति झिझक और झेंपसे अलग हो गयी, बल्कि वह इतनी उघड़ गयी, स्वीकृत मान्यताओंके नाते इतनी अपराधी हो गयी कि उसमें उसका स्निग्ध पक्ष सदाके लिए समाप्त हो गया। कामुक विह्वलता तीखे व्यंग्य और अतर्क विडम्बनाओंमें बदल गयी। अब काव्यकी गहरी सत्ता आदिम अनगढ़ता और विद्रूपकी ओर जाने लगी। सह-सम्बन्धोंकी जटिलताओंको निर्मम मूल्योंसे सम्पृक्त करता-सा भाव अकवितामें आया है। वैज्ञानिक दृष्टि और कला-वैविध्यने अतिरिक्त व्यंजनाको रास्ते दिये हैं। इस स्थितिने बहुत-से अनावश्यक तत्त्वोंको काव्य-व्यवहारसे काट फेंका है।

अनिश्चित वर्तमानमें आजके व्यक्तिकी चेतनाका रंग काला हो गया है। कालापन बाहरकी सभी यन्त्रस्थ स्थितियोंका रंग है। विकृत सम्बन्धोंके बीच आदमीके मनपर निरर्थकताका बोध आ गया है। उसका त्रास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब अस्पष्ट नहीं, साधारण हो गया है। इस-लिए कोई किसीसे छुपाता नहीं। गोपन भाव-की समाप्ति अकविताकी महत्त्वपूर्ण उप-लब्धि है।

व्यवस्थाके प्रति विश्वासका उठ जाना, किसी भी समय कुछ भी घटित होनेकी अपेक्षा मिथ्या तर्कपर खोखली व्यवस्थाको ढोना···· और इन सबके परिणामोंको खुली दृष्टिसे देखनेसे खीज और क्षोभ ही अधिक होता है। व्यक्ति इनका उपचार कर पानेमें स्वयंको प्रायः असमर्थ पाता है। गति इतनी तेज़ है कि एकका इम्प्रेशन मन-को ज्यों ही पकड़ना शुरू करता है, उसपर दूसरा इम्प्रेशन आ जाता है और फिर दूसरा और तीसरा····यह सब एक व्यापक विसंगतिका जाल बुनते हैं। इस सिलसिलेमें मुक्तिबोधकी काव्य-प्रक्रियाके सम्बन्धमें तीन अवस्थाओंकी प्रतीति व्यर्थ सिद्ध होती है। अनुभवसे पृथक् होनेका क्रम तो अनु-भूतियोंके सतत आनेवाले धक्कोंमें ही निहित होता है, तब उसे पचानेका प्रश्न ही नहीं उठता। दरअसल इस व्यवस्थामें अकविता-का व्यक्ति परास्त मानव है। इस मानेमें 'परम्परा बुद्धिजीवीका वक्तव्य' एक उपयुक्त उदाहरण है।

यन्त्रके साथ जो अभावका दर्द है, उससे 'त्रास' कैसा ? वातावरणमें अब भी अर्थजन्य विवशताएँ खत्म नहीं हुई हैं। विकासकी बातें सिर्फ़ संख्याओंमें हैं, और उनसे लाभान्वित होनेवाले व्यक्ति थोड़े हैं। युवा पीढ़ीको बूढ़ोंके अवकाश प्राप्त होनेकी प्रतीक्षा करना पड़ती है। ऐसी प्रतीक्षा उन्हें थका देती है, उन्हें झुँझलाहट होती है। कहीं ऐसी बात नहीं है जो सबको समान रूपसे बाँधती हो। पश्चिमका ध्वंसक प्रभाव और भावी युद्धोंका अप्रत्यक्ष भय युवा मनको मूल्यहीनताकी ओर ले जाता है। नगरोंमें ढलते मनपर उन्मादी पश्चिमके अनेक निषेधोंका प्रभाव कई माध्यमोंसे पड़ता है। उनमें सबसे अधिक प्रभाव देहभोगकी दिशामें हुआ। वही निकटतम एवं आवश्यक शमनका मार्ग समझा गया।

मैंने तथाकथित नयी कविताको उत्तर छायावादी कविता मानकर 'अकविता' शीर्षक अपने एक निबन्धमें इस बातको स्पष्ट किया है कि छायावादीका अन्त छठे दशकमें आकर हुआ है। इस बातको गिरिजा-कुमार माथुरने भी स्वीकार किया है।

'६०के बादकी अनेक रचनाओंमें व्यक्त फूहड़पन और बीभत्स रोमान आरोपित है। वह वस्तुतः अनुभूतिशून्य बीभत्स कल्पना-विलासका एक प्रमाण है। वास्तविक अकविता सहज है। वह आरोपित कुरुचि-पूर्ण नंगेपनसे मुक्त है। 'दर्दके कंकाल उठाये फिरनेवाली' अन्धी प्रक्रियाएँ इस क्षेत्र-का विषय नहीं हो सकतीं। इसका क्षेत्र मात्र मानसिक भोग नहीं, निरा समाधान नहीं, बल्कि सधा हुआ व्यंग्य-भाव है। वर्तमानके प्रति अविश्वास और व्यक्त व्यवहारोंके प्रति अर्थहीनताकी प्रतीति तथा त्रासदीकी स्थितिसे गुज़रनेके बादका अव्यक्त विक्षोभ इसकी मुख्य दिशाएँ हैं। इसलिए इतने बड़े दबावमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस कविताका स्वभाव कुछ ऐसा हो गया है कि वह मनोगत कथ्योंको चुभते हुए लघु वाक्योंमें कहती है। टेन्शनमें अकविता अपनी गत्यात्मक नियतिको अनुरूपता देती है। नयी कविताकी अण्डाकार शैली (इलिप्टीकल स्टाइल) में गुम्फित सेक्सका किशोर-भाव अकवितामें निर्वसित होनेसे सकुचाता नहीं। उसने शैली और तथ्यके लिए परिपूर्ण माध्यमकी खोजमें भाषाके औपचारिक आभिजात्यको उतार डाला। इससे कहीं-कहीं निश्चय ही कविता 'टिप्सी' हो जाती है। यकायक उभर आनेवाले नवचेता कवियोंके लिए नंगापन एक कवचका काम करता है। वे एक दूसरेके दर्दको सूँघते हैं और होता यह है उन सबकी गन्ध कुछ समय तक एक-जैसी होती है। इस कोटि-की तमाम रचनाओंमें अति तारसप्तकीय (हाय पिच्ड) किशोर जिघांसाके प्रमाण हमें मिलते हैं।

मैं अपनेको स्वीकार्य इस स्थितिमें नहीं पाता कि तथाकथित नयी कविताका अनुभव एक दम सही है। अनुभव काल-सापेक्ष होते हैं और व्यक्ति-स्वभावसे उनका सम्बन्ध होता है। 'अ'के प्रति एक व्यक्तिका अनुभव दूसरे व्यक्तिकी अनुभूतिसे भिन्न होता है। अनुभूति जिन व्यक्ति माध्यमोंसे व्यक्त होती है उन माध्यमोंके स्वभाव और स्वीकृत बिम्बोंसे होते हुए उसका मार्ग खुलता है। मुक्तिबोधने इस बातको महसूस किया था : "लोग स्वयं कृत विश्लेषणपर जितनी दृढ़ आस्था और निष्ठा रखते हैं वही मुझे बड़ी अविवेकपूर्ण मालूम होती है।" बहुत कुछ बाह्य होता है। उसे हम दीर्घकाल तक स्वीकृत मानकर नहीं चल सकते। स्थितियोंसे गुज़रना और स्थितियोंकी परिकल्पनाको अनुभूतिका दर्जा देना दो अलग चीज़ें हैं। इनमें स्थितियोंसे गुज़रते वक़्तकी प्रतिक्रियाएँ अधिक प्रामाणिक होती हैं और उनकी प्रामाणिकता व्यक्ति-स्तरपर उतनी ही अधिक काल-सापेक्ष भी होती हैं। स्थितियोंसे गुज़र जानेपर नयी स्थितियोंमें उनका महत्त्व एक दस्तावेज़से अधिक नहीं होता। आवश्यकता पड़नेपर उसका मात्र सन्दर्भ ग्रहण किया जा सकता है, उससे अधिक उसकी उपादेयता नहीं रहती।

■ ■

६।१३, पूर्वी पटेल नगर,
नयी दिल्ली-८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो और दो कविताएँ
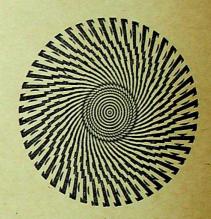
१–उऋण नहीं

उधार चुकता करने के लिए
मैंने इस व्यापार में
तुम्हारी ही मुद्राओं का प्रयोग किया–
और काग़ज़ पर आज सारा हिसाब
बेबाक़ है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब केवल औपचारिकता बन चुके हैं ।

फिर भी—
अपने ही कमाये हुए सिक्कों में
एक बार
मूल्यों को आँकने की आकांक्षा
उऋण
होने नहीं देती

■

२—एकान्त दूरी

वह
जिसे तुम आजकल नुस्ख़ा बना कर बाँटते हो
वह
जिसकी ओट में
तुम अपना मुँह छिपाते फिरते हो-
वह
जिसमें तुम
अब सब कुछ तटस्थ और सार्वभौम ही
पढ़ना चाहते हो-

वह
जिसे तुमने
अब इश्तहारकी तरह
सड़क से बात करती दीवार पर
सबके भले के लिए
चिपका दिया है-
वह मेरा एक निजी ख़त है :
—वे लोक-चेहरे जिसमें
सायास झाँकना चाहते हैं । उन
सबसे काट कर
सिर्फ़ निजी बनने की यन्त्रणा के बीच
जनरंजन के सार्वजनिक-विज्ञापन की
अस्वीकृति
अलगाव की एक अतिरिक्त दूरी
तै करती रहती है ।

—केशव कालीधर

■

द्वारा ६५ टैगोर-टाउन
इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१—साथ

बहुत देर तक चुप रहने और
कुछ न करने के बाद,
उठता हूँ—'अब कुछ करूँगा'
गुज़रते रहते हैं देर तक दृश्य
जिनसे मैं मन-ही-मन चलने वाली भाषा
से जुड़ा हूँ—
किन्हें बताऊँगा ये दृश्य और क्यों, कैसे,
कहाँ हैं शब्द सही और चीज़ें
कि उठा लूँ उन्हें और जड़ दूँ दृश्योंमें।
क्या है मेरे हाथ में
और मेरे साथ,
ठहर कर जीने का समय नहीं कम-से-कम!
तो फिर क्या,
मन की चीज़ें मन में और हाथ की हाथ में,
और सुबह, शाम, दिन, रात। बीतना।
सुनते हुए एक अस्थिर आवाज़, काँपता मन
और सुदूर ध्वनियाँ।
कहाँ और किसे सबसे पहले मेरी ज़रूरत है
जानूँगा, और जानूँगा तो मानूँगा नहीं,
मानूँगा तो कितनी देर तक और कितनी
दूर तक चलूँगा!
बिना माने भी नहीं रहूँगा!
रखना चाहता हूँ कम-से-कम इसे अपने साथ,
'अब कुछ करूँगा।'

■

२—गाँठ

बार-बार पलकें मुँद जाती हैं,
कुछ रोकता हो जैसे उन्हें खुलने से!
ज़ोर लगा, हल्का-सा, फिर भी मैं देखता हूँ
अपने को गुज़रते हुए उन्हीं दृश्यों के बीच से।
कुछ छूट गया है कहीं, कुछ भूल आया हूँ
किसी असावधान क्षण में—
जी रहा हूँ उसके बाद से कितना अलग हो
शरीर से।
देखता हूँ, पर समझ नहीं पाता हूँ,
सूँघता हूँ—गन्ध…गन्ध….पर इच्छा नहीं
जागती,
पहली-सी।
इकट्ठा हैं ढेरों चीज़ें, गड्डमड्ड हो गये हैं दृश्य,
जो कुछ साधारण था, वह जैसे है रहस्य,
जितना समेटता हूँ, उतना ही लगता हूँ
असहाय।
कामना नहीं रही, पास में कल-सी।
फिर भी गुज़रता हूँ गिनते हुए दरख़्त, बाग़,
रस्ते नगर के;
पढ़ता हूँ लिखे हुए नाम, हर घर के।
कोई एकान्त, अछूता चमकता धूप में, कोई
अँधेरे में,
कोई एक शान्त स्वर, बहता है शोर में।
खुले हुए दिन की, धूप वाली लहरों पर तैरता,
ढूँढ़ना चाहता हूँ गाँठ वह, खोलना चाहता,
चाहता, चाहता!

—*प्रयाग शुक्ल*

■

५०५५, सन्तनगर,
करोल बाग़, नयी दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१–दो तथ्य

मेरी आँखों में
हर समय
इन्द्रधनुष के सपने पलते थे
कई इन्द्रधनुष मैंने
अपने आकाश टाँग लिये
बदरंग होकर जो
कुछ समय पश्चात्
धुल-पुँछ गये
मेरी स्मृति से।

सड़कों पर गिरे
कुछ पत्थरों से
अकसर मुझे ठोकर लगती थी
उठाकर मैंने जिन्हें
अपने आँगन डाल लिया
अब मुझे आदत पड़ गयी है
पत्थरों के बीच चलने की।

■

२–अन्धापन प्रेम का

रास्ते में
मेरे गालों पर
गरम लू के
करारे चाँटे पड़े
मुझे लगा
मलयानिल की ताज़गी ने
मुझे सहलाया।
एक किनारे
सूखी घास पर
कुछ खुरदरे पत्थर पड़े थे
मैंने उनके बीच
बहती जलधारा देख ली।
किसी चौबारे
एक खाली गमला
औंधा रक्खा था
मुझे उसमें
तुलसी के बिरवे
झूमते नज़र आये।

—किरण जैन

■

द्वारा-श्री पी० के० जैन,
फ्लैट नं० ९, १० वुड स्ट्रीट,
कलकत्ता-१६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखकके शब्दोंमें : "किसी रचनाको पढ़ते हुए, और अक्सर, दो भागोंमें बँट जाते हैं; एक भाग उसकी तात्कालिक प्रतिक्रियाएँ और प्रभाव लेता चलता है और दूसरा उनपर टिप्पणियाँ···फिर दोनों एक दूसरेके आमने-सामने आ जाते हैं और एक बहस शुरू हो जाती है।""मेरी नज़रमें नयी और सार्थक रचना आपके हाथोंमें कोई निष्कर्ष थमाकर नहीं चल देती, आपमें एक बहस शुरू कर देती है।"····

पिछले वर्षके कुछ कहानी-संग्रहोंपर
यह अपने आपसे एक बहसका पहला हिस्सा :

० जैनेन्द्रकी कहानियाँ (दसवाँ भाग)

—पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली

० काठका सपना : मुक्तिबोध

—भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, कलकत्ता

० भटकती राख : भीष्म साहनी

—राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

० फ़ौलादका आकाश : मोहन राकेश

—अक्षर प्रकाशन, दिल्ली

१९६६ के ४ कहानी-संग्रह :

कहानीके विस्तृत होते हुए वृत्त—१

—धनंजय वर्मा

Turning and turning in the widening gyre...W. B. Yeats,
(The second coming)

यह एक अजीब बात है, मगर सच है, कि किसी रचनाको लेकर जो आन्दोलन-उद्वेलन, बहस-मुबाहसे और जीवन-मरणके प्रश्नोंकी तरह जो संघर्ष लेखकोंके एक सीमित वर्गमें हो जाते हैं; उस रचनाका पाठकवर्ग उनसे लगभग अछूता होता है वह उतनी तीव्रतामें प्रतिक्रिया नहीं करता गोकि करना उसे ही चाहिए। तूफ़ानकी जगह प्याला नहीं, जीवनकी खुली जमीन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी उस दिन मैंने उससे, सम्मिलित रूपसे पढ़े गये कुछ कहानी-संग्रहोंपर उसकी प्रतिक्रिया पूछी तो उसने बड़े ठण्डे अन्दाज़में कहा—"सबसे पहले जैनेन्द्रजी, उनकी रचनाओंसे मैं पहले जितना प्रभावित था, इधर उनसे उतना ही अधिक मायूस होना पड़ता है। लगता है, जो लेखक जितना प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित होता जाता है वह पाठकके साथ उतना ही बड़ा विश्वासघात करता है। इसका कारण शायद यह है कि प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित लेखककी साख तो बन चुकी, अब तो वह जो भी लिखेगा, बिकेगा; बिकेगा ही नहीं चर्चित भी होगा। अपनी इस साखका सबसे अधिक लाभ, इधर, जैनेन्द्रजी उठा रहे हैं।"

हम लोग इस शान्त और ठण्डी बस्तीमें पुस्तकोंसे ही कुछ हलचल पाते हैं और उनपर अपने विचार-प्रतिक्रियाओंके आदान-प्रदानसे, बौद्धिक ऊष्मा।....इधर उसकी प्रतिक्रियाएँ काफ़ी तेज़ और सख़्त होती जा रही हैं। जितनी विगलित प्रशंसा और भाव-विभोर प्रतिक्रिया उसकी पहले हुआ करती थी, अब उतनी ही तीक्ष्ण-तुर्श और सवा-लिया। पहले वह बड़े प्रतिष्ठित और चर्चित नामोंके आतंकसे दबा हुआ लगता था, अब वह उनके आगे ऐसे प्रश्न-चिह्न लगा देता है कि आश्चर्य होता है।

मैंने कहा—"बात यह है कि प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित लेखकोंके विषयमें हमारी एक धारणा बन चुकी होती है और जब भी हम उनकी कोई नयी कृति उठाते हैं, तो अकसर अपनी उसी धारणाका समर्थन चाहते हैं। अब यदि लेखक कोई नयी जमीन तोड़नेकी कोशिश करता है, तो हमारी उस पूर्व धारणाको धक्का लगता है। क्या यह ज़रूरी नहीं है कि एक लेखक अपनी ही 'इमेज'को तोड़े, उसे अतिक्रमित करे?"

—"मगर जैनेन्द्रजीने तो वह भी नहीं किया है। वे तो अपनी 'इमेज'को न केवल 'रिपीट' ही कर रहे हैं बल्कि उसे विकृत भी कर रहे हैं। उनकी कहानियोंका दसवाँ भाग, उनका 'अद्भुत और प्रतिनिधि' संकलन कहा गया है। यही नहीं, उसकी कुछ कहा-नियाँ अत्यन्त 'विवादास्पद' भी कही गयी हैं जिन्होंने बौद्धिक स्तरपर गहन उथल-पुथल मचायी हैं।....यह उथल-पुथल साहित्यिक हलकोंमें भले उठी हो मुझे तो उन्होंने बिल-कुल ही उत्तेजित नहीं किया—न तो वैचा-रिक धरातलपर और न ही भावनात्मक स्तरपर। दरअसल जैनेन्द्रकी कहानियोंमें उत्तेजित करनेकी शक्ति ही नहीं है। वे अब बासी और बेस्वाद लगती हैं और उनके पात्रोंकी तरह ठण्डी और निर्जीव। मुझे लेखकके जीवन-दर्शन, उसके चिन्तन-मननसे कुछ नहीं लेना-देना, मैं तो ठोस और मूर्त चरित्रसे साक्षात्कार चाहता हूँ और उनसे या उनके निर्वाहसे ही किसी कहानीकारकी शक्तिका पता लगाता हूँ। चरित्र ही तो किसी लेखककी अनुभूति सम्पदा और रचना-शक्तिके प्रतिबिम्ब होते हैं और जैनेन्द्रके अधिकांश चरित्र रबरकी गुड़ियों-से होते हैं—पुंस्त्वहीन और रीढ़हीन बेचारे! ये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसे क्यों होते हैं, जैनेन्द्रजी यह भी नहीं बताते। ऐसा लगता है कि हर चरित्रके व्यक्तित्वके साथ जैनेन्द्र खिलवाड़ करते हैं, बलात्कार करते हैं; उन्हें अपने तर्क-कुतर्क या दर्शनाभासकी ध्वजा थमाकर जैसा चाहे, जिधर चाहे तोड़-मरोड़ देते हैं। उन्हें उनका जीवन तो जीने ही नहीं देते, हर बार खुद आकर हस्तक्षेप या मध्यस्थता करने लगते हैं, इसीलिए उन्हें कहानियोंमें भी ट्रिक्स, झटकों, और संयोगोंका सहारा लेना पड़ता है और वे एकदम नाटकीय, अस्वाभाविक, अविश्वसनीय, और 'कण्ट्राइण्ड' लगती हैं। कहानी पढ़नेके बाद जब उसपर शक होने लगे, तब वह क्या कहानी हुई? जब कहानी-के पात्रोंके प्रति ही आपके आग्रह होंगे; जब कुछ आग्रहोंको लेकर ही कहानीकी वस्तुका चयन किया जायेगा या कहानी जब आपके पूर्वाग्रहों (प्रिजूडिसेस) को अभिव्यक्त करने-का माध्यम होगी, जब वह आपके आत्म-प्रक्षेप (सेल्फ़ प्रोजेक्शन) ही नहीं आत्म-रेचन (सेल्फ़ पर्गेशन) का साधन होगी तब वह सार्थक कैसे होगी?—जैसे "मुक्त-प्रयोग' या 'कष्ट'। इनमें साफ़ लगता है कि लेखकका व्यक्तिगत (राग) द्वेष यहाँ काम-कर रहा है, इसीलिए इनका व्यंग्य भी अभिधा होकर, सपाट रह गया है।"

हिन्दीके इतने प्रतिष्ठित लेखकके विषयमें उसके ये विचार सुनते हुए मुझे बुरा लगा। मैंने कहा—"दर असल जैनेन्द्रकी अपील भावनात्मक नहीं, वैचारिक है। वे विचार-प्रेरित लेखक हैं और उनके साहित्यको इसी दृष्टिकोणसे पढ़ा जाना चाहिए। उनकी कहानियाँ भी उनके विचारों और चिन्तनकी वाहिका हैं, इसीलिए वे तुम्हें साधारण कहानियोंसे पृथक् ही नहीं अजीब भी लगी हों तो आश्चर्य नहीं, उनमें 'जीना' नहीं, 'जानना' प्रमुख है।"

—"मैं जानता था, तुम यही तर्क दोगे। इसके सिवाय तुम्हारे पास कहनेको और है क्या? मगर विचार क्या हैं? कहाँ उपजते हैं? उनकी सार्थकता कहाँ है?....विचारों-की यात्रा यदि जीवन(में)से हो तो किसे एतराज़ होगा? मगर इन कहानियोंमें तो विचारोंके साँचोंमें जीवनको काट-छाँटकर प्रस्तुत किया गया है और विचार भी काल्प-निक, वायवीय। मैं इन्हें काल्पनिक भी न कहूँ, मनोविलासी कहूँ तो ज़्यादा सही होगा क्योंकि कल्पना कहीं-न-कहीं जीवनानुभवसे जुड़ी, उसकी प्रतीक, होती है। यहाँ यह हाल है कि न तो पात्र, न स्थितियाँ; न भावनाएँ और न विचार—कुछ भी स्वाभा-विक, और जीवनसे सम्पृक्त, नहीं लगते। एक अजीब गोल-मोल-सी (निरर्थक) भाषा-के सहारे आप कहानी पढ़ तो जाते हैं लेकिन वह आपको कहीं नहीं पहुँचाती—न पात्रसे साक्षात्कार कराती, न किसी अनु-भूतिसे जोड़ती, न भावनात्मक या वैचारिक किसी स्तरपर आन्दोलित करती है।"

—"लेकिन तुम्हारी प्रतिक्रिया यह तो बताती है कि जैनेन्द्र विवादास्पद लेखक हैं; फिर यह प्रतिक्रिया बहुत सामान्यीकृत है।"

—"हाँ, जैनेन्द्र इधर 'विवादास्पद'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहे जितने हो गये हों, 'विवादयोग्य' वे रहे नहीं। दरअसल आजकी कहानीके सन्दर्भमें, प्रामाणिक और सार्थक कहानी, किससे भिन्न है या उसे क्या नहीं होना चाहिए इसकी उम्दा मिसाल जैनेन्द्रकी कहानियाँ हैं।.... कोई एक कहानी हो तो उसका नाम लिया जाये। यहाँ तो उनकी जिस कहानीको पढ़िए यही प्रतिक्रिया होती है। 'किताब सामने है और अनुभव होता है कि दुनिया है और नहीं है। क्या है सब ? है, और व्यर्थ है। पढ़ रहे हैं और शब्द और वाक्य भी पढ़े जा रहे हैं, पर कुछ नहीं है और सब थोथा है ! बेकार और व्यर्थ है।' अन्तिम कहानी 'मुक्त'की ये पंक्तियाँ मेरी इन कहानियोंको पढ़ते हुए, प्रतिक्रियाको बखूबी व्यक्त करती हैं। तुम कह सकते हो कि यह एक पाठक-की प्रतिक्रिया है और एक पाठककी, साहित्य-के विषयमें रायज़नी अधिक महत्त्व नहीं रखती।"

—"मैं ऐसा तो नहीं कहूँगा मगर यह ज़रूर सच है कि जैनेन्द्रजीको अब पाठकों-की चिन्ता भी नहीं है।....मगर तुम्हें भीष्म साहनीसे शायद यह शिकायत न हो। एक पाठकको अच्छी लगें ऐसी ही उनकी कहानियाँ होती हैं या कहूँ उनकी कहानियोंमें लोकप्रिय होनेकी काफ़ी गुंजाइश है।"

—"ऐसी बात नहीं है कि पाठकको हलकी-फुलकी चीज़ ही पसन्द आती है। मैं फ़िलहाल भीष्म साहनीकी बात नहीं करता, एक दूसरी बात करता हूँ। दरअसल कुछ लेखक, पाठककी सत्ताको नकारते ही नहीं, उसका उपहास भी करते हैं जबकि अन्तिम निर्णय पाठकके ब्याजसे, समयका ही होता है। उन्हें नहीं मालूम शायद, कि पाठक भी इसी जीवन-में रहता है, उसको देखने-समझनेकी उसके पास भी संवेदना और दृष्टि है, लेखकके पास सिर्फ़ अभिव्यक्तिका अतिरिक्त माध्यम और है, और इसीलिए, सिर्फ़ इसीलिए हम उसकी क़द्र करते हैं। और ऐसा भी नहीं है कि सार्थक और वाक़ई महत्त्वकी रचनाएँ पाठकके सिरपर-से ही गुज़रती हैं। मुझे मुक्तिबोधकी कहानियोंमें वह वैचारिक उत्तेजना और उसकी शक्ति भी मिली और बावजूद इसके कि उनकी कहानियाँ सामान्य कहानियोंसे अलग लगीं, अच्छी लगीं, उन्होंने मुझे बहुत गहरे तक प्रभावित और आन्दोलित किया...." उसके स्वरमें विश्वास था।

—"उसका एक कारण तो इधर मुक्तिबोधको लेकर की गयी चर्चाएँ हैं। इन चर्चाओंसे मुक्तिबोधका जो इमेज बनाया गया है उसके प्रभाव या कुछ-कुछ आतंकमें आकर ऐसा लगना स्वाभाविक है। तुम, अपने साहित्यिक संस्कारोंका प्रमाण देनेके लिए ऐसा अवश्य कहोगे। इधर लोग जिस विगलित श्रद्धा और पूजा भावसे मुक्तिबोध-को उठाये हुए हैं उसकी पृष्ठभूमिमें तुम्हारी यह प्रतिक्रिया बिलकुल पूर्वापेक्षित थी।" मैंने लगभग आक्रमणके स्वरमें कहा।

—"तुम्हारी पूर्वापेक्षा ग़लत रही, कहूँ तो शायद तुम्हें बुरा लगे। मैं अपने तईं कह रहा हूँ कि मुझे साहित्यकी राजनीतिसे कुछ भी लेना-देना नहीं है इसलिए साहित्यिकता-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी गौरवपूर्ण परम्परा में

भारतीय ज्ञानपीठ

द्वारा

एक और नयी प्रस्तुति

शान्तिनिकेतन से शिवालिक

आचार्य पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी की षष्टिपूर्ति के अवसर पर

'शान्तिनिकेतन से शिवालिक'—
इस शीर्षकसे आपको लगा होगा कि यह यात्रा-वृत्त है। जी हाँ, यह यात्रा-वर्णन ही है! पर यहाँ न तो यात्रा सामान्य है और न ही यात्री! यह एक साहित्य-यात्रा है: यात्री हैं हिन्दीके मूर्द्धन्य साहित्यकार आचार्य श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी। यह यात्रा देशगत उतनी नहीं है जितनी कि कालगत। गत चार दशकोंकी चतुर्दिशाओंमें व्याप्त यह यात्रा समूचे हिन्दी-साहित्यकी उपलब्धियोंकी प्रतीक है और यह पुस्तक इसी कालव्यापी सारस्वत यात्राका एक जीवन्त दस्तावेज़ !!

सब सात खण्डों—जीवन-यज्ञ, इतिहास-दर्शन, सन्तुलित दृष्टि, अतीत कथा, निर्बन्ध चिन्तन, विविध, इण्टरव्यू और पत्र—में डिमाई आकारके ५०० पृष्ठोंकी सामग्री। आचार्य श्री द्विवेदीके ग्यारह दुर्लभ छायाचित्र। अद्वितीय आवरण और सुन्दर मुद्रण।

सम्पादक
शिवप्रसाद सिंह

सहयोगी लेखक

*

इलाचन्द्र जोशी, परशुराम चतुर्वेदी, करुणापति त्रिपाठी, सीताराम सेकसरिया, प्रभाकर माचवे, नेमिचन्द्र जैन, देवराज, शम्भुनाथ सिंह, धर्मवीर भारती, विद्यानिवास मिश्र, भगवतशरण उपाध्याय, बलराज साहनी, शिवानी, कुँवरनारायण, रघुवंश, देवराज उपाध्याय, कृष्णनाथ, रामदरश मिश्र, ठाकुरप्रसाद सिंह, रमेश कुन्तल मेघ, रवीन्द्र भ्रमर, विश्वनाथ त्रिपाठी, कैलाशचन्द्र भाटिया, रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, मधुरेश, रामसुरेश त्रिपाठी, नवलकिशोर, बच्चन सिंह, नागेन्द्रनाथ उपाध्याय, सुधा राजपाली, मालती तिवारी, भारती मिश्र, हिरण्मय, श्याम तिवारी, वासुदेव सिंह, विनोदिनी सिंह, कृष्णबिहारी मिश्र, श्यामनन्दन किशोर, काशीनाथ सिंह, विवेकी राय, प्रेमचन्द्र जैन, श्यामसुन्दर शुक्ल, रमेशचन्द्र शाह।

मूल्य बीस रुपये

■ ■ ■

कुछ जातियाँ, ख़ास तौरसे वे, आन्तरिक रूपसे अत्यधिक कल्पना-प्रवण रही हैं और सांस्कृतिक स्तर पर वैभव-सम्पन्न, उनमें बहुधा एक अद्भुत क्षमता दीखती है मिथकों और प्रतीकोंके निर्माणकी और फिर उन मिथकों और प्रतीकोंके सहारे ऐसे अवसरपर अपनी उस आन्तरिक संकल्प-शक्तिको जगानेकी, जो इस गहन संकटके समय उनके खण्डित होते हुए व्यक्तित्वको, उनकी पिसती हुई, क्षय होती हुई मानसिकताको नयी ताक़त देती है और वे पुन: इस संकटसे जूझती हैं और मनुष्यताके तत्त्वको फिरसे स्थापित करती हैं। परम्परा, समाज-व्यवस्था, राजसत्ता, धर्म, नियम, आचार, नैतिकता सबकी कठोरतम वर्जनाओंको निर्ममतासे जाँचकर स्वीकार या अस्वीकार करती हैं और उनके स्वीकार या अस्वीकारकी एकमात्र कसौटी होती है—संकटके समक्ष अपने मनुष्यत्वकी रक्षा और इसकी प्रतिष्ठा करता हुआ मनुष्य।

—और आचार्य पं० हजारीप्रसाद द्विवेदीने सारी गलित वर्जनाओं, झूठी रूढ़ियों, भ्रान्त किन्तु हज़ारों वर्षोंसे प्रतिष्ठित मानव-विरोधी धारणाओंके नीचे पिसती हुई, हर तरफ़से डरी हुई मानसिकताको एक अमृतवाक्य–एक मूल मन्त्र–देनेका संकल्प किया था।....

कहना न होगा कि आचार्य द्विवेदी उन विरल व्यक्तित्वोंमें-से हैं जिनका हिन्दीको, भारतीय वाङ्मयको, कालजयी अवदान मिला है। निस्सन्देह यह ग्रन्थ उनके अवदानके प्रति श्रद्धा और आस्था समर्पित करनेका ही प्रयत्न है।

■ ■ ■

भारतीय ज्ञानपीठके नवीनतम तथा अन्य महत्त्वपूर्ण प्रकाशनोंमें-से अपनी रुचिकी पुस्तकें नीचे संलग्न कार्ड-द्वारा मँगानेमें आपको सुविधा होगी।

———————————— [यहाँ से काटिए]

नाम ....

पता ....

....

कृपया निम्नांकित पुस्तकें ऊपर लिखे पते पर भेज दें:

- ० वी० पी० द्वारा (अथवा)
- ० पुस्तकोंका मूल्य........मनीऑर्डर द्वारा भेजा गया है।*

पुस्तक नाम—

१.

२.

३.

४.

५.

६.

७.

हस्ताक्षर.... ....

* वी० पी० अथवा मनीऑर्डर–दोनोंमें-से जिस आधारपर पुस्तकें मँगाना हो, कृपया उसे √ चिह्नित कर दें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अद्वितीय आगामी प्रकाशन

* तुलसी : आधुनिक वातायन से (समीक्षा)
* अपनी शताब्दी के नाम (विधा-विविधा)
* एक समर्पित महिला (कहानी)
* माया दर्पण (कविता)

विक्रय-व्यवस्थापक,
भारतीय ज्ञानपीठ,
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग,
दरियागंज दिल्ली-६
DELHI-6 (INDIA)

कृपया ६ पैसे का डाक-टिकिट लगाइए

पठनीय
एवं
संग्रहणीय
तीन

नये प्रकाशन

समकालीन साहित्य के इतिहास-पथ की नयी उपलब्धि आपके लिए भी ...

इस मास

भारतीय ज्ञानपीठ

द्वारा प्रस्तुत

सितम्बर १९६७

भारतीय ज्ञानपीठ
प्रधान कार्यालय
९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
प्रकाशन कार्यालय
दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५
विक्रय-केन्द्र
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग दिल्ली-६

ये कृतियाँ

मेपल

डॉ० प्रभाकर माचवे

माचवेजीकी विदेशमें लिखी कविताओंका नवीनतम संग्रह। ये कविताएँ एक साथ कई परिभाषाओंके सत्यांशको रेखांकित करती हैं। ये विशेष इसलिए भी हैं कि इनमें परिचित जीवन और परम्पराओंसे दूर भिन्न देश और परिवेश सामने आये हैं और जो भाव और प्रतिभाव एक प्रबुद्ध-चिन्तनशील कवि-मनमें स्फुरित हुए उन्हें अभिव्यक्ति मिली है। प्रतिक्रियाका स्वर इन कविताओंका नहीं है, न ही 'अपनेसे' मोहका। इनका स्वर प्रतीतिका है, और एक संयत जिज्ञासा-पीड़ाका। ....हिन्दीमें तो इस विषय-भूमिकी कविताएँ सम्भवतः पहली बार प्रभावकी समग्रताके साथ आ रही हैं।

—और इसलिए यह संग्रह प्रत्येक हिन्दी काव्य-प्रेमी पाठक और पुस्तकालयके लिए अनिवार्य रूपसे पठनीय और संग्रहणीय हो गया है।

मूल्य तीन रुपये

कुत्तेकी दुम

डॉ० र० श० केलकर

प्रस्तुत कृतिमें इक्कीस शब्दचित्र हैं : इक्कीस व्यंग्य-शब्दचित्र। प्रत्येकके द्वारा पाठकका मनोरंजन होगा। किन्तु साथ ही कुछ सोचनेके लिए भी वह अपनेको बाध्य पायेगा। क्योंकि इनमें उजागर किया गया विद्रूप आकस्मिक नहीं। जो चरित्र और विषय, वस्तु और तथ्य, स्थिति और प्रथाएँ यहाँ शब्दांकित हैं वे उसके परिवेशका अंग हैं। और जो सामूहिक प्रभाव इनका मनपर छूटेगा वह एक ही : कि बीस वर्षकी स्वतन्त्रताके बाद भी हम ये, हमारा आचरण ऐसा, हमारे देखने और सोचने-विचारनेके स्तर वही! यहीं पुस्तकके नाम 'कुत्तेकी दुम'की यथार्थता खुलकर सामने आती है। सम्भव है कुछ शब्दचित्रोंको आप दोबारा पढ़ना चाहें। वह सार्थक होगा। प्रस्तुत है 'कुत्तेकी दुम' जो बीस वर्ष बाद भी जैसीकी तैसी बनी है!

मूल्य तीन रुपये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्रदर्शन भी मेरे लिए जरूरी नहीं है। कई बार तो जिसकी जितनी अधिक चर्चा होती है उसके विषयमें मेरी उतनी ही विपरीत राय भी बनती है। मेरे लिए या मेरी तरहके व्यक्तिके लिए, महान्से महान् लेखककी महानता उसकी रचना खुद होती है। यदि लेखकका सम्बोधन सीधा है तो किसी भी क़िस्मकी मध्यस्थता या हस्तक्षेपसे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। मैं तुम्हारी बातसे इस हद तक तो सहमत हूँ कि मुक्तिबोधकी हर रचनाको एक महान रचनाका दर्जा देना, उनके विषयमें अतिशयोक्तिकी भाषा बोलना उन्हें अफ़लातूं बनानेका उपक्रम (जैसा कुछ-कुछ भूमिकामें किया गया है) अब हास्यास्पद हो चला है, क्योंकि मुक्तिबोधकी मृत्यु-पूर्व और मृत्यु-बादकी साहित्यिक स्थितिको भी मैं जानता हूँ। मगर इससे उनकी रचनाओंके महत्त्व और सार्थकतामें कोई बहुत बड़ा अन्तर नहीं आ जाता।....मैं यदि मुक्तिबोधकी कहानियोंको 'पार्टीजन', कहानियाँ कहूँ तो तुम चौंकोगे, लेकिन इस शब्दको तुम प्रगतिवादी अर्थमें मत लेना। ये पक्षधर कहानियाँ हैं और वह पक्ष किसी राजनीतिक पार्टी या प्रोग्रामका नहीं है, मानव, उसकी स्वतन्त्रता (इसे भी तुम 'कल्चर फ़ॉर फ़्रीडमवाले सन्दर्भमें मत लेना) और उसकी नियतिपर जो भयावह आशंकाएँ इधर मँडरा और छा रही हैं उनके प्रति एक गहरी चिन्ता (कन्सर्न) इन कहानियोंमें है। वे इस पृष्ठभूमिमें साधारण मनुष्यकी ज़िन्दगी और उसकी खुशहालीसे सम्बद्ध हैं। इनको पढ़ते हुए मुझे लगा कि इनके पीछे एक स्पष्ट और प्रखर राजनैतिक दृष्टिकोण है लेकिन वह जिन रेशोंसे जीवन (यह जीवन अपने सम्पूर्ण व्यापक अर्थोंमें) की सच्चाइयोंसे जुड़ा है, वह इस बातका प्रमाण है कि इनमें वायवीय-काल्पनिक चिन्तनसे अलग जीवनकी ठोस और आधारभूत समस्याओंके प्रति एक सक्रिय (पॉज़ीटिव) चिन्तन है। वह निष्क्रिय और मुर्दा चिन्तन नहीं जो इधर बड़े धड़ल्लेसे चल रहा है। यहाँ किसी पात्रसे आपका साक्षात्कार नहीं होता, सही है, या कहानीमें शायद वह सजीवता, या मूर्तता भी न मिले जो स्थूल यथार्थवादी कहानियोंमें होती है। इनमें एक घमासान वैचारिक युद्ध निरन्तर चल रहा है, विचार ही यहाँ पात्र होकर आते हैं, अनुभूतियाँ ही मूर्तरूप धरकर आपके सामने खड़ी हो जाती हैं और आपको लगता है कि लेखक आपको सीधे सम्बोधित कर रहा है, आपकी संवेदना, दृष्टि और सोचनेकी दिशापर सीधे चोट कर रहा है। लोग उनकी बहसको प्रमुख मान लेते हैं, बहसके मुद्दोंको भूल जाते हैं। यह सच है कि मुक्तिबोधकी रचनाओंमें एक अन्तहीन बहस है मगर वह 'बहसके लिए बहस' नहीं है, वह साहित्यके साहिलपर खड़े होकर की गयी बहस भी नहीं है, ज़िन्दगीके हहराते हुए तूफ़ानमें संघर्ष करते हुए एक बेहद संवेदनशील बुद्धिजीवीकी बहस है। उनमें बुद्धिजीवीका संकट भी है लेकिन वह बुद्धिजीवी जीवनमें तटस्थ नहीं है, दरअसल वह जीवनके प्रश्नों और संकटोंपर एक बुद्धिजीवीका चिन्तन है। जीवनसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्यार करता हुआ, जीवनके अर्थ ढूंढ़नेवाला, बुद्धिजीवी। मुझे तो लगता है कि सच्चा कलाकार साहित्यकी बहसोंसे नहीं (उनके माध्यमसे) जीवनके मसलोंसे जुड़ा होता है और मुक्तिबोधका साहित्य जीवनकी बाह्य और आन्तरिक, भौतिक और आध्यात्मिक समस्याओंसे जूझता हुआ साहित्य है। उनकी बहसोंमें भी यही जीवनके लिए, जीवनका स्वर बार-बार, हर बार प्रमुख हो जाता है। साहित्यको जीवनसे जोड़ने, उसे जीवित सन्दर्भों-परिवेशोंसे संयुक्त करनेके लिए। उनके साहित्यमें एक सामाजिक अन्तरात्मा निरन्तर सक्रिय है जो सामाजिक चेतनाकी तलाश और उसे रेखांकित करती चलती है। उन्होंने जिन सामाजिक शोषणों (भौतिक ही नहीं, वैचारिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक भी) को पहचाना, उनसे संघर्षके लिए साहित्यका—कलाका—माध्यम चुना। उनकी गति जीवनसे साहित्यकी ओर है न कि साहित्य (के चश्मों) से जीवनकी ओर। उनकी चिन्ताका विषय भी है 'वही दुख जो किसी-न-किसी रूपमें प्रत्येक कुचले मध्यवर्गीयके जीवनमें मुँह फाड़े खडा हुआ है।' 'अँधेरेमें' के युवकके विषयमें कहा गया है—दुनियाकी कोई ऐसी कलुषता नहीं थी जिसपर उसे उलटी हो जाये—सिवाय विस्तृत सामाजिक शोषणों और उनसे उत्पन्न दम्भों और आदर्शवादके नामपर किये गये अन्ध अत्याचारों, यान्त्रिक नैतिकताओं और आध्यात्मिक अहन्ताओंकी तानाशाहियोंको छोड़कर! दुनियाके मध्यवर्गीय जनोंके अनेक विषोंको चुपचाप वह पी गया था और राह देख रहा था सिर्फ़ क्रान्तिशक्तिकी!' क्या इस युवकका नाम लेनेकी ज़रूरत रह गयी है?....उनकी फ़ैण्टेसियाँ भी इसी ज़िन्दगीके ठोस-नंगे यथार्थ, उसके अभावों, दुःखों और यातनाओंसे उपजती और उन्हींपर टूटती हैं। किसी भी फ़ैण्टेसीको उठा लीजिए, वह जीवनसे ब्रैकेटेड है, उसके पहले और बाद है—जीवनकी वास्तविकता। जीवनका इतना दुर्धर्ष और दुर्दमनीय स्वर, मुझे तो 'निराला'-के बाद सिर्फ़ मुक्तिबोधमें मिला।"—वह साँस लेने रुका।

—"ऐसी बात नहीं है, यह स्वर और कुछ लोगोंमें भी मिल सकता है; है,—" मैंने अपने बड़प्पनको बनाये रखनेके लिए कहा.... मगर मुक्तिबोधके लेखनको इस रूपमें देखकर मुझे थोड़ी खुशी ही हुई, वर्ना वह तो ऐसे भाष्यकारों और टीकाकारोंके हाथों पहुंच गया है जिनका उसके मूलस्वरसे छत्तीसका सम्बन्ध है। जो मनुष्यके अधिक रूपविधाओंके स्वास्थ्य, जीवनसे अधिक अभिव्यक्तिके संकटसे त्रस्त, अधरमें उलटे लटके हुए हैं। ये अपने भाष्यसे पाठककी संवेदना और प्रतिक्रियाको एक खास दिशामें मोड़नेकी कोशिश करते हैं ताकि वह स्वतन्त्र होकर प्रतिक्रिया न कर पाये।....और कहानीको किसी भाष्यकी ज़रूरत नहीं है, वह खुद जीवनका भाष्य है। उसके शैली-शिल्पमें चाहे जितना परिवर्तन हुआ या हो रहा हो उसका यह रूप आज भी सार्थक है इसीलिए उसका सम्बोधन अपेक्षाकृत इतना अधिक व्यापक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इसी सन्दर्भमें मुझे भीष्म साहनीकी याद फिर हो आयी और मैंने अपनी बात दुहरा दी। आज मैं चाहता हूँ कि अपनी ओरसे जितना कम हो, बोलूँ, केवल उसीकी बातें सुनूँ।

—"मैं स्वीकार करता हूँ कि भीष्मकी कहानियोंमें लोकप्रिय होनेकी काफ़ी गुंजाइश है, बल्कि उनकी कहानियाँ काफ़ी लोकप्रिय हैं भी। लोकप्रियताका वह अर्थ नहीं जो साहित्यिकता बनाम लोकप्रियताके नारेबाज़ लगाते हैं।....भीष्मकी कहानियाँ पाठकोंको अपने साथ बाँधे-बहाये ले चलती हैं और पाठक सबसे पहले कहानियाँ 'पढ़ना' चाहता है, उनसे 'सीखना' और 'जानना' बादमें। भीष्मकी कहानियोंमें 'कथारस' शायद सबसे अधिक है। एक ओर जब शैली-शिल्पके चामत्कारिक प्रयोगोंसे कहानीमें नये-नये आयाम उद्घाटित हो रहे हैं तब अपनी परम्परागत और सनातन भाषा या मुहावरेको लिये हुए इन कहानियोंका अपना अलग आकर्षण है। कहानियोंकी भाषा, अतीत-धर्मा रही है,—'एक राजा था' या 'आजसे अस्सी वर्ष पहले' और भीष्मने इसे वर्तमान-की अभिव्यक्तिके योग्य बनाया है। 'भटकती राख' की कहानियाँ भविष्यके परदेपर आज-की तसवीरें हैं और कलके सन्दर्भमें आजकी तात्कालिक ध्वनियाँ। इनकी सबसे बड़ी ताक़त इनकी सादगी और सहजता है जो इधरकी कहानियोंमें लुप्त होती जा रही है। आप 'अलाव'के किनारे, फ़ायरप्लेसके इर्द-गिर्द जा किसी एकान्त-से डाकबंगलेमें पैर फैलाये बैठे हैं और कोई एकके बाद दूसरी कहानियाँ सुनाता चला जा रहा है; न शिल्पके पेचोख़म हैं, न सांकेतिकताकी नक्क़ाशी। कई बार तो आश्चर्य होता है कि आज भी कोई ऐसी कहानियाँ कैसे लिख लेता है। मगर वे आजसे बिलकुल अछूती नहीं हैं; हाँ वे आजकी उन जटिलताओं और अन्तर्विरोधोंमें नहीं पैठतीं। सीधी निगाहोंमें जो दिखता है, उसीका सीधा कथन। इसमें कई बार यह भी होता है कि केवल सतह पकड़-में आती है।....ख़ून और रिश्तोंपर तैरती विवशताकी छायाएँ, आदमीकी आर्थिक विवशताओंका दर्द उभारती हुई ये कहानियाँ सीधी और सपाट, हर चरित्र और स्थितिका बयान करती हुई बहती चली जाती हैं। एक बात कहनी है, उसके लिए आस-पासके चरित्र, कुछ परिस्थितियाँ, उसके इर्द-गिर्द इकट्ठी कर लीं और कहना शुरू कर दिया कि ख़त्म करके ही दम लिया। पाठकोंकी कल्पनाशक्तिपर ये विश्वास नहीं करतीं, कलामें संकेतको भी शायद बहुत अधिक महत्त्व नहीं देतीं, इसीलिए वे आजकी कहानीकी कलात्मक उपलब्धियोंसे लगभग शून्य हैं। लेकिन जिस सामाजिक सन्दर्भ और चेतनाका आग्रह लेकर नयी कहानी विकसित हुई उसका, उस दृष्टि और भावभंगिमा (एटीट्यूड) का पूरा पता भी ये कहानियाँ देती हैं। चरित्र यदि अनुभवके रूपान्तरण हैं तो भीष्मकी कहानियोंमें ज़िन्दगीके विविध और आत्मीय सहजानुभव हैं—बीवरसे लेकर लेनितका साथी, चेखव-की 'क्लर्ककी मौत'की याद दिलाते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सिफ़ारिशी चिट्ठी'के त्रिलोकी बाबू, 'सिरका सदका'की ईशरों, चीफ़की दावतकी याद ताज़ा करनेवाली—गीता सहस्सरनामकी चाची—ये चरित्र और अनुभवके ये चेहरे इतने परिचित, आत्मीय और 'साधारणीकृत' हैं कि सहज ही हमसे कहीं टकरा जाते हैं और हाण्ट करती हुई, भीष्मकी कहानियाँ साथ रहती हैं। मेरे लिए, यह किसी कहानीकारकी कम बड़ी ताक़त नहीं है।"

—"मैं तुम्हारी बातसे असहमत तो नहीं हूँ, लेकिन इतना जानता हूँ कि कहानी अब काफ़ी विकसित हो चुकी है। अब उसकी सार्थकता केवल यही नहीं है कि उसमें कथारस है। एक कलामाध्यमकी हैसियतसे यह भी ज़रुरी है कि वह समकालीन जीवन, उसके अन्तर्विरोधों और दबावों, उनसे उत्पन्न जटिल संवेदनाओंको वहन कर सके। सहजता और सादगी कहानीके गुण हो सकते हैं, मूल्य नहीं। जीवन वही नहीं है जो ऊपरसे सतहपर दिखता है। तथ्यपरकताकी तहके नीचे कितनी ही अन्तर्धाराएँ हैं जो एक दूसरेको काटती हुई बहती हैं, कितने ही अन्तःस्वर हैं जो एक दूसरेको 'ओव्हरलैब' करते हैं। इनके केन्द्रीय स्वर और धाराको पहचानकर रेखांकित करना भी उसीका क्षेत्र है।"

—"इस सन्दर्भमें मैं राकेशकी इधरकी कहानियोंकी बात करूँगा। राकेशकी पहली कहानियाँ और भीष्मकी कहानियोंकी अपील लगभग यकसाँ है। वे इकहरी और एक हद तक कहानीके पुराने ढाँचेको स्वीकार करके चलती हैं। लेकिन इधर 'फौलादका आकाश' की लगभग सारी कहानियोंमें वह ढाँचा पूरी तरह टूट चुका है। अब वे सीधे-सपाट पठनिसे आगे बढ़कर सूक्ष्मतर संवेदनाओं और अनुभवोंके अन्तर्विरोधी और जटिल रंगों-रेखाओंके अमूर्तशैलीके चित्रोंकी तरह लगती हैं।"

—"राकेशकी कहानियोंका मैं क़ायल रहा हूँ, लेकिन इधरकी कहानियाँ पढ़ते हुए मुझे बराबर लगता रहा है कि उन्होंने अपनी कहानी-कलाका चाहे जितना विकास किया हो उनकी अपील मारी गयी है। पहले मैं जितनी सहजतासे उनकी कहानियाँ 'ग्रहण' कर लेता था, उनमें-से गुज़र जाता था अब वे उतनी ही टैक्सिंग और अकारण बोझिल लगती हैं—यों कि पढ़नेके बाद एक थकान-सी महसूस होती है। पढ़ आज भी जाता हूँ मगर पढ़नेके बाद एक धुन्ध, एक कोहरा और अनिश्चित दिशाओंमें घूमती-भटकती हवाओंकी-सी कैफ़ियत ही शेष रहती है।"

—"इसका कारण है कि पहले तुम्हें कहानीकी एक निश्चित थीम–कथानक मिलता था, परिस्थिति या पात्रसे साक्षात्कार होता था, अब इधरकी कहानियोंमें यह सब गौण हो गया है, प्रधान हो गये हैं अनुभवके कुछ उत्तप्त क्षण उनपर व्याप्त किसी मनःस्थितिकी वर्तुलाकार गति और वे सूक्ष्मतर सूत्र जो एक व्यापक परिदृश्यसे जुड़कर उस क्षण, उस मनःस्थितिको सार्थक बनाते हैं। भावात्मक सम्बन्धोंकी एकरसता, उससे निष्कृतिकी आकांक्षा लिए अपने आस-पासके निर्जीव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वातावरणसे निरर्थक टकराहट, एक निश्चल जीवनका धुन्ध-भरा ठहराव, लकड़ीके चौखटों-में जड़ी बड़ी-बड़ी सलाख़ोंकी तरह ठण्डे और निर्जीव पारिवारिक सम्बन्ध, उनसे उपजे अँधेरेमें अपनेको ही न पहचाननेकी विवशता, एक 'रुटीन' और बार-बार अपनेको दुहराती हुई ऊब-भरी ज़िन्दगी, बेहद औपचारिक, फ़ौलादकी तरह ठण्डे और जड़ दाम्पत्य सम्बन्ध, उस दर्दको प्रगाढ़ करने-वाला अतीतका कोई चमकता हुआ आत्मीय-क्षण, परिचयके बीच अपरिचयकी तैरती छाया, आत्मीयोंके बीच बेगाना होनेकी यन्त्रणा, अकेलापन और निर्वासन, भय और सन्देह, असुरक्षा और आतंककी मनःस्थिति जो आजके जीवनका अविभाज्य अंग बनती जा रही है, इन कहानियोंके कुछ अन्तःस्वर हैं। ऐसा नहीं कि ये स्वर या स्थितियाँ बिलकुल अछूनी हैं मगर इन कहानियोंमें वे एक नया संश्लेषण प्राप्त करती हैं और तात्कालिक दृष्टिसे पृथक्-पृथक् या अन्तर्विरोधी अनुभव भी एक आंगिक पूर्णतामें एक रूप हो जाते हैं। पुरानी कहानियोंकी तरह कटी-छटी और चुस्त-दुरुस्त ये कहानियाँ भी हैं लेकिन अब इनका रसायन और आंगिक संरचना बदली हुई लगती है। पहले ये स्थूल सामाजिक धरातलको अपनी व्यापकतामें बाँधती थीं अब वे व्यक्तिकी अन्तर्गतियोंको अपनी गहराईमें उकेरती हैं।"

—"कौन जाने, मुझे तो कई बार लगता है कि 'एक और ज़िन्दगी'से, पारिवारिक, स्त्री-पुरुषों या दाम्पत्य सम्बन्धोंपर जो छाया और ठण्डापन शुरू हुआ था। वही राकेशके 'अँधेरे बन्द कमरे' से होता हुआ इन कहानियोंपर भी फैल गया है।"

—"मगर यह तो कहानीकी प्रतीत (सीमिंग) अभिव्यक्ति हुई। कभी, तुम कहानीके निहित मन्तव्य, मनोभाव–डीपर इम्पोर्ट—को ग्रहण करो तो तुम स्वीकार करोगे कि यह सब हमारे समकालीन जीवन-के केन्द्रीय स्वरकी प्रतिध्वनियाँ हैं। 'ज़ख्म'-का 'वह' कहता है; 'मैं अपने वक़्तका हिस्सा नहीं, उसका निगहबान हूँ' पर क्या तुमको नहीं लगता कि यह सब अपने वक़्तका हिस्सा है ?

■ ■

१३१, आज़ाद रोड
नरसिंहपुर (म० प्र०)

[पाँच और संग्रहोंपर इसी बहसका शेषांश अगले अंकमें]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकर्षक
पैकेज
आकर्षक
लेबेल *************** क्रेता की दृष्टि आकर्षित करने को बाध्य है

यह सही है कि चीजों की अच्छाई ही क्रेता को उन्हें खरीदने को मजबूर करती है—साथ ही साथ उन पैकेजों की विशेषता भी जिसमें चीजें हिफाजत से बन्द रहती है। पैकेज की सुन्दरता उसमें बन्द चीजों की सुन्दरता ही प्रगट करती है।

रोहतास डालमिया नगर स्थित अपनी आधुनिक और उन्नतशील कारखाने में कार्टन और पैकेज बनाने लायक सर्वोत्तम पैकेजिंग पेपर और बोर्ड तैयार करते हैं, जिन पर बहु-रंगे छपाई के लिये भी भरोसा किया जा सकता है।

रोहतास पेपर्स और बोर्ड्स अच्छाई के प्रतीक हैं

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमिया नगर (बिहार)

मैनेजिंग एजेन्ट्स :—साहू जैन लिमिटेड, ११, क्लाइव रो, कलकत्ता-१
सोल सेलिंग एजेन्ट्स :—अशोका मारकेटिंग लिमिटेड, १८ए, ब्राबोर्न रोड, कलकत्ता-१

HC : RI : 92 H

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
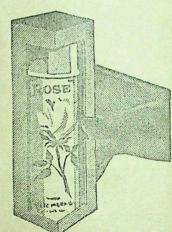
दायरे और दायरे / रजनी पनिकर

उसने देखा, धड़ाधड़ लड़के-लड़कियाँ भीतर आ रहे थे। वह अभी अपनी कुरसीपर ही बैठी थी। उठी नहीं, असमंजससे भरी थी। जैसे वह अध्यापिका बनकर नहीं परीक्षार्थी बनकर आयी हो।

"अरे ! आज तो नयी टीचर हैं !"

"हाँ, और सुन्दर भी।"

"ऐसी टीचरसे पढ़ेंगी कैसे ?" मिली-जुली हँसी।

"क्या आप हमारी क्लास-टीचर हैं ?"

"क्या आजसे आप पढ़ायेंगी ?"

"इतनी छोटी आयुमें आप टीचर भी बन गयी हैं ?"

फिर हँसी। धीमी और एकाएक ज़ोर-से।

"सब कोई फ़ेल नहीं होते।"

"शट अप।"

"यू शट अप !"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह इस बातपर उठकर खड़ी हो गयी। मेजपर ज़ोरसे हाथ मारती हुई बोली—"कृपया चुप हो जाइए। अब हाज़िरी होगी।"

आगेकी दो पंक्तियोंने ध्यान दिया। पीछे शोर-गुल वैसे ही चलता रहा।

"मिस घोष कहाँ गयीं, वह हमारी पुरानी टीचर थीं।"

"मिष घोषका विवाह हो गया।"

ओह! दो-एक सीटीकी आवाज़। एक चपरासी एक काग़ज लेकर उसके हाथमें थमा देता है।

नोटिस : "सब अध्यापिकाओंको सूचित किया जाता है कि आज ग्यारह बजे आधी छुट्टीसे पहले बड़े हॉलमें मीटिंग होगी। प्रिन्सिपल मीटिंगको सम्बोधित करेंगे। विषय होगा—'अनुशासन।' श्रेणीके सभी छात्र और छात्राएँ लाईन बनाकर ले आइए।"

उसने देखा, अभी उसमें देर थी। वह हाज़िरी लेने लगी।

"रोहिणी ?"

"उपस्थित।"

"हरीश ?"

"——।"

"हरीश ?....क्या हरीश नहीं आया ?"

"नहीं टीचर, वह आया भी है और नहीं भी आया है।"

"क्या मतलब ?"

"वह आया था, परन्तु बॉल-पेन लेकर चला गया है। शायद वह चन्द्रा साहबसे पढ़ेगा।"

"क्या मतलब ?"

"वही जो मैंने आपसे कहा कि वह चन्द्रा साहबका बहुत मुँह-लगा छात्र है और अँगरेज़ी आपसे नहीं पढ़ेगा।"

वह एक क्षणको ठिठकी फिर पढ़ती चली गयी।

"अमिताभ ?"

"यस सर।"

"सर नहीं, मैडम !" एक आवाज़।

"क्या फ़र्क़ पड़ता है, दोनोंका मतलब एक ही है।"

फिर हँसी।

वह बोली, "पीछे आप लोग खड़े क्यों हैं, बैठ जाइए।"

"कुरसियाँ पूरी नहीं।"

"क्यों, स्कूल तो 'स्ट्राइक'के बाद खुला है, इस बीच नये दाखिले तो हुए नहीं। कुरसियाँ पूरी होनी चाहिए थीं।"

"कुरसियाँ पहले भी कम थीं। मिस, हैड क्लर्कके पास रिपोर्ट भेजिए।"

"मिस, मैं रिपोर्ट ले जाऊँ ?

"मिस, इसको भेजेंगी तो लौटेगा नहीं।"

"नहीं, यह ईर्ष्या करती है।"

"फ़ेल होनेवालोंसे ईर्ष्या कौन करता है ?"

"ज़बान सँभालकर बात करो—तुम स्कूलके हीरोसे बात कर रही हो !"

"हूँ, छोटे बच्चोंसे उपहार ऐंठकर अपनेको हीरो समझता है।"

उसने मेज़पर ज़ोरसे आवाज करते हुए कहा, "ख़ामोश रहिए।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

"मिस, हम खामोश तो हो जायेंगे, परन्तु झूठे लोगोंका फ़ैसला इसी समय हो जाना चाहिए।" वह परेशान-सी इधर-उधर देखने लगी।

आज स्कूलमें उसका पहला दिन ही था। वह उस स्कूलमें अँगरेज़ीकी अध्यापिका होकर आयी थी। बड़ा नाम सुना था स्कूलका। इण्टरव्यू-बोर्डमें कई प्रकारके टेस्ट हुए थे। तब कहीं उसे यह नौकरी मिली थी। वह घबरा रही थी। स्वयं उसकी आयु यही तेइस-चौबीसकी होगी, अपने शरीरको 'फ़ार्म'में रखनेके लिए वह भोजन छूती भर थी, उसे खाती नहीं थी।

वह नवीं श्रेणीकी 'क्लास-टीचर' बनकर आयी थी। नवींसे छात्रोंमें एक बड़प्पनका भाव शुरू हो जाता है, नवीं, दसवीं और हायर सेकण्डरी। उस दिन स्कूल एक ऐसी छुट्टीके बाद खुला था, जिसका स्कूलकी छुट्टियोंसे कोई सम्बन्ध नहीं था। यानी दूसरे शब्दोंमें यह छुट्टी छात्रोंके अनुशासनहीन होनेपर दी गयी थी। छात्रोंने इन छुट्टियोंमें

९

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत-से जलूस निकाले थे, अध्यापकोंको बड़ी-डाँट-फटकार सुनायी थी। प्रिन्सिपलकी मोटरपर पत्थर फेंके थे। इस सबके बाद अब वह लोग स्कूल आये थे। विद्या-ध्ययनके लिए! अनुशासनमें रहनेके लिए!

इस बीच चपरासी कार्ड भी दे गया था। वह बोली, "हालमें जानेसे पहले यह कार्ड भर दो तुम लोग। बी० सी० जी० का टीका लगेगा। कार्ड सबको बाँट दिये गये। कार्ड यों भरना था—नाम, पिताका नाम, आयु और कक्षा। उसने सब कार्ड बाँट दिये थे।

"अच्छा तुम लोग कार्ड भर दो, साथ-साथ मैं हाज़िरी ले लेती हूँ।"

"मिस, मेरा नाम क्या है?"

श्रेणीमें हँसीका फ़व्वारा।

"मेरे पिताका नाम किसीको याद है?"

एक बार और हँसीकी लहर!

"बन्द करो बातें बनाना। अपना-अपना कार्ड भरो।"

"आप कार्ड क्यों नहीं भर रही हैं?" उसने एक लड़कीसे पूछा।

"मेरे पास पेन्सिल नहीं।"

"पेन्सिलसे नहीं कार्ड पेनसे भरना होगा।"

"पेन रखना तो फ़ैशन नहीं, मिस!"

उससे पहले कि वह कुछ बोले, एक और लड़की बोल पड़ी, 'मिस, पेनका रिवाज नहीं है। आजकल लोग 'बॉल-पेन' रखते हैं।"

मैं फ़ार्म कैसे भरूँ—मेरा हाथ नहीं चलता।"

तुम्हारा नाम क्या है?"

"लिली।"

उसने देखा वास्तवमें वह लिलीकी तरह सुकुमार है।

'मैं इसका हाथ पकड़कर लिखा दूँ?"

फिर हँसी।

चपरासी नोटिस दे जाता है। लिखा है—"स्कूल-लाइब्रेरी आप सबकी लाइब्रेरी है। अब आप सब इसका इस्तेमाल करें। जिन विद्यार्थियोंके नाम नीचे दिये जा रहे हैं, उन्हें पुस्तकें नहीं दी जायेंगी। जबतक वह पुस्तकोंको लौटा न देंगे। अभी विद्यार्थियोंके लिए लाइब्रेरी बन्द रहेगी, परन्तु अध्यापिकाओंके लिए खुली रहेगी।"

उसने देखा उसकी कक्षाका कोई भी विद्यार्थी नहीं था। तभी घण्टी बजी। शायद प्रिन्सिपलके लेक्चरकी घण्टी थी।

लड़के और लड़कियाँ खड़े हो गये।

"लाइन बनाकर चलिए।"

"हाँ मिस, हम जानते हैं कि लाइन बनानी चाहिए।"

"सिनेमाके टिकिटके लिए हम लाइन बनाते हैं।"

"सुबह दूध लेते हैं तो लाइन बनाते हैं।"

"हम लोगोंकी मौत भी लाइन बनाकर होगी।"

पुनः हँसी।

प्रिन्सिपल भाषण दे रहे थे। अध्यापक-अध्यापिकाएँ एक ओर खड़े थे। विद्यार्थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जमुहाइयाँ ले रहे थे !

डॉक्टर रायकी आवाज़ बड़े ज़ोरसे आ रही थी :

"छात्रोंमें अनुशासनका होना अनिवार्य है। अनुशासनहीनता ही हमें ले डूबेगी। मुझे पूरा यक़ीन है कि मेरे छात्रोंको इस बातका एहसास है कि उन्हें माता-पिताका कहना मानना चाहिए···उन्हें····"

उसके पास ही मिस पार्वती खड़ी थी। मिस पार्वतीके विषयमें इतना सुना है कि वह अपनेको फ़ॉयडका अवतार समझती हैं। विद्यार्थियोंसे उलटे-सीधे प्रश्न पूछती हैं—वह समझती हैं, शिक्षाका बहुत बड़ा सुधार करके रहेंगी।

"तुम अपने माता-पितासे नफ़रत क्यों करते हो ?"

"तुम लोगोंकी यौन-सम्बन्धी कौन-सी समस्या है ?"

दूसरी अध्यापिकाओंने उससे कहा था कि वह उससे अधिक मित्रता न बढ़ाये। स्कूलके सरकुलर तक ही उससे सम्बन्ध रखे। वह बुधवारको सब विद्यार्थियोंको एकत्रित करके 'जीवनमें शिक्षाके महत्त्व'पर लेक्चर देती है।

है तो केवल मिस पार्वती, परन्तु डॉक्टर कहलाना पसन्द करती है और पीठ पीछे सब हँसते हैं।

डॉक्टर लाल भी पास ही खड़े थे। डॉक्टर लाल, अँगरेज़ी-विभागके सीनियर टीचर हैं—अप्रकाशित लेखक हैं। किसी भी विषयपर कविता बना लेते हैं। कविता बनाकर नयी-नयी आनेवाली अध्यापिकाओं-से प्रेम प्रकट करना उनका पेशा है। उसने लालकी ओर देखा तो लालने उसे आँखोंमें ही सलाम पेश किया। वह मुसकरा दी। सुबहसे उसे लग रहा था कि उसका नरबस-ब्रेक-डाउन हो जायेगा। लालकी एक भौंह ऊपरकी ओर उठी थी, दूसरी नीची थी। उसके सूटकी सिलाई बड़ी सलीक़ेदार थी। उसे लगा, यदि सब छात्राएँ इससे प्रेम करती हों तो उन्हें दोष नहीं दिया जा सकता। उसने सरसरी दृष्टिसे देखा—प्रायः सभी छात्राएँ उसकी ओर देख रही थीं।

प्रिन्सिपलकी आवाज़ जैसे कहीं बहुत दूरसे आ रही थी। वह मानो स्वप्न देख रही थी। जब वह स्वयं छात्रा थी, मैट्रिकमें ही उसने स्कूल बदला था।

उसने देखा, अध्यापिकाको सुझाव देनेवाले डिब्बेमें बहुत-से सुझाव हैं :

"आप चुन-चुनकर साड़ियाँ पहनकर आती हैं, जिससे हमारा ध्यान बँटता है। आप सादे कपड़े क्यों नहीं पहनतीं ?"

"जबसे आप आयी हैं, मैं घरपर बैठा रहता हूँ और आपके बारेमें सोचता रहता हूँ। मुझे कोई भाई-बहन बुलाये तो भी बुरा लगता है। माँ हैरान हैं कि मुझे क्या हो गया है ?"

'मैं यह नहीं समझ पाती कि आप डॉक्टर लालसे क्यों इतनी मित्रता बढ़ा रही हैं। मैंने आपको एक रेस्तराँमें उनके साथ चाय पीते देखा था। आप दोनों हँसकर बातें कर रहे थे। मुझे देखते आप चुप हो गयीं, वह बोले थे—'चाय पियोगी ?' काश उन्होंने पूछा होता—ज़हर पियोगी ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले दिन वह स्कूल गयी थी उस दिन किस तरह सिमटकर बैठी थी। आज वह पढ़ाने आयी तो दुनिया बदल चुकी है। लड़कियाँ और लड़कोंका स्कूल भी इकट्ठा है। शायद तब भी होंगे। उस समय उसे पता नहीं था। लड़कियाँ और लड़कोंमें अब भेद करना भी कठिन है। लड़कियोंके केश प्रायः ऊँचे-ऊँचे कटे हैं। पन्द्रह प्रतिशत साड़ीमें हैं। शेष तो स्कर्टमें हैं। एक लड़की हरी स्कर्टके साथ तंग लाल ब्लाउज़ पहने थी। उसे देखकर लगता था कि 'हारमोन्स'का विज्ञापन है। वह बहुत खुले रूपसे प्रिन्सिपलकी अवहेलना करके डॉक्टर 'लाल'को देख रही थी।

प्रिन्सिपल कह रहे थे : "यह स्कूल आप लोगोंके लिए है। आप लोगोंकी सुविधाओंके लिए है, इसके नुक़सान करनेका मतलब है—आपने अपना नुक़सान किया है।"

एक लड़का दो तीन लाइन छोड़कर कह रहा था, "चाक बार आइसक्रीमवाला चला जायेगा। यह लेक्चर बन्द न होगा।"

"खिसकना मत। वह नाराज हो जायेंगे।"

"कौन परवाह करता है!"

"नहीं यार, कभी तो परवाह करनी पड़ती है।"

तभी एक चिट उसे मिला : "दोपहरको लंच मेरे साथ लें।—लाल"

उसी चिटके बाद एक और चिट मिला—"यह अपनेको सार्वजनिक रोमियो समझते हैं, सावधान।—एक शुभचिन्तका।"

वह दोनों चिट पाकर मुसकरा दी। कौन-सा माने, कौन-सा न माने!

वह दिन राम-राम करते किसी तरह व्यतीत हुआ। वह टीचर्स-क्वार्टर्समें बने अपने एक कमरेके फ़्लैटमें आकर निढाल हो लेट गयी।

छात्र कितने भयानक हैं। "मिस मैं प्रेजेण्ट हूँ और नहीं भी हूँ।", "मिस, आप कितनी सुन्दर हैं। विवाह क्यों नहीं कर लिया। आप विवाह कर लेंगी तो एक पुरुष टीचर मिलेगा।"

लिली जैसे वासनाका अवतार हो। प्रिन्सिपलके भाषणके बाद वह सीधी लालके पास आकर खड़ी हो गयी थी। लालने कैसी प्रोत्साहन-भरी मुसकराहटके साथ उसकी ओर देखा था। लिलीका मुख लाल हो गया था, ठीक अपने ब्लाउज़की तरह।

उस दिन श्रेणी (कमरे) में पहुँचते ही उसे एक चिट मिला—लिखा था : "सब काग़ज़-पत्र मेज़के ड्राअरमें बन्द करके रखें।"

उसने ड्राअर देखनेके लिए हाथ बढ़ाया था, तो देखा, मेजमें ड्राअर ही नहीं। छात्र हँस पड़े थे। "मिस, मिस घोषने नयी टेबिल माँगी थी। हेड क्लर्क पाजी है, अभीतक दी नहीं।"

वह सोच रही थी कि एक लड़का, जो अपनेको हीरोकी पदवी देता है, खड़ा हो गया था।

उसने उसकी ओर देखा था, तो वह बोला, "मैं कुरसियोंके लिए और मेज़के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी कहकर आया।" उसकी आज्ञाकी अपेक्षा किये बिना ही वह चला गया। उसकी देखा-देखी दो छात्र और बाहर चले गये।

उसने अपनी सखीको पत्र लिखा :

"प्रिय सखी,

बहुत दूरसे तुम्हें पत्र लिख रही हूँ। बी० ए० करते समय हमें, 'ऐडलोसेण्ट'का मनोविज्ञान पढ़ाया गया था। उस पुस्तकके लेखककी मुलाक़ात 'ऐडलोसेण्ट'से नहीं हुई थी। मेरी हुई है।

तुमने अपनी शिक्षाका बहुत अच्छा लाभ उठाया है कि अपनी बेबीको साँझके समय पार्कमें घुमाने ले जाती हो। यहाँ क्लासमें बच्चे या तो कुछ समझते नहीं या ज़रूरतसे अधिक समझते हैं। मैंने एक ही सहेली बनायी है--पूर्णिमा सेन। और दुश्मन अनेक।

स्कूलका रूप वैसा ही है, जैसा हमारे समयमें था। चाककी धूल, सादे बिना शीशोंके दरवाज़े, लम्बे-लम्बे चुप-गम्भीर गलियारे, स्थान-स्थानपर गिरता चूना। फ़िनायलकी दुर्गन्धसे सड़े हुए ग़ुसलख़ाने। स्कूलमें बदइन्तज़ामीका यह हाल है कि कक्षाओंमें विद्यार्थी ज़्यादा और कुरसियाँ कम हैं। फ़र्नीचरपर शायद उस समय पॉलिश किया गया होगा जब वह ख़रीदा गया था। अभी तो पूरे स्कूलमें एक डॉक्टर लाल तथा मिस पार्वती चर्चाके विषय हैं।

मिस पार्वती मनोवैज्ञानिक सहायता करती हैं, विशेषकर विद्यार्थियोंकी जो पढ़नेमें किसी तरह पीछे हों। उन्हें चाय बनाकर पिलाती हैं और फिर उलटे-सीधे प्रश्न करती हैं।

कुछ छात्र तो उसको ख़ूब समझ गये हैं। जब चाय पीनी होती है वहाँ जा बैठते हैं। वह हर कक्षाको जीवनमें शिक्षाके महत्त्वपर सप्ताहमें एक बार लेक्चर देती हैं। अपनेको मिसकी जगह डॉक्टर पार्वती कहलाना पसन्द करती हैं। कलकत्ताको उन्होंने अमरीका बना दिया है और स्वयंको वह फ़ायडका अवतार समझती हैं।

डॉक्टर लाल सचमुचके डॉक्टर हैं। बने हुए नहीं। डिग्री विदेशी है—खुद देशी हैं। विदेश नहीं गये। विशुद्ध विदेशी उच्चारण। कीट्सकी कवितामें 'सौन्दर्य-बोध' पर सौ पन्नेका थीसिस लिखकर डॉक्टर बने हैं। हवामें भी सौन्दर्य-बोधकी सुगन्ध उन्हें मिल जाती है। पहले दिन ही उन्होंने मेहमाननवाज़ी दिखलायी। मुझे खाना खिलाया, पर सारे शहरमें इस दावतकी ख़बर फैल गयी। इसके बाद नसीहतोंके चिट आये हैं—'आज लंच खा लिया आपने, परन्तु सावधान रहें। यह विश्वसनीय नहीं हैं।' 'डॉक्टर लाल मुझसे प्रेम करते हैं—आप आज ही आयी हैं, इसलिए जानती नहीं—एक छात्रा।'

बताओ, ऐसे वातावरणमें मैं कितने दिन रह सकती हूँ। यदि पूछो कि घरका काम क्यों नहीं करते तो उत्तर मिलता है :

'मैं लिख रही थी कि मेरे फ़ाउण्टेन पेनकी निब टूट गयी।'

'मुझे इतिहास पढ़नेका चाव है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अँगरेज़ी अच्छी नहीं लगती।'

'माँ कल सिनेमा चली गयी थीं। छोटे भाईको मुझे देखना पड़ा।'

'माँ कहती हैं—मँहगाईके समयमें नौकर रखना कठिन है, तुम लोग घरके काम-काज-में हाथ बँटाया करो। मैंने माँसे कहा था कि टीचर ग़ुस्सा करेंगी, तो? इसपर माँ बोली थीं, टीचरसे कहो आकर घरका काम करवा जायें। करेंगी, सोचता हूँ, आपके गोरे हाथ मैले हो जायेंगे।'

अच्छा है, तुम किसीको पढ़ा नहीं रही हो।

तुम्हारी
—केतकी"

उसने देखा, अध्यापिकाको सुझाव देने-वाले डिब्बेमें बहुत-से सुझाव हैं :

"आप चुन-चुनकर साड़ियाँ पहनकर आती हैं, जिससे हमारा ध्यान बँटता है। आप सादे कपड़े क्यों नहीं पहनतीं?"

"जबसे आप आयी हैं, मैं घरपर बैठा रहता हूँ और आपके बारेमें सोचता हूँ। मुझे कोई भाई-बहन बुलाये तो भा बुरा लगता है। माँ हैरान हैं कि मुझे क्या हो गया है?"

'मैं यह नहीं समझ पाती कि आप डॉक्टर लालसे क्यों इतनी मित्रता बढ़ा रही हैं। मैंने आपको एक रेस्तराँमें उनके साथ चाय पीते देखा था। आप दोनों हँसकर बातें कर रहे थे। मुझे देखते आप चुप हो गयीं, वह बोले थे—'चाय पियोगी?' काश उन्होंने पूछा होता—जहर पियोगी?"

"प्रिय अध्यापिकाजी, मैंने आपकी तरह कोई और देखा नहीं। न ही स्कूलमें, न ही घरमें। आप बहुत अच्छी हैं!"

"मैंने अपनी राय बदल ली है। अध्यापक भी मनुष्य हो सकते हैं। यदि आप-जैसी अध्यापिकाएँ हों तो समझ लीजिए, हमारे भाग्य खुल गये। वह बूढ़े-बूढ़े अध्यापक हमें अच्छे नहीं लगते।"

"आप बहुत बददिमाग़ हैं—श्रेणीमें कुछ लोगोंको प्रश्रय देती हैं।"

"हमारे अध्यापक केवल पुरुष होने चाहिए। हमें नारी अध्यापिकाएँ नहीं चाहिएँ। सब नारियाँ ख़राब होती हैं, इसमें तो आपको सन्देह नहीं होना चाहिए। मुझे एक ही अफ़सोस है कि आप अच्छा पढ़ाती हैं, नहीं तो हमने हड़ताल की होती। अभी लगता है हड़ताल करना आसान नहीं।"

इन सुझावोंको पढ़कर वह हैरान रह गयी थी। उसका मन नहीं हुआ कि वह उन्हें कुछ और पढ़ाये। उसने उन्हें टेस्ट दे दिया। तीन प्रश्न थे :

(१) हम रामायण और महाभारत क्यों पढ़ते हैं?

(२) अपनी संस्कृतिसे क्या तात्पर्य है?

(३) पौराणिक आख्यानोंसे किस बात-का बोध होता है?

उत्तर पढ़कर उसे पता नहीं था कि उसकी बेचैनी और बढ़ जायेगी।

"हम लोग सांस्कृतिक लोगोंसे बातचीत करते हैं। यदि किसीने राम तथा अर्जुनके विषयमें पूछ लिया तो उत्तर हमें आना चाहिए।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हम लोग रामायण इसलिए पढ़ते हैं कि देखें रामने सीताका परित्याग क्यों किया था ? उस ज़मानेमें धोबियोंका बड़ा महत्त्व था । वाशिंग मशीन, सर्फ़ और लक्स कुछ भी नहीं मिलता था । धोबीकी बातपर पत्नी-को घरसे निकाल दिया था ।"

"द्रौपदीका चीरहरण 'स्ट्रिपटीज़' का पुराना रूप है ।"

"पौराणिक संस्कृतिसे मतलब है—खजुराहो एवं कोणार्ककी मूर्त्तियाँ । ममी कहती हैं, उन्हें कोई ब्रेसरीका साइज़ पूरा न आता होगा । आपका क्या ख़याल है ?"

"क्या आप पुरीका मन्दिर देख चुकी हैं ? न देखा हो तो ज़रूर देखें ।"

"हम रामायण और महाभारत इसलिए पढ़ते हैं कि उस समयकी लिखनेकी शैली जान सकें ।"

"द्रौपदीके पाँच पति थे । वह केवल पुरुषोंसे बात करना पसन्द करती थीं । उन्हें भारतीय नारीका आदर्श माना जाता है । मेरी दीदीके केवल दो ही 'बाय-फ्रेण्ड' हैं, माँ उन्हें उठते-बैठते कोसती रहती हैं । वह क्यों ? आप कोई उपाय बतला सकती हैं ?"

"महाभारत आजकल क्यों पढ़ाया जाता है । आजकल भारत शान्तिप्रिय हो गया है । छात्रोंमें अनुशासनहीनताका एक यह कारण भी है । भाईसे भाई लड़े । बहुत बुरी बात है ।"

"भगवान् रामकी प्रेम-कथा जाननेके लिए हम लोग रामायण पढ़ते हैं ।"

सखीको उसने एक और पत्र लिखा :

'प्रिय अमिता,

तुम्हारा पत्र मिला । धन्यवाद । मुझे तो लगता था, मैं बिलकुल अन्धकारमें धँस गयी । तुम्हारा पत्र पाकर लगा कि मेरा भ्रम था । मैं सचमुचमें महत्त्वपूर्ण काम कर रही हूँ । जिस कॉलेजके विषयमें तुमने लिखा है, वहाँ मेरा जाना हो सकता है । जगह भी सुन्दर है । मैं सोच रही हूँ, तुम्हारी बात मान लूँ । कॉलेजमें पढ़ाना आजकल आसान हो गया है । पर, हायर सेकण्डरी और स्कूल लीविंगके छात्र आजकल बड़े अलमस्त हो गये हैं । कल अचानक एक टेस्टके पेपर मुझे देखनेको मिले । प्रश्न था—तुम जीवनमें क्या बनना चाहते हो ?

उत्तर देखो :

'मैं करोड़पति बनना चाहता हूँ ताकि इस स्कूलको ख़रीद सकूँ और यहाँ नृत्यकी क्लासें खोल सकूँ । मज़ा आ जाये—डॉक्टर राय अपना सिर पीट लें ।'

'मैं अँगरेज़ीकी टीचर बनना चाहती हूँ ताकि डॉक्टर लालसे खुले रूपमें प्रेम कर सकूँ—'लिली ।'

'मैं तेनसिंह बनना चाहता हूँ, हिमालय-पर चढ़नेवाला नहीं, मिस पार्वतीवाला, जो मनकी गहराइयोंमें झाँककर मोती ढूँढ़ लाये ।'

'मैं राजेन्द्रकुमारकी तरह अभिनेता बनना चाहता हूँ ताकि मेरी क्लास-टीचर मेरा अभिनय देखें ।'

'मैं आपका पेन-फ्रेण्ड बनना चाहता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हूँ। मैं आपको पत्र लिखूँ तो आप उत्तर देंगीं।'

बताओ ऐसे स्कूलमें मैं कितने दिन रहूँ।

तुम्हारी,
केतकी"

उस दिन पेनका ऊपरवाला ढकना रद्दी काग़ज़ोंकी टोकरीमें चला गया था। वह ढूँढ़ रही थी कि गुलाबी महीन काग़ज़पर लिखा एक पत्र हाथ लगा। पत्र डॉक्टर लालके नाम था। इधर कुछ दिनोंसे डॉक्टर लालकी उससे मित्रता बढ़ रही थी। दोनों अकसर भोजन इकट्ठा करते। बाहर घूमते भी इकट्ठा। कुछ कविताओंका आदान-प्रदान भी हुआ था। चिट्ठीमें लिखा था :

"प्रियतम,

तुम मेरे स्वप्नोंके राजा हो। जागृत अवस्थामें तुम्हारा सम्बन्ध अपनी अँगरेज़ीकी मिसके साथ देखकर बड़ा क्रोध आता है। मैंने अँगरेज़ीकी क्लासमें जाना छोड़ दिया है। पहले तो आप ऐसे नहीं थे, मुझसे बातचीत करते थे। कभी-कभी बाहर मिलते थे, अब आपको क्या हो गया है। उस चुड़ैलने कुछ कर दिया है। मैं आपको एक महीनेका समय देती हूँ। उसे छोड़ दीजिए नहीं तो मैं टीचर्स बाथरूमवाली छतसे कूद पड़ूँगी। मैं अभी भी आपको बहुत चाहती हूँ। रात-भर···मेरे सपनोंमें आप आते हैं। स्कूलमें और भी बहुत-से 'सर' हैं। वह उनसे बात-चीत क्यों नहीं करती? ओह! मेरी साँस घुटती है प्रियतम! आपका स्पर्श—मैं कभी नहीं भूल सकती। उस पैण्टिंगपर जो कविताएँ लिखकर दी हैं, मैं सोनेसे पहले उन्हें अवश्य पढ़ लेती हूँ। बोलिए, मुझे कब मिलेंगे। आपकी प्रतीक्षा करती रहती हूँ। मेरा टेलीफ़ोन नम्बर वही है। भूलें नहीं!

जन्म-जन्मसे आपकी,
लिली"

वह हतप्रभ रह गयी। इस बातका एहसास तो उसे था कि लिली डॉक्टर लाल-पर जान छिटकती है, परन्तु···यह पत्र!

उसी समय लालको उसने पत्र दे दिया। बतला भी दिया कि कहाँ पाया गया। लाल हँस पड़ा। फिर ज़ोरसे क़हक़हा लगाया। उसे लगा, क़हक़होंका तूफ़ान आ गया है और वह उसमें बह रही है। कहीं छोर नहीं, कहीं ठिकाना नहीं। वह भीतर-ही-भीतर सिकुड़ गयी।

लाल कह रहा था, "तुम इस लड़कीकी बातोंपर यक़ीन मत करो। वह झूठ बोलती है।"

उसने देखा, दीवारपर पोस्टर लगा था—'ट्रूथ इज़ ब्यूटी—ब्यूटी इज़ ट्रूथ'—सत्य सौन्दर्य है और सौन्दर्य सत्य है। क्या लाल सच बोल रहा है? नहीं शायद बिल-कुल झूठ बोल रहा है। सत्य सौन्दर्य नहीं। सत्य घिनौना है।

एक दिन स्कूल समाप्त हो जानेपर उसे एक डायरी अपनी टेबिलपर रखी हुई मिली। शायद जान-बूझकर रखी थी। उसने पहला पन्ना खोला, लिखा था : "मैं खाना बन्द नहीं कर सकती, अपना पेट ठूँस-ठूँस-कर भर लेती हूँ। इसमें मुझे सान्त्वना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलती है। मुझे हर समय भूख लगी रहती है।

आज डॉक्टर लालने मुझे एक पत्थर दिया। मैं बोली, पत्थरसे क्या होगा? वह बोले, यह तुम्हें मेरी याद दिलायेगा। चमचमाता पत्थर पुरीके समुद्र-तटसे लाया हूँ। इसे तुम सँभालकर रखोगी तो आभार मानूँगा।

माँ बोली, यह क्या ले आयी है?

माँको कैसे कहूँ कि वह डॉक्टर लालको नहीं जानती, यह पत्थर नहीं हीरा है।

पापा सोचते हैं—मैं अभी भी छोटी लड़की हूँ। वह नहीं समझते कि मैं बड़ी हो गयी हूँ—प्रेम कर सकती हूँ। मैं डॉक्टर लालसे प्रेम करती हूँ।

यह नयी टीचर जाने कहाँ आसमानसे आ टपकी है। शायद मेरा जीवन नष्ट करनेके लिए आयी है।

आज मैंने मीटिंगमें देखा था। डॉक्टर लाल केवल अँगरेज़ी-टीचरकी ओर देख रहे थे।

मुझे अँगरेज़ीसे चिढ़ हो गयी है। पहले यह मेरा सबसे प्रिय विषय था।

ग्यारहवीं श्रेणीका अमिय चटर्जी जाने मुझे क्यों घूर-घूरकर देखता है। उसकी दृष्टि मेरे गलेके नीचे रहती है। मेरी आँखें यों ही झुक जाती हैं।

आज दो सप्ताहसे स्कूल बन्द है। मुझे इन लड़कोंसे बड़ी चिढ़ है। ये बिना कारणके कोई गड़बड़ कर देते हैं और स्कूल बन्द कर देना पड़ता है। डॉक्टर लालके दर्शन भी नहीं होते। पार्क स्ट्रीटके उस रेस्तराँमें भी मैं कई बार हो आयी हूँ, जहाँ वह बार-बार जाते थे। आजकल वहाँ भी नहीं जाते। ज़रूर उस चुड़ैलके घर जाते होंगे!

आज मैंने डॉक्टर लालको पत्र लिखा था। देते समय हाथ काँप रहे थे।

मैंने अपने हाथमें लालके लिए पत्र रखा था, जाने कहाँ गिर गया। हरीशके हाथ लग गया तो स्कूलके नोटिस-बोर्डपर टाँग देगा। सब लोग देखेंगे और हँसेंगे। मैं कहाँ परवाह करती हूँ। हँसते हैं तो हँसें। माँसे भी तो मैंने कह दिया है न····क्या वह भी ऐसा सोचती हैं?

मैं अपने मनकी उथल-पुथल कहाँ ले जाऊँ। आखिर अँगरेज़ीकी अध्यापिकामें क्या है जो मुझमें नहीं है। भूगोलके 'सर' कह रहे थे—लिली, तुम अजन्ताकी मूर्तियोंके समान सुन्दर हो!

जाने सभी लड़के, जो मुझसे ज़रा-ज़रा ऊँचे हैं, मुझे घूर-घूरकर क्यों देखते हैं? कोई भी ऐसा नहीं जो नज़रें झुका ले। हर बार मुझे ही झुका लेनी पड़ती हैं।

आज ग्यारहवीं श्रेणीके अमितने एक पत्र मुझे दिया। उसमें लिखा था—हम और तुम मित्र हो सकते हैं, तुम बड़े लोगोंके पीछे कैसे लगी हो? तुम्हारी दिलचस्पी डॉक्टर लालमें है···जो तुम्हें बच्ची समझते हैं और तुमपर हँसते हैं।"

उसने डायरी स्कूलके चपरासीके हाथ लिलीको लौटा दी। उसके बाद सचमुच लिलीने उसके साथ दुश्मनी प्रारम्भ की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगह-जगह लिलीके हाथका लिखा हुआ कुछ-न-कुछ अप्रत्याशित मिल जाता। कहीं-कहीं उसके फ़ोटोके नीचे लिखा रहता—'डायन ! दूसरोंके प्रेमी चुरानेवाली !'

स्कूलमें अध्यापक-दिवस मनाया गया। अध्यापिकाओंको बहुत-सी पदवियाँ मिलीं। उसे भी कई एक चिट मिले कि वह जूलिएट है। अन्तमें तालियोंकी करतल-ध्वनिमें, फूलों तथा अन्य उपहारोंके बीच डॉक्टर लालको रोमियोकी उपाधि दी गयी।

उस रात वह सो न सकी। रोमियो—जूलिएट ! जूलिएट—रोमियो ! इसी उधेड़बुन-में सुबह हो गयी। लड़खड़ाते क़दमोंसे वह स्कूल पहुँची। स्कूलमें, बड़ी भीड़ जमा थी और पुलिस पहरा दे रही थी। आर्ट सिखलाने-वाली अध्यापिकाने उसे बतलाया कि लिली-ने टीचर्स-बाथरूमके भीतर अपनेको फन्दा लगाकर मर जानेका प्रयत्न किया था। रात जब वह घर नहीं पहुँची तो उसके माता-पिता आ गये थे। उन्होंने सारा स्कूल ढुँढ़वाया तो वहाँ मिली।

"क्या लिली मर गयी ?"

"नहीं, अस्पतालमें है। आक्सीजन दे रखी है। शायद बच जाये !"

■■

आकाशवाणी
कलकत्ता

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति
और उपलब्धि-परिचायिनी मासिकी

ज्ञानपीठ पत्रिका

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित

● सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, जगदीश

● मूल्य :
६.०० वार्षिक, ००.५५ पैसे प्रति

'ज्ञानपीठ पत्रिका' हिन्दीमें अपने प्रकार-का प्रथम प्रयास है, और कदाचित् अन्य भारतीय भाषाओंको देखते हुए भी, जिसका प्रयत्न एक ऐसा अध्ययन प्रस्तुत करना है जो लेखक-प्रकाशक-विक्रेता-पाठक चारोंके 'अक्षर-जगत्'की गतिविधि, नयी प्रवृत्तियों, समस्याओं एवं समाधान, और विकास-उन्नतिकी दिशा-भूमिका सम्यक् परिचय दे, तथा परस्पर विचारोंके आदान-प्रदानका पथ प्रशस्त कर सके।

सम्पर्क-सूत्र : भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी—५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राक्षस । विवेकी राय

राजेन्द्रके मनका भेद अचानक खुल गया कि वह क्यों 'रिक्शे'को 'राक्षस' कहता है।

वह विवश होता है और बक जाता है। इसके लिए उसे शर्मिन्दा भी होना पड़ता है। परन्तु इस बातपर साधारणतः किसीका ध्यान नहीं जाता । कभी-कभी स्वयं राजेन्द्रको क्षोभ होता है कि वह क्यों सड़कपर थोड़ा भी बेक़ायदे खड़े रिक्शेको देखकर दाँत पीसने लगता है····हरामी हैं, साले! ऐसे रिक्शा खड़ा किया जाता है? ····इनके बापकी सड़क है? छेंक दिया रास्ता! ····कोई रिक्शा बग़लसे खड़-खड़, भड़-भड़ करता कुछ तेज़ीसे निकल गया—बस, राजेन्द्रका मुँह तोप हो गया और गालियोंकी गोलाबारी अन्धाधुन्ध शुरू हो गयी और अन्तमें····इन सालोंको, ज़रूरत है कि जूता निकालकर ख़ूब पीटा जाये! ···मगर दूसरे ही क्षण गालियाँ उसे स्वयं खटकने लगती हैं। स्वयं-पर खेद करता है। सोचता है, वह एक शिष्ट सरकारी कर्मचारी है। उसके मनकी यह अशोभनीय मलिनता निन्दनीय है। उसे भय भी लगता है कि इस अज्ञात उत्तेजनामें कभी कुछ कर न बैठे! तब कितनी भद्दगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगी ! लोग कहेंगे, छोटा आदमी है तभी तो छोटोंसे उलझता है। मगर, यह सब ज्ञान तभीतक रहता है जबतक कोई रिक्शा नहीं दीख जाता।

कई बार ऐसा हुआ कि वह पैदल ही स्टेशनसे अपने क्वार्टर तक चला आया। किसी खाली रिक्शेसे पूछा, 'कचहरी चलोगे ?' और यदि रिक्शेवालेने अन्यमनस्क भावसे या मोल-भावकी मुद्रामें या सीटपर बैठे-बैठे ही बातें की अथवा पैसा अधिक बढ़ाकर माँगा अथवा यह पूछा कि बाबूजी, अकेले चलेंगे या पूरा रिक्शा, तब यह स्थिति राजेन्द्रके लिए असह्य हो उठती है। वह इतना जल-भुन जाता है, इस सीमा तक उत्तेजित हो जाता है कि उसका सारा शरीर सनसनाने लगता है और बिना कुछ कहे दाँत पीसता हुआ, मन-ही-मन जूतोंसे रिक्शेवालेकी मरम्मत करता, आगे बढ़ जाता है। आगे दूसरे रिक्शेवाले घेरते हैं—बाबूजी, कहाँ जाना है ? बाबूजी, इधर आइए ! किन्तु बाबूजी किसी ओर नहीं देखते हैं। वे तो हैं तावमें ! मन कड़ुवाहटसे भरा है। तन तना है। फाल कसते सीधे चलते ही गये। फिर किसी रिक्शेवालेकी ओर देखा तक नहीं। सोचता है, जाओ साले, चूल्हे-भाड़में जाओ ! हम टहलते चले जायेंगे, पैसा बचेगा। सेहतके लिए कितना लाभदायक है टहलना ! एक दिन इसी झोंकमें राजेन्द्रने हिसाब लगाया कि वह जिस नौकरीमें है उसमें मिलनेवाली तनख्वाह प्रति घण्टा बीस नया पैसासे अधिक नहीं पड़ती है। इधर यह रिक्शेवाला पाँच मिनटकी मेहनतके लिए बीस पैसा ऐंठ लेता है ! उसने सोचा, लानत है रिक्शेपर चढ़ना ! रिक्शेपर वे चढ़ें जिनका वेतन एक हज़ारसे ऊपर है ! उसने यह भी सोचा कि ये रिक्शेवाले तो सरासर डकैती करते हैं। आखिर उसमें और उनमें क्या अन्तर है ? वे भी तन खटाते हैं और यह भी शरीर घिसता है। क्यों वे पाँच मिनटमें बीस नया पैसा कमायें और क्यों इतनी उसकी एक घण्टेकी कमाई हो ?

आखिर राजेन्द्र चाहता क्या है ? वह चाहता है कि वह ज्यों ही किसी रिक्शेके सामने खड़ा हो त्यों ही चट रिक्शावाला अपने रिक्शेसे उतरकर उसे सलाम करे। फिर वह दाँत चिआरके कहे कि बाबूजी, बैठिए, जो मरजी हो दे दीजिएगा ! इस प्रकार राजेन्द्र ठाटसे अकड़कर बैठ जाये और इधर-उधर देखता वायुवेगसे उड़ चले। गन्तव्य स्थानपर, पहुँचकर वह चवन्नीकी जगह दुअन्नी थमाकर बिना रिक्शेवालेकी ओर देखे, रोबमें अपने कमरेकी ओर बढ़ जाये। रिक्शेवाला खड़ा-खड़ा उस दुअन्नीको मर्म-भरी दृष्टिसे क्षण-भर देखे ज़रूर मगर कुछ कहे नहीं और चुपचाप रिक्शा मोड़कर सरक जाये।

लेकिन इस करवट ऊँट बैठता कहाँ है ? एकान्तमें कभी-कभी राजेन्द्र सोचता है कि रिक्शावाला क्या किसीका गुलाम है ? वह क्यों अपने रिक्शेसे उतरकर सलामी दागे ? हरगिज़ वह नीच नहीं और न वह इसलिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
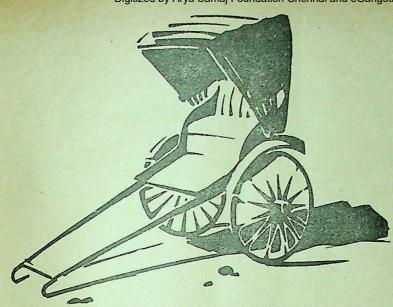
देना चाहते हैं तो वह क्यों न अधिक-से-अधिक हमसे माँगे ? इन बातोंको सोचकर और अपने व्यवहारका ख़याल कर राजेन्द्र जोरसे हँस भी पड़ता है। तभी उसके मनके भीतरसे कोई व्यंग्य करता है, काश कि ये विचार रिक्शेकी ज़रूरत पड़नेपर या रिक्शा सामने आनेपर रह पाते ?

एक दिन कटुताके झोंकेमें राजेन्द्र घाटेमें भी पड़ गया। उस दिन कुछ ऐसा संयोग जुटा कि उसमें मारे घृणाके रिक्शेवालोंसे बातचीत तक करनेकी हिम्मत नहीं रह गयी। उसे बैंक जाना था और सोच रहा था कि ये रिक्शेवाले इतने दुष्ट हैं तभी तो इस प्रकार एड़ी-चोटीका पसीना एक करनेपर भी इनको खाना-कपड़ा नसीब नहीं होता। लेकिन समस्या थी कि बिना रिक्शेके काम चलता नहीं दीख रहा था। उसने अपने बड़प्पनके टर्ममें सोचा, यदि ये सीधे मुँह बात नहीं करते तो वह भी इनसे बात नहीं करेगा। वह ठाठसे बैठकर चलेगा। चवन्नीकी जगह अठन्नी फेंक देगा। लो, साले, तुम्हीं राजा हो जाओ ! कौन बक-झक करे। उसने यह भी सोचा कि अब ये

छोटा है कि जाँगर ठेठाकर आदमीके रोबको ढोता है। वह स्वतन्त्र बड़प्पनवाला एक ग़रीब बादशाह है। वह स्वतन्त्र व्यवसायी है। वह क्यों उपकृत है ? उपकृत वह हो जिसे वह लादकर पहुँचा देता है। वह क्यों किसी बाबूको देखकर दुम हिलावे ? उसके कपड़े फटे-पुराने हैं, उसका शरीर खड़खड़ है, उसके चेहरेपर रोशनी नहीं है और वह सर्वथा उदास और बेचारा-जैसा लगता है, यह सब सही है परन्तु अपने रिक्शेकी गढ़ी-का वह गढ़पति है। उसे हम जो समझते हैं वही वह अपनेको नहीं समझता है। हम उसे क्यों अपना सेवक समझें ? वह सेवा नहीं कर रहा है। यह रिक्शा उसकी दूकान है। हम उसके श्रमके ग्राहक हैं। उसका मोल-भाव करना जायज़ है। सौदा पटे जाइए, न पटे रास्ता नापिए। जब हम उसे कम-से-कम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोल-भाव करेंगे और क़ायदेसे बात नहीं करेंगे तो उसे उनकी मरम्मत करनी पड़ जायेगी। इस प्रकार एक नया टण्टा खड़ा हो जायेगा। इस समय ज़रूरी कामसे चले हैं तो कामकी ही चिन्ता करें। यही सब सोच-कर वह एक रिक्शेपर बैठा। रिक्शा चल पड़ा और बैंकपर पहुँचकर जब अठन्नी पाकर भी रिक्शेवाला रोनी आवाज़में भुनभुना उठा, 'बाबूजी, इतना ही!' तो राजेन्द्र आपेसे बाहर हो गया। उस मँहगाई-लाचारीका क्रन्दन करते नाचीज़ जीवको बरदाश्त करने-की उसकी शक्ति गुम होने लगी। दाँत पीस-कर, उत्तेजनाके झोंकेमें उसकी गरदन मरोड़ देनेके लिए वह आगे बढ़ा ही था कि उसके पिताजी उसे देखकर किसी ओरसे आ निकले। 'बहै न हाथ दहै रिस छाती' वाली स्थिति एकक्षण रही और थूक घोंटकर ओठ चबाता हुआ, रिक्शेवालेकी ओर घोर उपेक्षा भावसे फिर चवन्नी फेंककर जब वह पिताजीके चरण छूनेके लिए बढ़ा तो कठिनाईसे ही काँपते शरीर और जलती आवाज़को छिपा सका।

इस घटनाका उसके ऊपर बहुत गहरा असर पड़ा। उसने कान छूकर प्रतिज्ञा की कि अब कभी वह रिक्शेवालोंसे नहीं उलझेगा। बेचारे ग़रीब हैं। एक-दो आने-पैसेकी उनकी दुनिया है। दुनिया उनसे क्रूरता-भरा व्यव-हार करती है। हम उनके मोल-भाव करने और माँगनेपर क्यों क्रुद्ध हों? हमें ऐसा करनेका क्या अधिकार है? सारी दुनिया सौदा करती है, वह भी करता है। यह अप-राध नहीं है। आज अपराध करनेवालोंको तो हम सिरपर उठाये रहते हैं। उन्हें मान-पत्र देते हैं और पापी पेटके लिए हाड़ घिसनेवाले इन कुरूप लोगोंके प्रति हमारी सभ्यता सूख जाती है। हम इनके अशुभ, अशिव और अमंगल रूपको क्यों देखते हैं? हमारी समस्त गन्दगीके वे भारवाहक हैं। वे स्वयं अपवित्र हैं। वे चुप हैं। उनके मुँह-से जो आवाज़ निकलती है वह उनकी नहीं हमारी है। लानत है हमारी इज़्ज़तदारी-को। राजेन्द्रने फिर-फिर कर पश्चात्ताप किया और रिक्शेवालोंके प्रति शरीफ़ बनने-की क़समें खायीं।

इसके दो सप्ताह बाद उसके ऑफ़िसका मुआयना था। उसके हेड ऑफ़िसके एक सीनियर इन्स्पेक्टर आये थे। उनका नाम था भगवती बाबू। राजेन्द्र भगवती बाबूको बहुत सम्मानकी दृष्टिसे देखता है, क्योंकि एक तो वे उसके रिश्तेदार लगते हैं और दूसरे उन्हींकी मेहरबानीसे उसे सर्विस और फिर तरक़्क़ी मिली थी और डिपार्टमेण्टमें रोब है। आखिरी दिन राजेन्द्रके घर उनकी चाय रही। वह शनिवारका दिन था। अक-सर इधरकी ओर इस दिन रिक्शेकी क़िल्लत हो जाती है। यह बात राजेन्द्रको मालूम थी। अतः चाय समाप्त होते ही भगवती बाबूको अपनी पुत्री-द्वारा एकत्र डाक-टिकटों-के देखनेमें उलझाकर स्वयं सड़कपर आ गया। ट्रेन छह बजे आती है और साढ़े पाँच बज रहा था।

"ओ, खाली है?" सामनेसे खाली गुज़रते रिक्शेको देखकर राजेन्द्रने पूछा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिक्शेवाला कोई फ़िल्मी गीत गा रहा था। उसने सुना ज़रूर और सिर हिलाकर शायद उत्तर भी दिया परन्तु यह ठीक पता नहीं चला कि वह गीतकी मग्नतामें सिर डुला रहा था या खाली होनेके विषयमें नकार रहा था और इस प्रकार वह अपनी रफ़्तार-में चला गया।

"ओ रिक्शा, स्टेशन चलोगे?" यह एक दूसरा रिक्शा था।

"पूरा रिक्शा?"

"नहीं तो क्या अधूरा ले चलेगा?"

"अठन्नी पैसा लगेगा बाबूजी!" रिक्शे-वाला मन्द-मन्द गतिसे रिक्शा आगे बढ़ाता और सीटपर बैठे-बैठे बात कर रहा था।

"ले जाओ!" राजेन्द्रने कहा और दूसरी ओर देखने लगा।

रिक्शेवालेने चाल तेज़ की और कुछ दूर जाकर आवाज़ लगायी, "कितना दीजिएगा बाबूजी?"

मगर अब राजेन्द्रने उधर देखा भी नहीं। इसी बीच एक रिक्शा जो सवारी लिये था, सामनेसे निकल गया और पाँच मिनिट तक कोई नहीं आया। उसे याद आया कि कभी-कभी घण्टों कोई रिक्शा इधर नहीं आता है। घड़ी अब पौने छह बजा रही थी। यदि इसी प्रकार कोई सवारी नहीं मिली तो क्या होगा? उसपर अब पुराना नशा हलके-हलके छाने लगा। जब उसने सोचा कि अब सायकिल लेकर बाज़ार रिक्शा बुलाने चलें तो एक बार मारे घृणाके उसके होंठ भिंच गये। अब वह पछताने लगा कि क्यों नहीं उसने सीटपर बैठे-बैठे अठन्नी माँगने और मग़रूरीमें सरक जानेवाले रिक्शेका नम्बर नोट कर लिया। पता लगाकर साले-को मज़ा चखा देता। मार जूतों ढाठाको भुस कर देता। काम दुअन्नोंका और शान इतनी? माँगने-खानेकी भी तमीज़ नहीं है। फ़िल्मी गीत गाता है! झोंटा पकड़कर, रिक्शेसे खींच मारे दो लप्पड़ तो हरामज़ादे-की बखिया उघड़ जाये। अच्छा बच्चू, आम-मछलीमें भेंट हो जाती है! देखेंगे····

"अरे राजेन्द्र, समय हो गया!"

उसने देखा, भगवती बाबू बरामदेसे नीचे आ गये हैं। उसे लगा कि अब धरती फट जायेगी और वह उसमें समा जायेगा। अपने एक भारी अभिभावकनुमा ऑफ़िसरके स्वागतकी सारी खुशियाली कड़वाहटमें डूब चुकी थी। उसके मनकी फटी-खुरदरी क्षुब्ध

> जब अठन्नी पाकर भी रिक्शेवाला रोनी आवाज़में भुनभुना उठा, 'बाबूजी, इतना-ही!' तो राजेन्द्र आपेसे बाहर हो गया। उस मँहगाई-लाचारीका क्रन्दन करते नाचीज़ जीवको बरदाश्त करनेकी उसकी शक्ति गुम होने लगी। दाँत पीसकर, उत्तेजनाके झोंके-में उसकी गरदन मरोड़ देनेके लिए वह आगे बढ़ा ही था कि उसके पिताजी उसे देखकर किसी ओरसे आ निकले। 'वहै न हाथ दहै रिस छाती' वाली स्थिति एक क्षण रही और थूक घोंटकर ओठ चबाता हुआ, रिक्शेवाले-की ओर घोर उपेक्षा भावसे फिर चवन्नी फेंक-कर जब वह पिताजीके चरण छूनेके लिए बढ़ा तो कठिनाईसे ही काँपते शरीर और जलती आवाज़को छिपा सका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिपर वे 'राक्षस' साक्षात् पिशाच, जन्तुकी तरह कराल डंक फैलाये, रेंगते चले जा रहे थे। कहीं गाड़ी न छूट जाये !

और भगवती बाबू राजेन्द्रके पास आ गये। उन्होंने पीछे मुड़कर आवाज दी, "मेरा सामान ले आओ !" और आगे सड़कपर जाते रिक्शेको रोका, "स्टेशन चलेंगे, रुको।" संयोगसे वह खाली रिक्शा उसी समय आ गया।

दोनों आदमी रिक्शेपर चढ़कर बढ़े। राजेन्द्रको काठ मार गया था। अपने क्षोभ-को व्यक्त न होने देनेके लिए वह बहुत कोशिश कर रहा था। लेकिन स्टेशनपर पहुँचकर आखिर वह उबल ही गया।

रिक्शा रुका तो राजेन्द्रने चालीस नये पैसे निकाले और रिक्शेवालेके हवाले किये। उन पैसोंको वापस करनेकी मुद्रामें उसने और बीस नये पैसेकी माँग की।

"इतना ही तो लगता है।" राजेन्द्र बोला।

"नहीं बाबू, कम है।"

"कम है ? क्या हरामका पैसा है ?"

"हम लोग हरामका पैसा नहीं खाते बाबूजी, लीजिए, तब यह भी ले लीजिए।"

"ला, दे, मोल-तोल करके न चढ़ो तो गरदन रेत दोगे ? साले, हरा....।"

"गाली काहेको दे रहें बाबू ?"

"ऐ सुन, ले यह एक रुपया !" भगवती बाबू बीचमें आ गये और एक रुपया रिक्शे-वालेको थमा दिया, "जितना वाजिब हो ले लो।"

राजेन्द्र तिलमिला गया। उसे लगा कि उसके शहरमें ही उसका घोर अपमान हो रहा है। एक मामूली रिक्शेवाला उसके एक ऑफ़िसरके सामने उससे अधिक पैसे ऐंठकर उसे ज़लील कर रहा है। उसने गरजकर कहा, "नहीं साहब, क्या ग़ज़ब है ! चार आनेकी जगह छह आने देता हूँ तब भी यह शरारत ? कोई कह तो दे कि शिवालासे स्टेशनका भाड़ा..."

राजेन्द्रका स्वर कड़ा पड़ गया था। उत्तेजनामें वह बिलकुल भूल गया था कि वह अपने एक अधिकारीके सामने खड़ा है। उधर रिक्शेवाला भी क्यों उन्नीस पड़े ? चालीस पैसा साहबके हाथोंमें थमाता ताव झाड़ता रहा, "ज़माना कितना बदल गया, यह नहीं देखते हैं ? पचास रुपयेमें बिकने-वाली खेसारी सौ रुपये बोरेके भावसे बिकने लगी। बाबू समझते हैं कि ख़ैरात माँग रहा हूँ, भीख माँग रहा हूँ। बड़े बाबू बने हैं ! गाली ज़बानपर ही रहती है... बड़े आदमी होकर...राम-राम"

"बड़ेआदमीपन बखानेगा तो अभी जूता निकालकर मरम्मत कर दूँगा।"

"बहुत देखा है आप जैसे जूता निकालने-वालोंको।"

"हम तुम्हें ठीक कर देंगे।" राजेन्द्रके मुँहसे फिचकुर निकल आया।

"क्या ठीक करेंगे ?" रिक्शेवाला भी गरज उठा।

"हम अभी तुम्हारे रिक्शेका नम्बर नोट करते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारों ओरसे दर्शक जुट आवें इसके पूर्व भगवती बाबू लगभग ज़बरदस्ती उसे घसीटकर टिकट घरकी ओर लेकर चले। राजेन्द्र चला तो उसे ऐसा लग रहा था कि वह पिटकर चल रहा है। उसके कलेजेपर एक काल्पनिक अपमानकी बत्ती जल उठी। उसका मस्तिष्क साँय-साँय करने लगा। वह गुम हो गया। उसने अनुभव किया, वह परम असहाय जीव है और दुनियाके सभी लोगोंको उसपर दया करनी चाहिए। अपनी-अपनी गरज़से इधर-उधर आते-जाते लोग उसे बहुत निष्ठुर-से लग रहे थे। कोई राजेन्द्रकी खबर लेनेवाला नहीं है। स्टेशनका बीहड़ कोलाहल एक समुद्र है और वह उसमें डूब रहा है, डूब रहा है। भगवती बाबूके प्रति उसे न कोई क्षोभ है और न अनुग्रह-भाव। वह चुपचाप उनके साथ है। टिकट कटा रहा है, पैसे गिन रहा है, प्लेटफ़ॉर्मपर चल रहा है, सूचना-पट्ट निहार रहा है और गाड़ी लेट समझकर चायकी दूकानकी ओर बढ़ रहा है, परन्तु यह सारा कार्य यन्त्रवत् हो रहा है। उसका मिज़ाज समपर नहीं आ रहा है। तनावका एक काँटा कलेजेपर है और एक मस्तिष्कमें। मुँह खोलते लाज लग रही है। इज्जत धूलमें मिल गयी है। कहीं कोई सहायक-सूत्र नहीं मिल रहा है और बीस-पच्चीस मिनिटका समय ही राजेन्द्रके लिए चौदह वर्ष वनवास-का समय हो गया है।

चायकी टेबुलपर बैठकर भगवती बाबू, उसके इन्स्पेक्टर साहब, ने मुसकराते हुए राजेन्द्रकी ओर देखा तो वह गल गया। तूफ़ान शान्त हो चुका था और धीरे-धीरे ज़मीन मिल रही थी।

"इतना गुस्सा करते आपको देखे जाने-की हमने तो कभी कल्पना भी नहीं की थी।....रिक्शेवाला आखिर रिक्शेवाला है! दो चार पैसेकी बात ..."

राजेन्द्र सिर झुकाये चुपचाप चाय पीता रहा। उसे भगवती बाबूकी इस टिप्पणीसे एक गहरा झटका लगा। वह समझ नहीं पाया कि यह कैसा अद्भुत झटका है। मगर, इस झटकेने उसे झकझोरकर एकदम शिथिल कर दिया। उसने एक जमुहाई ली। इस पल-भरकी जमुहाईमें एक युगका तनाव ढीला होकर ढह रहा था। उसका शरीर चायकी टेबुलपर बैठा था और मन कहीं मँडरा रहा था, कहीं डूब रहा था और कहीं बैठ रहा था। उस अत्यन्त लघु क्षणमें उसके सामने पन्द्रह वर्ष पूर्वकी एक घटना पूरे विस्तारके साथ साफ़-साफ़ झलक गयी। उसे रोमांच हो आया। वह हिल गया। चेहरा खिंच गया। एक अव्यक्त मुसकान खेल गयी। यह क्या खेल है, किसका खेल है—उसकी समझमें नहीं आ रहा था।

राजेन्द्रको लगा कि उसके भीतर कुछ धुल रहा है। कुछ साफ़ हो रहा है। कुछ उभरकर अनावृत्त हो रहा है। वह अतीतकी स्मृतिमें, गहरे और गहरे उतरता गया, उतरता गया और एक जगह जाकर रुक गया। उसे आश्चर्य हुआ कि वह जहाँ रुका है वह यही स्टेशन है। हाँ, ठीक यही जगह है मगर बीचमें पन्द्रह वर्षका फ़ासला है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह बहुत चावसे उस आपबीतीमें घूम रहा है। तब वह पहले-पहल इस शहरमें आया था और उसके पास दो आने पैसे थे।

वह उस मघबदरियाकी काली डरावनी रोमांचक शामको याद कर एक बार फिर सिहर उठा। उस दिन कम्पार्टमेण्टकी रोशनी-से निकलकर स्टेशनकी रोशनी हेलता जब वह बाहर आया तो अन्धकार ऐसा लगा कि उसे घोंट डालेगा। तब वह एक तो बच्चा था। हाँ, बच्चा ही था क्योंकि अभी मिडिल पास था। दूसरे, पहले-पहल रेलपर चढ़कर शहरमें आया था। शहर उसके लिए एक स्वर्गका सपना था। उसके बारेमें उसने अपने मनमें कुछ कल्पनाएँ कर रखी थीं। इस बीहड़ अन्धकारको देखकर उसकी कल्पनाको ठेस लगी। ऊपरसे बूँदाबूँदी और हाड़के भीतर झुरझुरी उठानेवाली ठण्डी सनसनाती हवा और ग़ज़ब ढाती है। स्मृतिपर बिना बल दिये अनायास यादोंकी परतें खुलती जा रही थीं और उसे वह सब इस प्रकार याद आने लगा जैसे कलकी घटना हो।

उसके पास दो आने पैसे थे। तब वह नौकरी नहीं करता था, नौकरीका उम्मीदवार था। मिडिल पास कर मास्टरीमें घुसना चाहता था। उसके पिताकी भी यही राय थी। इसी कामकी सिफ़ारिशके लिए वह शहर आया था। उसके पड़ोसी हरिचरन काकाके ननिहालके एक वक़ील बाज़ारमें रहते हैं। हरिचरनने राजेन्द्रको विश्वास दिलाया था कि वकील साहबसे कहकर बोर्ड-में उसका जुगाड़ बैठा देंगे। इधर हरिचरन पन्द्रह दिनसे अपनी लड़की रतनीकी आँखका इलाज कराने शहरमें आया हुआ था। आँख अच्छी हो चली थी। अब वे लोग गाँव लौटने ही वाले थे। इसी बीच उसकी माँने याद दिलाया कि कहाँ तो हरिचरन काका-को लिवा जाना था और कहाँ वे शहरमें गये ही हुए हैं। सो, वह जाये कि आमने-सामने काम बन जाये। उसकी माँने ही गाड़ी-भाड़ा और दो आना पैसा अधिक उसे दिया। कहा, "जातीकी भीर है। आतीमें तो काका रहेंगे ही।"

राजेन्द्र दिन-भर धोती, कुर्ता और गमछा कुएँपर साफ़ करनेमें व्यस्त रहा। उसने चप्पलकी कँटिया दुरुस्त की। हज़ामत बनवायी। तेल लगाकर नहाया। वह आज शामकी गाड़ीसे शहर जा रहा है। यह कोई मामूली बात नहीं है। उसके जीवनकी सड़क-पर एक नया मील-पत्थर गड़ने जा रहा है। उसे लग रहा था कि गाँव-गँवईका वह मनई कितना ख़ुशनसीब है जिसे कभी शहरमें जानेका मौक़ा मिलता है। हरिचरन काका जब जाते हैं तो लौटानीमें चिनिया बादाम ले आते हैं। कहते हैं कि शहरमें क्या एक फाल भी पैदल चलना है? ठावें ठाँव रिक्शे खड़े हैं। एकन्नी पैसा थमाया, रिक्शाने टुन-टुन-टुनटुन कचहरीसे बाज़ार पहुँचा दिया। उसपर बैठकर चलनेमें नवाबी झरती है। आगे सायकिलपर बैठकर रिक्शेवाला उसे खींचता है। दो आदमी आरामसे उसपर बैठते हैं। उसपर गद्दी रहती है। बैठनेपर मज़ा आ जाता है। अगर धूप है तो रिक्शेकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छतरी ऊपर कर दी जाती है। धूप नहीं है या पानी नहीं बरस रहा है तो छतरी नीचे-कर शहर-बाज़ार, लोग-बाग और दूकान-मकानपर आँख सेंकते सरसर-सरसर भीड़के बीचसे चलते जाओ। नीचे पैर फैलाकर रखनेकी जगह होती है। जैसे कुरसीपर बैठते हैं, उसी प्रकार तबीयतसे रिक्शेपर बैठ जाते हैं। गिरनेका डर नहीं होता है। पैदल चलते लोगोंके बीच रिक्शेपर चलनेमें खूब शान रहती है। यही शहरका असली मज़ा है! राजेन्द्रके मनपर इस प्रकार शहर बनाम रिक्शेका आकर्षण एक जादू बनकर छाया था।

यह सोचकर उसका किशोर-मन खुशीमें नाच उठता कि रतनी उसे रिक्शेपर बैठे आते देखकर क्या सोचेगी? उसकी आमकी फरी-जैसी बड़ी-बड़ी आँखें फैल जायेंगी। उसकी पल्लव-जैसी उँगलियाँ चिहाकर होठोंपर चली जायेंगी। वह भोली-भाली हिरनीकी तरह एक क्षण ताकती रह जायेगी। उसी प्रकार ताकती रह जायेगी जिस प्रकार दोपहरमें कुएँपर नहानेके लिए जब आती है और वह उधरसे निकलता है तब निहारती है। वाह, जैसे कभी देखा नहीं, पहले-पहल देख रही है और बूझना चाहती है कि अहो, तुम हमारे गाँवके हो या परदेसी पाहुन हो? कितना प्यारा उसका मुँह लगता है। फूलकी तरह खिला रहता है। चाँदकी तरह जगमगाता रहता है। मक्खनकी तरह मुलायम। मक्खी बैठे तो फिसल जाये। छूनेकी इच्छा करती है। जब आँख उठाती है तो उजाला हो जाता है। जिस जगह खड़ी होती है, विश्वनाथजीका मन्दिर खड़ा हो जाता है। वह सोनेकी पुतरी ...एक बार उसकी ओर देखकर उसने हँस दिया था।

राजेन्द्रने देखा कि नहानेके लिए केवल बाल्टी लिये कुएँपर वह आ गयी। भूल गयी होगी बेचारी, फिर घर जायेगी। राजेन्द्र झपटकर अपनी डोर लिये कुएँपर पहुँचा और दोनों हाथमें थामे उस डोरको उसके आगे इस प्रकार रखने लगा जैसे देवीके आगे फूल रख रहा हो। देवी मुसकरा उठी क्योंकि डोर तो अपनी बाल्टीके भीतर रखकर पहलेसे ही लेती आयी थी—'खाली डोर लिये भैया बाँधने तो नहीं चले!' और वे वाक्य उसके मनमें गुरु-मन्त्रकी तरह गूँजते रहते हैं। एक नशा-सा छाया रहता है। आज शहरमें उसे वह देखेगा। जरूर। अगर वकील साहबके मकानमें बरामदा होगा तो वह उसमें जाते ही सामने पड़ जायेगी। देहाती लड़की, शहर देखती होगी। राजेन्द्र कहेगा, अब ले देख, यह मैं भी आ गया और रिक्शेसे उतरकर सबसे पहले पूछेगा, अरे, रतनी, तुम्हारी आँख तो अब एकदम अच्छी-भली हो गयी।

राजेन्द्रको एक नक्शा बनाकर दिया गया था जिसमें यह दर्शाया गया था कि वह वकील साहबके डेरे तक कैसे जायेगा। उस नक्शेके मुताबिक़ ट्रेनसे उतरते ही सामने उसे खड़े रिक्शे मिलेंगे। रिक्शेवालेसे वह कहेगा कि उसे बाज़ारमें चलना है और चौकके आगे मन्दिरके पास उतरना है। एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमीका वहाँका भाड़ा डेढ़ आना होता है, अधिकसे अधिक दो आना। मन्दिरसे दक्खिन ओर गली जाती है जिसमें पूछनेपर वकील साहबको लोग बता देंगे।

ट्रेन कुछ लेट पहुँची। शामके छहकी जगह सात बज गये। राजेन्द्र ट्रेनपर सवार हुआ तो अभी दिन था और उतरनेपर लगा कि रात घिर आयी है। रातके साथ आसमानपर बादल भी घिर आये हैं। ठण्डी हवा सनसना रही है। अब उसे एक रिक्शा चाहिए था। वह इस रिक्शेवालेके यहाँ, उस रिक्शेवालेके यहाँ जाता है। मौसम खराब होनेसे रिक्शेका बाज़ार गरम हो गया है। राजेन्द्र अकेला है परन्तु पूरे रिक्शेका तीन आनेकी जगह चार आना माँग रहे हैं। उधर वह अपने पॉकिटसे लाचार है। कुल दो आने ही अपने पल्ले हैं। इसीलिए मोल-भावके लिए वह दौड़ धूप कर रहा है। नया अनुभव है। अँधेरेमें बहुत खल रहा है। पानी बरसकर अभी-अभी खुला है। बहुत मामूली झींसीकी तरह कुछ बूँदें अभी भी पड़ जाती हैं। सड़कके गढ़ोंमें पानी भर गया है। राजेन्द्र हिम्मत करके पैदल भी चला जाता पर डर था कि कहीं रास्तेमें बूँदें तेज़ न हो जायें। छाता भी नहीं है।

उसने जल्दा-जल्दी रिक्शेकी तलाश शुरू की। रिक्शेवाले खूब तान रहे थे। एक रिक्शावाला एक सवारी बैठाकर बाज़ार-चौक और शिवाला चिल्ला रहा था। यानी उक्त स्थानोंकी उसे एक और सवारी चाहिए थी। राजेन्द्र उसपर बैठ गया। रिक्शा आगे बढ़ा। तब स्टेशन रोडके दोनों ओर मकान नहीं बने थे। चारों ओर मैदान और सुनसान था। इधर-उधर एकाध झोंपड़ीमें बीड़ी-पान और लकठोंकी दूकानें थीं जिनके आगे ढिबरी जल रही थी। आगे एकदम निर्जन था। उसके बहुत आगे शहरका सिलसिला शुरू होता था।

लगभग पचास ग़ज़ चलनेपर रिक्शेवालेने अचानक रिक्शा धीमा कर दिया। बोला, "बाबू तीन आना आपका भी लगेगा।"

राजेन्द्रने बहुत दीन भावसे अपनी विवशता बता दी किन्तु रिक्शेवालेने रिक्शा रोक दिया। राजेन्द्रने कहा कि एक तो उस दूसरे साथवाले सज्जनको उधर ही उतरना है। दूसरे, पूरे रिक्शेको यहाँसे चार आनेपर रिक्शेवाले खुशी-खुशी दो आदमीको बैठाकर ले गये हैं। वह दो आना देता है तब भी उसको पाँच आने हो जाते हैं। यही बात रिक्शेवालेको साथकी सवारीने भी समझायी परन्तु वह माननेको तैयार नहीं था। राजेन्द्रने यह भी कहा कि उसके पास दो ही आना है और मौसम ख़राब है। सो, इस दो आनेमें वह जहाँतक परता पड़ता हो वहाँतक ले चले और फिर वहाँसे वह पैदल चला जायेगा। इसपर भी रिक्शावाला राज़ी नहीं हुआ।

उस सुनसान पथपर, पानी-कीचड़से भरी उस सड़कपर, उस अँधेरी रातमें मन मारकर राजेन्द्र उतर गया। रिक्शेवालेने घण्टी टुनटुनायी और फिर धीरे-धीरे आगे बढ़ गया। राजेन्द्रके सामने सचमुच अँधेरा छा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया। वह काँप गया। आगे पैर पड़ता नहीं था, परन्तु चारा क्या था ?

कई जगह गड्ढोंमें वह गिरते-गिरते बचा। चप्पल पानी-कीचड़में लदर-फदर हो गयी। उसके साथ ही उसका मन भी माटी-धूलमें लसराकर उतर गया। शहरकी वह पहली साँझ उसके दुर्भाग्यकी साँझ हो गयी—बहुत भारी, बहुत उदास।

बिजलीकी मद्धिम रोशनीमें वह मोड़से आगे हुआ कि इसी बीच एक मोटर पीछेसे आयी और गड्ढेका भरपूर पानी छपाकसे उसके कुरते, धोती और माथेपर बैठ गया। इस कीचड़की होलीके लिए वह क़तई तैयार नहीं था। वह खड़ा हो गया। उसका मन रोने-रोने-जैसा हो गया। भींगा कपड़ा शरीर-से चिपककर छनछनाने लगा। दिन-भरकी की गयी कपड़ोंकी सफ़ाई माटीमें मिल गयी। वह कौन मुँह लेकर आगे बढ़े।

इसी बीच सवारी लिये एक रिक्शा पीछेसे आया। आगे लुकलुक बत्ती जल रही थी। अन्धकारमें भूतकी आँख-जैसी लग रही थी। टुनटुन करता जब वह आगेसे निकल गया तो राजेन्द्रको ऐसा लगा कि कोई प्रेत दाँत किड़किड़ा रहा है। उसकी खड़खड़ाहट-में उसे दानवी आहटका मनहूस आभास हो रहा था। वह एक क्षण तक उसे घूरता रहा। जबतक उसके जानेकी आहट सुनाई देती रही तबतक वह इधर कान लगाये रहा। उसकी कल्पनामें एक ख़ूँख़ार जन्तु उसके आगेसे सरकता चला गया था। एक क्रूर पिशाच सूखे हाड़ खड़खड़ाता, अपने भयानक जबड़े फड़फड़ाता, उसके आगेसे निकल गया था। उसके मुँहसे एक मर्मभेदी मरोड़के साथ निकल गया—'राक्षस !' और वह आगे बढ़ा। मन-ही-मन मनाने लगा कि वह पहुँचे तबतक रतनी सो गयी रहे अन्यथा ऐसे देखकर वह क्या सोचेगी ?

वह एक रात नहीं थी, काले पत्थरकी भारी चट्टान थी, जो उसके मनपर पड़ गयी। जैसे-जैसे वह बड़ा होता गया वह चट्टान और नीचे, और नीचे, अन्तर्मनकी, अवचेतन-की तहकी ओर धँसती गयी, खिसकती गयी, स्थिर होती गयी।

राजेन्द्र देख रहा है कि आज वही चट्टान गल रही है। गीली धोतीकी तरह उसका अवचेतन निचुड़ रहा है। उसे वह निचोड़-कर सूखनेके लिए टाँग देगा। वह एक हलके-पनका अनुभव कर रहा है। यह चायकी टेबुल आज उसके लिए गंगा-स्नानका परम पावन घाट हो गयी।

"अच्छा, अब ट्रेन आ गयी !" उठते हुए भगवती बाबूने कहा और अभिभूतकी तरह राजेन्द्रने उठकर उनके चरण पकड़ लिये। राक्षस अब जा चुका था।

■ ■

कमरा—३
क्षत्रिय छात्रावास
ग़ाज़ीपुर (उ० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
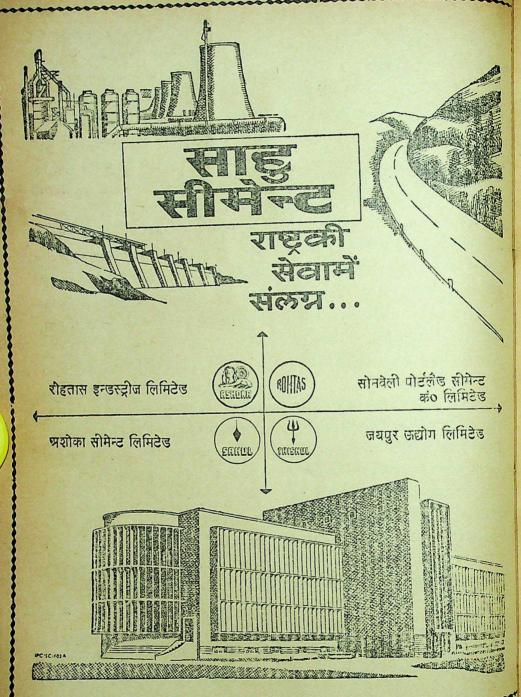
तलाश / अवधनारायण सिंह

हरीसन रोडके बीचोबीच दोनों तरफ़ ट्रामें जाम होकर दोहरी क़तारोमें दूर तक खड़ी थीं। उनके अगल-बग़ल दूसरी सवारियाँ आगे बढ़नेकी कोशिशमें बुरी तरह उलझ गयी थीं। दोनों पटरियोंपर शामकी भीड़ आ-जा रही थी। लोग सड़कको जंगली रास्तोंकी तरह पार कर रहे थे। सवारियोंसे वे इस तरह बचकर निकल रहे थे मानो वे कटीली झाड़ियाँ हों।

उसने मुड़कर देखा। स्कूल-बिल्डिंग पीछे छूट गयी थी। उसका एक किनारा गलीके कटाववाले आसमानसे दिखाई दे रहा था, जो उसके लिए अपरिचित था। यहाँसे उसने स्कूलकी इमारत पहली बार देखी थी। उसका यह कोण उसे कुछ अच्छा लगा। यूँ वह अक्सर स्कूलसे निकलकर उधर नहीं ही आता है—अगर कोई बहुत जरूरी काम न हुआ तो। वह घबराता है कि कहीं उस इमारतके पाससे गुज़रते हुए उसके पेटमें न चला जाये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज उसके शरीरमें कुछ ज़्यादा थकान थी, क्योंकि उसे सारे पीरियड पढ़ाने पड़े थे। जब भी कोई टीचर ग़ैर-हाज़िर रहता है तो अकसर उसकी डयूटी उसे ही पूरी करनी पड़ती है। वह जानता है कि उसके दब्बूपनके कारण प्रिन्सिपल बेहिचक उसपर ज़्यादा भार डाल देता है। वह भी उसका कोई प्रतिवाद नहीं करता है। मनमें खिसियाकर रह जाता है और ऊपरसे उत्साहका प्रदर्शन करता रहता है। वह जानता है कि प्रिन्सिपलसे उलझनेमें नुक़सान-ही नुक़सान है, फ़ायदा कुछ नहीं।

यह सोचकर कि अभी तीन घण्टे और काम करना है उसका मन खिन्न हो गया है। इतनी कड़ी डयूटीके बाद यह अतिरिक्त काम उसे अच्छा नहीं लगता है, लेकिन मजबूरीको अपनी नियति मानकर उसके सामने सिर झुकाते जानेको अपनी आदत बना ली है।

उसने सोचा कि आज उसे टयूशन करनी चाहिए अन्यथा उनमें-से एक-दो छूट भी सकती हैं। वह जानता है कि टयूशनोंके लिए 'रेगुलर' होना कितना ज़रूरी है। गार्जियनकी निगाहमें यह बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। उसकी टयूशनें अकसर इसी वजहसे छूट जाती हैं या दो-चार दिन अनुपस्थित होनेपर वह वहाँ जानेमें स्वयं संकोच करता है और बना-बनाया काम चौपट हो जाता है।

वह पिछले तीन दिनोंसे टयूशनोंपर नहीं जा रहा है। वह अकसर नहीं जाता है और अगर जाता भी है तो झूठे बहाने बनाता है हालाँकि बहाना बनाते हुए अपने भीतर वह अजीब कमज़ोरी अनुभव करता है।

वह सोच रहा था कि अपनी तबीयतकी खराबीका बहाना कितनी बार करेगा। हर महीनेमें उसे अपनी तबीयतकी खराबीकी बात कहनेमें अच्छा नहीं लगता है और दूसरी बात यह कि वह बीमार पड़ता भी कहाँ है। वैसे वह अबतक कई बार अपनी माँको बीमार बना चुका है और कई बार पिताको। दो एक मौक़ोंपर उन्हें मृत घोषित कर चुका है। ऐसा तभी हुआ है जब वह महीनों टयूशनोंसे ग़ैर-हाज़िर रहा है। बहानेबाजी भी बाहरके लड़कोंपर ही चल पाती है। अपने स्कूलके लड़कोंसे वह ऐसी बहानेबाज़ी नहीं कर पाता है। फिर भी उनसे बचावका कोई-न-कोई रास्ता ढूँढ़ निकालता ही है।

वह टयूशन करना क़तई पसन्द नहीं करता। उसे वह बरतन माँजने अथवा झाड़ू देनेसे ज़्यादा अच्छा काम नहीं समझता है। अकसर वह अपने टयूशन-प्रिय मित्रोंके इस बातकी चर्चा भी करता है जो उसकी आर्थिक हालतको उद्घाटित कर उसे निरुत्तर कर देते हैं और वह मौन लगा लेता है। वह भी जानता है कि स्कूलकी तनख्वाहसे उसके खाने-पीनेका खर्च भी मुश्किलसे ही चल पाता है। लेकिन फिर भी उसे टयूशनपर जाना बुरा लगता है। जब भी वह इस कामसे मुक्त होता है, उसे लगता है कि उसकी ज़िन्दगीका जाम रास्ता चालू हो गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और वह तेज़ीसे आगे बढ़ रहा है।

टचूशनपर जानेका उसका निर्णय धीरे-धीरे ढीला होने लगा और वह सोचने लगा कि आज भी वहाँ न जाये तो कोई विशेष हर्ज नहीं है। कल जाकर कुछ ज़्यादा वक़्त दे देगा अथवा रविवारको भी पढ़ा देगा। इससे गार्जियन उसकी ज़िम्मेदारी बोधसे खुश होंगे। फिर वह कलके बहानेकी खोज करने लगा। उसे कोई बहाना सूझा नहीं। बहानोंका इस तरह खो जाना उसे बड़ा अजीब लगा। नौबत यहाँ तक पहुँच गयी कि सारे बहाने चुक गये! वह अपनी बुद्धिसे निराश हुआ और उसने सोचा कि दुनिया न जाने कितने बहाने ढूँढ़ लेती है और एक वह है कि बहानोंसे इस क़दर खाली! इस विचारसे उसे खुशी हुई कि अभी पूरे चौबीस घण्टेका समय है। इतने लम्बे समयमें वह कोई बहाना किसी-न-किसी तरह ढूँढ़ ही निकालेगा।

जानेका निर्णय ख़त्म हुआ, तो उसीके साथ दूसरा निर्णय उभर आया कि कल वह किसी भी हालतमें वहाँ जायेगा ही—चाहे कुछ भी क्यों न हो जाये। यूँ उसे अपने इस नये निर्णयपर विश्वास नहीं हो रहा था। फिर भी वह अपने मनको भीतर ही-भीतर अटल बनाने लगा।

इस निर्णयसे कि आज फिर उसे टचूशनपर नहीं जाना है उसके पैरोंमें पहलेसे ज्यादा ताक़त आ गयी और शरीरकी थकान भी कम हो गयी। वह लम्बे-लम्बे डग भरने लगा।

उसने देखा कि सड़क अभी तक ज्यों-की-त्यों जाम है। सवारियोंका आवागमन रुका हुआ है। उसने सोचा कि कहीं कोई बड़ी दुर्घटना हो गयी है और लोग सड़कके बीच इकट्ठे होकर उसके तमाशबीन बने हैं। अब वह लोगोंकी तरह दुर्घटनाओंकी जानकारीके लिए जिज्ञासु नहीं रहता है, बल्कि उनसे तटस्थ रह जाता है। वे उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए सामान्य अथवा स्वाभाविक हो गयी हैं। वह जानता है कि दुर्घटनाओंके बाद लोगोंको केवल एक ही बातकी तकलीफ़ होती है कि उनके काममें अनावश्यक बाधा पैदा हो गयी है। लोग ऐसी स्थितिमें मन-ही-मन बुरी तरह झुँझलाते हैं और अपनी क़िस्मत अथवा दुर्घटनाओंको कोसते हैं।

वह चलते हुए भयभीत निगाहोंसे सामनेसे गुज़रनेवालोंको देखता जा रहा था। वह नहीं चाहता था कि कोई परिचित मिल जाये और आपसी बातचीतमें उसे उलझा ले। वह ऐसे मौक़ेपर लोगोंको काटना जानता है। वह कहता है कि टयूशनमें जाना है, लड़का कबका इन्तज़ार कर रहा होगा। उसे काफ़ी देर हो चुकी है। वह इस तरीक़ेसे अपनेको लोगोंसे साफ़-साफ़ बचा लेता है। दूरके जान-पहचानवालोंको तो नमस्कार करके अथवा 'कहिए, मज़ेमें हैं न ?' जैसे रटे-रटाये वाक्योंके ज़रिये काट देता है।

उसे खयाल आया कि वह जिस पटरीसे चल रहा है वह खतरेसे खाली नहीं है। इधर कई प्रकाशकोंकी दुकानें हैं जो उसे रोककर देर कर सकते हैं। प्रकाशकोंसे वह दो वर्ष पहलेसे रुपये भी ले चुका है और उसका काम पूरा नहीं कर पाया है। स्कूली पुस्तकोंके लिखनेमें उसकी बिलकुल रुचि नहीं है। पैसेकी तंगीकी वजहसे वह वादा कर तो लेता है पर उसे कभी पूरा नहीं कर पाता।

सड़क पार कर वह दूसरी पटरीपर चला गया। वहाँ उसने अपनेको ज़्यादा सुरक्षित महसूस किया। वह कुछ निश्चिन्त हो गया और उसी रौमें चलने लगा। इधर भीड़ भी अधिक थी जिसमें वह अपनेको अच्छी तरह खोकर खुश था।

एक-ब-एक वह भयभीत हो उठा क्योंकि उसे खयाल आया कि सामनेवाली पटरीपर उसके एक छात्रका मकान है। हो सकता है कि वह उसे देख ले। फिर कल उससे बीमारीका बहाना नहीं बना पायेगा। वह अपनेको दबाकर चलने लगा, गोया चोरी करके भाग रहा है। वह जल्दी-जल्दी मोड़ पर आ गया। मुड़कर पीछे देखा। उस मकानके बरामदेकी छतपर कोई नहीं था। पक्का विश्वास हो गया कि उसे किसीने देखा नहीं। अपनेको इस तरह बचा लेनेसे उसे खुशी हुई। फिर वह अपनेपर हँसा। आजकल अकसर उसे अपनेपर हँसी आती है।

मोड़पर खड़े होकर वह सोचने लगा कि अब कहाँ जाना है। अभीतक लग रहा था कि वह किसी बहुत ज़रूरी कामसे कहीं जा रहा था और अब अनुभव करने लगा था कि उसे कहीं कोई काम नहीं है और कहीं भी जाना नहीं है।

उसे अचरज हुआ कि अबतक जिस ज़रूरी कामके लिए इतना आगा-पीछा सोच रहा था वह क्या हुआ ! कहाँ खो गया। वह दुबारा अपने निर्णयपर विचार करने लगा। उसने सोचा कि इस तरह बेकार और निरुद्देश्य भटकनेमें क्या तुक है। क्यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ट्यूशन ही करे ! इससे मनका बोझ हलका होगा । जिस दिन वह ट्यूशनपर नहीं जाता है रातको उसे नींद पूरी तरह नहीं आती । तब लगता है कि वह बहुत परेशान है और कोई बहुत ग़लत काम कर रहा है ।

उसने सड़कको पार किया और वापस लौटा । ट्यूशनवाले मकानके बरामदेमें खड़े होकर पान खाया और घड़ी देखने लगा । वह क़रीब पन्द्रह मिनिट वहीं खड़ा रहा । उससे न मकानके ऊपर जाते बन पा रहा था और न आगे बढ़ते । अजीब हालतमें पड़ गया था । उसकी समझमें नहीं आ रहा था कि वह कोई निर्णय लेनेमें इस क़दर असमर्थ क्यों हो गया है । सोचने लगा कि उसे कुछ-न-कुछ तय करना चाहिए । वह कुछ भी तय नहीं कर पाया और सड़कपर आने-जाने-वाली सवारियोंको देखने लगा ।

उसे ख़याल आया कि रास्ता चालू हो गया है । वह दौड़ा और सामनेसे गुज़रनेवाली ट्रामपर चढ़ गया । गिरते-गिरते बचा । दूसरे लोगोंने उससे नसीहतके रूपमें कहा कि 'मरना है क्या ! इस तरह बेवक़ूफ़ी नहीं करनी चाहिए ।' उसने अनुभव किया कि वह काफ़ी लज्जित है और जो कुछ किया है वह ग़लत है । वह किसीकी चोरी करके तो नहीं भाग रहा था ।

भीड़में काफ़ी उमस थी । वह भीड़में खड़ा था । जब अगल-बग़लवाले आदमी उसके इस तरह बेहूदे ढगसे चढ़नेको भूल गये तो उसने पूछा कि यह ट्राम कितने नम्बरकी है ।

लोगोंने उसकी तरफ़ जिज्ञासासे देखा गोया वह अपने भीतर कोई भयानक रहस्य छिपाये हुए है । ट्राम या बसपर चढ़ जानेके बाद उनके नम्बर पूछनेवालोंको लोग टिकट-चोर मानते हैं । वे सोचते हैं कि ऐसे लोग इसी तरह सफ़र करते हैं ।

एकने उसपर जैसे दया की और उसी आवाज़में कहा कि यह बत्तीस नम्बर है ।

वह आश्वस्त हुआ कि सही ट्रामपर चढ़ा है । उसने तय किया कि अभी काफ़ी वक़्त है । भवानीपुरवाले ट्यूशनमें अच्छी तरह जा सकता है । उसने इस निर्णयके बाद पन्द्रह पैसेकी टिकट ख़रीद ली और महसूस करने लगा कि ट्राममें सफ़र करनेवाले यात्रियोंके बीचका आदमी है ।

चौरंगीपर यह सोचकर उतर गया कि एक बार घूमकर देख ले, शायद कहीं किसी-से मुलाक़ात हो जाये । उसने सारी निश्चित जगहें देखीं, लेकिन कहीं कोई न मिला । उसे इससे निराशा हुई और लोगोंपर गुस्सा आया कि वह उनसे मिलनेके लिए कितना

> उसे अचरज हुआ कि अबतक जिस ज़रूरी कामके लिए इतना आगा-पीछा सोच रहा था वह क्या हुआ ! कहाँ खो गया ? वह दुबारा अपने निर्णयपर विचार करने लगा । उसने सोचा कि इस तरह बेकार और निरुद्देश्य भटकनेमें क्या तुक है । क्यों न ट्यूशन ही करे ! इससे मनका बोझ हलका होगा । जिस दिन वह ट्यूशनपर नहीं जाता है रातको उसे नींद पूरी तरह नहीं आती ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परेशान रहता है और लोग हैं कि उसकी ज़रा भी परवाह नहीं करते। उनकी स्वार्थ-परता और अपने बीच उसे बहुत फ़र्क लगा।

वह वापस ट्राम-स्टॉपपर आ गया। अब वह किसीको नहीं ढूँढ़ेगा। उसे किसी-की ज़रूरत नहीं है। वह अकेले ही रह लेगा—ब़खुशी।

वह यह निश्चय नहीं कर पा रहा था कि अब उसे कहाँ जाना है। कई बसें और ट्रामें उसने छोड़ दीं। खड़े खड़े ऊब गया तो चौरंगीकी भीड़-भरी सड़कपर टहलने लगा। सोचने लगा कि इस सड़कको चौरंगी कहनेसे जो अर्थ-बोध होता है वह 'जवाहर-लाल रोड' कहनेसे बिलकुल नहीं।

वह इस उम्मीदसे वहाँ बहुत देर तक इधर-उधर घूमता रहा कि किसीसे मुलाक़ात हो जाये और उसके साथ चाय पीते हुए बातें करे। लेकिन कोई जान-पहचानवाला नहीं मिला। वह ऊब गया, तो खड़े-खड़े नियॉन-लाइटकी चमक देखने लगा। उसने सोचा कि उसकी ज़िन्दगी नियॉन-लाइटकी तरह शायद ही कभी बन पाये।

वहाँ उसका मन और ऊब गया तो सरकता हुआ-सा मेट्रोके सामने एक पेड़के नीचे खड़ा हो गया। उसने अपनी जेबमें हाथ डाला तो केवल दस पैसे मिले। इधर वह पैसोंको लेकर काफ़ी परेशान है। हर समय वह रुपया कमानेकी योजना बनाता और बिगाड़ता है। उसे यह महानगर बड़ा दरिद्र लगा।

वह किसीका इस तरह इन्तज़ार कर रहा था जैसे किसीने उससे मिलनेका पक्का वादा किया है। इधर-उधर भटकते हुए काफ़ी रात बीत गयी तो उसने सोचा कि शाम-बाज़ार तक उसे पैदल ही जाना होगा, क्योंकि उसके पास पन्द्रह पैसे भी नहीं है। घर जाकर वह पत्नीसे बहाना करेगा कि अमुक छात्रकी वर्ष-गाँठ थी जिसकी वजहसे उसे इतनी देर हुई। यह बात दूसरी है कि उसके बहानोंको उसकी पत्नी केवल बहाना ही समझती है।

अब आहिस्ता-आहिस्ता घरकी तरफ़ चलने लगा। यह ख़याल आया कि दस पैसेसे हरीसन रोडके मोड़ तक जा सकता है। आगेका रास्ता पैदल ही तय कर लेगा।

दो नम्बर बस मोड़ ले रही थी। उस पर दौड़कर चढ़ गया। बसमें बैठ जानेके बाद उसने सोचा कि कण्डक्टरसे वह कोई बहाना नहीं बना सकता है।

■■

११, साहित्य परिषद, स्ट्रीट
कलकत्ता—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुमुँही । बीना माथुर

कल दोपहर तीन बजे जब मैं उसके घर पहुँची तो रोजकी तरह उसने मुझसे चायके लिए नहीं पूछा, उठी भी नहीं, अपनी कुरसीकी मैली गद्दीपर उसी तरह बैठी रही। वह कुछ उदास लग रही थी, ढीले कपड़े पहने वह मुझे खेतमें लगे 'काक-भगोड़े'के समान लगी, जिसे कपड़े पहनाकर खड़ा कर दिया जाता है। मैंने उसके निकट आकर उसके चेहरेकी हंसीको ढूंढ़ना चाहा।

"क्या बात है ?" वह और भी उदास हो गयी। फिर चेहरा लटकाकर बोली, "परसों जब मैं तुम्हें बस-स्टॉपपर छोड़कर लौट रही थी तो वह मिल गया—मनहूस चेहरा....।"

"क्या वह तुम्हारे साथ-साथ घर तक गया ?"

"हाँ।"

"कुछ बात की उसने ?"

"नहीं।"

"तो क्या हुआ—फिर, तुम क्यों उदास हो ?"

"क्योंकि उसकी शक्ल देखते ही मेरा 'थॉट-प्रोसेस' रुक जाता है।"

"हैं ?—तो क्या वह तुमपर इतना हावी है ?"

"नहीं-नहीं, बिलकुल नहीं..."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह चौंककर बोली, अचानक उत्तेजित होकर कुरसीसे उठी लेकिन फिर ढीली होकर 'धप्' से बैठ गयी।

"मेरी समझमें नहीं आता कि 'वह' मेरे पीछे क्यों पड़ा है?"

"मैं बताऊँ?"

उसने प्रश्नसूचक दृष्टिसे मेरी ओर देखा। आँखोंपर लगी बड़े शीशोंवाली ऐनकसे वह मुझे आज कुछ अधिक प्रौढ़ जान पड़ी।

"क्योंकि वह तुम्हें एक 'इण्टेलेक्चुएल' लड़की मानता है और उसे अभी तक तुम्हारी ही जैसी लड़कीकी खोज थी।" मैंने उसे खूब ग़ौरसे देखते हुए कहा।

"क्या तुम समझती हो कि वह इण्टेलेक्चुएल है—कभी हो सकता है ऐसा आदमी इण्टेलेक्चुएल?"

"मेरे-तुम्हारे समझनेका तो प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि वह पूरे दावेके साथ अपनेको इण्टेलेक्चुएल कहता है।"

"हुच!"

उसने चेहरेको झटका देकर, एक अजीब-सी आवाज़ निकाली और ऊपरकी ओर देखा, मुझे महसूस हुआ कि अब यह बहुत देर तक यों ही ऊपरकी ओर न जाने क्या देखती रहेगी।—मैं जानती हूँ कि ये उस शख़्ससे चिढ़ने लगी है। वह भी अजीब आदमी है, आजकल युनिवर्सिटीमें इससे सम्बन्धित वह प्रत्येक व्यक्तिसे इसके विषयमें बात करता है लेकिन इससे नहीं करता—मुझे लगा कि वह अवश्य ही इसे जान-बूझकर तंग करता है।

मैंने उसे काफ़ी नजदीकसे देखा है—सफ़ेद कुरते-पाजामेमें वह एक ओर थोड़ा झुककर चलता है। शायद उसके दायें कन्धेमें कुछ ख़राबी है। कुछ लोगोंसे मैंने सुना है कि वह किसी पत्रिकाके दफ़्तरमें काम करता है। मैं जानती हूँ कि वह इस लड़कीमें 'इण्टेरेस्टेड' है लेकिन यह नहीं है—लेकिन तभी मुझे ध्यान आता है कि पिछले दिनों वह अधिक चर्चाका विषय बना हुआ था क्योंकि यह उसके साथ घूमती रही थी। हर जगह दोनों घूमते मिल जाते—कैफ़े, साइन्ज़-ब्लॉक, कॉफ़ी-हाउस। लोग कहते इससे—'हाउ कम दैट यू आर एवरी वेयर' और ये उस झुँझलाहटको मुझ तक पहुँचा देती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मेरी समझमें नहीं आता मीना कि लोग क्यों इस तरहके मूर्खतापूर्ण सवाल करते हैं—मैं चाहे जितना घुमूं, जिसके साथ घूमूं.... ।"

"क्या वह तुम्हारा काफ़ी गहरा दोस्त है ?"

मैंने तब दबे स्वरमें पूछा था ।

"हाँऽ, अभी तो है ही ।" इसने कहा था ।

अचानक इसकी ज़ोरकी हँसी मुझे सुनाई दी है । मैंने देखा कि मेज़पर रखे एक काग़ज़के टुकड़ेपर एक अजीब-सी शक्ल बनाकर ये मुझसे कह रही है—"यह 'वह' है...." और फिर इसने एक ठहाका लगाया ।

"एक बात कहूँ," मैंने कहा ।

"कहो ।"

"तुम उससे नफ़रत करती हो, तुम्हें उसके विषयमें सोचना नहीं चाहिए ।"

"नफ़रत....हाँ, मैं उससे नफ़रत करती हूँ क्योंकि ऐसे आदमीके चेहरेको मैं 'रिकॉगनाइज' नहीं करना चाहती जिसे बात करनेकी तमीज़ न हो ।" इसका चेहरा अचानक मैला हो आया ।

"इससे तुम्हारा क्या मतलब है ?"

"ऐसा आदमी जो दूसरोंके सामने आपको बेइज़्ज़त करता हो और जो हर समय 'ऑब्लीगेशन' करनेके चक्करमें रहता हो ।"

इसने फिर नाक सिकोड़ी । सारी युनिवर्सिटीमें लोग इसे 'सिनिक' कहते हैं । मुझे याद है, ये मेरे साथ 'कैफ़े में बैठी थी, 'वो' भी था । इसने भरे 'कैफ़े' में अपने हाथकी फ़ाईलके क़ाग़ज़ोंको एक झटकेके साथ चारों ओर बिखरा दिया था और दो-तीन शीशेके गिलास तोड़ दिये थे । तब मैंने इसकी ओर नाराज़गीसे देखा था और 'उसके' चेहरेपर एक दुःखका भाव था जैसे उसे बड़ा कष्ट हो । फिर उसने गिलासोंका हरजाना भरा था । कारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे नहीं ज्ञात था लेकिन इतना अवश्य कि कोई मौन झगड़ा इन दोनोंके बीच ही था—या फिर इसके हर समय बदलते 'मूड'का परिणाम—जो सारे कैफ़ेमें बैठे लोगोंकी दृष्टिमें पागलपन था या फिर 'एबनॉरमैलिटी'।

इस घटनाके ठीक पाँचवें दिन मुझे यह उसके कमरेकी ओर जाते हुए रास्तेमें मिली थी।

"कहाँ जा रही हो ?"

"उसके घर।" इसने पिटे हुए स्वरमें उत्तर दिया।

उस समय मैं इससे नहीं पूछ सकी थी कि इनके आपसी सम्बन्ध क्या हैं—आज मैं इस अवसरको हाथसे जाने नहीं देना चाहती थी।

"लेकिन भूपिन्दर, तुझे वह पसन्द करता है।"

"करता है तो करे—मैं तो परवाह नहीं करती।"

मेरी इच्छा इसीका एक 'डॉयलॉग' इसीके मुँहपर बोलनेको हुई, मैं अपनेको रोक न सकी।

"भूप्पी, दोज़ हू सेज दैट दे डोण्ट बॉदर, बॉदर ए लॉट।"

और इसने फिर ठहाका मारकर मेरी बातको हवामें उड़ानेकी कोशिश की।

"छोड़ो चलो, कहीं चलें," इसने कहा, "मेरा मूड अब ठीक है।"

"इस समय कहाँ ?"

"कहीं भी।"

मैं कुछ नहीं बोली, इसने अपने बालोंपर हाथ फेरकर उन्हें सँवारा, दुपट्टा गलेमें लपेटकर, पैरोंमें चप्पलें डालती हुई यह उठी। हम इसके घरसे निकलकर बाहर सड़कपर आ गये, मुझसे रास्तेमें चलते-चलते एकाएक यह बोली :

"एक दिन वह कह रहा था कि तुम साड़ी क्यों नहीं पहनतीं, सलवार-क़मीज़में तुम बहुत दुबली-कमज़ोर...."

मुझे न जाने क्यों हंसी आ गयी, अपनी मुसकानको एक कोनेमें छिपाते हुए मैं बोली :

"लेकिन भूप्पी, वह आदमीकी 'इण्टेलेक्ट' को ही देखता है न कि...."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वह कहता है," इसने आगे जोड़ा,
"तुम्हारा शरीर आदमियों-जैसा लगता है।"

कहते-कहते ये चुप हो गयी। इसकी चुप्पीने मुझे याद दिलाया कि कुछ हफ़्तों पहले यह लगातार साड़ी पहनती रही थी, मेरे पूछनेपर इसने उत्तर दिया था—"जानती नहीं,
कुछ दिनोंमें मैं भी लेक्चरर होने वाली हूँ,
साड़ी पहननेका अभ्यास कर रही हूँ।"

और तब मैंने ईमानदारीसे इसकी बातको मान लिया था।

अब हम सड़क पार करके 'मार्केट' तक बढ़ आये थे और वहीं दुकानोंके बीचमें एक छोटे-से 'रेस्तराँ' में घुस रहे थे।

"इस रेस्तराँका नाम क्या है?"
"पढ़ा नहीं, बाहर 'लकी' है लकी।"
"तुम क्या अकसर यहाँ आती हो?"
"हाँ, ये मेरा एक और ठिकाना है।"

हमने चाय मँगायी—बैरा हम दोनोंको देखते हुए मुसकुराकर पाससे गुज़र गया। मुझे कुछ अजीब-सी अनुभूति हुई। मैंने इसकी ओर देखा, ये उस लड़केकी ओर देखे ही जा रही थी।

"शीऽ ई–नज़र हटाओ कैसी हो तुम?"
मैं झुँझलायी।
"साला! देखता क्या है?"

ये गुर्रा रही थी। चाय पीकर हम वहाँ अधिक देर तक बैठे नहीं—वहाँसे उठाकर मुझे ये सामने 'गोलगप्पों'की दुकानकी ओर ले गयी।

"खाना है कुछ?"
"हूँ-ऊँ...." मैंने मुँह बनाया।
"कुछ खा लेते हैं।"
"नहीं, छोड़ो...."

घिसकते हुए-से हम फिर आगे बढ़े—इसने कुछ नहीं कहा, बस नीचा मुँह किये चलती रही। उस समय मुझे न जाने क्यों महसूस हुआ कि इसका धड़ ग़ायब हो गया है, केवल टाँगें चल रही हैं। तभी

घिसटते हुए-से हम फिर आगे बढ़े—इसने कुछ नहीं कहा, बस नीचा मुँह किये चलती रही। उस समय मुझे न जाने क्यों महसूस हुआ कि इसका धड़ ग़ायब हो गया है, केवल टाँगें चल रही हैं। तभी मैंने सिर उठाकर देखा तो कोनेकी एक दुकानपर 'वह' खड़ा था—सफ़ेद कुर्ता-पाजामा, एक ओर झुकता हुआ। मैं हैरानीसे फुस-फुसायी...
"भूपी, देख वह...."
इसे जैसे 'करेण्ट' लगा हो, यह लगभग उछलते हुए बोली, "वह...वह यहाँ क्या कर रहा है?..."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने सिर उठाकर देखा तो कोनेकी एक दुकानपर 'वह' खड़ा था—वे सफ़ेद कुर्ता पाजामा, एक ओर झुकता हुआ। मैं हैरानीसे फुसफुसायी, "भूप्पी, देख वह...."

इसे जैसे 'करेण्ट' लगा हो, यह लगभग उछलते हुए बोली, "वह....वह यहाँ क्या कर रहा है ?"

"मुझे क्या पता ?"

मैं बुझे स्वरमें बोली। यह उसी 'कॉरनर' की ओर घूर-घूरकर देखने लगी। उसके हाथ पीछेकी ओर बँधे थे और उनमें कुछ काग़ज़ नज़र आ रहे थे। मैंने देखा कि वह कुछ क्षणके लिए वहीं ठिठक गया। फिर हमें देखते ही वह तेज़ीसे आगेकी ओर आने लगा। इसने रास्ता काटनेकी कोशिश की, परन्तु मैंने हाथ मारकर इसे रोका। वह सामने खड़ा हो गया, ढिठाईसे बोला, "हलो !"

मैंने उत्तरमें 'हलो' कहा।

ये चुप रही।

"कहाँ घूम रही हैं ?"

"बस ज़रा यों ही।"

अबकी बार भी मुझे ही उत्तर देना पड़ा। वह भेद-भरी दृष्टिसे इसकी ओर देखे जा रहा था और यह, मुझे लगा कि इसने कोई जड़ी-बूटी सूँघ ली है।

अचानक मुझे ही ध्यान आया कि हम सड़कके बीच खड़े हैं। मैंने कहा, "अच्छा चलें।"

"हाँऽ आ...."

उसने कहा, फिर मुड़ा और जाने लगा। हम उसे वैसे ही जाते हुए देखते रहे—मेरा मन हुआ कि इससे कहूँ, मुझे लगता है कि इसका धड़ पहले चलता है और नीचेका भाग बादमें परन्तु इसकी खामोशी देखकर मैं चुप रही। हम वापस हो लिये। मार्किटसे बस-स्टॉप तक हमारे बीच कोई भी बात नहीं हुई—मैं देख रही थी कि ये बहुत खामोश हैं।

मैंने बातको बदलनेके लिए पूछा, "मुझे घरके लिए बस वहाँसे मिलेगी न?" मैंने सामनेकी ओर इशारा करते हुए कहा।

"हूँ।" ये धीमी आवाज़में बोली।

हमने दुबारा सड़क 'क्रॉस' की, मुझे बस-स्टॉप तक छोड़कर ये लौट गयी।

तीन दिन बाद युनिवर्सिटीमें मेरा एक पुराना 'क्लास-फ़ेलो' मिल गया।

"कहो क्या हाल है ?"

"ठीक है—तू सुना।" मैं मुसकाते हुए बोली।

उसने इधर-उधर देखा फिर बोला, "तुम्हारी भूप्पीके क्या हाल हैं ? आज-कल दिखाई नहीं देती।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हूँ—हूँ, उसके सामने यह नाम मत ले देना वरना हाथ धोकर पीछे पड़ जायेगी।" मैंने उसे चेतावनी दी।

अबकी बार वह हँसा—"मेरे पीछे क्या पड़ेगी, जब वह ऑलरेडी एक व्यक्तिके पीछे है।"

"क्या मतलब, किस आदमी के····"

मैं चौंकी, लेकिन सधे स्वरमें मैंने पूछा।

"सीधी मत बनो—एक ही तो व्यक्ति है।" उसने मेरे निकट आते हुए कहा, "तीन दिन पहलेकी बात है मैंने उसे और उस खद्दरके कुरतेवाले आदमीको उसके कमरेसे एक साथ निकलते देखा।"

मैं सँभलते हुए बोली, "कहाँ····कब कितने बजे?"

"वही जहाँ मैं रहता हूँ—जहाँ वह रहती हैं—यही कोई साढ़े सात बजे।"

साढ़े सात, तीन दिन पहले, मैंने दिमाग़पर ज़ोर दिया। उस दिन साढ़े सात बजे मैं मुँहके बल बिस्तरपर लेटी, तरह-तरहकी आवाज़ें निकाल रही थी।

"सुन वीरेन, साँपकी जातिमें एक दो-मुँही होती है न?"

"हैं····" वीरेन हैरानीसे मुझे देखने लगा, "हाँ! होती तो है।"

"और भयानक भी बड़ी होती है!" मैं चिन्तित हो गयी थी।

"लेकिन—?"

"अच्छा—फिर मिलेंगे····"

बातोंके सिलसिलेको तोड़ते हुए मैं तेज़ीसे मुड़ी और सामने अपने 'आइज ब्लाक' में तीरकी तरह घुसती चली गयी। ■ ■

आर ब्लाक : ७५८
न्यू राजेन्द्रनगर, नयी दिल्ली—५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हनुमान वनस्पति से

कम खर्च में भोजन तैयार करिये

यह खाना बनाने में कम व्यय होता है

यह वीटामीन ए और डी से परिपूर्ण है और गले को नुकसान नहीं पहुंचाता।

इससे तैयार किया हुआ भोजन एवं मिठाइयां देर तक स्वादिष्ट रहती हैं।

यह दानेदार व बिल्कुल सफेद है। यह स्वास्थ्यपूर्ण ढंग से ऐसें टिनो में पैक किया जाता है जो प्रयोग के बाद दूसरे कामों में आसानी से इस्तेमाल किये जा सकें।

निर्माता—
रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमियानगर
(बिहार)

IPC/HV-53

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
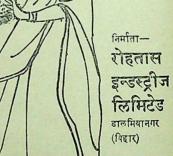
पर्वतके पार । रावो

उस पार्वत्य नगरके सामने ही, कोस-भरकी दूरीपर ऊँचा दुर्गम पर्वत था। पुरानी किवदन्ती थी कि पर्वतके पार त्रिपुरा-सुन्दरी जन्म लेगी, और जो भी युवक उसके पास पहुँचकर उसका वरण करेगा वह पृथ्वीका चक्रवर्ती राजा या संसारमें अपने युगका सबसे बड़ा धर्म-गुरु होगा।

उस युग एवं देशके लोग विविध विद्याओंसे सम्पन्न एक विकसित मानव जातिके अंग थे। नगर-ज्योतिषीकी गणनाके अनुसार वह समय आ गया था जब पर्वतके पार त्रिपुरा-सुन्दरी जन्म लेकर अपने सोलहवें वर्षमें पदार्पण कर चुकी थी।

नगरवासियों और विशेषकर नगरके कुछ युवकोंकी कामना प्रबल थी कि पर्वतके पार पहुँचकर उन्हींमें-से कोई त्रिपुरा-सुन्दरीका वरण करे।

पर्वतारोहणका अभियान किया गया। इस अति दुर्गम निष्पथ, पर्वतकी चोटीपर अभियन्ता-दल पहुँच भी गया; किन्तु वहाँ पहुँचकर देखा, पर्वत-शिखर अपनी पूरी लम्बाई-भर बीचसे फटकर दो भागोंमें विभक्त था। कोसों लम्बी और अदृश्य-अगाध गहरी वह दरार इतनी चौड़ी भी थी कि उसे पार करनेका कोई साधन उनके पास नहीं था।

अभियन्ता-दल वापस उतर आया था। नगरकी सभा प्रतिदिन जुड़ती थी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर्वत पार करनेके उपाय सोचे जाते थे, पर कोई साधन हाथ नहीं आ रहा था।

एक दिनकी सभामें—वह इस प्रकरण-की नगरकी अन्तिम सभा थी—एक युवक खड़ा हुआ और बोला : "मैंने पर्वतको पार कर लिया है, त्रिपुरा-सुन्दरी मेरे समक्ष है और मैं उसका वरण करने जा रहा हूँ !"

सबने आश्चर्यचकित दृष्टिसे उसे देखा। वह नगरका एकान्त-सेवी, स्वल्पतम भाषी तथापि सर्वाधिक सुन्दर युवक था। नगरकी प्रवृत्तियों और चर्चाओंमें न्यूनतम, आवश्यक भाग ही लेता था। पर्वतारोही दलमें भी वह नहीं गया था और आज पहली बार ही सभामें उपस्थित हुआ था।

लोगोंने देखा, वह अपनी बात कहकर एक ओर बढ़ा; सभास्थलके उत्तरी कोनेपर पहुँचकर वह दक्षिणाभिमुख पर्वतकी ओर पीठकर रुका और अपनी बातकी उसने पुनरावृत्ति की : "मैंने पर्वतको पार कर लिया है, उसे आप मेरे पीछे देख रहे हैं। त्रिपुरा-सुन्दरी मेरे समक्ष है और मैं उसका वरण कर रहा हूँ।"

वह आगे बढ़ा और सामने उपस्थित (सभामें महिलाएँ और बालाएँ भी उपस्थित होती थीं) एक सुन्दरी षोडशी बाला—वह नगरकी सर्वाधिक सुन्दरी, नगरके एक निम्नवित्तीय सेवक-वर्गके नागरिककी पुत्री थी—का हाथ उसने अपने हाथमें ले लिया।

विस्मत-चकित नगरवासी सम्मुख खड़ी इस अनिन्द्य जोड़ीको आह्लादपूरित आँखोंसे देख रहे थे !

■

नगर-ज्योतिषीने अपने ग्रन्थोंकी ओर भी गहरी गवेषणा कर बताया कि पाँच सौ वर्ष पूर्व उनका ही वह नगर पर्वतके उस पार बसा हुआ था। पिछली शताब्दीमें उनके पूर्वज किन्हीं दैवी प्रकोपोंकी पूर्व-सूचना पाकर पर्वतके इस पार आ बसे थे और नगरान्तरणके कुछ वर्ष पीछे ही एक बड़े विस्फोट द्वारा पूर्व नगरकी भूमि ध्वस्त हो गयी थी और वह पर्वत दो भागोंमें विभक्त हो गया था।

कहनेकी आवश्यकता नहीं कि वह युवक त्रिपुरा-सुन्दरीके अवतारको अपनी परिणीता पाकर संसारका, अपने युगका सबसे बड़ा लोक-शिक्षक हुआ और उसके जीवनकी यह पूर्वकथा इतिहास-पुराण-द्वारा अप्रसारित, किन्तु उसकी आगेकी जीवन-गाथा भरपूर लोक-प्रसारित और सर्वविदित है!

मेरे कथा-गुरुका कहना है कि और भी अनेक दुर्गम पर्वतोंके पार अनेक लोक मांगलिक सिद्धियों-उपलब्धियोंकी घोषणाएँ पूर्ति की प्रतीक्षामें हैं और कुछ अधिकारी सुपात्र उन पर्वतोंके पार भी आ गये हैं।

आपके मनमें किसी बड़ी उपलब्धिकी आशा-आकांक्षा अति मुखर हो और उसकी राहमें कोई अनुल्लंघ्य पर्वत आड़े हो तो अनूती चढ़ाई या हताश पलायनसे पहले इस कथा-द्वारा संकेतित दिशाओंका भी एक बार और अनुसन्धान कर लें।

■■

कैलास (आगरा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल : पु. ल. देशपाण्डे
अनु० : प्रभाकर माचवे

कहानी कैसे लिखें ?

मनुष्य-प्राणीकी अनेकोंने अनेक प्रकारसे परिभाषा की है। मनोवैज्ञानिक उसे हँसनेवाला प्राणी कहते हैं; परन्तु ईसपकी कहानियोंका आधार लेनेसे यह पता चलता है कि 'सियार हँसकर बोला', 'सिंह-श्रीमतीने हँसकर श्रीमती उल्लूसे पूछा'—ऐसे मानवेतर प्राणियोंके हास्यविषयक स्पष्ट सबूत होनेपर मानवकी केवल 'हँसनेवाला प्राणी' ऐसी व्याख्या करनेसे अतिव्याप्ति अथवा और अव्याप्ति-दोषके शिकार बनकर—तर्कशास्त्र जिसे नहीं मानता—ऐसी परिभाषा करनी पड़ेगी। और न हँसनेवाले प्राध्यापक पूनामें गली-गलीमें नजर आयेंगे। हमारा एक परिचित अपने जीवनमें केवल एक बार नींदमें हँसा। और वह भी जब जाग पड़ा और हमने उससे पूछा तो बोला, "मैंने सपनेमें अपनी पत्नीको गूँगी बन जाते हुए देखा।" फिर

नु । रखे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वह भी केवल सपना था" कहकर वह जो गम्भीर बन गया, तो आजतक नहीं हँसा। तात्पर्य—मनोवैज्ञानिक परिभाषा तर्कशास्त्र-सम्मत नहीं है।

स्थापत्य-शास्त्रज्ञ मनुष्यको 'मकान बनाकर रहनेवाला प्राणी' कहते हैं। परन्तु 'गोबरमें महल बनाकर गुबरैले रहते है' यह वचन उनके मुँहपर फेंकनेसे ही काम बन जायेगा। उत्क्रान्तिवादी लोग मानवकी परिभाषा बन्दरका वंशज करते हैं, पर विकासवादको इतिहास-शास्त्रका समर्थन प्राप्त नहीं है। क्योंकि इतिहासप्रसिद्ध पूर्वजोंके आजके वंशज देखकर उत्क्रान्ति—यह बन्दरसे आदमीकी ओर न होकर आदमीसे बन्दरकी ओर है यह स्पष्ट होता है। किसी भी बड़े वंश और घरानेके आधुनिक देशी रियासतवाले की मर्कट चेष्टाएँ या घोड़े-जैसी ग़लतियाँ मेरी बातको पुष्ट करेंगी। इससे उलटे आज हम कितने वर्षोंसे पशु-संग्रहालय देख रहे हैं। अभीतक वहाँके किसी भी बन्दरका मानवमें रूपान्तर होता दिखाई नहीं दिया। वहाँ जानेवाला मानव ही उस मर्कटके पींजरेके आगे और अन्य पेड़ों-झाड़ियोंके आसपास अधिक मर्कट-लीलाएँ करता है।

सारांश, मनोविज्ञान, तर्क-शास्त्र, स्थापत्य-शास्त्र या उत्क्रान्ति-शास्त्र--इन प्रसिद्ध वैज्ञानिक दृष्टिकोणोंसे जो व्याख्याएँ की जाती हैं वे कितनी व्यर्थ हैं यह हम देख चुके। मनुष्य-प्राणीकी सच्ची परिभाषा साहित्य-शास्त्र ही कर सकता है।

"मनुष्य कहानी लिखने, पढ़ने और सुननेवाला प्राणी है।" अखिल विश्वके इस विराट् विस्तारमें अनेकविध प्राणिजात वस्तु हैं। पिस्सूसे हाथी तक। और काईसे पीपल तक, गिट्टीसे हिमालय तक सचेतन और अचेतन वस्तुओंके इस पसारेमें एक ही व्याख्या विशिष्ट घटकों तक मर्यादित रखना कठिन कार्य है। यहाँ बुद्धि-विलास लूला हो जाता है--धारणाशक्ति पंगु हो जाती है--विचार अन्धे हो जाते हैं। सारांश, कुछ भी समझमें नहीं आता। ऐसे समय विश्व-व्यापारसे भी कठिनतर इस साहित्यरूपी बाज़ारमें नवीन ग्रन्थरूपी दुकान शुरू करनेकी कांक्षा रखनेवाले लेखकरूपी वणिक्को तन्त्रज्ञानरूपी तराज़का सम्यक्-ज्ञान देनेका प्रयत्नरूपी हठ करना यानी 'तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्' ऐसा उस कालिदासरूपी कवि-कुलगुरु अथवा कवि-कुलगुरुरूपी कालिदास या वैसे ही किसीकी वैसी भाषामें कहनेकी इच्छा होती है। इसलिए सन्तकवि सखदेवके शब्दोंमें पुनः कहता हूँ--'कथा कथित करता है वही मानव है!' इतर लोग जैसे सोनेके आगे सीसा या विद्युद्दीपके आगे चोर--इसलिए सखदेवका वचन हमने उद्धृत किया है।

इसपर कुछ पाठक यह दुष्ट शंका उपस्थित करेंगे, क्योंजी भैयाजी, (हमें हमारी मित्रमण्डली भैयाजी ही कहती है। उन बेचारोंका हमपर स्नेह है, हमारे नानाराव--दुनियाके सत्रह विद्वानोंकी सूची हमने बनायी है उनमें-से एक; और दूसरे हमारे मित्र गोविन्दराव ज्ञानेश्वर--उन्हें अठारहवाँ विद्वान् गिन लीजिए) हाँ, तो लोग पूछेंगे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंजी भैयाजी, आपने हमें 'कहानी कैसे लिखें ?' इस विषयपर कुछ कहनेके लिए लेखनी हाथमें ली, और आप करने लगे मनुष्यकी परिभाषा, सो कैसे ? उत्तर सीधा है। सरल है। सहज है। प्रस्तुत लेख शास्त्रीय है। और कोई भी शास्त्रीय चर्चा परिभाषाके बिना हो ही नहीं सकती। 'चर्चा शास्त्रस्य व्याख्या' यह जीमूतवाहनका प्रसिद्ध सूत्र है।

परसों ही--यानी उसे दो साल बीत गये—हमारे साहित्य-चर्चा-मण्डलमें 'पानी और काव्य' विषयपर प्राध्यापक शारंगपाणी का व्याख्यान हुआ। चर्चा शास्त्रीय थी सो हमने उन्हें 'पानी' की परिभाषा करनेके लिए कहा।

'जो पीनेसे प्यास बुझनेसे अधिक कुछ नहीं होता वह पानी है।' उन्होंने परिभाषा दी। प्राध्यापक महाशय समझे कि हो गयी उनकी परीक्षा। पर नहीं। हमने उन्हें 'और' शब्दकी परिभाषा करनेके लिए कहा। यह परिभाषा करते हुए उनके मुँहका पानी उतर गया। कहनेका तात्पर्य यह है कि शास्त्रीय चर्चामें परिभाषा अनिवार्य है।

सो मनुष्यकी परिभाषा 'कहानी लिखने, सुनने और पढ़नेवाला प्राणी' करनेके बाद 'कहानी'की परिभाषा—यह दूसरा महत्त्वपूर्ण विचार-बिन्दु सामने आता है।

हमारी व्युत्पत्ति-शास्त्रवाली दृष्टिसे 'लघुकथा' शब्द 'रघुकथा' से बना है।

रघु=लघु—(रलयोरभेदः)

अब लघुकथा मूलतः रघुकथा सिद्ध होने पर विश्वके वाङ्मयका आदिकाव्य रामायण-की ओर दृष्टि जाती है। उसका प्रथम प्रसंग देखिए। और उस ओर ध्यान जाना उचित, स्वाभाविक और सहज है। वह प्रसंग लोकविश्रुत है। फिर भी सुनाता हूँ 'तमसा-तीर'—शान्त-रम्य प्रातःकाल—एक क्रौंच युग्म—युग्म सहज क्रीडा—एक बाण 'सूं सूं' करता हुआ आता है—एक पक्षी नीचे गिरता है—वह ऊपरसे गिरकर ज़मीनको छूता है उससे पहले ही 'मा निषाद प्रतिष्ठां त्वं' अनुष्टुप् सुनाई देता है। यहींसे आगे रामायण उर्फ़ रघु-कथा उर्फ लघुकथा शुरू हो जाती है। कोई कुछ भी कहे हम तो उसे लघुकथा ही कहेंगे। सारांश, लघुकथाको रघु-कथा कहनेके बाद अब और दूसरी परि-भाषाकी क्या आवश्यकता है। आद्य लघु-कथा वही है।

अब हम इस ओर मुड़ सकते हैं कि कहानी कैसे लिखें।

कहानीके मुख्यतः तीन हिस्से होते हैं: आरम्भ, मध्य, अन्त। आरम्भ हमेशा आकर्षक होना चाहिए। उदाहरणार्थ—'बिरॅन्निडो आर्जुनीनी' नामक इटालवी लेखककी 'पंखोंकी मीनार' इस नितान्त सुन्दर कहानीका आरम्भ देखिए :

"पेगानीनीकी वायलिन्की तार एकदम टूटी"

देखिए, कितनी आकर्षक है। एक पंक्ति-में पेगानीनी नामक इटालियन वादक खड़ा रहता है। तार टूटना प्रतीकात्मक है। यह स्पष्ट ही है। वैसे ही फ्रॉउ फाडार फुशमन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नामक जर्मन ज्यू लेखिकाकी 'तीन छोकरियाँ और तीन शनिवार'—यह 'गॉस्टर' स्वर्णपदक प्राप्त कहानी देखिए, कैसा मोहक आरम्भ है :

"नीली आँखोंवाली लड़की भूरे बालोंवाली लड़कीसे बोली—अपनी धनुष्याकृति भौंहोंवाली लड़की कहाँ गयी री ?"

तीनों छोकरियाँ आँखोंके सामने खड़ी हो जाती हैं।

कहानीका आरम्भ ठुमरी-गायन-जैसा होना चाहिए। जिस प्रकारसे कोई ठुमरी गानेवाली गायिका कोई कहानी कहनेकी शुरूआत कर रही हो, इतनी नज़ाकतसे ठुमरीको हाथ लगाती है, उसी तरहसे लघुकथाकी शुरूआत इतनी नाज़ुक होनी चाहिए कि पाठकको लगे कि यह कहानी नहीं ठुमरी ही है। प्रारम्भ कैसे हो यह आप जान गये, अब मध्य कैसे हो, सो सुनिए :

"नीली आँखोंकी मीठी लड़की शोपँके वाल्ट संगीतके छुटे हुए चरण गाते-गाते स्नान-गृहमें गयी। बाहर भूरे बालोंवाली छोकरी आईनेमें देखकर नेपथ्य-रचना कर रही थी। धनुष्याकृति भौंहोंवाली लड़कीका अभी पता नहीं था।"

अहाहा ! कितनी मधुर !! कितनी सुन्दर !!! कितनी उठी हुई। फ्राउने यहाँ वातावरण-निर्मितिकी परिसीमा छू ली है। शोपँके उल्लेखसे नादच्छटा—नीली आँखें, भूरे बाल यह रंगच्छटा और धनुष्याकृति भौंहोंवाली लड़कीके उल्लेखसे उत्कण्ठा, ऐसा त्रिपरिमाणात्मक परिणाम यहाँ साध्य हो गया है। आज तक साहित्यमें भी चित्रकलाकी तरह द्विपरिमाणात्मक चित्रीकरण था, परन्तु त्रिपरिणाम-पद्धतिकी आद्य पुरस्कर्त्री युरॅपमें फ्राउ फॉडर फुशमन्, एशियाके एशिया माइनरकी अत्व् चल् बिचल, अमेरिकाकी लँकी लाँग, आस्ट्रेलियामें डॉनईस्टर, अफ्रीकामें यह परिणाम प्रथम किसने साध्य किया यह अभीतक पता नहीं चला, परन्तु मिस्रमें एक 'ममी' की पीठपर एक ऐसी लघुकथा पायी जाती है। आरम्भ और मध्य देखनेके बाद आप अन्त देखिए। फ्राउकी ही कहानी लें। लघुकथाका अन्त ठुमरी या चित्रके अन्तकी तरह ही होना चाहिए। देखो :

"शाम हुई। दीपक जले। नीली आँखोंकी छोकरी भूरे बालोंवाली छोकरीसे पूछ रही थी—क्यों री ? अपनी इडा कहाँ गयी ?

इतनेमें दरवाज़ेपर आहट हुई (वाह ! कितनी सुन्दर उत्कण्ठा-निर्मिति) नीली आँखोंवाली छोकरीने फ़ारसकी बिल्लीकी तरह कूदकर दरवाज़ेकी साँकल हटाकर दरवाज़ा खोला।

अय्या !—वह एकदम चिल्लायी (मूल जर्मन शब्द 'अॅइय्या' है।)

अय्या !—भूरे बालोंवाली लड़की बोली।

दरवाजेमें इडा और उसके साथमें एक पैंतालीस बरसका छोकरा था। (जर्मनीमें कुल साठ बरस तक मनुष्य छोकरा होता है। साठवें वर्ष जवान, अस्सीके बाद प्रौढ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और नब्बेके बाद बूढ़ा होता है।)

कौन हर्मन् ?—दोनों लड़कियाँ बोलीं।

—हाँ हर्मन् ! हुंग्रिड-मारिया, अब हमारी शादी हो गयी है—इडाने कहा।

—क्या हर्मन्‌के साथ ?

—हाँ—इडा।

—परन्तु गये शनिवारको मैं और हर्मन् राइन नदीपर मच्छी पकड़नेके लिए साथ-साथ गये थे।

—और अगले शनिवारको मेरे साथ बर्लिनका पशु-संग्रहालय देखनेके लिए साथमें आनेवाले थे न हर्मन् ?—भूरे बाल।

—इसीलिए इस शनिवारको हमने शादी तै कर ली। गये शनिवारको उसे समय नहीं था। और अगले शनिवारको वह तुम्हारे साथ जायेगा। बदमाश कहींके !—ऐसा कहकर इडाने अपनी गरदनको झटका दिया और धनुष्याकृति भौंहोंको और ऊँचा उठाया, और लाडमें आकर हर्मन्‌की मूँछोंको लगाया हुआ मोम हटा दिया, मूँछकी नोक गिर गयी।''

—देखिए, कैसा अनपेक्षित अन्त इस कहानीका हुआ। फाउने इस अन्तसे एक चिनगारी-सी लगा दी है। इसे साहित्यिक धक्का या 'लिटरेरी पुश' हम कहेंगे। फाउकी कहानीके आरम्भमें ही इतने शोले थे कि उसकी किताब 'फ़ायर-प्रूफ़' काग़ज़पर छापनी पड़ी। बादमें वह सादे काग़ज़पर छप सके।

सारांश, 'कहानी कैसे लिखें ?'—इस प्रश्नका उत्तर है—''जर्मनीकी फाउ फॉडर फुशमन-जैसी ! वह तन्त्रमयता प्राप्त होनेपर कहानी लिखना सहज सम्भव होगा। हमारे मतसे हिन्दुस्थानमें वाल्मीकिके बाद कोई सच्चा लघुकथा-लेखक हुआ ही नहीं। हमने भी कुछ कहानियाँ लिखी हैं। उनमें जर्मन और भारतीय तन्त्र (टेकनीक) एक समयावच्छेदसे प्रयुक्त किया गया है। इसलिए नौसिखुए लेखकोंके लिए हमारे विद्वान् मित्र गोविन्दराव ज्ञानेश्वरकी भाँति हम भी यही कहना चाहते हैं कि हमारी किताब 'पहली, दूसरी और तीसरी !' यह कहानी-संग्रह खरीदकर अपने सामने रखो और लिखो, और यशस्वी कहानी-लेखक बनो। ■ ■

१५ बी. सरोजिनी नायडू रोड,
सान्ताक्रूज़) वेस्ट), बम्बई-५४

अपने लेखकोंसे :

ज्ञानोदयके इस वर्षके साधारण अंक तैयार हो चुके हैं तथा नवम्बर-दिसम्बरके अंक प्रति वर्षानुसार विशेषांक होंगे अतः साधारण अंकोंके लिए प्राप्त स्वीकृत रचनाएँ जनवरी १९६८ से पूर्व प्रकाशित नहीं की जा सकेंगी। विशेषांक सम्बन्धी कार्यालयीय व्यस्तताके कारण हम अन्य रचनाओंके निर्णयकी सूचना दिसम्बरसे पूर्व नहीं दे पायेंगे।—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डैडी, आप क्या लिख रहे हैं?

चैक है, बेटा।

चैक क्या होता है?

यह बैंक के नाम आदेश है कि अमुख व्यक्ति को रुपया दे दो। मुझे कुछ किताबें खरीदनी हैं। दुकानदार को रुपये की बजाय चैक ही भेज दूंगा। वह इसे अपनी बैंक में जमा करा देगा। उसकी बैंक इसे हमारी बैंक से भुना लेगी। चैक रुपये का काम करेगा। और यह तरीका सुरक्षित भी है। चैक का रुपया केवल उस दुकानदार को ही मिलेगा। चैक खो भी जाय, फिर भी हमारा रुपया सुरक्षित है। है न, आश्चर्य की बात।

ठीक है, डैडी। आपका खाता तो पंजाब नेशनल बैंक में ही है न।

हाँ, बेटा। वही मेरा बैंक है। यह देश के सबसे पुराने और सबसे बड़े बैंकों में से एक है। देश भर में इसकी ४९० से अधिक शाखएं हैं।

पंजाब नेशनल बैंक

PR.PNB-6624-Hin/4

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
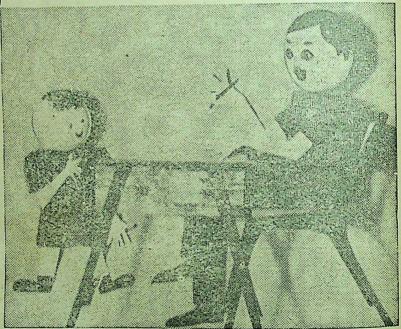
डॉक्टर नगेन्द्र रचित काव्य और चेतनाके बिम्ब

काव्यबिम्ब—भारतकी समृद्ध काव्य-शास्त्रीय परम्पराको आधुनिक सन्दर्भमें प्रभावी बनानेके लिए उपजीव्य ग्रन्थोंके सटीक प्रामाणिक संस्करण प्रस्तुत करनेके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि एक ओर तो अपने प्राचीन सिद्धान्तोंका पुनःपरीक्षण एवं पुनर्व्याख्यान नवीन साहित्य-शास्त्रीय मनोवैज्ञानिक एवं सहयोगी अनुशासनोंकी उपलब्धियोंको दृष्टिगत रखकर किया जाये, दूसरी ओर पश्चिमी काव्य-शास्त्रके आधारभूत तत्त्वोंका विश्लेषण और विवेचन अपनी पारम्परिक मान्यताओंकी कसौटीपर किया जाये, ताकि अपनी मान्यताओंसे उनकी संगति बैठायी जा सके और उनके ग्राह्य अंशको सहजतापूर्वक अपनाया जा सके। सुधी समीक्षक डॉ० नगेन्द्रका सुप्रसिद्ध 'रस सिद्धान्त' ग्रन्थ अपने क्षेत्रमें पहली आवश्यकताको एक बड़ी सीमा तक पूर्ण करनेवाला मानक ग्रन्थ है तो उन्हींकी नवीनतम सैद्धान्तिक समीक्षा-कृति 'काव्य-बिम्ब' दूसरी आवश्यकताकी आंशिक पूर्ति करनेवाली एक छोटी किन्तु महत्त्वपूर्ण पुस्तक है।

पश्चिमी काव्य-समीक्षामें 'बिम्ब-योजना' अत्यन्त आधारभूत कवि-कर्म माना जाता है। हिन्दीमें भी कम-से-कम स्व० आचार्य रामचन्द्र शुक्लके समयसे समीक्षकगण काव्य-चर्चा करते समय बिम्ब-विधानका भी विचार करते रहे हैं किन्तु उसके स्वरूपको, उसकी रचना-प्रक्रियाको, उसके मनोवैज्ञानिक आधारको हिन्दीमें स्पष्ट करनेका तात्त्विक प्रयास सम्भवतः इसी पुस्तकमें पहली बार किया गया है। विषयमें गहरी पैठ, पैनी विश्लेषणात्मक दृष्टि और पाण्डित्यपूर्ण स्पष्ट विवेचन डॉ० नगेन्द्रके लेखनकी आधारभूत विशेषताएँ हैं और वे इस कृतिमें भी प्रचुर मात्रामें उपलब्ध हैं।

आलोच्य पुस्तकमें छह निबन्ध हैं–(१) काव्य-बिम्ब : स्वरूप और प्रकार, (२) मनोविज्ञानमें बिम्बका स्वरूप, (३) भारतीय काव्यशास्त्रमें बिम्ब विषयक संकेत, (४)

'काव्य-बिम्ब' और 'चेतनाके बिम्ब'—लेखक : डॉ० नगेन्द्र; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली–७; मूल्य : क्रमशः ४ और ५ रुपये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिम्ब-रचनाकी प्रक्रिया, (५) काव्य-बिम्ब और काव्य-मूल्य तथा (६) यह उपमान मैले हो गये हैं। इन निबन्धोंमें काव्य-बिम्ब सम्बन्धी पश्चिमी विद्वानोंके मतोंका सार-संश्लेषण प्रस्तुत करते हुए भी भारतीय रस-दृष्टिकी कसौटीपर उन्हें परखकर उनके उन्हीं अंशोंको स्वीकृत किया गया है जिनकी संगति रस-सिद्धान्तसे बैठ सकती है। लीविस-से सहमत होते हुए डॉ० नगेन्द्रने काव्य-बिम्ब की यह परिभाषा मान्य की है: "काव्य-बिम्ब शब्दार्थके माध्यमसे कल्पना-द्वारा निर्मित एक ऐसी मानस-छवि है जिसके मूल-में भावकी प्रेरणा रहती है।" (पृ० ५) ऐसे कवि और विचारक भी हैं जो काव्य-बिम्बके मूलमें भावकी प्रेरणाको अनिवार्य नहीं मानते, केवल कल्पना या बौद्धिक चम-त्कार-द्वारा भी सफल काव्य-बिम्बकी सृष्टिको सम्भव मानते हैं। डॉ० नगेन्द्रकी रस-दृष्टि अपने सम्पूर्ण तर्क-सामर्थ्य-द्वारा इस मतका खण्डन करती है। 'काव्य-बिम्ब और काव्य-मूल्य' तथा 'ये उपमान मैले हो गये हैं' निबन्धोंमें तुलनात्मक दृष्टिसे दोनों मतोंका परीक्षण कर डॉ० नगेन्द्र इस निष्कर्षपर पहुँचते हैं—"काव्य-बिम्बमें जो काव्य-तत्त्व है उसका आधार अनुभूति-भावानुभूति ही है। भावसे असम्पृक्त या अत्यन्त परोक्ष रूप-से सम्पृक्त इन्द्रिय-बोध या कल्पना (क्योंकि भावसे सर्वथा असम्पृक्त इन्द्रिय-बोध या कल्पना हो ही नहीं सकती) बिम्बकी सृष्टि कर सकती है, काव्य-बिम्बकी नहीं।....ऐसी स्थितिमें अनुभूतिसे स्वतन्त्र अथवा अनुभूतिके शोभाधायक तत्त्वके रूपमें (काव्य) बिम्ब की प्रकल्पना असिद्ध है।"—(पृ० ६२)

नये कवियोंके बिम्ब-विधानके प्रति उनकी मुख्य शिकायत यही है कि, "उनमें भावकी प्रेरणा नहीं--बुद्धिका चमत्कार ही अधिक है, अतः उनमें चारुत्व या रमणीयता-का अभाव है और इसलिए वे काव्य-बिम्बोंकी कोटिमें नहीं आते हैं।"—(पृ० ६८) नये कवियोंकी कतिपय कविताओंमें प्रयुक्त भाव-मूलक काव्य-बिम्बोंकी प्रशंसा भी उन्होंने की है। बिम्ब-रचनाकी प्रक्रियामें निर्वैयक्तीकरण को साधारणीकरणका अंग मानना, सर्वथा नवीन उपमानोंकी खोज करनेवालोंको 'प्रच-लित राग सम्पृक्त उपकरणोंकी नवीन भंगिमासे दीपित करने'का परामर्श देना भी उनकी रस-दृष्टिके अनुरूप ही है।

भारतीय काव्यशास्त्रीय परम्पराके प्रति प्रबुद्ध गौरव भाव रखते हुए भी डॉ० नगेन्द्र 'हमारे यहाँ भी हैं'वादी नहीं हैं। उन्होंने स्पष्ट स्वीकार किया है कि "काव्य-कलाके सन्दर्भमें बिम्बका प्रयोग आधुनिक ही है और यह अँगरेजी शब्द 'इमेज'का पर्याय है"—(पृ० ३), किन्तु काव्यके संवेद्य तत्त्वकी मूर्तन-प्रक्रियासे बिम्ब-विधानका घनिष्ठ सम्बन्ध होनेके कारण यह कैसे सम्भव था कि भारतीय विचारक उसके तत्त्वोंका विचार ही नहीं करते। डॉ० नगेन्द्रने 'काव्य-बिम्ब : स्वरूप और प्रकार' तथा 'भारतीय काव्यशास्त्रमें बिम्बविषयक संकेत' शीर्षक लेखोंमें बिम्बका स्वरूप-विवेचन करते हुए भारतीय काव्यशास्त्रके अप्रस्तुत विधान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षणा, व्यंजना, वक्रोक्ति आदिके साथ बिम्ब-विधानका ताल-मेल बैठाते हुए प्रतिपादन किया है कि "बिम्ब विषयक धारणाओंका भी विवेचन यहाँ अनेक प्रसंगोंमें प्रकारान्तर-से किया ही गया है।"—(पृ० ४०)

विद्वान् लेखकने अपनी स्थापनाओंको बोधगम्य और ग्राह्य बनानेके लिए पुस्तकमें हिन्दीकी नयी पुरानी कविताओंके प्रचुर उदाहरण दिये हैं। हमारा विश्वास है कि इस व्यावहारिक विवेचनासे सैद्धान्तिक स्थापनाओंका बौद्धिक बिम्ब अधिकतर स्पष्ट हुआ है। अच्छा होता यदि तुलनाके लिए बिम्ब-विधानमें समृद्ध अँगरेज़ी कविताएँ भी यथास्थान उद्धृत और विवेचित की जातीं।

हम डॉ० नगेन्द्रकी इस तेजस्वितापूर्ण पुस्तकका स्वागत करते हैं और आशा प्रकट करते हैं कि भारतीय दृष्टिमें पश्चिमी काव्य-शास्त्रके अन्य तत्त्वोंके विवेचनमें भी वे तथा अन्य भारतीय विद्वान् प्रवृत्त होंगे।

तर्क-पटु विश्लेषक-आलोचककी भावप्रधान रचनाओंका रसास्वादन करनेकी उमंग लेकर मैंने 'चेतनाके बिम्ब'का अध्ययन आरम्भ किया था। किन्तु उसे समाप्त करनेपर मुझे लगा कि नहीं, आलोचक-द्वारा लिखित संस्मरणोंमें कवि-कथाकारों-द्वारा लिखित संस्मरणोंके गुणोंकी अपेक्षा करना उचित नहीं है, इनका महत्त्व व्यक्तित्व-विश्लेषणकी सफलताकी दृष्टिसे आँकना चाहिए, रस-सृष्टि-की दृष्टिसे नहीं।

पुस्तकके निवेदनके आरम्भमें डॉ० नगेन्द्रने लिखा है: "चेतनाके बिम्ब दस स्मृति-चित्रोंका संकलन है। यदि रेखाचित्र और संस्मरणमें स्पष्ट भेद मानें तो यह कहा जा सकता है कि इनमें दोनोंके शिल्पका सामंजस्य है।" मुझे लगता है कि पुस्तकमें संकलित चार रचनाएँ—राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, मेरा व्यवसाय और साहित्य-सृजन तथा आत्मविश्लेषण सम्भवतः रेखाचित्र और संस्मरणके अन्तर्भुक्त नहीं की जा सकतीं। मेरी धारणाके अनुसार पहली दो रचनाओंमें आलोच्य महापुरुषोंके गुण, स्वभाव, चरित्रका, एक शब्दमें कहें तो व्यक्तित्वका, विश्लेषण किया गया है, जिसके समर्थनमें एकाध व्यक्तिगत अनुभव भी दे दिये गये हैं। इतनेसे ही क्या किसी रचनाको रेखाचित्र या संस्मरण कहा जा सकता है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तमें दद्दाके रागतत्त्वका विश्लेषण करते समय भावार्द्र हो उठनेपर, विश्लेषणकी भिन्न भूमिकापर जानेके कारण क्षमा-प्रार्थीके स्वरमें स्वयं डॉ० नगेन्द्रने लिखा है: "क्षमा कीजिए, मैं संस्मरण नहीं लिख रहा हूँ, वरन् विश्लेषण कर रहा हूँ"—(पृ० २२)। अन्तिम दो रचनाओंके शीर्षक या विषय ही घोषित करते हैं कि वे संस्मरण या रेखाचित्र नहीं हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे कुछ और भी शिकायत है। डॉ० नगेन्द्र चित्रकार नहीं हो पाये हैं। इन रचनाओंमें वर्णित व्यक्तियोंके (और उनमें 'नवीन' और 'पन्त' जी-जैसे आकर्षक शरीर-सम्पदा-सम्पन्न व्यक्ति भी हैं) भरे-पूरे शब्द-चित्र कहीं नहीं मिलते। कहीं-कहीं कुछ रेखाएँ अवश्य अंकित हैं परन्तु उनसे स्वरूप उभरता नहीं है। इसी तरह कथाकार न होनेके कारण वर्णित घटनाओंको वे सजीव नहीं कर पाये हैं। केवल 'रेडियोमें पन्तजी-का आगमन' 'श्रीमती महादेवी वर्मा'-जैसी कृतियोंमें कुछ घटनाओंका सरस एवं मनो-ग्राही चित्र बन पड़ा है। अन्य रचनाओंमें घटनाएँ सूच्य ही रह गयी हैं, दृश्य नहीं बन पायी हैं। मुझे यह भी लगता है कि जिस प्रकार डॉ० नगेन्द्र अपने राग-द्वेष और हर्ष-विषादकी सार्वजनिक अभिव्यक्ति अपने मर्यादावादी संस्कारके कारण नहीं कर सकते, क्योंकि उनका विश्वास है कि "सार्व-जनिक रूपसे उनकी अभिव्यक्ति प्रदर्शन बन जाती है, जो किसी भी रूपमें वांछनीय नहीं हो सकती," उसी प्रकार वे अपने अंतरंग व्यक्तिगत सम्बन्धोंका भी सार्वजनिक विस्तृत चित्रण नहीं कर सकते। शायद उन्हें वह विज्ञापन-जैसा लगे, किन्तु इसके अभाव-में तो संस्मरण प्राणवान् नहीं हो सकते।

फिर भी ये रचनाएँ महत्त्वपूर्ण हैं। देश-के कुछ अति विशिष्ट कृती-व्यक्तियोंके प्रति प्रखर मेधासम्पन्न निर्मल दृष्टि आलोचककी श्रद्धांजलिके रूपमें इनका गौरव अक्षुण्ण है। भावनाके अनुशासनमें रहकर भी बुद्धिने इन व्यक्तियोंकी महत्ताका जो प्रतिभा-प्रदीप्त प्रभ-विष्णु विश्लेषण किया है, वह उनके गौरव के आधारभूत कारणोंको स्पष्ट करनेमें पूर्ण समर्थ है। व्यक्तियोंके इस प्रकारके विश्लेष-णात्मक अध्ययन हिन्दीमें अत्यन्त विरल हैं और मेरा विश्वास है कि ये रचनाएँ उस दिशामें बढ़नेके लिए बहुतोंको प्रेरणा देंगी।

मर्यादापूर्ण भावनाका संयत मधुर-करुण प्रकाश कई प्रसंगोंमें हुआ है और वे निश्चय ही मर्मस्पर्शी बन पड़े हैं। दद्दा (गुप्तजी) का महाप्रयाण, दादा (नवीनजी) का अभिनन्दन-समारोह और महायात्रा, कवि सियारामशरण गुप्तकी अन्तिम यात्रा, होमवतीजीकी अर्थी उठनेके पन्द्रह-बीस मिनिट बाद पहुँचनेपर लेखकका परिताप ऐसे ही प्रसंग हैं। संघर्षशील, दृढ़ पौरुषवान् आलोचक-हृदयकी कोमलताका परिचय पाकर महादेवीकी यह पंक्ति सहज ही स्मरण हो आती है—"पुलक हूँ वह जो पला है कठिन प्रस्तर में।"

अध्यापक-आलोचकके गुरु-गम्भीर लेखन-में विनोद चटुलताके लिए विशेष अवकाश नहीं होता। फिर इनमें छह रचनाएँ दिवंगत आत्माओंकी स्मृतिको समर्पित हैं, जो सम्भ-वतः उनके तिरोभावके कुछ ही समय बाद लिखित हैं। अतः उनमें उसकी सम्भावना भी नहीं है। अन्य रचनाओंमें उसका मर्यादित संकेत अवश्य मिलता है। गाड़ी बिगड़ जाने पर 'पन्तजी'के सत् परामर्श, एवम् महादेवी-जी के साथ प्रयागके डाक-विभागकी शत्रुता का कलापूर्ण उल्लेख तो रम्य है ही, आत्म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्लेषणकी पूरी शैलीपर उनकी विनोदी वृत्तिकी मधुर छाप है।

डॉ० नगेन्द्र उद्गारको उद्गीथ रूपमें ही अभिव्यक्त करनेके विश्वासी हैं। गम्भीर विचारात्मक लेखोंके लिए यह वृत्ति अभिनन्दनीय है, किन्तु इसके चलते एक प्रकारकी असहजता उत्पन्न होती है जो व्यक्तिगत निबन्धोंके लिए गुण नहीं मानी जा सकती। बच्चनने एक स्थानपर लिखा है: 'भार बनोगे मनके ऊपर जो न सहज उद्गार बनोगे!' व्यक्तिगत निबन्धोंमें भी उद्गीथ रूप अभिव्यक्ति-लेखकके लिए नहीं, तो पाठकोंके लिए अवश्य कुछ-न-कुछ भारस्वरूप बन जाती है। मैं कितना चाहता हूँ कि डॉ० साहब अपने भावी संस्मरणोंमें ऐसी भाषाका अधिकतर प्रयोग करें—''महादेवीजी आज मेरे वक्तव्यको पढ़कर हँसकर कहेंगी कि अब आये रास्तेपर बच्चू!'' इसमें यदि 'बच्चू' का उद्गीथीकरण कर लिया जाता तो मेरी आत्माको सचमुच कष्ट पहुंचता।

डॉ० नगेन्द्रके महत्त्वपूर्ण लेखनके नवीन दिशासूचक इस गौरवास्पद कृतिको उचित सम्मान प्राप्त होगा, इस सम्बन्धमें मैं आश्वस्त हूँ। ■ ■

—*विष्णुकान्त शास्त्री*

अपने ग्राहकोंसे :

'शेष शताब्दी विशेषांक' की घोषणा आपने पढ़ी ही होगी। यदि विशेषांकसे पहले आपका वार्षिक शुल्क समाप्त हो गया है तो कृपया हमारे सन्दर्भित पत्रोंके उत्तर देंगे। नये ग्राहक १५ रुपये वार्षिक शुल्क भेजकर विशेष उपहार भी प्राप्त कर सकते हैं।—व्यवस्थापक

ज्ञानोदय ६, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक थी मिस जूलिया क्राम्बी और उसकी लम्बी कहानी—आप कृश्नचन्दर लिखित उपन्यासके पहले भाग 'पहला पत्थर'में पढ़ रहे थे। कँवलप्रसाद सक्सेनासे आप परिचित हैं और यह भी आपको मालूम है कि सोती हुई जूलीको छोड़कर वह चला गया था अब 'एक पत्थर, दो पत्थर, तीन पत्थर' का दूसरा भाग 'दूसरा पत्थर' प्रस्तुत है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा पत्थर

एक पत्थर, दो पत्थर तीन पत्थर

कृश्नचन्दर

पन्द्रह वर्षकी उम्र होगी उसकी—मुश्किलसे पन्द्रह वर्ष, लड़का-सा तो लगता है—कोमल मुखड़ेपर पीली रंगत, बड़ी-बड़ी आँखोंमें एक भूखी चमक, अभी दाढ़ी नहीं आयी थी, लम्बी गरदनपर जगह-जगह मैलकी तहें जमी हैं—कहीं-कहीं पर इन मैली तहोंके आस-पास उसके बदनकी असली सफ़ेदी झलक जाती है। वह डाण्डीके आगे जुता है, इतनी कमउम्रके लड़कोंको डाण्डीके आगे नहीं जोतना चाहिए…। उसकी साँस धौंकनी-की तरह चल रही है, छाती हाँफने लगती है। कन्धेके निकट डाण्डीके लकड़ीके डण्डेकी लगातार रगड़से उसका भूरा ऊनी कोट फट गया है और कोटके अन्दर क़मीज़ वह भाग भी फट गया है जहाँपर डाण्डीक बोझ पड़ता है और क़मीज़के नीचे बदन वह खाल भी सुर्ख़ होती जा रही है ज डण्डा जिस्मसे रगड़ खाता है। मैं डाण्डी बैठा यह सब देख रहा हूँ। मेरी दायीं ब पत्थरोंकी एक लम्बी दीवार है जो रॉ ब्रोक लॉजकी लम्बी ड्राईव तक चली ग है। बाँयीं ओर ढलवानोंपर-से देवदा वृक्ष उतरते नज़र आते हैं। चार आदमियों मेरी डाण्डीको उठा रखा है। बायीं ओर दीवार ऊँची होती जा रही है। छाति धौंकनी बढ़ती जा रही है—मुझे अन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कहीं यह मज़बूत [illegible] जुते हुए लड़केके कन्धेकी हड्डीको तोड़ न दे। मैं डाण्डीको रुकवा देता हूँ ग़ज़बनाक होकर डाण्डीवालोंपर बरस पड़ता हूँ—"शर्म नहीं आती दस पन्द्रह बरसके बच्चोंको डाण्डीमें बैलकी तरह जोतते हुए! तुम लोग आदमी हो या हैवान!"

वे लोग कोई जवाब नहीं देते—शर्मिन्दा भी नहीं होते। मेरी ओर ऐसे देख रहे हैं जैसे किसी पागलको देख रहे हों—फिर एक अधेड़ उम्रका मज़बूत गठीला आदमी, जो इन चारों क़ुलियोंका सरदार है, अपने माथेसे पसीना पोंछकर उस लड़केसे कहता है, "ए गंगाराम, तू पीछे चला जा।"

मैं पूछता हूँ—"क्या पीछेके डण्डेसे इसका कन्धा रगड़ नहीं खायेगा?"

"खायेगा तो····" वह अधेड़ उम्रका मज़बूत आदमी बड़े मज़बूत लहजेमें बोला, "मगर आप देख नहीं सकेंगे—और न देखनेसे साहब लोगको तकलीफ़ नहीं होगी। चल बे, गंगाराम, पीछे··"

मैं कुछ झेंप-सा गया— बात तो ठीक कही थी। उसकी ग़रीबी देखनेसे ही तो मन मैला होता है, जी बुरा होता है, इस क़ुलीने बड़े साधारण तरीक़ेसे यह बात कही थी। उसके लहजेमें कोई व्यंग्य नहीं था—मगर मुझे तो वह व्यंग ही लगा··· मेरा चेहरा शर्मसे लाल हो गया जैसे किसीने मुझे गाली दी हो····

"ठहरो,···नहीं! मैं इस डाण्डीमें नहीं बैठूँगा जिसमें पन्द्रह सालका एक लड़का आगे जुता हो!"

गंगाराम अपनी पतली आवाज़में बोला, "नहीं साहब, मेरी उम्र अठारह वर्षकी है—ज़रा शरीर दुबला है इसलिए आपको मेरी उम्र कम लगती है····"

"तुम्हारा कन्धा छिल चुका है, आगे तक डाण्डी उठाओगे तो ख़ून बहने लगेगा। तुम जाओ, पीछे आनेवाली खाली डाण्डीमें लग जाओ!"

गंगारामकी आँखोंमें आँसू आ गये, हाथ जोड़कर बोला, "मुझपर रहम न करें साब, आपका रहम बहुत महँगा पड़ेगा मुझे साब! मैं खाली डाण्डीमें लगूँगा तो खाली वापसीकी मजूरी मिलेगी···ऊपर जानेवाली डाण्डीमें, जिसमें आप बैठे हैं, उसीमें लगे रहने दो, इससे मुझे ऊपर जानेपर नीचे आनेकी मजूरी भी मिलेगी।"

उसके छोटे-से चेहरेपर इतनी बड़ी डबडबायी आँख क्या कह रही है? क्यों मेरी ओर इस इल्तजासे देख रही हैं····मैंने जेबसे एक रूमाल निकालकर उसकी ओर बढ़ा दिया—"इसे अपने कन्धेपर रख लो।"

कँवल रूमाल देकर डाण्डीसे पीठ लगाकर इतमीनानसे बैठ गया। उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं—असलमें देखना ही गुनाह है और इस संसारमें जितनी मुसीबतें हैं सब देखने ही से आती हैं। दायीं ओर पत्थरोंकी दीवार है—बायीं ओर खतरनाक ढलान है—सामने गंगारामका ज़ख़्मी कन्धा है—पीछे अगर वह देख सकता तो उसे दूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह, आईनेके सामने

सबसे बड़ा पाप है···!

दायीं ओरको जाती हुई नीले पत्थरोंकी ऊँची दीवार सहसा पीछेको घूम गयी और सामने रायॅल ओक लॉजका शानदार ड्राईव नज़र आया। फाटकके दोनों लोहेके दरवाज़े लॉजके अन्दरको घूमे हुए थे और फाटककी दोनों ओर संगमरमरकी नंगी औरतोंके स्तम्भोंपर बिजलीके दूधिया हण्डे रौशन थे। रॉयल ओकके पीछेका पहाड़ धुन्धमें डूब गया था। ड्राईवके सलहटी पत्थरों और कंकरोंपर हलकी-हलकी बरसात हो रही थी और संगमरमरके एक छोटे-से तालाबमें बहुत-से कमल खिले हुए थे··· डाण्डीवाले गीली सलहटी बजरीपर अपने भारी क़दम घसीटते हुए डाण्डीको लॉजके बड़े बरामदेके सामने ले गये, जहाँ बेगम जावेद बेंतकी एक आरामकुरसीपर अधलेटी कोई किताब पढ़ रही थीं···· सामने मेज़पर चाय पड़ी थी--मेज़के बहुत दूर पीछे लॉजके बन्द दरवाज़ोंके अन्दर गहरे कासनी रंगके परदोंके पीछे रौशनियोंके

तक हज़ारों सालों तक फैली हुई ग़रीबी और मुसीबत नज़र आती—जिससे बचनेका एक ही तरीक़ा है। कभी-कभी एक सफ़ेद रूमाल दे दो--फिर डाण्डीमें बैठकर इतमीनानसे आँखें बन्द करके चलो--क्योंकि देखना ही

धब्बे-से नज़र आ रहे थे···· बरामदेमें बेगम जावेदके सिवा और कोई न था···· उन्होंने निगाह उठाकर भी नहीं देखा।

कँवलने डाण्डीसे उतरकर दोनों डाण्डी लानेवालोंको पूर्वी बरामदेमें ठहरनेका आदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया। जब डाण्डीबरदार दोनों डाण्डी उठाये सामनेसे हट गये तो बेगम जावेदने किताबपर-से नज़र उठायी। उस वक़्त कँवलने झुककर कहा, "आदाब अर्ज़!"

"आदाब!" बेगम जावेद बड़ी नज़ाकत और नफ़ासतसे उठकर अपना ताऊसी गरारा सँभालते हुए और अपना रेशमी दुपट्टा सर-पर रखते हुए आदाबका जवाब देकर मुस्करायीं। गोरी रंगत, भारी मुग़लई चेहरा, जैसा मुग़ल-शहज़ादियों की पुरानी तसवीरोंमें अक्सर मिलता है, शरीरमें हलका मोटापन मगर पूरे जिस्ममें अभीतक पिघले हुए बिल्लूरकी-सी चमक थी और जब वह अपनी ग़लाफ़ी आँखें उठाकर सीधी-गहरी निगाहसे किसीको ताकतीं तो दिल हिल जाता था। अपनी जगह कुछ लमहेके लिए सोचना पड़ता था कि आदमी इनसे मोहब्बत करे या इनकी लड़कीसे...।

जब बेगम जावेद दोबारा कुरसीपर बैठने लगीं तो दुपट्टा सीने तकसे फिसल गया। दायाँ हाथ मेज़की ओर चायके बरतनोंकी तरफ़ बढ़ा। गोरी कलाईमें फँसी चूड़ियाँ खनकीं। वह बहुत सुरीले स्वरसें बोलीं, "चाय पियोगे?"

"शाईस्ता कहाँ है?"

बेगम जावेदकी भवें तन गयीं; काली-काली सवालिया मेहराबें।

"तुम इस वक़्त उससे नहीं मिल सकते," वह बोलीं।

"क्यों?—उसने तो आज मेरे साथ सेलिंगका वायदा किया था——मैं तो नीचेसे दूसरी डाण्डी भी लाया हूँ...." मेरा दिल ज़ोर-ज़ोरसे धड़कने लगा।

"शायद शाईस्ता भूल गयी होगी," बेगम जावेद घण्टियोंके-से स्वरमें हँसते हुए बोलीं। बेगम जावेदको अपनी आवाज़पर पूरा क़ाबू था—एक-एक शब्द जलतरंगकी तरह बजता था—"इस उम्रमें लड़कियाँ अक्सर भूल जाती हैं..." उन्होंने बातको आगे बढ़ाया और ख़ुद भी थोड़ा-सा कँवलकी ओर झुक गयीं। इत्रकी लपटें आ रही थीं।

"कौन-सा इत्र है?" मैंने पूछा।

"इत्र नहीं, उबटनकी ख़ुशबू है—पुराने मुग़लई उबटनोंमें-से एक है जो हमारे ख़ानदानोंमें बहुत दिनोंसे चला आता है। इसकी तरकीब हम किसी दूसरेको नहीं बता सकते क्योंकि इस उबटनमें हमारे ख़ानदान-की ख़ुशबू है और बतायें भी क्यों, अब तो यह ख़ुशबू ही अपने पास रह गयी है, बाक़ी सब कुछ जा चुका...." आवाज़में उदासीका हलका-सा शाइबा उतर आया।

"तो तुम मेरे साथ चाय नहीं पिओगे?" उन्होंने दोबारा पूछा।

"नहीं!" मैंने साफ़-साफ़ कहा, जैसे बात चायकी नहीं हो रही थी, किसी और चीज़की हो रही थी जिसे मैं किसी प्रकार मंज़ूर नहीं कर सकता था।

पहले तो बेगम जावेदने अपना होठ दाँतों तले हलका-सा दबाया फिर सँभल गयीं। साफ़ स्वरमें बोलीं, "तुम्हारी यही साफ़-गोई तो मुझे पसन्द है।"

'शाईस्ता कहाँ है?" फिर पूछा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कह दिया ना तुमसे, नहीं मिल सकती इस वक़्त।"

"और अगर मैं ठण्डी चाय आपके साथ पी लूँ?"

"तो भी नहीं मिल सकती," वह ज़ोरसे हँसीं और उसके हाथ-पाँव, आँख, अब्रू और होठोंने कई सैय्याल तसवीरें कँवलके सामने बना डालीं। वाक़ई कभी-कभी फ़ैसला करना मुश्किल हो जाता है कि दोनोंमें कौन बेहतर है—माँ या बेटी?"

"क्यों, क्या शाईस्ता घरमें नहीं है? या आपने मना कर दिया है?" कँवलने पूछा।

"शाईस्ता घरमें है और मैंने मना भी नहीं किया।"

कँवल हैरान होकर बेगम जावेदकी ओर देखने लगा।

बेगम जावेद बोलीं, "वह बीमार भी नहीं है, तुमसे ख़फ़ा भी नहीं है...."

"फिर क्या बात है?"

"तुम स्वयं टेलीफ़ोन करके क्यों नहीं पूछ लेते?"

बेगम जावेदके कश्मीरी-जैसे गालोंपर एक शरीर चमक आ गयी....तीन बच्चोंकी माँ होनेके बाद भी यह औरत इतनी हसीन और जवान कैसे दिखाई दे सकती है! उम्र पैंतालीस सालसे किसी तरह कम नहीं होगी। बड़ा लड़का शाहिद पचीस बरसका है। छोटा लड़का इरफ़ान बाईसका है। शाईस्ता बीस सालकी ज़रूर होगी। इसीसे बेगम जावेदकी उम्रका पता चल जाता है, मगर सिर्फ़ इसी बातसे, वरना देखनेसे तो जो कुछ पता चलता है वह जवानीकी काफ़िर अदा मालूम होती है!

बेगम जावेदने मेज़पर रखा हुआ फ़ोन कँवलकी ओर बढ़ा दिया। कँवलने टेलीफ़ोनकी ओर हाथ बढ़ाया—बीचमें दोनोंके हाथ मिल गये। कुछ क्षणोंके लिए बेगम जावेदके कपोलोंपर एक गुलाबी उजाला नाच-सा गया, फिर कँवल शाईस्ताको उसके स्टुडियोमें फ़ोन करने लगा, जो शाईस्ताने रायॅल ओक कॉटेजकी ज़मीनमें ही एक घाटीके ऊपर बनवाया था।

"रायॅल ओकमें मुलाक़ाती बहुत आते हैं," शाईस्ताने अपनी माँसे कहा था--"मैं काम नहीं कर सकती।"

"हेलो शाईस्ता! क्या कर रही हो?"

"बहुत व्यस्त हूँ," उधरसे आवाज़ आयी। जवान चंचल सुर, शोख़ चमकता हुआ लहजा।

"क्या व्यस्तता है?"

"एक न्यूड शुरू की है।"

"न्यूड?" कँवल हैरतसे बोला, "नैनीतालमें तुम्हें न्यूडके लिए मॉडल कहाँसे मिल गयी?"

"मिल गयी क्या....सामने बैठी है।"

"कौन है?"

"एक बहुत ख़ूबसूरत लड़की है।"

"मगर कौन?"

"तुम बूझो तो...."

"क्या मैं उसे जानता हूँ?"

"रोज़ चाट क्लबमें तुम्हारी उससे मुलाक़ात होती है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिसीवरसे नज़रें हटाकर कँवल बेगम जावेदकी ओर देखने लगा--बेगम जावेद बड़े मज़ेमें मुसकरा रहा थीं और अपने नाख़ूनका पॉलिश देखनेमें लीन थीं।

"क्या सावित्री ?"

"अच्छा····" उधर शाईस्ता ज़ोरसे हँसी, "सावित्रीको तुम ख़ूबसूरत समझते हो? चलो, तुम्हारी पसन्दका पता चल गया।"

"अनाबेला ?"

"वह ताड़की तरह लम्बी और खुरदुरी औरत है। कँवल, तुम्हारी अक़्लको क्या हुआ है ?" शाईस्ता ज़रा नाराज़ होकर बोली।

"चलो मैं हारा, तुम जीतीं····" कँवलने हथियार डालते हुए कहा, "अब बताओ, वह कौन है ?"

"तुम हिन्दुओंमें यही बात बुरी है--बहुत जल्द हथियार डाल देते हो····" शाईस्ता कंवलको जलाते हुए बोली, "एक बार फिर कोशिश करो।"

"तुम ग़लत समझती हो शाईस्ता, हिन्दू कभी हथियार नहीं डालता, हथियार डालनेका पोज़ रहता है। दुनियाने हिन्दूको हमेशा ग़लत समझा है। तुमने स्पंजको कभी मुट्ठीमें लेकर देखा है ? दबानेसे दब जाता है, दबता चला जाता है, जबतक मुट्ठी बन्द रखो बन्द रहता है,--सिकुड़ा और सिमटा हुआ, लेकिन मुट्ठी खोलते ही सही-सलामत बाहर निकल आता है····आं!"

"लेकिन मुट्ठी खोली ही क्यों जाये ?"

"मुट्ठीको कभी तो खोलना ही पड़ेगा···· क्या वह जमीला है ?"

"उसका चेहरा···· उसकी बत्तीसी देखी है ? तुम्हारा स्तर बहुत घटिया हो गया है कँवल!"

"न्यूडमें चेहरेका क्या महत्त्व है ? गरदनसे नीचे अलबत्ता जो है वह न्यूड है।"

"जी नहीं," शाईस्ता चमककर बोली, "मैं न्यूडमें सिर्फ़ टोरसोकी क़ायल नहीं हूँ— मैं योरोपियन चित्रकारोंसे इस सिलसिलेमें मतभेद रखती हूँ, मेरे विचारमें एक अच्छे न्यूडमें चेहरा भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना चेहरेसे नीचेका जिस्म। शरीरके भीतर रेखाओंकी जो समानता और भिन्नता मिलती है वह चेहरे हीमें जाकर पूर्ण होती है-- योरोपियन चित्रकार जब न्यूड बनाते हैं तो औरतके चेहरेको बिलकुल फ़ालतू बना देते हैं या ग़ायब कर देते हैं— इससे न्यूड एक ऐसे पेड़की तरह नज़र आता है जिसका तनेसे ऊपरका भाग कट गया हो और जड़ें ज़मीनसे उखाड़कर बाहर निकाल ली गयी हों--चेहरेके बिना न्यूडमें व्यक्तित्व कैसे आ सकता है ? चेहरेमें भी वह बात हो कि मालूम हो कि जिस्ममें चिह्न हैं,--जो रेखाएँ हैं उनके धारे गोया इसी चेहरेसे फूटे हैं···"

"क्या मैं इस न्यूडको देख सकता हूँ ?" कँवलने शाईस्तासे पूछा।

"तुम्हारा मतलब मॉड्लसे है या मेरी पेण्टिंग से ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दोनोंसे ।'

"तो सामने आकर देख लो····। मगर दस मिनिट बाद आना !" इतना कहकर शाईस्ताने फ़ोन रख दिया। कँवलने टेलीफ़ोनका रिसीवर वापस रखकर बेगम जावेदसे कहा, "दस मिनिट बाद बुलाया है, इतनेमें चाय ही पी लें····।"

"मैंने पहले ही मशविरा दिया था।" बेगम जावेद कुछ उदास होकर बोलीं, गोया कह रही हों—अब जो चाय पी रहे हो सिर्फ़ वक़्त-गुज़ारीके लिए पी रहे हो, मेरी वजहसे नहीं पी रहे—मेरे कहनेसे नहीं पी रहे हो, मेरे साथ नहीं पी रहे हो, केवल घड़ीकी सूइयाँ घुमानेके लिए, दिलकी बेचैनी छुपानेके लिए, उसपर एक ग़िलाफ़ चढ़ानेके लिए, जैसे चायके पॉटपर टीकोज़ी चढ़ा ली जाती है····

कँवल खामोश रहा, मगर खामोशीमें भी जो टेलीपेथी होती है, खामोशीकी भी जो एक ज़ुबान होती है, उसके अन्दर खयालातका जो बहाव होता है वह धीरे-धीरे बेगम जावेदकी ओर सरकता हुआ कह रहा था, "आप बिलकुल ठीक कहती हैं बेगम जावेद, आपका नाराज़ होना भी जाइज़ है इसलिए कि आप अभी तक खतरनाक हद तक हसीन हैं ! मुमकिन है, एक खास टेस्टके लोगोंके लिए आप शाईस्तासे ज़्यादा हसीन हों—मैंने क्लबके अकसर लोगोंको आपके बाद शाईस्ताके बारेमें गुफ़्तगू करते सुना है—दोनोंका मुक़ाबला करते भी सुना है। प्रायः लोग आप ही को ज़्यादा नम्बर देते हैं। शायद वे लोग मुझसे अधिक प्रौढ़ हों, अधिक अनुभवी, अधिक समझदार, मगर मेरे स्वभावका अपना एक तर्क है····मुझे पुराने पेड़ बहुत पसन्द हैं, घने और छायादार और पुरविकार····और नन्हें-नन्हें पौधे ज़मीनसे नये-नये निकले हुए, हर मखमली पत्ती साथ हवामें झूलते हुए····मगर जिस पेड़पर पहली बार फल आनेवाले होते हैं उसकी बहारका नशा ही दूसरा है, इसे नशा क्यों कहें—नशेका आरम्भ कहें कि रसकी पहली फुहार ! ज़िन्दगी जब उसे जाती है तो नवीन जिज्ञासाकी एक अपरिचित मंज़िल उसमें शामिल हो जाती है। मगर तुम तो घने एहसासकी सुनहरी सहचरी हो, न तुम्हारे लिए कोई अजनबी न तुम किसीके लिए अजनबी··· मैं न सूर्योदयको बुरा कहता हूँ, न रंगीन सहपहर की मीठी मद्धिम नरम तपिशको····बस बता रहा हूँ, पता नहीं, समझती हो नहीं····"

"खूब समझती हूँ," बेगम जावेदके होठ व्यंगात्मक मुसकानमें डूबे हुए चुपचाप कह रहे थे—"मगर तुम अभी बच्चा हो, ज़िन्दगी क्या देखी है तुमने—? खासे ही हो····खूबसूरतीकी लीनियर डायमेंशन मरते हो, उसकी गहराई नज़रमें नहीं और जब वह नज़रमें आ जायेगी उस बहुत देर हो चुकी होगी !"

चायका प्याला लबालब भर गया बेगम जावेदके गाल नीले प्याले लबालब सतहकी तरह डोल रहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथोंमें हरी चूड़ियाँ खनककर ख़ामोशीको कँपकँपा रही थीं। प्याला लेते हुए फिर उनकी उँगलियाँ मिलीं। उन काफ़ूरी उँगलियोंकी पोर-पोरमें बिजली-की लहर दौड़ रही थी--किसी तरहसे यह समय बीत जाये, न बीता तो बड़ा सख़्त धमाका होगा--चाय पीते-पीते उसे लगा जैसे वह पिघला हुआ डाईनामेट पी रहा है…। बेगम जावेदकी कुरसी ज़रा क़रीब खिसकी…। सहसा टेलीफ़ोनकी घण्टी बजी। बेगम जावेदने रिसीवर उठा लिया, कँवलने इतमीनानकी साँस ली। जल्दीसे जल्दी चाय ख़त्म करके उसे भाग जाना चाहिए। वक़्त भी हो रहा है…। टेलीफ़ोन भी आ रहा है। पॉट-क्लबका बेहूदा, बोर और महा बकवासी राजकुमार नगरम् टेलीफ़ोनपर बेगम जावेद-की शानमें अपनी विशेष लच्छेदार अन्दाज़में उनकी सुन्दरताका क़सीदा पढ़ रहा है। वह उसे पसन्द नहीं करतीं--मगर क़सीदेके दूधको लपालप पी रही हैं…एक भूखी बिल्लीकी तरह…आओ, भाग जायें, यही वक़्त है…जल्दीसे आख़िरी घूँट लेकर कँवल उठ खड़ा हुआ। वह अभीतक टेलीफ़ोन सुन रही थीं। कँवलने उन्हें इशारोंमें बताया कि वह ऊपर स्टूडियोमें शाईस्तासे मिलने जा रहा है। बेगम जावेदने आहिस्तासे सिर हिला दिया। कँवल बरामदेसे बाहर निकल गया। घूमकर घाटीके ऊपर चढ़ने लगा, चढ़कर स्टूडियोके दरवाज़ेपर पहुँचा। उसने आहिस्तासे दरवाज़ेको अन्दर ढकेला। दरवाज़ा ज़रासे दबावसे खुल गया। कँवल अन्दर चला गया। एक छोटा-सा लाऊँज था। हर चीज़ बे-तरतीब। हैंगरपर एक रेन-कोट टँगा था, शाईस्ताका रेन-कोट…और नीले रंगका एक स्कार्फ़…दीवारोंका रंग गहरा पीला और एक कोनेमें लकड़ीके कॉरनर-टेबुलपर हरे रंगका काठका उल्लू रखा था--। यह भी शाईस्ताने बनाया था…उसे वुड-वर्कसे भी रुचि थी--काठके उल्लूकी चोंचमें रंग भरनेका एक ब्रश था--शाईस्ताने इसे यूँ बताया था—यह काठका उल्लू प्रतीक है पुरानी चित्रकलाका…

"तो आधुनिक चित्रकलाका प्रतीक क्या होगा?"

शाईस्ता अपने मुँहमें ब्रुश लेकर कँवल-की ओर खड़ी होकर उसकी तरफ़ सवालिया नज़रोंसे देखने लगी। कँवलने ताली बजाकर कहा, "मैं आधुनिक चित्रकलाके पक्षमें हूँ," इतना कहकर वह रुका, "मगर एक शर्त है…"

"क्या?"

"तुम अपने होठोंमें लकड़ीके ब्रुशकी बजाय मेरे होठ ले लो…"

उसी वक्त शाईस्ताने रंगोंका प्याला उसकी तरफ़ खींच मारा—कँवलकी क़मीज़ आधुनिक आर्टका एक अछूता नमूना बन गयी थी…। कँवल कभी-कभी शाईस्ताको धमकी दिया करता था कि एक रोज़ मैं तुम्हारे आर्टकी सोलो एक्ज़ीबिशनमें इस क़मीज़को भी टाँगनेवाला हूँ।

लाऊँजसे गुज़रकर कँवल सीधा अन्दर बड़े स्टूडियोमें चला गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाईस्ता अपने भूरे बाल, जिनमें सोनेकी एक हलकी-सी झलक आती थी····अपने कन्धोंपर छिटकाये एक ऊँचे स्टूलपर बैठी थी, उसके दायीं ओर एक क़देआदम आईना था—बायीं जानिब इज़ल थे, कमरेमें कोई और नहीं था।

"वह खूबसूरत मॉडल कहाँ है तुम्हारी ?" कँवलने छूटते ही पूछा।

"आईनेमें देखो !" शाईस्ताने संजीदगी-से कहा। कँवलने कन्धे उचकाये। फिर एक-दम ढीले छोड़ दिये। निराशासे बोला, "मुझे मालूम होना चाहिए था कि एक खूबसूरत लड़की अपने सिवाय दुनियाकी किसी भी लड़कीको अपनेसे अधिक खूबसूरत नहीं समझती····तो गोया तुम खुद ही अपनी मॉडल हो···खुद ही अपनी तसवीर···आईने में जो देखती हो उसे ईज़लपर खींचती हो····देखें तो तुम्हारा न्यूड।"

कँवलने ईज़लपर पड़े हुए कपड़ेको हटाना चाहा मगर शाईस्ताने उसे हाथके इशारेसे रोक दिया।····

(क्रमशः)

गुरु निवास, १५ वाँ रास्ता
खार, बम्बई–

परिवर्तित ग्राहक-शुल्क :

एक प्रति	···	१–५०
वार्षिक विशेषांक	···	३–००
वार्षिक शुल्क	···	१५–००
अर्द्धवार्षिक	···	८–००
तीन वर्ष का	···	४०–००
सात वर्ष का	···	९५–००
पन्द्रह वर्ष का	···	२००–००
आजीवन	···	२५१–००

—व्यवस्थापक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवालेखन : ८ -सिन्धी

[भारतीय संविधानमें अब सिन्धी भाषाको भी स्थान मिल गया है लेकिन इससे पहले भी सिन्धीकी कई रचनाएँ हिन्दीमें आ चुकी हैं। इस भाषाको यह लाभ है कि इसके अधिकांश युवा-रचनाकार हिन्दी जानते हैं। यही कारण है कि वे हिन्दी साहित्यकी गतिविधियोंसे दूर या अपरिचित नहीं हैं। 'नयी कविता' और 'नयी कहानी' की धारापर सिन्धीमें वैसी ही चर्चाएँ हुई हैं जैसी हिन्दीमें, लेकिन सिन्धी अभी चूँकि अल्पसंख्यक हैं और उनके सामने प्रकाशनकी सीमा भी है वे अपने साहित्यमें बहुत-कुछ नहीं कर पाये। हम हरीश वास्वाणी और ईश्वरचन्दरकी कविताएँ तथा विष्णु भाटियाकी कहानी दे रहे हैं।

ईश्वरचन्दर कथाकार भी हैं और वास्वाणी आलोचक भी। अनुवाद तथा प्रस्तुतीकरण विष्णु भाटियाका है।—सं०]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
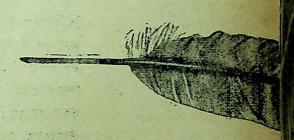
कविताएँ

• बीसवीं शताब्दीका एक घोषणा-पत्र

योजनाओं के इस युग में
गुनाहों को खत्म करने के लिए
क़ैदखाने सुधारे और बढ़ाये जायेंगे
इनसानों को मुक्त रखा जायेगा
केवल अहसासों और ईमान गिरफ़्तार
किये जायेंगे

पाबन्द और आज्ञाकारी
इमान और अहसास
मँहगी क़ीमतों में ख़रीद कर
चिड़ियाघर में सजाये जायेंगे
जहाँ पर जीने के दायरे के
सब नक़ल मौजूद होंगे
निर्धारित भूसे पर पलकर वे
समय पर पूर्व निर्धारित प्रदर्शन करेंगे
आवश्यकता पड़ने पर वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीखचों से बाहर निहार सकेंगे
पर निकल नहीं सकेंगे
भटके-भटके
ईमान और एहसास
(जो अपनी पहचान के लिए
किसी मालिक का नाम नहीं दे पायेंगे)
आवारागर्दी के अपराध में
क़ैद किये जायेंगे
जो अन्धकार, तंगी और घुटन में
बेज़ुबान पशुओं की तरह चीख़ते रहेंगे ।
जिन्हें कोई भी भूसा नहीं दिया जायेगा
जिनका कोई प्रदर्शन नहीं किया जायेगा
बेजान बनाकर उन्हें साधारण क़ीमतों में
नीलाम किया जायेगा

फिर
जिनमें से कुछ को ज़िन्दगी से बेहतर मौत
बख़्शी जायेगी
और कुछको मौत से बदतर ज़िन्दगी बख़्शी
जायेगी
आज़ाद केवल कुछ चाबुक और पहरे होंगे ।
जिससे क़ैदखाने आबाद रह सकें ।

■

अ-नाटक, एक व्याख्या

मंच बनाने के सिवाय
और दर्शक ढूँढ़ने के सिवाय
चेहरों पर अभिनय के मुखौटे चढ़ाकर
दूसरों के दरवाज़ों पर
अपनी मजबूरियों के
और अपने दरवाज़ों पर
दूसरों की मजबूरियों के
दिखाने की नयी कला
अ-नाटक के नाम से पुकारी जायेगी ।

—हरीश वास्वाणी

■

टी, एच. एक्स—२३
आदिपुर (कच्छ)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

(+)(—)Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अँधेरी रात—
फ़ोटोग्राफ़र का डार्क-रूम है,
जहाँ से—
हर नेगेटिव,
सुबह होते-होते,
पाज़िटिव होकर निकलता है।

■

• ब्रैकेट

आकाश—
डेली-पेपर है,
तारे जिस पर,
किसी नौसिखुये कम्पोज़ीटर की
कम्पोज़िंग की तरह,
बिखड़े हैं—इधर-उधर!
और—
चाँद की पतली लकीर
किसी खास न्यूज़ पर लगा
एक ब्रैकिट है,
और वहाँ—
दूसरे ब्रैकिट का न होना,
शायद,
नौसिखुये कम्पोज़ीटर का ग़लती है,
या शायद प्रूफ़-रीडर की।

—ईश्वरचन्दर

■ ■

१०५ II कनबेला मोहल्ला
O.S दिल्ली गेट, अजमेर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
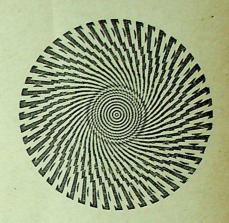
टूटे अक्सों का जोड़ । विष्णु भाटिया

रफ़्तार--फ़ासला काटती रफ़्तार। दूरी और देरको मिटाती स्पीड। जल्दी पहुँचना है--स्पीड साथ देगी। पीछे रह जाता हुआ मेन रोड। आसपास इमारतोंके मध्य गुम होती गलियाँ, साईन-बोर्ड, फ़िल्मी विज्ञापन····लेफ़्ट टर्न, राइट टर्न, यु टर्न, क्रासिंग़, स्टॉप-डेंजर···खोपड़ी और दो हड्डियाँ।

स्टॉप-डेंजर···

विकृत चेहरा, टेढ़ी नाक, फटी आँखें, बकरेकी भाँति कान, गान्धी टोपी-सा माथा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चपातीकी तरह गोल-गोल। जैसे मोटरके नीचे आकर विकलांग हो गया है, जैसे दुनियाकी सब बदसूरतियाँ मिलकर इस चेहरेका सृजन कर रही हैं। आकारहीन, विकृत चेहरा।

अक्स ग़ायब हो जाता है। जैसे परी-कथाओंका दैत्य शीशेमें उभर आया था। उसके होठोंके कोने चौड़े हो आये थे, और भयानक क़हक़होंको छितराने लगे थे। उसके दाँत ज़ालिम होकर ख़ूनके प्यासे हो गये थे।

शीशा कोई भी अक्स नहीं देता। रफ़्तार टुकड़े-टुकड़े हो गयी है। गर्र····र्र र्र····गर्र····र्र र्र र्र····लाईन् क्लीअर होनेकी प्रतीक्षा। देर,···देर हो जायेगी।

ट्रैफ़िक बहने लगा है। धाराओं और प्रवाहोंमें बँट गया है।

ओह! यह देव फिर शीशेमें आ जाता है।

नहीं, नहीं····

अँगुलियाँ लानत देनेके अन्दाज़में शीशे-पर जमती हैं। दैत्य नहीं मरता। हा····हा····हा····क़हक़होंमें और भी भयानकता छा जाती है।

यह चेहरा मेरा नहीं। हो भी नहीं सकता।

लेकिन यह साया मेरे सीनेपर सवार क्यों हो गया है? नहीं, मैं अपना ऐसा आकारहीन चेहरा नहीं चाहता। भय! कैसा भय? नफ़रत! कैसी नफ़रत?

इस चेहरेसे भागना क्यों चाहते हो? इस चेहरेसे साक्षात्कार करना क्यों नहीं चाहते?

मुट्ठी भिंच जाती है और दूसरे क्षणमें शीशेपर प्रहार करती है।

"क्या है साहब?" एक आश्चर्यचकित चेहरा पूछता है।

"आई एम वेरी सॉरी।"

"आप परेशान हैं?" सहानुभूति-भरा लहजा।

जवाब नहीं।

"आप···"

सुनना नहीं चाहता।

शीशा तो नहीं टूटा। हाथमें दर्दने जगह बना ली। यह मैं नहीं। मैं ऐसा कभी भी नहीं हो सकता। यह मेरे लिए जाना-पहचाना नहीं है। कुछ-कुछ विचित्र, कुछ-कुछ अजीबो-ग़रीब। नहीं, नहीं····

यही तुम्हारा सही चेहरा है····यह मेरा ग़लत प्रतिनिधित्व कर रहा है। नहीं, मुझसे अपना यह रूप सहा नहीं जाता, बरदाश्त नहीं होता।

"टैक्सी रोको!"

"आप तो आगे····"

"एक काम याद हो आया।"

मीटर पढ़कर, पैसा देते हुए दिलमें आता है—राहसे कोई पत्थर उठाकर शीशा तोड़ दूँ। मिटा दूँ, उस सायेके अहसासको भी, जो मुझे अभी पीड़ा दे रहा है।

समयपर नहीं पहुँचूँगा। भले ही वह खड़ी रह-रहकर चली जाये। यह चेहरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकर कैसे उसके सामने जाऊँगी ?

■

लंच-टाईम। पेटमें भूख है। खाना चाहिए।

जरूर।

स्टीलके टिफ़िनकी सतहपर अर्ध गोलाकारमें बँटा चेहरा उभरता है। बदसूरत चेहरा !

नहीं यह मेरा चेहरा नहीं है।

खाने लगता है। नहीं खा पाता। जैसे चेहरा खाकर पेट भर गया है। भूख मर गयी है। नहीं लगती भूख।

नहीं खाऊँगा।

■

पुराना आईना !

लम्बा होता चेहरा, एक फ़ुट माथा, आधा फ़ुट नाक, तीन इंच होठ, चार इंच कान, नीचे तक जाते तीन-चार फ़ुट हाथ, टाँगोंकी लम्बाईका तो कोई हिसाब ही नहीं। शरीरमें ये यह लम्बाई कैसे आयी ? यह आईना क्यों ग़लत अक्स दे रहा है ? यहाँ-वहाँ कुछ ढूँढ़ती नजरें। हाथ लगती है गेंद।

ज़ोरसे आईनेकी ओर फेंकता है। आईनेसे लगकर गेंद खिड़कीसे कूदकर बाहर भाग जाती है। और आईना जैसे मुसकरा रहा है, एक व्यंग्य-भरी मुसकान।

आईनेका मुँह दीवारकी ओर कर देता है। जैसे बच्चेको उसकी शरारतोंके लिए दीवारकी ओर मुँहकर खड़ा किया जाता है। क्या आईनेमें दीवार लम्बी हो गयी होगी ? मैं आईनेमें दीवारको देखना चाहता हूँ तो मेरा लम्बा चेहरा नज़र आता है। यह आईना किसने बनाया होगा ?

कमरेके किसी भी कोनेमें जाता है—आईना और लम्बा अक्स। अगर इस आईनेमें कोई बड़ी ईमारत देखी जाये तो वह शायद आसमान तक चली जाये और हिमालय पहाड़ जितनी ऊँची हो जाये। हज़ारों फ़ुट ऊँची।

'मैं' परछाईमें नहीं हूँ। 'मैं' हूँ। मैं साया नहीं हूँ, परछाईं नहीं हूँ।

मेरा अपना अलग व्यक्तित्व है, शक्ल है, सूरत है, आकार है, रूप है, सुन्दरता है। मैं इसे रहने न दूँगा ! या मैं रहूँ, या 'यह' !

आईना ज़ोरसे ज़मीनसे मिलता है। टुकड़े-टुकड़े....

कुछ समय तक महीन-से स्वर बिखरते रहते हैं। फिर चुप हो जाते हैं।

स्वरोंके धागोंसे खिंचती आयी माँ—"यह क्या बेटे ?"

"छूटकर गिर गया माँ।"

झूठ, बिलकुल झूठ।

"बेटे, यह हमारे खानदानका पुरानेसे पुराना आईना है। पहले हिन्दुस्तानमें न था। तुम्हारे बड़े विलायत गये थे। वहाँसे ख़रीद लाये थे। इसकी क़ीमत और अहमियत तू नहीं समझ पायेगा।"

खम्भेकी भाँति स्थिर हो जाता है। लम्बा ऊपर तक चला जाता हुआ अक्स।

"तुमने यह क्या किया बेटे ?"....दुःखकी गहरी हताशा घेरा बनाती है।

"दूसरा लायेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कहाँसे आयेगा ?"

"आ ही जायेगा।" एक आश्वासन।

"गया समय और गयी वस्तु वापस नहीं आती !" उदास लहजा। पर मैं टूटा आईना वापस चाहता भी कब हूँ ? दिल-ही-दिलमें कहता है। टुकड़े फेंक दिये जाते हैं।

लेकिन अक्स नहीं फेंका जाता। अक्सके टुकड़े चुभते हैं। यह लो, चमड़ीमें खून उठ आया है। जैसे ज़ख़्म बन गया है।

पर मैं अक्ससे भागना क्यों चाहता हूँ ? बचना क्यों चाहता हूँ ? अक्स मेरे 'मैं' को मारना चाहता है। मैं 'मैं' रहना चाहता हूँ। सही तरहसे 'होना' चाहता हूँ। इसलिए ग़लत अक्सोंमें बँटना नहीं चाहता।

■

पिकनिक।—हो···हो···हो···ही···ही···क़हक़हे, गीत, ढोलककी थाप, खेलोंके शोर, खुशियोंमें बहकते क़दम, फिरी दिमाग़, फिरी दिलें···हर वह क्षण जो सामने आता है, खुशीकी लहर होकर गुज़रेगा। जैसे ख़ुशियोंकी धूप खिली है। शरीरको सेंकती धूप—जज़बातको गरम करती धूप।

देवदारके ऊँचे दरख़्त, गुलमोहरके पेड़, गुलाबके पौधे, सूरजमुखीके पौधे, छुईमुईके पौधे, कैक्टसके अजीब पौधे—बूढ़ा पीपलका वृक्ष, उसके नीचे पत्थर और पत्थरके ऊपर सिन्दूर, फूल, और नज़दीक जलती जोत, अगरबत्तियोंका ऊपर उड़ता हुआ सुगन्धित धुआँ। कोई देवता है। लेकिन मेरे लिए पत्थर। दूसरोंके लिए विश्वासका पत्थर, अन्धविश्वासका प्रतीक। कोई सिर उसके आगे झुकता है। उस सिर अनेक कमज़ोरियों और असफलताओंकी कीलें लगी हैं। ज़हनमें उम्मीदोंके दिये जगमगा रहे हैं।

मैं शान्त झीलकी ओर देखता हूँ।

हिलता हुआ पानी। हिलती हुई परछाईं। टूटता-जुड़ता चेहरा···टुकड़े-टुकड़े होता हुआ, बँटा हुआ चेहरा। फिर अक्स बँटने लगा है। पत्थर अक्सकी ओर फेंकता हूँ, कुछ-कुछ क्रुद्ध होकर।

घेरे-घेरे, दायरे-दायरे···वर्तुल आकार खिसकते अक्स नहीं ! नहीं···घेरे टूटते हैं, तो अक्स तैरता हुआ ऊपर आता है।

यह मैं नहीं···नहीं···नहीं···

दूसरा पत्थर···घेरे और दायरे !

तीसरा पत्थर···घेरे और दायरे !

यह मैं नहीं। लहरोंमें चेहरा नहीं टूटता। यह मैं नहीं। बढ़ता और सिमटता चेहरा। मैं नहीं।

जोशमें एक लात पानीपर पड़ती है।

गिरते-गिरते बचता है।

"आत्महत्या कर रहा था, तू ?"

चुप !

"मैं तुम्हें ढूँढ़ते-ढूँढ़ते थक गयी। और तू अकेला चला आया है। जैसे मैं तुम्हारे साथ आयी ही नहीं हूँ ? क्यों ?"

चुप !

"तू उदास है ?"

चुप !

"तुझे क्या हो गया है ?"

चुप !

"तू अनईज़ी क्यों है ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुप !

"तू चुप क्यों है ?"

वह महसूस करती है, जैसे वह हवासे बातें कर रही है। सामने खड़ा मर्द नहीं, महज़ एक साया है। जिसका ज़बान सर्द है और आँखें दृष्टिहीन हैं, जो कुछ बोल नहीं पाती, देख नहीं पातीं।

"वापस चलें ?"

"मैं तुम्हें समझ नहीं सकी हूँ।"

सुनाऊँगा, तो हँसेगी। परछाईंसे इतनी हिचकिचाहट होती है? वापस लौटकर देखूँ, कहीं मेरा अक्स शेष बचा हुआ तो नहीं है? भला मैं ही वहाँ नहीं हूँ, तो अक्स कैसे होगा ?

■

"तू मेरा आईना है और मैं अक्स।" कहकर वह शरमा गयी। झुक गयी। जैसे उसके सिरको धरती अपनी ओर खींच रही थी।

अक्स····कट !····

अक्स····कट !····

"..."

"..."

रिटेक ....शॉट-नम्बर···· सीन-नम्बर···· नो, रिटेक।

"शट अप।"

"ह्वाई ?"

"इट इज नॉनसेन्स।"

वह मेरा अक्स और मैं आईना ! अक्स, जो कभी सही अक्स नहीं होता। मेरे मैंको मारता है। साया, जिसमें मैं नहीं। परछाईं जिसमें मैं नहीं। वह, जिसमें मैं नहीं। वह, जो मुझमें है। वह, जिसमें····

"चुप हो गये ?"

"मुझे हमेशा अपने अक्ससे नफ़रत रही है। अक्स मुझे कभी भी आकार नहीं दे सका है। नहीं दे पायेगा।"

"मैं तुम्हारा अक्स हूँ और तू मुझसे भी नफ़रत करता है, क्यों ? क्यों ?" वह मेरे कन्धे हिलाने लगी।

नफ़रत !

जवाब न पाकर उदास हो गयी। जानेके लिए तैयार हो गयी।

वह जवाब नहीं दे सका।

"तू मुझसे····"

वह जड़ है। आवाज़ें कानोंके परदोंसे टकराती हैं। टकरा-टकराकर प्रतिध्वनियाँ बनती हैं। जवाब नहीं आते। अर्थहीन हैं या कानोंके परदोंसे टकराकर अर्थ खो देते हैं।

परछाईं है, जो साथ-साथ है। एक क्षण आगे रहबरके समान, एक क्षण पीछे शिष्यके समान। एक क्षण बाज़ूमें हमसफ़रके समान, एक क्षण दूसरे बाज़ू औरतके समान।

परछाईं, जो कुत्तेकी तरह दुम हिलाती हुई पीछे-पीछे आ रही है। वह भौंकता नहीं। छाया, जो अजगरकी तरह लम्बी होकर दूर-दूरतक चली गयी है। न जाने वह अजगर कब सरकता-सरकता मुझतक पहुँचे और मुझे निगल जाये। साया, जो मच्छरकी भाँति बार-बार भिनकता हुआ मुझे काट रहा है।

मैं यही नहीं चाहता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों ? क्योंकि वही तेरा स्वरूप है ? भयानक, अजहद भयानक ! टेढ़ा, असुन्दर, विकृत, आकारहीन ! तू अपने ज़हनसे, अपने फ़हमसे इससे साक्षात्कार करना नहीं चाहता ? इसलिए कि तूने अपने इर्द-गिर्द खुशफ़हमियों, खूबसूरतियोंका, काल्पनिक-सुन्दर जाल बुन रखा है ? इसलिए अपने अक्ससे साक्षात्कार करते हुए तू घबराता है ? परेशान बनता है ?

"शट अप !"

तू वही है, जो तेरा अक्स है। तू वही है, जो तुम्हारा साया है। पर मैं इसलिए तो नहीं, जो मेरा अक्स है ! पर मैं इसलिए तो नहीं, जो मेरा साया है ! मैं हूँ, इसलिए मेरा अक्स है। मैं हूँ, इसलिए मेरा साया है। मैं,····मैं····मैं····मैं हूँ ।

"तुम कहाँ हो ?"

"............"

"तुम मुझसे मिलता क्यों नहीं ?"

"............"

"मुझसे नाराज़ हो ?"

"नहीं ।"

"ठीक तो हो, स्वस्थ तो हो ?"

"नहीं ।"

"बीमार हो ?"

"नहीं ।"

"तुम आओ न, कहीं मैं तुम्हारे दुःखको····"

"नहीं···नहीं····"

"किसी कारण मुझपर क्रोधित हो ?

"नहीं ।"

"नहीं····नहीं··· नहीं····आखिर हुआ है ?"

"नहीं ।"

कुछ सिसकियाँ···कुछ रोना। और फ़ोन रख दिया गया ।

"मैं तुम्हारा अक्स हूँ और तुम···"

"शट अप !"

अक्स ? लम्बा होता चेहरा, एक फ़ुट माथा, आधा फ़ुट नाक, तीन इंच होंठ, चार इंच कान····विकृत चेहरा, फटी आँखें, बकरे जैसे कान, आकारहीन बदसूरत चेहरा !

यह मेरा अक्स नहीं ।

वह इस फ़ोटोमें····नहीं नहीं····अक्स कभी भी खूबसूरत नहीं हो सकता। लहरों में टूटता चेहरा। जिसके लिए एक पत्थर, एक मुक्का, एक गेंद····मैं नहीं ।

और यह फ़ोटो ? मेरा अक्स है ! मैं एक औरत हूँ ? औरत मर्दका अक्स कैसे हो सकती है ?

यह मेरा अक्स ? हा···हा····हा····

फ़ोटो फाड़ता है। टुकड़ोंमें लहरों के समान बिखरा हुआ। हवाके झोंकोंपर उड़ते टुकड़े। दूर होते हुए टुकड़े····

अक्स टुकड़े-टुकड़े हो जाता है।

वह चलती हुई टैक्सीसे जैसे उतर पड़ता है। इस भयसे कि फिर टैक्सीके शीशे में वह दैत्य-क़द जुड़ न जाये।

■

१२०।११४ मुलुन्द कॉलोनी
बम्बई-८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दो दशाब्दीकी अमरीकी चित्रकला' (१९४६–६६) का एक बड़ा प्रदर्शन अभी हाल दिल्लीमें हुआ था। इसमें लगभग ३० जाने-माने आधुनिक अमरीकी चित्रकारोंकी १०० कला-कृतियाँ थी। इस प्रदर्शनीका आयोजन ललित-कला-अकादमी तथा न्यूयॉर्क-के म्यूज़ियम ऑफ़ मॉडर्न आर्टकी ओरसे हुआ। इस प्रदर्शनको प्रस्तुत करनेमें सहायता देनेके लिए अमरीकासे वहाँके प्रसिद्ध कला-आलोचक श्री क्लीमेण्ट ग्रीनबर्ग इन चित्रोंके साथ ही यहाँ आये थे। इन्होंने

अमरीकी चित्रकलाके विचित्र व्याख्याता : क्लीमेण्ट ग्रीनबर्ग

—रामचन्द्र शुक्ल
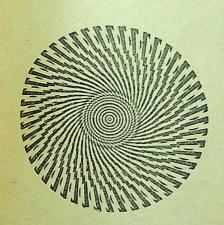
दिल्ली, बम्बई तथा कलकत्तामें कई स्थानपर अमरीकी चित्रकलाके बारेमें भाषण दिये और चित्रोंको परदेपर दिखाकर उनका परिचय दिया। इसी कार्यके लिए श्री ग्रीन-बर्ग वाराणसी भी पधारे थे।

वाराणसीमें कई स्थानोंपर श्री ग्रीनबर्गने अमरीकी चित्रकलापर भाषण दिया और परदेपर चित्रोंको दिखाकर परिचय प्रस्तुत करनेका प्रयत्न किया। पहला आयोजन काशी हिन्दू विश्वविद्यालयके भारत-कला-भवनमें हुआ। दूसरा यूनाइटेड आर्टिस्ट्सकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गैलरीमें और तीसरा वाराणसीमें स्थित अमेरिकन अकेडमीमें।

इसमें कोई शक नहीं कि वाराणसीके चित्रकार, कलाप्रेमी तथा साहित्यकार अमरीकी चित्रकलाके बारेमें परिचय प्राप्त करनेके लिए पूरी उत्सुकताके साथ श्री ग्रीनबर्गका भाषण सुनने गये, किन्तु अधिकांश लोगोंको निराशा ही हाथ लगी। बहुतोंने अमरीकी पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओंके माध्यमसे पहलेसे ही अमरीकी चित्रकलाका काफ़ी परिचय प्राप्त कर रखा था, फिर मार्च महीनेके अमरीकी पत्र 'स्पैन' में इस प्रदर्शनीका परिचय बड़े कैंड़ेसे प्रस्तुत किया गया था। 'स्पैन'में इस प्रदर्शनीमें रखे गये कुछ तथाकथित महत्त्वपूर्ण चित्रोंको प्रकाशित भी किया गया और एक छोटा परन्तु सोद्देश्य परिचय भी प्रस्तुत किया गया। परिचयके आरम्भमें ही यह आशा व्यक्त की गयी है कि इस प्रदर्शनीको देखकर इसपर, बादमें, कला-गोष्ठियोंमें बड़ी गरमागरम बहसें चलेंगी, क्योंकि अमरीकी कला-आलोचकोंके अनुसार : "यह प्रदर्शन कई अत्यन्त विवादपूर्ण, उत्तेजनात्मक तथा विप्लवी प्रगतियोंका एक ऐसा दृष्टिगत विवरण उपस्थित करता है जैसा कि शायद ही चित्रकलाके इतिहासमें कहीं उपस्थित हुआ हो।"

वाराणसीमें ग्रीनबर्गने अपने भाषणोंमें तथा बातचीत और गोष्ठियोंमें इसीका भरसक प्रयत्न किया, पर यहाँ न तो कोई उत्तेजित हुआ, न लोगोंको किसी नये विप्लवका आभास ही हुआ—अमरीकी चित्रकला देखकर अथवा श्री ग्रीनबर्गका भाषण सुनकर विवाद ज़रूर खड़ा हुआ, क्योंकि श्री ग्रीनबर्ग विवाद चाहते थे। विवादका रूप तो यहाँ तक बढ़ा कि श्री ग्रीनबर्ग एक बार झुँझलाकर यह कह बैठे कि "कहीं मैं आपको बोर तो नहीं कर रहा।" लोगोंने सिर हिलाया—"नहीं।" और तब फिर उन्हें साहस हुआ आगे कुछ बोलनेका। ग्रीनबर्गने विवादके दौरान कई बार कोकाकोला पिया, चुरुट सुलगाया और अगली-बगली झाँकी। अधिकांश प्रश्नोंको वे कोकाकोलाके साथ बिलकुल पचा गये और खाली बोतलोंका ढेर लगता रहा। कुछ प्रश्नोंको वह चुरुटकी तम्बाकूकी भाँति मुँहके अन्दर ही कुचलकर निगलते रहे। दो-एक प्रश्नोंका उन्होंने शारीरिक अदाके द्वारा, शून्य मुखाकृति अथवा बेहँसीकी हँसीमें उत्तर दिया।

वास्तवमें लोग श्री ग्रीनबर्गसे अमरीकी चित्रकलाकी विशेषताएँ समझना चाहते थे, पर इसका वास्तविक प्रयास ग्रीनबर्गने किया ही नहीं। वे अधिकांश प्रश्नोंपर खुलकर नहीं बोल सके। ऐसा लगा जैसे वे किसी प्रतिबन्धमें बँधे हों और प्रश्नोंका ठीक जवाब देनेमें असमर्थ हों या फिर उन्हें यही समझमें नहीं आता था कि किस प्रश्नका क्या उत्तर दिया जाये। कुछ लोगोंका ऐसा भी खयाल था कि अमरीकावालोंने ग़लत व्यक्तिको भेज दिया इन चित्रोंको प्रस्तुत करनेके लिए।

श्री ग्रीनबर्गका भाषण सुनने ऐसे लोग भी आये जो दिल्लीमें प्रदर्शनी देख चुके थे और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रीनबर्गका भाषण भी सुन चुके थे। उनके अनुसार ग्रीनबर्गका यही हाल दिल्लीमें भी हुआ। वहाँ भी इन्होंने ये ही शब्द प्रस्तुत किये थे। और अधिकांश प्रश्नोंके उत्तर गोल कर गये थे।

कुछ प्रश्न और उत्तर इस प्रकार थे :

प्रश्न : आप आधुनिक अमरीकी चित्रकलाको इस रूपमें उपस्थित कर रहे हैं जैसे उसने स्वतन्त्र विकास प्राप्त किया हो। क्या अमरीकी चित्रकला फ्रान्सकी आधुनिक चित्र-कलासे आगे कुछ दे पायी है ?

उत्तर : इधर पिछले २०-२५ वर्षोंमें न्यूयॉर्क-में पेरिसके कलाकारोंकी जितनी बिक्री हुई है और जितना प्रश्रय मिला है, उन्हें फ्रान्समें भी नहीं मिला। इस समय न्यूयॉर्क ही संसारकी आधुनिक कलाका मुख्य केन्द्र बन रहा है। अमरीकामें जितने कलाके नये आन्दोलन उठे हैं उतने फ्रान्समें नहीं। वैसे शुरूमें अमरीकी चित्रकार पेरिसकी कलासे ज़रूर प्रभावित रहे हैं।

प्रश्न : क्या अमरीकी चित्रकला इधर प्रान्ती-यतासे ग्रसित नहीं रही ?

उत्तर : ऐसा पहले था पर अब नहीं। अब तो अमरीकी चित्रकलाका रूप कहीं अधिक सार्वभौमिक है।

प्रश्न : अमरीकी आधुनिक चित्रकलाने क्या अबतक कुछ ऐसा किया है जिसे आधुनिक चित्रकलाके क्षेत्रमें महत्त्वपूर्ण कहा जा सके ?

उत्तर : (गोल) आप खुद इसको देख सकते हैं। मैं और कुछ नहीं कह सकता।

प्रश्न : आपने बार-बार अमरीकी चित्रोंकी प्रशंसा की है पर केवल 'अच्छा', 'सफल' इत्यादि कहनेसे काम नहीं चलता। क्या आपके पास इसे सिद्ध करनेका भी कोई आधार है ?

उत्तर : मैं चित्रोंको देखनेके अलावा आपसे और कुछ नहीं कह सकता। मैं इसे सिद्ध नहीं कर सकता।

प्रश्न : यह उत्तर तो वैसा ही है जैसा अकसर आधुनिक चित्रकार अपने चित्रोंके बारेमें देते हैं। आप तो कला-आलोचक हैं। हम आपसे आशा करते थे कि आप हमें अमरीकी चित्रकलाकी विशेषताओंकी जानकारी दे सकेंगे।

उत्तर : (कोकाकोलाकी बोतलसे चुस्कियाँ लेते हुए) लगता है, आप लोग मेरे भाषणसे 'बोर' हो रहे हैं ?

प्रत्युत्तर : जी नहीं, हम सबका बड़ा मनोरंजन हुआ है, आपको अपने सामने देखकर। आप और बोलें। हमें मज़ा आ रहा है।

प्रश्न : अबतकके आपके भाषण सुनकर हमें अमरीकी चित्रकलाके प्रति कोई खास दिल-चस्पी नहीं हो पायी। बल्कि हमें शंका होने लगी है कि अमरीकी चित्रकलाका कोई महत्त्व भी है ?

उत्तर : (चुरुटका बड़ा धुआँ तथा तम्बाकू निगलते हुए खाली हँसी) आप चित्रोंको देखें। इस प्रकारकी प्रतिक्रियाको मैं वास्त-विक मानता हूँ।

प्रश्न : इन चित्रोंको देखकर तो लगता है जैसे अमरीकी चित्रकार दिमागका इस्तेमाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न कर केवल ब्रश ही भाँजते हैं। क्या अमरीकी चित्रकला अर्न्तमुखी है?

उत्तर : नहीं, अर्न्तमुखी भी है और बाह्यको भी महत्त्व देती है।

प्रश्न : क्या अमरीकी चित्रकला किसी बड़े षड़यन्त्रकी भूमिका है?

उत्तर : (कोकाकोलाकी चुस्की)।

प्रश्न : आपने अमरीकी चित्रोंको परदेपर दिखाकर बोलते हुए अक्सर उनकी विशेषता केवल उनकी साइज़ बताकर अथवा तिथि बताकर ही सामने रखी। क्या चित्रोंकी साइज़को आप इतना महत्त्व देते हैं कि और कुछ बताना ज़रूरी ही नहीं रह जाता? क्या बड़े साइज़के चित्र बनाना ही इतना महत्त्वपूर्ण है?

उत्तर : नहीं। मैं और कर ही क्या सकता हूँ? आपके सामने चित्र रख दिया, साइज़ और तिथि बता दी। आप खुद इसका महत्त्व समझें।

प्रश्न : यदि यहाँ बैठे सभी लोगोंसे आप ऐसी अपेक्षा रखते हैं, तो फिर आपकी ज़रूरत ही क्या। हम अमरीकी चित्रकला खुद पुस्तकोंमें या स्लाइड्सपर देख सकते थे।

उत्तर : (दूसरी कोकाकोलाकी बोतल उठाना और चुस्कियोंपर चुस्कियाँ। लम्बी खाली हँसी। जमुहाई। सिगरेट जलाना।)

प्रश्न : आपने बार-बार अमरीकी चित्रोंमें फ़्लैट रंगोंके इस्तेमालपर ज़ोर दिया है। ऐसा रंग लगानेकी क्रिया तो यामिनी रायके चित्रोंमें भी है और प्राचीन भारतीय चित्रकलामें हज़ारों वर्षोंसे रही है।

उत्तर : यामिनी राय तो 'टूरिस्ट कलाकार' हैं—(अर्थात् टूरिस्टोंको पसन्द आनेवाले और उनके द्वारा खरीदे जानेवाले) उनके चित्र महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। पर अमरीकी चित्रकारोंने 'फ़्लैट कलरिंग' किसी अन्य आशयसे दी है जो कि प्राचीन भारतीय कलाकारोंका नहीं था। आप चित्रोंमें देख सकते हैं।

प्रश्न : क्या आपने भारतीय आधुनिक चित्रकारोंकी कृतियाँ भी देखी हैं?

उत्तर : हाँ, बम्बई तथा दिल्लीमें। पर अभी एक भी महत्त्वपूर्ण चित्रकार नहीं दिखाई पड़ता। वैसे मुझे बड़ी आशा है कि बहुत जल्द भारतीय चित्रकार अपने मौलिक विकासको लेकर प्रस्तुत हो सकेंगे। उनके ऊपर प्रौढ़ प्राचीन भारतीय कलाका भार है। इससे उबर पानेपर वे निश्चित ही महत्त्वपूर्ण पार्ट अदा कर सकते हैं।

प्रश्न : क्या आप चित्रोंमें सामाजिकताको भी महत्त्व देते हैं?

उत्तर : हाँ, पर अप्रत्यक्ष रूपमें ही। अभि-व्यंजना मात्रके द्वारा। सामाजिक विषय-वस्तुका चित्रण करके नहीं।

प्रश्न : क्या सूक्ष्मकला (अरूपवादी कला) के आगे भी अमरीकी चित्रकार अपना कदम रख सके हैं?

उत्तर : अमरीकामें अरूपवादी अभिव्यंजना एक नयी प्रगतिका द्योतक है।

प्रश्न : 'पॉप आर्ट' अथवा 'ऑप आर्ट' के बारेमें आप क्या कह सकते हैं?
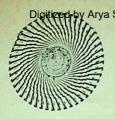
[शेष पृष्ठ १४७ पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं होती, कहीं भी ख़तम कविता नहीं होती
कि वह आवेग-त्वरित काल-यात्री है।
व मैं उसका नहीं कर्ता,
पिता-धाता
कि वह कभी दुहिता नहीं होती,
परम स्वाधीन है वह विश्व-शास्त्री है।
गहन-गम्भीर छाया आगमिष्यत् की
लिये, वह जन-चरित्री है।

सत्-चित्-वेदनाका कवि

—अमृता भारती

१९६२ की जुलाईमें मैं बम्बई आयी थी, बेहद खराब मनःस्थिति लेकर। पढ़ने-लिखने-से विरक्ति हो गयी थी, लेकिन मुक्ति भी इन्हीं दो बातोंसे मिलती थी। एक बार एक अभिन्न व्यक्तिने मेरे सामने बड़े ही महत्त्वपूर्ण ढंगसे मुक्तिबोधका नाम लिया था। मेरे मनमें इस नामकी परिचिति बहुत धुँधली और गुज़रती हुई-सी थी, इसलिए मैं अचकचा गयी।
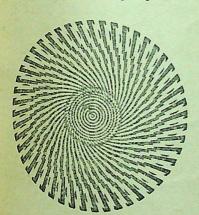
पत्र-पत्रिकाओंमें कभी-कभी देखे गये इस नामको पढ़नेकी तकलीफ़ तबतक मैंने एक बार भी नहीं उठायी थी, इसलिए सरलतासे पूछ बैठी, "कौन हैं मुक्तिबोध?"····निश्चय ही तब मेरा आशय इस बातसे था कि वे कवि ज़्यादा हैं कि कहानी-उपन्यासकार या अन्य कुछ।····और तब मुझे बहुत बातें सुननेको मिली थीं—अपने अपरिचयके बारे-में, अपनी मूर्खताके बारेमें।

अपनी आदतके मुताबिक़ मैंने ऐसी हर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पत्रिका खोजने शुरू कर दी थी जिसमें
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
मुक्तिबोधकी कोई रचना हो।....बिना किसीसे पूछे कि मुक्तिबोधकी कोई पुस्तक प्रकाशित भी हुई है या नहीं, मैं 'हिन्दी-ग्रन्थ रत्नाकर' पर मुक्तिबोधकी किताबें माँगने चली गयी थी।....और दूसरी बार मूर्ख बनकर लौट आयी थी, पर मेरी समझमें नहीं आ रहा था कि मैं मूर्ख हूँ या ये प्रकाशक। मेरे बारेमें यह सत्य है कि जबतक कोई अपना व्यक्ति मुझे टोक न दे, मैं बहुत ज्यादा नहीं पढ़ती, लेकिन जब-जो पढ़ती हूँ, उसे शोधात्मक ढंगसे पढ़ती और ग्रहण करती हूँ।

मुक्तिबोधको लेकर भी मेरे साथ ऐसा ही हुआ। मैं उनकी कविताएँ ढूँढ़-ढूँढ़कर पढ़ती रही। कुछ था जो बहुत भीतर जाकर भी जैसे लौट आता था.. दिन बीतते गये।

१९६५ की जनवरीमें मुझे किसीने 'चाँदका मुँह टेढ़ा है' कविता-संग्रह दिया।....सर्दियोंके दिन, सुबह साढ़े छह बजे मरीन लाइनके लिए ट्रेन पकड़नी पड़ती थी। कोहरेसे ढँकी सुबहमें चाँदका टेढ़ा मुँह हाथमें सम्हालकर मैं चल पड़ती। कभी-कभी कम्पार्टमेण्ट बिलकुल खाली मिल जाता। संग्रहमें सबसे पहले मैंने यह कविता पढ़ी :

'दूर वह भूरी पहाड़ी खोदने पर। बहुत भीतर से। जगमगाते हुए निकलते रत्न। मंगल शुक्रके कण। अंशुमाली सूर्यके द्युति-खण्ड तेजस्वी।....। मैदानी हवाओं में। चमकती चिलमिलाती दूर। वह भूरी पहाड़ी, या उपेक्षित तथ्य का टीला....'

'उपेक्षित तथ्यका टीला' तक आते मेरी चेतना अन्तर्मुखी हो चली थी, और अपनेको डूबता हुआ-सा महसूस कर रही थी। मैंने आगे पढ़ा उसी तन्मयताके साथ

'गहन परिचित अपरिचय की
काट पीली घास,
सतही जानकारी का भयानक
काट बंजरपन,
लगे हम खोदने दो ओर से
वह टेकड़ी भूरी,
बनाये गहन अन्तर्पथ
अन्तस्तल गुहा में तब
मिले ये दीप्त
सौ-सौ रत्न जीवन के।
गहन-गम्भीर सुविचारित
सरल थे सत्य ये मन के
शिलाओं के पहाड़ी कवच पहने थे
कि रस्ता खोजते अन्वेषकों की जो[illegible]
थे बाट'

मैं उस दिन इससे आगे यह कविता न पढ़ सकी थी। पैंतीस मिनटकी उस यात्रा[illegible] मैंने चाहा था कि इन पंक्तियोंको मैं [illegible] अन्तर्गहन पथोंमें ले चलूँ—और इन[illegible] सूक्ष्मताओंको पूरा जी लूँ।....

पहली बार मेरे हृदयने अपनी [illegible]र्णतासे निश्चय किया : मुक्तिबोध मेरे [illegible] कवि हैं।

इसके बाद मैं मुक्तिबोधको एक स[illegible] तक लगातार पढ़ती रही। संवेदनके आ[illegible] प्रदेशोंसे आती हुई आवाजें—जो धीमी [illegible] थीं, तेज भी, सहज-सरल थीं [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गहन-संकुल भी; सत्य-प्रखर थीं तो कोमल-शान्त भी—मैं सुनती रही। मैंने महसूस किया कि ये सब आवाज़ें अलग हैं, उनकी तर्ज़ और संरचना अलग है, प्रश्न अलग हैं और उत्तर अलग हैं, लेकिन वे सभी एक ही तारमें-से होकर आ रही हैं: उनकी आत्मा और वेदना एक है।

मुक्तिबोध चिन्तक कवि हैं, इसलिए वे दार्शनिक कवि भी अनायास हो जाते हैं। उन्होंने सजे हुए ड्राइंग रूममें बैठकर, सारे विलास-साधनोंके बीच मनुष्यकी दुःख गाथा और सामाजिक विषमतापर अपने विचार प्रकट नहीं किये। उन्होंने मनुष्य और मनुष्य-मनसे गहरा नाता जोड़ा—उसकी सबसे छोटी आवश्यकता और सबसे छोटे दुःखके प्रति भी उनका संवेदन जगा—उन्होंने उसे पराकाष्ठाओंमें भोगा और तब सहस्रगुनी वेदनाके साथ अभिव्यक्त किया। कवि यहाँ—ठीक सबके बीच—डूबता है, जन-मानसकी हर सूक्ष्मतम पीड़ासे अपनेको संयुक्त करता है और रातकी निस्तब्धताओंमें, दूर, बहुत दूर बेचैनीसे टहलता हुआ चला जाता है। प्रश्नोंकी क़तारें उसे चारों ओरसे घेर लेती हैं, धुएँके बादलोंकी तरह। प्रश्नोंकी प्रच्छन्न परतोंमें छिपे उत्तरोंकी खोजमें चोटपर चोट, आघातपर आघात सहने पड़ते हैं—तब मिलते हैं चमकते रत्न, वे उत्तर:

> '(इतनी मार खाई, तब कहीं वे
> स्पष्ट उद्‌घाटित
> हुए उत्तर)'

पर भूरी पहाड़ी, स्याह चट्टानों और समुद्रों-तलेके अन्धकारोंमें पड़े रत्नोंका विश्वास अटूट है, इसलिए वह खोदता चला जाता है, डूबता चलता है। रत्नोंको ढूढ़नेकी इस प्रक्रियामें वह सबके भीतर है, सबसे अभिन्न है—और तब आती है आत्मसंवरणकी स्थिति, अपनी ही अतलान्त खाइयोंमें पड़े नक्षत्र-खण्डोंको उलीच देनेकी स्थिति। फिर भी वह जुड़ा हुआ है, लेकिन जैसे वह द्रष्टा भी है अपनी उपलब्धिको सबकी उपलब्धि बना देनेके लिए:

> 'पुराने रोशनी-घर के अँधेरे शून्य टॉवर से
> अचानक एक खिड़की खोल
> नीली तेज़ किरनें कुछ निकलती हैं।
> वहाँ हूँ मैं
> खड़ा हूँ,
> मुस्कराता फेंकता अपने
> चमकते चिह्न,
> मीलों दूर तक, उन स्याह लहरों पर
> कि, सूनी दूरियों के बीच रहकर भी
> जगत से आत्म-संयोगी
> उपस्थित हूँ।'

यह संयुक्त स्थिति ही उसे मानव-समस्याओंको सुलझानेकी शक्ति प्रदान करती है। उसका मन खुलता है, ग्रन्थियाँ खुलती हैं, मानो उसका हृदय विस्तृतसे विराटतर होता जाता है। वह जानता है कि जबतक उसका घर हिमांचल-शिखरकी ऊँचाईको नहीं पा लेगा, युग-मुक्तिका सन्देशवाहक, आकाशकी दूरियोंमें उड़नेवाला वह चिरन्तन उत्तर-पंछी नीचे नहीं उतरेगा। विप्लवकी चल तडिल्लताकी शैयापर लौटती हुई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेचैन आँखोंसे वह उस पंछीकी ओर अपनी चेतनाको केन्द्रित करता है और उसकी आवाज़ सुनता है :

'ओ मित्र, तुम्हारे घर-आँगन को
शैलांचल-गिरिराज-शिखर
तो होने दो

वह आसमान तो झुकने दो
उसके मुख पर
इस समय बात के पूरे नहीं अधूरे तुम,
कमजोर-प्रखर होना बाक़ी,
अब बूटों-दबा दीन ढेला
कैलास-शिखर होना बाक़ी,
कैलास-शिखर पर बैठेंगे ।'

मुक्तिबोध आध्यात्मिक चेतनाके कवि हैं, या कहना चाहिए, विराट आत्मिक चेतनाके कवि हैं। उनकी कविताओंमें संघटित जीवन-दर्शन उनकी उस व्यापक अन्तश्चेतनाका परिणाम है जो सर्वको अविकल रूपसे व्याप्त करती है। आत्मा अपने पारदर्शी गुणके कारण सर्वेक्षणकी सामर्थ्य प्राप्त करती है और अपनी इसी शक्तिसे वह इस जगत्का और दूसरे लोकोंका आकलन करती है। यह ठीक है कि मुक्तिबोधने आत्मासे परे किसी परमात्मक स्वरूपकी कल्पना अथवा प्रस्तुति स्वीकारात्मक ढंगसे नहीं की और न उसकी आवश्यकता ही समझी, लेकिन अपनी आत्माको विश्वात्माके धरातल तक ले जानेका जो तप उन्होंने किया, वह उनके कविकी एक निश्चित और स्थायी उपलब्धि है। मानवके प्रति उनका एकात्मक दृष्टिकोण विश्व-चेतनाके धरातल-पर ही पनपा है; इसलिए वे 'अकेलेपन', 'निःसंगता' और 'अलगाव'की बात नहीं करते, कहना चाहिए कि पलायन नहीं करते, क्योंकि वे 'एक' की बात नहीं करते, अनन्त मानव-मेदिनीकी बात करते हैं :

'लाखों आँखों से, गहरी अन्तःकरण तृषा
तुमको निहारती बैठेगी
आत्मीय और इतनी प्रसन्न,
मानव के प्रति, मानव के
जी की पुकार
जितनी अनन्य।'

कविका हृदय सर्वके प्रति इतना उन्मुख और खुला है कि वह निरन्तर यात्रापर रहकर भी कहीं अ-वर्तमान या अ-विद्यमान नहीं रहता। उसकी आस्था उसके हृदयमें सम्भावनाको जन्म देती है : 'पता नहीं, कब, कौन, कहाँ, किस ओर मिले'; इसलिए वह हर जगह उन्मुक्त है, आग्रही है :

'अपनी छायाएँ सभी तरफ़
हिल-डोल रहीं,
ममता-मायाएँ सभी तरफ़
मिल बोल रहीं,
हम कहाँ नहीं, हम जगह-जगह
हम यहाँ वहाँ....'

फिर भी वह ऐसे बौद्धिकों और नक़ाबपोशोंसे भी अनजान नहीं है जो 'सत्यके बहाने स्वयंको चाहते हैं प्रस्थापित करना। अहंको, तथ्यके बहाने।'

कवि वातावरणका आल-जाल प्रस्तुत करता है जिसमें आज मनुष्यकी चेतना घायल हिरनीकी तरह फँस गयी है। वह इस पृथ्वी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की समस्याओंको अपनी गहरी सत्-चित्-वेदनामें-से देखता है—चाहता है कोई हल, कोई समाधान। प्राय: यह समाधान होता है मनुष्यका मनुष्यके हृदयके समीपतर हो जाना, एकात्मभाव और आर्थिक विषमताका अन्त। लेकिन यह हल कैसे अवतरित हो—इस अगले प्रश्नका उत्तर मिलता है : विश्वात्मक चेतनाका आविर्भाव अर्थात् एकान्तिक चेतनाका रूपान्तर। यह रूपान्तर कैसे घटित हो सकता है—इस तीसरे प्रश्नका उत्तर इन कविताओंमें नहीं मिलता। मुक्तिबोधने बहुत व्यापक परिसीमामें सोचा है, केवल सोचा ही नहीं, प्रश्नोंको रात-दिन बीड़ीकी तरह जलाया और पिया है, उनके धुएँको निगला है। उन्होंने वेदनाकी लपटोंमें पिघलकर मानो उत्तर रूपमें ढल आनेकी कोशिश की है।···· एकत्वकी प्रतीति ही वह उत्तर है जैसे :

'मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक पत्थर में
चमकता हीरा है
हर एक छाती में आत्मा अधीरा है
पल भर मैं सबमें से गुज़रना चाहता हूँ'

इसलिए बाहरकी विषमताएँ भेद-भाव कविको बहुत सालते हैं और उसे :

'आज के अभाव के व कल के उपवास के
व परसों की मृत्यु के····
दैन्य के, महा अपमान के, व क्षोभपूर्ण
भयंकर चिन्ता के उस पागल यथार्थ का
दीखता पहाड़····
स्याह !'

लेकिन यह स्थिति अन्तिम नहीं है। यह केवल उत्तरदायित्व-हीनता और निष्क्रियताकी स्थिति है। किसी गर्भिणी नारीकी श्रमशीलता उसे इस जड़तासे मुक्त करती है और :

'कुछ पलों बाद—
हिये में प्रकाश-सा होता है····
खुलती हैं दिशाएँ उजला आँचल पसारे हुए
रास्ते पर रात होते हुए भी मन में प्रात।
नन्हा-सा मैं उठता भव्य किसी नव स्फूर्ति से
असह्य-सा स्वयं-बोध विश्व-चेतना-सा कुछ
नवशक्ति देता है।'

घोर विषमता, जड़ता, निष्क्रियता, कुण्ठा, उदासी, निष्फलता और निराशाके बीच भी अन्तिम आशाका यह स्वर कहीं भी चुप नहीं हुआ। जो निराशा और वेदना पहाड़ोंके ढलानोंपर घाटियोंमें उतरती चली जाती है, अन्ततः वही अपनी अन्धकार-ग्रस्त केंचुलको उतारकर चिरन्तन आशा और प्रकाशकी सूर्य-मणि सिरपर धारणकर सौगुने वेगसे आकाशको छू लेती है। मुक्तिबोधकी कविताओंमें समस्त नकारात्मक भावोंका अस्तित्व तो है, पर उनकी स्वीकृति नहीं है : गहन अन्धकारके शून्य विवरमें-से उगता सूर्य ही इन अधोमुखी भावोंकी निष्कृति-मुक्ति है और उसीकी अन्तिम स्वीकृति भी है। प्रकाश कर्म और जागृतिका प्रतीक है। कर्मशीलता और सर्वके प्रति जाग्रत रहनेकी स्थितिसे बचनेके लिए ही मनुष्य इन तमपूरित भावोंके अधीन हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है।

मुक्तिबोध सत् चित्-वेदना और विश्व-चेतनाके कवि हैं, इसलिए वे चिरन्तन प्रकाशके कवि भी हैं। उन्हें पुकारती पुकार कहीं शून्यमें भले ही खो जाये, पर उसकी प्रेरणा अपने प्रभावसे अँधेरेको अवश्य नष्ट करती है :

'सफ़ेद राख के अचेत शीत
सर्व और रेंगते प्रसार में
दबी हुई अनन्त ज्योति जग उठी
मलिन-मृत्यु-गीत के उदास छन्द बावरे
घनान्धकार के भुजंग-बन्ध दीर्घ साँवरे
विनष्ट हो गये
प्रवृद्ध ज्वाल में हताश हो
विशाल भव्य वक्ष से
बही अनन्त स्नेह का महान् कृतिमयी व्यथा
बही अशान्त प्राण से महान् मानवी कथा।'

कवि युग-परिवर्तनका स्वप्न देखता है, लेकिन वह इस स्वप्नकी पूर्तिके लिए सोया हुआ नहीं है। वह सूर्य-किरणोंसे एक खिड़की बुनता है जहाँ स्वप्नका यह जाग्रत-पंछी अवतरित हो सके। इस युग-परिवर्तनके लिए जो आत्मत्याग करना होगा, उसके प्रति भी कवि पूर्ण जागरूक है। इसलिए मिट्टीकी परतोंके नीचे दबकर, सारे संसारसे अनजान-अपरिचित रहकर भी वह इस परिणामको ले आना चाहता है। उसे पूर्ण विश्वास है : 'आत्म-विस्तार यह। बेकार नहीं जायेगा। ज़मीनमें गड़े हुए देहोंकी खाकसे। शरीरकी मिट्टीसे, धूलसे। खिलेंगे गुलाबी फूल। सही है कि हम पहचाने नहीं जायेंगे।' बाहरी सभ्यताके चकाचौंध करनेवाले इस श्वेत-परिच्छद रूपसे उसे ग्लानि होती है, क्योंकि वह इसके भीतर छिपे कुरूप-नग्न-खोखले अस्थि-पिंजरको देख सकता है :

'मुझको है भयानक ग्लानि
निज के श्वेत वस्त्रों पर
स्वयं की शील-शिक्षा सत्य-दीक्षा के
विरोधी अस्त्र शस्त्रों पर
कि नगरों के सुसंस्कृत सौम्य चेहरों से
उचटता मन
उतारूँ आवरण—
किसीने दूर से मुझको पुकारा है।'

निरीह, कोमल, उदास, प्यारे गऊ चेहरोंको देखकर उसका मन पिघल उठता है, हृदयके किसी गुप्त कमरेसे रुलाई उमड़ती है।....ये गऊ-चेहरे उदास क्यों हैं, मुरझाये हुए क्यों हैं, यह बात मातृमना भोली-भाली स्त्रियोंकी समझमें आ जाती है, क्योंकि 'भोले-भावकी करुणा बहुत ही क्रान्तिकारी सिद्ध होती है', लेकिन जीवनके ये करुण सत्य शिक्षित, सुसंस्कृत, बुद्धिमान, दृष्टिमान लोगों की समझमें नहीं आते।....इन करुण नग्न सत्योंकी मौन प्रतीति निरीह जन-मानसमें हो रही है लेकिन कुछ लोग हैं जो इन सत्यों की तरफ़ नहीं देखते। क्या पता, उन्हें देखनेसे डर लगता है या वे समझ नहीं पाते ?

मुक्तिबोधके प्रतीक बहुत ही सार्थक हैं। इस कविने अपने चिन्तनको अधिक स्पष्ट करनेके लिए, अपनी बातका मर्म भलीभाँति उद्घाटित करनेके लिए इ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतीकोंकी योजना की है। ये प्रतीक लघुकाय भी हैं और दीर्घकाय भी। कहीं इनकी व्याप्ति एक शब्दमें हो रहती है, कभी वाक्यमें, तो कहीं पूरी कवितामें एक ही प्रतीक अपनेको अनावरित करता चलता है। 'ओ काव्यात्मन् फणिधर' कवितामें संवेदनमय आत्माका एक ही प्रतीक अपने अनेक उपप्रतीकोंके साथ प्रकट हुआ है। यह संवेदनमय आत्मा, जिसे कविने नागके प्रतीकमें बाँधा है, एकबारगी ही तम-विशेषज्ञ है, प्रज्वलन्त मन है, लहरदार रफ़्तार है, स्याह बिजली है, भूलोक विपक्ष विज्ञान-गणित-शास्त्री है। वह विष-रासायनिक है, चिकित्सक और जग-पर्यटक है।··· जहरीले संवेदनको भोगनेवाली यह नागात्मा ही भू-गर्भ-शास्त्री है जो घटाटोप तिमिरकी केंचुल पहनकर प्राणी-जगत्के सूक्ष्मतम काले अँधियारोंमें फेंके गये उपेक्षित और असुविधाकारक रत्नोंकी खोज करती है, उन्हें एकत्रित करती है आगामी पीढ़ियोंके लिए।····वह अच्छे रत्न-कोषकी स्वामिनी होकर भी अपनेको प्रकट नहीं करती। प्रतीक्षा करती है उन लोगोंकी, जो उन रत्नोंका मूल्य समझेंगे, क्योंकि यह काल उनका नहीं है।····

मुक्तिबोध भी प्रचारकी दुनियासे दूर अपने निस्पृह विकट एकान्तमें, जो निश्चय ही उन्हें मानव-अन्त:करणसे विलग न करके और ज्यादा संयुक्त करता था, संवेदनका जहर भोगते रहे, अन्धकारको तोड़ते रहे और दीप्त सत्योंका संग्रह करते रहे। उन्हें इच्छा नहीं हुई कि समयसे पहले ही जगत् उनकी इस अक्षय-निधिको जान ले। उन्होंने सूर्य-मणियोंको बटोरा और तम-गुहा-तले डाल दिया। उन्हें विश्वास था कि इन मणियोंके अन्वेषक एक दिन जरूर वहाँ पहुँच जायेंगे।····उनकी गम्भीर रुग्णावस्थामें सचमुच ही कुछ लोगोंने (सबने नहीं) उस गुहाका पता पा लिया जहाँ वे रत्न सुरक्षित थे और वे उन्हें ले गये। गुफा अन्धकारमय हो गयी, लेकिन काव्यात्मा दुखित नहीं हुई, क्योंकि तृप्ति थी कि अब इन रत्नोंका अर्थ दीप्त होगा, उनका प्रभाव घर-घरमें पहुँचेगा।

मुक्तिबोधने अपने चारों ओर जिस वातावरणकी रचना की है, वह बहुत फ़ैण्टेस्टिक है। उनकी कविताओंके रहस्यपूर्ण आभ्यन्तर-अनजान प्रदेशोंमें एक बार गयी अन्तश्चेतना आसानीसे वापस नहीं लौट पाती। यह वातावरण मुझे बचपनमें पढ़े अनेक जासूसी-तिलस्मी उपन्यासोंकी याद दिलाता है। लेकिन यह तिलस्मी वातावरण मूलत: या अन्तत: तिलस्मी नहीं है। यह एक उलझाव है, जिसने मनुष्यके मन-मस्तिष्कमें जाले बुन रखे हैं। यह एक समस्यापूर्ण माध्यम है, जिसमें शोधका कार्य निरन्तर जारी है।

इस वातावरणमें झाँकनेपर अजीब-सा भय घेर लेता है। यहाँ कुहरेसे छाया आलोक, अँधेरी सीढ़ियाँ, गुप्त तहखाने, अदृश्य कुएँ, तालाब, सुनसान बरगदकी छाँह और गोल चक्करदार ज़ीने हैं। कवि इस वातावरणके द्वारा हमें अपने ही भीतरके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन अनेक गुप्त लोकोंमें ले जाता है जहाँ तन्तुजालोंसे ढँके पानीके सरोवर हैं, बन्द खज़ाने हैं, सोयी हुई भाव-संवेदनाएँ हैं। इस वातावरणका प्रयोजन वहीं सिद्ध हो जाता है जब हम अपने आन्तर-बाह्य लोकों-की कुहरीली, अभिशप्त, अँधेरी कँटीली झाड़ियोंमें छूट जाते हैं। यह वातावरण अपने अन्तर्मुखी रूपमें जितना फ़ैण्टेस्टिक है, बाहरी रूपमें भी उतना ही फ़ैण्टेस्टिक है : फिर भी यह तथ्य है, सत्य नहीं। इस वातावरणमें सत्यके लिए जो निरन्तर घूम रहा है, टहल रहा है, दौड़ रहा है और खोज रहा है—वह है आत्मा, हृदय, मन-बुद्धि, विवेक-ज्ञान अथवा संवेदन, अब चाहे प्रतीक रूपमें वह ब्रह्मराक्षस हो, अथवा काव्यात्मन् फणिधर।

मुक्तिबोधका सौन्दर्य-दर्शन उनके बिम्बों-में परिलक्षित होता है। यह निश्चय है कि प्रतीकोंकी तरह ये बिम्ब भी कथ्यको और अधिक स्पष्ट तथा सुदृढ़ बनानेके लिए प्रयुक्त हुए हैं, किन्तु जहाँ प्रतीक भली-प्रकार सुविचारित प्रक्रियाके बाद आये हैं, बिम्बोंकी सृष्टि स्वतः सहज हुई है। बिम्बोंका आविर्भाव प्रायः वैश्विक पृष्ठभूमिपर हुआ है, इसलिए इनका प्रभाव भी उतने ही बड़े विस्तारको व्याप्त करता है। 'कोई भव्य विश्वात्मक तडित् आघात', 'यह जान तुम्हारे माथेकी। तीनों रेखाएँ उलझ गयीं। नभमें त्रिकाल रेखाएँ विद्युत्की चमकीं।' 'तम-शून्यमें तैरती है जगत-समीक्षा,' 'शून्य-बिन्दुके अँधियारे खड्डेमें,' 'साँवली हवाओंमें काल टहलता है'—जैसी अभिव्यक्तियाँ लगभग सभी कविताओंमें मिल जायेंगी। ज्वाला-मुखियोंके अतलोंमें वह सूर्य-झीलोंको देखता है, जन-अनुभवकी कमल-श्रेणियाँ और आकांक्षामय भूत-वर्तमान-भविष्यत्‌की त्रिवेणियाँ देखता है, जिनकी देहलीपर रुक कर काल भैरवनाद सुनता है। मुक्तिबोध की हर कवितामें ऐसे बिम्ब मिल जाते जो आत्म-मन्थनमें-से सहज और सह ऊपर तिर आये हैं। सौन्दर्यका साक्षात्कार अभाव और उपलब्धि, अन्धकार और प्रकाश दोनों ही स्थितियोंमें किया जा सकता है जैसे रसकी निष्पत्ति कैसे भी स्थायी भाव (रति, शोक, भय, जुगुप्सा) से होती है। इस दर्शनके लिए चाहिए वस्तुके प देखनेवाली दृष्टि, जो मुक्तिबोधके पास थी उनके बिम्ब विनाश और सृजन, तमस् और ज्योति, निराशा और आशाकी श्याम-धवल द्विधाराओंमें समान शक्तिसे अवतरित हु हैं। मुक्तिबोधकी इमेजेस बिम्ब-पुरुषके ह में, जो शून्य विराट-पुरुष भी है. कविता को व्याप्त करती हैं—जो अपने कन्धे पहाड़ोंके शिखर उठाये है और अपने दो हाथोंपर आकाश लिये चलता है :

> पैरों से महसूस करता हूँ धरती का फै
> हाथों से महसूस करता हूँ दुनिया,
> मस्तक अनुभव करता है, आकाश,
> दिल में तड़पता है अन्धेरे का अन्दाज़
> आँखें ये तथ्य को सूँघती-सी लगतीं,
> केवल शक्ति है स्पर्श की गहरी।
> आत्मा में, भीषण
> सत् चित्-वेदना जल उठी, दहकी।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुक्तिबोधकी हर कविता एक आईना है—गोल, तिरछा, चौकोर, लम्बा आईना। व्यक्ति और समाज उसमें अपना चेहरा देख सकते हैं। हर आईना हर एकको उसका असली मुख दिखलानेकी क्षमता रखता है, इसीलिए बहुत-से उन आईनोंमें अपनी सूरत देखनेसे घबराते हैं और कुछ हैं कि बार-बार आईना सामने रखते हैं और अपनी निरीह-धारी गऊ-सूरतको देखकर सोचते हैं कि हमें पहली बार आत्मदर्शनका सुख मिला। ....इस बीच जो मुक्तिबोधके नामका झण्डा लेकर चले हैं उनमें बहुत कम लोग ऐसे हैं जो इन आईनोंमें देखनेका साहस कर सकते हैं, और यदि उन्होंने मंचपर-से मुक्तिबोध-का नारा बुलन्द करनेके लिए इन आईनोंमें सामने भी होगा तो विस्मय ही चेहरोंपर नक़ाब डालकर ताकि वे आत्म-भर्त्सनाकी प्रता-ड़नासे मुक्त रह सकें। 'अँधेरेमें' कविता इस संग्रहका सबसे बड़ा और भयजन्य आईना है।

मुक्तिबोधकी उपलब्धियाँ अनेक हैं और हो सकती हैं, लेकिन मैं उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि यही मानती हूँ कि उन्हें जानकर और उन्हें पढ़कर बेहद आत्मीयता और हार्दिकताकी अनुभूति होती है, अत्यन्त अपने-पनका बोध होता है।

सत्-चित् वेदना और विश्व-चेतना एक दूसरेकी जननी हैं: इनकी अग्निमें तपकर निकला हुआ सत्य अथवा दर्शन अपनी प्राप्ति और दानं दोनोंमें ही प्रकाशवाही होता है। मुक्ति-बोध इसी चिरन्तन प्रकाशके कवि थे। ■ ■

२ सप्तर्षि, चौथा रास्ता,
सान्ताक्रुज़ (पूरब), बम्बई-५५

[पृष्ठ १३८ का शेष : अमरीकी चित्रकलाका विचित्र व्याख्याता]

उत्तर : इनका स्थान उतना महत्त्वपूर्ण नहीं। यह केवल थोड़े समय तक ही प्रभावशाली रह सकते हैं।

प्रश्न : मैक्सिकोकी आधुनिक चित्रकलाको आप क्या महत्त्व देते हैं?

उत्तर : वह अब चुक गयी है। वह जहाँ थी वहीं है।

प्रश्न : वाराणसीके 'यूनाइटेड आर्टिस्टों'के चित्र आपने देखे हैं। उनके बारेमें आप क्या राय रखते हैं?

उत्तर : इनमें कौशल तथा प्रतिभाकी कमी नहीं पर इन्हें वाराणसीसे छुटकारा लेना चाहिए। ज्यादा (चित्र) देखना चाहिए।

प्रश्न : क्या वाराणसीमें आप अभी और ठहरेंगे।

उत्तर : नहीं।

प्रमुख प्रश्नकर्ता थे सर्वश्री डॉ० आनन्द कृष्ण, रामचन्द्र शुक्ल, आनन्द भैरवशाही, मुक्ता शुक्ल, अनील करंजय, डी० पी० पटनायक, डॉ० प्रतापादित्य पाल, परेश, कला मनीषी रायकृष्ण दासजी तथा प्रसिद्ध कला-प्रेमी मिस बोनर भी गोष्ठीमें उपस्थित थीं। किन्तु मुझे ऐसा लगा कि वे सब भी मन-ही-मन कुढ़ रहे थे। ■ ■

जी० ३५ न्यू कलोनी,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-५
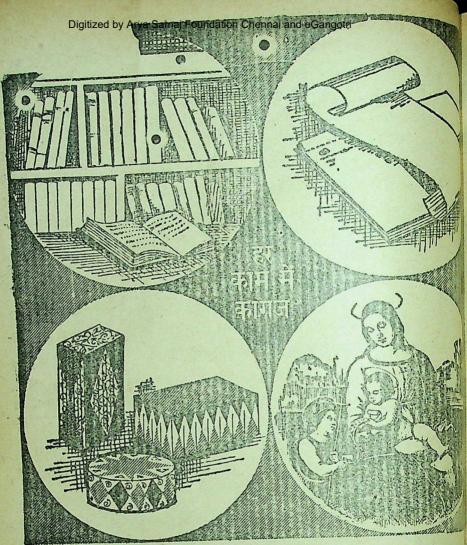
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

हर
काम में
कागज

हमको हमेशा कई प्रकार के कागजों की जरूरत (आवश्यकता) होती है—कार्टन्स के लिये मोटा बोर्ड, लेटर छपाई के लिये बोण्ड पेपर्स चित्रादि की छपाई के लिये आर्टपेपर्स। इसके अलावा लिखने के कागज, छपाई के कागज, पतला टिस्यू कागज... ग्राहकों की पसन्द के मुताबिक निपुण विशेषज्ञों द्वारा बनाये हुए अनेक प्रकार के कागज के अथवा बोर्ड्स के [illegible] पहचानी रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड का नाम ही [illegible] जाता है।

रोहतास पेपर्स अथवा बोर्ड्स अच्छाई के प्रतीक हैं

रोहतास इण्डस्ट्रीज लि.
डालमिया नगर (बिहार)

मैनेजिंग एजेन्ट्स।
साहू जैन लिमिटेड ११, क्लाइव [illegible]

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
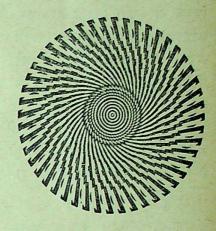
अमृत-मन्थन : कुछ बोधकथाएँ

—आचार्य रजनीश

सुबहसे साँझ तक सैकड़ों लोगोंको मैं एक दूसरेकी निन्दामें संलग्न देखता हूँ, हम सब कितने शीघ्र दूसरोंके सम्बन्धमें निर्णय लेते हैं, जब कि किसीके भी सम्बन्धमें निर्णय करनेसे कठिन और कोई बात नहीं। शायद, परमात्माके अतिरिक्त किसीका निर्णय करनेका कोई अधिकारी नहीं, क्योंकि एक व्यक्तिको, एक छोटे-से, साधारण-से मनुष्यको भी जाननेके लिए जिस धैर्यकी अपेक्षा है, वह परमात्माके सिवाय और किसमें है ?

क्या हम एक-दूसरेको जानते हैं ? वे जो एक दूसरे-के बहुत निकट हैं—क्या वे भी एक दूसरेको जानते हैं ?

मित्र—क्या मित्र भी एक दूसरेके लिए अपरिचित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अजनबी ही नहीं बने रहते हैं?

लेकिन, हम तो अपरिचितोंको भी जाँच लेते हैं और निर्णय ले लेते हैं और वह भी कितनी शीघ्रतासे।

ऐसी शीघ्रता अत्यन्त कुरूप होती है, लेकिन जो व्यक्ति अन्योंके सम्बन्धमें विचार करता रहता है, वह अपने सम्बन्धमें विचार करनेकी बात भूल ही जाता है और ऐसी शीघ्रता निपट अज्ञान भी है, क्योंकि ज्ञानके साथ होता है : धैर्य —अनन्त धैर्य।

जीवन बहुत रहस्यपूर्ण है और जो जल्दी अविचारपूर्वक निर्णय लेनेके आदी हो जाते हैं, वे उसे जाननेसे वंचित ही रह जाते हैं।

एक घटना मैंने सुनी है। पहले महायुद्धके समयकी बात है। एक कमाण्डरने अपने सैनिकोंको कहा : "सैनिको, बहुत खतरनाक कार्यके लिए पाँच सैनिक चाहिए। उस कार्यमें जीवनके बचनेकी सम्भावना नहीं है। इसीलिए जो स्वेच्छासे जोखिम उठानेको तैयार हों, वे अपनी पंक्तिसे दो क़दम आगे आ जावें।" वह अपनी बात पूरी कह ही पाया था कि एक घुड़सवारने आकर उसका ध्यान बँटा लिया। वह कोई अत्यन्त आवश्यक सन्देश उसे देने आया था। सन्देशको लेने और पढ़नेके बाद उसने आँखें अपनी टुकड़ीके सैनिकोंकी ओर उठायी। उनकी पंक्तियोंको अखण्ड देख, वह क्रोधसे भर गया। उसकी आँखोंसे चिनगारियाँ छूटने लगीं और वह चिल्लाया : "कायरो! नामर्दो! क्या एक भी मर्द तुम्हारे बीचमें नहीं है?" उसने और भी गालियाँ उन्हें दीं। और दण्डकी धमकियाँ भी दीं और तभी उसे ज्ञात हुआ कि एक नहीं, सारे सैनिक ही दो क़दम आगे बढ़ गये थे।

मैं एक दिन राहके किनारे बैठा था, वृक्षोंकी घनी छायामें बैठा-बैठा राह चलते लोगोंको देखता रहा, उन्हें देखकर बहुत-से विचार मेरे मनमें आये। वे कहीं भागे चले जा रहे थे। बच्चे, जवान, बूढ़े, स्त्री, पुरुष। सभी भागे जाते थे। उनकी आँखें कुछ खोजती प्रतीत होती थीं और उनके पैर किसी बड़ी यात्रामें संलग्न। लेकिन वे कहाँ भागे जा रहे थे? क्या था उनका गन्तव्य? और क्या अन्तमें वे पावेंगे कि कहीं पहुँचे?

और यही विचार तुम्हें देखकर भी मेरे मनमें उठता है।

और उस विचारके साथ-ही-साथ मैं एक गहरी पीड़ासे भी भर जाता हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि तुम कहीं भी नहीं पहुँचोगे। नहीं पहुँचोगे इसलिए क्योंकि तुम्हारा मन और तुम्हारे चरण परमात्माके विरोधमें चल रहे हैं।

जीवनमें कहीं पहुँचनेका राज़ है : परमात्माकी दिशामें चलना। उसके अतिरिक्त कोई भी दिशा, कोई भी मार्ग कहीं नहीं पहुँचाता। दिशामें बहो। उसके विपरीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तैरकर मनुष्य केवल स्वयंको तोड़ता और नष्ट करता है।

मनुष्यका भय क्या है? उसकी चिन्ता क्या है? उसका दुःख क्या है? उसकी मृत्यु क्या है?

मेरे देखे : परमात्माके विरोधमें तैरनेकी अहं-चेष्टासे ही ये सब रुग्णताएँ पैदा होती हैं।

अहंकार दुःख है, अहंकार रोग है। क्योंकि अहंकार परमात्माके विरोधकी दिशा है, और परमात्माका विरोध स्वयंका विरोध है।

मैंने एक घटना सुनी है : एक छोटे-से वायुयानका चालक १५० मील प्रतिघण्टाकी चालसे उड़ा जा रहा था। अचानक उसने पाया कि वह एक भयंकर आँधीकी धारामें पड़ गया है। अन्धड़ बहुत तूफ़ानी था। सम्भवत. वह भी १५० मील प्रतिघण्टाकी गतिसे ही यानकी विरोधी दिशामें भागा जा रहा था। इस प्रचण्ड आँधीमें फँसकर चालकके प्राण संकटमें थे और उसके यानका बचना सम्भव नहीं दीखता था। आश्चर्य तो यह था कि यानके सभी यन्त्र यथावत् कार्य कर रहे थे और इंजिन शोर कर रहे थे, लेकिन यान एक इंच भी आगे नहीं बढ़ रहा था। बादमें उस चालकने कहा : "कितना विचित्र अनुभव था वह। १५० मील प्रतिघण्टाकी गतिसे भागते हुए एक इंच भी आगे न बढ़ पाना। कितनी गतिसे मैं जा रहा था और फिर भी कहीं नहीं जा रहा था।"

परमात्माकी दिशामें जो नहीं चल रहे हैं, वे भी पायेंगे कि चल तो बहुत रहे हैं लेकिन पहुँच कहीं भी नहीं रहे हैं।

परमात्मा—यानी स्वयंकी आत्यन्तिक सत्ता।

परमात्मा—यानी स्वरूप।

और, क्या यह ठीक नहीं है कि स्वयंके विरोधमें चलकर कोई कहीं कैसे पहुँच सकता है?

क्या ऐसा ही जीवनमें भी नहीं होता है? नहीं हो रहा है?

जीवनका आनन्द उनका है जो स्वयंमें जीते और स्वयंको जानते और स्वयंको उपलब्ध करते हैं।

एक बुढ़िया बहुत बीमार थी। घरमें वह अकेली ही थी इसलिए बहुत कठिनाईमें पड़ी थी। एक दिन सुबह-सुबह ही दो अत्यन्त भद्र और धार्मिक दीखनेवाली महिलाएँ उसके पास आयीं। उनके माथोंपर चन्दन और हाथोंमें रुद्राक्षकी मालाएँ थीं। उन्होंने आकर उस बुढ़ियाकी सेवा शुरू कर दी और कहा : "परमात्माकी प्रार्थनासे सब ठीक हो जायेगा। विश्वास शक्ति है और विश्वास कभी निष्फल नहीं जाता है।" उस सीधी बुढ़ियाने उनकी बातोंपर विश्वास कर लिया। फिर वह अकेली थी और अकेला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्ति किसीपर विश्वास करना चाहता है। और वह पीड़ामें थी और पीड़ामें मनुष्यका मन सहज ही विश्वासी हो जाता है। उन अपरिचित महिलाओंने दिन-भर उसकी सेवा की। सेवा और दिन-भरकी धार्मिक बातोंके कारण बुढ़ियाका विश्वास और भी बढ़ गया। फिर रात्रिमें उन महिलाओंके निर्देशानुसार वह एक चादर ओढ़कर भूमि-पर लेटी ताकि उसके स्वास्थ्यके लिए पर-मात्मासे प्रार्थना की जा सके। धूप जलायी गयी। सुगन्ध छिड़की गयी। और एक महिला उसके सिरपर हाथ रखकर अबूझ मन्त्रोंका उच्चार करने लगी। और फिर मन्त्रोंकी एक सुर-ध्वनिने बुढ़ियाको थोड़ी ही देरमें सुला दिया। आधी रातको उसकी नींद खुली। घरमें अन्धकार था। उसने दिया जलाया तो पाया कि वे अपरिचित महिलाएँ न मालूम कबकी चली गयी हैं। घरके द्वार खुले पड़े हैं और उसकी तिजोरी भी टूटी पड़ी है। विश्वास अवश्य ही फल-दायी हुआ था! बुढ़ियाको तो नहीं, लेकिन उन धूर्त महिलाओंको। और इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है क्योंकि विश्वास सदा ही धूर्तोंको फलदायी हुआ है।

धर्म विश्वास नहीं, विवेक है। वह अन्धापन नहीं, आँखोंका उपचार है।

किन्तु, शोषणके लिए विवेक बाधा है इसीलिए विश्वासका विष पिलाया जाता है।

विचार विद्रोह है और चूँकि विद्रोहीका शोषण असम्भव है इसीलिए विश्वासकी शिक्षा दी जाती है।

विचार व्यक्तिको मुक्त करता है, ... व्यक्ति बनाता है लेकिन शोषणके लिए ... भेड़ें चाहिए, भीड़का अनुगमन करनेवा... दुर्बलचित्त व्यक्ति चाहिए। इसीलि... विचारकी हत्या की जाती है और विश्वास... पोसा जाता है।

मनुष्य असहाय है, इसीलिए असहा... वस्थामें, अकेलेपनमें विश्वासके लिए तैया... हो जाता है।

जीवन दुःख है इसीलिए दुःखसे पला... करनेके किसी भी विश्वास और आस्था... प्रति शरणागत हो जाता है।

यह स्थिति शोषकोंके लिए, स्वार्थियों... लिए निश्चय ही स्वर्ण अवसर बन जाती है।

धर्म धूर्तोंके हाथोंमें है, इसीलिए ही ... जगत्में अधर्म है।

धर्मकी जबतक विश्वाससे मुक्ति न... होगी, तबतक वास्तविक धर्मका जन्म न... हो सकता है।

धर्म जब विवेककी अग्निसे संयुक्त हो... है, तो ही उससे स्वतन्त्रता, सत्य ... शक्तिका उद्भव होता है। धर्म शक्ति... क्योंकि विचार शक्ति है। धर्म प्रकाश... क्योंकि प्रज्ञा प्रकाश है। धर्म मुक्ति... क्योंकि विवेक मुक्ति है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म, धर्म, धर्म, धर्मका कितना विचार चलता है लेकिन परिणाम क्या है ?

मैं जिसे सुनता हूँ, वही शास्त्र-वचन उद्धृत करता है, लेकिन परिणाम क्या है ?

मनुष्य निरन्तर दुःख और पीड़ामें डूबता जा रहा है, और हम हैं कि अपने सीखे हुए सिद्धान्त दुहराये जा रहे हैं। जीवन प्रतिक्षण पशुताकी ओर झुकता जाता है और हम हैं कि पत्थरोंके पुराने मन्दिरोंमें सदाकी भाँति सिर झुकाये जा रहे हैं।

शब्द—मृत शब्दोंमें हम इतने घिरे हैं कि शायद सत्यको देखनेकी क्षमता ही हमने खो दी है। शास्त्रोंसे चित्त हमारा इतना आबद्ध है कि स्वयं अनुसन्धानमें जानेका सवाल ही नहीं उठता। और, शायद इसी लिए विचार और आचारके बीच अलंघ्य खाई खुद गयी है।

और, शायद इसीलिए जो हम कहते हैं कि हम चाहते हैं, ठीक उसके विपरीत ही हम जिये जाते हैं और, आश्चर्य तो यह है कि यह विरोधाभास हमें दिखाई भी नहीं पड़ता ! आँखें होते हुए भी क्या हम अन्धे नहीं हो गये हैं ?

मैं इस जीवन-स्थितिपर सोचता हूँ तो दिखाई पड़ता है कि जो सत्य स्वयं ही उपलब्ध न किये गये हों, वे ऐसी ही उलझनमें ले जाते हैं।

सत्य स्वयंसे आये तो मुक्त करता है और स्वयंसे न आये तो और भी गहरे बन्धनों-में बाँध देता है। सिखाये हुए सत्योंसे अधिक असत्य और कुछ भी नहीं होता है।

और, ऐसे उधार सत्य जीवनमें अत्यन्त पीड़ादायी स्व-विरोध पैदा करते हैं।

एक पहाड़ी सरायमें एक पाला हुआ तोता था। उसके मालिकने जो उसे सिखाया था, वह उसीको दिन-रात दुहराया करता था, वह कहा करता था : "स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता।" एक यात्री उस सरायमें पहली बार ठहरा था। उस तोतेकी वेदना-भरी वाणी उसके मर्मको छू लेती थी। वह भी अपने देशकी स्वतन्त्रताके युद्धमें अनेक बार क़ैदमें रह चुका था। और वह तोता जब उस पहाड़ीके सन्नाटेको तोड़कर कहता : "स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता", तो उसके हृदयके तार झनझना उठते थे। उसे अपने क़ैदके दिनोंकी स्मृति आती और स्मरण हो आता कि ऐसे ही तो उसकी अन्तरात्मा भी चिल्लाती थी : "स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता !" रात्रि हो गयी तो वह यात्री उठा और उसने स्वतन्त्रताके आकांक्षी उस तोतेको उसकी क़ैदसे मुक्त करना चाहा। यात्री तोतेको उसके पिंजड़ेके बाहर खींचता था लेकिन तोता निकलनेको राज़ी नहीं होता था। और विपरीत अपने सींकचोंको पकड़कर वह चिल्लाता था : "स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता !" बड़ी मुश्किलसे वह यात्री तोतेको बाहर निकाल पाया। उसे आकाशमें उड़ाकर वह निश्चित हो सो गया लेकिन सुबह उठकर ही उसने देखा कि तोता अपने पिंजड़ेमें आनन्दसे बैठा है और चिल्ला रहा है : "स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता !" ■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● आज भारत-सरकारको डर चीनी-बमका नहीं है—उसे डर है बर्मा और पूर्वी पाकिस्तान... मिले उत्तरी-पश्चिमी आसाममें उमड़ते नागा और मीज़ो स्वतन्त्रता-आन्दोलनोंका, ... हिमालयके तलहटी-स्थित पश्चिमी-बंगालकी अराजकतापूर्ण स्थितिका—जहाँ सुनते ... आदिवासी-किसान अपनी सरकार ख़ुद चला रहे हैं। 'खलनायक'की तलाशमें कभी न ... वाले भारतीय प्रचार-यन्त्रने, आशानुसार ही, दोष चीन और पाकिस्तानके मत्थे मढ़ ... है।....वैसे, केन्द्र-सरकारने अपने ढंगसे मौक़ेका फ़ायदा फ़ौरन उठाया है और पाँच सा... चली आती आपद्कालीन स्थितिकी अवधि अनिश्चित कालके लिए बढ़ा दी है।

—द पाकिस्तान टा...

● अब समय आ गया है जब भारतकी जनता अपने शासकोंको कठघरेमें खड़ा करके स... को इस दासतासे मुक्त कर लेगी। बग़ावतकी लपटें नक्सलबाड़ीमें धधक रही हैं...

बग़ावतके इलाक़ोंने बाक़ी हिन्दुस्तानसे अपनेको बिलकुल काट लिया है और ... सारे शासकीय कार्यालय बाग़ियोंके क़ब्ज़ेमें हैं।

—रेडियो पाकिस...

● यही है उस सशस्त्र क्रान्तिपर पहुँचानेवाला मार्ग जो सशस्त्र प्रतिक्रान्तिका उत्तर दे... गाँवोंमें युद्ध-मंचोंकी स्थापना, नगरोंको घेरनेके लिए गाँवोंमें सेनाका जमाव और अन्... नगरोंको विजित करनेवाली राह यही है।....हालके चुनावके बाद साम्यवादी दलके सद... संविद् मन्त्रिमण्डलका साथ छोड़ दिया....उन्होंने तब दार्जिलिंग संघर्षसे सम्बन्ध जोड़ा ... नक्सलबाड़ी तथा अन्य ग्रामोंमें जाकर ग्रामीणोंका नेतृत्व किया और इस तरह उन्हें सश... संघर्षके लिए तैयार करके चीनकी क्रान्तिवाली राह पकड़ी।

—रेडियो पीकिंग प्रसा...

● भारतके किसानोंको सशस्त्र क्रान्तिके लिए भड़काने और अबतक पीकिंगसे इतनी ... रखनेवाली बर्माकी सरकारको उलट-पुलट करनेमें आख़िर साम्यवादी चीनका मंशा ... है?...जान-बूझकर चीन अपनेको अकेला बनाता रहा और हो सकता है कि अब पीकि... अन्तर्राष्ट्रीय अंकमें आनेका विचार बिलकुल ही त्याग चुका है।....क्या पीकिंग ...

बोलते प्रतिबिम्ब

— पुष्प-धन्वा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पताकावाले मार्क्सवादियोंका साथ देकर और ने विनके शासनको डगमगाकर वियतनाम-युद्धमें किसी द्वितीय मोर्चेकी स्थापना करना चाहता है?

—असाही शिम्बुन (जापानी समाचार-पत्र)

● साम्यवादी बहुमतवाली पश्चिमी बंगालकी सरकार पीकिंग-समर्थित नक्सलबाड़ी-उद्वेलन-को दबानेमें हिचकिचायी और इसका फ़ायदा उठाकर उग्रवादी अब सारे बंगाल-प्रदेश और पड़ोसी बिहारमें विद्रोह फैला रहे हैं।····

निःसन्देह नक्सलबाड़ीके किसान-नेताओंको प्रेरणा माओके विचारोंसे मिल रही है। यह माना कि यह आन्दोलन केन्द्रीय सरकारके लिए शाप-समान है, काँग्रेस-पार्टीको भी किसी प्रकारके भूमि-सुधारके गर्वीले श्रेयका अवलम्ब प्राप्त नहीं।

——लन्दन टाइम्ज़

● सरकार नक्सलबाड़ीमें किसी भी ऐसे दलका अस्तित्व नहीं रहने देगी जो चीनके नामकी क़समें उठाता है या मुक्त क्षेत्रकी बात करता है। जो यह मानते हैं कि वे महज़ कुछ बन्दूकों और मुट्ठी-भर तीर-कमानोंकी सहायतासे मुक्त क्षेत्र बना सकते हैं—अवश्य ही पागल हैं।

—अजय मुखर्जी

● अगर क़ानून और व्यवस्था एकाधिकारको ही शह देनेके लिए हैं तो उन्हें तोड़ना श्रमिक-वर्गका पवित्र अधिकार है।····माओत्से तुंग एक सठियाया हुआ व्यक्ति है जो एक हाथमें लाल किताब और दूसरेमें तलवार लेकर ग़लत फ़लसफ़ा पढ़ाता रहा है और चीनकी जनताको बरग़लाता रहा है।

—एस० ए० डाँगे

● संविद् मन्त्रिमण्डलको इतनी समझ होनी चाहिए कि भूमि-क्षुधा, जैसी कि आज नक्सल-बाड़ी क्षेत्रमें है, हमेशा ही उथल-पुथल मचाती है। ये उथल-पुथल और भी उग्ररूप धारण कर लेती है यदि राजनीतिक दल सत्ताधारी हो जानेपर अपने वायदोंको कार्यान्वित नहीं करते। हो सकता है कि अनाभिजात्य, जीवन्त, भूमिके भूखे सन्थाल कुछ अधिक अधीर हो उठें, किन्तु यह तथ्य कि पुलिस-चौकियोंकी स्थापना की गयी है और नये भीषण क़दम उठानेकी तैयारी हो रही है, यह बर्बर तथ्य कि स्त्रियाँ और बच्चे गोलियोंके निशाने बने हैं--अतीव लज्जाका डंका पीट रहे हैं।

—नाऊ

● यदि विद्रोहको दबानेमें पुलिसको कड़ी कार्यवाहीसे रोका गया तो विद्रोहियोंकी हिम्मत और बढ़ जायेगी और तब नरमदलीय लोगोंसे कहते फिरेंगे कि सरकार जनताके सामने शक्तिहीन साबित हुई····इस बीच राज्यपदाधिकारी कम्युनिस्ट जन-विद्रोहको सँभालनेमें शासनको अधिकाधिक असमर्थ बनानेका प्रयत्न करेंगे। इस विषयमें भ्रम अथवा शिथिलता-की कहीं कोई गुंजायश नहीं है।

—थॉट

● विश्वस्त सूत्रोंसे पता चला है कि ज़िलाधिकारीगण सन् १९६४ से ही तत्कालीन काँग्रेस-

[शेष पृष्ठ १६० पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ । ग । स्त

[यह स्तम्भ ज्ञानोदयमें समीक्षार्थ प्राप्त समस्त पुस्तकोंकी स्वीकार-सूचनाके लिए है। चुनी हुई पुस्तकोंकी समीक्षा यथासुविधा प्रकाशित की जायेगी।]

नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली

- नदी यशस्वी है : नरेश मेहता

अखिल भारतीय कवि सम्मेलन, बिजनौर

विदुरा (पत्रिका) सं० ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग'

रामा प्रकाशन, बिजनौर

- धरतीका क़र्ज़ : ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग'

इण्डियन पब्लिकेशन प्रा०लि०, इलाहाबाद

- मनोरंजक संस्मरण : श्रीनारायण चतुर्वेदी
- राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन : जगपति चतुर्वेदी

आत्माराम एण्ड सन्ज़, दिल्ली

- बच्चे और सेक्स शिक्षा : सावित्री देवी शर्मा
- मेरी तैंतीस कहानियाँ : विष्णु प्रभाकर
- विश्वास बढ़ता ही गया : शिवमंगल सिंह 'सुमन'

आदर्श साहित्य संघ प्रकाशन, चुरू

- कला-अकला : मुनि रूपचन्द
- तट दो प्रवाह एक : मुनि नथमल
- नैतिकताका गुरुत्वाकर्षण : मुनि नथमल
- मेरा धर्म-केन्द्र और परिधि : आचार्य तुलसी

साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली

- समसामयिक हिन्दी साहित्य : सं० ह[illegible] वंश राय बच्चन, डॉ० नगेन्द्र, [illegible] भारतभूषण अग्र[illegible]

प्रकाशन प्रतिष्ठान, कानपुर

- सृजन-एक : सं० राजेन्द्र तृषित

अनिल प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली

- क्षितिजकी खोज : अचल राजपूत

भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी

- शान्तिनिकेतनसे शिवालिक : सं० [illegible] शिवप्रसाद [illegible]
- तुलसी आधुनिक वातायनसे : डॉ० [illegible] कुन्तल [illegible]
- पुरातत्त्वका रोमांस : भगवतशरण उपाध्[illegible]

नेशनल एकादेमी, दिल्ली

- तीसरी दुनियाके लिए संघर्ष : [illegible] क्रोजि[illegible] अनु० विजय श्री भार[illegible]
- दो क्रान्तियाँ : आर० एच० ब्रूस लाक[illegible] अनु० विजय श्री भार[illegible]

अमिताभ प्रकाशन, कलकत्ता

- एक टुकड़ा आदमी : मानिक बच्छावत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी अधिकांश कविताएँ इसी प्रकार लिखी गयी हैं। किसी वस्तुको देखते, कुछ सोचते, या किसी मामूली-सी क्रियासे, दिमाग़में कुछ पंक्तियोंका जन्म होता है। उस समय यदि हाथमें काग़ज़-क़लम हुआ तो वे उन विचारोंको तुरन्त ही लिख डालते हैं। नहीं तो बार-बार दोहराकर दिमाग़में बनाये रखते हैं—तबतक जबतक कि उन्हें लिख डालनेका समय न मिल सके।

"पोयम्स आर लाइक रेनबोज़," वे कहते हैं, "कविताएँ इन्द्रधनुषोंकी तरह होती हैं···वे झटपट ओझल हो जाती हैं।"

हाईस्कूलमें बिताये गये चार वर्षोंका ह्यूजकी ज़िन्दगी और विचारोंपर अमिट प्रभाव पड़ा है। उनकी याद करते वे कहते हैं, "मैंने यह सीखा कि कोई काम किये जानेका सिर्फ़ एक तरीक़ा है, कि उसे करना शुरू कर दो, और करते रहो, और खतम कर दो—अगर शुरूमें तुम्हें उसे कर पाना एकदम असम्भव लगे तब भी।"

और अपनी मुसकराती आँखोंमें गम्भीरता भरकर वे कहते हैं, "और मैंने सीखा कि कोई बात कहने या किसी काम-को करनेके लिए ऐसे तरीक़े हैं, जो उस समय और परिस्थितियोंमें स्वीकृत तरीक़े न हों, किन्तु वे बड़े सच्चे और ख़ूबसूरत तरीक़े हो सकते हैं, जो समय आनेपर सभी-द्वारा स्वीकार कर लिये जायें।"

सन् १९२१ में, अपने पिता-द्वारा भेजे गये रुपयेसे कॉलेज-शिक्षा-पानेके लिए उन्होंने कोलम्बिया-युनिवर्सिटीमें दाख़िला लिया। किन्तु न्यूयॉर्क आनेका सबसे बड़ा कारण यह था कि लैंग्स्टनको 'हारलम' देखनेकी बड़ी ख़्वाहिश थी। उस समय तक वह अमरीकाका सबसे बड़ा 'नीग्रो-नगर' बन चुका था। अमरीकाके सभी छोटे-बड़े नगरों-से ही नहीं, वेस्ट इण्डीज़ तकसे नीग्रो वहाँ आ-आकर इकट्ठे हो रहे थे। 'हारलम' मानो आधुनिक नीग्रोकी राजधानी थी। उससे लैंग्स्टनको न जाने कितना स्नेह हो गया। एक ग़रीब मज़दूरकी तरह, और एक सम्मानित श्रेष्ठ लेखककी तरह, उन्होंने दुनियाके प्राय: सभी देशोंके सैकड़ों चक्कर लगाये, किन्तु लौटकर, वे बार-बार 'हारलम'-में ही आये, और आज भी उसके बीचोबीच हो घर बनाकर रहते हैं।

सन् १९२१में ही उनकी वह कविता, जो उन्होंने ट्रेनमें बैठ मिसिसिपी नदी पार करते समय लिखी थी, प्रकाशित हुई। यह उनकी प्रथम प्रकाशित कविता थी। इसे प्रकाशित करनेवाली 'द क्राइसिस' नामक पत्रिकाने, अगले अनेक वर्षों तक, उनकी कई अन्य कविताएं भी स्वीकार कीं।

लैंग्स्टनको कोलम्बिया-युनिवर्सिटी कुछ अधिक पसन्द नहीं आयी। अत: वे अपना अधिकांश समय न्यूयॉर्क घूमनेमें, थियेटर देखनेमें, किताबें पढ़नेमें, या भाषण सुननेमें बिताने लगे। वर्षका अन्त होते ही उन्होंने पढ़ना छोड़ दिया।

विदेश-भ्रमणसे लौटनेपर दोबारा किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कॉलेजमें दाखिला लेनेके लिए पैसे जमा करने के लिए, जब लैंग्स्टन एक होटलमें जूठी तश्तरियाँ इकट्ठा करनेका काम कर रहे थे, उन्होंने सुना कि कवि वाशेल लिण्डसे उस होटलमें ठहरा हुआ है। उन्होंने अपनी तीन कविताएँ साफ़-सुघड़ अक्षरोंमें लिखीं, और सबकी नज़र बचाकर, उन्हें वाशेलकी भोजनकी प्लेटके निकट रख दिया। अगले दिन अनेक समाचार-पत्रोंमें खबर छपी कि वाशेल लिण्डसेने एक तश्तरियाँ धोनेवाले नीग्रो-कविकी खोज की है।

इससे लैंग्स्टनको ख्याति मिली, किन्तु उसकी पैसेकी समस्या हल नहीं हुई। अगले दो वर्षों तक वही काम करते उसने कुछ और भी कविताएँ लिखीं। इस बीच उसे दो पुरस्कार मिले, और कुछ पत्रिकाओंने उसकी कविताएँ खरीदीं। आखिर उसे पैनसेल-वेनियाकी लिंकन युनिवर्सिटीमें पढ़नेके लिए छात्र-वृत्ति मिल गयी—जहाँ सभी अध्यापक 'गोरे' थे, और सभी विद्यार्थी नीग्रो'।

विश्वविद्यालयमें शिक्षा पाते समय लैंग्स्टनने लिखनेका क्रम नहीं छोड़ा। वह लेखक बन, लेखन-वृत्तिसे ही जीविका कमाना चाहता था। किन्तु पैसा कमाया जा सके, सिर्फ़ इस कारण वह 'खराब' रचना नहीं लिखना चाहता था। उसे सिर्फ़ वही लिखना मंज़ूर था जिसकी ओर उसकी रुझान हो। उसीके शब्दोंमें : "मैं गम्भीरता-पूर्वक लिखना चाहता था, और इतनी अच्छी तरह जितना कि मुझसे आता था, 'नीग्रो'के विषयमें....और उस तरहके लेखनको अपनी जीवन-वृत्ति बनाना चाहता था।"

आख़िर जिसने लैंग्स्टनके लिए बन्द पुलियाके द्वार खोले, वह थी मेरी मैकलियन बैथ्यून—नीग्रो-समाजकी एक प्रमुख लीडर। उसने सुझाव दिया कि वह अमरीकाके दक्षिणी प्रान्तोंका दौरा (लेक्चर-टूर) लगाये। वहाँ नीग्रो-जनता पैसे देकर भी उसकी कविता सुनने आयेगी। लैंग्स्टनने वह सुझाव मान लिया, और उसका वह दौरा बहुत अधिक सफल रहा। हज़ारोंकी संख्यामें नीग्रो उसकी कविताएँ सुननेके लिए आये—एक बार नहीं, बार-बार। वे कविताएँ जो मनमें विषाद और उत्तेजना भर देनेवाली थीं; जिनमें उनकी अपनी ज़िन्दगीका वर्णन था, उस ज़िन्दगीका जो सैकड़ों पहियोंके नीचेसे गुज़रकर भी कुचली नहीं गयी थी।

प्रश्न : लिखते समय क्या आपके मनमें किसी विशेष पाठक-वर्गका ध्यान रहता है? या आप किसी विशेष वर्गका खयाल किये बिना ही लिखते हैं?

उत्तर : मैं प्रधानतः अपने सन्तोष और प्रसन्नताके लिए लिखता हूँ, किन्तु निश्चय ही, यह आशा तो रहती ही है कि दूसरोंको मेरी रचनाएँ पसन्द आयें।

प्रश्न : क्या किसीने आपकी शैलीको प्रभावित किया है? किसने?

उत्तर : पॉल लारेंस डनबर, कार्ल सैण्डबर्ग, और डी० एच० लारेन्सने मेरी शैलीको बहुत प्रभावित किया है।

प्रश्न : पुराने लेखकोंमें आप किन्हें अधिक पसंन्द करते हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर : थौमस मान, सामरसेट मॉम, डब्लू० ई० बी० ड्यूबॉय और अर्नेस्ट हैमिंग्वेको।

प्रश्न : आधुनिक लेखकोंमें-से किनकी रचनाएँ आपको अधिक पसन्द हैं ?

उत्तर : कार्सन मैक्कलर्सकी "बैलेड ऑफ़ सैड कैफ़े' और ग्वैनडोलन ब्रुक्सके उपन्यास और कविताएँ मुझे बहुत प्रिय हैं।

प्रश्न : कभी लिखते समय क्या आप झिझकते हैं, इस कारण कि वह रचना आपके पाठक-को या प्रकाशकको पसन्द नहीं आयेगी ? या सम्भावितका ख़याल किये बिना ही, जो-जो मनमें आये वही आप लिखते हैं ?

उत्तर : मैं जो मनमें आता है वही लिखता हूँ और साधारणतः वह प्रकाशकों और पाठकों दोनोंको ही पसन्द आता है।

प्रश्न : अपनी पहली पुस्तक प्रकाशित कराने-में आपको क्या कुछ कठिनाई हुई थी ? कैसी कठिनाई ?

उत्तर : नहीं। कोई कठिनाई नहीं—क्योंकि अनेक पत्रिकाएँ मेरी रचनाएँ प्रकाशित कर चुकी थीं, और मुझे कई पुरस्कार मिल चुके थे।

प्रश्न : प्रकाशन-सम्बन्धी किन समस्याओंका आपको सामना करना पड़ता है ? क्या आप-को सम्पादकों और प्रकाशकोंसे कुछ शिकायतें हैं ?

उत्तर : नहीं। अब मेरे सामने कोई समस्या नहीं है। जो भी मैं लिखता हूँ प्रकाशित किया जाता है।

प्रश्न : क्या आपका कोई 'लिटरेरी एजेण्ट' है ? कितने वर्षसे ? क्या आपके विचार-में लिटरेरी एजेण्ट रखना जरूरी है ? नये लेखकके लिए ? जाने हुए लेखकके लिए ? आपके साहित्यिक जीवनमें एजेण्टका प्रमुख कार्य क्या रहा है ?

उत्तर : मेरे पास पिछले तीस वर्षसे एजेण्ट है। वह नये-पुराने लेखकोंके लिए लाभदायक है। एजेण्ट लेखकके लिए अधिक पारिश्रमिक-का प्रबन्ध करते हैं—और उसे वसूल कर लेते हैं।

प्रश्न : बीटनिक लेखकोंके विषयमें आपका क्या मत है ? आपके विचारमें उनका भविष्य क्या है ? अर्थात्, उनकी रचनाएँ केवल तात्कालिक रुचिकी ही पूर्त्ति करती हैं, या भविष्यमें भी ज़िन्दा रहेंगी ?

उत्तर : कुछ बीटनिक लेखक अच्छे हैं, और सम्भव है कि कुछ वर्ष टिके रहें। निश्चय ही जो 'खराब' लिख रहे हैं, वे अधिक दिन 'सरवाइव' नहीं करेंगे।

प्रश्न : उन भारतीय लेखकोंको जो अपनी रचनाएँ अमरीकामें प्रकाशित कराना चाहते हैं, क्या आप कुछ सलाह देना पसन्द करेंगे ?

उत्तर : गेट ए गुड एजेण्ट।

प्रश्न : क्या आप इस बातका आभास देना पसन्द करेंगे कि अपनी 'बेस्ट-सेलर' पुस्तकसे आपको लगभग कितनी आमदनी हुई ? अन्य पुस्तकोंसे ?

उत्तर : मेरी कोई पुस्तक 'बेस्ट सेलर लिस्ट' या 'बुक ऑफ़ द मन्थ'के लिए नहीं ली गयी। किन्तु सभीसे मुझे अच्छी, सधी हुई आमदनी होती रहती है।

प्रश्न : आपके विचारमें साहित्यमें 'सेक्स'का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या स्थान है? 'लोलिता और ट्रॉपिक ऑफ़ द कैन्सर'-जैसी पुस्तकें अधिक लिखी जानी चाहिए या कम?

उत्तर : ज़िन्दगीका एक अन्तरंग अंग होनेके कारण, 'सेक्स' साहित्यसे परे हरगिज़ नहीं रह सकता····लेखकोंको वही लिखना चाहिए जो उन्हें रुचे।

प्रश्न : आपके विचारमें विवाहित जीवन लेखकके काममें सहायता पहुँचाता है, या बाधा?

उत्तर : मैं नहीं कह सकता, क्योंकि मैंने कभी विवाह नहीं किया।

प्रश्न : क्या आप अपनी ओरसे कुछ कहना चाहेंगे?

उत्तर : कभी शेक्सपीयरने जो कहा था वह मैं सोचता हूँ, सभी लेखकोंके लिए सूत्र-समान बात है—'टु दाइन आँन सेल्फ़, बी ट्रू।'

अन्तिम शब्दोंकी छाया ह्यूजकी आँखों-पर चमकती है। वह उपदेशक नहीं है। जो सूत्र वह दूसरोंके सामने रख रहा है, उसका उसने स्वयं [illegible]से ही, ज़िन्दगी-भर पालन किया है—मामूली मज़दूरकी तरह काम करते हुए भी और श्रेष्ठ अमरीकी विश्व-विद्यालयोंमें 'क्रियेटिव राइटिंग' पढ़ाते हुए भी! जब उसकी आयु सिर्फ़ चौबीस वर्ष थी, उसने लिखा था: "हम, इस पीढ़ीके नीग्रो कलाकार, जो नयी रचना करनेमें तल्लीन हैं, अब अपने वैयक्तिक काली-खालवाले व्यक्तित्वको, बिना किसी शर्म या भयके प्रकाशमें लानेका इरादा रखते हैं। यदि यह प्रयत्न 'गोरे' लोगोंको पसन्द आता है, तो हमें खुशी है। यदि नहीं, तो इसकी हमें चिन्ता नहीं।···हम अपने मन्दिर आनेवाले कलके लिए बना रहे हैं, इतने मज़बूत जितना कि हमें बनाना आता है और हम जैसे पर्वतकी चोटीपर खड़े हैं—स्वयं अपने अन्दर स्वतन्त्र।"

यह स्वाधीनताके साधककी चुनौती थी, और इसे अपनी एकमात्र बैसाखी बनाकर ही वह आज तक जिया है। जीयेगा। आने-वाले कल तक। ■

[पृष्ठ १५५ का शेष : बोलते प्रतिबिम्ब]

सरकारका ध्यान कम्युनिस्टोंके सुनियोजित अभियान और संगठनकी ओर खींचते रहे। स्पष्ट है कि तत्कालीन काँग्रेस-सरकारने चेतावनीको अनसुना कर दिया। —द करेंट

● किन्तु नक्सलबाड़ीकी समस्या गम्भीर है कितनी? जैसा आज तक चलता रहा है उसके लिए कोई भी शासन माफ़ नहीं किया जा सकता। दूसरी ओर, शासनका वर्तमान राज-नीतिक ढांचा कुछ ऐसा है कि बिना गम्भीर राजनीतिक हलचल पैदा किये शासन एक सीमा-से अधिक सख्ती नहीं कर सकता।····ऐसी स्थितिमें बातचीत करके किसी समझौतेपर पहुँचनेका प्रयत्न ही एकमात्र सम्भावना है। —इकनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली ■

ए-८०, निज़ामुद्दीन ईस्ट
नयी दिल्ली-१३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन
और राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी साधिका
तथा भारतीय भाषाओंकी
सर्वोत्कृष्ट सर्जनात्मक साहित्यिक कृतिपर
प्रतिवर्ष एक लाख रुपये
पुरस्कार - योजना - प्रवर्तिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

BHARATIYA JNANPITH

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध और अप्रकाशित सामग्रीका अनुसन्धान और प्रकाशन तथा लोकहितकारी मौलिक साहित्यका निर्माण—लोकोदय मूर्तिदेवी एवं माणिक-चन्द्र ग्रन्थमालाके अन्तर्गत

संस्थापक
शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

आधुनिक भावबोध, कला-संचेतना और नवीनताका प्रतिनिधि मासिक

ज्ञानोदय

लेखन - प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति और उपलब्धि परिचायिनी मासिकी

सम्पादकीय एवं प्रधान कार्यालय : ६ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०/२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५
प्रमुख वितरक : बैनेट कोलमैन ऐण्ड कम्पनी लि०, बम्बई-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai

ग्रामोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धांगध्रा
केमिकल
वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर
साहूपुरम् में
डाकखाना : अरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक
धांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हॉर्निमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई—१

टेलीफ़ोन : २५१२१८-१९-१०

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक भावबोध, कला संचेतना और नवीनता का प्रतिनिधि मासिक

अक्तूबर : १९६७

ज्ञानोदय का अगला अंक

शेष शताब्दी विशेषांक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता या कहानी ?

[अशोक आत्रेय : ज्ञानोदयका अगस्त अंक यथा समय मिल गया था। इसमें अपनी रचना देखनेपर प्रसन्नता अनुभव हुई। ज्ञानोदयमें प्रकाशनार्थ भेजने और उसका स्वीकृत-पत्र प्राप्त होने तक मेरे मनमें वह एक 'कहानी' के रूपमें थी, आपके सम्पादनसे वह 'कहानी' से 'कविता' में ट्रान्सफ़ार्म हो गयी, मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ ! मेरी हार्दिक इच्छा और आवश्यकता उसे कहानी-के रूपमें ही पानेकी है, आशा है, आप उक्त सम्बन्धमें मुझे सान्त्वना दिलवा सकेंगे। अपने कई मित्रों और पाठकोंकी इसी सम्बन्धमें उल्टी प्रतिक्रिया ही मुझे मिली है कि उक्त रचना 'फिर वही मैं : वही शहर' मेरा एक कथा-प्रयास ही है—वस्तुतः मेरी भी यही मान्यता है। —बीकानेर]

●

[गुरुदयाल : आपके ज्ञानोदय (मई अंक) में 'ख़ामोशीका गीत' पढ़ा। वह शीर्षकसे ही गीत है वैसे सारी रचना गद्यमें लिखी गयी है। आपने उसे कविताकी तरह कम्पोज़ करवा दिया है.........। दिल्ली]

●

[श्री अशोक आत्रेयकी कहानी 'कविता' की तरह लिखी हुई थी और रूप-साम्यसे कविताके अन्तर्गत चली गयी। श्रीमती अमृता प्रीतमकी रचना हमने कविताकी तरह तोड़ दी थी क्योंकि वह ध्वनि-साम्यसे कविता ही है। वस्तुतः ये दोनों रचनाएँ 'कहानियाँ' हैं—अब पाठकोंकी जो भी प्रतिक्रिया हो।

—सम्पादक]

प्रश्न आधुनिकताका

[कृष्णकुमार द्विवेदी : ज्ञानोदयके सितम्बर अंकमें 'आधुनिकता : कुछ सीमाएं और अकर्मसे कर्मकी ओर' कुबेरनाथ रायका लेख वास्तवमें भारतीय सन्दर्भ-में बहुत कुछ सही दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। भारतमें आधुनिकताको सामान्य जन बहुत ही छिछले स्तरपर स्वीकार कर रहा है और उसका कारणमात्र यही है कि आधुनिक संचेतनाके बिम्ब मात्र बौद्धिकोंके दिमाग़ों तक सीमित रह गये हैं। सामान्य जनसे मेरा तात्पर्य उन व्यक्तियोंसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी है जो दिमागी तौरपर बौद्धिक भी हैं और कमोबेश परम्परा अथवा रूढ़िके पोषक भी। साथ ही आधुनिकताको बौद्धिकोंने जिस स्तरपर उधेड़ा-बुना है, उसका भी कोई असर नहीं हो पा रहा। उसके मूलमें तथ्य यही है कि समूल रूपसे आधुनिकताको स्वीकार करनेकी अड़चन! यह अड़चन भी अस्वाभाविक नहीं, क्योंकि जैसा कि लेखमें व्यक्त किया गया है, आधुनिकता-की पूर्णतासे हम सभी अनभिज्ञ हैं। आधुनिकता काल-सापेक्षतामें गतिकी द्योतक है। इसका अर्थ यह हुआ कि हम एक ही कालमें आधुनिक भी हैं और ग़ैर-आधुनिक भी। मूल्यों और प्रतिमानोंके प्रति यदि सजगतामें कमी है तो काल-विशेषकी गतिसे तालसे ताल मिलाकर नहीं चल सकते। यह गति शिथिलताका द्योतक है और यही कारण है कि हम काल-विशेषकी गतिसे अलग हैं, या पीछे हैं जो सही सन्दर्भोंमें आधुनिकतासे पीछे रहने जैसी बात है।

—रीवाँ]

●
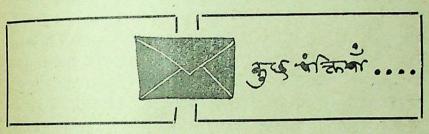
[आचार्य पुष्पदन्त : लक्ष्मीकान्त वर्मा आधुनिकताको काल-निरपेक्ष मानकर नियतिवादी होनेसे उसकी रक्षा करना चाहते हैं। आधुनिकताको काल-सापेक्ष माननेका अर्थ वैज्ञानिक दृष्टिकोणका समन्वित होना है, जब कि उनका दृष्टिकोण मूलतः स्थितशील और इतिहास-बोधका विरोधी है। उन्होंने अपना यही दृष्टि-कोण 'कल्पना' के लेखोंमें भी व्यक्त किया है। आधुनिकता वैज्ञानिक दृष्टि समन्वित प्रश्नाकुलता तथा स्थापितके विरुद्ध विद्रोहमें प्रकट होती है, न कि 'विकल्पकी स्वतन्त्रता, अरागात्मक दृष्टि और स्वआचरणकी छूट' में; जैसा कि विवेच्य लेखमें स्थापित किया गया है। ये तीनों स्थितियाँ स्थापितकी कृपापर आधारित हैं, अतः इन्हें स्वीकार करना स्थापितकी गुलामी ओढ़ना तथा सच्चे अर्थोंमें नियतिवादी बनना है। ईसा और गान्धी आधुनिक थे, क्योंकि वे इतिहासमुक्त थे; यह आधुनिकताका यान्त्रिक प्रयोग है। आधुनिकता एक प्रक्रिया है, न परिप्रेक्ष्य और न मूल्य—यह अभी इन विद्वान् लेखकको समझना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
शेष है। 'थीसिस' और 'एण्टीथीसिस' के द्वारा अपनी बातका समर्थन करके उन्होंने इन शब्दोंको उनके सन्दर्भसे च्युत करके ही नहीं प्रस्तुत किया है, वरन् उनका अर्थ भी ग़लत लिया है। वे न द्वन्द्वके सिद्धान्तसे परिचित हैं और न इतिहास-बोधसे। यही कारण है कि उन्होंने अनेक भ्रान्तिपूर्ण धारणाएँ इस लेखमें प्रस्तुत की हैं; जैसे 'इतिहासकी कालदृष्टिके अनुसार जो भी आज है वह आधुनिक ही होगा'। इतिहासके प्रति यह दृष्टिकोण अज्ञानका सूचक है। इतिहास-बोधमें आधुनिकताकी प्रक्रिया सदैव स्थापितके विरुद्ध विद्रोहके स्वरको उजागर करती है तथा प्रश्नाकुलताकी प्रवृत्तिसे युक्त होनेके कारण विवेककी कसौटीपर कसे बिना कुछ भी स्वाकार नहीं कर पाती है। इतिहास-बोधकी ही देन है कि हम मानवकी पूर्ण स्वतन्त्रताकी आकांक्षा और माँग करनेकी स्थितिमें आ सके हैं। लक्ष्मीकान्तजीका बोध सामन्तवादी संस्कारोंसे विजड़ित और अवैज्ञानिक होनेके कारण ही मोहम्मद तुग़लक़को इतिहास-मुक्त मान सका है। समस्त वाग्जालके बावजूद भी वे यह नहीं समझ पाये कि इतिहास-मुक्ति क्या है? सम्भवतः उन्हें यह घोषणा करनी थी कि पन्तजी अनाधुनिक हैं, और उसीके लिए यह सारा बँधान बाँधा गया है। परिमल-गुटके ये अधिकारी प्रवक्ता निजी वैमनस्य और साहित्येतर विवादोंको बार-बार सामने लाकर हिन्दी पाठकोंको परेशान करते हैं। चुक जानेके कारण उनके पास नया कुछ कहनेको तो है नहीं, फलतः अपनेको बार-बार दुहराते हैं। 'नये' के नामपर जो कवि, कहानीकार या लेखक स्थापित हो चुके हैं, उन्हें सदैव यह दुश्चिन्ता रहती है कि उनसे आगेकी पीढ़ी कहीं उन्हें पदच्युत न कर दे, अतः वे पूर्ववर्तियोंके समान ही उत्तरवर्तियोंको भी अनाधुनिक घोषित करना अपना कर्त्तव्य मानते हैं। विद्रोही पीढ़ीकी अस्वीकृतिका यही रहस्य लक्ष्मीकान्तजीके लेखका उद्देश्य है। उदासीनताको, जो निष्क्रियताका पर्याय है, एक मूल्यके रूपमें स्वीकृति प्रदान करनेका स्पष्ट कारण युयुत्साका विरोध है। युयुत्सा-विरोधी यथा स्थितिवादी लक्ष्मीकान्त 'आउटडेटेड' हो चुके हैं। प्रस्तुत लेखमें व्यक्तिको इतिहाससे काटकर 'शुद्ध मानव' के रूपमें देखनेका जो आग्रह किया गया है, वह मानसिक ऐय्याशी और यूटोपिया मात्र है। आधुनिकताकी चुनौतीसे बच निकलनेका यह प्रयास बृहत्तर यथार्थकी अस्वीकृति है, जो परम्परावादियोंका मुख्य लक्षण है। आजके सन्दर्भमें आधुनिकता 'अनुपातात्मक शहादत और अनुपातात्मक पैग़म्बरी' बतायी गयी है, यह दृष्टिकोण मध्यकालीन तथा

[शेष पृष्ठ १३७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्तूबर १९६७

वर्ष : १६

अंक : ४

पूर्णांक : २३२

हम तो यह चाहते थे
जिन्दगीको और अच्छी पृष्ठभूमि मिले
और अच्छी तरह रक्खें
सजाकर यह चित्र
और गहरे रंग उभरें...
मगर हम ही
प्रसंगों से कट गये, खुद...
—दुष्यन्त कुमार

सज्जा :
बीरेश्वर बनर्जी

मुखपृष्ठ :
मदन सरकार

९, अलीपुर पार्क प्लेस
कलकत्ता–२७

आ । धु । नि । क

■ विशेष-स्तम्भ :

■ अन्य :

■ कविताएँ :

■ कहानियाँ : अन्य कथा-विधा :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

शेष शताब्दी में क्या होगा ?...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

......उत्तर के लिए

शेष शताब्दी विशेषांक । पृष्ठ ३०० । मूल्य ३ रुपये

नवम्बर अंक २५ अक्तूबर को प्रकाश्य :

ज्ञा । नो । द । य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मैं केवल उस चेहरे की तरफ़ देखता हूँ, जो मुझे प्रिय है.....'—इल्या एहरेन्बुर्ग

सोवियत लेखक इल्या एहरेन्बुर्गका नाम भारत और भारतीय साहित्यकारोंके लिए नया नहीं है। वहाँके समकालीन लेखकोंकी भीड़में जैसे आज बोरिस पास्तरनेक और एव्तुशेन्कोके नाम अलगसे महत्त्वपूर्ण हो गये हैं वैसे ही पहले कथा-साहित्यमें शोलाखोव और विचार-साहित्यमें एहरेन्बुर्गके नाम महत्त्वपूर्ण थे। 'सोवियत लिटरेचर'का कोई अंक उठाकर देख तो यह मुशकिलसे पाया जाता है कि लेखकोंमें-से कोई अपने किसी लेखन, चिन्तन, आन्दोलन या क्रान्तिकी दृष्टिसे अलग दिखाई दे। हर लेखक समाज-कल्याण-कारी बात करता है, हर लेखक युद्धपर लिखता है, हर लेखक कलाकी जगह उप-योगितापर ज़ोर देता है, हर लेखक सरकारी पुरस्कार पा लेता है। हर लेखककी रचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
उसी तरहके दूसरे लेखककी रचनासे मिलती-जुलती होती है। दूसरे शब्दोंमें यह कह सकते हैं कि साधारण लेखकोंकी जितनी बड़ी भीड़ सोवियत रूसमें दिखाई देती है उतनी बड़ी भीड़ और किसी देशमें देखनेमें नहीं आती। ऐसी स्थितिमें अगर कोई लेखक मुक्त चिन्तनकी दिशामें आगे बढ़ता है तो वह बाक़ी दुनियाकी नज़रमें अलग दिखाई देता है। पुश्किन, गोर्की, मायकोव्स्की और दोस्तोयव्स्की 'अलग' लेखक थे लेकिन स्तालिन-युगमें सरकारी दरबारियों और उनके सिद्धान्तोंके व्याख्याताओंकी भीड़ बढ़ती ही चली गयी।....एहरेन्बुर्ग इन सबसे अलग रहे हैं। उपन्यासकार तथा विचारकके रूपमें वे विशेष प्रसिद्ध रहे हैं। उनके विचारोंमें पश्चिम विचारोंका-सा खुलापन जो दिखाई देता है वह उनके लम्बे पेरिस-निवास और मातिस-जैसे चित्रकारोंकी सोहबतके कारण ही। एहरेन्बुर्गकी मृत्यु (३१ अगस्त १९६७) हृदयगति बन्द हो जानेके कारण ७६ वर्षकी अवस्थामें हुई। इतनी उम्रमें भी वे हमेशा उत्साही और आशावादी रहे हैं और विश्वके हर व्यक्तिके प्रति उनके मनमें प्रेम रहा है।....

याद कीजिए, जब एहरेन्बुर्गने भारत-यात्रा की थी १९५५में। तभी 'इस्कस' से एक पैम्फ़लेट छपा था—'इण्डियन इम्प्रेशन्ज़'। इस पुस्तिकामें भारतकी बड़ी प्रशंसा है, इस देशके प्रति एहरेन्बुर्गने बड़ी जिज्ञासा बतायी है। उन्होंने लिखा है—"भारतके काली-मन्दिरमें बिजलीके लट्टू नहीं जलाये जाते क्योंकि भारत धार्मिक कार्यमें विज्ञानको प्रवेश नहीं देना चाहता, जबकि कलकत्ताकी भरी सड़कपर आप ब्यूक कारमें बैठे हों तो गौमाता उससे आकर स्वतन्त्रतापूर्वक टकरा सकती है। यहाँ वे प्रभावित हुए थे पण्डे-पुजारियोंसे, कबीरसे, रवीन्द्रनाथसे, प्रेमचन्दके लेखनसे और सबसे अधिक श्री जवाहरलाल नेहरूसे। उनके शब्दोंमें श्री नेहरूके व्यक्तित्वका वही महत्त्व है जो महत्त्व अमृता शेरगिलके चित्रोंका—पश्चिमी विकास और भारतीय परिवेश।

एहरेन्बुर्गके प्रमुख ग्रन्थ हैं : "द एक्स्ट्राआर्डिनरी एडवेन्चर्स आँव जुलियो जुरेनितो', 'द लव आँव जीन ने', 'ए स्ट्रीट इन मास्को', 'द फ़ॉल आँव पेरिस' (हिन्दीमें भी उपलब्ध), 'एशिया एट वार', 'द स्टार्म', 'द नाइन्थ वेव', 'द थॉ', 'द स्प्रिंग', 'मेन, इयर्स-लाइफ़'के छह भाग। एहरेन्बुर्गने अपनी आत्मकथाके छठे भागमें ('पोस्टवार इयर्स' : १९४५-१९५४) १९६५ में पुस्तकको समाप्त करते लिखा था :

"आज मेरे मनमें अनेकानेक इच्छाएँ हैं लेकिन पर्याप्त शक्ति नहीं है। मैं इस लेखनको एक आत्मस्वीकृतिके साथ समाप्त करूँगा : मुझे भेदभावसे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परदों-काली खिड़कियोंसे, कठोरतासे, अकेलेपनकी ज़्यादतियोंसे घृणा है। जब मैं उन दोस्तोंके बारेमें लिख रहा था जो आज नहीं रहे, मैं लिखना बन्द कर देता था और अपनी खिड़कीके सामने जा खड़ा होता था, उसी तरह, जैसे शोक-सभामें श्रद्धांजलिके लिए खड़ा हुआ जाता है—मैं हरियाली या बर्फ़ ढँकी पहाड़ियोंको नहीं देखता था—मैं उसी चेहरेकी तरफ़ देखता हूँ जो मुझे प्रिय है।....मुझे जीवनसे प्रेम है, मैं प्रायश्चित्त नहीं करता, मैं इस बातका सुख नहीं मनाता कि मैंने कैसा जीवन जिया या मुझे कैसे अनुभव हुए। मुझे दुःख है तो इस बातका कि कितना कुछ रह गया जो मैं कर नहीं सका, मैं लिख नहीं सका, कि मैंने कम तकलीफ़ें भोगी हैं, कि मैं

आइन्स्टीन और एहरेन्बुर्ग

पर्याप्त प्यार नहीं कर पाया....। लेकिन जीवन ऐसे ही चलता है, क्योंकि दर्शक एग्ज़िटकी तरफ़ भागे जा रहे हैं जबकि नायक अभी 'कल ऐसा होगा कि मैं....' वाला गीत गा ही रहा है....और कल होना क्या है? दूसरा नाटक, दूसरी तरहके पात्र...!"]

प्रश्न : लेकिन वे युद्धके दिन? क्या आपके लेखनपर युद्धका असर गहरा हुआ था?

उत्तर : हाँ, मुझे याद है जिस दिन मैंने एटमबम गिराये जानेकी खबर पढ़ी थी। जिस हॉररमें हम लोगोंने जीवन बसर किया है वह भी मानवीय संवेदनोंको बदलनेमें असमर्थ रहा था। लेकिन अब ऐसा कुछ हुआ है कि स्वीकृत नैतिकता-आध्यात्मिकतासे हम कोसों दूर जा पड़े हैं। लेकिन आज भी मैं कोरोलेन्कोके वे शब्द याद करता हूँ जिन्हें मैंने चौथे दरजेमें अपनी कॉपीपर उतार रखा था—'मनुष्य सुखी करनेके लिए जनमा है जैसे पक्षी उड़नेके लिए।' हिरोशिमा १९वीं शताब्दीकी अन्तिम विसंगति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। सबसे बड़ी तो व्यक्तिगत हानियाँ थीं। एकने कहा : उसकी समझ चली गयी, दूसरेने बताया : घर छिन गया। एक युवा लेफ़्टिनेण्ट का नाम ही 'पीटर'से और कुछ हो गया। वह जब घर लौटा, उसको अपनी पत्नीके पतिसे परिचय प्राप्त करना पड़ा। ९ जुलाईको आंशिक सूर्य-ग्रहण था, सहसा अँधेरा छा गया। हवा तेज़ हो गयी। पंछी डरकर उड़ने लगे। तभी नौ सालका एक बच्चा कहता है—'अरे ये कुछ नहीं है। बम गिरनेवाले दिनका एक बटा सौ भी नहीं।'····

प्रश्न : युद्धके समयकी कोई और घटना, जिसका आपके मनपर विशेष असर पड़ा हो ?

उत्तर : उन्हीं दिनोंका बात है। युद्धके बाद मैं कॉफ़ी-हाउसमें बैठा था कि एक अपरिचित युवा लड़की मेरे पास आयी। बोली, 'आप युद्धपर उपन्यास लिखेंगे ही। अच्छा हो कि उन दिनों लिखी मेरी डायरी आप पढ़ लें। बादमें मैं यह वापस ले लूँगो।' वह डायरी छू जानेवाली थी—रोटी और खूनका वज़न उसमें एक साथ लिखा था—'आज नाद्या मर गया, आज वेसिलेव् नहीं रहा, आज बहन शेष हो गयी····।' फिर रातोंके वर्णन थे—'कल सारी रात अन्ना केरेनिना', 'कल सारी रात मदाम बावेरी'—वह लड़की जब डायरी वापस लेने आयी तो पूछा था मैंने—'लेकिन उन दिनों तो हमेशा ब्लैक-आउट रहता था, तुम पढ़ कैसे लेती थीं ?' उत्तर दिया उसने—'हाँ, उजेला तो नहीं था। बात यह है कि उन अँधेरी और भयावह रातोंमें मैं अकेली बैठी उन किताबोंको सारी रात याद करती रहती थी जिन्हें मैंने पहले कभी पढ़ा था। इस काल्पनिक पठनसे मुझे युद्धके खिलाफ़ लड़नेकी शक्ति मिलती रहती थी।,'····ये यादें वाक़ई भयानक हैं।····'द थॉ' का पूरक उपन्यास 'द स्टॉर्म' मनके अन्दर उठनेवाले इसी तूफ़ानका दस्तावेज़ है।

प्रश्न : आप कई लोगोंसे मिले हैं—पिकासोसे, आइन्स्टीनसे, ल' कर्बूजियरसे····

उत्तर : हाँ। उन सबकी स्मृति मेरा बल है। निकटसे जब किसी व्यक्तिको देखते हैं तो वह और भी महान् लगता है मुझे। ल' कर्बूज़ियरसे जब मैं ४२ वीं स्ट्रीटमें एक फ्रेंच रेस्तराँमें मिला था तो वह सारे समय युद्धके समाचार ही पूछता रहा। कहा तो यह—'मैं अब साठका हो रहा हूँ। लेकिन मैं निर्माणके नामपर अबतक कुछ भी नहीं कर सका और यह सच है कि लोग अब मुझे काम करने भी नहीं देंगे। आयम ए मैन ऑव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डिफ़ीट्स।'.... अब तो कर्बूज़ियरको सब जानते हैं--उसने रियो-डि-जानेइरो, लयॉन्स, न्यूयॉर्क, चण्डीगढ़में अद्भुत करिश्मा दिखाया है। मैंने उससे कहा था—'तुम स्वभावमें ही रोमाण्टिक हो।' वह हँसकर बोला था—'आज जब न्यूयॉर्कको देखकर सब निर्माणके पक्षधर हो गये हैं हम तब भी कहते हैं कि यह सब परियोंका एक ध्वस्त लोक है... अमेरिकामें लोग रहते नहीं है, शरण खोजते हैं !....मैं तो न्यूयॉर्कसे चमत्कृत हूँ। मैंने वहाँ ऐसी जगह भी देखी है जहाँ कारमें बैठकर फ़िल्म देखी जा सकती है। और तो और, न्यूयॉर्कके सेन्ट्रल पार्कमें मैंने बग़ैर हेड लाइटकी कारें देखीं, बादमें मुझे बताया गया कि दम्पति होटलमें कमरा ढूँढनेकी बजाय अपनी कारका हेड लाइट हटा देते हैं....। वहाँ मेरा एक परिचित मित्र था। वह अपना शर्ट लाण्ड्रीमें देनेकी बजाय रोज़ एक नया शर्ट ख़रीद लाता था—सुविधा उसीमें थी। वह जवान देश है और वहाँके लोग वृद्ध नहीं होते हैं—दे लिव एट फ़ुल स्ट्रेंथ एण्ड देन दे कोलैप्स !....'

प्रश्न : लेकिन यह प्रगति कहाँ ले जायेगी ?

उत्तर : मुझे केवल यह कहना है कि शक्ति, साहस, समय और संस्कृति इन तीनोंको एक साथ ही देखना होगा। यदि ऐसा नहीं कर पाये तो हम किसी भी रंग, जाति या देशके हों, हमारे मृत्युधर्मी शस्त्र हमारा रक्त पीये बग़ैर नहीं रहेंगे।

प्रश्न : नीग्रो-समस्याके बारेमें आपके क्या विचार हैं ?

उत्तर : मैंने वहाँकी यात्रा भी की है। जब आइन्स्टीनसे प्रिन्स्टनमें मिला था तो बात करते हुए मैंने बतलाया था कि मैं नीग्रो लोगोंसे मिलने जा रहा हूँ। आइन्स्टीनने कहा था—'नीग्रो बहुत बुरी दशामें रह रहे हैं। उन्हें देखकर अपने आपपर शर्म आती है।'...थोड़ी देर बाद जब हम दोनों बगीचेमें बैठे थे, आइन्स्टीनने एक रूपवती अमेरिकी अभिनेत्रीका क़िस्सा सुनाया कि उसने आकर उनसे पूछा था—'अगर तुम्हारा बेटा आकर यह कह दे कि वह किसी नीग्रो-लड़कीसे विवाह करने जा रहा है, तो ?' आइन्स्टीनने उत्तर दिया था—'मैं सम्भवतः अपने बेटेसे यही कहूँगा कि मैं तुम्हारी फ़ियान्सीसे मिलना चाहता हूँ लेकिन अगर मेरा बेटा यह कहे कि वह तुमसे शादी करना चाहता है तो मैं निश्चित ही आपेसे बाहर हो जाऊँगा और मेरी नींद और भूख दोनों ही ग़ायब हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जायेगी।'....आइन्स्टीनका यह उत्तर अधिक वैज्ञानिक था।

प्रश्न : जीवनका कोई सूत्र दे सकते हैं ?

उत्तर : यह कह सकता हूँ जो मेरे संस्मरणोंको ग़ौरसे पढ़ पायेगा, उसे मालूम होगा कि जीवन-भर शक्तिसहित न्यायको सौन्दर्य, नयी समाज-व्यवस्था और कलात्मकताके साथ मैं जोड़ता रहा हूँ।

प्रश्न : आलोचक क्या कहते हैं ?

उत्तर : आलोचक शायद ही लेखकको समझ पाते हैं क्योंकि वे कई तरहके कामोंमें लगे रहते हैं, अधिकांश एनिवर्सरीज़के हिस्से होते हैं....अब पश्चिमी पत्रकार मुझसे इसलिए नाराज़ हैं कि मैं प्रवृत्तिधर्मी हूँ, राजनीति-पर मेरा झुकाव है और मैं सत्यको छोटे सिद्धान्तोंमें क़ैद कर देता हूँ। और रूसी समीक्षक इसलिए असन्तुष्ट हैं कि मैं अतिशय व्यक्तिवादी हूँ, कि मैं महत्त्वपूर्ण पात्रोंका चित्रण करता हूँ और मैं रूपवादी हूँ—यहाँतक कि मुझे रायटर्स-क्लबमें बुलाकर ख़ुश्चेवकी रिपोर्ट भी पढ़नेको दी गयी है!....लेकिन मैं कहता हूँ कि कोई एक ही पैरसे यात्रा नहीं कर सकता....

प्रश्न : वृद्धावस्थाके बारेमें आपके विचार ?

उत्तर : वृद्धावस्थाको मैं ख़ाली दीवार नहीं मानता, उस दीवारमें भी दरवाज़े और खिड़की हो सकते हैं। पिकासोको लीजिए। उसका नया चित्र—'द रेप ऑव द सेबाइन्स'—यह उसने डेविसके चित्रके आधारपर बनाया है कि जब रोमवासी सेबाइन औरतोंको विवाहके लिए भगा लाते थे तो युद्ध छिड़ जाता था लेकिन जबतक सेबाइन और रोमवासी युद्धमें जुटे होते थे, वे औरतें माँ बन चुकी होती थीं और वे उस रक्तकाण्डको रोक देती थीं। पिकासो ८० का है और उसने यह नयी गुएर्निका बतायी है जिसमें युद्धका प्रकट द्वन्द्व निर्मित है।...ऐसा लगता ज़रूर है कि वृद्धावस्थामें आदमी चुक जाता है लेकिन मैं महसूस करता हूँ कि अधिक गहरे अनुभव और गहरी आन्तरिक स्वतन्त्रता इस उम्रकी ही देन है। लेकिन मैं अब भी उन लोगोंकी बात सुननेको तैयार हूँ जो मेरे प्रश्नोंका उत्तर देनेके लिए पर्याप्त बुद्धिमान हों।

प्रश्न : सीधे साहित्यसे सम्बन्ध रखनेवाले कुछ प्रश्न आपके सामने हैं ? उपन्यासके बारेमें कुछ कह सकें....

उत्तर : जब आप किसी गगनचुम्बी अट्टालिकाकी छतसे न्यूयॉर्क नगरको देखते हैं तो जो दृश्य आपको दिखाई देता है वह उतना ही नीरस और मनहूस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है, जितना किसी प्रबन्ध-ग्रन्थका संख्याओं और आंकड़ोंसे भरा पृष्ठ, अथवा कोई नक्शा या चार्ट। सभी सड़कें और रास्ते सीधी रेखाओंकी तरह बिछे हैं, निश्चित फ़ासलेपर एक दूसरेको काटते हुए : और ऐसा प्रतीत होता है जैसे वहाँ आदमीकी ज़िन्दगी भी सीधी और सपाट रेखाओं-पर चलती है। लेकिन नोत्रदामकी छतसे पेरिस नगर ऐसा नहीं लगता। उलझे हुए जाल-जैसी सड़कों और किसी अज्ञात शक्तिसे आपसमें सम्बद्ध-सी विभिन्न युगोंका प्रतिनिधित्व करती हुई इमारतों, विस्मय-विमुग्ध कर देनेवाली वृक्षावलियों और खुले मैदानों तथा मानवीय भावनाओं और उद्वेगोंका विस्मयकारी गुत्थियोंसे भरा पेरिस जैसे रंग-विरंगे पत्थरों और चट्टानोंके जंगलकी याद दिलाता है, जैसे वह सदियोंका वन-प्रान्तर हो। मुझे ऐसा लगता है कि उपन्यासको न्यूयॉर्कके बजाय पेरिस-की तरह होना चाहिए। उपन्यास लिखनेके लिए एक सुस्पष्ट योजना, अथवा ढाँचा तैयार करनेके लिए आवश्यक साधन-सामग्री मात्र ही यथेष्ट नहीं होती, उसके लिए सूक्ष्म निरीक्षण एवं गम्भीर विचार ही पर्याप्त नहीं, उपन्यास लिखना आरम्भ करनेसे पहले लेखकको स्वयं अपने उपन्यासको जीना चाहिए, उसमें घुलमिल जाना चाहिए, उसे अपने सम-कालीनोंके दुःख और सुखको, वेदना और आनन्दको स्वयं अनुभव करना चाहिए, उसे अपने बीच उन गुत्थियोंको, यहाँतक कि उन अन्तर्विरोधोंको भी ढूँढना चाहिए, जिनके बिना वास्तविक जीवन असम्भव है।

प्रश्न : भारतीय साहित्यके बारेमें आपके विचार जानकर खुशी होगी····

उत्तर : अपनी भारत-यात्राके बाद यह जान सका हूँ कि उस महान् देशमें कितनी बड़ी आध्यात्मिक सम्पत्ति छिपी पड़ी है। हम सब प्राचीन भारतके—उसके साहित्य, उसकी उत्कृष्ट कला और उसके ज्ञान-भण्डारके—बहुत ऋणी हैं। आधुनिक भारत आज पीछे नहीं आगेकी तरफ़ देख रहा है। वह भविष्यका निर्माण कर रहा है—अपनी रचनात्मक उद्भावनाओंमें वह उन्हीं अप्रतिम विशेषताओंको प्रदर्शित कर रहा है जिनकी झलक हमें अशोकके शिला-लेखों और कालिदासके नाटकोंमें, एलोराकी शिल्पकला और अजन्ताके चित्रोंमें देखनेको मिलती है। यह एक सच्ची भावना है, ऐसी मानवता जो किसी सस्ती सजावटी चीज़के लिए नहीं बल्कि ऐसी वस्तुकी प्राप्तिके लिए संघर्षरत है, जो मनुष्यके जीवनको गौरव प्रदान कर सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न : लेकिन भारतीय साहित्य आपको क्यों प्रभावित करता है ?

उत्तर : भारतीय साहित्य इसलिए प्रभावित नहीं करता कि उसमें जीवनका सहज वर्णन पाया जाता है, या शैली-शिल्पके कारण, या पाठकोंके प्रति अपीलके कारण या फ़लसफ़ेके कारण बल्कि उसमें निहित मानवीयताके कारण ही वह विशेष प्रभावकारी है। मैंने वेस्टकी एक पत्रिकामें पढ़ा था कि अधिकांश भारतीय लेखक जो लिखते हैं वह 'चाइल्डिश' होता है। लेकिन मेरा ख़याल है कि अधिक उम्रके लोग ही ऐसा कहते हैं क्योंकि तब जीवन ठण्डा हो जाता है और दूसरोंके आवेश तथा उत्साह 'चाइल्डिश' लगने लगते हैं।

प्रश्न : लेनिनग्रादके एक इंजिनीयरने जो सवाल आपसे पूछा था, वही आपके सामने है कि 'क्या हमारा (रशियन) कथा-साहित्य हमारे जीवनकी तुलनामें कमज़ोर है ?'

उत्तर : मैं मायकोव्स्कीकी एक कविता उद्धृत करना चाहूँगा : 'मैं इस बातके लिए नियम नहीं बना सकता कि कोई कविताएँ कैसे लिखें क्योंकि कविता लिखनेके कोई नियम नहीं हैं।' वैसे चेखवको लें, उसकी बादकी कहानियोंमें भी पात्र नहीं बदले, वे के वे ही हैं जो पहले थे, लेकिन उसकी शैली बदलती रही। प्रश्न पाठकोंका भी है। पश्चिममें ऐसे पाठक हैं जो जासूसी कहानियाँ पसन्द करते हैं या जिनका मन अर्धभावुक और अर्धविकृत ट्रेश चीज़ पढ़नेमें लगता है, यह सामग्री रीडर्स डायजेस्ट-जैसे मासिकोंमें धड़ल्लेसे छपती है। हम लोग और हमारे पाठक इनसे अलग हैं। सोवियत समाज आज विकासके प्रारम्भिक चरणोंमें है। पिछला इतिहास या पिछले दशक कुछ घण्टोंसे अधिक अर्थ नहीं रखते। हमारे लेखक स्काउट्सकी तरह हैं, यही कारण है कि आज हमारे पास पुश्किन या तालस्ताय नहीं है लेकिन सामनेवाला क्षितिज बड़ी सम्भावनाओं-वाला है।

प्रश्न : क्या ऐसा नहीं लगता कि हर लेखक अपने 'नायक'के रूपमें किसी और व्यक्तिका चित्रण करता है, वह और व्यक्ति कौन हो सकता है ?

उत्तर : मेरे विचारसे नायक असली जीवनसे अलग ही होता है, एक-दो लेखक ही सही व्यक्तिको चुनकर उसपर लिख सकते हैं। एक बार मातिसने मुझे दो छोटे-छोटे नक्क़ाशीदार हाथी दिखाये। वे किसी नीग्रोकी कलाकृति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे। उसने कहा 'कौन-सा बेहतर है ?' मैंने जिसे सुन्दर कहा था उसके बारेमें मातिसने कहा, 'यह हाथी अपनी सूँड ऊपर उठाये हुए है और इसके दोनों दाँत भी सूँडकी तरफ़ ऊपर उठे हुए हैं। जब यह कहा गया तो बेचारे नीग्रोने सही सूँड और दाँतोंवाला हाथी बनाया लेकिन इस दूसरे हाथीमें वह कला और वह अभिव्यक्ति कहाँ है जो पहले तथा ग़लत हाथीमें है ?…' बात सोचनेकी है।

प्रश्न : क्या आप साहित्य और आधुनिक लेखकोंके बारेमें कुछ कहना चाहेंगे ?

उत्तर : मैं आधुनिक लेखकोंकी बालकी खाल उधेड़नेवाली कलासे सहमत नहीं हूँ। फ्रेंचमें इसे कहते हैं: स्प्लिटिंग ए हेअर इन टू फ़ोर। मैं यह कहूँगा कि 'हीरो' कैसे जन्म लेते हैं—इस बातको जाननेके लिए समय ख़राब करने-की जगह यह जानना चाहिए कि हीरो कैसे बनते हैं। हमारे लेखकोंके लिए पाप जन्मजात नहीं होते, न ही दुःख-दर्द भाग्यमें लिखे होते हैं: एक उदाहरण दूँ कि युद्धके दिनों मैंने पश्चिमके हर लेखकको यह कहते सुना है—'नाऊ इज़ नॉट द टाइम् फ़ॉर लिट्रेचर….' वे यह भी कहते रहे हैं कि मिलिट्री मैन, कूटनीतिज्ञ और राजनीतिज्ञके लिए युद्धमें यह स्पष्ट होता है कि उन्हें क्या करना है लेकिन लेखक यह निर्णय नहीं कर पाता कि उसकी तात्कालिकता क्या होगी!…. पर मैं ऐसा नहीं समझता। युद्ध हो या शान्ति—लेखकका रास्ता हमेशा साफ़ रहता है क्योंकि उसकी रचना समाजकी भावनात्मक सीमेण्ट है—उसकी हमेशा ज़रूरत बनी रहती है।

[प्रस्तोता : र० ब०]

■ ■

६।१, सदानन्द रोड,
कलकत्ता—२६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्तिनिकेतन से शिवालिक

शान्तिनिकेतन भारतकी अमृता वाक् साधनाका जाग्रत शक्तिपीठ है तो शिवालिककी गोदमें बसी कारबूज़िएकी सपन-नगरी चण्डीगढ़ : आधुनिक पश्चिमी कलाका स्थूल प्रत्यक्षीकरण !—इन दोनों ध्रुवोंके बीच एक जीवन्त सेतु है आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीका व्यक्तित्व, जिसे हिन्दीक्षेत्रकी जीवित सांस्कृतिक गरिमाका प्रतिरूप भी कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। यह पुस्तक जहाँ आचार्य श्री द्विवेदीके व्यक्तित्वका विश्लेषण करती है वहीं उनके कृतित्वका गम्भीर अध्ययन-परीक्षण भी प्रस्तुत करती है। यह एक सुखद संयोग है कि उन्हींके हाथोंमें समर्पित होकर यह कृति हिन्दी साहित्यके विगत चालीस वर्षोंकी प्रगतिके प्रति श्रद्धाका प्रतीक भी सहज ही बन गयी है।

आचार्य द्विवेदीका व्यक्तित्व ऊपरसे जितना सीधा-सादा लगता है उसका विश्लेषण उतना ही कठिन है। यह इसलिए कि ऊपरका शान्त जल सचेत भावसे तलके आन्दोलन-आलोड़नको पूरी तरह संयमित और नियमित किये हुए है; और यही कारण है कि उनके व्यक्तित्वके विश्लेषणका पदार्थ केवल उनका ही व्यक्तित्व नहीं, वे तमाम अन्तरधाराएँ भी होती हैं जो पिछले चार दशकसे हिन्दी साहित्यके निर्माणका समवाय कारण रही हैं; अवश्य ही उसकी शक्ति और सीमाएँ भी रहीं, प्रेरणा और बाधाएँ भी।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीका सांस्कृतिक मानव और उसकी बहुविध आधुनिक गतिमयता स्वयंमें इतनी विरल और विलक्षण वस्तु है कि आजके आस्थाहीन, कुण्ठित, निराश और सन्त्रस्त पीढ़ीके लिए यदि वह एक मिथक लगे तो आश्चर्य नहीं। धुर प्राचीनसे अद्यतन आधुनिक तकका पूरा क्षितिज जिस दृष्टिसे बँधा हो या इस प्रयत्नका विषय ही बना हो—वह दृष्टि अपनी समग्रताके कारण, या फिर अपनी उपलब्धि और असफलताका सच्चा साक्ष्य होनेके कारण ही, नयेसे नये रचनाधर्मीके लिए निस्सन्देह एक महत्त्वपूर्ण विरासत है ! आवश्यकता इसे सहज प्राप्त मानकर सन्तुष्ट होनेकी नहीं बल्कि पूर्ण विश्लेषित करके उसकी सारी सम्भावनाओंको आत्मसात् करनेकी है !···

अभिनन्दन ग्रन्थोंकी भरकम कायासे रंचमात्र प्रतिस्पर्धा न रखते हुए भी 'शान्तिनिकेतनसे शिवालिक' अपनी सार्थकताके प्रति संकोचहीन है; क्योंकि इसकी धारा न तो 'शोध' की शिलाओंसे आहत है और न ही शिथिल तटबन्धके कारण अनियमित !···

सम्पादक
शिवप्रसाद सिंह

मूल्य २०.००

डिमाई आकारके ५०० पृष्ठोंमें विश्रुत लेखकोंकी अद्वितीय लेखन-सामग्री। आचार्य श्री द्विवेदीके दुर्लभ छायाचित्र।

भारतीय ज्ञानपीठ
कलकत्ता : वाराणसी
विक्रय-केन्द्र : ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
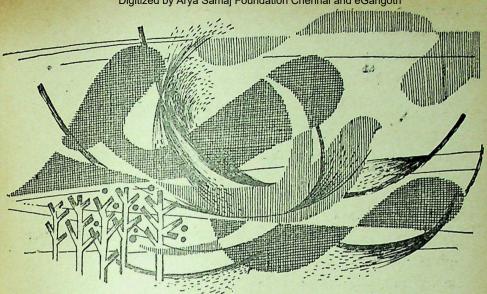
सन्ध्या : एक एकाकी क्षण

—बालकृष्ण राव

● पूछता रहा है परिवेश

अभी-अभी
अस्त हुआ होगा सूर्य—
पश्चिम क्षितिज पर
थोड़ी-सी लाली अभी शेष है।

अभी-अभी
बन्द हुई होगी हवा--
पंखड़ी में
थोड़ी-सी थिरकन बची है अभी।

अभी-अभी
सूना हुआ होगा अन्तरिक्ष--

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी पेड़ की
खड़की थीं पत्तियाँ,
कोई बिरमाया पंछी
अभी घर लौटा है।

अभी-अभी
फिर पड़ा कानों में वही प्रश्न
सारे दिन पूछता रहा है परिवेश जिसे

किन्तु अब
इस नंगे, निर्जन प्रदेश के
बढ़ते अँधेरे में, अकेले में
गूँगी हुई गूँज भी,
शाश्वत जिज्ञासा वाग्वंचित परिवेश की
अब है प्रश्नचिह्न मात्र,
उत्तर की नहीं जिसे
केवल अपेक्षा है
अनपूछे प्रश्न की।

■

• बढ़ते अँधेरे में

बढ़ते अँधेरे में
खो गयीं
दिन की परछाइयाँ,
जाने कब
बादलों की आड़ में ही छिपा-छिपा
डूब गया सूरज

अब देर हुई
कोई नहीं आया
कुछ कहने या पूछने, देने या माँगने,
सारी शाम
बैठे ही बैठे इन्तज़ार में
बीत गयी

आज बिना जोड़े ही मुझे,
बिना मुझको घटाये ही
जग के व्यापार का
योगफल ठीक रहा

और मैं
अपने इस एकाकी क्षण की समग्रता
शून्य की
निरपेक्ष सत्ता-सा
बैठा हूँ—बढ़ते अँधेरे में।

■ ■

अमरावती, ९ टैगोर टाउन,
इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी हम ठीक-ठीक समझ भी न पाये थे कि आधुनिकता क्या है कि पश्चिममें अनेक विचारकोंने आधुनिकताके आन्दोलनकी मृत्यु घोषित कर दी। पर इस घोषणासे हतप्रभ होनेकी कोई ज़रूरत नहीं। हम यह क्यों न समझ लें कि आन्दोलनके रूपमें आधुनिकता भले ही समाप्त हो गयी हो, प्रवृत्तिके रूपमें वह अब भी चल सकती है या कि चल रही है। साथ ही हमें सोचना होगा कि यह कथन पश्चिमके साहित्यपर जितना लागू होता है, क्या उतना ही हमारे साहित्यपर भी लागू किया जा सकता है? इसके विपरीत, क्या ऐसा नहीं कहा जा सकता कि हमारे साहित्य और जीवनमें तो आधु-

आधुनिकताका दोहरा दबाव

—अजितकुमार

निकताका प्रवेश अभी ठीकसे हुआ भी नहीं; अतः आधुनिकताकी मृत्युकी चर्चाका समय आनेमें अभी देर है?

वस्तुतः पश्चिमी देशोंमें समय, कमसे कम पिछले सौ वर्षोंसे, बड़ी तेज़ीके साथ बदलता रहा है जबकि हमारे इस 'प्रियवंद, केशकंबली, गुफागेह' देशमें समयकी चाल इधर कुछ ही वर्षोंसे बढ़ी है। इसलिए छोटी-छोटी, स्फुट घटनाओंसे चौंककर उनमें गहरा अर्थ खोजना हमारे लिए स्वाभाविक ही है। पर यदि हम चाहते हैं कि इस गतिके सचमुच तीव्र हो उठनेपर हम बिलकुल बौखला न जायें और प्रतिदिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन तथा प्रति सप्ताह कविताके बदल जानेका ऐलान सुनने या करनेके लिए मजबूर न हो जायें तो हमें वस्तुओंको किसी परिप्रेक्ष्यमें देखनेकी आदत डालनी होगी। वरना हम दुनियाको महज़ एक कूड़ेका ढेर बना देंगे 'जिसपर खड़े होकर बाँग देनेवाला हर मुर्ग़ अपनेको सिद्ध' समझने लगता है।

बहरहाल, आधुनिकताको समझने और अपने साहित्यमें उसको देखने या लानेकी तमाम कोशिशोंके मूलमें हमें जो बात दिखाई देती है, वह यही है कि विज्ञान और यन्त्रके विकासके कारण जीवनकी जो परिस्थितियाँ उन्नीसवीं शताब्दीके बाद तेज़ीसे बदलने लगीं, उनके दबावको अनुभव करते हुए, बीसवीं शताब्दीके मनुष्यने अपनी भावनाओं और प्रतिक्रियाओंको भी तेज़ीसे बदलता हुआ अनुभव किया और साहित्यमें तथा साहित्यिक चर्चाओंमें इसकी अभिव्यक्ति हुई। सभी जानते हैं कि आधुनिक जीवन-परिस्थितियाँ क्या थीं और उनके दबावके कारण आधुनिक मनुष्यने किस भाँति अपने-आपको उस सबसे अलग-थलग समझ लिया, जोकि प्राचीन या मध्ययुगीन था। उसे हम शाश्वत कहने या माननेके अभ्यस्त थे और उसी शाश्वतताके विरुद्ध आधुनिकताका आन्दोलन साहित्य तथा अन्य कलाओंमें परिलक्षित हुआ। बदले हुए युगमें जहाँ कुछ लोगोंके मनमें यह भावना तीव्र होकर उभरी कि सब कुछ बदल गया है और हम विच्छिन्न हो गये हैं, वहीं कुछ अन्य अनुभवी और स्थिरमति लोगोंने यह धारणा व्यक्त की कि हम उतना नहीं बदले, जितना कि हम अपने-आपको कहते हैं, और हम उतने विच्छिन्न भी न हैं, न हुए हैं, न हो सकते हैं, जितना कि हम अपने-आपको समझते हैं। आधुनिकताके सन्दर्भमें हमारी धारणाएँ और व्याख्याएँ इन्हीं दोनों छोरोंके बीच घटती-बढ़ती—'फ़्लक्चुएट' होती—रही हैं। कलाकारके मनपर आधुनिकताके इस दबाव के परिणामस्वरूप जो तनाव उत्पन्न हो गये हैं, वे कुछ-कुछ एक दोहरेपनसे उत्पन्न तनाव हैं। दोहरापन यह कि हम बदल गये हैं किन्तु संसार नहीं बदला, और दूसरा ओर यह कि संसार बदल गया है किन्तु हम नहीं बदले।

एक उदाहरण लेकर इस बातको समझना बेहतर रहेगा। बहुत बार यह कहा जाता है कि आधुनिक युगमें, विशेषकर बड़े-बड़े नगरोंमें प्रेम, वासना, दाम्पत्य आदि भावनाएँ संकुचित होती चली जा रही हैं और मृत्यु, आत्महत्या-जैसी भावसंकुल स्थितियाँ अर्थहीन हो गयी हैं पर इसे हम यों भी तो समझ सकते हैं कि इन भावनाओं या स्थितियोंकी प्रत्यक्षानुभूति और सहज अभिव्यक्तिके अवसर भले ही आधुनिक युग में अपेक्षाकृत कम हो गये हों, उनके अस्तित्व, आवेग या विस्तारमें कोई कमी नहीं हुई। आधुनिक सभ्यता और आर्थिक दबाव आदिके कारण आजके लोग यदि इन भावनाओंकी सम्यक् अनुभूति अथवा अभिव्यक्ति सदा नहीं कर पाते तो इसका यह अर्थ लगाना अनुचित होगा कि ये भावनाएँ ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रमशः मिटती चली जा रही है। उलटे, बढ़ते हुए स्नायविक विकार, ट्रैंक्विलाइज़र और असुरक्षा, अकेलापन, सन्त्रास आदिके भाव यदि किसी तथ्यकी साक्षी दें तो वह यही होगा कि आधुनिक युगमें बाह्य एवं औपचारिक स्तरपर भले ही पूर्वोक्त भावनाएँ ओझल हो गयी हों, आन्तरिक एवं निजी स्तरोंपर उनका बोध अपेक्षया गहराता गया है। संसार और हम—दोनों बदलकर भी नहीं बदले, यह विडम्बना आधुनिक कलाकारके मानसिक तनावका प्रमुख कारण है। इसे एक तरहकी विवशता भी कहा जा सकता है। उन्नीसवीं सदीके एक कवि मैथ्यू आर्नल्डने इसीकी ओर संकेत करते हुए कहा था : "(हम) भटक रहे हैं दो संसारोंके बीच, एक मृत, दूसरा जन्म लेनेमें असमर्थ।" इस बातको हम आज बीसवीं सदीके कलाकारपर भी लागू कर सकते हैं। उसके लिए भी एक दुनिया तो मिट गयी है और दूसरीका निर्माण करनेमें वह अपनेको असमर्थ पा रहा है।

आर्नल्डने उम्मीद की थी कि "वर्षों बाद, शायद, वह युग आये, जो हमारे युगसे, आह! अधिक भाग्यवान होगा।" लेकिन लगभग सौ वर्ष बीत चुके हैं और कलाकारके संसारमें तनाव वैसा ही बना हुआ है। माना कि उसने एक नयी गोकि अनगढ़ दुनिया बना ली है पर उसके साथ ही बहुत-सी पुरानी दुनिया भी फिरसे जीवित होकर जुड़ गयी है। यही आधुनिक कलाकारकी चेतनापर दोहरा दबाव है। चाहे वह भाषा हो या संवेदना, शब्द हों या उनके अर्थ, सभी स्तरोंपर हम लेखककी इस विवशता और उसकी खीझसे उत्पन्न संघर्षको देख सकते हैं। पर यह एक गौरवपूर्ण और महान् संघर्ष भी है। शब्द, भाषा, समाज और इतिहासकी महान् तथा आतंककारी शक्तियोंसे जूझते हुए कलाकारकी यह छवि हमारे लिए न केवल आदरणीय अपितु उत्साहवर्द्धक भी है कि वह एक ऐसे संघर्षमें लगा हुआ है, जिसमें उसकी पराजय पहलेसे ही निश्चित थी। आकर्षक, यद्यपि करुण है : कीट्सका—एक कविका—स्वयं अपने लिए लिखा हुआ यह मृत्यु लेख : "हियर लाइज़ वन हूज़ नेम वाज़ रिट इन वाटर।" जिसने अपना नाम पानीपर या कि पानीसे लिखा हो, उसीमें यह शक्ति भी हो सकती है कि पृथ्वी-अम्बर सबको कुचलकर रख देनेवाले कालके 'लौह-चक्र' पर अपना 'दन्तचिह्न' लगा दे।—(द्रष्टव्य, बच्चनकी कविता : 'तुम्हारा लौह-चक्र आया'।) कहनेकी आवश्यकता नहीं कि आजके अभूतपूर्व तनावों और दबावोंके बीच कार्य करनेवाले लेखकके लिए समय और इतिहासके उस 'लौह-चक्र' पर केवल एक 'खरोंच'-भर लगा पाना सम्भव दीखता है, पर यह प्रयत्न भी, यदि वह कर सके तो, निश्चय ही करणीय है।

■ ■

सी ३।५, माडल टाउन,
दिल्ली–९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—मिर्ज़ा इस्माईल बेग

महेश्वरका दिलकश मंज़र और नर्मदा
मोहक किनारा। इस किनारेसे उस किना
तक फैला स्वच्छ हलका हरा पानी। पानी
में-से झाँकते हुए स्याह पत्थर। पत्थरों
पक्षी और पक्षीकी तरह पानीके बादलों
डोलती हुई नावें। नावोंमें सिर्फ़ सवारि
ही नहीं, वरन बड़ी-बड़ी और छोटी
छोटी बैलगाड़ियाँ। बैलगाड़ियोंपर सुन्द
आवरण। आवरणोंपर लोक-कलाकी मोह
डिज़ाइनें, कहीं दूरसे आते हुए मछुओं
डोंगे। मस्तूलपर सूखती हुए जाल। जालों
फँसी मछलियाँ। आँखोंसे दिखाई देनेवाल
सारा यथार्थ सपना-सा लगता है। नदी
के इस किनारे नावोंके इन्तज़ारमें ठहरी
सवारियाँ, कहीं बिदाईकी बेला""तो कहीं
मिलनकी उत्सुकता! उन्हींके पास घाट
बाल सुखाती बालाएँ, ताँबे-सी चमकवा
सुन्दर-सुडौल बदन, बूढ़ोंकी काँपती देहें
विश्वासकी चमक और""और उस चमक
दोनों किनारोंपर फैली हुई सोने-सी धूप
पवित्रता, रेतमें चमकनेवाले सितारों
सफ़ेद कण—सब-सब एक साथ इनसान
मुक्तिका आभास देते हैं।

जिस तरह आज नंग-धड़ंग बच्चे
किनारे पानीमें लुका-छुपी खेलते हैं,
और गंठे मारते हैं, उसी प्रकार सन् १९
में जन्मा एक बालक भी अपने बचपन
विविध खेल खेला करता था। अपने प्रति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सम्पूर्ण जीवनका अनुभव एक एक क्षण बनकर ठहर जाये'—देवकृष्ण जोशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हारवेस्ट

मा ल वा के चि त्र
जो शी – क़ ल म

नर्मदाका किनारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्द्रीको पकड़ते-पकड़ते उसकी निगाह सहमे किसी सुन्दर पत्थरपर जा पड़ती तो वह खेल भूल जाता और उसे बार-बार ग़ोते लगाकर हथियाता, वह बेहद खुश होता और उसे अपने आँगनके पीपल-तले जमा कर देता। यह क्रम सारे बाल-काल तक चलता रहा। उसने सुन्दर पत्थरोंका एक विशाल संग्रह खड़ा कर लिया था। यह संग्रह केवल उसे ही सुख नहीं देता था बल्कि उसका सम्पूर्ण परिवार और मोहल्ले वालोंके लिए पूज्य वस्तु बन गया था।

इस होनहार बालकका नाम देवकृष्ण था। पिता श्रीजटाशंकर जोशी एक निहायत सीधे-सादे ग्रामीण ब्राह्मण थे। माता भी उतनी ही श्रद्धालु भोली नारी थीं। उन्होंने न यह कभी सोचा कि एक ब्राह्मणके लिए पूजाके अतिरिक्त कोई काम है और न ही इससे सरोकार था कि उनका पुत्र पूजन-विधिके अलावा कुछ सीखे। एक बार जब बालक देवकृष्ण, इन्दौर अपनी बहनके घर आये तो उन्होंने एक मूर्तिकारको गणपति बनाते देखा। उन्हें अच्छा लगा। वे गणपति बनाना सीखने लगे। थोड़े समयमें ही धड़ल्लेसे गणपतिकी मूर्तियाँ बिकने लगीं। किसीने बताया, इन्दौरमें चित्रकला सिखायी जाती है। वह रंग बनाना सीखनेके लिए स्कूल ऑफ़ आर्ट्समें पहुँच गये, जहाँ उस समय प्रख्यात कला-शिक्षक श्रीदेवलालीकर अध्यापनका कार्य करते थे। साथी भी मेधावी छात्र थे जो आगे चलकर देशके नामी कलाकार बने जैसे एन० एस० बेन्द्रे, एम० एस० जोशी, सोलेगावकर, एम० एफ़० हुसैन आदि। इस विद्यालयके छात्र सर जे० जे० स्कूल ऑफ़ आर्ट्स, बम्बईमें जाकर परीक्षा देते। श्रीजोशी हर वर्ष प्रथम श्रेणीमें पास होते और उन्हें पारितोषिक भी मिलता। इधर शिक्षण चलता और घरपर गणपतिकी रचना, जिससे खर्च चल सके। सन् १९३३ में उन्होंने डिप्लोमा प्राप्त कर लिया। उनके सब सहपाठी देशके कोने-कोनेमें बिखर गये। वह भी मूर्तिकला-की उच्च शिक्षा पानेके लिए सर जे० जे० स्कूल ऑफ़ आर्ट्समें भरती हो गये। प्रथम सत्रमें ही प्रथम श्रेणीमें पास हुए। लेकिन इस ग्रामीण स्वभावके भोले नौजवानको बम्बईकी भाग-दौड़ नहीं भायी। घरकी यादने फिर उन्हें मालव-भूमिमें ला खड़ा किया—जिसकी पुण्यभूमि थोड़ी-सी नमीसे हरी हो जाती है और हलकी-सी गरमीमें दरक जाती है। बस वैसा ही देवकृष्णजीका दिल था जो रोज़ खेतोंमें काम करनेवाले किसानोंको देखता, हाट-बाज़ारमें खरीद करते आदि-वासियोंको निहारता, बाजारमें सौदा बेचती हुई मालिनें और उनके चेहरेपर घूंघट, सड़क किनारे बैठकर श्रृंगार करती हुई बंजारिनें, धानकी बुआई, धान पक जाये तो होली, होलीके गीत और पिचकारी, धान-कटाई, ओखलेपर धान-सफ़ाई, शादी, शादी-के विभिन्न रंग, फिर वीरान खेत, खेतोंपर बचे पीले डण्ठल.... यह सब श्री जोशीके प्रिय विषय बन गये। उधर महेश्वर, मण्डलेश्वर और ओंकारेश्वरके घाट, नावें, मन्दिर और स्मारक उनकी तूलिकासे नया मतलब देने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगे। किसीने बताया, बम्बईमें अखिल भारतीय चित्रकलाका प्रदर्शनियाँ होती हैं। उनमें कोई भी चित्र भेज सकता है। पत्नीके गहने गिरवी रखे और चित्र भेजे। नतीजा आश्चर्यजनक निकला। ईनाम भी मिला और चित्र भी बिके। तबसे सन् १९६० तक ऐसा एक भी वर्ष नहीं गया जब कहीं-न-कहीं ईनाम न मिला हो। एक-एक चित्रकी क़ीमत बारह सौ रुपये तक मिली। प्रख्यात चित्रकार एस० एच० रज़ा, गावडे आदि कलाकार महज श्रीजोशीके चित्रोंको देखकर मालव-भूमिके दर्शन करने आये। लैंगहेमर, सेल्सेन्ज़र-जैसे कला-पारखी इनके परम प्रशंसकोंमें से रहे। देशकी प्रमुख पत्रिकाएँ इनके चित्रोंको मुखपृष्ठपर साग्रह छापतीं। दिल्ली, कलकत्ता, मद्रास, अमृतसर आदि कला-केन्द्रोंमें इनकी कलाकी चर्चा होती। जब देश आज़ाद हुआ और ललित-कला-अकादमीकी स्थापना हुई तो प्रथम वर्षमें ही इन्हें सम्मान प्राप्त हुआ। अब इनके चित्र अमेरिका, एशिया, स्पेन, फ्रान्स, स्वीट्ज़रलैण्ड भी पहुँचने लगे। जापानमें इनके चित्रोंकी आज भी विशेष चाह है।

मूर्तिकलाके शौक़का अभी प्रारम्भ था। कुछ मूर्तियाँ बनीं। लोगोंको पसन्द आयीं। आज इलाहाबादमें साहित्यसेवी महावीर प्रसाद द्विवेदी और महाकवि निरालाकी मूर्तियाँ उनकी साधना बनकर हमेशाके लिए प्रतिष्ठापित हो गयी हैं। भोपालमें एक आदम-क़द सिपाहीकी काँसेकी मूर्ति परेड-मैदानपर असंख्य नौजवानोंको प्रेरणा देती है। देवी अहिल्याकी संगमरमरी मूर्ति स्थापित होनेको है।

यह सब करनेके बाद भी यह कलाकार एक शिक्षकके रूपमें कार्य करता रहा है। धार-नरेशने इन्हें अपने यहाँ लक्ष्मी-कला-भवनका प्राचार्य बनाया, जहाँके अधिकांश विद्यार्थी आज सारे प्रदेशमें कला-सेवाके मार्ग योग्य शिक्षकके रूपमें कार्य कर रहे हैं। मध्यप्रदेश बना और इन्हें पदोन्नत कर इन्दौर-कला-महाविद्यालयका प्राचार्य बनाया गया।

इतना सब होने और करनेके बाद इस कलाकारके दिलमें महान् चित्रकार सीज़ेनकी तरह अपने-आपपर बड़ा अविश्वास और अलगाव है। यह भाव व्यक्तिगत जीवनमें विद्यमान है लेकिन जब वे चित्र लेकर खड़े होते हैं तब वे अलग ही दिखाई देते हैं। यह विश्वास और अविश्वासका अजीब मेल है, जिससे कभी-कभी वे शिकायतोंके कारण बन जाते हैं।

"कलाकी मुख्य धारा दिल्ली, बम्बई और कलकत्ताके बीच बह रही है। इसके बाहर रहनेवाले कलाकारोंको आगे आना असम्भव-सा लगता है!" ये शब्द हैं एक विख्यात भारतीय कला-समीक्षक, विश्व-प्रसिद्ध साहित्यकार और ललित-कला-अकादमीके अध्यक्षके; लेकिन यह सही होते हुए भी श्रीजोशी इसके अपवाद हैं।

इसका कारण क्या है?

जब यही प्रश्न उनसे पूछा गया तो जवाब बड़ा सादा था। उन्होंने बताया, "मैं अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वातावरण और अपने मनके प्रति हमेशा वफ़ादार रहा। मैंने 'वादों' के झमेलोंमें अपने-आपको खोया नहीं। वरन् उन्हें समझकर उन्हें अपने क़ाबिल बनाता रहा। जब चित्र दृष्टिकी भाषा है तो फिर उसे शब्दोंसे क्यों समझाया जाये। मैं चाहता हूँ, कलाका सुख एवं आनन्द सभी वर्गके लोगोंको प्राप्त हो। हाँ, इस कोशिशमें कलाके मर्मको नहीं खोना चाहिए।"

श्रीजोशी एक आशावादी कलाकार हैं। उनके विचारोंमें संसार तो दुःखोंसे भरा पड़ा है। लेकिन सुख चाँदकी तरह दूर, छोटा, थोड़ा और शीतल है। उसे प्राप्त करना ही कलाकारका धर्म है। यह आशावादी दृष्टिकोण उनके रंगोंमें साफ़ झलकता है। बड़े-बड़े केनवासपर गहरे और हलके दोनों रंगोंको सभी कलाकार उभारते हैं लेकिन यह कलाकार केवल हलके रंगोंसे खेलता चला जाता है। ग़ज़बकी इनकी पकड़ होती है। हलके रंगोंमें विभिन्न टोनोंमें चित्र उभारना कितना दुरूह कार्य है—इसे कलाकार ही समझ सकते हैं। श्री एम० एफ़० हुसैनके शब्दोंमें यह कार्य श्रीजोशीके अतिरिक्त और कोई नहीं कर सकता। इसका मुख्य प्रेरणा स्रोत है—श्रीजोशीके बचपनका निमाड़ी वातावरण—पीले खेत और भूरा आसमान। इसके साथ ही इनके रंगोंमें भी प्रिय रंग पीला है।

जब आधुनिक कलाकी चर्चा चलती है तो इस कलाकारके विचार निहायत साफ़ होते हैं और सकारात्मक भी। उनके विचारसे आधुनिक कला एक विकास-क्रममें है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता जो इन्हें अच्छी लगी, वह है स्वयं कलाकारकी आत्मानुभूतिका सम्मान और कलाकारकी स्वतन्त्रताका फैला हुआ दायरा। उनका पूर्णविश्वास है—स्वतन्त्रतासे आज नहीं तो कुछ वर्षों बाद एक ऐसी कला निर्मित होगी जो मनुष्यकी गरिमाको और ऊँचा उठायेगी।

एक कला-शिक्षकके नाते उनकी प्रतिक्रिया बड़ी उदासीन है। उनकी रायमें शिक्षण-विधिकी सम्पूर्ण कमज़ोरियाँ कला-शिक्षणमें भी विद्यमान हैं। आज विद्यार्थी सर्टिफ़िकेट और सस्ती पब्लिसिटीके पीछे अधिक हैं। किताबी शिक्षामें तो यह चल सकता है लेकिन प्रायोगिक विषयोंमें तो साधनाके सिवाय कोई रास्ता नहीं। इसे नवयुवकोंको समझना चाहिए। और जहाँतक कला-प्रशंसकों एवं प्रोत्साहित करनेवालोंका सवाल है वे कहाँतक फ़ैशनपरस्त हैं और किस हदतक कला-पारखी—इस फ़र्क़को नवयुवकोंको ही साफ़ साफ़ देखना चाहिए।

आज यह कलाकार सम्पूर्ण मध्य-प्रदेशके कला-जीवनका स्रोत है। हमेशा नये कलाकारोंको प्रेरणा और झिड़क दोनों समानरूपसे देते चले आ रहे हैं। अभी जुलाई मासमें श्री देवकृष्णने जीवनके ५६ वर्ष पूरे किये। आजकल वे ऐसे प्रयासोंमें तल्लीन हैं कि सम्पूर्ण जीवनका अनुभव केनवासोंपर एक-एक क्षण बनकर ठहर जाये।.... ■■

१९४ नयापुरा, नं० १
इन्दौर सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
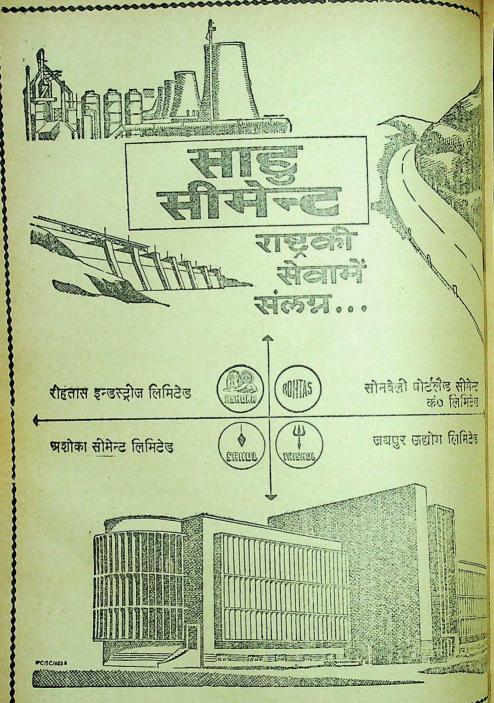
१९६६ के ५ और
कहानी-संग्रह :

- मुरदा सराय : शिवप्रसाद सिंह
(भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन)
- एक कोई दूसरा : उषा प्रियम्बदा
(अक्षर प्रकाशन, दिल्ली)
- मांसका दरिया : कमलेश्वर
(अक्षर प्रकाशन, दिल्ली)
- एक प्यास पहले : राजेन्द्र अवस्थी
(हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी)
- कटती हुई जमीन : रमेश बक्षी
(लोकचेतना प्रकाशन, जबलपुर)

—धनंजय वर्मा

कहानीके विस्तृत होते हुए वृत्त-२

—"उधर 'शिवप्रसाद सिंह' अपने 'मुरदा सराय' की भूमिकामें समयके प्रति लेखककी प्रतिबद्धता, युगबोधके प्रति सचेत अभिज्ञानकी बातें करते हैं और अपनी ठेठ गांवकी कहानियोंकी व्याख्यामें आधुनिकतम भावबोधको वहन करनेका दावा करते हैं !"

—"इसके निर्णयके लिए हमें अधिक दूर नहीं जाना है। कहानियोंमें जीवन, यथार्थ या वस्तुके क्षेत्रोंसे अधिक महत्त्व उनके या उनको दिये गये नये अर्थोंका है, उसके प्रति दृष्टि और भंगिमाका है।....इस लिहाज़से शिवप्रसाद सिंहकी इस संग्रहकी लगभग सारी कहानियाँ एक भावुक आदर्शवादसे खत्म होती हैं। मैं यह तो नहीं कहता कि उनके गाँव या उनके द्वारा चित्रित जीवन और चरित्र यथार्थ नहीं हैं मगर उनके निर्वाहमें भावुकताका, आदर्शवादी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिणतिका और रोमाण्टिक दृष्टिकोणका खूब गाढ़ा लेप है। कमली हो या अरुन्धती, या अर्जुन पाण्डे, अशरफ चाचा हों या शंकर सिंह—इनके कर्म, सबके सब 'हीरोइक' हैं और ये सब प्रभावित भी करते हैं, मगर अपने यथार्थवादी परिवेशमें भी इनकी पूरी अवधारणा काल्पनिक और कल्पनाजीवी है। लगता है, कहानीमें कथानक और नायक (हीरो) की परिकल्पनासे लेखकको अभीतक छुटकारा नहीं मिला है।...अब तुम शायद शिवप्रसाद सिंहकी तरह कहो कि 'भीतरके छिपे अर्थको खोजने', 'ध्वन्यार्थक कथ्य' को खोजनेके प्रयत्न करो, (जैसा कि कुछ वाक्योंकी व्याख्या करके लेखकने किया भी है) तो मेरा निवेदन है कि शब्दों और वाक्योंकी इतनी बारीक और अध्यापकीय व्याख्या (ध्यान देना, मैं 'डीपर इम्पोर्ट' की बात नहीं कर रहा हूँ, जो अनायास उभरता है) की ही यदि ज़रूरत रही तो बेहतर होगा कि कहानियोंके साथ उनके 'एग्झास्टिव नोट्स' भी प्रकाशित कर दिये जायें! और व्याख्याओंका क्या है, मुझे कोई फ़िल्मी गीत दे दो, मैं उसे तोड़-मरोड़-कर किसी भी भावबोधसे जोड़ दूँगा। यह मेरी व्याख्याका चमत्कार होगा, गीतका नहीं। कहानियोंमें एक-एक प्रतीक, एक-एक वाक्य और शब्दका अलग-अलग संकेत नहीं होता, पूरी कहानी एक प्रतीक और एक संकेत होती है, होना चाहिए। ऐसा न हो कि 'तिउरा' का चरित्र और पूरा वृत्त तो कुछ कहे और आप कहानीपर अपना एक आइडिया, (उसके कुछ वाक्यों[illegible] व्याख्या करके) थोप दें और जब पाठ[illegible] या आलोचक आपकी हाँमें हाँ न मिलाये [illegible] आप उसकी समझ और ईमानदारी[illegible] कोसें! यह अजीब बात है कि पाठक [illegible] आलोचकको तो लोग अपनी खीझ-भ[illegible] बातें सुना जाते हैं लेकिन उसकी बातें सुन[illegible] की सहिष्णुता तक उनमें नहीं होती। मे[illegible] तो साफ़ कहना है कि आपकी कहानी य[illegible] वह नहीं कहती, मेरी चेतनाको झकझो[illegible] कर, मुझे ज़बरन उस बिन्दुपर नहीं पहुँचा[illegible] मुझमें-से उसी भाव-बोधको प्रवाहित न[illegible] कर देती जो आपका अभिलषित है, [illegible] आपका, ज़बरन मुझे उठाकर वहाँ पहुँचा[illegible] क्या मायने रखता है? मैं हर कहानी[illegible] पढ़ता हुआ उसपर लेखक या आलोचक[illegible] भाष्य और रायको देखनेका क़ायल नहीं [illegible] इस स्थितिका जो एक कारण समझमें आ[illegible] है वह लगभग यह है कि कहानी लिखते [illegible] उसे एक 'आंगिक पूर्ण' की तरह, लेख[illegible] ने तो 'कन्सीव' कर लिया, उसके [illegible] विवरण, उनसे उभरता हुआ अर्थ-ध्वन्[illegible] तो उसके सामने स्पष्ट होता है लेकिन ज[illegible] कहानी निर्मित होकर आती है तब पाठक[illegible] भी वह सब ज्योंका त्यों नहीं दिखत[illegible] इसलिए कि उसने वह यात्रा नहीं की है[illegible] जबतक आप उस यात्रामें-से उसे भी न[illegible] गुज़ार देते उसकी कई बातें, जो लेखक[illegible] सामने जीवित-स्पष्ट थीं, छूट गयी हो[illegible] हैं।....शिवप्रसाद सिंहके साथ अकसर ऐ[illegible] होता दिखता है।....अब कहानीका पढ़[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निष्क्रिय और तटस्थ दर्शक या श्रोताका देखना-सुनना नहीं है, उसमें पाठकका पूरा-पूरा 'पार्टीसिपेशन' आप लें, वह एक सह-भोक्ताका सहभोग, सह-अनुभव बने और रचनाकी जिस प्रक्रियासे आप गुज़रे हैं उसमें-से उसे भी गुज़ार दें। इसके माध्यम आप हैं, आपकी पूरी 'भाषा' है। मेरा मतलब यह नहीं है कि आप पुरानी कहानियोंकी तरह कहें—चलिए पाठकगण, हम आपको वहाँ ले चलें····मगर आपका अपना 'निजी' अनुभव इसका भी तो बने, उसकी प्रामाणिकता उसे भी तो प्रामाणिक लगे। जहाँ ऐसा होता है उसे किसी अतिरिक्त व्याख्याकी जरूरत नहीं पड़ती—जैसे इसी संग्रहकी 'मुरदा सराय'—'मृत्यु' और 'जीवन' के दार्शनिक चिन्तन या वेदान्तको यहाँ समझानेकी जरूरत नहीं है, वह स्वयं इस कहानीसे बोल रहा है—मृत्यु और जीवनका वह अपरिहार्यता-बोध एक दूसरेको 'ओव्हर लैप' करता हुआ, स्वयं अभिव्यक्त है और उसमें-से एक 'पॉजीटिव' चिन्तन अनायास निसृत है।····यहाँ न तो चरित्र, न वातावरण, न वस्तु-क्षेत्र (गाँव, शहर या अंचल), कोई भी बाधक नहीं है—आपके उस भावबोधको वहन करनेमें। वह अनायास आपमें 'जीवित' हो जाता है।····बात मूलतः उस सृजनात्मक 'विज़न' की है न कि देशी-विदेशी, ग्रामीण-शहरी, चरित्र-वातावरण या स्थितियोंकी। ऐसा भी होता है कि ठेठ आधुनिक (विदेशी) चरित्र और थीम उठानेपर भी उसका निर्वाह आप अपनी ही [illegible] 'विज़न' से करें, उसे वही परिप्रेक्ष्य दें।"

—"तुम्हारे कहनेका मतलब क्या यह है कि विदेशी समाज और स्थितियोंको लेते हुए भी भारतीय कहानी लिखी जा सकती है?"—मैंने कहा।

—"बिलकुल! बल्कि, यह भी कि, आधुनिकतम थीम, और स्थितिकी खोलके पीछे भी आप नितान्त पुराना भावबोध और दृष्टि देख सकते हैं। ऐसा हुआ और हो रहा है कि कहानियोंमें आधुनिकताका सारा 'साज़ो-सामान' है लेकिन आत्मा ग़ायब है।····बात यह है कि लेखककी अपनी मानसिक बनावट, रोज़मर्रा जीवनमें उसकी भंगिमा, उसके सम्पूर्ण व्यवहार और उसका निजी व्यक्तित्व तो उसकी रचनाका आवयविक अंश है। इसका यदि प्रमाण चाहिए तो उषा प्रियंवदा की कहानियाँ (**'एक कोई दूसरा'**) देख लो।····विदेशी पात्र, पूरी सेटिंग विदेशी, लेकिन उनके पीछे धड़कता हुआ वही भारतीय मानस है, भारतीय 'कुण्ठाएँ' और अभिज्ञताएँ हैं। क्योंकि आप अपने सम्पूर्ण अस्तित्वकी इकाईको कैसे नकार सकते हैं, उसके समस्त सामाजिक सन्दर्भसे एकदम कैसे कट सकते हैं? और क्या कभी कट भी सकते हैं? जाने कहाँ-कहाँ और कबतक आपके 'संस्कार' आपका पीछा करें। हालाँकि उषाकी कुछ कहानियों (जैसे 'सागर पारका संगीत') में उनसे निस्तार, निष्कृति और मुक्तिकी कोशिश भी है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—"मगर वह भी कितना आयास सिद्ध और कृत्रिम लगता है !"—मैंने कहा—"वह देवयानी जो अपनी भारतीयताको अपने व्यक्तित्वसे अलग नहीं फेंक पाती, विदेशी परिवेशमें एक अन्तर्द्वन्द्व और व्यवस्थित न हो सकनेकी पीड़ा लिये हुए है; वह उद्वेलन और वह मानसिक तनाव—मगर औस्कर (पति)की अनुपस्थितिमें जब यास्पर उससे कहता है—'शायद औस्कर-को पता नहीं है कि तुम उसे कितना मिस करोगी'—(और साथ ही कि) 'मैं भी अपनी 'गर्ल' को छोड़कर आया हूँ, मेरे आते समय बहुत रो रही थी, पर—अबतक उसने दूसरा फ़्रेण्ड ढूंढ़ लिया होगा'। (क्या यहाँ यह बतानेकी जरूरत है कि यह दो विभिन्न संस्कारोंका द्वन्द्व है !) तब देवयानी-पर जो प्रतिक्रिया होती है वह (—'यास्पर —यास्पर !' देवयानीने एकाएक चीखती हुई आवाजमें पुकारा।···भागकर आया यास्पर कमरेकी दहलीजपर ठिठक गया। अर्ध अनावृता देवयानीने उसके गलेमें अधीर बाँहें डालकर अपनी ओर खींच लिया।····) क्या यह संकेत नहीं करती कि देवयानीने अपने 'आचरण'को भले बदल दिया हो, मगर उसका 'मानस' नहीं बदला है। या फिर 'चाँदनीमें बर्फ़ पर'—भारतीय पत्नी (कल्याणी)के विलोममें विदेशी पत्नी (मेरी) को रखा गया है। एक अपने भूतपूर्व प्रेमीका भी आमन्त्रण अस्वीकार करती है, दूसरी अपने नये 'फ़्रेण्ड' के साथ निस्संकोच, निर्द्वन्द्व आगे बढ़ जाती है और हेम (भारतीय पति) संस्काराविष्ट, उस द्वन्द्वका भोक्ता बनता है। वह अक्षय हो या तन्त्री त्रिपाठी या फिर नमिता, अमृता और नीलांजना; एक मुक्त और स्वतन्त्र-स्वच्छन्द वातावरणमें भी अपने बद्धमूल भारतीय संस्कारोंसे मुक्त नहीं हो पाते।····विदेश और देशमें भी आधुनिक परिस्थितियोंसे अपने संघर्षमें इनका अनाविष्ट न्यून (बेयर मिनिमम) क्या है ?"

—"क्या तुम यह कहना चाहते हो कि विदेशी परिवेशकी होते हुए भी, ये कहानियाँ आधुनिक नहीं हैं?····मगर मुझे लगता है कि इनमें आधुनिक मानसका वह अन्तर्द्वन्द्व और संघर्ष है, जो इन्हें आधुनिक बनाता है। ज़्यादा सही कहूँ तो आधुनिकता की पीड़ा-प्रक्रियासे गुज़रते हुए भारतीय मानसकी ये कहानियाँ हैं और जब मैं मानस कहता हूँ तो उसका अर्थ, केवल मनोवैज्ञानिक ही नहीं, नैतिक और आध्यात्मिक भी है।" लगभग हर कहानी टूटती है एक पुरातन दृष्टिकोण पर, भावुकता-भरी रूमानी प्रतिक्रियापर लेकिन इस बिन्दुपर टूटनेके साथ ही कहानी खत्म नहीं होती, वह उसी बिन्दुपर घूम (रिवाल्व हो) जाती है, अपनेको खोलती हुई (अनवाइण्ड करती-) सी। और तब वह पीड़ाबोध उभरता है जो आधुनिक परिस्थितियों और पुराने मानसके द्वन्द्व उत्पन्न और असमंजसका परिणाम है। ऐसा नहीं कि इनके पात्र जिन मूल्यों या आदर्शों से चिपके हैं, वही लेखिकाके मन्तव्यके प्रतीक हैं, दरअसल पीड़ा (और कहानी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुरू होती है यहींसे। इस लिहाज़से आधुनिक मानसके अन्तर्विरोध और पीड़ाकी जितनी बारीक धड़कनें इन कहानियोंमें हैं, आधुनिकताका मुलम्मा लिये हुए इधरकी नब्बे फ़ी-सदी कहानियोंमें नहीं हैं, हालाँकि इनमें आधुनिकताकी न्यूनतम सज्जा है और इसका कारण यह है कि लेखिकाने अपनी 'निजी' अनुभूतियोंसे छल नहीं किया है, उस वातावरणमें, अपने परिवेशमें, अपनी तलाशको ईमानदारीसे खोला है।"

"यह सब तो ठीक है, मगर क्या तुमको नहीं लगता कि इधर आधुनिक भावबोध और आधुनिकताके नामपर ऐसी कहानियोंकी बाढ़ सी आ गयी है जिनसे हमारी अपनी औसत तसवीर बिलकुल नहीं उभरती। जो कथा व्यक्तित्व ऐसी कहानियोंसे उभरता है, वह अन्धकारके सागरमें निरर्थक हाथ-पैर मारते हुए एक ऐसे अतिसामान्य (एब्नार्मल), बुद्धिजीवी या उनके ही मानस-पुत्रोंका है जिसपर निराशाकी घटाएँ उमड़ी हैं, जो आस्था-हत हैं, अपनी सेक्स कुण्ठाओं और विकृतियोंमें ऐंठते हुए, मृत्यु-आतंकसे मोहग्रस्त, 'अहं'के 'शेल'में बन्द आत्मघाती हैं। मैं नहीं कहता कि हमारे समकालीन जीवन और परिवेशमें यह बिलकुल नहीं है, मगर क्या यही सब कुछ है? क्या प्रकाशकी एक भी किरण, आस्थाका एक भी सितारा, और जीवनकी एक भी धड़कन शेष नहीं है? क्या मानवीय आस्था, जीवनमें विश्वासके लिए अब तनिक भी जगह नहीं है। बातको ज़रा स्थूल बनाकर कहूँ तो, क्या स्वतन्त्र भारतमें अबतक उभरे मानव-व्यक्तित्वका केवल यही औसत रूप है?"

—"यह प्रश्न कई बार मेरे मनमें भी उठा है! कई बार इन कहानियोंको पढ़कर न केवल मानवीय प्रगति और अस्तित्वमें अविश्वास होता है बल्कि जीवन भी निरर्थक लगता है, लेकिन ईमानदारीकी बात है कि मैं इनको पढ़ना नहीं चाहता। ऐसी स्थितिमें मैं उन कहानियोंको पढ़ना अधिक पसन्द करता हूँ जिनके विषयमें कहा गया है कि वे एक झूठे आशावाद और भविष्यवादसे ग्रस्त होती हैं, लेकिन जो मानवीय सम्बन्धोंके संकटको काटकर कहीं, संयुक्त होना चाहती हैं, जिनमें आस्थाहीनताकी पृष्ठभूमिमें एक आस्थाकी रेखा नज़र आती है, आदमीके सारे टुच्चेपनके बावजूद उसे आदमी तो रहने देती हैं, जिनमें एक विशेष बुद्धिजीवी वर्गकी ही बात न होकर मोर्चेपर जाते या मारे हुए सैनिक या उसकी-सी वर्दी पहने हुए ही किसी आदमीके प्रति एक रागात्मक लगाव महसूस करते हुए साधारण आदमी, ज़िन्दगीकी जद्दोजहदमें पिटते-हारते हुए, लेकिन फिर भी जीवनको प्यार करनेवाले औसत आदमीकी तसवीर उभरती है। भले इनमें आधुनिकता, बौद्धिक संकट और अस्तित्वकी दार्शनिक समस्याओंपर वायवीय चिन्तन और ओढ़ी हुई पीड़ाएँ न हों, चाहे वे कुछ हदतक 'कण्ट्राइव्ड' लगें, मगर बात करें तो अपने वास्तविक (जेनुइन) संकटों और समस्याओंकी और जियें तो अपने घर-मुहल्ले-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नगर-देश-परिवेशके जीवनमें और मरें भी तो अपनी मौत, सलीब भी ढोयें तो अपने। इस सन्दर्भमें मुझे कमलेश्वरकी कहानियों ('मांसका दरिया') की याद आती है। यथार्थकी तलाश, यथार्थकी अभिव्यक्ति आदिकी बात बहुत और अलग-अलग स्तरों-पर की जा चुकी है मगर यथार्थ किसका ?—केवल आपका ? निर्मित ?—या आपके आसपास 'होता हुआ' ? जीवन किसका ? आपके अकेलेका या आपके आसपास नब्बे फ़ीसदी लोगोंका ?...मुझे इन कहानियोंमें जो बात प्रभावित करती है वह यह कि इनमें दृष्टि चाहे कमलेश्वरने अपनी आरोपित की हो, यथार्थ अधिकांशतः हमारा, हम सबका है—यों कि हमें आईनेके सामने खड़ा कर दिया हो !—पिता-पुत्र, पति-पत्नी, माँ-बाप और बेटे-बेटियों, पड़ोसी, दुकानदार और ग्राहक, ग़रज़ कि सारे सामाजिक रिश्तोंमें एक औपचारिकता, ठण्डापन, ठह-राव, स्वार्थ और टुच्चापन आ गया है लेकिन यह 'खुशी'का केन्द्र तो नहीं है कि आप उसे ओढ़ें और तमग़ेकी तरह सीनेपर लटकाये घूमें। एक गहरी मानवीय पीड़ा (ह्यूमन सफ़रिंग)का सूत्रपात यहींसे होता है और जो दरअसल पीड़ा भोगता है वह उसे आदर्शी-कृत (आइडिआलाइज) और मूर्तीकृत (आइडालींज) नहीं करता, उसमें छटपटाता हुआ उससे निष्कृति और मुक्ति चाहता है। उसकी हरचन्द कोशिश करता है।....यह आकांक्षा और कोशिश मुझे इन कहानियों-में मिली।....एक व्यापक मानवीय संवेदना (जो पशु-पक्षियों तकको अपनी ऊष्मामें बाँध ले) और वेगानेपन और मृत्युबोधकी पृष्ठभूमिमें जीवन-सौन्दर्यकी अतृप्त प्यासको मूर्त करनेवाली 'नीलीझील', अलेक्जेण्डर क्युप्रिनकी 'यामा'की याद ताजा कर देने-वाली 'मांसका दरिया' और युद्धकी अग्नि-परीक्षासे निकले हुए भारतीय जनके उस एक रूपको मूर्त करनेवाली 'युद्ध' और 'दिल्लीमें एक और मौत'—ये कहानियाँ एक औसत आदमीकी बग़लमें बैठकर उसके ही भावनात्मक स्तर और दृष्टिको प्रक्षिप्त करती हैं।"

—"मगर मुझे एक शिकायत इन और कमलेश्वरकी लगभग हर कहानीसे यह है कि उनकी कहानियाँ एक जीवधारी रचना (आर्गेनिज़म) की तरह विकसित नहीं होतीं, वे एक आवयविक पूर्णता (आर्गेनिक यूनिटी) की तरह न लगकर लकड़ीके किसी कुन्देको चतुराईसे तराशकर बेहद अच्छी 'फ़िनिश' की हुई किसी कृतिकी तरह लगती हैं। उनकी कहानियोंमें 'फ़िनिश', अकसर, इतनी अधिक होती है कि आप बेसाख्ता कह सकें—'हाउ लवली !' मगर कई बार इस फ़िनिशके कारण लकड़ीके मौलिक रंगों और रेशोंकी जो अकृत्रिम अपील होती है वह मारी जाती है—जैसे 'जो लिखा नहीं जाता' का अन्तिम अनुच्छेद। क्या कहानी इस वाक्य—'मैं चला आया था ! वह प्लेटफ़ॉर्मके अँधेरेमें धीरे-धीरे डूब गयी थी....' के साथ समाप्त नहीं हो जाती। इस अन्तिम अनुच्छेदको 'जैसे उनके दिन फिरे'की तर्ज़पर तोड़नेकी क्या ज़रूरत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थी ? कई बार तो कमलेश्वरकी कहानियोंके अन्तिम अनुच्छेद, वाक्य, शब्द और स्थितियाँ तक हटा देनेकी तबीयत होती है !"

—"इसका कारण मुझे यह लगता है कि कमलेश्वरका लेखन साग्रह, सोद्देश्य है। उसके पीछे एक बेहद जागरूक और सचेत लक्ष्य और अभिप्राय होता है और कमलेश्वरको उसकी इतनी चिन्ता होती है कि हर क़ीमतपर वह उसकी रक्षा करना चाहता है। तुम्हारी बातकी एक ध्वनि यह भी निकलती है और ऐसी कहानियोंके विषयमें कहा भी गया है कि वह व्यावसायिक लेखन है। यदि सोद्देश्य और सप्रयोजन लेखन व्यवसायिक हो तो, प्रेमचन्द हिन्दीके सबसे बड़े सोद्देश्य और सप्रयोजन लेखक हैं ! लोग लोकप्रियताको भी व्यावसायिक समझते हैं मगर यह एक ऐसा अस्त्र है जो बूमरैंगकी तरह मारनेवालेके पास भी लौटता है। मेरी नज़रमें व्यावसायिक लेखन वह है जो समयके प्रचलित फ़ैशन और रंगको ध्यानमें रखकर लिखा जाता है। जो किसी विधाको इसलिए नहीं अपनाता कि वह अभिव्यक्तिका अनिवार्य-अपरिहार्य माध्यम होता है बल्कि इसलिए कि उसका प्रचलन है—जैसे 'जलती झाड़ी' के बाद झाड़ियोंके इर्द-गिर्द भटकना या 'मैला आँचल' के बाद अंचलोंकी ओर भाग-दौड़। वे सबसे अधिक अवसरवादी होते हैं और किसी भी अवसरका फ़ायदा उठानेके लिए सदैव तत्पर रहते हैं। इसीके चलते आधुनिकताके नामपर हर क़स्बेमें 'बार' और 'नाइट-क्लब' खुल जाते हैं, कैबरे-नर्तकियाँ आ जाती हैं, प्यानोकी धुनें बजने लगती हैं और प्रत्येक पात्र सीधा फ़्रान्ससे 'इम्पोर्ट' किया हुआ लगता है। या ग्राम-कथानक और आंचलिकताके नामपर समूह बाँध-बाँधकर लोग शहरों-क़स्बोंसे गाँवों और अंचलोंमें पहुँचकर एकाध सप्ताहमें वहाँके कुछ ग़लत-सलत शब्द, वाक्यांश, लोकगीतोंके दो-चार टुकड़े, और एक-दो प्रथाएँ नोट कर या किसी किताबसे उड़ाकर लोक-संस्कृति, लोक-जीवनके अन्तरंग चित्र, जातीय साहित्य और ऐतिहासिक चरित्र आदिके नामपर धड़ाधड़ माल तैयार करने लगते हैं।....राजेन्द्र अवस्थीकी पचीस कहानियोंके संग्रह 'एक प्यास पहेली' की ग्यारह कहानियाँ (?) ऐसी ही हैं।....ऐसे अछूते अंचलोंपर लिखना बड़ा सुविधाजनक होता है। उस जीवनके प्रति लोगोंकी एक कौतूहल-मिश्रित जिज्ञासा होती है और इधर स्वतन्त्र भारतमें ग्रामोद्धार, सर्वोदय, कुटीर-उद्योगकी सरकारी, अर्द्ध-सरकारी योजनाओंके कारण इसमें तेज़ीसे वृद्धि हुई है, अतः उसका लाभ उठाकर, उस परिवेश और सन्दर्भकी फ़िक्र किये बग़ैर, ऊपरके तत्त्वोंको मिलाकर, लीजिए साहब, कहानियाँ तैयार ! (अवस्थीजी, आप भी मानते हैं कि कहानी कई तत्त्वोंका समन्वय है और उसमें सभीकी मात्रा बराबर होनी चाहिए) मगर इन अंचलोंके जीवनपर लिखना—कहानियाँ लिखना—उतनी ही बड़ी चुनौती भी है। मेरे एक मित्र दो-तीन वर्षों तक बस्तरके अबूझमाड़में डेरा डालकर रहे, मैंने जब उनसे उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनपर कहानियोंकी बात चलायी तो कहने लगे, उन्हें लेकर मैं एक अच्छा 'प्रबन्ध लिख सकता हूँ मगर कहानियाँ नहीं, क्योंकि मैं उनके भावनात्मक स्तरको, उनकी प्रतिक्रियाके स्वभावको उनके जीवनमें पैठे बिना कैसे अनुभव कर सकता हूँ।' अवस्थीजीकी इन तथाकथित आंचलिक कहानियोंसे मुझे यही शिकायत है कि इसमें पात्रोंके नाम तो आंचलिक हैं लेकिन इनका सारा व्यवहार, आचरण और चरित्र कोरमकोर शहरी है; पात्र ही नहीं स्थितियाँ और जीवनगत प्रतिक्रिया भी उनकी शहरी ही है।....यहाँ अवसर नहीं है वरना मैं तुम्हें बताता कि किस प्रकार बस्तरके आदिवासियों (जिनमें कई प्रजातियाँ हैं, उनकी अलग बोली है, अलग रीति-रिवाज़ और प्रथाएँ हैं), छत्तीसगढ़की जनजातियों और बुन्देलखण्डके लोगोंकी प्रथाएँ, रहन-सहन और लोकगीत, यहाँतक कि बोलियाँ भी, एक साथ एक कहानीमें मिल जायेंगी....लोक-संस्कृतियोंका यह कितना आदर्श समन्वय है! ....कृश्नचन्दरने अपनी सम्मतिस्वरूप इन कहानियोंके बारेमें एक वाक्य बड़ा सार्थक लिखा है—'वो शहरोंमें जाती हैं और जंगलोंकी खाक भी छानती हैं।' दरअसल ये जंगलोंकी खाक 'ही' छानती हैं, वहाँके जीवन और लोगोंसे इनका दूरका भी सम्बन्ध नहीं है।....मुझे लगता है कि अवस्थीजीको अब आंचलिकताका मोह छोड़ देना चाहिए। आंचलिकतासे मुझे परहेज़ नहीं है, मैं यह भी स्वीकार करता हूँ कि इतनी बड़ी सम्भावनाओंवाला यह क्षेत्र आज भी खाली पड़ा हुआ है। मुझे यह भी लगता है कि इनको 'का[illegible] एम्पोरियम'में घूमती निगाहोंसे न देखा [illegible] इनके साथ अवसरवादी दृष्टि न अपना[illegible] रचनात्मक प्रतिभाको इनकी चु[illegible] स्वीकार कर, इनके साथ न्याय किया जा[illegible] ....'एक प्यास पहेली' की इनके अति[illegible] शेष नौ कहानियाँ अपेक्षाकृत अधिक रो[illegible] हैं हालाँकि इनको देखते हुए यह नहीं ल[illegible] कि हिन्दी कहानी आज इतनी अधिक वि[illegible]सित हो चुकी है। इनमें पॉटबायलरके [illegible] प्रचलित नुस्खोंका भरपूर उपयोग किया [illegible] है।....इस संग्रहका तीसरा भाग पाँच [illegible] रचनाओंका है जिनमें हलका-फुलका व[illegible] कैरीकेचर, रेखाचित्र और कुछ हास[illegible] सामग्री है—मगर इसका यही पाँचवाँ [illegible] अधिक पठनीय है।....

पठनीय और रोचक रमेश बक्षी[illegible] प्रारम्भिक कहानियाँ भी हैं और वे कि[illegible] मनको बाँधनेवाली भी हैं: मगर व[illegible] अपने रचनावृत्तको लगातार विकसित कि[illegible] है। इस विकासके लिहाज़से उसका ता[illegible] संग्रह 'कटती हुई ज़मीन' उल्लेखनीय [illegible] प्रारम्भिक कहानियोंसे लेकर अबतक व[illegible] की कहानियोंके तीन वर्ग और तीन प[illegible] इस संग्रहमें मिल सकते हैं। इसकी प[illegible] पाँच कहानियाँ तो कच्ची उम्रके यु[illegible] युवतियोंकी भावुक, स्वप्निल और रू[illegible] वृत्तियोंको तुष्ट करनेवाली हैं। 'कॉलेजमें आये सर' और किशोरवय लड़कियों[illegible] रोमान्स, गद्यमें लिखे गये बारहमासे [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस रोमान्सके ज्वरमें हर सम्भव-असम्भव छलाँग लगाती हुई काल्पनिक स्थितियाँ। इन कहानियोंमें केवल एक बात उल्लेखनीय है—इनकी बुनावट, सलाइयोंसे बेहद नफ़ासतसे बुने गये स्वेटरकी तरह—एक उलटा, एक सीधा—एक अतीतका, एक वर्तमानका सूत्र। इस बुनावटके सहारे बक्षी किसी मनःस्थितिके प्रभावक्षणको बड़ी नफ़ासतके साथ ज्योंका त्यों प्रेषित कर सकता है। इससे अलग उसकी पाँच कहानियोंका दूसरा वर्ग, रूमानी कल्पना-लोकसे उतरकर यथार्थके धरातलपर आता है, गोकि इस यथार्थके प्रति भी उसका दृष्टिकोण कोरमकोर रोमाण्टिक है। मगर इन कहानियोंमें औसत आदमीकी ज़िन्दगीके प्रति लेखकका सहानुभूतिका रुख भी है। उनके दर्दके प्रति चिन्तित व्यक्तिकी भंगिमा और समाजकी उन शक्तियोंके प्रति व्यंग्यका लहजा जो इसके लिए ज़िम्मेदार हैं। इन कहानियोंमें बुनावटकी वह नफ़ासत छूट-सी गयी है और कहानियाँ सपाट, इकहरी होकर रह गयी हैं। बक्षीके क्रैफ़्टसे जो परिचित हैं उन्हें इन कहानियोंसे थोड़ी निराशा होगी लेकिन जो बक्षीकी प्रारम्भिक कहानियोंके धरातलसे परिचित हैं उन्हें बक्षीका यह विकास प्रीतिकर लगेगा।....तीसरे वर्गकी पाँच कहानियोंमें बक्षीने इन दोनोंको मिलाने की कोशिश की है—याने बुनावट और यथार्थ-धरातलको।.... यहाँ विद्रोहके स्वर हैं, कुछ-कुछ 'अज्ञेय' की उस पंक्तिकी तरह —'अरे ओ, आततायी, ठहर ज़रा! मेरे क्रुद्ध वीर्यकी पुकार सुनता जा।'....सामाजिक परम्पराओं और रूढ़ियोंसे निष्कृतिकी कोशिश, वर्तमान जीवनमें सम्बन्धोंकी जड़ता और औपचारिकतामें एक घुटनका एहसास, कुण्ठाग्रस्त ग्रन्थिमय व्यक्तित्व और उनकी अतिसामान्य मानसिक चेष्टाएँ, जो अपने लिए कोई-न-कोई रिफ़्यूज़ तलाश लेते हैं और यथार्थसे भागकर वहाँ छिप जाते हैं या वहींसे यथार्थको देखते हैं; निम्न-मध्यवर्गके अभावोंसे भरे जीवन और उसकी प्रतिक्रियास्वरूप स्वप्नोंकी हत्या—और इनको आच्छादित किये हुए कुछ केन्द्रीय प्रतीक। ये प्रतीक कहानियोंमें कई बार इतने प्रमुख हो जाते हैं कि लगता है, शायद इस प्रतीकके लिए ही कहानी लिखी गयी है। लगता है, जैसे पहले लोग किसी विचारके लिए कोई कहानी गढ़ लेते थे, अब बक्षीमें उस विचारकी जगह प्रतीकने ले ली है। कई बार तो किसी उपमा तकके औचित्यको सिद्ध करनेके लिए बक्षी पात्र और स्थितिके औचित्यका खयाल नहीं रखता। लेकिन बक्षीका क्रैफ़्ट-शिल्प बेहद नफ़ीस है और उसमें ताक़त है कि वह जटिलसे जटिल मनःस्थिति और अन्तर्विरोधी संवेदनाओंको बिना उनकी तात्कालिकता नष्ट किये ज्योंका त्यों प्रेषित कर सके, मनके छोटे-से-छोटे प्रभावक्षण या कौंधको उसके पूरे विस्तारमें उभार सके।"

—"मगर इस नफ़ीस क्रैफ़्ट-शिल्प और उम्दासे उम्दा प्रतीककी तलाशकी क्या सार्थकता यदि नयी वास्तविकता और यथार्थका एहसास वहाँसे ग़ायब है?"

—"उनके प्रति बक्षी इधर जागरूक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ है और प्रयोग-प्रियताके उस सीमित दायरेसे निकलनेकी कोशिश भी उसकी देखी जा सकती है। लगता है कि बक्षी पूरी कहानी-को प्रतीकके रूपमें अवधारित (कन्सीव) करता है और यह प्रतीक बहुत महीन रेशों-से जीवनके किसी घनीभूत प्रभावसे जुड़ा होता है। बक्षीकी कोशिश यह होती है कि उस प्रतीकके माध्यमसे वह घनीभूत प्रभाव भी ज्योंका त्यों प्रेषित हो जाये। मैंने [illegible] तीन वर्गोंकी बात की है, वह वर्गीकर[illegible] लिए नहीं, उसकी रचना-प्रवृत्तिकी दिशा[illegible] को स्पष्ट करनेके लिए। यदि इनके साथ [illegible] अन्तर्निहित संगति और सन्तुलन और नि[illegible] और हो तो फिर सार्थकताकी तलाश[illegible] सवाल नहीं उठेगा।''....

१३१, आज़ाद [illegible]
नरसिंहपुर (म० प्र[illegible]

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति
और उपलब्धि-परिचायिनी मासिकी

ज्ञानपीठ पत्रिका

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित

● सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, जगदीश

● मूल्य :
६.०० वार्षिक, ००.५५ पैसे प्रति

'ज्ञानपीठ पत्रिका' हिन्दीमें अपने प्रकार-का प्रथम प्रयास है, और कदाचित् अन्य भारतीय भाषाओंको देखते हुए भी, जिसका प्रयत्न एक ऐसा अध्ययन प्रस्तुत करना है जो लेखक-प्रकाशक-विक्रेता-पाठक चारोंके 'अक्षर-जगत्'की गतिविधि, नयी-प्रवृत्तियों, समस्याओं एवं समाधान, और विकास-उन्नतिकी दिशा-भूमिका सम्यक् परिचय दे, तथा परस्पर विचारोंके आदान-प्रदानका पथ प्रशस्त कर सके।

सम्पर्क-सूत्र : भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी—५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवा लेखन-९ : उड़िया

['उड़िया' शब्दके साथ ही कोणार्क-पुरी-भुवनेश्वर-कटकके नाम और वहाँकी सांस्कृतिक धरोहरका सबसे पहले ध्यान आता है, फिर सतपति और राउतरावकी साहित्यिक प्रतिष्ठाका स्मरण आता है और तब कहीं हम विचारते हैं कि वहाँके युवालेखक क्या लिख रहे हैं, क्या सोच रहे हैं। उड़ियामें साहित्यिक आन्दोलनके नामपर कोई ज्वालामुखी नहीं फूटा लेकिन लोगोंने देखा कि मन्दिरमें घूमते-घूमते कवि 'ईश्वरकी हत्याके सम्पर्कमें' विचार करने लगा, उसे लज्जा होने लगी कि 'जाड़ेमें चिलम फूँकते हुए' उसका जीवन बीत जाये। प्रस्तुत छह कवियोंकी भाषामें वह 'ओज' है जो उनके चिन्तनकी दिशा है।

सारे अनुवाद श्री प्रभातकुमार त्रिपाठीने किये हैं। रचना-चयनके सन्दर्भमें उनके एक पत्रसे कुछ पंक्तियाँ इस युवालेखनकी भूमिका है....."इन कवियोंमें-से दो (देवदास छोटराय और प्रसन्नकुमार मिश्र) बिलकुल युवा हैं। देवदास छोटराय उड़ियाकी नयी पीढ़ीमें बहुत चर्चित हैं। अलावा इनके रमाकान्त रथ (उम्र ३०) यद्यपि बिलकुल नये नहीं हैं लेकिन वे नयोंके बीच बहुत प्रिय हैं।....यूँ उड़ियाकी अधिक कहानियाँ व्यक्तिगत रूपसे मुझे पसन्द नहीं हैं। भुवनेश्वरके एक युवालेखक रवि पटनायकने बतौर प्रयोगके कुछ छोटी इम्प्रेशन-सी कहानियाँ लिखी हैं...." उनमें-से एक प्रस्तुत है। इस कहानीमें कहानीपन नहीं है, वह किसीको अप्रौढ़ लग सकता है लेकिन कथा-रूढ़िसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है।....

—सम्पादक]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छ ह क वि ता एँ

• यात्रा

तो हम जायेंगे। कहाँ ?
जाकर क्या फ़ायदा ?
किससे पूछेंगे रास्ता ?
तमाम सही रास्ते अचानक खो गये हैं
ऋषि-मुनि अपने-अपने रास्तों पर चलकर
असफल हो गये हैं;
इसलिए
हम कौन-सा रास्ता चुनेंगे ?

अगर नहीं जाने से चलता
मैं यहाँ पर बैठे-बैठे
कण्डे की आग से बदन सेंकता
और मन-ही-मन गणना करता
षष्ठीगृह से श्मशान कितनी दूर है ?
क्योंकि
मैं नदी नहीं हूँ
नहीं चाहता—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य-चन्द्र के बने रहने तक
घूमना-भटकना ।

सुना है
स्वर्ग दूर है
दान-पुण्य करने से, एक दिन वहाँ जाता है आदमी
बूढ़ी माँ कहती है
वह भी जायेगी स्वर्ग,
क्योंकि बाबा गये हैं;
धन्य है उसका साहस
इतना रास्ता चलना उसने पसन्द कैसे किया ?
मैं स्वर्ग नहीं चाहता
(उर्वशी-अमृत के लिए यद्यपि मेरा लोभ कम नहीं)
वह बड़े झमेले का रास्ता है
कँटीले विचारों का बोझ
इसीलिए
दान बाद देकर, लेना सीखा है मैंने
इससे
मुझे सीधा नरक मिलेगा
वही ठीक है । वही चाहता हूँ
बल्कि मैं नरक का कीड़ा होऊँगा
मेरा जीवन बीत जाये
जाड़े में चिलम फूँकते हुए ।

—प्रसन्नकुमार मिश्र

• पहाड़

मैं तो मुहम्मद की तरह पहाड़ के पास नहीं गया था
या कि मैंने उसे नहीं बुलाया था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा कमरा खुला था, इसीलिए वह घुस आया।
उस वक़्त
जब दूसरा प्रहर, आकाश से उतरकर
टगर के पेड़ से लेकर
हमारे घर के चारों तरफ़ टहल रहा था।
मैं इस असम्भव दृश्य को देखकर हतप्रभ हुआ
और मैंने पहाड़ को कुरसी दी
और चाय के लिए केतली चूल्हे पर चढ़ा दी।

भूगोल पढ़ना बेहद कठिन है
एटलसमें कहीं पर लाल दाग़, कहीं नीली रेखा, काला निशान
खोजते-खोजते आँखें थक जाती हैं
और क्लास की पिछली बेंच नींद में डूबी रहती है
और कहीं पर पहाड़
किसी पिकनिक की चहल-पहल में
इधर-उधर भटकते
मेरे जूते की रस्सी टूट जाती है
और पैंण्ट काँटों में फँस जाता है

पहाड़ चीनी की तरह गिलास में घुल गया
मेरे कन्धे भारी लगने लगे
और भूगोल की किताब के छप्पनवें पृष्ठ पर
कोई एक एवरेस्ट चढ़ रहा है
अब मुझे पता लगा—किसने मुझे धोखा दिया है :
आह, मैंने बचपन से, कटहल के बगीचे में
पेड़ पर चढ़ना क्यों सीख लिया ?
क्यों मैंने चाहा
टूटे युवापन में इतना वज़न ?

—सौभाग्यकुमार मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• जहाज़

अचानक जब शहर की सारी बत्तियाँ बुझ जाती हैं
मेरे रक्त के अंधेरे के भीतर
कौन आकर मरम्मत करता है
सफ़ेद हड्डियों के जहाज़ की;
और जब फिर रोशनी होती है, मैं आश्चर्य से देखता हूँ
मैं अपनी कुरसी पर बैठा हूँ, दोनों हाथ ऊपर ताने
जैसे
समुद्र में पाल ताने कोई जहाज़ ताकता रहता है
चमचमाती निश्चल लहर को

मैं उस कारीगर को जानता हूँ
जो अँधेरे में मरम्मत करने का आदी है
जिसके औज़ारों की मार से
हड्डी, माँस हो जाती है, माँस रक्त हो जाता है
और रक्त समुद्र का पानी हो जाता है
दुख का जहाज़ रात-भर में तैयार हो जाता है
(अच्छा है, जल्दी खत्म हो जायेगी यह यन्त्रणा)
सवेरे मैं जहाज़—पानी मेरा कमरा
मेरा कमरा पानी में, मैं उजला जहाज़
मैं, राजहंस, मैं अपनी छाती का सफ़ेद घाव
सूर्य खड़ा रहता है मेरी खिड़की के बाज़ू से लगे बगीचे में
माली, इस लफंगे को फूल न देना
जो नहीं जानता फूल का महत्त्व
जो साज़िश करता है
मुझसे, मेरी रक्त-सनी छाँह को अलगाने की,
(सूर्य, देखो तुम्हारी सहायता के बग़ैर भी
मैं किस तरह अपनी कोठरी के पानी में बह रहा हूँ
तुम शैतान हो, फूल तोड़ने वाले बालक
तुम्हें मेरे चक्रवाल में आने की मनाही है)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कौन छिपा है मेरे रक्त में
रुको भाई, थोड़ा रुको;
सुनो कोई औरत रो रही है;
आखिर रोने का कारण क्या है ?
जहाज़ की मरम्मती तक
मैं तुम्हारी चाँदनी में खेल रहा था
अब मैं जहाज़ को समुद्र में खोल दूँगा
मेरा क्या आता जाता है
अगर एक रात में
तुम्हारी चमेली का फूल बासी हो जाता है
तुम्हारी चादर मैली हो जाती है

अच्छा कारीगर ! अब शुरू करो
धरती को कोठरी में
और कोठरी को क्षण के गर्भ में लेकर रख दो
जहाज़ अब प्रस्तुत हो
मैं भी तैयार हूँ लौटने के लिए
(हे उजले जहाज़, हे राजहंस, हे सफ़ेद घाव,
अब तुम निश्चिन्त वहाँ ले जाओ अपने 'गोविन्दचन्द्र' को)

मैं चलता हूँ
लेकिन सुनो ओ उदासीन कारीगर,
उस शैतान बालक को मना करो
कि वह फूल न तोड़े
और परेशान न करे
फूल-भरे बगीचे के बीच
मेरे बिरह में रो रहे माली को।

—हरप्रसाद दास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• खूँटा होने से पहले

मैं किसे सुनाऊँगा अपने डैनों की फड़फड़ाहट
अँधेरे कमरे के भीतर,
मैं किसलिए और किस तरह आवृत्ति करूँगा
'ब्रजनाथ बड़जेना' की पंक्तियाँ
पक्षाघात ग्रस्त मैं, अपना पुआल-ठुँसा मुँह लिये
क्यों न हो जाऊँगा खूँटा—निश्चल निर्वाक।
कई कोशिशों के बावजूद
मैं नहीं डुबा सका अपनी चेतना
तुम्हारी सभ्यता में,
इसलिए प्रश्न उठता है—
मेरी चेतना मुर्दार है
या तुम्हारी सभ्यता मरुसागरीय ?
दोनों ही सच हैं।

अलीबाबा
कहाँ छिपा रखा है तुमने खुल जा सिमसिम ?
इस क़िले की चाबी कहाँ है ?
कानवेक्स दर्पण में कौन चीन्हता है अपना चेहरा ?
अपने तर्पण में कौन मृत्यु की मिन्नत बन जाता है ?

जिस सराय का बूढ़ा
हुक्का पीकर, जमुहाई लेकर हाय-हो बकता है
तुम उसे सिनिक कहते हो
उसने देखा है कई लाशों का घसीटा जाना
सराय से सीमान्त घाटी तक
नहीं वह अलीबाबा नहीं है
लेकिन वह जिस बुढ़िया को प्यार करता है
सब जानते हैं····
और वह बुढ़िया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैसे रोक पायेगी झाडू से समुद्र को ?
आत्महत्या करने से अगर यह धरती युवती हो जाती
तो मैं इच्छा-मृत्यु वरण करता
मेरी 'ममी' 'डमी' होकर रहती उस युवती के झरोखे पर
और चाबी घुमाने पर नाच-नाच कर कहानी कहती
अलीबाबा के बारे में, सराय के बूढ़े के बारे में,
रूसो और मार्क्स के द्वन्द्व-तत्त्व के बारे में।

लेकिन
मैं कैसे सुनाऊँगा अपने प्रिय बहरे श्रोताओं को
मैं कैसे दिखाऊँगा अपने प्रिय जन्मान्ध द्रष्टाओं को
मैं तो स्वयं मूकप्राय हूँ, मैं तो स्वयं पक्षाघात ग्रस्त हूँ
मैं क्यों न हो जाऊँगा खूँटा ?

—राजेन्द्र किशोर पण्डा

• ईश्वर की हत्या के सम्पर्क में

हे प्रभु, तुम व्यस्त रहते हो
शायद तुम्हें पता नहीं कि मैं रोज मन्दिर जाता हूँ,
रोज, स्कूल के बच्चे-सा।

तुम्हारी लकड़ी की आंखें हैं
और तुम्हारी दृष्टि की करुण बरसात में
मैं भी भीगता हूँ प्रभु,
नींद मेरी एकमात्र दुश्मन है
आसानी से नहीं आती
सारी रात, रास्ते पर हकालती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़ालतू रूमाल की तरह फाड़-फाड़ कर
किसी कुरसी, किसी टेबिल पर रखती है
दूसरे दिन मैं प्रार्थना करता हूँ
फिर प्रातःस्नान, फिर पूजा के वस्त्र पहनता हूं
और तब मन्दिर जाता हूँ
पद गाता हूँ
शाम होने पर, शंख-ध्वनि होने पर
काकुस्थ नाव की तरह, तुम्हारे घर के समुद्र की रेत में पड़े रहने को।

फिर भी अच्छा नहीं लगता
कोई एक क्षुब्धता, कोई एक व्यवधान
किसी गुप्त घाव से खून टपकता हो ज्यों बूँद-बूँद;
मन्दिर स्थिर रहता है, दीवाल की तरह, अहंकार की तरह
और हे ईश्वर,
मुझे एक क्षमाहीन-चरित्रहीनता ग्रस लेती है
छायाच्छन्न-गम्भीरता में घण्टे की आवाज़
ट्रेन की आवाज़-सी लगती है
ब्राह्मण का स्वेद, वेश्या के पसीने-सा बरसाता है
उठी छातियों सहित, उल्का-सर्पों-सी कई युवतियों का दल
घुस आता है, तुम्हारे मन्दिर में
मैं खूँटे के पास अपेक्षा करता हूँ
मेरी देह पत्ते के समान काँप रही होती है
कब होगी आधी रात
और कब—
मैं और ब्राह्मण मिलकर
इनकी उठी छातियों में तुम्हारा सिन्दूर टीपेंगे···

धीरे-धीरे आधी रात होती है
अँधेरे में गुम जाता हूँ मैं
मन्दिर विलीन हो जाता है
तुम नीलवर्णी हो जाते हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भय और षड्यन्त्र, कृष्ण-मेषकी तरह
खड़े हो जाते हैं मेरे सामने
मुझे लगता है
मन्दिर में हलचल या हत्याकाण्ड होगा
देवता और देवताओं के बीच;
या फिर सभी देवता मिलकर
किसी क्रीतदासी से बलात्कार करेंगे....

मैं तुम्हें अचानक देखता हूँ, हिंसा-घृणा से भरकर
ब्राह्मण का पता नहीं। घण्टे की रस्सी साँप-सी झूलती है।
मैं आतंकित होकर लौट आता हूँ;
कि धुँधुवाये कालेपन और पुराने पत्थरों से
कोई एक अव्यक्त ध्वनि
किसी का क्रोधित चाकू चलता है
किसी देवता की द्विखण्डित गरदन लुढ़कती है

मैं आतंकित होकर लौट आता हूँ
मेरे कन्धों पर टूटता है मन्दिर
जो सीढ़ी ऊपर गयी है
वह नीचे खिसक जाती है,
रास्ते में न बत्ती है, न कुत्ता, न कोई भिखारी

मैं सोचता हूँ
सुबह होने पर थानेदार को ज़रूर पता चल जायेगा,
मन्दिर में इन्क्वायरी....। दारोग़ा अनन्त सुबुद्धि...!
खून-सना फ़र्श, दो टुकड़े गरदन, कटी उँगलियाँ
मृत देह, देवी, देवता, दूत, सैनिक इत्यादि इत्यादि.... ।

—देवदास छोटराय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• ंगीन मछली

अँधेरे में धुँधलाया पर्वत और वर्षा के लिए प्रस्तुत आकाश
मोह का समुद्र और मैं—एक छोटी रंगीन मछली।
आँख मूँदकर
बस-स्टैण्ड से कटे अशोक-वृक्ष की जाँघ तक
तैरते रहना;

हे केवट!
क्या तुम अभी मुझे अपने जाल में फाँस लोगे?
और बचा लोगे—
इन बड़ी मछलियों की भूखी पिछदौड़ से?

और हे केवट,
क्या सूर्यास्त के पहले
तुम मुझे इस पहाड़ को पार कराकर
ऊपर ले जा सकोगे
उस कटे अशोक-वृक्ष के नीचे
अभिमन्त्रित रेत में
असंख्य बीते हुए 'अदृश्य कल'
मेरी प्रिया के जूड़े को उलझा रहे हैं
और सूर्यास्त के साथ
वह आग की लपटों में मिल जा रही है
अब तुम अपना जाल फेंको
मेरा शव आखिरी बार उसे देखे
और तुम्हें
(और रेत में निश्चल मेरे रक्ताक्त स्वप्न को)

—रमाकान्त रथ
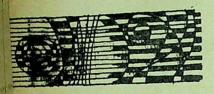
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्जन द्वीप में विलाप

—रवि पट्टनायक

हरे जंगलोंमें घिरी हुई, छोटी-सी बस्तीमें घिर आयी है शामकी काली छाया। लम्बे-लम्बे शाल-वृक्षोंके सिरोंपर लगे रह गये हैं, ढेर-ढेर आलोक-पुंज।

आजका दिन मर रहा है। यह 'आज' अब कभी नहीं लौटेगा। इसीलिए मरते हुए आदमीने सबकुछ लिपटाकर रखा है—सब-कुछ, जो कुछ भी है उसके हाथमें। वह मरना नहीं चाहता—इस सुन्दर धरतीको छोड़ना नहीं चाहता····। लेकिन जाना ही होगा····इसमें कोई व्यतिक्रम नहीं।

इसे ठीक बस्ती भी नहीं कहा जा सकता। सिर्फ़ तीन-चार तम्बू। एकमें मैं, दूसरोंमें सन्थाल-मजदूर। पृथ्वीके गर्भमें छिपे रत्नोंकी तलाश मेरा काम है—भूगर्भशास्त्री हूँ मैं। यह रत्न यन्त्र-युगका है—लोहा।

दिन-भरकी थकी देहको तम्बूके भीतरकी खाटपर फेंककर मैं देख रहा था सूर्यास्तको। कितने दिनोंसे देख रहा हूँ—कुछ भी नया नहीं है—और बढ़ती जा रही है पहाड़के नीचेकी लम्बी काली छाया। धीरे-धीरे लम्बीसे और लम्बी होती हुई—बिलकुल रोज़की तरह।

कॉलेज-स्क्वेयरपर लड़कोंकी भीड़ जमने लगी होगी। गेटके पास, दीपकके नेतृत्वमें कुछ लोग ऊँचे स्वरमें आलोचना कर रहे होंगे—चीनी आक्रमणके सम्बन्धमें। कुछ लोग शायद 'अपना-दूकान' के आईनेके सामने खड़े-खड़े सिगरेट फूंकनेके बहाने, चेहरे देख रहे होंगे। एक दल 'पिलग्रिम-रोड' की तरफ़ घूमने निकल गया होगा। और वह लम्बी-पतली लड़की, अपनी छोटी बहनके साथ घूमने निकली होगी या घूमकर लौट रही होगी····

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह लड़की !

वह लड़की—लाल साड़ी—लाल ब्लाऊज—हाथोंमें लाल चूड़ियाँ—पैरोंमें लाल चप्पलें ।

एक बार दुर्गाने मज़ाक़में कहा था—'लाल परी' ! वह काफ़ी नाराज़ हो गयी थी । नहीं, अगर सच कहा जाये तो उसने नाराज़ होनेका ढोंग-भर किया था । अपनी सहेलियोंके पास जाकर उसने शिकायत-सी की थी—"देखो तो, कैसा बाज़ारू लड़का है—मुझे लाल परी कहता है ।"

कहनेमें दिखावटी नाराज़गी थी । लेकिन उसने मन-ही-मन कहा था—'देखो मैं तुमसे बड़ी हूँ । मुझमें सौन्दर्य है । मुझमें आकर्षण-शक्ति है । मैं आलोचनाका विषय हो सकती हूँ । तुम सब कुछ नहीं हो ।'

सहेलियोंने उसे सान्त्वना दी होगी, वैसे ही औपचारिक ढंगसे । भीतर ईर्ष्यासे सुलग गयी होगी ।

नारीकी ईर्ष्या—गोखुर साँपका उठा हुआ फन ।

लेकिन लड़कीका कोई अपराध नहीं । हम सबके सब अपराधी हैं । अपनी ही देहके भीतर बन्दी हम सब चीत्कार रहे हैं—'मुझे देखो, मैं पुकार रहा हूँ—मुझे चीन्हो ।'

तम्बूके सामने, करमू माझीने रोशनी कर दी है । सारी रात जलती है यह बत्ती । दूसरे तम्बूके सामने कुछ लोग सुलगी हुई आगको घेरकर बैठे हैं । रातका खाना पक रहा है—और अज्ञानी आदिवासी गुन-गुना रहे हैं ।

ओफ़ ! ऊब होने लगी है । दिन-भरकी थकानके बाद कोई तो ऐसा नहीं जिससे बात करके जी हलकाया जा सके । थोड़ी गप्पें हों । इनके साथ क्या गपशप ? ये खाने और गानेके सिवा कुछ नहीं जानते ।

इस साल धान अच्छा क्यों नहीं हुआ—चावलका भाव कितना बढ़ गया है—कब, कहाँसे, किस तरह शेर किसको खींचकर ले गया—इसके अलावा कुछ नहीं ।

ये सब अलग हैं । पूरी तरह दूसरे हैं । मेरी महफ़िलसे, मेरे समाजसे इनका कोई सम्बन्ध नहीं ।

ये सब असभ्य हैं । मूर्ख हैं इसीलिए जीवनको उसके सहज प्रवाहमें भोगते हैं, जीवनके प्रवाहके छन्दको रोकते नहीं ।

मैं सभ्य हूँ, सुशिक्षित हूँ । इसलिए मैं जीवनकी 'रक्षा' करता हूँ—ढेर सारे क्षणभंगुर कृत्रिम विलासके क़िले बनाकर ।

इनके सामने मैं पकड़ लिया जाता हूँ । मैं वापस लौटना चाहता हूँ—अपने परिवेश-में अपने समाजमें । आह, यहाँ मेरा दम घुट रहा है । यायावर समझता है देशका मोह ।

—"बाबूजी, खाना नहीं खायेंगे ?"

सिर्फ़ सात ।

—"तुम सब खा लो, मेरे लिए रख देना ।"

बाहर घने अँधेरेका मोटा परदा है । भीतर सुनाई पड़ती है—कितने सारे पशु-पक्षियों कीड़ों-मकोड़ोंकी आवाज़ । एक मिलित स्वर ।

सिर्फ़ सात बजे हैं । रमाकान्त शायद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी काठजोड़ीके पुलपर-से घूमकर लौटा नहीं होगा। प्रताप शायद बैडमिण्टन-कोर्टमें चन्द्रमुखीको खेलकी टेकनिक सिखा रहा होगा। यूनिवर्सिटी-होस्टलके सामने रखी साइकिलें अभी हटी न होंगी—और मुझे अभीसे खा-पीकर सोना पड़ेगा। लाचारी है।

ओह ! सब कितने स्वार्थी हैं ! एक खत भी लिखते नहीं बनता। इस एकाकी जीवन-में वही तो एक आश्वासन है। इस कटी हुई जीवन-यात्रामें पत्र ही दुनियासे सम्पर्कका माध्यम है। छोड़ो—प्राचुर्यमें रहकर अभाव-की सोचना फ़ालतू बात है। भूल हो गयी।

अगर कोशिश करके किसी एक लड़कीसे प्रेम कर सका होता तो ठीक होता। कम-से-कम वह तो मुझे नहीं ही भूलती (लेकिन इसका भी क्या भरोसा ?) फिर भी वह खत तो ज़रूर लिखती। आँसुओंसे काग़ज़ भिगोकर, मेरी यादमें जागकर काटी गयी रातोंका हिसाब देकर—और भविष्यकी कई काल्पनिक योजनाओंके साथ····

हटाओ। बेकार बात है। पर अच्छा लगता, ख़ुशी होती। अपने ऊपर आस्था बढ़ती। कोई एक है जो मेरे लिए रो रही है।

पर कुछ भी नहीं हुआ। पछताना ही सार है। उस वक़्त कितना मज़ाक़ उड़ाता था मैं इस सबका····वासन्ती किस तरह रंजन-के लिए घण्टों खड़ी रहती थी !

ज्योत्स्ना शायद अपने प्रेमीके साथ, हनीमूनके लिए स्विटजरलैण्ड जानेवाली है।

लेकिन फ़ायदा क्या है ? थोड़ी-सी स्मृतियाँ, जिनमें न उत्तेजना है न ख़ुशी।

अब किसीके बारेमें सोचना अच्छा [illegible] लगता। मन किसी एकको चाहता है, [illegible] पर केवल उसीका हक़ हो—वह चाहे [illegible] हो, कैसी भी हो लेकिन सिर्फ़ एक ही [illegible]

'बहुत'के भीतर 'एक' की खोज [illegible] गयी है। सबको चाहकर किसीको नहीं [illegible] सका हूँ। सबको अपना बनानेकी को[illegible] किसीको अपना नहीं बना सका हूँ ! ब[illegible] गयी है व्यर्थता—एक खोखली व्यर्थता।

जानते हुए भी नहीं जान सका [illegible] इसीलिए सात रंगोंके साम्राज्यमें खोज [illegible] था आलोक। आज समझमें आ [illegible] बात—सूर्यमें ही सातों रंग हैं। एकके [illegible] सब कुछ है।

अगर इस वक़्त कोई आये तो "[illegible] थकी देहको अपने मुँहसे लगाकर कहे-आयी हूँ, मैं आयी हूँ। सिर्फ़ तुम्हारे लि[illegible] कितनी नदियाँ कितने समुद्र पार क[illegible] उठो, आओ उठ आओ, मैं तुम्हें लि[illegible] लूँगी—मैं सृष्टिकी प्रतीक हूँ। मेरे भीतर तुम्हारे सृजनका प्रतिबिम्ब है। अनुभव करो—तुम सबको अनुभव सकोगे। मुझे छू लो—सबको छू स[illegible] मैं एक हूँ—लेकिन अनेक हूँ। देर न [illegible] उठो आओ न।'

लेकिन क्या सचमुच कोई आयेगा ?

(सभी रचनाओंके अनुवा[illegible]
प्रभातकुमार [illegible]
रामगुड़ी पारा, रायगढ़-म[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
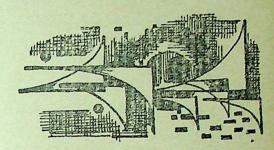
'स्वदेशी मेरे मन बसी'

डॉ० आत्मारामसे भेंट

—हरीश अग्रवाल

■

[आज़ादीसे पहले और आज़ादीके बाद स्वदेशीका जो नारा हम देशमें सुनते थे, वह अब नहीं सुनाई देता। क्या कारण है? देशके प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ० आत्मारामका कहना है कि हमारे मनमें स्वदेशीकी भावना नहीं रही। हमारा राष्ट्र-प्रेम शिथिल हो गया। आत्मनिर्भरताकी दिशामें हम कैसे आगे बढ़ सकते हैं? इस विषयपर एक परिसंवाद डॉ० आत्माराम और विज्ञान-पत्रकार श्री हरीश अग्रवालके बीच।]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न : डॉ० आत्माराम, आप कलकत्ताकी काँच व मिट्टी अनुसन्धान-शालाके निर्देशक रहे और अब आप राष्ट्रीय प्रयोगशालाओंका संचालन करनेवाली संस्था कौंसिल ऑफ़ साइण्टिफ़िक एण्ड इण्डस्ट्रियल रिसर्चके महानिर्देशक हैं। इतने अनुभवके बाद क्या आप बता सकते हैं कि आज २० साल बाद भी हम अपनेको आत्मनिर्भर कहनेका दावा क्यों नहीं कर सकते।

उत्तर : हरीशजी, यह बात हर देशवासीमें स्वदेशीकी भावना जागृत होनेपर निर्भर करती है। आज़ादीसे पहले महात्मा गान्धी और अन्य नेताओंने देशको स्वदेशीका मन्त्र दिया था। इसके लिए लोगोंने अनेक त्याग किये, एक जागृति पैदा हुई और देश-प्रेमका बीज अंकुरित हुआ। यह बड़ी अच्छी बात थी क्योंकि देश-प्रेम नहीं होगा तो कुछ नहीं होगा। देश-प्रेमके कारण ही स्वदेशीकी भावना आयी। यह भावना आज़ादीके समय तक रही, लेकिन फिर शिथिल हो गयी।

प्रश्न : शिथिलतासे आपका अर्थ क्या है ?

उत्तर : शिथिलतासे अर्थ देशकी चीज़ोंसे प्रेम न होनेसे है। विदेशी मालका मोह होना। मसलन कोई व्यक्ति जर्मनीकी किसी चीजको अपने पास रखकर अपनेको बड़ा गौरवान्वित अनुभव करता है। क्यों नहीं वह स्वदेशी मालपर इतना गौरव करता ?

प्रश्न : लेकिन जब स्वदेशी माल अच्छा ही न हो....

उत्तर : सवाल यहाँ अच्छे-बुरेका नहीं है। सवाल भावनाका है। हमारे मनमें यह भावना ही क्यों आती है कि जर्मनी या इंगलैण्डका माल अच्छा ही होगा, देशका माल खराब होगा। आप हमारी कलकत्ताकी काँच-अनुसन्धान-शालामें बना ऑप्टीकल-काँच ही ले लीजिए। यह काँच हमने अपने देशी साधनोंसे ही प्रयोगशालामें बनाया। कई वर्ष तक प्रयोग किये, लेकिन हमने न कोई विदेशी सहायता ली और न विदेशी धरतीकी कोई चीज़ ली। नतीजा यह निकला कि हमने जो ऑप्टीकल-ग्लास बनाया वह दुनियाके किसी भी काँचसे नीचा नहीं ठहरा। वैज्ञानिक अनुसन्धानमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुन्नत देश अमरीकामें भी इसकी जाँच पड़ताल की गयी और यह बहुत अच्छा पाया गया।

मैं अभी रूसकी यात्रा करके लौटा हूँ। वहाँका एक उदाहरण आपको देता हूँ। वहाँ लोगोंके मनमें वह भावना है कि रूसमें जो चीज़ बनती है वह सबसे अच्छी है। वहाँकी सरकारने विदेशोंसे सारा उपभोक्ता-माल मँगाना बन्द कर दिया, मजबूर होकर रूसियोंको अपनी चीज़ इस्तेमाल करनी पड़ीं।

प्रश्न : लेकिन वे आत्मनिर्भर कैसे बने ?

उत्तर : इसलिए कि उन्होंने अपनी ही चीज़को सर्वोत्तम बताया, चाहे वह औरोंसे खराब ही हो। यदि कोई चीज़ खराब भी थी तो उसमें सुधार किया गया। हाँ, उन्होंने हमारी तरह नहीं किया। यहाँ यदि कोई यन्त्र बना, तो उठाकर रख दिया और कहा कि अमरीकासे मँगा लेंगे। यदि यही भावना रही तो सुधारकी गुंजायश कहाँ हो सकती है ! मैं कुछ साल पहले जब रूस गया था तो वहाँसे काँचकी एक बोतल लाया था। यह बोतल हमारे देशकी बोतलोंसे कहीं घटिया थी। लेकिन बढ़िया बोतलका क्या करना है जब घटिया बोतलमें भी कोई चीज़ रखकर काम चलाया जा सकता है। इसलिए हमारे काम लायक़ यदि कोई चीज़ है तो उसे ही अपनाना चाहिए, दूसरोंका मुँह क्यों ताकें।

प्रश्न : इतने प्रयत्नोंके बावजूद हम आत्मनिर्भर क्यों नहीं हो पाये ? अब भी हम अनेक चीज़ोंका आयात करते हैं। इसका क्या कारण है ?

उत्तर : हमने वास्तवमें उन उद्योगोंको नहीं सँभाला, जिनके मालको हम निर्यात करते थे। विकासशील अर्थ-व्यवस्थामें हम सारे उद्योगोंकी स्थापना नहीं कर सकते। हमें उद्योगोंमें चुनाव करना होगा। हम पहले उन्हीं उद्योगोंको लें जिनसे हमें धन वापस मिले, उत्पादन बढ़े और देशकी आर्थिक स्थिति सुधरे। हम कुछ ही चीज़ोंमें कमाई करें और उन्हींको बढ़ाकर अपनी आय भी बढ़ायें। छोटे और लघु स्तरके कामको बढ़ाना तो आसान है लेकिन पहले ही इतना बड़ा उद्योग स्थापित कर लें कि उसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सँभालना मुश्किल हो जाये, यह कहाँकी अक़्लमन्दी है !

अब आपने पूछा कि आयात कैसे कम करें, निर्यात कैसे बढ़ायें। इसके उत्तरमें मैं यही कहूँगा कि हमें अपने उत्पादित मालमें निरन्तर सुधार करते रहना चाहिए। अब प्रतियोगिता बहुत बढ़ गयी है, इसलिए उद्योगोंको भी विज्ञान-क्षेत्रमें हो रहे नये प्रयोगोंसे सम्पर्क रखना होगा। अपने यहाँ अच्छी प्रयोगशालाएँ खोलनी होंगी, तभी वे अपने मालमें सुधार कर सकते और नयी-नयी चीज़ें बना सकेंगे। उद्योगोंका उद्देश्य दो रुपयेकी चीज़ चार रुपयेमें बेचना ही नहीं होना चाहिए, बल्कि अपने मालमें सुधार भी करना होना चाहिए। उद्योग प्रयोगशालाओंसे अलग नहीं रह सकते और प्रयोगशालाएँ उद्योगोंसे अलग होकर अपना काम नहीं चला सकतीं।

प्रश्न : आप स्वदेशी मालमें सुधारकी बात कर रहे हैं। यह सुधार कैसे हो सकता है ?

उत्तर : इसके लिए हमें 'तकनीकी निपुणता' चाहिए। इसको मैं 'टेक्नालॉजीकल कम्पीटेन्स' कहता हूँ और इसका प्रयोग सबसे पहले मैंने जब लन्दनमें राष्ट्रमण्डलीय वैज्ञानिक सम्मेलनमें किया तो रॉयल सोसायटीके प्रेसीडेण्ट प्रो० पी० एम० एस० ब्लैकेटने मेरे विचारोंकी बड़ी प्रशंसा की। हमारे लिए वैज्ञानिक और इंजीनियर ही पर्याप्त नहीं—हमें काफ़ी संख्यामें तकनीशियन भी चाहिए। हमने इनके प्रशिक्षणकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। वैज्ञानिकों और टेक्नालॉजिस्टोंके कामका सदुपयोग करनेके लिए हमें काफ़ी संख्यामें तकनीशियन चाहिए। उनको वैज्ञानिकोंके बराबर सामाजिक सम्मान मिलना चाहिए।

आप पूछेंगे कि विदेशी टेक्नालॉजी हम कब अपनायें ? यह उसी समय अपनायें जब हमारे पास यह उपलब्ध न हो। हमारे-जैसे देशके लिए समयका बड़ा महत्त्व है। इसलिए यदि विदेशी टेक्नालॉजी अपनाकर हम अपना तकनीकी ज्ञान बढ़ा सकते हैं और उसे अपनी परिस्थितियोंमें ढाल सकते हैं तो कोई बुराई नहीं। ज़रूरत इस बातकी है कि आयात किये गये मालके स्थानपर हम देशी सामग्रीका उपयोग करें। यह हमारी तकनीकी क्षमतासे ही सम्भव है। हम विदेशी टेक्नालॉजीके साथ विदेशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माल आयात करते हैं और बहुधा ऐसा होता है कि जो माल देशमें बनता है उसका भी हम आयात करने लगते हैं। यह स्थिति बहुत खराब है।

प्रश्न : हम टेक्नालॉजी कबतक उधार लेते रहेंगे ? क्या हम इस मामलेमें आत्मनिर्भर नहीं बन सकते ?

उत्तर : क्यों नहीं बन सकते। जैसा मैंने बताया, भारत-जैसे विकासशील देशके लिए विकसित टेक्नालॉजीसे लाभ उठानेमें कोई बुराई नहीं है। लेकिन टेक्नालॉजीका लाभ उठाने या उधार लेनेका मतलब यह नहीं कि हम यह क्रम निरन्तर जारी रखें। किसी टेक्नालॉजीको उधार लेनेके बाद हमें यह देखना चाहिए कि हम अपने देशमें ही उस टेक्नालॉजीके विकासके लिए क्या-कुछ कर सकते हैं। जापानने इस तरह काफ़ी प्रगति की है, तो फिर हम क्यों नहीं कर सकते। जापानने इलैक्ट्रोनिक्समें अमरीकी और जर्मन विधियाँ अपनायीं लेकिन उनको अपनी परिस्थितियोंके अनुसार ऐसा ढाला कि इन विधियोंसे भी सुधरी विधियाँ उसने अपने यहाँ ईजाद कर लीं और अब विश्वके बाज़ारोंमें जापानी मालकी बड़ी साख है।

अन्तमें मैं यहीं कहूँगा कि अपने देशमें टेक्नालॉजीके विकासके लिए हमें पहले तो क्षमता उत्पन्न करनी होगी और फिर उसका विकास करना होगा लेकिन इनसे भी बड़ी बात स्वदेशीकी वह भावना है जिससे हमने आरम्भ किया था। जबतक यह भावना हर देशवासीके मनमें नहीं बसेगी तबतक हम अपने आप कुछ न कर पायेंगे और विदेशोंका ही मुँह ताकते रहेंगे। मैं समझता हूँ कि स्वदेशीकी भावनासे ही हम आत्म-निर्भरताका पाठ पढ़ सकते हैं।

■ ■

२९।१८० लाजपतनगर-४,
नयी दिल्ली-१४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकर्षक
पैकेज
आकर्षक
लेबेल ************* क्रेता की दृष्टि आकर्षित करने को बाध्य है

यह सही है कि चीजों की अच्छाई ही क्रेता को उन्हें खरीदने को मजबूर करती है— साथ ही साथ उन पैकेजों की विशेषता भी जिनमें चीजें हिफाजत से बन्द रहती है। पैकेज की सुन्दरता उसमें बन्द चीजों की सुन्दरता ही प्रगट करती है।

रोहतास डालमिया नगर स्थित अपने आधुनिक और उन्नतशील कारखाने में कार्टन और पैकेज बनाने लायक सर्वोत्तम पैकेजिंग पेपर और बोर्ड तैयार करते हैं, जिन पर बहु-रंगी छपाई के लिये भी भरोसा किया जा सकता है।

रोहतास पेपर्स और बोर्ड्स अच्छाई के प्रतीक हैं

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमिया नगर (बिहार)

मैनेजिंग एजेन्ट्स :—साहू जैन लिमिटेड, ११, क्लाइव रो, कलकत्ता-१
सोल सेलिंग एजेन्ट्स :—अशोका मारकेटिंग लिमिटेड, १८८, बार्बोर्न रोड, कलकत्ता-१

PC : RI : 492 H

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
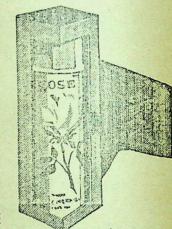
पाँच कविताएँ

—भारतभूषण अग्रवाल

• पिकनिक पर

ऐसा क्यों है
कि मैं जिस क्षण को भी जीने चलूँ
वही कलेण्डर के पन्ने में डूब जाय !

वसन्त की ढलती धूप में पसरी यह रेतिया
कल मेरी बच्ची के 'एल्बम' में जड़ जायेगी,
आनन्द के झरने-सा यह छुट्टी का दिन
बैठक के ताक में 'सॉवेनिर' बन जायगा
और तुम्हारे साथ बिताई यह नदी तट की शाम
एक बैरंग चिट्ठी
जिसे डाकिये के हाथ में देखते ही
मैं लौटाने को कह दूँगा !

मैं जान भी न पाऊँगा
कि आज की यह ललक
कल मेरी मेज़ पर
'पेपरवेट' बन जायेगी !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• हर रोज़

हर रोज़
एक कुतुबमीनार
मरम्मत के लिए ठेले पर जाती है
हर रोज़ एक झण्डा
मुझे सड़क पर कुचला मिलता है
हर रोज एक भविष्य
अस्पताल में दाखिल होता है
हर रोज़ एक सपने को
मैं भरती के दफ़्तर पर खड़ा देखता हूँ
हर रोज़ एक नारा
जुलूस में चलता है और रेस्तराँ में घुस
जाता है
हर रोज़ मैं एक कविता लिखने बैठता हूँ
और चील–बिलौए बन जाते हैं !

• कोट-सप्तक

मुझे उन लोगों पर बड़ा ताज्जुब होता है
जो एक ही कोट से काम चला लेते हैं
मैं तो हरदम सात-सात कोट डाटे रहता हूँ

एक कोट मुझे मेरे पिताजी ने दिया है
(भगवान उनकी आत्मा को शान्ति दे)
और एक मेरे गुरूजी ने
(हाय, उन्हें दक्षिणा कब दूंगा ?)
एक कोट दिया है राष्ट्र-पिता ने
(बोल, महात्मा गान्धी की जय !)
और एक कोट राष्ट्र-कवि ने
('सुनो, स्वर्ग क्या है ? सदाचार है
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है')
एक, मेरे काम से प्रसन्न होकर मेरे अफ़सर
(हाय, कोट के बदले प्रमोशन क्यों न दिया
एक, मेरी प्रेयसी ने
(किसी दिन हिम्मत करके उसका नाम लूं
और एक कोट मैंने एक-एक पैसा जोड़कर
खुद खरीदा है
(नक्खास, ज़िन्दाबाद !)
पर हाय री नयी दिल्ली की ठण्ड
जो सातों को भेदकर हड्डियों से टकराती
और मैं हमेशा काँपता ही रहता हूँ !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• समाप्ति

ज़िन्दगी को भूल-भुलय्याँ मान कर
मैं दौड़ता और छटपटाता
अटकता-भटकता
जिसे खोजता रहा हूँ
वह द्वार
मेरे ही मन में था !

मेरी चकनाचूर हड्डियों में
यह ज्ञान
पश्चात्ताप बनने को विवश है
पर मैं आखिरी साँस को समेट कर
इस पर
अपना सिर तो पटक ही सकता हूँ !

• तमाशा

कितना ही ढोल पीटो
कितने ही इश्तहार बाँट दो
कोई नहीं आयगा देखने यह टक्कर
सिर और चट्टान की—
इसका अंजाम सब जानते हैं।
जूझते रहो तुम चाहे जितने अकेले ही
चूर-चूर होने के पहले तक
सब यही सोचेंगे कि कोरा तमाशा है
फिर ?
फिर शायद लायें वे मालाएं
शायद तुम्हारी लाश भी कन्धों पर ले जायें।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

वनस्पति से

कम खर्च में भोजन तैयार करिये

यह खाना बनाने में कम व्यय होता है

यह वीटामीन ए और डी से परिपूर्ण है और गले को नुकसान नहीं पहुंचाता।

इससे तैयार किया हुआ भोजन एवं मिठाइयां देर तक स्वादिष्ट रहती हैं।

यह दानेदार व बिल्कुल
यह स्वास्थ्यपूर्ण ढंग से ऐसे टिनों में पैक किया जाता है जो प्रयोग के बाद दूसरे कामों में आसानी से इस्तेमाल किये जा सकें।

निर्माता—
रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमियानगर (बिहार)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक त्रिकोण की ३ मछलियाँ

—शशिप्रभा शास्त्री

प्रतीक्षाके पल

भुवनके साथ शहर चलनेके लिए बहुत आतुर थी मैं। शादीके बाद भुवन तीन बार गाँव आये थे और तीनों बार ही मुझे छोड़-छोड़कर चले जाते थे। शायद उन्हें मालूम न था, मेरे मनमें उनके साथ रहने-बसनेकी कितनी ललक थी! कितनी बार रातको उनके सीनेपर हाथ रखकर मैंने पूछा था, "तुम्हारा कभी मन नहीं करता, मुझे अपने साथ ले चलो अपने साथ रखो? तुम्हें होटलोंमें जा-जाकर खाना न खाना पड़े, मैं तन-मनसे लगकर तुम्हारे लिए तुम्हारा मनचाहा खाना बनाऊँ और तुम और मैं दोनों एक थालीमें खायें, हँसें-खेलें····?"

"बहुत मन करता है। इस सबके कितने सपने देखता हूँ, तुम नहीं जानतीं, पर मजबूर हूँ सुमन, इसीलिए रुका हुआ हूँ। जिस दिन ऐसा सम्भव होगा, उस दिन तुम्हें छोड़कर चला जाऊँगा? तनिक मेरी परेशानी तो समझो न!"

"क्या परेशानी है मुझे बताओ न! गँवार हूँ, पढ़ी-लिखी नहीं हूँ, तुम्हारे साथ बाहर आ-जा नहीं सकती? तुम्हारे दोस्तोंका स्वागत नहीं कर सकती? उनके साथ हँस-बोल नहीं सकती?" मैंने स्वरमें तुनक भरकर पूछा था।

"तुम सब कुछ कर सकती हो। तुम्हारी होशियारीमें, तुम्हारी दुनियादारीमें मुझे जरा भी शक नहीं है पर····।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
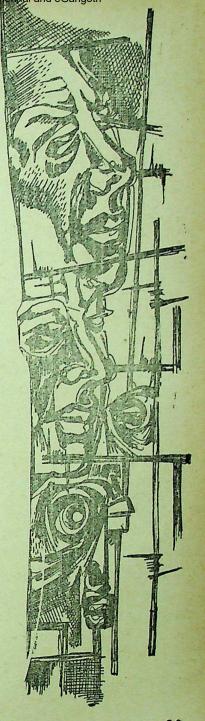
"पर क्या", मैंने बीच में ही भुवनको टोक दिया था, "आखिर तुम्हें क्या मुश्किल है? कोई तुम्हारी यार-दोस्त है? सच कहती हूँ अगर कोई ऐसी बात है तो मैं कुछ भी नहीं कहूँगी, सब कुछ सह लूँगी, बस तुम मुझे ले भर चलो।"

"कैसी ऊदबिलाव-जैसी बातें करती हो! सच कहता हूँ, मार बैठूँगा।" और भुवनने मुझे बाँहोंमें कस लिया था। मैं फिर सब-कुछ भूल गयी थी। शहर जानेकी ललक, उनसे हठ करनेकी उमंग, उनको खिजाने-मनवानेकी पुलक—सब कुछ समाप्त हो गयी थी। फुसफुसाते स्वरमें मैंने पूछा था, "बोलो न, मेरे शहर ले चलनेमें क्या कठिनाई है?"

"अब कुछ नहीं बताऊँगा, सीधा तुम्हें ले ही चलूँगा, मुझे तुमपर बहुत गुस्सा आ रहा है, फिर मत कहना, मुझे यहाँ क्यों लाये?"

"नहीं कहूँगी।" मैं मगन हो गयी थी। भुवनके सीनेमें मैंने मुँह छिपा लिया था।

सचमुच अगले दिन भुवनने मुझे चलनेकी तैयारी करनेके लिए कह दिया था। मैं तो तैयार ही बैठी थी, क्या देर लगती मुझको, बड़े उल्लसित मनसे मैं शहर आ गयी थी। देख-देखकर मेरी आँखें फट गयी थीं। यहाँ कितनी स्वतन्त्रता है, मर्द-लुगाई साथ-साथ चलते हैं! औरतें नंगी, उघाड़ी-सी दिखाई देती हैं पर उन्हें कोई कुछ नहीं कहता, आँख उठाकर देखता भी नहीं, जैसे यह सब कुछ यहाँके लिए एकदम स्वाभाविक हो। मैं भी भुवनके साथ इसी तरह घूमूँगी। ताँगेमें बैठे हुए मैंने सड़कपर जाते स्त्री-पुरुषोंको देखते हुए सोचा, कितना आनन्द आयेगा यहाँ, सास-ससुर किसीका भी डर नहीं है। एक हिलोर-सी उठ रही थी मेरे मनमें।

ताँगा रुका तो हैरान रह गयी देखकर—गेटके भीतर लॉन, लॉनके पार बड़ी भारी कोठी, कोठीमें अनेक कमरे, दालान और सहन।

"ये हैं सरिता भाभी, कुछ दिन इन्हींके साथ तुम्हें रहना पड़ेगा, तबतक मैं मकान तय कर लूँगा।" ताँगेके स्वरसे बाहर निकल आयी महिलासे भुवनने मेरा परिचय करवाया।

मैंने सामने खड़ी सरिता भाभीको हाथ जोड़कर नमस्ते की थी, प्रत्युत्तरमें उन्होंने मुझे हृदयसे लगा लिया।

"प्रतीक्षाकी भी सीमा होती है रानी, कितनी बार भुवनजीसे अनुरोध किया कि तुम्हें लायें, पर भुवनजी थे कि इनके कानों पर जूँ ही नहीं रेंगती थी। ईश्वरने बड़ी मुराद पूरी की है मेरी।"

मैं अवाक् थी, सरिता भाभीके हृदयमें प्रेमकी कितनी गहरी सरिता बह रही थी हम दोनोंके लिए। सरिता भाभीके स्वरकी मिठासने मेरे कलेजेको जैसे हर्षोन्मत्त कर दिया था। सरिता भाभीका इतना बड़ा मकान है—क्या हम इसमें हमेशा-हमेशाके लिए नहीं रह सकते? क्या पड़ी है भुवनको मकान ढूँढ़नेकी। रातको मैंने भुवनसे फिर पूछा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं तुम्हारे बहुत पास थी। तुम्हारे सुख-दुःखकी साथिन अपनेको मानती थी, इसीलिए तुम्हारी अनुपस्थितिमें छटपटाती रही थी। तुम इतने दिनों बाद लौटे तो मेरे सभी बाँध टूट गये, फिर मुझे तुम इतने समीप कब मिलोगे, रात-दिन मेरी आँखोंके सामने कैसे रहोगे, यही मान मैं तुम्हारे सम्पर्क-सुखको जी भरकर लूटने लगी।

"ये सरिता भाभी कौन हैं, तुमने कभी जिक्र नहीं किया। कितना मीठा बोलती हैं। हमें क्या ये अपने पास हमेशाके लिए नहीं रख सकतीं? मेरा मतलब है, ये अपने ही मकान-में क्या हमें एक कमरा नहीं दे सकतीं?"

"सरिता भाभी सब कुछ कर सकती हैं, तुम राज़ी होओ तो! मेरे मित्रकी भाभी हैं: मित्रके भाई विदेश गये हुए हैं। भाभी यहीं दफ़्तरमें काम करती हैं, मुझे बहुत चाहती हैं। वो तो खुद भी यहीं रहनेके लिए कह रही थीं, मैंने ही मना कर दिया नहीं तो दिल्लीमें, तुम्हें मकानका अन्दाजा है, कितनेमें मिलता है? इसीलिए तुम्हें लानेसे कतरा रहा था।"

"मुझे कुछ अन्दाजा नहीं है, वैसे जैसा तुम चाहो।" मैंने चैनकी साँस ली। अब तो आ ही गयी हूँ, जो कुछ भी हो। भुवनको उस रात मैंने दुलार कर सुला दिया था। सवेरे हम लोग अभी तैयार भी नहीं हुए थे, कि सरिता भाभीने खुटखुटाया, "भुवन, सुमन, दोनों आ जाओ, चाय तैयार है। तुम लोग बहुत इन्तज़ार करवाते हो!" फिर स्वरमें कुछ मुलामियत भरती हुई बोलीं, "मैं भी कैसी पागल हूँ, सब कुछ भूल गयी हूँ। ये तुम्हारे खेलने-खानेके दिन हैं, देरसे उठना स्वाभाविक है। अच्छा, कलसे कुछ नहीं कहूँगी। तभी चाय तैयार करूँगी जब तुम लोग उठ जाओगे।"

कैसी बात कह गयी थीं सरिता भाभी! शहरके लोगोंको क्या बिलकुल भी लाज-शरम नहीं होती। सकुचाकर रह गयी थी। बादको पता चला, यह तो सरिता भाभीने कुछ भी नहीं कहा था, भाभी होने-के नातेका वे पूरा फ़ायदा उठाती थीं। जो कुछ उन्होंने कहा था, वह तो उनकी चटकीली-चमकीली बातोंकी केवल भूमिका मात्र थी। उनकी बातोंको मैं सहन करती चली। भुवन दिनको ऑफ़िस जाते, सुबह-शाम मकान ढूँढते और रातको सो रहते। सुबह-शाम भुवन सरिता भाभीके चार्जमें रहते, रातको मेरे और दिनको अपने बॉसके— मुझे सन्तुष्ट रहना चाहिए था। मेरा हिस्सा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे बड़ा था, पर मैं पीली पड़ती जा रही थी। मुझे सरिता भाभीकी उनकी सुबह-शामकी देख-रेख भी बुरी लगने लगी थी। भुवन खाना खाकर उठते और सरिता भाभी-के आँचलसे हाथ पोंछ लेते, ग़ुसलख़ानेमें नहाने जाते और सरिता भाभीका तौलिया उठाकर ले जाते।

"भाभी, तुम्हारे तो तौलियेमें भी ख़ुशबू बसी है, ले जाऊँ न ?" सरिता भाभी पहले हलकेसे डपटतीं, कि वे फिर काहेसे पोंछेंगी, फिर भुवनके तौलियेको खींचकर कहतीं, "ठीक है, जाओ मुझे भी तुम्हारे तौलियेसे ख़ूब ख़ुशबू आती है, फिर मेरे तौलियेसे तुम्हारावाला दुगना बड़ा भी है, अब नहीं दूँगी, समझे।"

भुवन ठठाकर हँसते और फिर सरिता भाभीसे कुछ अँगरेज़ीमें बोलते हुए ग़ुसलख़ाने-में घुस जाते। लौटते तो सरिता भाभीके तेलको ही सिरमें डालते, उनके ही कंघेसे बाल बनाते, फिर कहते, "भाभी, आज ऑफ़िसकी सब टाइपिस्ट लड़कियाँ मेरे साथ भिड़ोंकी तरह चिपटी चली आयेंगी, चाय तैयार रखिएगा।"

"ख़ाली चायसे क्या बनेगा...।" असली बात सरिता भाभी ओठोंमें ही चबा जातीं, पर भुवन उनके कटाक्षपातसे ही जैसे सब कुछ समझ लेते और फिर देर तक हँसते रहते। खानेकी टेबिलपर बैठते और सरिता भाभीकी थाली कब भुवनकी बन जाती और भुवनकी थाली सरिता भाभीके क़ब्ज़ेमें ढंगसे पहुँच जाती—उसे देखकर मैं जल-भुन जाती।

रातको मैं शिकायत करती, "यह क्या तमाशा है ! ऐसी भाभी मैंने दुनियाकी पीठ पर नहीं देखी।" तो भुवन मुझे खींचकर मेरा मुँह चुम्बनोंसे भर देते—"तुम पागल हो ! तुमने अभी देखा ही क्या है ! मैं जानता था, तुम शहरके वातावरणसे निभकर नहीं चल पाओगी।" भुवन फुसफुसाकर मुझे समझाते और मैं उनकी बाँहोंकी गरमीमें सब कुछ भूल जाती, अपनेको सबसे भाग्यवती मान मैं गुलाबी हो उठती, पर सवेरा होते ही मेरा गुलाबीपन फिर पुछने लगता। पिलापा मेरी सारी देहको ढक लेता—मुझको, मेरे कपड़ोंको, मेरे चारों ओरके परिवेशको। मुझे भूख-प्यास लगनी बन्द हो गयी।

"मैं खाना नहीं खाऊँगी।" मैं टेबिलपर बैठनेसे इनकार कर देती, दिन-भर सोनेका बहाना करती हुई सोचती रहती, भुवनको इस जालसे कैसे मुक्त करूँ। मुझे ख़ुशी हुई, जब उस दिन सरिता भाभीने सूचना दी, "सुमन, राजेन्द्रनगरमें एक मकान है, आज मेरे एक सहयोगीने मुझे दफ़्तरमें बताया है। दूर बहुत पड़ेगा क्या, तुम वहाँ रहना पसन्द करोगी ? वैसे मैं तो चाहती थी तुम इसी कम्पाउण्डमें मेरे पास ही रहो, कितने कमरे तो ख़ाली पड़े हैं।"

"नहीं, बड़े शहरोंमें क्या दूर, क्या पास, सब जगह तो बसें आती-जाती हैं, वहीं ठीक रहेगा।" और सरिता भाभीके ढेर ना-नुच करनेपर भी मैं भुवनको लेकर नये घर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ गयी। भगवान्‌को लाख धन्यवाद दिया, भुवनको मैं समूचा ले आयी हूँ, मेरे भुवन तो मेरे हाथसे फिसले ही जा रहे थे!

अपने घरको लगाने-सजाने, नयी तरह-से रहने-बसनेके, अपने घरकी स्वतन्त्र माल-किन बननेके जो स्वप्न मैंने देखे थे, वे यहाँ आकर साकार हुए। मैं ख़ुश थी—बहुत ख़ुश।

"क्या सरिता भाभीकी याद आ रही है?" मैं भुवनको उदास देखकर कभी-कभी कोंच देती। मैं भी थोड़ी मुखर हो चली थी।

"आ तो रही है, मुझे जाने दोगी उनके पास?"

भूलकर भी नहीं, चोरी-छिपे जाओ तो तुम्हें मेरी क़सम।" मैं भुवनको दबोचकर सो जाती। थोड़ी देरमें देखती, सिर्फ़ भुवन-की देह ही मेरे हाथोंमें है, भुवनकी आँखें, भुवनका मन, दूर किसी भुलभुलैयामें उलझा है। मैं कहती, "मेरी बात नहीं सुनोगे?"

"सुनाओ।" वे अनमने मनसे कहते।

"तुम मुझे प्यार नहीं करते हो!"

"प्यार नहीं करता, क्या बात कह रही हो! मैं समूचा क्या तुम्हारे पास नहीं हूँ—अपनी दसों इन्द्रियोंके साथ। तुम्हारे इतने पास तो लेटा हूँ और क्या चाहती हो?"

मैं और क्या चाहती हूँ, कैसे बताती! सचमुच भुवन अब समूचे ही तो मेरे क़ब्ज़ेमें थे, मैं उन्हें उलटाती-पलटाती, जो चाहे करती, उनका हाथ अपनी छातीपर घण्टों रखे रहती, वे कभी इनकार नहीं करते, वे ख़ुद मुझे अपने पास और सटा लेते, पर मुझे लगता, न जाने क्या है जो मेरे पास नहीं है, जिसको वहीं मैं सरिता भाभीके पास छोड़ आयी हूँ और उस छूटे हुए के लिए ही मैं तड़प-तड़पकर रोती रहती, मसोसती रहती, पर भुवन कुछ नहीं समझ पाते, कि मैं क्यों रो रही हूँ, क्यों तड़प रही हूँ। पानी-में मीन प्यासी रे····भुवनको मैं कैसे सम-झाती, उन्होंने अपना सब कुछ तो मुझे दे डाला था।

■

एक बीता हुआ कल

भुवन, कैसे बताऊँ, कि तुमने इन पाँच दिनों-में मुझे कितना सुख दे डाला है! कबसे राह देख रही थी कि तुम कभी मेरे पास रहोगे। अकेले तो कभी सम्भव नहीं होता, सुमनके साथ ही सम्भव हो पाया, मैं तुम दोनोंकी ऋणी हूँ—पाँच दिन, पाँच रात मेरे लिए एक कल्पका सुख! तुम्हें अपना हृदय चीरकर कैसे दिखाऊँ, पर चीरकर दिखानेकी तुम्हें ज़रूरत नहीं है, मैं तुम्हें जानती हूँ, बहुत अच्छी तरह जानती हूँ। उस दिनसे जानती हूँ जब तुम मेरी ज़िन्दगीमें चुपके-से चले आये थे, बिना कुछ कहे-सुने। पर जब तुम मेरी दुःखी नीरस ज़िन्दगीको रसोन्मत्त करने आ ही गये तो मैं तुम्हें कैसे दुरदुराती! मैं तुम्हारे पाशमें बँधती चली गयी, भूल गयी कि मैं तो अबतक एक वर्जित-सरीखा ही जीवन बिताती आयी हूँ, तुम्हारे सामीप्यके इतने सारे सुखको कहाँ धरूँगी-उठाऊँगी। अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याद आती है तो कलेजा फटता है, स्मृतियाँ तीर बनकर चुभती हैं—मैं तो बिलकुल अकेली थी भुवन, तुम मेरी ज़िन्दगीमें आये ही क्यों ? तुमने मुझे वह रस क्यों पिलाया, जो सात समुन्दर दूर बैठे मेरे प्रियतम मुझे नहीं पिला पाये थे, एक मुड़ी-तुड़ी बेलकी तरह मैं सिकुड़कर रह गयी थी—तुमने मेरे नैराश्य और अँधेरेकी झिल्लियाँ उतारकर रख दीं, अपने सुमधुर हास्य और चुटीले व्यंग्योंसे मुझे गुदगुदा दिया, मेरे अन्तरमें एक विचित्र हाला भर दी—मैं तुम्हारे पास आती गयी, कितने पास, जानते हो, तुम जानते हो, इसलिए नहीं ही कहूँगी, आज पासकी वही कचोटन मुझे झुलसा रही है।

मैं तुम्हारे बहुत पास थी। तुम्हारे सुख-दुःखकी साथिन अपनेको मानती थी, इसीलिए तुम्हारी अनुपस्थितिमें छटपटाती रही थी। तुम इतने दिनों बाद लौटे तो मेरे सभी बाँध टूट गये, फिर मुझे तुम इतने समीप कब मिलोगे, रात-दिन मेरी आँखोंके सामने कैसे रहोगे—यही मान मैं तुम्हारे सम्पर्क-सुखको जी भरकर लूटने लगी। भूल गयी कि सुमनका तुम्हारे ऊपर सबसे पहला अधिकार है। मेरा रत्ती-भर अधिकार भी उसे जरूर लगेगा और हुआ भी यही। न मैं अन्धी हूँ भुवन, न विवेकहीन—इतनी विचारने-समझनेकी शक्ति मुझमें है, सो मैंने सुमनकी इच्छाको पूरा करवा दिया। सोचा था, तुम हमेशाकी तरह मेरे पास आया ही करोगे, मुझे फिर काहेका दुःख रहेगा भला, पर अब मेरी प्रतीक्षाकी आदत ज्योंकी त्यों है औ[र] तुम्हारा मुझे खिजानेका अभ्यास और ब[ढ़] चला है। मैं आज भी अपने दफ़्तरके साम[ने] तुम्हारी प्रतीक्षा करती रही, तुम मुझे जै[से] पहले हर शनिवारको लेने आते थे, उ[सी] तरह मेरी प्रतीक्षा करते खड़े मिलोगे—उसी सुखकी कल्पना-कामना करती मैं बाह[र] निकली थी। मैं भूल गयी थी, आजकी प[रि]स्थितियोंमें तुम्हारा मुझे भूल जाना कित[ना] स्वाभाविक है। अपने पति-प्रियतमसे क[भी] इस तरहका सुख नहीं पाया तो इसका अ[नु]मान भी कैसे लगा पाती। कल्पनाका कु[छ] अंश जो तुमने सत्य किया था, उसीके बल[पर] हृदय थिरक रहा था।

प्रतीक्षाके आखिरी लमहेपर तुम पा[स] आये थे, मुझे हृदयसे सटाकर तुमने क[हा] था, "मुझे भूल गयी हो ?"

"मैं भूल गयी हूँ ! क्या कह रहे [हो] भुवन ! यहाँ तो चौबीसों घण्टे तुम्हारी [ही] स्मृतिमें खोयी रहती हूँ, और तुम हो [कि] मुझसे सत्तर कोसकी दूरीपर जाकर [बस] गये हो, कैसे धीरज धरूँ ?"

"मुझे तुम्हारा ख़याल है सरिता भा[भी] विश्वास करो ! बस मेरा शरीर-भर तुम्[हारे] पास नहीं है, नहीं तो मैं तो तुम्हारा ही [हूँ] मेरा हृदय, मेरे प्राण, मेरी आत्मा।"

सुनकर मैं हर्षोन्मत्त हो उठी थी, [मेरा] हृदय बल्लियों उछला था, पर अब [मैं] आधी रातको इस विशाल बियाबानमें अ[केली] बैठी हूँ, बाहर विकराल पानी पड़ र[हा है] और सर्वत्र अन्धकार पुरा है। दूर [...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झिल्लियोंका समवेत स्वर कानोंको फोड़ डाल रहा है तो मैं सोचती हूँ, सुमनके समक्ष मैं कितनी ग़रीब हूँ! तुम्हारे हाथ टटोलनेके लिए मैं फड़फड़ा रही हूँ, तुम्हारे सीनेपर छाये जंगलमें अपनी उँगलियाँ उलझाकर सो रहनेके लिए मैं तड़प रही हूँ। नहीं जानती जिस अपने हृदयको तुम मेरे पास सौंप गये हो उससे कैसे जी भरकर भेटूँ, कैसे बोलूँ-बतियाऊँ, उसे कैसे धरूँ-उठाऊँ। इतनी दूर बैठे तुम—बोलो न, मुझे कुछ तो समझा दो, तुम्हारे हृदयमें कैसे झाँकूँ, कैसे उसे अपना मानकर जीती रहूँ? व्यथाको शब्दोंमें नहीं उँडेल पाऊँगी और शब्दोंमें उँडेलकर तुमसे कहूँ भी तो क्या, क्या हृदयसे भी बड़ी कोई और चीज़ होती है जो तुम मुझे देते!

■

एक अनजाना क्षण

बहुत अकेला था सरिता, जब तुमसे जुड़ा था। हम-तुम जैसे किसी चाँदनीके कगारपर अचानक मिल गये थे और एक दूसरेके होकर रह गये थे। कहाँ जानता था तब मैं कि दुनियामें एक बन्धन ऐसा भी होता है जिसकी गाँठको बँधा देखकर ही समाज हमें सच्च-रित्रताका खिताब देता है। वह गाँठ मुझे बाँधनी पड़ी और मैं उस पाशमें बुरी तरह बँध गया। सुमनके प्रति मेरा कितना दायित्व है, इसकी अनुभूति तो मुझे उसी क्षण ही हुई थी और तब मेरे मस्तिष्कपर जैसे गाज गिरा हो, कैसे निभा पाऊँगा इतने बड़े उत्तरदायित्वको? फिर लगा मैं पुरुष हूँ अपने पौरुषसे सब कुछ खे ले जाऊँगा—खेने-का प्रयत्न किया तो बाँहें ढीली पड़ गयीं, थक गयीं। तुम्हारी स्मृतियोंने मेरे मन-मस्तिष्क-को रुला दिया, आँखें अन्धी हो गयीं, चारों ओर विकराल जल, तीव्र झंझावात और सूना अन्धकार—इन अन्धी आँखोंसे किधर बढ़ूँ, तुम्हारी ओर या सुमनकी ओर? दोनों नदीके दो किनारे हैं और दोनों मुझे अपनी-अपनी ओर घसीट रहे हैं। मेरे पास दो ही चीज़ें थीं मेरी सरिता—देह और हृदय, मैंने दोनों बाँट दिये। अपनी सर्वोत्तम निधिको उन्मुक्त भावसे दे डालनेमें कितना सुख है—इस सत्यको पहचाननेके लिए मैंने अपना सब कुछ दे डाला। मैं निर्धन बन बैठा पर न जाने क्या कुछ अन्तरमें अब भी अड़ा है, जो मुझे इधर-उधर हिलने-डुलने नहीं दे रहा। प्रयत्न करता हूँ तो स्वयंको निरुपाय भावसे घायल पाता हूँ, सब कुछ देकर मैं दुःखी नहीं हूँ; दुःखी हूँ तो सिर्फ़ इसलिए कि मैं स्वयं तो रिक्त हुआ ही, जिनको मैंने सब कुछ दिया, वे भी रिक्त ही रहे, उन्हें भी कुछ नहीं मिल पाया। तब? तब प्रेम क्या बस पीड़ाका ही दूसरा नाम है? फिर व्यक्ति इस पाशमें क्यों फँसता है? सुनता हूँ, व्यक्ति जान-बूझकर इस पाशमें नहीं फँसता, अलग-थलग बैठा कोई चुपके-से उसे इसमें ठूँस देता है, बद्ध कर देता है और फिर व्यक्ति न उससे छूट पाता है, न कोई उसे छुटा पाता है—एक मीठा-मीठा दर्द, एक अनजानी जलन उसको चारों ओरसे वेष्ठित कर लेती है। इस जलनको वह अपने सीनेसे लगाये सुल-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गता रहता है, पतंगेकी तरह, जिसके जीवन-का लक्ष्य बस जलना भर है, पर इस जलन-को मैं कैसे सहूँ, बड़ी पीड़ा है, मर्मान्तक पीड़ा। तब क्या करूँ, कैसे मुक्ति पाऊँ? बोलो न सरिता, बोलो न सुमन, तुम दोनों बोलो! तुम नहीं बोल रही हो, तुम्हारी बाँहें मेरे पास लपकती चली आ रही हैं और मैं व्यग्र हूँ, तुम अपनी इन लम्बी-लम्बी बाँहोंसे मुझे सचमुच दबोच लोगी! मुझमें अब दबोचे जानेकी सामर्थ्य नहीं रह गयी है—तब, तब क्या करूँ, लो भयके कारण मैं खुले समुद्रमें कूद पड़ा हूँ, अबतक समस्या-की नावपर चढ़ा सरक रहा था। हिम्मत करके मैं अपनी इसी नावसे छलाँग लगाकर कूद पड़ा हूँ और जब कूद पड़ा हूँ तो मुक्त हो गया हूँ···मुक्त अपनी समस्यासे, मुक्त अपने रागसे। प्रेमसे फिर भी अलबत्ता मुक्ति नहीं पा सका हूँ, पर मुझे खुशी है, मैं प्रेमके सागर में अब भी तैर रहा हूँ।

मुक्त मछलीकी तरह उन्मुक्त तैर रहा हूँ। मछली कैसे तैरती है—पानीसे सम्पृक्त भी और असम्पृक्त भी। सोचता हूँ, प्रेमकी समस्याका समाधान भी क्या यही नहीं है? समाधान मिलता है तो आश्वस्त होनेका प्रयत्न करता हूँ, पर आश्वस्त होकर भी सुखी कहाँ हूँ, अब एक दूसरी तरह छटपटा रहा हूँ। आश्वस्त होनेका सुख मुझे कचोट रहा है। ग़रीब मछलीकी भी तो यही नियति है न, पानीके बीचमें भी वह कुलनसे बिल-बिलाती है और पानीके बाहर भी। पानीके मध्यकी उसकी कुलन किसीको दिख नहीं पाती न!

■

३।६ भगवान न[illegible]
देहरा[illegible]

हिम-विद्ध

नयी कविताके विशिष्ट शिल्पी कवि

डॉ० जगदीश गुप्त

की विशेष भावभूमिकी कविताएं

मूल्य ३.००

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्त कोबरा

—योगेश गुप्त

मैं उस दोस्तकी बात मान लेता हूँ जिसने निहायत घिनसे मुझे नाम दिया है—तुम 'स्केप्टिसिस्ट' हो ! इस बीमारीका कोई इलाज नहीं है। अब बन्द कमरेमें वह घिन हवामें बढ़ती हुई गैस-की तरह महसूस हो रही है। पर सच जो है, सो है। मुझे खुशी है कि मुझे अन्दर-बाहरके सबपर सन्देह है। स्थितियाँ सब अस्पष्ट और अनाम हैं।

यह एहसास ही मेरी नज़रका धुन्ध है। धुन्ध मुझे इतनी साफ़ नज़र आती है कि मैं ख़ुदको झुठला नहीं सकता। काला रंग भी कुछ पीला-पीला-सा नज़र आता है। हैरान हूँ कि क्या स्व-भाव मेरे साथ खेल रहा है ? जो भी हो। खेल भयावह है।.... पर क्या भय ही है, उसमें कहीं कुछ आशा नहीं है ? सब शान्त है, मृत शान्त ?

अर्जुनने पूछा था, "लड़ूँ, या न लड़ूँ, जीतूँ या भाग जाऊँ, ये जो सामने खड़े हैं उनको नष्ट करूँ या सब हथियार छोड़कर क़तल हो जाऊँ। राजसी भोग भोगूँ या औरोंके लिए छोड़ दूँ।" अर्जुनका सन्देह था—कर्त्तव्यकी सीमापर। यह रेखा यहाँसे खीचूँ या यहाँसे ? मेरा शुभ इसमें है या उसमें ? धर्मकी रक्षा ऐसे होगी या वैसे ? और मरकर मैं इस रास्तेसे स्वर्ग जाऊँगा या उस रास्ते-से ? पर मैं सन्देहके उस स्तर तक नहीं पहुँच सका हूँ। मेरा सन्देह तो बड़ा सतही है। मैं तो भ्रममें हूँ कि यह जो आदमी मेरे सामने बैठा है—यह है या नहीं है ? यह जो स्थिति मैं भोग रहा हूँ—यह मैं भोग रहा हूँ या मेरे पास खड़ा दूसरा आदमी ? और सच है कि आज सन्देहकी दृष्टि मुझे इस बातके लिए मजबूर कर रही है कि यदि कोई दोस्त मेरे सामने या बराबर में या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
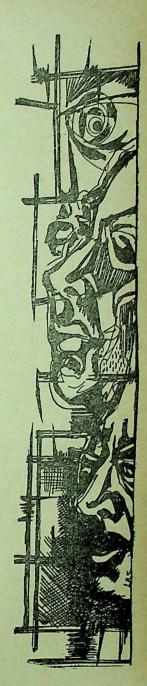
पीठ पीछे आकर खड़ा हो तो मैं अपनी आँखोंपर भरोसा न करूँ, उसे हाथ बढ़ाकर छूकर देख लूँ। अपने मनको निश्चिन्त कर लूँ कि वह है।

कभी-कभी ख़ुदसे पूछता हूँ—कहाँ जाऊँ? या प्रश्नको यों कहें तो ठीक होगा, कहाँ न जाऊँ? मैंने एक तेज़ चालकी गाड़ी ले रखी है और मैं भागता रहता हूँ। कहीं-कहीं लाल बत्तीके कारण रुकना पड़ता है। उतनी ही देर अन्दरकी हरी बत्ती झिपझिप करती रहती है। मैं फिर भाग लेता हूँ। मेरी गाड़ीके पहिये सड़कका तारकोल और पथरी उछालते हुए चलते हैं। आसपासके बहुत-से लोगोंको चोट आती है। पर धीमी चालसे नहीं चल सकता, क्योंकि गाड़ीका विश्वास टूट गया है। वह अविश्वासकी भयावह गतिमें एकरस हो गयी है। अवि-श्वास चक्रमें घूमता है। मैं भी अपनी गाड़ी-में बैठा चक्राकार घूम रहा हूँ, मुझे घुमेर आ रही है, धुन्ध और साफ़ होती जा रही है। मुझे मालूम है, मैं गिर पड़ूँगा, बेहोश हो जाऊँगा। गाड़ी उसी चक्रमें घूमती रहेगी। वह मशीनकी बनी है। इन्तज़ार करेगी कि मैं होशमें आऊँ और घुमेरका आनन्द लूँ?

तो यह सच है कि कर्त्तव्याकर्तव्य, नीति-धर्म, स्वर्ग-नरक मेरी समस्या नहीं हैं। जब अपने या किसीके या किसी शक्तिके होनेसे ही मेरा विश्वास उठ गया तो फिर ये सब समस्याएँ मेरे लिए हो ही कैसे सकती हैं। मैं अपनी मौतकी ख़ुशी इन सब चीज़ों-में भागकर नहीं मना सकता। मौतसे मेरा समझौता है। न कहूँ कि मैं ज़िन्दा हूँ,
कि निरन्तर मर रहा हूँ और इस तरह
हूँ। यही बात मैं अपने बच्चोंको बता
कि चाहे डरो मत, मर तुम रहे हो। पहा
पर चढ़नेका भ्रम बना सकते हो ले
दरअसल पहाड़ी नीचे धँस रही है। चो
पर तुम निश्चय ही पहुँचोगे पर पह
ज़रा-सा और भी खिसक सकती है।
कौन-सा विश्वास तुम्हारा आधार बने
तुम्हारे साथ फिसल रहे और
अपनी-अपनी स्थितिपर रोयेंगे। तुम
पर हँसना मत। उनका इन्तज़ार कर
वे सब तुम्हारे साथी हैं। सभी तुम्हारे
आयेंगे। पर चाहकर भी तुम उन्हें ग
नहीं लगा सकोगे। उसका अफ़सोस
करना। आधार खोनेका इतना थोड़ा
नुक़सान तो होता ही है।

अर्जुनको कृष्णने कहा था—"दुवि
मत करो। काम किये जाओ! मेरे
काम किये जाओ।" कृष्ण सही था।
विशाल हिमखण्ड जब पानीपर पह
फिसलकर गिरता है तो क्या कोई
दुविधामें पड़ सकता है? बड़े आदमि
बातें मत करो। मैं साधारण आदमी
और बड़े आदमियोंने मुझे बताया है कि
स्वतन्त्र हूँ। हिमखण्ड तो यह कहेगा
उसका कहना सही है। दुविधा या विश्व
सोच-समझकर थोड़े ही कर सकता
सोचने-समझनेका तो मौक़ा ही नहीं
वह कहता है, भरोसा रखो। मैं कहता
दोनों स्थितियोंमें अन्तर क्या है। तर्क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहलेकी बात और थी। जितने भी लोगोंका काफ़िला महाभारतके शुरूमें था वह अन्त तक उतना ही रहा। रास्तेमें एक भी आदमी न टूटकर गिरा, न किसीने तोड़ा। आख़िर काफ़िलेको तितर-बितर करनेके लिए युद्ध कराना पड़ा और तब ख़ास-ख़ास आदमियोंको छोड़कर सब मर गये। कोलाहल कम हुआ। थोड़ी शान्ति हो सकी। पर क्या वही शान्ति मुरदेकी तरह उठकर बैठ नहीं गयी और शोर पहलेसे दुगुना-तिगुना होकर आकाशमें नहीं छा गया!

युक्तिकी गुंजायश न हो तो विश्वास और अविश्वास दोनों बराबर होते हैं। मैं अविश्वासमें ही रहना चाहता हूँ, कारण मात्र यही है कि कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। हाँ, शायद तुम्हें फ़र्क़ पड़ता हो। तुम्हारे अहम्‌को चोट लगती हो। पर क्या हो जायेगा। दीर्घकाय तुम मिट तो न जाओगे। तुम्हारा अहम् तो अजर-अमर है। और मेरा सुख तुम्हें हमेशासे बुरा लगता रहा है। आज भी तुम सिर्फ़ मेरे छोटे-से सवालसे चौंक जाते हो। मैं कभी-कभी पूछ लेता हूँ, "तुम कौन हो? आखिर तुम हो कौन?"

हज़ारों सालसे करोड़ों लोगोंपर काले रंगके छातेकी तरह तने हो तुम! दरअसल रोशनी उन तक पहुँचने नहीं देते और कहते हो—मैं तुम्हें धूपसे, बारिशसे बचाता हूँ। धूपमें नहाये हो तुम कभी? बारिशकी ठण्डक जानते हो, किसे कहते हैं? पर अब क्या है, अब तो सभी टूट-फूटकर चिर-फटकर घिनौना हो गया है। धूप या तो टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गयी है या दिखाई ही नहीं देती। पानी छतोंपर रह जाता है और नालियोंके रास्ते उतरता है। जबतक तुम थे तुमने कुछ हमें भोगने न दिया और जब तुम अब नहीं रहे, भोग्य सब अखाद्य हो गया। इसे प्रवंचना कहनेका अधिकार तो बहरहाल हमें है ही। यह गुस्सा या शिकवा या शिकायत नहीं है, यह स्थिति-बोध है। तुम नहीं रहे। प्रकृति-सुख नहीं रहा, एक चलाचल रह गयी है। उसमें कोनेमें खड़े होनेसे आदमी दीवाल बन जाता है और बीचमें आनेसे बहुत मार पड़ती है। कह सिर्फ़ यही पाता है कि मैं पत्थर हूँ, मुझे मत छेदो, मैं आदमी हूँ मुझे मत मारो। पर कोई हो तो सुने। मेरी यही आवाज़ मुझे छेदती भी है, मुझे मारती भी है।

मैं फिर कुछ ग़लत कह गया हूँ। मेरी इस बातसे ध्वनि निकलती है कि मैं अकेला हूँ। पर दरअसल मैं अकेला नहीं हूँ। अकेला हो जाऊँ तो खुश हो जाऊँ! न किसीको नकारनेकी ज़रूरत पड़े, न स्वीकारनेकी। फिर यह धुन्ध भी कहाँसे हो जिसका मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतने दिनोंसे आनन्द ले रहा हूँ। पर ऐसा नहीं है। मेरे चारों तरफ़ एक बहुत बड़ी दुनिया है या शायद उसके होनेका मुझे भ्रम है। आदमी, परिवार, भीड़, मकान और सड़कें मुझे अपने चारों तरफ़ घूमते हुए दीखते हैं। कभी कोई बड़ा दैत्य मुझे रोक-कर खड़ा हो जाता है तो कभी मुझे लगता है, कोई अदृश्य शक्ति मेरे कन्धेपर दबाव डालकर बैठ जाने या डूब जानेका इशारा कर रही है। कभी मैं इस स्थितिको स्वीकार लेता हूँ तो कभी छटपटाता हूँ और जाग जाता हूँ। तब भय और सन्देह तरह-तरहके भेस बदलकर मुझे डराते हैं। समाज मुझसे मनचाहे कपड़े पहननेका हक़ छीनना चाहता है तो भीड़ यों ही धकेलकर मुझे बायींसे दायीं तरफ़ चलनेको मजबूर कर देती है। ऊँचे मकानोंके गिरनेकी आवाज़ें हर समय मेरे कानोंमें गूँजती रहती हैं। क्या मालूम, कौन-सा शहर किस समय इतिहासमें अमर हो जाये, हिरोशिमा बन जाये। इसीलिए कभी-कभी भागकर मैं हाँफता हुआ घरमें घुसता हूँ तो वहाँ चारों तरफ़ चुप्पीका धुआँ फैला होता है। मैं कहता हूँ, "बोलो! कुछ धुआँ तो तुम्हारे पेटमें उतर जाये।" पर सब थके होते हैं और यों बहुत सारा धुआँ मेरे अपने पेटमें उतरता चला जाता है। मैं चुप लेट जाता हूँ। और पास ही कहींसे सायरनकी आवाज़ मेरी आँखोंके सामने घड़ीके पेण्डुलमकी तरह घूमती रहती है।

बात फिर ग़लत हो गयी। यह स्थिति है? क्या इसे मैं, जैसी यह है ऐसी ही स्वीकार करता हूँ? स्वीकार करता हूँ फिर सन्तोष क्यों नहीं कर लेता? सन्तो[illegible] होता नहीं, बात समझ पाता नहीं [illegible] आक्रोश बढ़ जाता है और लगता है कि [illegible] सब जो सामने है, सामने नहीं है। यह [illegible] मैं हूँ अकेला नहीं हूँ। जितने भी लोग उ[illegible] सफ़रमें मुझसे बिछुड़ गये हैं वे सब पि[illegible] नोककी तरह मेरे शरीरमें प्रवेश कर गये हैं।

पहलेकी बात और थी। जितने लो[illegible] का काफ़िला महाभारतके शुरूमें था [illegible] अन्त तक उतना ही रहा। रास्तेमें एक [illegible] आदमी न टूटकर गिरा, न किसीने तोड़ा [illegible] आख़िर काफ़िलेको तितर-बितर करने[illegible] लिए युद्ध कराना पड़ा और तब ख़ास-ख़ा[illegible] आदमियोंको छोड़कर सब मर गये। कोला[illegible] हल कम हुआ। थोड़ी शान्ति हो सकी। [illegible] क्या वही शान्ति मुरदेकी तरह उठकर [illegible] नहीं गयी और पहलेसे दुगुना-तिगुना हो[illegible] आकाशमें नहीं छा गया!

इसीलिए मैं सुखी हूँ कि बहुत-से लो[illegible] साथ चलते-चलते मरते-खपते रहे और [illegible] मुझमें सो-सोकर जागता रहा और और[illegible] भीतरकी अतृप्ति मेरे अन्दर ही घुमड़-घुमड़[illegible] दीवारोंको कुरेदती रही और मुझे सोने [illegible] दिया। मुझे बराबर जगाये रखा। जा[illegible] रहना कितना बड़ा सुख है।

अस्तित्व शब्दपर मुझे पहले-पहल [illegible] दिन सन्देह हुआ जिस दिन एक बार [illegible] खोलनेसे पानीकी धार बह निकली [illegible] थोड़ी ही देर बाद फिर खोलते ही फुस-[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की एक आवाज़ हुई पर पानी नहीं आया। मैं इन्तज़ार करता रहा। आश्चर्य करता रहा और पागलोंकी तरह इधर-उधर देखता रहा। मुझे महसूस हुआ कि यह परतन्त्र है और इसके कारण मैं परतन्त्र हूँ और फिर यह भाव बढ़ता गया और मेरे सामने बहुत-से वे लोग आते-जाते दीखने लगे जो परतन्त्र हैं और जिनके कारण मैं परतन्त्र हूँ। फिर लगा कि स्थिति अनिवार्य है—तो व्यक्तिका अस्तित्व क्या कहलायेगा, परतन्त्र अस्तित्व! फिर भी क्या उसपर सन्देह न होगा कि वह है या नहीं या परतन्त्रता उसने ख़ुद अपनी सुरक्षाके लिए ओढ़ी है या किसी और ने उसकी सुरक्षाका भार अपने कन्धोंपर अनावश्यक रूपमें ओढ़ लिया है। और ज़रूरत दिखाकर उसे बाँध-जोड़कर 'आदमी' बना दिया है। पर मुझे इस बात-पर भी सन्देह है। कहीं यह मैंने ख़ुद ही तो सब प्रपंच नहीं रचा और अब घबराकर मैं दोष किसी दूसरेके कन्धोंपर रख रहा हूँ। क्या सिर्फ़ मैं····

ओह! बात फिर यूँ ही निकल आयी कि मैं अकेला हूँ। पर यह सच नहीं है। मैं अकेला नहीं हूँ, मेरे साथ हज़ारहाँ लोग हैं। हाँ, यह मैं नहीं बता सकता कि मेरे ही जैसे भाव उनके मनमें उठते हैं या नहीं।···· चुस्त पोशाक····पर-स्त्री भोग···· चोरी···· ख़ून···· क्या यह आज किसीको चौंका पाता है? स्त्री-पुरुषके चेहरोंपर क्या रिश्तोंका मुखौटा चल पाता है? दैत्य क्या नहीं बताता कि सब समान है। चाँदपर पहुँचकर क्या आदमी नपुंसक हो जायेगा: चाँदपर पहुँचते जो मर रहे हैं क्या दोबारा जन्म लेंगे! साहित्यकारोंको इतने सारे चरित्र पैदा करने-के लिए गिरफ़्तार क्यों नहीं किया जाता? परिवार-योजना उनपर क्यों लागू नहीं होती। और अवैध बच्चेकी मौतपर लोग जश्न क्यों मानते हैं? मैं सोचता हूँ, लोग लिखकर किस अमूर्त्तपर घेरा डालनेकी कोशिश कर रहे हैं। सभ्यता और संस्कृति क्या हज़ारों सालके कम्बल आदमी परसे उठाकर उसे स्वतन्त्र कर सकती हैं? क्या आदमी फिर अपनेको शीशेमें देख पायेगा? आदमी डर रहा है या सभ्यता छल रही है? मैं खालके बारेमें क्यों सोचूँ? हड्डीके बारेमें क्यों सोचूँ? दिल और दिमाग़के बारेमें क्यों सोचूँ? मैं हाड़-माँसके आदमीको गिनतीमें ही क्यों लूँ? मेरी आँखें बहुत कमज़ोर हैं। बिना शीशेके तो कुछ भी दिखाई नहीं देता। इसीलिए कभी-कभी मैं सोचता हूँ, क्यों काँचकी खिड़कियाँ खोल-खोलकर झाँकता फिरूँ। देखकर, अधिकसे अधिक छूकर, मुँह न फेर लिया करूँ? जानता हूँ, इस स्थितिमें तापमान बहुत बढ़ जाता है। मैं जलने लगता हूँ और बन्द कमरेमें अँधेरेकी जलन मुझे खुले नलसे गिरते पानीकी आवाज़ तक सुनने नहीं देती। मुझे भास होता है कि मैं खाटकी बाँहींसे बाँधा जाने लगा हूँ। मैं जीवनके संघर्षसे साफ़-साफ़ निकल गया हूँ। मैं मुक्त हो गया हूँ।

मैंने उस दिन उससे कहा था कि कुछ देर मेरे पास बैठ जाओ। वह बैठ नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकी। मेरे शरीरसे आगकी लपटें निकलती रहती हैं। पास बैठनेका मतलब है—उसके घेरेमें आ जाना। घेरा बढ़ रहा है। इस घेरेमें जकड़ है, आकर्षण है। जो इस घेरेमें हैं वे सिक रहे हैं। मैं अपना घेरा कैसे तोड़ दूँ? उन्हें बाहर कैसे धकेल दूँ? उन्हें इस यन्त्रणासे कैसे मुक्त करूँ? कॉलरिज़के बूढ़े मल्लाहकी तरह ख़ुदको ही अपनी कहानी सुनाकर बुझ लेता हूँ। पर कर तो कुछ नहीं सकता। परतन्त्र हूँ, मर भी नहीं सकता। मरना शायद मैं चाहता भी नहीं, क्योंकि विश्वास नहीं कि मरनेसे आगका वह घेरा टूट जायेगा और मेरे स्नेही-आत्मज मुक्त हो जायेंगे। मैं देख रहा हूँ कि ख़ुदको बचानेके लिए, मुझसे लड़नेके लिए उन्होंने भी अपनी चारों तरफ़ आगके घेरे बना लिये हैं। मैं खुश भी हूँ और जलन भी बढ़ गयी है। खुदको ख़त्म नहीं करूँगा। तमाशा ही तो है। और पुतलियोंका शीशा तो जलन में और भी पारदर्शी होता है। कुछ-कुछ देर बाद तो मैं किवाड़को बन्द कर लौ को बाहर जानेसे रोकता ही रहता हूँ। किवाड़ जल न जायें, इसलिए खोलने पड़ते हैं। ओह, क्या क्रम है। पता ही नहीं चलता कि किसके पीछे कौन पड़ा है।

मैं सच कहता हूँ, नहीं-नहीं, सिर्फ़ कहता नहीं, मानता भी हूँ कि मुझे किसीके अस्ति[illegible] पर शक करनेका हक़ नहीं है। फिर [illegible] पास आओ। मुझे छूकर देखो। बताओ [illegible] मैं हूँ। कहो कि मैं क्या हूँ। मुझे साफ़-सा[illegible] बताओ कि मैं क्यों हूँ। अगर नहीं हूँ तो [illegible] भीतर यह क्या गूँजता है कि तुम मेरी त[illegible] देखनेको मजबूर हो जाते हो? यदि मैं आ[illegible] नहीं हूँ तो मेरी यह भाषा तुम्हारी सम[illegible] कैसे आ जाती है? मेरे प्रति जिज्ञासु [illegible] होते हो? सिर्फ़ इसलिए कि 'मैं क्यों हूँ' [illegible] जवाब तुम दे नहीं सकते। बाक़ीके [illegible] सवालोंको लेकर भी मौन मत रहो। [illegible] पास आओ। मुझे छुओ। महसूस करो [illegible] बोलो चाहे मत, पर पास आओ। तुम [illegible] दोस्त हो!

तुम शायद सो गये हो, या भुलस [illegible] हो या जान-बूझकर मुझे नकारनेको [illegible] हो। चुप न रहो। कुछ बोलो। बात करो [illegible] चुप रहकर मुझे फिर यह सोचनेके [illegible] बाध्य न करो कि तुम हो या नहीं हो, [illegible] यहाँ हो या कहीं नहीं हो। तुम····

मेरे प्यारे दोस्त! मूक अविश्वास मु[illegible] अविश्वाससे अधिक धारवाला होता [illegible] फिर मुझे दोष न देना—यदि मैं अपने [illegible] तुम्हारे बीचकी दूरी फाड़ डालूँ, ग़लत [illegible] गये ख़तकी तरह···

■

४८ ई, कमला न[illegible]
दिल्ल[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धूप-छाँव

—शक्तिपाल केवल

सुबह मेरी आँख खुलनेसे पहले ही माँ नीचे आ चुकी होती। मैं कुछ पल तक अधखुली आँखोंसे खाली आकाशको घूरता और फिर सफ़ेद चादरको मुट्ठियोंमें भरकर आँखें बन्द कर लेता। नीचेसे माँकी आवाज़ आती, लेकिन मैं अनसुनी कर लेटा रहता। सुबहके समय बिस्तरपर फैलकर लेटना मुझे सुख देता था। माँ धोतीका पल्लू समेटती हुई ऊपर आती, कन्धेसे झकझोरकर उठाती और बाँह पकड़कर नीचे आँगनमें ले आती—"चल, जल्दीसे नहा-धोकर कुछ लिख-पढ़।" वह झिड़कती।

मैं नहा-धोकर बैठ जाता। क़ायदा घुटनोंपर रखकर पैरोंको हिलाता, हाथोंसे आँखोंको मलता और आँगनमें सरकती धूपको देखता। उसका पीला रंग मुझे अच्छा नहीं लगता। मैं सोचता, धूप हर रोज़ एक ही रंगकी क्यों निकलती है? गुलाबी रंगकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
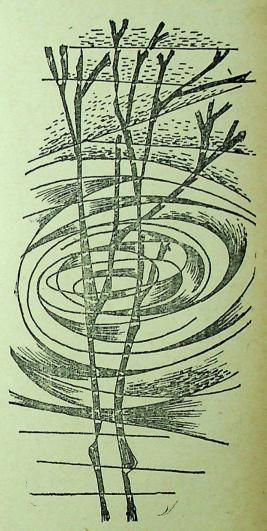
धूप क्यों नहीं निकलती ? तभी रसोई-घरसे माँकी आवाज़ आती, "क्या कर रहा है तू, बोल-बोलकर क्यों नहीं पढ़ता ?"

माँ रसोई-घर, दालान और आँगनमें घूमती हुई एकके बाद दूसरे कामोंमें उलझती रहती। मैं चुपचाप मोढ़ेपर बैठा 'अब चल, आम ला' के दो वाक्योंको रटता हुआ ऊँघने लगता। मुण्डेरपर-से गुज़रती बिल्लीको देखकर खाली हाथ हवामें हिलाता हुआ डराता—'सी-सी!' पाससे गुज़रती हुई माँ रुककर पूछती, "क्या है ?"

मैं मुण्डेरकी तरफ़ इशारा करके कहता, "बिल्ली!"

माँ हँसकर कहती, "अच्छा, तुझे बिल्ली ला दें, तू उसके साथ खेलेगा ?"

"हाँ, मैं गुलाबी रंगकी बिल्ली लूँगा। मुझे एक चवन्नी दे दो। मैं एक गुलाबी बन्दर लाऊँगा।"

माँ मेरी ओर स्नेह-भरी दृष्टिसे देखकर कहती, "शामको तेरे पापा दफ़्तरसे गुलाबी बिल्ली लायेंगे। अब तू अपना पाठ याद कर।" माँ आगे बढ़ जाती और मैं मोढ़ेसे उतरकर फ़र्शपर टाँगें फैलाकर बैठ जाता। क़ायदेको मोड़कर कुप्पी बनाता, दोनों हाथोंकी उँगलियाँको गिनता और वहीं फ़र्शपर लेटकर सो जाता!

माँ दोपहरको घरके कामोंसे निबटकर मैली-सी एक दरी फ़र्शपर बिछाकर बैठ जाती और सफ़ेद कपड़ोंपर लाल-पीले धागोंसे बेलबूटे बनाती हुई कहती, "निकाल अपना क़ायदा। सुना, तूने सुबहसे क्या या[illegible] किया है ?"

मैं उलटा क़ायदा पकड़कर माँको घू[illegible] लगता। वह क़ायदेको मेरे हाथोंमें सी[illegible] करती और एक स्थानपर उँगली रख[illegible] कहती, "यहाँसे पढ़।"

मेरी उँगलियाँ हिलने लगतीं और [illegible] काँपते स्वरमें बोलता, "आम चल···मत··· अब····।"

माँ झुँझलाकर मेरा कान मरोड़ती [illegible] डरते-डरते कान पकड़कर गालपर यों च[illegible] मारती जैसे मैं भुरभुरी मिट्टीका बना होऊँ— "बेशर्म, सुबहसे दो शब्द भी याद नहीं हु[illegible] पढ़ इसे।"

मेरी आँखें भर आतीं और मेरा सा[illegible] शरीर काँपने लगता। माँ मुझे दोबा[illegible] पढ़ाती, लेकिन जब थोड़ी देर बाद पूछ[illegible] तो मैं क़ायदेसे दृष्टि हटाकर उनके स्ने[illegible] मिश्रित कठोर चेहरेको घूरता और सब कु[illegible] भूल जाता। तब वह माथेमें बल डाल[illegible] निरीह दृष्टिसे मुझे देखती और बाँहसे पक[illegible] कर खड़ा कर देती—"खड़ा हो जा, प[illegible] कान।"

मैं दोनों हाथोंसे कानोंको पकड़ता। [illegible] उसका झुँझलाया स्वर गूँजता, 'ऐसे न[illegible] मुर्ग़ा बन।" मैं झुककर दोनों हाथों[illegible] टाँगोंसे निकालकर कान पकड़ लेता। [illegible] पल बीतते और मेरी टाँगें दर्द करने लग[illegible] सिर चकराने लगता और मैं पाँवके अँगू[illegible] उँगलीको चढ़ाकर पक्के फ़र्शको कुरेदने[illegible] कोशिश करता। जब पसीना सारे चेहरे[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्सर पापा सितारोंकी कहानी सुनाते, जो मैं गिनतीकी तरह भूल जाता। माँ परियोंकी कहानी सुनाती.... 'एक थी परी, एक था राजकुमार....' मुझे यह कहानी बड़ी अच्छी लगती। पापा कहानी सुनाते तो मैं ऊँघने लगता और वहीं घासपर सो जाता। वापसीपर वह मुझे झकझोर कर उठाते, लेकिन मैं लुढ़क-लुढ़क जाता।...

भिगोकर नीचे चूने लगता तो माँ पूछती, "बोल, अब याद करेगा ?" मगर मैं चुप रहता—"बेशर्म, ढीठ है, छोड़ कान।"

मैं कान छोड़ देता। मेरी आँखोंमें आँसू होते, मेरा सारा शरीर पसीनेमें भींग जाता और चेहरेपर खून उतर आता। माँ धोतीके पल्लूसे चेहरा पोंछती। मैं सिसकियाँ भरकर रोने लगता तो वह हँसकर मुझे छातीसे लगा लेती और पंखेसे हवा करती हुई कहती, "अब सो जा, उठकर याद करना।"

वह पीठ करके फ़र्शपर लेट जाती और थोड़ी ही देरमें गहरी नींदमें सो जाती। मैं आगे-पीछे, दायें-बायें देखता और उठकर गलीमें आ जाता। सँकरी गली सुनसान होती। दूर कुएँपर कुछ चिड़ियाँ पानीकी तलाशमें चक्कर लगा रही होतीं। मैं गलीमें कुछ क़दम चलता, लेकिन तुरन्त ही वापस लौट पड़ता। गरम धरतीसे मेरे पाँव जल जाते। मैं दालानमें लौट आता। माँ तिरछी होकर बेसुध लेटी होती। पसीना उसके माथे-के बालोंकी जड़ोंसे बहकर, गलेपर धारियाँ बनाता हुआ नीचे बह रहा होता। मैं घुटनों-के सहारे बैठ जाता और पंखा उठाकर हवा करने लगता। धीरे-धीरे मेरे हाथ थकने लगते, धीरे-धीरे मेरी आँखें बन्द होने लगतीं और मैं धीरेसे वहीं फ़र्शपर लेट जाता।

जब शामका धुँधलका फैलने लगता तो माँ घरके कामोंमें उलझ जाती और मैं बाहर उकड़ूँ बैठकर आने-जानेवालोंको देखता। बहुत से लड़के-लड़कियाँ खेल रहे होते और मैं गुमसुम बैठा उन्हें निहारता रहता। दो-तीन लड़के सीधे एक पंक्तिमें खड़े हो जाते। उनमें-में एक कहता, 'वन, टू, थ्री' और वे तेज़ीसे भागने लगते। मुझे यह खेल बड़ा अच्छा लगता था। पर मुझे कोई बुलाता ही नहीं था। मेरा जी चाहता कि मैं भागता हुआ रसोईमें जाऊँ और माँको हाथ लगाकर भाग आऊँ। जब मैं उठने लगता तो दूरसे पापा आते दिखाई देते। मैं भागकर उनकी टाँगोंसे लिपट जाता और वे मुझे गोदमें उठा लेते। घर पहुँचकर मैं ज़ोरसे बोलता—"मैं आ गया।" माँ स्निग्ध दृष्टिसे पापाकी तरफ़ देखकर कहती, "आप आ गये, बड़ी देर कर दी!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हाँ, कहीं चला गया था," कहकर वह अन्दरकी ओर बढ़ जाते। मैं उनके पीछे-पीछे जाता। वे बूट उतारकर स्लीपर पहनते और कुरसीको मेज़के पास खींच लेते। भारी किताबों, लिखे-अनलिखे काग़ज़ों, दावात, पेन और पेंसिलोंसे उनकी मेज़ भरी होती। वे एकके बाद दूसरी किताबको उलटते-पलटते रहते। माँ शरबतका गिलास लाकर उन्हें पकड़ाती और कोनेमें पड़ा मोढ़ा खींचकर उनके पास आ बैठती। पापा घूँट भरते और मेरी ओर देखकर पूछते, "तुम पिओगे ?"

मैं कुरसीके हत्थेको पकड़कर भूल जाता और कहता, "नहीं, तुम पिओ।"

माँ माथेमें बल डालकर मेरा कान पकड़ती और उसे मरोड़ती हुई कहती, "बेशर्म, कितनी बार समझाया है! पापासे ऐसे बोलते हैं!" एकाएक मेरा सारा शरीर काँप जाता और आँखोंमें आँसू तैरने लगते। माँ पापाकी तरफ़ मुसकुराकर देखती और फिर नरम स्वरमें कहती, "बेटा, बड़ोंको 'आप' कहते हैं। बोलो, क्या कहते हैं ?"

मैं अत्यन्त धीमी आवाजमें कहता, "आप।"

अँगीठीपर चढ़ी पतीलीसे उफनकर कुछ नीचे गिरता। 'सूँ' की आवाज़ आती और माँ रसोई-घरकी तरफ़ भाग जाती। पापा शरबतका ख़ाली गिलास मेज़के नीचे रखते हुए कहते, "तुम आज पढ़े ?"

मैं सिर हिलाकर स्वीकारता। तब वे कहते, "अपना क़ायदा लाओ!"

मैं अनमने ढंगसे कोनेमें फेंके गये बस्तेसे क़ायदा निकालकर लाता। पापा ... लगाये एक मोटी-सी किताबके पन्ने प... होते। मेरी ओर देखते और किताबपर ... जगह पेंसिलका निशान लगाते हुए क... "सुनाओ।"

मैं पढ़ता, जो ग़लत होता। पापा... चेहरा कठोर होने लगता—"तुम्हारी ... लिश-रीडर कहाँ है, निकालो।" मैं ... थर काँपता इंगलिश-रीडर निकालता।

"यहाँसे पढ़ो!" उनका स्वर क... होता।

मैं रुक-रुककर बोलता—"ए'''... हुआ''' सेब।"

पापा कसकर एक चपत मेरे गा... मारते—" 'ए' से 'एपिल' पढ़ो।"

मैं 'ए' से 'एपिल' पढ़ता, मगर ... आँखोंके सामने अँधेरा छा जाता। पापा... खुरदरी अँगुलियाँ मेरे गालोंमें टीस... कर देतीं। वे रीडर अपने हाथमें ले... पूछते, "मून मायने ?"

"चा'''सूरज।"

"मिल्क मायने ?"

"पानी।"

"फिंगर मायने ?"

"बिल्ली।"

वातावरणमें एक चीख़ गूँजती। ... भागकर आती—"क्या हुआ ?" मैं गा... दोनों हाथ रखे, फ़र्शपर घुटनोंके बल ... चीख़ रहा होता और पापाका चेहरा ... होता। वे माँकी तरफ़ देखकर कर्कश स्व... पूछते, "यह दिन भर क्या करता है ? ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे पढ़ा भी नहीं सकतीं ?"

"पढ़ाया तो था, भूल जाता है।"

पापा मुँह-ही-मुँहमें बड़बड़ाते हुए सिर घुमाकर पुस्तकपर नज़र जमा लेते। माँ मेरा हाथ पकड़कर बाहर नलपर ले आती, मेरा मुँह धोती और फिर रसोई-घरमें ले जाकर अपने पास बैठा लेती। एक हाथसे पतीलीमें करछुल चलाती और दूसरेसे डब्बे-का ढक्कन खोलकर चुटकी-भर चीनी मेरे हाथपर रख देती। मैं जीभकी नोकसे चीनीका एक-एक दाना खाने लगता।

रातको पापा बाग़में घूमने जाते। वह माँके साथ मेरी समझमें न आनेवाली उलझी-उलझी बातें करते। मैं कभी आगे, कभी पीछे और कभी बराबर चलता। माँका पापाके साथ यों बातें करना मेरे अन्तरमें अरुचि पैदा करता। मैं नंगे पाँव घासपर भागता। फ़व्वारेसे निकलते पानीको देखता और झाड़ियोंमें छिपते लड़कोंको निहारता, फिर किसी खाली बेंचके दिखाई पड़ने पर तेज़ीसे भागता और जाकर उसपर लेट जाता। ऊपर आकाशमें सितारे टिमटिमा रहे होते। माँने बताया था कि छोटे बच्चे और गुलाबी बन्दर सितारोंसे आते हैं।

अकसर पापा सितारोंकी कहानी सुनाते जो मैं गिनतीकी तरह भूल जाता। माँ परियोंकी कहानी सुनाती·····'एक थी परी, एक था राजकुमार·····' मुझे यह कहानी बड़ी अच्छी लगती। पापा कहानी सुनाते तो मैं ऊँघने लगता और वहीं घासपर सो जाता। वापसीपर वह मुझे झकझोरकर उठाते, लेकिन मैं लुढ़क-लुढ़क जाता।··· वह मुझे गोदमें उठाकर कन्धेसे लगा लेते। माँका स्वर सुनाई पड़ता—"अब इसका स्कूलमें नाम लिखवा दो जी!"

■

काले बाल सफ़ेद होने लगे हैं। आँखोंपर मोटे शीशोंकी ऐनक चढ़ गयी है। एक और नयी पुस्तक मेरे नामसे छपकर सामनेकी अलमारीमें टिकी है। मैं लिखनेकी मेज़पर झुका हूँ। मारुतीने पप्पूको फिर मारा है और वह सिसक रहा है। मैं मारुतीसे कहना चाहता हूँ—समय सबसे बड़ा शिक्षक है। वह सबका नियामक है। पप्पूको कुछ मत कहो। उसे समयके हवाले कर दो।

लेकिन आवाज़ मेरे गले ही में अटक जाती है। मारुती पप्पूको बाँहसे पकड़कर घसीटती हुई बाहर ले जाती है। मैं गरदन घुमाकर सामने रखी पुस्तकको देखता हूँ, जिसके पहले अध्यायका शीर्षक है—धूप-छाँव।

■ ■

नेहरू पब्लिक कालेज,
नयी सड़क, दिल्ली—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रकी
सेवामें
संलग्न...

जयपुर उद्योग लिमिटेड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
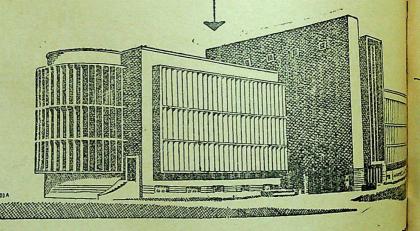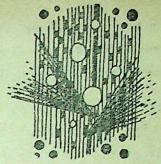
पाँच कवि

१. न ययौ न तस्थौ*

पत्थर ही चाहते थे सिर तक डूबना
पत्थर ही चाहते थे तराश । पत्थर ही चाहते थे जगह बदलना
नदी ने कुछ ग़लत नहीं किया । हम तक बहने के अलावा

पिछले साल । यह आग । हमसे बहुत आगे थी
इस नदी में । हम बढ़े हुए पानी की तरह नहीं घुसे थे

इस पहाड़ पर । मैंने । पिछले साल एक ग़लती छोड़ी थी
मेरी भाषा के विपरीत । एक दिशा उगी है

---

* "…न ययौ न तस्थौ" कालिदासका श्लोक-वाक्य है 'कुमारसम्भव' में ।— पूरी पंक्ति इस प्रकार है : "शैलाधिराजतनया न ययौ न तस्थौ"…शंकरको अपने सामने देखकर कुमारी पार्वतीका एक पैर जो आगे चलनेके लिए उठा था वह उठाका उठा ही रह गया । यानी—'न ययौ न तस्थौ'—न जा सकी न ठहर सकी । यह अर्थ मेरी कविताके सन्दर्भमें पूरा नहीं—ज्योंका त्यों भी नहीं, सिर्फ़—मेरा मतलब—"न ययौ न तस्थौ" से है । इस वाक्यका अपने आपमें कोई लिंग नहीं । मैं सिर्फ़ उस स्थितिकी ओर संकेत करना चाहता हूँ जो न गतिशील है न ठहरी हुई । शायद कुछ है जो कुछ भी नहीं है—जो कहके कहा जाये… । —कवि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

--तब सफ़ेद ढलान। लौटकर। तुम्हारी आँखों में कितना मानी रखते थे....

बाज़ार से लेकर कमरे तक। एक हंगामे की तरह। तमाम चीज़ें बजेंगी
घिसने की लय में। मैं तुम्हें याद करूँगा। डाकखाने से अस्पताल तक
—अपने-अपने सन्दर्भ के युद्ध में। हम और पैने हो गये हैं...

खाली जगहों पर। उत्तेजित होकर। पीला होने के लिए
ये मूर्तियाँ ऋतमती होंगी
और एक सन्त्रस्त भीड़ मानवीय हो उठेगी

—फिर इस कोहरे में। मेला जुड़ेगा। बहुत दिनों बाद फिर मिलेंगे
दूकानों के आस-पास। पुराने प्रेम....

किसी आतुर चोंच के हैं। सेबों पर पड़े हुए दाग़।—मैं कहूँगा
इस जड़ता की ठण्ड में कौन लेगा। बँट जाने के लिए। प्रबल
होती हुई। मेरी आग...

मैंने समय की हत्या का साज़िश की। आसमान में एक चाक़ू फेंका
वह निश्चित घायल होकर आ रहा है। इधर-उधर चीज़ें धँसाकर
वह यहीं से गुज़रेगा। क़ानून से लेकर सज़ा तक। हम सबको
डींग की तरह हाँकता हुआ
हवाओं में बन रहे हैं छेद
शहर में उगी हुई। पीली। भोग की भाषा। उछाल मारती है
किनारों पर। बिछे हुए समुद्र के समय ने। हम से चिह्न माँगे थे
—इस तपे हुए दिन के चेहरे को लकीरें देता हूँ

झरने का सुख और मौत का मुख। सब जगह एक होता है
मुझे मालूम हैं अपने सब काम
लेकिन जब तक खड़ा उठता हूँ—
—मुझसे आगे चल पड़ता है मेरा बदनाम

पिछले मेले की वर्षगाँठ। कितने अकेले में....
तपे हुए शहर में। खपे हुए लोगों का जंगल गिजबिजाता है
यह पीला दिन। किसी दुर्घटना से आतंकित। मेरे कमरे में हॉर्न बजाता है
खुद को धोखा देकर। आज ही भाग जाऊँगा कहीं....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाहर से इतना लिपट गया हूँ। आसमान मुझ में बिलकुल टूट चुका है
मुझे चीरने के बाद कोई कुछ नहीं देख सकेगा
न ये जंगल। न ये स्मृति-चिह्न
न इस संगीतहीनता के पीछे। इच्छाओं से अवलोकित तुम्हारा चेहरा
जिसने हमेशा कोई रंग दिया मौसम के विपरीत
उचित-उचित अर्थों वाली एक चुप्पी....
दूर इतने अकेले में। इस अनुर्वर प्रकाश का क्या करूँ ?

मैं इस सारे विवेक का क्या करूँ
जिसने तमाम चीज़ों को अर्थहीन बना दिया ?

अपने सन्दर्भ की अमानवीयता से लड़ता हुआ
असल में। आज का दिन रह नहीं पायेगा
कहीं भी। बिना किसी पूर्व सूचना के
अपने शरीर पर
अतिरिक्त पुर्ज़े का विवेक। जिज्ञासा और छटपटाहट लेकर। ढह जायेगा
जलूस के कपड़े उतारकर
इसकी मरी हुई आँख में। सारा शहर नंगा हो जायेगा

उजाले के हाथ पर। हर आत्महत्या से पहले
इस जल की गहराई में। मुड़े हुए दृश्यों के नीचे
फिर एक आकाश काँपेगा
उस पुल को तोड़कर। जो आगे बढ़ रहा था
मेरी पीठ पर बजने लगा है। उस सुरंग का अन्त—
सारी परिस्थिति के विपरीत
एक पिछला दरवाज़ा खुलने वाला है
किसी अपरिचित बवण्डर के साथ
झरे हुए दिन मुझ में घुसने लगे हैं
भाषा और परिस्थिति के विपरीत
ऐसा करता हूँ कि आज ही मरता हूँ

—लीलाधर जगूड़ी

राजकीय जूनियर हाईस्कूल,
मुष्टिक सौड़, उत्तर काशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. स्थगित

आँधियों के साथ चीखता है प्यास का पागलपन
और गन्ध कोई निर्णय नहीं लेती। एक
टूटी हुई बाँसुरी पानी पर तैरती रहती है और डूबने
वाले आदमी का सहारा नहीं बनती
सब कुछ आकाश है, सब कुछ का आकाश
पतंगें उड़ती हैं, नदियाँ भी। पृथ्वी किसी का आधार
नहीं है। पीले, सफ़ेद
फफोलों की तरह उठते और फूटते हुए दिन।
वस्तुएँ हैं और वे मुझमें हैं वस्तुओं के द्वारा, संचरणशील
—मेरे इरादों पर हावी। उनके भुजंग सत्य
लिपटे हुए हैं पूरी व्यवस्था के चारों ओर। तारल्य के
विस्तार का वह नीलापन
जो सपने की तरह घटित होता है बज उठता है
वेश्या के स्थिर हाव-भावों में और ठहर जाता है लँगड़े
सम्बन्धों की भाँति। प्राणों में एक उन्मत्त, क्षुब्ध पृष्ठ है
जिसे वर्णमालाओं के देश से निर्वासित कर दिया गया है।
उजाले में मैं उन चमकती हुई आँखों
को ढोता हूँ जो सुबह जगते ही मेरे माथे पर खुल जाती हैं।
कोई नहीं है ऐसी भाषा
जिसके लिए सोच सकूँ कि यह
मुझे अदालत में खड़ा नहीं करेगी।
लय और अलय के मध्य फैली छोटी-छोटी दुनियाओं में भटक आता हूँ
एक अनिवार्य बदले
की भावना से। मुझमें से छन कर जाती है जो साँस—
किसी के जीवन का कारण नहीं बनती।
जानता हूँ, मैं एक षड़यन्त्र के सहारे
चलता हूँ। मेरी अपनी कोई गति नहीं है। इसीलिए मेरे पीछे
न पदचिह्न बनते हैं, न कोई पगडण्डी खड़ी होती है!

—मणि मधुकर

द्वारा : कल्पना ५१६, सुलतान बाज़ार, हैदराबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. रातका शैतान

कितनी ही चट्टानों
ऊबड़-खाबड़ झाड़ियों के बीच
मैंने खींची थीं
हर रोज़
नयी-नयी पगडण्डियाँ
रात का शैतान जिन्हें
चुराकर ले जाता था।

अब उसने
उन पगडण्डियों का
बुन लिया है एक जाल,
जिसे रोज़
मुंह-अँधेरे फैलाकर चला जाता है,
दिन-दिन भर मुझे
वहीं का वहीं घुमाता है।

—भगवत रावत

१८।१०, नार्थ टी० टी० नगर
भोपाल (म० प्र०)

४. पाँचवीं माचिसकी तीलियोंके नाम*

टांट पर धरे
अल्यूमीनियम के औंधे जो कसोरे
अपने पेंदे पर धूपें झेल रहे हैं,
पेट पर उठे हुए मैले जो चोले
फटी धरती पर छाँव डाल रहे हैं,
रेतीले गालों पर उत्तरी भारत की नदियोंवाला
जो नक्शा चिपका है,
कन्धों और कमरों पर छोटी टाँगें लटकाये
जो अधनंगे शरीर
सर्वोदयी लंगरों की ओर भाग रहे हैं
—उन सबकी याद में—
आज का सारा दिन पचास की जगह
चालीस माचिस की तीलियों से सुलगता
रहा!
इकतालीसवीं से पचासवीं तक की
बची हुई तीलियो!
ठण्डे चूल्हों की क़सम
तुम उन भ्रष्ट उँगलियों को क्षमा मत करना
जिन्होंने तुम्हें पाँचवीं माचिस में भरा होगा,

—श्याम विमल

विमल कुटीर, १—बी०:२२,
लाजपतनगर, नयी दिल्ली—१४

* इधर जो अरसेसे [सूखेके सन्दर्भमें] माचिसकी तीलियाँ गिन रहा हूँ वे पचाससे कम—चालीस तक भी पायी गयी हैं, जब कि सीलिंग-पट्टीपर ५० छपा होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

५. मछुओं की बस्ती : तीन दृश्य

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

० सागर तट
रेत-फँसी नाव ।
कीलें
शहतीरें
गले हुए तख़्ते
हड्डियों का ढेर ।
बालू पर
मलवे का गाँव ।

० सूरज के साथ उठा मछुओं का गीत
लहरों के आरपार
छितराते जाल
डोर खिंची मछली
या
डोर खिंचे पाल
आसपास
गन्ध बिंधी सीत

० धुँआ-धुआँ आँगन
धुआँ-धुआँ शोर
फिर वही गाँव
वही कीलें
शहतीरें
अंग-अंग
मछली की गन्ध बसे बच्चे
टूटे हुए प्रेम
गली—
नंगी
तसवीरें
तक लौटी नाव
और
घर लौटे ढोर ।

—अवधनारायण मुद्गल

द्वारा—सारिका, टाइम्स ऑफ़ इण्डिया गेट
बम्बई—१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९६६ के नाटक

जब मैं नाटकोंकी बात करता हूँ तो मैं मान-कर चलता हूँ कि मैं साहित्यकी उस विधाकी बात करने जा रहा हूँ, रंगमंच जिसकी कसौटी है। रंगकर्म और रंगधर्मकी मान्यताएँ परम्परागत कहलानेके बावजूद भी इस युगमें एक स्वतन्त्र स्वरूप लिये हुए है। जहाँतक हिन्दी-नाटकोंका प्रश्न है, नाटकों-की कोई विशिष्ट परम्परा हमारे पास नहीं है। नाट्य-क्षेत्र-परम्पराके नामपर केवल संस्कृत नाटकोंकी विशृंखल कड़ियाँ हमारे पास हैं जिन्हें हम अपनी एक मात्र रंगी कह सकते हैं। पिछले सौ वर्षोंसे हिन्दी-नाटकोंके क्षेत्रमें जो कुछ हुआ है उसमें-से आधेसे अधिक प्रयोगोंकी सीमामें ही लिया जा सकता है। इन प्रयोगोंमें लेखनका प्रयोग भी है और प्रस्तुतीकरणका भी। आज इन प्रयोगोंमें स्थायित्व आ रहा है। अतएव आजके नाटकोंको परखते समय हम अतीतमें ही गड़कर नहीं रह सकते।

रंगकर्म और रंगधर्मकी मान्यताओंको लेकर जब हम श्री विष्णु प्रभाकरके नाट्य संग्रह 'ऊँचा पर्वत गहरा सागर' को देखते हैं तो हमें स्वीकार करना पड़ता है कि मूल-में इस संग्रहके सभी नाटक ध्वनि-रूपक हैं, उन्हें मंचीय कहना रंगधर्मकी उपेक्षा करना है तथा ध्वनि-रूपकके पृथक् अस्तित्वको नकारना है। मंचीय नाटकोंके संवाद दो प्रकार के होते हैं--एक वाचाल और दूसरे मौन। यहाँ मेरा अभिप्राय संवादोंके साथ-साथ नाट-कीय हरकतोंसे है। ध्वनि-रूपकमें संवाद ही सब कुछ हैं, वहाँ नाट्य स्थितियाँ तथा मंचीय संघर्ष कोई महत्त्व नहीं रखता।

इन संग्रहोंको ध्वनिरूपकोंकी सीमामें लेकर यदि हम इन्हें देखें तो हमें श्री विष्णु प्रभाकरकी सधी लेखनीके कमाल दिखलाई देते हैं। मनोविज्ञानका सूक्ष्म विश्लेषण, भावनाओंकी पकड़ और नाटकोचित संघर्षों-का अन्वेषण विष्णुजीकी अपनी विशेषता है, और यह संग्रह उनकी सभी विशेषताओंसे भरा है। संवादोंकी सजीवता वस्तुतः उनकी अपनी चीज़ है। 'तीसरा व्यक्ति' नाटकमें सुचेताके ये शब्द नाटककारकी गहराईके प्रतीक है--'जाना होगा तो तुमसे पूछूंगी नहीं। आते समय भी नहीं पूछा था। तुम्हारे नाटकके किसी पात्रकी पत्नी नहीं हूँ कि क़लमके इशारेपर जाऊँ और आऊँ। हाड़-माँसकी नारी हूँ। मैं नहीं जाऊँगी।"

'तीसरा व्यक्ति' वास्तवमें आधुनिक

१९६६ के नाटक : कृष्णकिशोर श्रीवास्तव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाजके व्यक्तित्वविहीन व्यक्तियोंके मिलन-बिन्दुओंका चित्र है। समर और सुचेता विश्वास और अविश्वासके बीच 'शट्ल कॉक' की तरह थपेड़े खाते हैं। बन्दूकवाला और विपिन स्वयं धोखेमें हैं और दुनियाको धोखा देनेके स्वप्न देखते हैं। आजके जीवनकी अनेक विकृतियाँ इन पात्रोंके माध्यमसे विष्णुजीने हमारे सामने रखी हैं तथा नये-पुरानेके संघर्षको एक प्रश्नवाचक चिह्नसे बाँध दिया है।

'पिपासा' इन्सानके उस बाहरी मुखौटेकी बात करता है जिसके आधारपर किसी व्यक्तिको पहचानना कठिन है। शंकरके तीन विवाहोंका त्रिभुज इस एकांकीकी धुरी है। तीन पत्नियोंके तीन रूप और तीन व्यक्तित्व तथा शंकरको देखनेके उनके तीन दृष्टिकोण। यहाँ विष्णुजीकी 'पिपासा' रूढ़ियोंसे अलग है पर वास्तविकताके बहुत पास है। दकियानूसी पाठक और श्रोता सम्भवतः इसे स्वीकार न करे पर इससे क्या--सत्य सबसे नहीं पिया जाता।

साँकल चमकानेका प्रयत्न 'साँकल' नाटकमें किया गया है पर यहाँ वे पुरानीकी पुरानी ही रह गयी हैं। उनकी किसी भी कड़ीमें किसी प्रकारकी नवीनता नहीं है। पुराने पिछड़े लोगोंको तेज़ीसे बढ़ते समयके साथ खींचनेके लिए समाजने जो साँकलें निर्धारित की हैं सम्भवतः वह भी इसमें-से एक है। विश्वनाथ पिछड़ा है। परेश, विनीता, अजित, दिलीप—सभी आजके युगके हैं और विश्वनाथ दौड़कर उनके साथ हो जाना चाहता है। पर साँकलोंमें बँधे होनेके कारण किसी क़ैदीकी तरह गिर पड़ता है। विष्णुजी का यह विश्वनाथ सहानुभूति तो पा जाता है परन्तु मनमें पैठ नहीं पाता।

संग्रहका नामधारी नाटक 'ऊँचा पर्वत गहरा सागर' नाटककारके विशेष मोहके कारण ही सम्भवतः इस संग्रहकी सबसे शिथिल रचना है। साधारण-सा कथानक और बहुत ही साधारण पात्र। न कहीं कोई ऊँचाई, और न गहराई। न कोई रहस्य है और न कोई चकाचौंध करनेवाला यथार्थ। चेरियन, जयमा, पारसिंह, शेफाली और गोखले सभी साधारण यात्रियोंकी तरह आते और बिना कोई छाप छोड़े चले जाते हैं। आनन्दके द्वारा अन्तमें जिस सूत्रको नाटककारने सामने रखा है वह न नया है और आकर्षक।

'स्वर्ग और संसार' सुन्दर संवादोंका एकीकरण है। इसमें कथानक अथवा चरित्र-चित्रणकी कोई विशेषता नहीं है जिसका उल्लेख किया जा सके। दृश्यका विधान प्रतीकात्मक है पर पात्रोंमें कहीं कोई प्रतीक नहीं दिखता। उषा और आलोक नामोंका आसरा लेकर उनके सम्बन्धोंकी बात बड़ी पुरानी और प्रभावहीन लगती है।

'पाँच रेखाएँ—एक बिन्दु' में विष्णुजी की राष्ट्रप्रियता दृष्टिगोचर होती है। राष्ट्र और व्यक्ति, सामाजिकता और व्यक्तिवादिता का अन्तर्द्वन्द्व ही इस नाटकका मूल है। पिछले दो-तीन नाटकोंमें यथार्थवादी नाटककार यहाँ अपेक्षाकृत आदर्शवादी हो गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। विजया, सत्यजी आदि उसी आदर्शके प्रतीक हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि सभी नाटकोंको यदि मंचसे हटाकर ध्वनि-रूपकों की कसौटीपर कसें तो कुछ न्यूनताओंको छोड़कर उन्हें हम सफल कह सकेंगे।

■

सुप्रसिद्ध कहानीकार मन्नू भण्डारीका पहला नाटक है—'बिना दीवारोंके घर'। यदि नाटककी विज्ञप्तिमें यह सूचित न भी किया गया होता कि यह उनका पहला नाटक है तो भी नाटकको समझनेवाला व्यक्ति यह कह देता कि यह उनका पहला प्रयास है। नये नाटककारकी सारी कमज़ोरियाँ ज्योंकी त्यों इसमें बनी हैं। मन्नूजी मूलतः कहानी-लेखिका हैं और इस नाटकके लिए उठाया उनका कथानक भी कहानीके लिए अधिक उपयुक्त मालूम होता है। सारा कथानक मानसिक कुण्ठाओं और आन्तरिक घुटनसे भरा हुआ है, जिसके मंचीय व्यक्तीकरणका कोई मार्ग लेखिकाको नहीं मिल पाया है। अपनी इस दुर्बलताको छिपानेके लिए लेखिकाने कहीं-कहींपर रंग-संकेतोंको विस्तृत रूप दिया है और अपनी ओरसे भी बहुत कुछ कहा है। यह कमज़ोरी कहानीमें खप जाती है पर नाटकमें स्थान नहीं पाती। नाटककार तो पात्रोंको मंचपर खड़ा करनेके बाद दर्शकोंमें बैठ जाता है—पात्रोंकी सहायताके लिए, कुछ कहने-सुननेके लिए मंचपर नहीं आता और न उनके लिए अपनी व्यक्तित्वकी बैसाखी मंचपर छोड़ता है। तीसरा अंक अनावश्यक पात्रोंसे भरा है और इन पात्रोंको मिलाकर जो लेखिकाने कहलाया है वह गिने-चुने पात्रोंके हाव-भावोंसे भी कहलाया जा सकता था। मन्नूजी सम्भवतः यह नहीं जानतीं कि नाटकोंमें शब्दहीन संवादोंका भी महत्त्व होता है और ऐसे शब्दहीन संवादोंके माध्यमसे कभी-कभी नाटककार बहुत-कुछ कहला लेता है।

नाटक उपयुक्त संवाद और आवश्यक संघर्षके बिना मंचपर चलता नहीं, घिसटता मालूम होता है।

'बिना दीवारोंके घर' का कथानक अपने आपमें एक नवीनता लिये है। मध्यम वर्गके पति-पत्नीके सामाजिक सम्बन्ध कितनी असमताओंसे घिरे हैं, इनकी ओर लेखिकाने संकेत किया है। पारस्परिक व्यक्तित्वकी श्रेष्ठता, प्रारम्भिक सन्देहकी छायाएँ तथा आर्थिक जटिलताओंके धरातलपर कुण्ठित पात्रोंको ही इस नाटकमें आधार बनाया गया है। परन्तु इन असमानताओंका चित्रण करनेमें लेखिका स्वयं भटक गयी है। नर-नारी दोनोंसे न वह सहमत हो सकी है और न किसीका विरोध ही कर सका है। फलस्वरूप यह नाटक बिना किसी बातको स्पष्ट किये अथवा निष्कर्षकी ओर संकेत किये, अचानक कट जाने वाली फ़िल्मकी तरह समाप्त हो जाता है। सारी नाट्य मान्यताओं—रंगकर्म रंगधर्मकी आवश्यकताओंसे हटा यह नाटक संवादोंका अर्थहीन सिलसिला मालूम होता है। इसमें न अभिनयके लिए स्थल है और न प्रस्तुतीकरणके लिए कोई स्थान। तीसरे अंकके बाद नाटकके परदेका गिरना ही इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाटककी चरम सीमा है।

मन्नूजीकी रंगकर्म तथा रंगधर्मकी अनभिज्ञताओंको स्पष्ट करनेवाला यह नाटक उनके उस व्यक्तित्वका परिचय भी देता है जो नाटकके क्षेत्रमें स्थापित होनेके लिए प्रयास कर रहा है। मन्नूजी का यह प्रथम प्रयास है अतएव इसका महत्त्व तो है ही और साथ-ही-साथ यह एक बड़े ऐतिहासिक तथ्यका प्रमाण भी है। नाटकका क्षेत्र कहानीके बादका है और इसीलिए कहानीकी सफलताके बाद ही नाटककी ओर झुकना उचित होता है। सम्भव है, मन्नूजी मोहन राकेशके 'आषाढ़का एक दिन' और 'लहरों के राजहंस'' की भाँति ऐतिहासिक अथवा पौराणिक कथानक उठातीं तो उनकी भी सारी दुर्बलताएँ कथानकोंमें छिप जातीं। नाटकका यह आधुनिक बोझ उठाना सरल काम नहीं। १२५ पृष्ठोंकी यह पुस्तक चाहे मैटरकी दृष्टिसे कोई महत्त्व न रखती हो परन्तु अपने गेटअपके लिए अक्षर प्रकाशनको साधुवाद दिलाकर रहती है।

—कृष्णकिशोर श्रीवास्तव

एक और समीक्षा

रस-सिद्धान्त और सौन्दर्य-शास्त्र

बीसवीं शताब्दी अपने ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यमें तुलनात्मक अध्ययनकी शताब्दी रही है। भाषा-विज्ञान, दर्शन-शास्त्र और संस्कृतिके तुलनात्मक अध्ययनके साथ-साथ इस दिशामें अब नवीनतम शास्त्रीय प्रयास सौन्दर्य-शास्त्रके क्षेत्रमें हुआ है। सर्वप्रथम प्रसिद्ध दार्शनिक हेगेलने पौरस्त्य कलाका भी उल्लेख अपने दार्शनिक इतिहासमें किया था और इस अध्ययनकी एक नयी दिशा दिखायी थी। प्रसिद्ध आलोचक रेने वैलेकने सन् १९६३ में तुलनात्मक काव्यशास्त्रकी महत्तापर बल देते हुए उसकी परिव्याप्तिमें पूर्वीय सिद्धान्तोंके आकलनका स्पष्ट निर्देश किया था। एमस्टर्डममें आयोजित सौन्दर्यशास्त्रकी ५वीं अन्तर्राष्ट्रीय संसद्में टामस मुनरोने अपने निबन्धमें सौन्दर्य शास्त्रके अध्ययनकी इस 'अन्तर्राष्ट्रीयता' पर बल दिया है। यों तो अनेक भारतीय और पाश्चात्य विद्वानोंने तुलनात्मक सौन्दर्यशास्त्रके अध्ययनकी ओर स्तुत्य प्रयास किया है। डॉ० आनन्द कुमार स्वामीने सर्वप्रथम यह तुलनात्मक पद्धति अपनायी थी। तदनन्तर डॉ० सुरेन्द्रनाथ दासगुप्तने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'सौन्दर्य-तत्त्व' में इसी तुलनात्मक पद्धतिका आधार लेकर भारतीय भाषाओंमें सम्भवतः सर्वप्रथम पाश्चात्य और पौरस्त्य सौन्दर्य-शास्त्रका विशद और गूढ़ अध्ययन उपस्थित किया। हिन्दी गवेषणा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अनुसन्धानके क्षेत्रमें डॉ० कुमार विमलके 'सौन्दर्य-शास्त्रके तत्त्व' को छोड़कर, अब-तक इस ओर कोई ठोस और प्रभावशाली अध्ययन दृष्टिमें नहीं आया। डॉ० फतह सिंहका ग्रन्थ 'भारतीय सौन्दर्य-शास्त्रकी भूमिका' भारतीय दृष्टिको शास्त्रीय और पाण्डित्यपूर्ण ढंगसे स्पष्ट करता है। डॉ० आनन्द प्रकाश दीक्षित और श्री मनोहर काले ने डॉ० दासगुप्तके 'सौन्दर्य तत्त्व' और सुरेन्द्र वार्रलिंगेके 'सौन्दर्य तत्त्व और काव्य सिद्धान्त'के क्रमशः सराहनीय अनुवाद किये हैं। हर्षका विषय है कि डॉ० निर्मला कुमारी जैनने अपने सद्यःप्रकाशित ग्रन्थ 'रस-सिद्धान्त और सौन्दर्य-शास्त्र' में इस तुल-नात्मक अध्ययनकी अत्यन्त ठोस, पाण्डित्य-पूर्ण और वैज्ञानिक भूमिका प्रस्तुत की है। तुलनात्मक सौन्दर्य-शास्त्रके अध्ययनकी सबसे अधिक कठिनाई उन आधारभूत सिद्धान्तोंकी स्थापनामें है, जिन्हें दृष्टिगत रखकर तुल-नात्मक अध्ययन किया जाना चाहिए। भारतीय सौन्दर्य-शास्त्रका भी अपना विशद इतिहास है, जिसपर प्रारम्भमें तो पाश्चात्त्य विद्वानोंका ध्यान ही नहीं गया। यहाँ तक कि मैक्समूलर-जैसे भारतीय साहित्यके विशेषज्ञोंने भी कभी-कभी यह कह दिया कि भारतमें सौन्दर्य-शास्त्रकी चर्चा ही नहीं हुई। अपनी परम्परामें भारतीय रस-सिद्धान्त अत्यन्त गूढ़ दार्शनिक, तात्त्विक और अनेक दृष्टियोंसे आध्यात्मिक रहा है; उसी प्रकार पाश्चात्त्य सौन्दर्य-शास्त्र भी दो विरुद्ध चिन्तन-परम्पराओंपर आधृत है, जिन्हें हम रागपरक और बुद्धिपरक कह सकते हैं। सौन्दर्य-शास्त्रके प्रसिद्ध विद्वान् प्रो० ए० जे० बामने अपने निबन्ध 'तुलनात्मक सौन्दर्य-शास्त्र' में इन आधारभूत सिद्धान्तोंकी स्थापनाका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रतिपादन किया है। डॉ० निर्मला जैनने अपने उपर्युक्त ग्रन्थमें पूर्व और पश्चिमकी साहित्यिक परम्पराओंके परिपक्व अध्ययनका प्रमाण ही नहीं दिया, अपितु भारतीय रस-सिद्धान्त और पाश्चात्त्य सौन्दर्य-शास्त्रका तुलनात्मक प्रणालीके आधारपर अध्ययन कर अनेक निष्कर्षोंकी स्थापना भी की है, जो आज तो महत्त्वपूर्ण है ही, साथ ही भविष्यके अध्ययन के नये आयाम भी प्रस्तुत करते हैं। मुझे यह कहनेमें संकोच नहीं कि विशुद्ध अनुसन्धान और अध्ययनके क्षेत्रमें हिन्दी साहित्यमें अपनी कोटिका यह प्रथम और स्तुत्य प्रयास है।

प्रस्तुत ग्रन्थमें न तो इस बातका आग्रह है कि प्रत्येक पाश्चात्त्य मान्यता अपने यहाँ भी पहलेसे ही प्राप्त है और न हमारी काव्य शास्त्रीय अवधारणाओंको आधुनिक प्रमाणित करनेका दुःसाहस। तुलनात्मक अध्ययनकी वैज्ञानिकता और विशिष्टता तुलनीय तत्त्वोंकी अपेक्षा उसकी पद्धतिमें ही विद्यमान रहती है···डॉ० जैनने जिस पद्धतिका अनुसरण किया है, उसमें दोनों चिन्तन-परम्पराओंकी रक्षा करते हुए वस्तु-निरूपण, सिद्धान्त-विश्लेषण और तथ्य-चयनपर उनकी दृष्टि केन्द्रित रही है। विषय-निर्वहणकी इसी पद्धतिको प्रो० रेने बैलेकने सर्वाधिक संगत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उपयोगी कहा है। 'मुखबन्ध' के प्रथम अध्यायमें तुलनात्मक सौन्दर्य-शास्त्र सम्बन्धी साहित्यका जो आलोचनात्मक ऐतिह्य प्रस्तुत किया गया है, उसमें लेखिकाके गम्भीर अध्ययनके साथ-साथ इसके विकासमान क्षेत्र, सम्भावनापूर्ण भविष्य और सतत ज्ञानका अवबोध भी है : जो तुलनात्मक अध्ययनको अग्रसर करेगा। लेखिकाने अपने दृष्टिकोणको स्पष्ट करते हुए कहा है : 'यदृच्छापूर्वक सन्दर्भ विच्छिन्न सौन्दर्य शास्त्रीय तत्त्वोंको लेकर बलात् समानता दिखानेका सुगम मार्ग छोड़कर प्रत्येक अवधारणाको परिवेष्टित करनेवाली चिन्तन-प्रणाली, मूल्य-व्यवस्था और सांस्कृतिक सन्दर्भको दृष्टिमें रखना नितान्त आवश्यक है।'

सौन्दर्य-शास्त्र और रस-सिद्धान्त सम्बन्धी मूल धारणाओंपर ही लेखिकाने अपनी दृष्टि रखी और वृथा वैचारिक ऊहापोहमें न पड़कर तुलनात्मक मूल तत्त्वोंका विवेचन और विश्लेषण किया है। एक ओर पंचमगेश शास्त्री-जैसे भारतीय लेखकोंने सौन्दर्यानुभूतिको दर्शन-शास्त्रका अनुचर समझ उसे एक गौण सिद्धान्तके रूपमें स्वीकार किया एवं उसे रसानुभूतिसे प्राप्त 'आनन्दका दार्शनिक विवेचन' माना तो दूसरी ओर पश्चिमी विद्वान् चार्ल्स मोरों-जैसे लेखकोंने उसे केवल मनोविज्ञानकी एक शाखा मात्र गिनकर संकीर्ण बना दिया। ऐसी कोई संकीर्ण और असन्तुलित दृष्टि लेखिकाने नहीं अपनायी। तुलनात्मक सौन्दर्य-शास्त्र के लिए जिस स्वतन्त्र-शास्त्रीय अनुशासन-पद्धतिकी आवश्यकता है, वह प्रस्तुत ग्रन्थमें उपलब्ध है। विदुषी लेखिका रस-सिद्धान्त-जैसे अत्यन्त प्राचीन विषयपर भी अनेक प्रसंगोंकी नवीन व्याख्या करनेमें सफल रही है। उदाहरणके लिए हम रस-सिद्धान्तके अन्तर्गत काव्यके सृजन-पक्षको ले सकते हैं। इस सन्दर्भमें डॉ० एस० के० डे के 'रवीन्द्रनाथ मेमोरियल लेक्चर्स' में दिये गये मत 'संस्कृत काव्य शास्त्र, काव्य-कृतिको सिद्ध सम्पूर्ण रूपमें ग्रहण करके उसके विश्लेषण, विवेचनकी ओर अग्रसर हुआ और काव्यकी सृजन-प्रक्रियाके लिए नहीं रुका' की विवेचना करते हुए प्रस्तुत लेखिकाने डॉ० डे से अपनी असहमति प्रकट की एवं प्रतिभा एवं काव्य-हेतु प्रकरणोंके अन्तर्गत आचार्योंके द्वारा किये गये काव्यके सृजन-पक्षपर विवेकपूर्ण और सतर्क विचार किया। काव्यका 'प्रत्यक्ष' सृजन-पक्ष वस्तुतः उन्नीसवीं शताब्दीकी रोमाण्टिक प्रवृत्तिके आधारपर ही विकसित हुआ है एवं विमसार्ट बियर्डस्ले और जेरो स्तोलनित्स-जैसे विद्वानोंने उसे भ्रामक और त्याज्य सिद्ध कर दिया। यह सही है कि कविमुखसे काव्य-कृतिके सृजन-पक्षपर वैयक्तिक विवरणका आश्रय ले, संस्कृत काव्य-शास्त्र सृजन-पक्षकी भले ही उपेक्षा करता आया, परन्तु काव्यकी कारयित्री और भावयित्री प्रतिभापर विचार करते हुए एवं काव्य हेतुके प्रकरणमें इसपर प्रचुर विचार किया गया है। लेखिकाका यह तुलनात्मक विश्लेषण जितना सन्तुलित है, उतना ही मौलिक भी। इसी प्रकार 'प्रतिभा' पर विस्तारसे विचार करते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ० जैनने युक्ति-युक्त ढंगसे यह प्रतिपादित किया है कि संस्कृत काव्य-शास्त्रमें निरूपित 'प्रतिभा' के अन्तर्गत पाश्चात्त्य परम्पराकी 'भावना' और 'सहजानुभूति' आदि मानस-शक्तियोंका भी समावेश हुआ है।

बर्गसा, क्रोचे और ज्याक भारितेके 'सहजानुभूति'-सिद्धान्तको भारतीय परम्पराके अनुसार 'कविगत नैसर्गिक शक्ति' या सहज उत्पाद्य प्रतिभा कहा जा सकता है। इस सम्बन्धमें तन्त्रालोककी निम्नोक्त व्याख्या ध्यातव्य है :

यन्मूलं, शासनं तेन न रिक्तः को पि जन्तुकः

न च तेन प्रतिभात्मना वस्तुना तिर्यक्-प्रायोऽपि कश्चिज्जन्तुः स्वोचितव्यापारनैपुण्यान्यथानुपपत्त्या रिक्तः।

काश्मीरी शैवागमके अनुसार प्रतिभाकी यह सहज स्थिति आधुनिक सहजानुभूतिके ही समकक्ष ठहरती है। इस प्रसंगमें लेखिकाका यह निष्कर्ष भी उल्लेखनीय है कि 'कल्पना' और 'प्रतिभा' का अन्तर आधुनिक रोमाण्टिक और क्लासिकी दृष्टिका ही अन्तर है।

इसी प्रकार सृजन-प्रक्रियामें कवि-कर्तृत्वकी भूमिकाको स्पष्ट करते हुए रस-सिद्धान्तको रोमाण्टिक काव्य सिद्धान्तसे भिन्न नव्य समीक्षाके निकट विवेचित किया गया है जो आधुनिक और विवादास्पद प्रश्न है। यह सम्भव नहीं कि लेखिकाके इस मतसे सभी विद्वान् सहमत हों पर रस-सिद्धान्तके सम्बन्धमें प्रस्तुत की गयी उद्भावनाएँ, अनेक चिन्तन प्रेरक सम्भावनाओंसे पूर्ण अवश्य हैं।

रस सिद्धान्तके सम्बन्धमें एक अन्य धारणा यह भी है कि वह विषयनिष्ठ काव्य-सिद्धान्त है, जिसमें केवल सहृदयगत काव्यास्वादनका ही निरूपण किया गया है। 'प्राचीन काव्य-शास्त्रमें वस्तुनिष्ठताका अभाव था' यह मत डॉ० जैनको स्वीकार नहीं। उनका मत है कि पश्चिमकी नव्य आलोचनाके समान संस्कृत रस-सिद्धान्त काव्यकृतिके विश्लेषणमें पूर्णतः वस्तुनिष्ठ था, और जिस 'जेनेटिक फैलेसी'की ओर आधुनिक आलोचकोंका ध्यान गया है, संस्कृत आलोचना प्रारम्भसे ही उससे सर्वथा मुक्त थी। संस्कृत आचार्योंकी दृष्टि सहृदय निरपेक्ष काव्य-कृतिपर केन्द्रित रही; उनके रस-निरूपणका आधार कृतिगत काव्यार्थ रहा। यों तो रसकी वस्तुनिष्ठताका प्रतिपादन अन्य अनेक आधुनिक विद्वानोंने किया है पर आधुनिक आलोचनाके परिपार्श्वमें रसकी वस्तुनिष्ठताके अनुसन्धानका श्रेय डॉ० जैनको देना चाहिए, जिन्होंने प्रस्तुत ग्रन्थमें भारतीय काव्य-दृष्टिसे काव्य-कृतिकी स्वनिष्ठता प्रस्तुत की है।

विदुषी लेखिकाने अभिनवगुप्त द्वारा प्रतिपादित अभिव्यक्तिवाद और पाश्चात्त्य अभिव्यंजनावादको एक दूसरेसे मूलतः भिन्न गिना है। भारतीय धारणाके अनुसार सृजक आभ्यन्तरिक रहस्यको ही बाह्य अभिव्यक्ति देनेका प्रयत्न करता है और यह अभिव्यक्ति उसे और ध्यानमग्न एवं नवीनताको संगठित करनेकी प्रेरणा देती है। पण्डितराज जगन्नाथ-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के 'लोकोत्तरत्वं चाह्लादगतश्चमत्कारत्वापर-पर्यायोऽनुभवसाक्षिको जातिविशेषः। कारणं च तदवच्छिन्नयानया विशेषः पुनः पुनरनुसन्धानात्मा' वाले सिद्धान्तकी व्याख्या करते हुए लेखिकाने यह बताया है कि सौन्दर्यबोधमें केवल सिसृक्षाकी तृप्ति नहीं, सृष्टि-पूर्तिकी तुष्टि भी रहती है। अभिनवगुप्त जब काव्यको भावकी अभिव्यक्ति कहते हैं, तो उसका अर्थ कविके वैयक्तिक संवेगोंका स्वतः स्फूर्त उच्छलन नहीं, क्योंकि रस-सिद्धान्तमें भाव केवल 'मानसिक संवेग' न होकर 'साधारणीकृत' होता है और जिन-जिन वस्तुओं और व्यक्तियोंके माध्यमसे व्यक्त होता है, वे भी सर्वदा लौकिक नहीं होते। क्रोचेकी 'अभिव्यंजना' और भारतीय 'अभिव्यक्ति' (जिसमें वाक्य, वाचक, शब्द और अर्थकी समग्रता विद्यमान है) में भी अन्तर समझना चाहिए।

रस-सिद्धान्तके अनुसार अभिव्यक्तिमें भाव एवं विभावके बीच जो सम्बन्ध विद्यमान रहता है, उसे घट-प्रदीप-न्यायके अनुसार 'प्रकाशन'की संज्ञा देना अधिक उचित होगा। हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि पाश्चात्त्य सौन्दर्य-शास्त्र भी आज 'अभिव्यंजना'के प्रसंगमें जो नवीन मोड़ ले रहा है, उसमें संस्कृत काव्य-शास्त्रमें निरूपित अभिव्यक्तिके व्यंजनापरक अर्थकी प्रवृत्ति स्पष्ट है। इस प्रकरणमें इलियटके 'आब्जेक्टिव कोरिलेटिव' और रिचर्ड्सकी 'संवेगात्मक भाषा'के आधारपर संस्कृतके विभावन-व्यापार और व्यंजना-व्यापारकी पुनर्व्याख्या भी द्रष्टव्य है।

प्रस्तुत ग्रन्थका सबसे महत्त्वपूर्ण प्रकरण है 'काव्यानुभूतिका स्वरूप' और 'काव्यानुभूतिकी प्रक्रिया'। इन दोनों प्रकरणोंमें लेखिकाने अपनी वीक्षावृत्ति एवं आलोचनामूलक प्रतिभाका पर्याप्त परिचय दिया है। पूर्व और पश्चिम दोनों ही काव्य-शास्त्रके इस पक्षपर सर्वाधिक समृद्ध हैं; इस नाते इस सन्दर्भमें लेखिकासे किसी मौलिकताकी अपेक्षा नहीं रखी जा सकती। उसकी दक्षता तो तुलनीय पक्षोंके चयन और उसके पारस्परिक सम्बन्ध-निरूपणपर ही परखी जा सकती है। काव्यानुभूतिकी व्याख्या करते हुए ब्रह्मास्वादकी तुलनामें रसानुभूतिके आनन्दकी जो व्याख्या की गयी है, वह अभिनवगुप्तके तत्सम्बन्धी मतका आधुनिक रूपान्तर है। तुलनात्मक सौन्दर्य-शास्त्रकी दृष्टिसे उस ग्रन्थका सर्वाधिक विचारोत्तेजक खण्ड है-पाश्चात्त्य मान्यताओंके परिप्रेक्ष्यमें 'साधारणीकरण' व्यापारकी व्यापकताका विवेचन। साधारणीकरणके विविध पक्षों और उसके मनोवैज्ञानिक स्तरोंका उद्घाटन लेखिकाके अध्ययन, विश्लेषण और उसकी बौद्धिक प्रौढ़ताका प्रमाण है। आधुनिक एम्पेथी और 'साइकिक डिस्टेन्स'-जैसे दो विरोधी व्यापारोंके समावेशकी व्यवस्था करना विचारणीय पर परिपक्व समझका फल है। इस प्रकार प्रस्तुत ग्रन्थमें पाश्चात्त्य सौन्दर्य-शास्त्रके सन्दर्भमें रस-सिद्धान्तका एक ऐसा आधुनिक रूप उपस्थित किया गया है, जिसमें काव्य-सृजनसे लेकर आस्वादन तकके समस्त व्यापार सन्निविष्ट हो जाते हैं, और काव्यके विश्लेषण और मूल्यांकनके साथ-साथ सन्तुलित प्रतिमान ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपलब्ध होते हैं। सम्पूर्ण प्रबन्धको सुव्यवस्थित अनुक्रम देनेमें लेखिकाकी निबन्धन-क्षमता भी सराहनीय है।

इन सारी उपलब्धियोंके बावजूद कुछ विशेष बातोंकी ओर मैं विदुषी लेखिकाका ध्यान आकृष्ट करना चाहूँगा। रस-निष्पत्ति और रस-बोध, रसानुभूति और सौन्दर्यानुभूतिकी मनोवैज्ञानिक पृष्ठ-भूमिको यदि और अधिक स्पष्ट किया जाता तो संगत होता। रचनाकारकी सिसृक्षा और काव्य सृजन-प्रक्रियामें आधुनिक मनोविज्ञानकी—विशेषत: गेस्टाल्ट मनोविज्ञानकी—जो नूतन (विवादास्पद ही सही) अवधारणाएँ हैं, उनका सम्प्रेक्ष्य उल्लेख अधिक उपादेय हो सकता था। यह सही है कि कुछ आलोचकोंने रस और सौन्दर्यानुभूतिको आवश्यकतासे अधिक मनोविज्ञानसे सम्बद्ध कर दिया है पर आधुनिक आलोचनाके क्षेत्रमें इस महत्त्वपूर्ण विषयपर अधिक संयत, वैज्ञानिक और सांगोपांग पद्धतिसे विचार अपेक्षित है। लेखिकाने एक स्थलपर विश्वनाथ महापात्रके रस-विवेचनको आध्यात्मिक बताया है। 'साहित्य-दर्पण' में विश्वनाथ महापात्रके विवेचनकी आध्यात्मिकता वस्तुत: सन्दिग्ध है। यदि यह लेखिकाकी मान्यता है भी, तो उसका पूर्ण विवेचन होना चाहिए था। इस सम्बन्धमें मेरा एक और निवेदन है। भारतीय चिन्तन-धारामें सौन्दर्यका वर्णन केवल साहित्य-शास्त्र तक ही सीमित नहीं रहा परन्तु विभिन्न और विविध कलाओंके प्रसंगमें भी उसपर विचार किया गया। शुक्रनीति, मानसार, विष्णुधर्मोत्तरपुराण, चित्रसूत्र आदि इसके प्रमाण हैं। भारतमें काव्य, संगीत और चित्रकला प्रारम्भसे ही एक दूसरेसे सम्पृक्त रहे हैं।

वस्तु और व्यक्तिके इस सामंजस्यके रहस्यके साथ-साथ भारतीय दार्शनिकोंने दूसरी ओर सौन्दर्यकी आध्यात्मिक परम्परा अपनायी है। आचार्य मधुसूदन सरस्वतीने ब्रह्मको इसी नाते 'सौन्दर्य सार सर्वस्व' कहा है। काव्य-सृजनका भी यही उद्देश्य था। 'छन्दोऽहम् सत्योऽहम्'—छन्द सत्यका अधिष्ठाता है और सत्य सौन्दर्यके आत्मिक समन्वयकी उच्चतम भूमिका—समस्त बन्धनोंसे मुक्तिकी आकांक्षा (केवल रेचन नहीं) कलात्मक सृजनके यथार्थ रहस्यका आन्तरिक तत्त्व है—'अस्मात् पापान्मुञ्च सर्वान् ये उत्तमा अधमा ये'। भारतीय सौन्दर्य-प्रणालीकी यह सुव्यवस्थित परम्परा अगर अधिक विस्तारसे विवेचित की जाती तो भारतीय सौन्दर्य सम्बन्धी चिन्तन-धाराका व्यापक और सम्यक् परिनिष्ठित रूप उपलब्ध होता।

जैसा कि मैंने ऊपर लिखा है डॉ० निर्मला जैनका प्रस्तुत ग्रन्थ 'रस-सिद्धान्त और सौन्दर्य-शास्त्र' निश्चय ही हिन्दीमें तुलनात्मक सौन्दर्य-शास्त्र सम्बन्धी अध्ययनका एक विशिष्ट ग्रन्थ है, और लेखिकाके दीर्घ अध्ययन, चिन्तन और मननकी विशिष्ट उपलब्धि।

—कल्याणमल लोढ़ा

■ ■

(हिन्दी विभाग)
कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
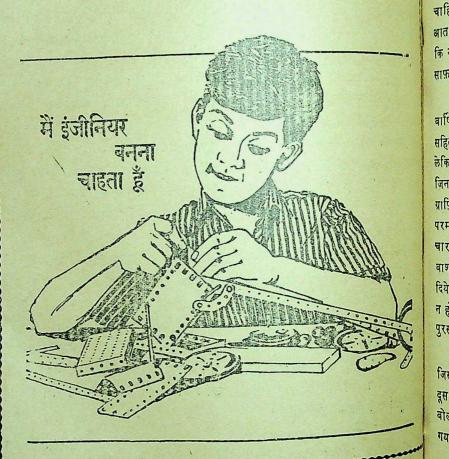
आधुनिकताका दावा : अधूरेपनके आसपास

—एन० खन्ना

अब यह कोई प्रश्न नहीं रहा कि उत्तरप्रदेशका कला-आन्दोलन किधर जाये, कलाकार किन दिशाओंको अपनाये या किन पहलुओंको यहाँ आदर दिया जा रहा है या दिया जाना चाहिए, नयी पीढ़ीका ध्यान रखते हुए बात साफ़ और आधुनिकताके पक्षकी है। अब सवाल आता है—प्रदेशकी राज्य ललित कला अकादमीकी रीतियों और नीतियों का, मैं यह नहीं कहता कि यह अकादमी आधुनिकताके नामपर नयेका स्वागत करना नहीं चाहती लेकिन यह बात साफ़ है कि पुरानी मान्यताओंकी अवहेलना कर सकना अभी इस संस्थाके लिए मुश्किल है।

२९ अगस्तको राज्यपाल गोपाल रेड्डी-द्वारा उत्तरप्रदेश-राज्य अकादमीकी चतुर्थ वार्षिक प्रदर्शनीका उद्घाटन एवं ढाई-ढाई सौ रुपयेके सात पुरस्कार तथा 'सिलवर प्लेक' सहित एक सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार दिया गया। पुरस्कारोंका निर्णय किसी भी तरह ग़लत नहीं है लेकिन वे नियम एकदम निराधार हैं जिनके आधारपर एक पुरस्कार ग्राफ़िक पर, दो मूर्तिकलापर (जिनमें परम्परावादी मूर्तिपर आवश्यक), चार चित्रकलापर (जिनमें भी एक वाश टेकनीकके चित्रके लिए सुरक्षित) दिये गये हैं। नियमोंका यह बन्धन न होकर सिर्फ़ श्रेष्ठ कृतियोंके नामपर पुरस्कारोंका वितरण होना चाहिए।
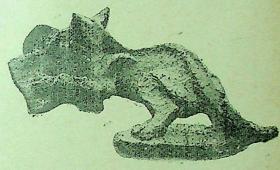
दि कैच : नारायण कुलकर्णी

प्रदर्शनीको तीन नयी दीर्घाओंमें विभाजित किया गया—प्रथममें आधुनिक कृतियाँ, जिसका क्षेत्र नव प्रभाववाद तक है, कुछ चित्रोंमें अमूर्तता है लेकिन वह सिर्फ़ नाम मात्र की। दूसरी दीर्घामें नये और पुरानेकी मिली-जुली बात, जिनमें पुरानी मान्यताओंके चित्रोंका ही बोल-बाला है, वाश-चित्र और निम्न स्तरके टेम्परा चित्रोंका भी प्रदर्शन इसी कक्षमें किया गया, तीसरीमें ग्राफ़िक और मूर्तियाँ थीं, ग्राफ़िकमें लिथोग्राफ़ की प्रिंटिंग-क्वालिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूर्तियोंमें फिर वही मिली-जुली बात दिखती थी। कुल मिलाकर ७५ कलाकारोंकी १२३ कृतियोंका प्रदर्शन किया गया जिनमें ९ अतिथि-कलाकार भी सम्मिलित हैं।

लखनऊने फिर बाजी मार ली, पिछले वर्ष भी छह पुरस्कार और एक सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार लखनऊने लिया था और इस वर्ष वही क्रम रहा। लेकिन पिछले वर्ष पुरस्कारों-के प्रति असन्तोष था और इस वर्ष सन्तोष। इसके अतिरिक्त प्रदर्शनीका स्तर पिछले वर्षसे ऊँचा था। बनारसके कलाकार प्रगतिके लिए प्रयास और प्रयोगमें विश्वास रखते हैं लेकिन न जाने क्यों पिछले वर्षकी अपेक्षा इस वर्ष इनके सहयोगकी उपेक्षा ही सामने दिखती थी। विश्वास है कि निकट भविष्य-में ही इनका अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान बन जायेगा।

श्रीनारायण कुलकर्णीने 'दि कैच' पर सिलवर-प्लेक प्राप्त की। बिल्लीको अपने अशान्ति और बुराइयोंका प्रतीक माना और बिल्लीके मुँहमें दबे कबूतरको शान्तिका दूत। मूर्तिमें विषयकी मनोवैज्ञानिकता है। चिकनी मिट्टीका माध्यम होनेके नाते इस टेराकोटा नमूनेमें कठोरता नहीं कोमलता है और संयोजनकी सरलता, छाया एवं प्रकाशके महत्त्व देनेके लिए सतहके प्रयोगमें मूर्ति-कारका मौलिक बल है।

एन० एन० रायके चित्र 'प्रिज़नर' (क़ैदी) अन्य पुरस्कार पानेवालोंसे ज़्यादा महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है। राय पहले कैनवासपर टैक्स्चर बनाते थे, अब कैनवास-पर रंगोंके प्रयोगमें टैक्स्चर स्वयं दिखता है। विषय भयानक है पर रंगोंकी कोमलताके आकर्षण—टोनल वैल्यू और संरचनाका आपको अच्छा ज्ञान है। सतीशने जल और तैल रंगोंकी मिली-जुली टेकनीकके प्रकृति-चित्रपर पुरस्कार प्राप्त किया। इन्हें जल-रंगोंका माध्यम नहीं छोड़ना चाहिए था। सम्भव है, इस क्षेत्रमें भारतकी नयी पीढ़ीके कलाकारोंमें इनका अपना एक स्थान बन जाता, रंगोंका आपको अच्छा ज्ञान है, सौन्दर्य और सरलता आपका प्रधान ध्येय है, अब सतीशको संयोजनोंमें नये परिवर्तन लाने चाहिएँ।

इस प्रदर्शनीके स्तरको देखते हुए पुर-स्कृत मुज़फ़्फ़र अलीका चित्र एकदम अलग और महत्त्वपूर्ण था। टैक्स्चरल ब्यूटीके नियम-को निभाते हुए आपने अमूर्तताके कुछ पास तक जानेकी कोशिश की है। रंगोंमें गम्भी-रता है पर संयोजनमें कोई नयी बात नहीं। गोपालकृष्णने लीथोग्राफ़की टेकनीकसे 'रिफ़्यूज' में लोक-कथाके सहारे प्रिंटिंग-क्वालिटीको महत्त्व दिया, चित्रमें वातावरण और विषयकी सजीवता आगे दिखती है।

लगता है, सिर्फ़ नियमोंका पालन करने-के लिए ही वाश-चित्र और प्राचीन शैलीकी मूर्ति-कलापर पुरस्कार दिये गये, वैसे अन्य चित्रोंकी तुलनामें श्रीसम्पतकुमार डेविडका स्थान ठीक है, फूलचन्द्रके विषयमें मौन रहना ही ज़्यादा उचित समझता हूँ।

अपुरस्कृत कृतियोंमें करीम ममदानीके लीथोग्राफ़में टेकनीकके अतिरिक्त संरचनामें
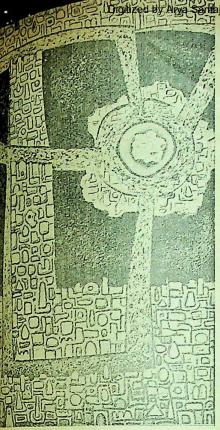
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नगर नं०-१ : एम० एल० नागर

सम्बन्धी मौलिकता और नयापन है। क्यों न इन्हें पुरस्कार दे दिया जाता जिससे निर्णायकोंका पक्ष और भी बलवान हो जाता। इनके अतिरिक्त गोकुल डिम्बी, धीरेन्द्रकुमार. गोपाल टण्डन, बी० के० पन्त, हरप्रसाद शर्मा, बी० बी० चक्रवर्ती, सुरेशकुमार, रमेश विष्ट, नानक वर्मा और वाई० पी० जखमोला तथा ताहिर मियाँका नाम नये प्रगति-पसन्द कलाकारोंकी क़तारमें लाया जा सकता है।

पिछले वर्ष सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार पानेवाले मूर्तिकारकी कृतिको इस वर्ष प्रदर्शनके लिए चयन भी नहीं किया गया? अतिथियोंमें बहुत कमने ही अपने फ़र्ज़को पूरा किया। लगभग आधे यानी नौ तो पता नहीं प्रदर्शनीके नामपर कहाँ छिप गये! जीतेन्द्रकुमारके रातमें बसेरा लेनेवाले कबूतरोंमें कोई भी नयी बात समझमें नहीं आती। रथीन मित्राके चित्रमें रंगोंका खेल है। साथी जी अभी भी अपनी बहुत पुरानी जगहपर ही हैं। अज़मत शाह आगे आनेके लिए रास्ता (टेकनीक) खोज रहे हैं। स्मार्तजीने लोक-परम्पराका सफलतासे निर्वाह किया पर इन्हें और अच्छा प्रदर्शन करना चाहिए था। श्रीपँवारको अच्छा मूर्तिकार कहा जा

द प्रिज़नर : एन० एन० राय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता है। चित्रकार नहीं वरन् शिल्पकार ही कहना होगा। विष्टके चित्रोंमें विद्रोह है, एक वर्ष पहले आपने उस समयकी परिस्थितियोंसे प्रभावित होकर अभिव्यक्तियोंमें नये परिवर्तन लानेका प्रयास किया पर तत्कालीन प्रयोगवादी होनेके नाते एस्टेम्पोरनेसका साथ निभानेके लिए वहाँ आ गये हैं जहाँ विद्रोहकी आकृतियोंको कोई भी स्थान नहीं है। नागरजीमें प्रतीक और प्रभावके सहारे नया परिवर्तन है जिससे भविष्यमें आशाएँ हैं। मैं तो समझता हूँ कि अब उत्तरप्रदेशको कला-मंचपर अपना एक निजका स्थान बनानेके लिए न्यू रियलिज्म (प्रयोगवादी यथार्थवाद) नामका एक नया आन्दोलन शुरू कर देना चाहिए, जिसका आधार हो यथार्थ, और लक्ष्य हो आधुनिकता। यह कोई समझौतेकी बात नहीं है बल्कि नये और पुरानेके दंगलसे नयी पीढ़ीको बचानेके प्रश्नका हल है जो आगे आधुनिकताके पहलुओंकी प्रगतिका बहुत बड़ा रूप ले लेगा।

■।

द्वारा—यू० पी० जिमनास्टिक वर्क्स
७, अशोक मार्ग, लखनऊ

परिवर्तित ग्राहक-शुल्क :

एक प्रति	...	१—५०
वार्षिक विशेषांक	...	३—००
वार्षिक शुल्क	...	१५—००
अर्द्धवार्षिक	...	८—००
तीन वर्ष का	...	४०—००
सात वर्ष का	...	६५—००
पन्द्रह वर्ष का	...	२००—००
आजीवन	...	२५१—००

—व्यवस्थापक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर शाम

—अनामिका

■

शाम होते ही फिर अकेलापन
उसे लगता है
जैसे पाँच बजते ही उसके लिए अँधेरा पड़ जाता है
भरा-पूरा घर और विश्वसनीय पति
लेकिन फिर भी
न जाने क्यों उसे कुछ
अच्छा नहीं लगता।
बाहर पार्कमें बुगनबेलियाके लरजते फूल,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
छोटे-छोटे प्यारे बच्चे
और कोनोंपर उगे रंग-बिरंगे फूल भी
उसका मन नहीं मोहते ।
अकेलेपनसे घबराकर
जब कभी वह छतपर जा खड़ी होती है तो
सूर्यके डूबनेके साथ-साथ ही उसका मन डूबने-सा लगता है ।
सफ़ेद और सलेटी कबूतरोंकी लम्बी-लम्बी लाइनें,
चिमनियोंका धुँआ
और एक अजीब धुन्धमें डूबा हुआ शहर
जो पहले कभी उसे अच्छा लगता था
अब वही सब उसे गहरी उदासीमें डुबो देता है
बाहर या भीतर केवल अँधेरा
जैसे वह आँख तकके पानीमें डूब गयी है
ज़ोर लगाकर साँस खींचते हुए
इस डूबनसे बचनेके लिए
वह पुरानी यादोंकी ओर मुड़ जाती है ।
परन्तु वहाँ भी जैसे कोई चैन नहीं
लम्बे-लम्बे यूकिलिप्टस
या पॉपलर या कचनारके पेड़
या नीले फूलोंसे लदी सड़क····
सिरको झटका देकर वह इनसे छूटना चाहती है

कल इन्दु दत्ताने सलाह दी थी
कि क्यों नहीं वह शामको कनॉट-प्लेस
या इण्डिया-गेटकी ओर निकल जाती
उसे पता है वहाँ चमकती बत्तियों और पेड़ोंके नीचे दुबके अँधेरेमें भी
छुटकारा नहीं मिलेगा
जब इन्दु दत्ता हर साँझ सज-सँवर कर
मिस्टर दत्ताके साथ मुसकुराती हुई उसके घरके सामनेसे
घूमनेके लिए निकलती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो उसे विपिनपर बेहद ग़ुस्सा आता है
ठीक रातको साढ़े ग्यारह बजे आयेगा वह
और मुँहके आगे कोई भी किताब या पत्रिका रखकर
खाना खाते हुए कहेगा—
चलो खानेके बाद घूमने चलते हैं
मानो वह
सोनेका टाईम न होकर
घूमनेका हो।

"अरे हाँ, आज तुम्हारे पापाकी ट्रंककाल आयी थी—
बेबीकी शादीके बारेमें हमारी राय पूछी है।"
"मुझे नींद आ रही है।"
वह अपने बैगसे निकालकर नीला फूल, जो रातमें स्लेटी दिखाई देता है,
उसके बालोंमें टाँक देता है।
"इस बार 'शरद-पूर्णिमा'पर हम आगरा जायेंगे।"
"हाँ वही जगह मेरे लिए बाक़ी रह गयी है।"
जब वह सचमुच सो जाती है
तब विपिन मेज़के आगे बैठा
दो-दो बजे तक काम करता रहता है।
डॉक्टरने कितनी बार कहा है कि सुबह घूमने जाया करो
लेकिन विपिन तबतक सोया रहता है
जब तक 'ब्रेकफ़ास्ट' मेज़पर पड़ा-पड़ा सूख नहीं जाता
कितनी मुश्किलसे एक दिन
वह उसे सुबह घूमने जानेके लिए मना पायी थी।
तब पार्कके पास जाते हुए विपिनने कहा था
लोग ऐसे नंग-धड़ंग, मुँहमें दाँतुन डाले पार्कोंमें कैसे चले आते हैं!
सुबह-सुबह ही मैं ऐसी हरकतें नहीं देख सकता
जिनसे मुझे सख़्त नफ़रत है।
लंचके पहले तक
या तो विपिन घरसे गुम रहता है या दरवाज़ा बन्द कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमरेमें बैठा रहता
या शायद कामका बहाना बनाकर सोता रहता है।
वह चुपचाप दूसरे कमरेमें पड़ी रहती है
और शामके अकेलेपनके लिए
अपने आपको मज़बूत करती रहती है।
पड़ोसकी बूढ़ी अम्मा
जब अपनी जवान लड़कियोंको रानो कहकर पुकारती है
तो उसे अपनी माँ याद आती है
जब वह नीनूको 'अमछनिछनी' (जिसे कहींपर चैन न हो)
या और बच्चोंको 'डंगरिछ' (जानवर) कहती है.
तो उसका जी होता है कि
वह उनके पास चली जाये—
"क्यों नी कुड़िये,
...तू दिन-भरकी करदी रहदीं एँ ?"
अपनी बॉलकनीसे आयशा कादिर फूलोंकी हँसी हँसते हुए कहती है
"अम्माँ, दिन-भर ख़ाँविद कहाँ रहता है ?—यह पूछो—
अम्माँ, इसके तो बहुत मज़े हैं, दिन भर खाँविद घर ही रहता है।"
इन बातोंके उत्तरमें वह केवल हँस देती है।
आयशाका बैंक-मैनेजर शामको घर लौटता है,
गाड़ीमें से ही पार्टीमें, पिक्चर या घूमने जानेके लिए आवाज़ देता है
तब भी न जाने क्यों आयशा
कहती है कि इसके तो बहुत मज़े हैं।

शामको किसीने उसे आवाज़ दी
—जैसे कोई लम्बे सुरमें तृप्ताऽऽ पुकार रहा हो।
उसे विश्वास नहीं हुआ, वह सचमुच मेहता था।
उसने ठीक उसी तरह पुकारा था
जैसे वह दो वर्ष पहले पुकारा करता था।
उसने बहुत ठण्डे स्वरमें कहा कि अन्दर आ जाओ।
"अरे तुम तो बहुत बदल गयी हो,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
इतनी दुबली कैसे हो गयी !
उसे मेहताकी सहानुभूतिसे कोई प्रसन्नता नहीं हुई ।
रातके ग्यारह बजे तक
वह न जाने क्या-क्या बातें करते रहे ।
उसे डर लग रहा था
कि विपिन कुछ और न समझे !
पर आते ही वह मेहतासे ऐसे मिला
जैसे उसे वर्षोंसे जानता हो ।
हालाँकि मेहतासे उसकी पहली मुलाक़ात थी ।
"होटलमें क्यों ठहरे हो भाई ?"
और विपिनकी ज़िद से
हम सब टैक्सीमें जाकर मेहताका सामान ले आये !

उसी दिन विपिनने दो बजे तक
काम नहीं किया ।
वह घण्टों मेहतासे बतियाता रहा ।
मुझे मालूम नहीं, मैं कब सो गयी ।
मैंने तो सुबह उठकर देखा
पास ही वह दोनों सो रहे थे ।
और उसे लगा कि दोनोंमें-से किसी एक को चुनना
कितना कठिन हो सकता था ।

मेहतासे उसकी मुलाक़ात पम्मीने करवायी थी ।
और वह मुलाक़ात धीरे-धीरे....।
कभी वह सोचती है तो उसे बहुत नीरस लगता है
प्यार-शादी, घर-दिखावा, खाना-सोना
जैसे जीवनमें यही कुछ शेष रह गया हो
उसे मेहताका आना भी उतना ही नीरस लगा
क्योंकि शादीके बाद उसे इन सब बातोंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
एक प्रकारकी 'मनोटनी' और प्रदर्शन दिखाई देता था।

'ब्रेकफ़ास्ट'के बाद
विपिन जब मेहतासे माफ़ी माँग कर
रोज़की तरह अपने दोस्तोंके पास चला गया
तो उसे लगा कि वह मेहतासे क्या बात करे
शादी वाले दिन उसे बहुत डर था कि कुछ गड़बड़ न हो जाये
पर सब ठीक हो गया था। उसने अपनी दीदीसे
मेहताके बारेमें पूछा भी था तो वह टाल गयी थी
मेहता दीदीका देवर लगता था
कई दिनों तक वह अपनेको अपराधी मानती रही
बादमें धीरे-धीरे
उसे मेहताकी याद आनी बन्द हो गयी
मेहताने हीं बात शुरू की :
"मैं तुम्हारे घर गया था।
बेबी बहुत ख़ुश है
क्योंकि उसकी शादी बहुत अच्छे परिवारमें तय हो गयी है"
"हाँ पहले-पहले सभी ख़ुश होते हैं"
इतना कह वह पुनः घरके कामोंमें लग गयी
मेहता अपने कामसे कहीं चला गया।

विपिनके कॉलेज जानेसे कुछ देर पहले
मेहता वापस आ गया :
"मैं आज रात ग्यारह बजेवाली गाड़ीसे
वापस चला जाऊँगा"—मेहताने कहा।
"अगर तुम खाली हो तो
शामको तुम दोनों कहीं घूम लेना
रातका खाना आज 'वैंगर्स'में लिया जा सकता है
मैं वहीं पहुंच जाऊँगा"—विपिनने कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
"क्या साढ़े-ग्यारह बजे"—वह यह कहकर हँस पड़ी।
और उन तीनोंने फिर एक ज़ोरका ठहाका लगाया,
ठीक वैसा ही ठहाका
जैसा बम्बईमें वे अपने जेठके घरमें
रोज़ ही लगाया करते थे।
उनके पास एक ही कमरा था,
जिसे जेठजी 'फ़र्स्ट क्लास कूपे' कहते थे।
जिस दिन वे लोग बाहर घूमने नहीं जाते थे,
दिनमें ही बीचमें परदा लग जाता
और शरारतोंकी आवाज़ोंके साथ-साथ ही
इतनी ज़ोरोंसे ठहाके लगने शुरू होते
कि उसे डर लगता कि
कहीं मकान-मालकिन उनको मकानसे निकाल बाहर न करे
क्योंकि उसकी दो जवान लड़कियाँ थीं
बम्बईके उन 'गे' दिनोंकी याद आते ही
वह कुछ भरी-भरी महसूस करती है
उसे अपनी जेठानीके ऊपर प्यार उमड़ आता है

रातको 'इण्डिया-गेट' घूमते हुए
मेहताने उसका हाथ पकड़ लिया था
उसे आश्चर्य हो रहा था
क्यों कि मेहताकी इस हरकतसे उसे कुछ भी महसूस नहीं हुआ
तनिक भी तीव्रता नहीं आयी
उसके ठण्डे और निर्जीव हाथको
और वह डरा-डरा-सा किनारे होकर चल रहा था
इस बातसे उसको मज़ा आ सकता था
लेकिन उसे 'वैंगर्ज़' पहुँचनेकी जल्दी थी,
कहीं विपिन वहाँ अकेला न बैठा हो।
सचमुच विपिन वहाँ अकेला बैठा था....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उसे लगा
वह भी उसीकी तरह चमकदार बत्तियों और ठहाकोंसे
भरे हॉलके बीच भी
अकेला-सा लग रहा है
रातको जब मेहताको छोड़कर आये
तो टैक्सीमें वह विपिनकी बाँहपर ही झूलकर सो गयी थी।
"हाय हाय! तुमने मुझे क्यों नहीं उठाया!"
विपिन कह रहा था कि रास्तेमें
पार्करोडके बस-स्टैण्डपर उसके मामाजी खड़े थे
"यह मेहता क्यों आया था?"—विपिनने पूछा।
"मुझे तो नींद आ रही है," उसने यही कहा।

सच तो यह था—
कि उस रात उसे बहुत देर तक नींद नहीं आयी।
वह चाहती तो मेहता दो दिन और रुक सकता था।
और उसकी शामें 'गे' हो सकती थीं।
बहुत देर तक नींद न आनेके कारण
वह पुनः सोचने लगी कि कलकी शाम
वह कैसे बितायेगी?
इन्दु-दत्ता, आयशा क़ादिरकी तरह बिलकुल नहीं
केवल अपनी ही तरह....

■ ■

२७।५३ रामजस रोड,
करौल बाग़, नयी दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
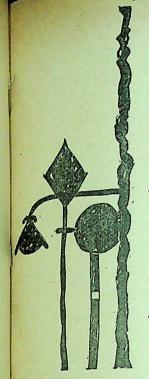
दूसरा पत्थर

एक पत्थर, दो पत्थर, तीन पत्थर

कृश्नचन्दर

[दूसरा पत्थर : पिछले अंकमें आपने पढ़ा : पहले पत्थरकी जूलिया क्राम्बीसे छुटकारा पाकर कँवल नैनीतालकी ऊँचाइयोंपर बेगम जावेदकी आर्टिस्ट पुत्री शाईस्ताकी ओर आकृष्ट होता है ? वैसे बेगम जावेद और शाईस्ताके बारेमें यह फ़ैसला करना मुश्किल हो जाता है कि दोनोंमें कौन बेहतर है—माँ या बेटी ? उस दिन जब कँवल शाईस्तासे मिलने गया तो वह स्टुडियोमें अपना चित्र स्वयं बना रही थी'''' अब आगे पढ़ें]

कँवलने शाईस्ताकी भूरी आँखोंमें आँख डालकर कहा, "क्यों ?"

"नहीं देख सकते''''" वह सिर हिलाकर बोली।

"मगर क्यों ? तसवीर ही तो है !"

"अभी अधूरी है, पूरी नहीं हुई।"

"इस संसारमें क्या चीज़ पूर्ण है ? कौन-सा युग पूरा हुआ है: कौन-सी भावना, कौन-सा दार्शनिक विचार ?''''हर चीज राहमें है, सूर्यके साथ और धरतीके साथ''''जिस क्षण कोई चीज़ पूर्ण होती है वह उसी क्षण मर जाती है। मंज़िल तक पहुंचना ही मौत है—इसलिए इस तसवीरको अपूर्ण ही रहने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो और चादर हटा दी, अपनी तस-वीरसे…"

"नहीं, इस तसवीरको सिर्फ़ मैं देख सकती हूँ।"

"तुम्हारे पास तो इसकी ओरिजनल है, असलको नक़लकी क्या ज़रूरत है?"

"बेहयाईकी बातें मत करो," शाईस्ता-के कपोल लज्जासे लाल होने लगे।

"अरे-अरे! लजाने लगीं?" कँवल चकित होकर हँसने लगा—"बेवक़ूफ़ मत बनो"! शाईस्ता कुछ तुनककर, कुछ बनावटी क्रोध-से बोली, "इस तसवीरको सिर्फ़ मेरा पति देख सकता है।"

"यह कौन-सी मुश्किल शर्त है!" कँवल धीरे-से बोला। शाईस्ताने आहिस्तासे एक चपत उसके गालपर लगायी। कँवलने उसका हाथ अपने गालपर रोककर कहा, "दूसरा गाल पेश करूँ?"

"बड़े ढीठ हो।…" शाईस्ता स्टूलपर-से उठते हुए बोली, "अब तुम ज़रा बाहर चले जाओ तो मैं कपड़े बदल लूँ, सेलिंगके लिए तैयार हो जाऊँ।"

कँवल सीटी बजाता हुआ कमरेसे बाहर चला गया। चन्द मिनिट बाद शाईस्ता स्टूडियोसे बाहर आ गयी। भूरी आँखें, ऊदे रंगका छलकता हुआ ऊनी ब्लाऊज़ और डार्क-ब्लू जीन्ज़। सिरपर सतरंगा स्कार्फ़। कानोंमें सोनेके बड़े-बड़े बाले। एक हाथ सीनेपर, दूसरे हाथसे कँवलका कन्धा टटो-लती हुई…शाईस्ताने बड़ी रहस्यमय आवाज़-में कहा, "मैं भीतरसे हिन्दू हूँ न मुसलमान, एक मॉडर्न लड़की हूँ लेकिन आखिर हूँ तो एक लड़की!"

मैंने उसकी बात समझ ली, आहिस्तासे उसका हाथ दबाकर कहा, "मैं खुश हूँ, तुमने मुझे वो तसवीर नहीं दिखाई…"

घाटीकी घासपर हमारे दोनों ओर पीले-पीले डेफ़ोडिल्स थे, मखमली मखमल-प्याले और कहीं-कहींपर बच्चोंकी तरह खिलखिलाकर हँसनेवाले हाइड्रन्जरके फूल… फिर एक टेढ़ी क़तार देवदारके पेड़ोंकी हमसे कतराकर नीचे जाती हुई। धूप-छाँवकी मरमरी जालियोंमे नीचे राके ओक लॉजका तालाब अपने कमलके फूलों समेत सोया हुआ मालूम होता था। कितना ख़ामोश, कितना शान्त, कितना संजीदा मंज़र है यह…हम दोनों साथ-साथ चल रहे हैं…शायद दो नहीं कोई एक…चार टाँगों-वाला, चार बाँहोंवाली कोई अजनबी आकृति—बड़ी ग़लती की प्रकृतिने दो बना-कर…एक ही बना देती, एक ही में पुरुष और नारी भी! अपने-आपमें पूर्ण और स्वा-धीन, स्वयं ही सूर्य और स्वयं ही ग्रह, अपने चारों ओर घूमता हुआ। कितने कष्टोंसे बच जाती यह दुनिया मगर फिर दोनोंको एक करनेकी यह आनन्दमय ख़लिश कहाँ-से आती और क्या ज़िन्दगी होती इस ख़लिशके बग़ैर, इसलिए ठीक है, तुम शाईस्ता हो, मैं कँवल हूँ, बीचमें काँटों-भरी घाटी है…

"कोई आबला पा…कोई आबला पा वादीए-पुरख़ारमें आये!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह धीरे-धीरे गुनगुनाने लगा।

"मालूम होता है, तुमने 'दीवाने-ग़ालिब' पढ़ लिया है—जो मैंने तुम्हें दिया था।"

"हूँ।"

"कैसा लगा ?"

"कुछ समझमें आया, कुछ नहीं आया।"

"जो नहीं आया वह ज्यादा क़ीमती है।"

"होगा। अभी तो तुम्हें भी ठीक से समझ नहीं पाया।"

"वह तो ग़ालिब भी नहीं समझ सका था।" शाईस्ता हँस पड़ी। उसकी हँसीमें कँवलकी हँसी भी शामिल हो गयी। वह हँसी आधी औरत, आधी मरद—एक अजनबी परिन्देकी तरह हवामें डोलती गयी—चौंककर, सिर उठाकर बेगम जावेदने ऊपर देखा तो कँवल और शाईस्ताको घाटीसे नीचे उतरते देखा। चेहरा एकदम क्रोधसे लाल हो गया। उसने अपनी भावनाओंपर क़ाबू पाना चाहा मगर क्रोधकी एक लहर थी जो बिजलीके झटकेकी तरह उसके शरीरको कँपकँपा रही थी····वह क्यों भूलती जा रही है कि वह एक माँ है—केवल एक औरत नहीं है····मूर्ख! बेवक़ूफ़! वाहियात! आखिर उसका और कँवलका क्या जोड़? मगर कैसे वह अपने एहसासकी थरथरीको दबा दे—अचानक एक बर्फ़की सिलकी तरह जमकर बैठ जाये जब कि उसका सारा शरीर गरम लावेकी तरह खौल रहा था····वे अवश्य देख लेंगे, भाँप जायेंगे! मूर्खता है, सरासर मूर्खता है—दो लपकते हुए पैकर हुस्न और जवानीके नशेमें डूबे····उसकी ओर बढ़े चले आ रहे हैं···प्रसन्न, अपने-आपमें मग्न····गोली मार देनी चाहिए इन दोनोंको!

एकाएक बेगम जावेद अपनी कुरसीसे उठकर अन्दर भाग गयीं। शाईस्ता 'ममी! ममी!' कहती ही रह गयी—फिर हैरतसे भौचक्का होकर कँवलकी ओर देखने लगी, जो धीरे-धीरे मुसकुरा रहा था।

शाईस्ताने पहले अपने कन्धे उचकाये फिर ढीले छोड़ दिये, फिर कुछ उदास होकर बोली, "कभी-कभी मैं अपनी ममीको समझ नहीं सकती।"

कँवल उसे हाथसे पकड़कर डाण्डीकी ओर ले गया—"चलो सेलिंगके लिए देर हो रही है।"

वह पीले मुँहवाला जैतूनी रंगतवाला लड़का अब फिर कँवलकी डाण्डीमें आगे जुता था। रूमालपर एक सुर्ख़ धब्बा-सा नज़र आने लगा था मगर वह लड़का तेज़-तेज़ क़दमोंसे ढलवानपर भागा चला जा रहा था। ढलवानपर डाण्डीका सारा बोझ आगे पड़ता है—कँवलका जी चाहा, अब उसे डाण्डीके पीछे लगा दे, मगर लड़केकी फुरती देखकर वह चुप रहा। लड़का बार-बार कोशिश करके कँवलकी डाण्डीको शाईस्ताकी डाण्डीके सामने ले आता। आमने-सामने होकर शाईस्ता और कँवल दोनों एक-दूसरे-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ओर देखकर मुसकुराने लगते, जैसे चाँद और सूरज घूमते-घूमते एक-दूसरेके सामने आ गये हों। दोनोंकी आँखें मुसकुरा रही थीं—खामोश होठ किसी अनकही बातका मज़ा ले रहे थे। नथुनोंमें ठण्डी-ठण्डी पहाड़ी खुशबुएँ तैर रही थीं जैसे ऊपर फ़िज़ांमें दो हवाई पालकियोंमें वे दोनों एक-दूसरेको देखते हुए चले जा रहे हों··दूर नीचे एक लाल धब्बा था। एक लड़का हाँफ रहा था। खूबसूरत कल्पनाके नीचे वास्तविकता इतनी खूबसूरत क्यों नहीं होती—कँवल अपने-आपसे पूछने लगा—जो कन्धे सपनोंका बोझ उठाते हैं वह जख्मी क्यों हो जाते हैं····?

जब दोनों डाण्डियाँ 'चाट-क्लब' के दरवाज़ेपर उतरीं तो कँवल बटवा खोलकर दोनों डाण्डीवालोंको पैसे देने लगा। पैसे देकर मुड़ा तो उसने लड़केको 'चाट-क्लब' की दीवारसे लगा आँखें बन्द किये बैठा हुआ पाया। वह अभी तक हाँफ रहा था।

"तुम्हारा नाम क्या है लड़के ?"

लड़केने आँखें खोलकर कँवलकी ओर देखा।

"गंगाराम।" वह आहिस्तासे बोला।

"यह क्या काम करते हो तुम! अभी तुम्हारी तो पढ़नेकी उम्र है।"

"हाँ है तो सही, बाबू।"

"फिर क्यों नहीं पढ़ते हो ?"

लड़का चुप रहा। कँवलने उसे मशविरा दिया, "कोई और काम करो, यह भारी बोझ उठानेका काम तुमसे नहीं होगा।"

"और क्या काम करूँ बाबू !" लड़केने पूछा। कँवलने इधर-उधर दूर तक दे[खा]। सामने फ़्लाटका मैदान खाली था। मैदा[नके] आखिरमें चाट-क्लब। चाट-क्लबके [पीछे] नैनी झील, ऊपर आसमान···कँवलने का[फ़ी] दूर तक देखा मगर उसे इस लड़केके लि[ए] कहीं कोई काम नज़र नहीं आया।

"तुम्हारा बाप क्या काम करता है?" बेबस होकर कँवलने पूछा।

"वह मर चुका है।"

"और माँ ?"

"वह अन्धी है," लड़केने धीरेसे भा[री] हीनस्वरमें जवाब दिया, "और एक बहन है बारह सालकी····और डाण्डी उठानेमें अ[च्छे] पैसे मिल जाते हैं बाबू···!"

हालाँकि कँवल डाण्डीकी रक़म अदा [कर] चुका था फिर भी उसने तरस खा[कर] गंगारामको दो रुपये और दिये। गंगारा[म] दीवारके नीचेसे उठकर, बार-बार झु[क]कर सलाम करने लगा। कँवल घूमत[ा] शाईस्ताके साथ क्लबके अन्दर चला गया। छते हुए बरामदेमें बेंतकी, आराम-कुरसियों[पर] बैठकर उन दोनोंने मारटीनीके दो जाम लि[ये] क्योंकि सेलिंग करना था—और आज हवा[में] ठण्डापन काफ़ी था। शाईस्ताका छरह[रा] जिस्म बार-बार झीलकी हवामें काँप जा[ता] था इसलिए उसने ब्राण्डीका एक छोटा [पैग] ले लिया—जिसपर कँवलको भी उसका साथ देना पड़ा। क्योंकि वह मर्द था इ[स]लिए उसने ब्राण्डीका एक बड़ा पिया, फि[र] दोनों तैयार होकर नीचे उतर गये। आ[ज]...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेसमें उनकी किश्तीका नाम डेविड था।

"मैं डेविड हूँ, तुम बाथशीबा...."

कँवलने शाईस्ताको लैण्डिंग स्टेजपर खड़े होकर बताया। शाईस्ताने कोई जवाब नहीं दिया।

फिर जब वह पाण्टून ब्रिजसे किश्तीमें उतर गयी तो ब्रूमटकके रस्सेको सँभालते हुए बोली, "इसका मतलब है, तुम मेरे लिए बेईमानी भी कर सकते हो!"

"इसमें क्या शक है!" कँवलने जिब-हूलेटको हाथमें लेते हुए कहा।

"तो हमारे मुल्कमें फिर अकाल पड़ेगा!" शाईस्ताने नाचती हुई शरीर निगाहोंसे कँवलकी ओर ताकते हुए कहा।

"वह कैसे?"

"इतनी जल्दी भूल गये? जब डेविड पैग़म्बरने बाथशीबापर फ़िदा होकर उसके शौहरको मैदाने-जंगमें भिजवाकर उसे अपने महलमें रख लिया तो खुदाने उसके मुल्कमें अकालका प्रकोप किया था न!"

कँवलने मास्टबूमपर लहराते हुए बड़े बादबानको देखकर कहा, "मालूम होता है, हमारे देशमें रोज़ नित नये पैग़म्बर पैदा होते रहते हैं जो हमेशा बेईमानी करते रहते हैं वरना हमारे मुल्कमें हमेशा अकाल क्यों रहे?"

शाईस्ता आरेजिब सेलको हवा देनेके लिए दायेंसे बायें मोड़ते हुए बोली, "रेस-पर ध्यान दो वरना हम पीछे रह जायेंगे।"

कँवल कुछ नहीं बोला। कुछ देर दोनों अपनी बादबानी किश्तीको सभाँलते रहे, फिर जब वह सफ़ेद परोंवाली किश्ती एक समुद्री बतखकी तरह झीलकी सतहपर दौड़ने-लगी तो शाईस्ताने एक सिगरेट सुलगाकर कँवलके मुहँमें दिया, स्वयं दूसरा सिगरेट जलाकर अपनी किश्तीसे ज़रा आगेवाली 'नर्बदा'को घूरकर बोली, "अरे! इसमें तो फिर सुधा और मरातब अली हैं!"

"फिरका क्या मतलब?" कँवलने पूछा, "वे दोनों तो हमेशा इकट्ठे होते हैं।"

"न जाने सुधा....कुँवर मरातब अलीमें क्या देखती है?"

"वह खुशशक्ल है, खुशमिज़ाज है, अमीर है....और क्या चाहिए सुधाको?"

"सुधा खुद एक राजकुमारी है, उसे दौलतकी क्या परवाह!"

"रियासत चली गयी, प्रीवी-पर्स बड़े भाईके हाथमें आयी, बाक़ी स्वर्गवासी राजा-की जो निजी जायदाद है वह आठ भाइयों और सुधाकी तीन बहनोंमें बँटेगी। सुधाके हिस्सेमें क्या आयेगा?....और कुँवर मरातब अली अकेला वारिस है।"

"तुम क्लबके मेम्बरोंके बारेमें खूब वाक़फ़ियत रखते हो, हालाँ कि तुम्हें क्लबका मेम्बर बने सिर्फ़ दो बरस हुए हैं।"

कँवलने अगले चन्द मिनिट मेन मास्टको ठीक करनेमें लगाये। कुँवर मरातब अली और सुधाकी किश्ती अब भी उनसे आगे थी। वह यहाँसे लम्बे बदनवाली सुधाको पीछेसे देख सकता था। सहसा सुधाकी टोपी उसके सिरसे उड़ी और उड़ते-उड़ते 'डेविड' में आ गिरी। सुधाने चौंककर, पलटकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखा। उसके लम्बे तिकोने चेहरेपर ख़ुशी-की मुसकुराहट खिल उठी जब कँवलने टोपी उछालकर वापस उसकी किश्तीमें फेंक दी।

सुधाने कहा, 'थैंक्स।'

उसी समय शाईस्ताने आहिस्तासे कहा, "पीछेसे कितनी मोटी और भारी होती जा रही है....इसे अपने बदनका कुछ ख़याल ही नहीं....शायद ड्रिंक ज़्यादा करती है।"

अब किश्ती आड़ी होकर नैनी मन्दिरके नीचेसे घूम रही थी। वापस जानेके लिए हवाके ज़ोरसे किश्ती बेहद तिरछी होती जा रही थी। कँवलने चिल्लाकर शाईस्तासे कहा, "थ्रोटकी पुली खींचकर जिबसेलके निचले हिस्सेको ठीक करो!"

मगर इससे पहले कि वह अपनी बात पूरी करता, शाईस्ता तिरछी किश्तीपर-से अपना सन्तुलन खोकर पानीमें गिर चुकी थी और उसके गिरते ही किश्ती अपने सन्तुलन-पर जा चुकी थी—चन्द सेकण्डोंमें कँवलने किश्तीको रास्तेपर लगाया—शाईस्ता नीचे पानीमें तैरकर किश्तीके क़रीब आ रही थी। हाथ बढ़ाकर कँवलने उसे ऊपर किश्तीमें खींच लिया—भीगी हुई शाईस्ताको देखकर कँवल अँगरेज़ीमें चिल्लाया—"आई हैव सीन द न्यूड!"

शाईस्ताने एक पलमें कहा, "अहमक़!" दूसरे पल उसने दोनों हाथोंमें अपना मुँह छुपा लिया और रोने लगी।

कँवल मुसकुराने लगा। वह वापस क्लबकी ओर देख रहा था। वे दोनों अब यक़ीनन रेससे बाहर थे। वह किश्तीको बहुत धीरे धीरे चला रहा था ताकि शाईस्ताका रोना ख़त्म हो जाये और वह अपने आँसू पोंछ ले, हालाँकि दूरबीनोंकी मददसे क्लबके बरामदेमें बैठे हुए मेम्बरोंने यह घटना देख ली होगी, मगर उसका क्या क़सूर था फिर भी वह प्रसन्न हुआ था—जिस प्रकार शाईस्ताने उसे 'अहमक़' कहकर अपना सन्तुलन खोनेका इल्ज़ाम उसपर थोप दिया था इससे वह बहुत ख़ुश था। जब कोई औरत किसी बेक़सूर मर्दपर सारा इल्ज़ाम धर दे समझो वह उसकी दिलसे क़द्र करती है अपनी ग़लतीका इल्ज़ाम उसके कन्धोंपर रखकर जैसे वह स्वयं भी अपना सारा बोझ उसके कन्धोंपर डाल देना चाहती है। शाईस्ता-की सिसकियोंमें कँवलको एक मज़ा आ रहा था। उसने उसे चुप करानेकी कोशिश नहीं की। धीरे-धीरे वह किश्तीको क्लबकी ओर ले जाता रहा और बीच-बीचमें सिगरेट पीता रहा। जब क्लब आधे फ़ासलेपर रह गया तो शाईस्ताने हाथ हटाकर ख़ुद अपने आँसुओं और पानीसे भीगी हुई आँखें साफ़ कीं। बालोंको निचोड़ा, चुपकेसे एक सिगरेट कँवलने उसके मुँहमें दिया।

यकायक वह मुसकुरा उठी।

क्योंकि सुधा किश्तीसे पान्टून ब्रिजपर इठलाकर उतरते हुए किसी क़द्र लुढ़क गयी थी, जल्दीसे कुँवर मरातब अलीने उसकी कमरमें हाथ डालकर उसे सहारा दिया था।

"देखते हो, कम्बख़्तने सारा बोझ कुँवरपर डाल दिया है। बड़ी पक्की है यह सुधा!...." शाईस्ता चमककर बोली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कँवलने कुछ कहना उचित न समझा। वह भीगी हुई शाईस्ताको बाँहोंमें समेटकर पान्टून ब्रिजपर उतर गया और उसे लकड़ीके तख्तोंपर खड़ा करके बोला, "अब भागकर ड्रेसिंग-रूममें चली जाओ और कपड़े बदलो, जबतक मैं तुम्हारे लिए गरम पानीमें ब्राण्डी बनाकर रखता हूँ।"

शाईस्ता बाल छिटकाती, लजाती, भागती-दौड़ती, किसीसे नज़र न मिलाती हुई सीधे ड्रेसिंग रूमके अन्दर चली गयी। बरामदेमें बैठे हुए बहुत-से मर्द-मेम्बरोंकी पुरशौक़ निगाहें उसपर थीं। जब वह ड्रेसिंग रूमके अन्दर ग़ायब हो गयी तो एक ज़ोरका ठहाका पड़ा। कँवलके माथेपर बल पड़ने लगे मगर कुछ बोला नहीं।

राजकुमार रणधीर सिंहने कहा, "डॉक्टर, तुम बहुत लकी हो!"

कँवलने कोई जवाब नहीं दिया। वह सीधे बार-रूममें चला गया। बार-रूमके एक कोनेमें उसे टिक्का साहब जगजीत सिंह और टिक्का रानी कुलवन्त कौरके साथ बैठी हुई, बेगम जावेद नज़र आ गयीं जो धीरे-धीरे एक लालटेननुमा गिलासमें मिल्टन पंच पी रही थीं। उसे देखकर बेगम जावेदने अपने क़रीब आनेका इशारा किया। कँवल एक ख़ाली कुरसी खींचकर उनके क़रीब जा बैठा। बैठनेसे पहले ही बेगम जावेदने उसका हाथ अपने हाथमें ले लिया और उसे बड़े स्नेहसे दबाने और सहलाने लगीं। शाईस्ताके पानीमें गिरनेके बारेमें उन्होंने कुछ नहीं पूछा। इसपर कँवलको कुछ आश्चर्य भी हुआ।

"आपको मालूम है....?" उसने कहना शुरू किया।

बेगम जावेदने जल्दीसे बात काटकर कहा, "मुझे मालूम है, मगर शाईस्ता तो तैरना भी बहुत अच्छा जानती है। अपने कॉलेजमें उसने तैराकीका इनाम भी हासिल किया था।"

बेगम जावेदको मिल्टन पंच पीते देखकर कँवलको हैरत हो रही थी। क्योंकि वह किसी हल्की चीज़की आदी न थीं—ह्विस्की या ब्राण्डीसे कुछ कम न पीतीं, और पाँच-छह पेग पीनेके बाद भी यह आलम था कि बस आँखोंमें इक हल्केसे सुरूरकी कैफ़ियत पैदा होती थी।

"आप....और मिल्टन पंच? कँवलसे रहा न गया।

"हाँ, नज़लेकी शिकायत है....."बेगम जावेद आवाज़में कराहनेका हलका सा लहजा लाते हुए बोलीं, "इलाज कर रही हूँ, सुना है मिल्टन पंच नज़लेमें बहुत फ़ायदे-मन्द रहता है।"

'चाट-क्लब' के जितने मेम्बर हैं अकसर मुख़तलिफ़ क़िस्मकी शराबोंमें-से अपनी बीमारियोंका इलाज करते रहते हैं। इस क्लबमें डॉक्टर भी वही अच्छा समझा जाता है जो दवाकी बजाय कोई शराब पीनेको कहे। टिक्का जगजीतसिंह अपने ठेठ पंजाबी लहजेमें बोले, "बेगमसाब, जुकामका सही इलाज तो रम है! रमके आधे पेगमें थिरी ऐक्स रममें दो चमचे फ्रेंच ब्राण्डीके मिलाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठ

राष्ट्रके सर्वोच्च साहित्य पुरस्कार

भारतीय भाषाओंकी

गणदेवता

बंगाल के मूर्द्धन्य उपन्यासकार ताराशंकर वन्द्योपाध्याय का अद्वितीय और अद्भुत उपन्यास

भारतीय जीवनकी परम्परागत सांस्कृतिक चेतनाका जीवन्त रेखांकन। भारतीय जन-जागरणके विध्वंस-कारी और निर्माणकारी प्रभावोंके परिप्रेक्ष्यमें मानव-मनकी सरल-जटिल अभिव्यक्ति। विविध चरित्रके उदात्त-अनुदात्त क्रिया-कलापोंका हृदयग्राही विवरण। जन-गणके देवत्व-रूपकी आस्थामय प्रतिष्ठा करनेवाला मोहक शिल्पमें ग्रथित यह उप-न्यास जन-जीवनका गद्यात्मक महाकाव्य है!

मूल बंगलामें गणदेवता 'चण्डीमण्डप' और 'पंचग्राम' शीर्षकोंके अन्तर्गत अलग-अलग प्रकाशित हुए हैं, भारतीय ज्ञानपीठने दोनों पुस्तकें एक जिल्दमें 'गण-देवता' शीर्षकके अन्तर्गत समाहित की है, जो मूल कृतिकी वास्तविक स्थितिके अनुरूप है। इस कृतिके हिन्दी रूपान्तरकार हैं श्री हंसकुमार तिवारी।

नवम्बर १९६७ में प्रकाश्य

[कृपया अपनी प्रति अभीसे सुरक्षित करायें]

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

कलकत्ता : वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा प्रवर्त्तित

१००००० रुपये द्वारा सम्मानित

दो सर्वोत्कृष्ट कृतियाँ

ओटक्कुष़ल

'ओटक्कुष़ल' अर्थात् 'बाँसुरी' महाकवि कुरुपका वह काव्य-संकलन है जिसे १९६६ में भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार-द्वारा सम्मानित होनेका गौरव प्राप्त है। इस दृष्टिसे भारतीय काव्य साहित्यमें वह एक अन्यतम कृति है और इसीलिए प्रत्येक काव्य-प्रेमी, पाठक-अध्येताके लिए पठनीय और संग्रहणीय है। देशके सभी श्रेष्ठ पुस्तकालयोंके लिए तो यह अनिवार्य है ही। 'ओटक्कुष़ल' के हिन्दी रूपान्तरकार हैं: नारायण पिल्लै और लक्ष्मीचन्द्र जैन।

[डिमाई आकार, कपड़ेकी पक्की जिल्द, पृ०-सं० २७३, सुन्दर मुद्रण। देशके सभी प्रमुख, पुस्तक-विक्रेताओंके यहांसे प्राप्त करें।

मूल्य ८.००

मलयालम
के महाकवि
जी० शंकर कुरुप
की
मर्मस्पर्शी
और अनूठी
कविताओं का
संग्रह

विक्रय-केन्द्र : ३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपरसे एक गोली मक्खनकी खा जाओ— ज़िन्दगी-भर जुक़ाम नहीं होगा। क्यों कुलवन्त, याद है तैनें, जब मनालीमें कोल्ड हो गया था ?"

कुलवन्तने एक मग़रूर अदासे अपनी लम्बी गरदनको आधा इंच हिलाया। इससे ज्यादा अपनी गरदनको हिलाना वह अपनी शानके खिलाफ़ समझती थीं। एक बार औरतोंकी मैगज़ीन 'फ़ेमिना' में फ़स्ट पेज-पर उनकी तसवीर छपी थी जिसमें उसकी गरदनको खास महत्त्व दिया गया था और अन्दर भी उनकी गरदनकी प्रशंसामें चन्द वाक्य लिखे गये थे। बस उस दिनसे टिक्का-रानी अपनी गरदनके बारेमें बहुत कॉन्शस हो गयी थीं।

"पर कोल्डका सबसे अच्छा नुस्खा तो कर्नल सिनहाके पास है जी,...." टिक्का-रानी बेगम जावेदको बताने लगीं।

"क्या है वो ?" बेगम जावेदने दिल-चस्पी लेते हुए पूछा।

टिक्का-रानीने अपनी नाज़ुक छँगुलिया-पर अपना अँगूठा रखते हुए गिनकर बताया, "पहले तो एक पैग ब्लेक डॉगका पीकर बेस बनाओ।"

"और जब बेस बन जाये तो ?" कँवलने पूछा। उसके कहनेमें शरारत आ चली थी।

"तो...." टिक्का-रानीने अपना अँगूठा दूसरी अँगुलीपर रखकर कहा, "तो एक गिलासमें आधा चमचा पोर्ट वाइन डालो, बेन्थालकी पोर्टवाइन होनी चाहिए।"

"बेन्थालकी न मिले तो ?" कँवलने पूछा।

"तो कोई भी चलेगी...." टिक्का-रानीने उसे समझाया, "फिर बेन्थालकी पोर्टवाइनमें छह बूँदें शेरीका डालो। ऊपरसे एक चमचा साईडर, साईडर रोज़ हो तो और भी अच्छा है। फिर जी....तुम ऐसा करो कि उसमें दस बूँदें पोदीनेकी शराबकी डालो और सबको हिलाकर फ़ौरन पी जाओ और ऊपरसे फ़ौरन आधा पेग ब्राण्डी हलकमें डालकर सो जाओ। सुबह तक जुकाम जाता रहेगा।"

"यह सब झंझट करनेसे एक गोली एस्प्रीनकी क्या बुरी है ?" कँवलने मशविरा दिया।

"हिश्त।" टिक्का साहबने फ़ौरन डाँट दिया।

अब बातचीत दिलचस्प होती जा रही थी। क़रीबकी मेज़से राजा डँगरगढ़ और मेजर मेहता भी उठकर इसी टेबुलपर आ बैठे और गुफ़्तगूमें हिस्सा लेने लगे। राजा डँगरगढ़ने बेगम जावेदको बताया—"जुकाम तो खैर एक मामूली चीज़ है....और इसे बीमारी कहना दरअसल बीमारीकी हतक करना है....मगर मैं दिलके दौरेका इलाज एक बार शराबसे कर चुका हूँ !"

"दिलके दौरेका ?" बेगम जावेद आश्चर्यचकित रह गयीं।

'पूछो इसीसे," राजा डँगरगढ़ने मेजर मेहताकी ओर देखा।

मेजर मेहताने पाइपकी राख झाड़ते हुए मुँह टेढ़ा करके नाकमें गुनगुनाकर कहा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"दैट्स ए डैम फ़ैक्ट !"

"तुम सुनाओ वह क़िस्सा !" राजा डँगरने मेजर मेहतासे कहा।

"नहीं तुम सुनाओ !" मेजर मेहताने राजाको इशारा किया।

राजा डँगरगढ़ तो पहले ही यह क़िस्सा सुनानेको बेताब थे। फ़ौरन बोले, "हम लोग तराईमें शिकारपर गये हुए थे, कोसीवानके डाकबँगलेमें ठहरे हुए थे। दिसम्बरके दिन थे, दिसम्बरमें 'पिगस्टालकिंग' बहुत मज़ेदार रहता है मगर सर्दी भी कड़ाकेदार पड़ती है। एक रोज़ हम लोग दिन-भर शिकारमें व्यस्त रहनेके बाद खाली हाथ डाकबँगलेकी ओर लौट रहे थे। सारा दिन गहरी ठण्डमें गुज़रा था। पहले बारिश····फिर बर्फ़ गिरी····उसपर रास्ता खराब····तिसपर अँधेरा····हम रास्ता भूल जाते थे।"

"इट वाज़ ए हेल ऑव डे !" मेजरने दोबारा पाइपकी राख झाड़ी।

"क़िस्सा मुख़तसर यह कि जब हम रात-को किसी-न-किसी तरह वापस डाकबँगले पहुँचे तो अन्दर पहुँचते ही अपना यार मेहता लड़खड़ाकर फ़र्शपर गिर पड़ा। अब मैं इसे उठानेके लिए नीचे झुका तो क्या देखता हूँ कि मेहता इज़ डेड !"

"डेड !" बेगम जावेद ज़ोरसे चीखीं।

टिक्का-रानीने कोई पौन इंचके क़रीब अपनी गरदन आगेको थी। उसके कानोंमें हिलते हुए हीरेके बाल उसके एहसासकी थरथरीके गवाह थे।

"डेड ?" बेगम जावेदने फिर पूछा।

"स्टोन डेड !" राजा डँगरने जवाब दिया। नाड़ी टटोलता हूँ तो नाड़ी नहीं है, साँस देखता हूँ तो साँस नहीं है। आँखें खोलकर देखता हूँ तो पुतलियाँ जमी पड़ी हैं। ज़ोर-ज़ोरसे इसे हिलाता हूँ तो इसका सारा जिस्म बर्फ़की तरह ठण्डा है !"

'फिर ?"

"फिर····मैं भागा हुआ अपने कमरेमें गया, ब्राण्डी निकालकर लाया, इसके हल्क़में उतारनेको कोशिश की, मगर ब्राण्डी भी हलक़के अन्दर नहीं जाती। आख़िर मैंने इसकी क़मीज़ खोलकर इसका सीना नंगा किया और सीनेपर ब्राण्डीकी मालिश शुरू की। पाँच मिनिटमें ही साँस जारी हो गयी। साँसें चलते ही मैंने इसके हलक़में डँगर-कॉक-टेल उँड़ेल दी। आधे घण्टेमें यह शख्स मेरे साथ शराब पी रहा था।"

'डँगर-कॉकटेल क्या चीज़ होती है, राजा साहब ?' बेगम जावेदने पूछा।

"उसे मालूम करनेके लिए बेगम जावेद, आपको मेरे साथ डान्स करना पड़ेगा !" राजा साहबकी आँखोंकी चमक बढ़ने लगी थी।

'हमें मंज़ूर है।" बेगम जावेद बड़ी मेहरबानीसे राजा साहबकी दावतको मंज़ूर करते हुए बोलीं, "मगर पहले बताइए तो····"

'गिलासमें दो चमचे ब्राण्डी डालिए, इसमें एक चमचा वरमूथ मिक्स कीजिए, जब ब्राण्डीका रंग गुलाबी हो जाये तो उसमें आधा पेंग कुम्मलका डालिए। चम्मचसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छी तरह हिलाइए, जब ब्राण्डीका रंग सुनहरा हो जाये तो दो चमचे गरम पानीके डालिए—खौलता हुआ गरम पानी होना चाहिए। फिर उसमें गोगोकी कुनियाक मिलाइए, खूब हिलाइए····फिर बीस बूँदें जेनिटर्ज रम डालकर हिलाइए। जब ब्राण्डी-का रंग भूरा हो जाये तो उसमें आधा चमचा गरम पानी मिलाइए····फिर इस मिक्सचरमें एक बड़ा पेग किंग ऑफ़ किंग्ज़-का डालकर मरीज़के गलेमें उंड़ेल दीजिए और पाँच मिनिट बाद ख़ुदाकी क़ुदरतका तमाशा देखिए····हिन्दू होगा तो राम-राम और मुसलसान होगा तो अल्लाहका नाम लेता उठ खड़ा होगा।"

अब बातचीत इतनी दिलचस्प हो गयी थी कि क़रीबकी मेज़ोंसे क्लबके बहुत-से मेम्बर इस टेबुलपर जमा हो गये थे। हर एक किसी-न-किसी मर्ज़का इलाज बता रहा था। कँवलको मालूम हुआ कि उसने बेकार विलायत जाकर डॉक्टरीका कोर्स पास किया। आज उसे मालूम हुआ, पेशाबकी सारी बीमारियोंका इलाज बियर है, शैम्पेन रंग निखारती है, क़ीमती मोक पेटकी हर बीमारीका इलाज है, गुरदेकी हर बीमारी जर्मन वाइनसे दूर होती है, मोटा होनेके लिए पोर्टवाईन पीनी चाहिए, और मोटापा दूर करनेके लिए 'वाइट वाइन' बेहतरीन साबित होती है। इसके अलावा ज़िन्दगीके हर ग़मका इलाज तो शराब है ही····उसे अपनी मूर्खतापर बेहद अफ़सोस हुआ। अगर वह विलायत जानेकी बजाय शुरू ही से इस क्लबका मेम्बर बन जाता तो बेहतरीन डॉक्टर सिद्ध होता।

थोड़ी देर बाद शाईस्ता जब कपड़े बदल कर बार-रूममें दाख़िल हुई तो सब की निगाहें उसपर थीं—यह हमेशा एक ख़ास मौक़ा होता है जब औरतें क्लबके ड्रेसिंग रूमसे कपड़े बदलकर निकलती हैं। मर्दोंको भी मालूम है और औरतोंको भी। यह एक ख़ास मौक़ा होता है और हर मर्द की निगाह उनपर होती है—इसीलिए हर क्लबके ड्रेसिंग रूमके लिए चार-पाँच दासियाँ रखी जाती हैं और बनाव-शृंगारके लिए हर औरत बहुत समय लेती है। इस समय जो शाईस्ता कपड़े बदलकर निकली तो बहुत साफ़-सुथरी, ताज़ादम और प्रसन्न नज़र आ रही थी। उसने क़मीज़-शलवार और दुपट्टेका शृंगार किया था—फ़िरोज़ी रंगकी फूलदार चाईना ब्रोकेटकी क़मीज़ और इसी रंगकी बेफूलोंवाली सादी रेशमी शलवार जिसकी मोहरियोंमें तलाई फूल जुड़े हुए थे और हलके फ़िरोज़ी रंगका मुत्तल्ला बनारसी दुपट्टा और गलेमें जेडका गुलबन्द और कपोलोंपर गुलाब खिले हुए—उसे देखकर दो-तीन मर्दोंने ज़ोरसे साँस अन्दरको खींची, मगर ठीक उसी क्षण क्विक हैण्डने डान्स की पहली गत शुरू की और बहुत-से जोड़े फ़्लोरपर जाने लगे।

शाईस्ता दो-तीन नौजवानोंको परे हटाती हुई कँवलकी बाँहोंमें आ गयी, और टिक्का साहबने मिसेज़ हॉपकिन्ज़की कमरमें हाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाल दिया—और टिक्का-रानी राजा डूँगर-गढ़के साथ नाचने लगीं। टिक्का साहब और टिक्का-रानीमें एक अजब समझौता-सा था। दोनों डान्स फ़्लोरपर कभी एक दूसरे-के साथ नहीं नाचते थे—हमेशा अलग-अलग। टिक्का साहब किसी दूसरी औरतके साथ—टिक्का-रानी किसी दूसरे मर्दके साथ। आज तक दोनोंको कभी इकट्ठे डान्स करते हुए नहीं देखा गया। इसलिए क्लब-वालोंकी निगाहमें यह जोड़ा एक आदर्श जोड़ा समझा जाता था।

एक कोनेमें दो बूढ़े आइ० सी० एस्०, जो पिछले दस वर्षोंसे रिटायर्ड हो चुके थे, इन्तहाई बेज़ारीसे अपनी-अपनी ड्रिंक पीनेमें लीन थे। गिरिधरप्रसाद माथुर और ख्वाजा अब्दुल समद दोनों कमिश्नरके पदसे रिटायर्ड हुए थे। दोनों पुराने सहपाठी थे। एक साथ आइ० सी० एस्० हुए थे और लगभग एक ही समयमें रिटायर्ड भी हुए थे। दोनों सुधा और मरातब अली और शाईस्ता और कँवलको इकट्ठे डान्स करते देखकर बहुत उकताहट महसूस कर रहे थे।

"मुझे यह पसन्द नहीं है।" माथुरने निर्णयात्मक स्वरमें आज अपने मित्रसे कह दिया।

"मुझे भी नहीं है।" ख्वाजा अब्दुल समदने जवाब दिया।

"मैं जब सुधा और मरातब अलीको देखता हूँ तो मेरा ख़ून खौलने लगता है!" माथुर बोले।

"जी चाहता है, शाईस्ता और कँवल-को गोली मार दूँ!" ख्वाजा साहबने जवाब दिया।

"यह दृश्य हमारे ब्लड-प्रेशरके लिए बुरा है!"

"लगता है, मेरे दिमाग़की कोई रग फट जायेगी!"

माथुरने अपने-आपको रोका, "अब ख्वाजा, तुम मुझे पचास बरससे जानते हो, मैं फ़िरकापरस्त नहीं हूँ...."

"तुम मुझे भी जानते हो," ख्वाजा बोले, "मेरे सब आई० सी० एस्० मुसलमान दोस्त पाकिस्तान बनते ही यहाँसे चले गये। एक मैं अकेला यहीं रह गया....क्योंकि मैं क़ौम-परस्त हूँ लेकिन यह मंजर मुझे भी पसन्द नहीं है।"

"ना मुझे," बहुत बेज़ारीसे माथुर बोले, "और देखा जाये तो सवाल साम्प्रदायिकता-का नहीं है, सवाल बिलकुल दूसरा है। पिछले दस बरससे हम दोनों इकट्ठे इसी टेबुलपर ड्रिंक करते हैं....करते हैं ना?"

"बेशक करते हैं।"

"तुम ब्राण्डी पीते हो, मैं विस्की पीता हूँ।" माथुर बोले।

"मुझे ब्राण्डी पसन्द है तुम्हें विस्की।" ख्वाजा अब्दुल समद उसकी बात समझकर बोले, "मुझे इस्लाम पसन्द है, तुम्हें हिन्दु-इज़्म लेकिन मैंने कभी अपने इस्लामको तुम-पर लादनेकी कोशिश नहीं की।"

"न मैंने अपना हिन्दुइज़्म तुमपर...." माथुरने अपनी सफ़ाई पेश की।

"इसलिए इन लोगोंको भी चाहिए,"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिनिधि संकलन
सिंहल कहानियाँ

सिंहल भाषाके प्रतिनिधि कथाकारों- की सर्वश्रेष्ठ कहानियोंका संग्रह : हिन्दी- में सर्वप्रथम प्रस्तुतीकरण । प्रत्येक कथाप्रेमी पाठकके लिए एक नवीनतम सार्थक उपलब्धि···

भारतीय
ज्ञानपीठ
प्रकाशन

३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग
दिल्ली-६

सम्पादक :
भदन्त आनन्द कौसल्यायन

अनुवादक :
भिक्षु एस० मेधंकर

मूल्य ५.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माथरने सुधा-मरातबअली और शाईस्ता-कँवलकी ओर देखकर कहा, "कि अपनी-अपनी विस्की और ब्राण्डी अलग-अलग रखें। मिक्स न करें!"

"मुझे तुमसे सौ फ़ीसदी इत्तफ़ाक़ है!" ख़्वाजा अब्दुल समदने अपना ब्राण्डीका गिलास उठाया और माथुरने अपनी विस्की-का। दोनों अपने जाम एक दूसरेसे टकराकर पीने लगे। 'क्विक हैण्ड' का ट्रम्पटियर अब माइकपर आकर टाँगें हिला-हिलाके गा रहा था :

ओ काण्टा पाण्टा टाण्टा !
विस्की पिस्की ट्रिस्की !!
फ–ण्टू–श !!!

ड्रम ज़ोरसे बजा और नाचकी गत तेज़ हो गयी। (क्रमशः)

■ ■

गुरु निवास, १५ वाँ रास्ता
ख़ार, बम्बई–५२

सि । त । म्ब । र

[यह स्तम्भ ज्ञानोदयमें समीक्षार्थ प्राप्त समस्त पुस्तकोंकी स्वीकार-सूचीके लिए है। चुनी हुई पुस्तकोंकी समीक्षा यथासुविधा प्रकाशित की जायेगी।]

नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद
- आकाश चारी : उपेन्द्रनाथ अश्क
- बड़े खिलाड़ी : उपेन्द्रनाथ अश्क

साहित्य प्रकाशन, मुज़फ़्फ़रपुर
- कालजयी झरना : सियारामशरण प्रसाद

मोहन प्रकाशन, जोधपुर
- व्यंग्य एकांकी : मिश्रीमल जैन, तरंगित
- व्यंग्य सतसई : मिश्रीमल जैन, तरंगित

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
- मानस अनुशीलन : श्री शम्भुनारायण चौबे

साहित्य एकादमी, नयी दिल्ली
- प्रभातकुमार मुखर्जीकी श्रेष्ठ कहानियाँ : प्रभातकुमार मुखर्जी
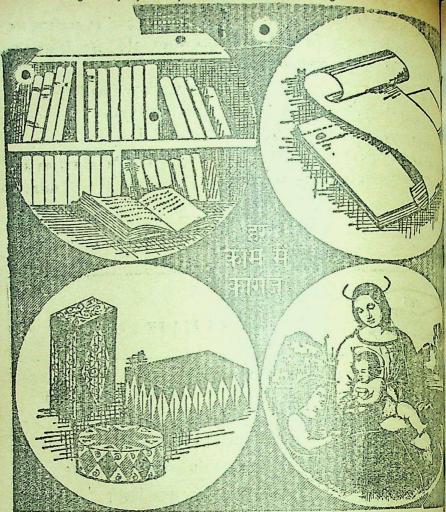
साहित्य निकेतन, कानपुर–१
- श्रेय और साधना : श्रीयोगेश्वर

हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली
- महादेवीके लोकप्रिय गीत : सं० गंगा प्रसाद पाण्डेय
- पत्थर युगके दो बुत : आचार्य चतुरसेन शास्त्री
- घरौंदा : रांगेय राघव
- पड़ोसी : गुरुदत्त

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली
- शान्तिनिकेतनसे शिवालिक : सं० डॉ० शिवप्रसाद सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्वाचक कार्ड

विधान सभा निर्वाचन क्षेत्र .... जिला—सहारनपुर

मुहल्ला/गली .... ग्राम ....

वार्ड नम्बर .... परगना ....

मकान नम्बर .... तहसील ....

निर्वाचक का नाम	पिता/माता/पति का नाम	पुरुष या स्त्री	१ जनवरी १९७९ को आयु
[illegible]	[illegible]	पु	३८
[illegible]	[illegible]	[illegible]	29
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

मकान में निर्वाचकों की कुल संख्या (शब्दों में) ....

मैं सत्यनिष्ठा से घोषित करता हूं कि उपरोक्त विवरण मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य है। मैंने उक्त कार्ड की प्रति जिसमें मेरे कुटुम्ब के समस्त निर्वाचकों के नाम अंकित हो गये हैं प्राप्त कर ली है।

गणना करने वाले का तिथि सहित हस्ताक्षर ....

(गृह के मुखिया/परिवार के किसी अन्य ज्येष्ठ सदस्य के दिनांक सहित हस्ताक्षर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरानी कहानीका सावनी(?) परिच्छेद

● **१ अगस्त :** श्रीनम्बूद्रीपदने केन्द्रीय खाद्य-मन्त्रीके इस कथनको कि केरलने अपने वसूली-नियमोंमें ढील देकर स्वयंको अपनी ही सहायतासे वंचित रखा है—ललकारा है। उनका कहना है कि यदि केरलकी वसूली-पद्धति सारे भारतमें अपनायी जाती तो खाद्य-समस्या खड़ी ही न होती और भारतको निर्यातका मुँह न देखना पड़ता।''''प्रधान मन्त्री और श्रीनम्बूद्रीपदकी मुलाक़ातके बाद यह बताया गया कि अगस्त माहमें केरलको २९,००० टन चावल और ५०,००० टन गेहूँ दिया जायेगा।

● **३ अगस्त :** इस सवालका जवाब देते हुए कि खाद्य उपज बढ़ानेके लिए केन्द्र कुछ विशेष सिंचाई योजनाएँ, जो लगभग तैयारीकी स्थितिमें हैं, अपने हाथमें क्यों नहीं ले लेता, अर्थ-मन्त्रीने राज्यसभामें कहा : "कठिनाई यह होगी कि कुछ राज्यसभा व लोकसभाके सदस्य ही चाहेंगे कि उन्हीं योजनाओंपर ध्यान दिया जाये जिनमें वे दिलचस्पी रखते हैं और चाहेंगे कि 'सारेका सारा पैसा उन्हीं वाली योजनामें लगा दिया जाये।'''''अगर पैसा हो ही नहीं तो दिया कहाँसे जायेगा ?"

● **४ अगस्त :** भारत और अमरीकाके बीच एक अति-गम्भीर सम्भावित मतभेदकी गड़गड़ाहट अमरीकी काँग्रेससे उद्भूत हो रही है। प्रश्न यह उठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा है कि क्या अमरीकी आर्थिक व खाद्य सहायता उन देशोंको दी जाये जो अपनी 'आर्थिक प्रगतिमें बाधा बननेकी सीमा तक' सैनिक व्यय किये जा रहे हैं ?

● ८ अगस्त : राज्य-सभामें खाद्य-मन्त्रीने स्वीकार किया कि फ़ूड कॉरपोरेशन ऑफ़ इण्डियाके दिल्ली-डिपोको पिछले हफ़्तोंमें मिले २०,००० टन गेहूँमें-से लगभग ३६०० टन गेहूँ रेल-यात्राके दरमियान बारिशसे खराब हो गया है।

● १२ अगस्त : खाद्य-मन्त्रालयके अर्थशास्त्रियोंके मण्डलने अपनी पहली ही भेंटमें श्रीजगजीवन रामको सम्मति दी कि सब प्रदेशोंके किसानोंसे अनाजकी उगाही अनिवार्य रूपसे होनी चाहिए। परन्तु, मन्त्री महोदय विशेषज्ञोंकी रायसे इत्तफ़ाक़ नहीं रखते।

● १४ अगस्त : केन्द्रीय सरकार अनाज-कुठारकी तह खुरच रही है और भारतमें खाद्यकी कमीकी समस्या अपनी अतिपर पहुँच गयी है। भूखी भीड़ खाद्य-रेलगाड़ियों, गोदामों और सरकारी संस्थानोंपर हमला कर रही है और मज़दूर-उपद्रव तथा हिंसा अपना सिर उठा चुके हैं।

● १५ अगस्त : (राष्ट्रपतिका आकाशवाणी-प्रसारण) सरकार खानेके मसलेका हल ढूँढनेकी हर मुमकिन कोशिश कर रही है। काश्तकारीके मैदानमें भारत एक नया क़िला फ़तह करनेको तैयार खड़ा है।

● १६ अगस्त : श्रीमती गान्धीने अपने स्वतन्त्रता दिवसीय भाषणमें चेतावनी दी कि यद्यपि मॉनसून इस साल अच्छी रही, आनेवाले कुछ महीनोंमें अनाज-की कमी जारी रह सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• २२ अगस्त : श्रीजगजीवन रामने आज पत्रकारोंको बताया कि पी० एल० ४८० समझौतेकी फ़ाइल श्रीजॉनसनके डेस्कपर कहीं पिछले तीन-चार हफ़्तों से पड़ी है। उन्होंने आगाह किया कि यदि किसी समझौतेपर फ़ौरन न पहुँचा गया तो भयंकर किफ़ायतशारी और कंजूसीका माहौल तैयार हो जायेगा।

• २३ अगस्त : यह जानकर कि प्रधान मन्त्री और खाद्य-मन्त्री १०५, ००० टन गेहूँ, जौ और माइलो बंगालको इस माह देनेपर राज़ी हैं और आनेवाले दो महीनोंमें भी इसी मात्राके लिए प्रयत्नशील रहेंगे, दिल्ली पधारे हुए बंगालके मन्त्रीगण अब धरना नहीं धरेंगे। मन्त्रियोंके प्रवक्ताने कहा कि हमारी भविष्यकी कार्यवाही इनकी भविष्यकी सप्लाईपर निर्भर करेगी।

• २९ अगस्त : खाद्य मन्त्रीने कहा कि उन्हें विश्वास है कि 'उन सब प्रयत्नोंसे जो हम कर रहे हैं और जो हम करना चाहते हैं, अगर प्रकृतिने हमारा साथ दिया' तो देश १९७१ तक खाद्य-सामग्रीमें आत्मनिर्भरताकी स्थिति तक पहुँच जायेगा।

• ३१ अगस्त : १९७० तक हमारी बड़ी और मझोली सिंचाई-योजनाओंसे १३० लाख एकड़ और भूमिको पानी मिल सकेगा 'लेकिन यह ठीक नहीं कहा जा सकता कि योजनाके लिए निर्धारित धनराशि और इस लक्ष्यका तालमेल कैसा बैठेगा।'

■ ■

ए – ८०, निज़ामुद्दीन ईस्ट,
नयी दिल्ली—१३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

■ सदाचारका तावीज़

हरिशंकर परसाई

व्यंग्य शब्द चित्र मूल्य ३.००

■ एक समर्पित महिला

नरेश मेहता

मर्मस्पर्शी लम्बी कहानियोंका संग्रह मूल्य ३.००

■ अविराम चल मधुवन्ती

वीरेन्द्र मिश्र

कविके विशिष्ट और जीवन्त नवगीतोंका संकलन मूल्य ३.००

■ अपनी शताब्दीके नाम

दूधनाथ सिंह

विधा-विविधा : अर्थात् कविताएँ, कहानियाँ, निबन्ध मूल्य ४.००

■ तुलसी : आधुनिक वातायनसे

डॉ० रमेश कुन्तल मेघ

तुलसीके कृतित्वका सर्वथा नयी दृष्टिसे मूल्यांकन मूल्य १२.००

■ कुतब शतक और उसकी हिन्दुई

डॉ० माताप्रसाद गुप्त

एक अपूर्व शोध–अध्ययन मूल्य ७.००

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रकाश्य
ये महत्त्वपूर्ण कृतियाँ शीघ्र ही आपके
हाथों पहुँचनेके लिए प्रतिक्षत हैं !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी अभिनन्दित

■

रविवार दिनांक २४ सितम्बर १९६७ की सुबहके दस बजेका समय····काशी हिन्दू विश्व-विद्यालयके सेण्ट्रल हिन्दू कॉलेजका भव्य ऑडोटोरियम····प्रमुख साहित्यकारों, प्राध्यापकों, साहित्य-प्रेमियों एवं कॉलेजके रुचि-सम्पन्न विद्यार्थियोंसे हॉल ठसाठस भरा···· सामने मंच····मंचपर बैठे कुछ महान् व्यक्तित्व ····कलाविद् रायकृष्णदास····कवयित्री महादेवी वर्मा····काशी हिन्दू विश्वविद्यालयके उपकुलपति डॉ० अमरचन्द जोशी····और इन सबोंके मध्य सबोंके केन्द्र-बिन्दु—हिन्दी साहित्यके प्रकाण्ड विद्वान् , आलोचक एवं साहित्यकार आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, जिनकी षष्टि-पूर्तिके अवसरपर अभिनन्दन-हेतु यह सभा आयोजित की गयी थी।

आरम्भमें संयोजक डॉ० शिवप्रसाद सिंहने अपने स्वागत-भाषणमें आचार्यप्रवरके अभिनन्दनको समस्त हिन्दी साहित्यका अभिनन्दन स्वीकार करते हुए उनकी विद्वत्ता एवं रचनात्मकताके प्रभावसे समस्त हिन्दी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यको जुड़ा हुआ प्रतिपादित किया, पश्चात् उन्होंने उन सबोंके प्रति आभार प्रकट किया जिनके सहयोगसे इस महत्त्वपूर्ण अभिनन्दन-समारोहको साफल्य-प्राप्ति हुई।

समारोहकी उद्घाटन-कर्त्री थीं महादेवीजी। महादेवीजीने अपनी कवित्वमय शैलीमें आचार्य द्विवेदीकी जिस विशेषता-महानताकी ओर इंगित किया वह थी—आचार्यजीकी समन्वित रूपमें विद्वत्ता एवं सृजनात्मकता। उन्होंने कहा कि द्विवेदीजी एक साथ विद्वान् आलोचक एवं सृजनात्मक लेखक दोनों ही हैं और किसी एक व्यक्तिमें ये दोनों गुणका एक साथ होना हिन्दी साहित्यमें दुलर्भ है।

युग-साहित्यकारोंकी ओर लोगोंका ध्यान आकर्षित करते हुए महादेवीजीने कहा—"आजके साहित्यकारके हाथमें मात्र हथौड़ी है, जब कि कलाकार-साहित्यकारके हाथमें छेनीका होना भी आवश्यक होता है। किसी प्रस्तर खण्डको मूर्तिका रूप देनेके लिए छेनी और हथौड़ी दोनों जरूरी हैं—आजका युग टूटनका युग माना गया है और लोग हथौड़ीसे केवल तोड़नेका कार्य सम्पादित करना चाहते हैं पर मात्र तोड़नेसे साहित्य-का निर्माण नहीं हो पायेगा।"

युगके वैषम्यकी ओर इशारा करते हुए उन्होंने आगे कहा—"आजका मनुष्य ज्वालामुखीपर बैठा है, किसी भी क्षण वह अपना विनाश कर सकता है अतः ऐसे अवसरपर आस्था, विश्वास, साधना और निष्ठाके द्वारा जो व्यक्ति इन परिस्थितियोंसे हमें उबार पायेगा—वह आचार्य हजारी-प्रसाद द्विवेदी-जैसा व्यक्तित्व ही हो सक[ता] है। द्विवेदीजी-जैसे चिन्तक ही आज[के] साहित्यका मार्ग-दर्शन कर सकते हैं।"

भविष्यके प्रति अपनी आस्था प्रदर्शि[त] करते हुए महादेवीजीने घोषणा की—"यद्[यपि] अन्धकार विराट् और विशाल है या आं[धी-] तूफ़ान वेगवान् है पर यह चिरस्थायी नहीं है। जो प्राण-वायु हम अपनी साँसोंमें ग्रह[ण] करते हैं वह आँधीकी तरह प्रवाहित नहीं होती, अतः जीवनके इस विघटनमें भी [जो] साहित्यकार हमें लक्ष्यकी ओर उन्मुख क[रे] उसका कृतित्व ही मान्य और धन्य है। वेदसे अबतकका साहित्य-सन्देश यही [रहा] है कि मनुष्य ही सत्य है, सत्य ही सुन्दर है-यह सन्देश हमें बार-बार देना है। दी[पक] ही दीपकको जला सकता है। आच[ार्य] हजारीप्रसादजी ऐसे ही दीपक हैं जो [इस] अँधेरी रातको पार कर हमें प्रभात[की] किरणों तक पहुँचा सकते हैं।"

आचार्यश्रीके अभिनन्दनके प्रति अ[पनी] आस्थाको और गहरा रूप देते तथा अ[पने] वक्तव्यका समापन करते हुए उन्होंने कहा, "प्रकाशपुंज-जैसे हमारे हजारीप्र[साद] द्विवेदी गृही संन्यासी और परिग्रही वि[...] तथा मौन साधक हैं जिनका अभिनन्द[न] कर हम प्रेरणा-शक्ति तथा वाग्देवता[...] अभिनन्दन करते हैं। द्विवेदीजीमें कबीर[की] भाव-भूमि और रवीन्द्रनाथकी रागिनी[का] सौन्दर्य-संगीत है अतः उनका साहि[त्य] शाश्वत साहित्य है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समारोहमें स्वागत-भाषण करते हुए डॉ० शिवप्रसादसिंह—(दायेंसे बायें) श्रीमती भगवती देवी (आचार्य द्विवेदीजीकी धर्मपत्नी) महादेवी वर्मा, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, उप-कुलपति डॉ० अमरचन्द जोशी एवं श्री रायकृष्णदास।

महादेवीजीके कवित्वपूर्ण अभिनन्दनसे गौरवान्वित वातावरण .... वातावरणकी स्निग्धतामें पं० गोपालचन्द्र मिश्रका मधुर स्वस्त्ययन....आचार्यप्रवरके शिष्योंकी ओरसे श्रद्धा-रूपमें दिये गये उपहार....और फिर कलामर्मज्ञ श्री रायकृष्णदास द्वारा द्विवेदीजीके कवि-रूपका उद्‌घाटन तथा अभिनन्दन !....

इस अवसरपर श्रीरायकृष्णदास-द्वारा द्विवेदीजीको 'भारतीय ज्ञानपीठ' द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'शान्तिनिकेतनसे शिवालिक' भेंट की गयी। अभिनन्दन-ग्रन्थोंकी काया तथा औपचारिकतासे हटकर इस पुस्तककी विशेषता इस बातमें परिलक्षित हुई कि पुस्तक जहाँ एक ओर आचार्य द्विवेदीके व्यक्तित्वका विश्लेषण करती है वहीं उनके कृतित्वका गम्भीर अध्ययन-परीक्षण भी। पुस्तकके सम्पादक डॉ० शिवप्रसाद सिंहको पचाससे अधिक विशिष्ट हिन्दी लेखकोंका सहयोग प्राप्त होनेके कारण भी लगा, जैसे पुस्तक हिन्दी साहित्यके विगत चालीस वर्षोंकी प्रगतिके प्रति श्रद्धाका सहज प्रतीक बनकर सामने आयी हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूजा-दिवाली : नवम्बर १९६७

शे । ष । श । ता । ब्दी । वि । शे । षां । क

२५ अक्तूबर को प्रकाश्य

अगले ३३ वर्षों की सही और
वैज्ञानिक परिकल्पना :

पृष्ठ : ३००

मूल्य : ३ रुपये

विशेष लेखक :

प्रभाकर माचवे, इलाचन्द्र जोशी, मन्मथनाथ गुप्त, कैलाश वाजपेयी, मनहर चौहान, हरीश अग्रवाल, रमेशचन्द्र शाह, नारायणदत्त श्रीमाली, प्रेमानन्द चन्दोला, राजेन्द्र अवस्थी, दूधनाथ सिंह, देसराज गन्धर्व, प्रेमकपूर, भगवती प्रसाद श्रीवास्तव, डॉ० सिरोही, धनंजय वर्मा, सोमा वीरा, गंगाप्रसाद विमल, हरिशंकर परसाई, रमेश कुन्तल मेघ, आशालता शर्मा, विवेकी राय तथा अन्य अनेक ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजपत्रीय पवित्रता ग्रहण किये पुस्तक-का मुखपृष्ठ और मुखपृष्ठपर द्विवेदीजीका सौम्य प्रसन्न मुद्राका चित्र··· मंचीय व्यक्तित्व मुखपृष्ठ और बादके पृष्ठोंका आकर्षण मेल ही रहे थे कि कार्य-क्रमके अनुसार भारतीय ज्ञानपीठकी ओरसे डॉ० गोकुलचन्द्र जैनने आचार्य द्विवेदीका अभिनन्दन करते हुए स्पष्ट घोषणा की कि 'शान्तिनिकेतनसे शिवालिक' द्विवेदीजीके प्रति संस्थाकी श्रद्धा और अभिनन्दनका प्रतीक मात्र है। उन्होंने बताया कि संस्थाने अपने मूल उद्देश्यानुसार ही ऐसा किया है और इससे स्वयं भी गौरवान्वित हुई है।

तत्पश्चात् जिन विद्वानों-साहित्यकारोंने द्विवेदीजीके सम्मान एवं अभिनन्दनमें अपने वक्तव्य दिये उनमें प्रमुख थे—सर्वश्री क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय, इलाचन्द्र जोशी, पद्मनारायण आचार्य, डॉ० देवराज, डॉ० जगदीश गुप्त, पं० करुणापति त्रिपाठी, लक्ष्मीनारायण मिश्र, श्री देशपाण्डे आदि। प्रायः सभी वक्ताओंने आचार्य द्विवेदीके प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हुए उनसे हिन्दी साहित्यकी गौरव-वृद्धिकी चर्चा की एवं द्विवेदी जीसे मार्ग दर्शनकी अभिलाषा प्रकट की।

····प्रशंसा, सम्मान, अभिनन्दन एवं आत्मीयतासे अभिभूत आचार्यप्रवरको उत्तरमें कुछ कहना था और जब वे इसके लिए उठे तो लगा कि मात्र इन सबके प्रति आभार-प्रदर्शन ही उनका लक्ष्य न था। यद्यपि महादेवीजीकी कृतियोंमें समर्पण-भावनाकी गरिमा और महत्ताकी उन्होंने अत्यधिक प्रशंसा की तथा डॉ० अमरचन्द जोशीके हाथों पंजाब विश्वविद्यालयकी सौन्दर्य-सौष्ठव-प्राप्तिकी चर्चा भी की, साथ ही रायकृष्णदासकी कलाके प्रति आरम्भसे ही दीवानगीका उल्लेख भी किया पर इन सबके अन्तमें उन्होंने जिस बातकी ओर इशारा किया वह युग-साहित्य और युग-धाराके लिए जैसे शाश्वत सन्देश था।

उन्होंने कहा—"मनुष्यका कर्तव्य ही जैसे निरन्तर ऊपरकी ओर उठना है। जड़ता अपनी गुरुत्वाकर्षण-शक्ति द्वारा उसे नीचेकी ओर खींचती है पर जलती हुई शिखाका धर्म ऊपरकी ओर उठना ही है। प्रकृतिके अंचलमें अंकुरित तृण समस्त गुरुत्वाकर्षण-शक्तिको भेद कर ऊर्ध्वमुखी होकर उठता चला जाता है। जड़ता विकृति है और सात्त्विक चैतन्योन्मुखता संस्कृति। जब हम भारमुक्त हो चैतन्यताकी अवस्थामें साहित्य-सृजन करेंगे तो संस्कृति उजागर होगी और मानवता उपकृत।"

आजकी अनास्था, घुटन, ऊब एक सन्त्राससे भरे साहित्यकी ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए द्विवेदीजीने अपनी सम्मति यूँ व्यक्त की—"इन दिनों चाहे जो कुछ भी लिखा जा रहा हो, या लिखा गया हो, हम यह कैसे कह सकते हैं कि काल-देवता उन सारी कृतियोंको अपने कन्धेपर वहनकर दूर तक लेता जायेगा—इन सबमें जो चैतन्यताकी कृतियाँ हैं—भविष्य उन्हींका साथ देगा, बाक़ी यहींकी यहीं धरी रह जायेंगी।" इसी सन्दर्भमें उन्होंने रवि बाबूकी 'सोनार तरी' कविताकी कुछ पंक्तियाँ सुनायीं जिनमें किनारेपर आयी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उर्दू साहित्य के मर्मज्ञ पुरस्कर्ता

[जिनकी कृतियोंके नामोंसे भी लोग बेझिझक लाभ उठाते हैं!]

अयोध्याप्रसाद गोयलीय

के हाथों हिन्दीमें पहली बार

उस्तादाना कमाल

कहा जाता है कि इस्लाहसे न केवल शागिर्दको ही लाभ पहुँचता है बल्कि उस्तादके भी काव्य-कौशलमें निखार आता है। भले ही इस्लाह देने-लेनेकी बात आज पुरानी, दक़ियानूस या बेमानी कही-मानी जाये पर एक ज़माना था जब उर्दू-शाइरीमें इसका महत्त्वपूर्ण स्थान था। उस समय तो यह एक सचाई थी कि शाइरोंका वास्तविक जौहर तो इस्लाहोंसे ही प्रकट होता है।

बहुत दिनों तक तो उर्दू-अदबके इस बेशक़ीमती ख़ज़ानेकी ओर स्वयं उर्दू-वालोंका भी ध्यान नहीं गया और पहली बार इस्लाहोंका एक महत्त्वपूर्ण संग्रह सन् १९१८ में प्रकाशित हुआ। हिन्दीमें तो अभी यही पहला प्रयास है—'उस्तादाना कमाल'!

वास्तवमें एक गमकता हुआ गुलदस्ता है 'उस्तादाना कमाल'—मीर, ग़ालिब, आतिश, दाग़, असीर, तस्लीम, अमीर मीनाई, आदि सब २८ ख्याति-प्राप्त उस्ताद उर्दू शाइरों-द्वारा दी गयी सुरुचिपूर्ण इस्लाहोंका, और उनके देनेकी वजूहातोंका : गोयलीयजीकी अपनी अलबेली शैलीमें यह संग्रह उर्दू-साहित्यके अध्येताओंके लिए तो अनिवार्य है ही, सामान्य पाठकके लिए भी रोचक और पठनीय होगा।

मूल्य चार रुपये

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

विक्रय-केन्द्र : ३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाव पार पहुँचानेके अभिप्रायसे किनारे खड़े व्यक्तिके सोनेके धान तो रख लेती है किन्तु व्यक्तिको यह कहकर नकार जाती है कि--ठाईं नाई, ठाईं नाई ! (ठौर नहीं ठौर नहीं)। इस प्रसंगमें द्विवेदीजीने कृतियोंकी ही महत्ताको स्वीकार करते हुए साहित्यकारोंको निर्व्याज साहित्य-रचना करनेका परामर्श दिया।

अन्तमें, अध्यक्षीय पदसे डॉ० अमरचन्द जोशीने द्विवेदीजीका सम्मान एवं अभिनन्दन किया। साथ ही लोगोंका ध्यान मंचपर ही बैठीं आचार्य द्विवेदीकी पत्नी श्रीमती भगवती देवीकी ओर भी आकर्षित किया, जिनकी प्रेरणा, एवं सहयोगसे द्विवेदीजी अपने जीवनमें पूर्णतः सफल हुए हैं। उपकुलपति होनेके नाते उन्होंने अपने ये विचार भी व्यक्त किये कि किसी भी विश्वविद्यालयके लिए यह गौरवकी बात है कि उनके यहाँ आचार्य द्विवेदी-जैसे विद्वान् एवं साहित्यकार प्राध्यापक हों। सैकड़ों विभागाध्यक्षों एवं प्राध्यापकोंकी अपेक्षा यदि द्विवेदीजी-जैसे कतिपय विद्वान् किसी विश्वविद्यालयमें हों तो—वह विश्वविद्यालय श्रेष्ठ विश्वविद्यालय कहा जायेगा।

दर्शक-श्रोताके उठनेसे पहले काशी विश्वविद्यालयका कुलगीत अपनी मधुरता और अभिव्यक्तिके प्रभावके साथ गूंज रहा था''''मधुर मनोहर अतीव सुन्दर ये सर्व विद्याकी राजधानी''''

सेतु : एक साहित्य गोष्ठी :

उसी दिन अपराह्न 'सेतु'की ओरसे जो गोष्ठी आयोजित की गयी थी उसमें चर्चाका विषय था—आधुनिक-साहित्यमें मिथकका प्रयोग। अभिनन्दन-समारोहमें बाहरसे आये विद्वानोंके आगमनका लाभ उठाते हुए गोष्ठीके संयोजक डॉ० बच्चन सिंहने चाहा था कि उपरोक्त विषयपर स्थानीय तथा बाहरके विद्वान् अपना मत व्यक्त करें। विषयकी जटिलतासे सभी परिचित थे और विचारोंके स्पष्टीकरणके प्रति सभी शंकित पर गोष्ठीका समापन जिस रूपमें हुआ उसे सफलताकी श्रेणीमें ही रखा जाना चाहिए।

विषय-प्रवर्तनके पश्चात् गोष्ठीके अध्यक्ष डॉ० बी० रायने 'मिथक'के रूपों और प्रयोगोंका विश्लेषण करना चाहा ताकि बादमें इस विषयपर विचारोंकी स्पष्टता व्यक्त हो सके। इस सम्बन्धमें कुछ विद्वानोंने अपने-विचार व्यक्त किये।

श्री इलाचन्द्र जोशीने इस सम्बन्धमें कहा कि आदिकालमें जब काम-प्रवृत्तिके उन्मुक्त और निर्द्वन्द्व बाह्य प्रभावपर रोक लगाकर उसे अन्तर्मुख किया गया तो मनुष्यमें काव्य-चेतना और कलात्मक प्रवृत्तियाँ जगने लगीं—इस प्रकार सभी स्थानोंपर सामूहिक अन्तश्चेतनाके जगनेसे पौराणिक कथाओं यानी 'मिथ'का जन्म हुआ। जोशीजीने इस बातपर अपना विश्वास प्रकट किया कि 'मिथ' अपने पूर्व रूपमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदैव वर्तमान रहेगा, चाहे उसका विकास जिस दिशामें किया जाये।

डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदीने 'मिथ'को धर्मनिरपेक्ष बताकर भारतीय या हिन्दीके आधुनिक साहित्यमें उसके प्रयोगोंकी सफलता-के प्रति अपना सन्देह व्यक्त किया। कारण रूपमें उन्होंने भारतीय तथा विदेशी मिथोंके ग्रहण-भावका उल्लेख किया और कहा कि हमारे यहाँ मिथोंको पूर्ण धार्मिक-भावनासे ही लिया जाता रहा है और यदि कोई इसे धर्म-निरपेक्ष रूपमें ग्रहण भी करता है तो वह स्वीकार नहीं हो पाता।

श्री दूधनाथ सिंहने 'मिथ'को किसी पौराणिक घटनाके बीचकी 'छूटी हुई कड़ी' बताया और कहा कि आधुनिक साहित्यमें इस प्रकार 'मिथकों'के प्रयोगके लिए काफ़ी गुंजाइश है।

डॉ० जगदीश गुप्तने 'मिथ' शब्दके प्रति ही अपनी असहमति व्यक्त की और कहा कि इसके स्थानपर 'कल्प-कथा'-जैसे शब्द ही ग्राह्य होने चाहिए क्योंकि 'मिथक' पुराण-कथाके बीच कवि या लेखककी कल्पना-द्वारा ही सम्भव होता है।

गोष्ठीमें अन्य जिन व्यक्तियोंने अपने विचार व्यक्त किये उनमें प्रमुख विद्वान् थे—डॉ० रघुवंश, डॉ० शम्भुनाथ सिंह, डॉ० भोला-शंकर व्यास, श्री लक्ष्मीकान्त वर्मा, डॉ० श्यामनन्दन किशोर, श्री कृष्णनाथ शर्मा, श्री जितेन्द्रनाथ पाठक आदि।

उपरोक्त विद्वानोंमें अधिकतर लोगोंने यद्यपि मिथकोंके प्रयोगकी सार्थकता व्यक्त की पर आधुनिक हिन्दी साहित्यमें मिथक-प्रयोगके उदाहरणस्वरूप जिन पुस्तकोंका उल्लेख किया गया, वे थीं—'अन्धा युग', 'आत्मजयी' तथा 'बाणभट्टकी आत्मकथा'। मिथककी दृष्टिसे इन्हें सफल-असफल दोनों मान्यताएँ प्राप्त हुईं पर सम्पूर्ण गोष्ठीके बीच 'मिथक'-सम्बन्धी जो प्रश्न उभरे उनके मीमांसा-स्वरूप आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीने अन्तमें बताया कि यद्यपि 'मिथ' शब्दसे प्रभावित होकर 'मिथक' शब्द उन्होंने ही चलाया था पर उसकी व्यंजनामें लोग भ्रम पैदा कर रहे हैं। 'मिथ' और 'माइथोलॉजी' में काफ़ी अन्तर है। मिथ भाषाका सहवर्ती है—उसकी कमीको पूरा करता है। वस्तुतः वह लालित्य-शास्त्रका शब्द है और मनुष्यकी भावनाओं और चित्रोंका मिश्रित रूप है। भाषा-निर्माणके पूर्व प्रकृतिके चमत्कारोंको देखकर मनुष्यके मनमें जो भावनाएँ उठती थीं—वे ही 'मिथ'का रूप ग्रहण करती थीं। तब मनुष्योंने अपने भावोंकी अभिव्यक्तिके लिए छन्द, संगीत और मिथका ही सहारा लिया था।'...

अन्तमें गोष्ठीकी सफलताके लिए सह-योगियोंके प्रति डॉ० बच्चन सिंहने अपना आभार प्रकट किया। ■

(प्रस्तोता : भो० ना० मिश्र)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिक्रियापर आधारित है। स्थितिकी स्वीकृति तथा बृहत्तर यथार्थके साक्षात्कारकी बात जान-बूझकर भुठलायी गयी है। यह अवैज्ञानिक दृष्टिकोण स्थितिको उसकी सम्पूर्ण विषमतामें स्वीकार नहीं करना चाहता—यही विडम्बना है।

—नयी दिल्ली]

●

[विक्रम माहेश्वरी : सर्वप्रथम तो मैं कुबेरनाथ राय—(जून १९६७ में) से यह पूछना चाहूँगा कि उन्होंने 'आत्मा' शब्दका इतना ग़लत उपयोग क्यों किया है? 'आत्मा' शब्दका वास्तवमें कोई भी जैविक अस्तित्व नहीं होता। वास्तवमें उन्हें पूरे लेखमें 'आत्मा'की जगह 'मन' या 'मानस'का उपयोग करना चाहिए था। कतिपय उदाहरणोंके तौर पर : पृष्ठ १७ पर ही वे कहते हैं—"ग्रामोंके शहरीकरणका अर्थ होता है—मनुष्यकी आत्माका—उस धातुका जिससे उसका मन गढ़ा गया है--शहरीकरण"। यहीं पर वे 'आत्मा'की एक नयी परिभाषा देते हैं जो हमारी परम्परागत परिभाषाओंसे एकदम विलग है। दरअसल यह वाक्य इस तरह होना चाहिए—'ग्रामोंके शहरीकरणका अर्थ होता है—मनुष्यके मनका--उस वस्तुका जहाँपर उसके सोचने-विचारनेकी कल है--शहरीकरण।" हमारा सोचना-विचारना बदल रहा है यानी मानसिक और नैतिक मूल्योंका परिवर्तन हो रहा है। इसी सन्दर्भमें मैं यह भी कहना चाहूँगा कि शब्दोंकी मोहमूढ़ताका वास्तविक अर्थ होता है—'शब्द'का परम्परागत परिभाषाओंसे अलग अर्थ, और इसीलिए वे जब पृष्ठ २१-२२ पर 'खेती', 'सहकारिता' आदि शब्दोंकी विकृत अवस्थापर दृष्टिपात करते हैं तो ऐसा मालूम होता है कि वे विरोधाभासमें उलझ गये हों। वे स्वयं पूरे लेखमें 'आत्मा'की अस्तित्वगत स्थितिके स्थानपर सिर्फ़ 'शाब्दिक' चिन्तन करते हुए प्रतीत होते हैं। इसी प्रकार पृष्ठ १८ पर वे स्वयं इस विरोधाभासको और प्रखर रंग दे देते हैं—"एक आत्मिक गिरावट (आत्मिकसे मेरा तात्पर्य 'आध्यात्मिक' नहीं) आ रही···"

यदि हम लेखमें उपर्युक्त परिवर्तन करते हुए पढ़ें, तो भी कई जगहपर उनका चिन्तन एकदम उथला प्रतीत होता है। पृष्ठ १८ पर ही—"लेकिन नया साहित्यकार गाँवको समझ···क्योंकि हिन्दुस्तान अर्थात् ७ लाख गाँवोंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक कालमें किसी भी कलाकी साधना साहस-कर्म है। काव्य-रचनामें तो यह साहस निहित है ही, क्योंकि आज वह एक वैचारिक साहसिकता भी माँगती है। इस 'एड्वेंचर ऑव आइडियाज़' में कवि और पाठक-वर्ग सहभागी होता रहे—यही 'सप्तकों' का उद्देश्य है, और इसी दृष्टिसे इनका सम्पादन प्रकाशन होता रहा है। समकालीन समीक्षामें इनकी चर्चा इसका प्रमाण है कि इन्होंने काव्य-चिन्तनको कितनी प्रेरणा दी है।

जिन्हें पिछले पन्द्रह वर्षोंकी हिन्दी कविताकी प्रगतिमें रुचि है, उनके लिए तो ये संकलन अद्वितीय महत्त्व रखेंगे ही; पर जो समकालीन कविताके आन्तरिक कर्ष-अपकर्षसे उदासीन रहकर शुद्ध काव्यानन्दके लिए ही कविता पढ़ना चाहते हैं उन्हें भी इनमें यथेष्ट प्रीतिकर सामग्री मिलेगी। अलग-अलग कवियोंके वक्तव्य उनके विचारों और विश्वासोंका निरूपण करके पाठकको अवसर देते हैं कि उन्हें भी कसौटीपर रखे और इस प्रकार रुचि संस्कारमें, और विवेचनका स्तर ऊँचा करनेमें, योग दे।

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रकाशित हिन्दी कविताकी तीन मानक कृतियाँ

अज्ञेय-द्वारा सम्पादित—

तार सप्तक

गजानन माधव मुक्तिबोध, नेमिचन्द्र जैन, भारतभूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर, अज्ञेय।

नया संवर्धित संस्करण। मूल्य ८.००

दूसरा सप्तक

भवानी प्रसाद मिश्र, शकुन्त माथुर, हरिनारायण व्यास, शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय, धर्मवीर भारती।

नया संस्करण :: यन्त्रस्थ

तीसरा सप्तक

प्रयागनारायण त्रिपाठी, कीर्त्ति चौधरी, मदन वात्स्यायन, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, विजयदेवनारायण साही, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना।

नया तीसरा संस्करण। मूल्य ६.००

भारतीय ज्ञानपीठ

विक्रय-केन्द्र

३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दुस्तान ! फलतः अपने (परिवेश) को न समझ पाना आधुनिकता-बोधकी महान् ट्रेजेडी है।" नये साहित्यकारका परिवेश गाँवका नहीं है—कितने नये साहित्यकार ग्रामीण परिवेशमें जीते हुए आधुनिकताकी ओर आ रहे हैं ? नया साहित्यकार महानगरोंमें या बड़े शहरोंमें या छोटे शहरोंमें जीता है उसका परिवेश उस जगहका है जहाँ वह जीता है। और इसलिए वह गाँवोंको यानी भारतको समझनेमें असमर्थ है। और इस कारण वह व्यवधान पड़ता है जिसका उन्होंने उल्लेख किया है। वास्तवमें नये साहित्यकारका परिवेश ऐसा है जिसमें उसे जीनेके लिए संघर्ष करना पड़ता है—या बक़ौल डार्विनके कहें तो 'स्ट्रगल ऑव एक्जिस्टेन्स'। जब 'जीना' या ज़िन्दा रहना ही प्रमुख प्रश्न होता है तो भ्रातृत्व या बन्धुत्वका समाप्त होना, आत्मसंघर्ष, प्रश्नाकुलता, त्रास और अजनबीपनके भाव पैदा होना—एकदम सहज रूपसे उसके साथ जुड़ा चला आता है। नया साहित्यकार पहचान रहा है कि 'मैं' यानी 'मनुष्य जातिकी इकाई' इस प्रकारके संघर्षमें किस तरह प्रभावित होती है--जीवनके मूल्य किस तरह बदलते हैं और इन बदलते मूल्योंकी प्रक्रियामें उसका पीड़ित होना बिलकुल स्वाभाविक है। यहाँपर मैं कहूँगा कि श्रीरायने कम-से-कम इस बातको स्पष्ट रूपमें प्रकट किया है। उनका यही तथ्य समझमें आता है, (भले ही इस निष्कर्षपर वे किसी भी चिन्तनके सहारे पहुँचे हों)। दिशाबोधके बारेमें वास्तवमें बहुत संशय है पर मैं पूछता हूँ, इस तरहका मूल्यहीन जीवन जीनेमें क्या बुराई है ? 'कल' आयेगा ही—इस बातका क्या भरोसा है ? स्वयं वे जब अणु-युद्धके आतंकसे परिचित हैं, तो भी यह उन्होंने स्पष्ट नहीं किया कि 'सुगठित मूल्यों'की लिजलिजी गुंजलकमें मन क्यों जकड़ा हुआ है ? उन मूल्योंकी मृगमरीचिकाके पीछे मन भागता क्यों है ? मनुष्य-जीवनका कुछ मूल्य (भारतीय अर्थोंमें) होनेसे भी क्या लाभ है जब किसी भी दिन, किसी भी क्षण यह 'मानव शरीर' 'होना' बन्द कर देगा--यानी 'नहीं होगा'। मैं पूछता हूँ, इसलिए भागनेमें क्या बुराई है ? शायद भागनेमें ही हमारे जीवनके मूल्य निहित हों। क्यों हमें ऐसा दर्शन चाहिए जो सगुण और अस्तित्वपरक बोधसे जन्मा हो ?

श्री रायकी और दो बातोंपर भी मुझे आपत्ति है। पहली पृष्ठ २१ पर—"मानवीय स्थितिसे हमारा और हमारे चिन्तनका कोई सम्बन्ध ही नहीं"—मानवीय स्थितिसे मानवका सम्बन्ध न होगा तो किसका होगा ?

दूसरी, पृष्ठ २५ पर—"हम मत तो देते हैं पर दिल कहता है—आह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सब कमीने हैं—क्या फ़र्क़ पड़ता है" क्या इस 'सब'में 'हम' नहीं ? 'हम' यदि उस 'कमीने'की स्थितिमें होते तो क्या करते ? यह सच है कि यह भ्रष्टाचार-युग है पर इतनी आसानीसे 'हमारी' ग़लती 'कमीनों' पर नहीं थोपी जा सकती—क्योंकि 'हम' भी 'कमीने' हैं। उस स्थितिको सुधारनेके लिए 'हमें' अपनेको सुधारना होगा--कमीनेपनको कम करनेके लिए 'हम'से ही क्यों न शुरू किया जाये ? शुरू-शुरूमें हम 'बेवक़ूफ़की दुम' रहेंगे पर इन दुमोंकी संख्या बढ़ते रहनेमें ही क्या हमारा और देशका फ़ायदा नहीं है ? साहित्यकार बुद्धिजीवीकी अन्तिम और सर्वोच्च सीढ़ी है--यहींसे शुरू करके हमें नीचे उतरना चाहिए ! ऐंग्री यंगमैनका मेघनाद वह ख़ुद ही है।

--एवन्स्टन, इलिनायॉज़]

●

[मधुकर गंगाधर : कई महीनोंसे पत्र लिखनेको सोच रहा था। ज्ञानोदयके लिए बधाई देना चाहता था। और, प्रत्येक अंकके बाद लगता था, अच्छा ही हुआ कि पहले पत्र नहीं दिया वरना इस अंक जितनी ख़ुशीसे पत्र नहीं लिखता। ज्ञानोदयको, देखते हैं, नवीन लेखक अंकसे ही आधुनिकताका नया आत्मबोध हुआ है और यह सम्भवतः, पीढ़ीके बहुत बड़े अंशका प्रतिनिधित्व करता है—सन्दर्भ चाहे निर्माणका हो, रचना का हो, विद्रोह का हो या युद्धका हो। 'ज्ञानोदय' जैसे साहित्यको छाप सकना उसके चयन और प्रस्तुतीकरणमें बक्षीने और आपने सीमान्त प्रतिभाका परिचय दिया है। —पटना]

●

सागर : ज्ञानोदयके अगस्त अंकमें श्री वर्माजीका लेख 'आधुनिकता : वर्तमान मनःस्थिति' पढ़ा। इसके साथ ही मईके अंकमें लक्ष्मीनारायणलाल और जूनके अंकमें कुबेरनाथ रायके विचारोंसे कहीं अधिक सटीक विचार आधुनिकतापर वर्माजीके लगे हैं। निश्चय ही यह लेख अक्षरशः कण्ठस्थ कर लेनेके योग्य है। मैं सतत प्रयासमें लग गया हूँ। आपको शत बधाई और वर्माजीको शत-शत बधाई पहुचायें। —रायपुर]

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन
और राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी साधिका
तथा भारतीय भाषाओंकी
सर्वोत्कृष्ट सर्जनात्मक साहित्यिक कृतिपर
प्रतिवर्ष एक लाख रुपये
पुरस्कार - योजना - प्रवर्तिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

BHARATIYA JNANPITH

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध और अप्रकाशित सामग्रीका अनुसन्धान और प्रकाशन तथा लोकहितकारी मौलिक साहित्यका निर्माण—लोकोदय, मूर्तिदेवी एवं माणिकचन्द्र ग्रन्थमालाके अन्तर्गत

संस्थापक
शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

आधुनिक भावबोध, कला-संचेतना और नवीनताका प्रतिनिधि मासिक

ज्ञानोदय

लेखन - प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति और उपलब्धि परिचायिनी मासिकी

सम्पादकीय एवं प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०/२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५
प्रमुख वितरक : बैनेट कोलमैन ऐण्ड कम्पनी लि०, बम्बई-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul K

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : अरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक

ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहु ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हॉर्नमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई—१

टेलीफ़ोन : २५१२१८-१९-१०

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'शेष शताब्दी विशेषांक'

नवम्बर १९६७

मूल्य ३.००

सम्पादक
लक्ष्मीचन्द्र जैन, रमेश बक्षी
९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

पुस्तकालय गुरुकुल काँगड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

…और जब (चाँद या मंगल जैसे) रात्रिकालीन प्रकाशयुक्त नक्षत्रकी भुरभुरी सतहपर पृथ्वीका पहला दूत अपने पैर रखेगा तो लोग खुशियाँ मनायेंगे। लेकिन फिर भी यही कहेंगे कि यह पर्याप्त नहीं है, यही सब कुछ नहीं है, अभी बहुत कुछ खोजना बाक़ी है। आदमीका स्वभाव है यह कि वह ऐसी जगह रुकना नहीं चाहता जहाँसे आगे कोई रास्ता नहीं हो। उसे ठहराव पसन्द नहीं। इस शताब्दीमें नहीं, तो उससे बादकी शताब्दीमें या उससे भी बादकी शताब्दीमें सही, सारे ब्रह्माण्डको वशमें कर लेनेका स्वप्न वह कभी नहीं छोड़ सकता। और यह भी एक असन्तुष्ट वैज्ञानिकका स्वप्न है, यह शती जिसका केनवॅस है…

—अन्तरिक्षनाविक कोस्तान्तिन फियोक्तिस्तोव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन
और राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी साधिका
तथा भारतीय भाषाओंकी
सर्वोत्कृष्ट सर्जनात्मक साहित्यिक कृतिपर
प्रतिवर्ष एक लाख रुपये
पुरस्कार - योजना - प्रवर्तिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ
BHARATIYA JNANPITH

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध और अप्रकाशित सामग्रीका अनुसन्धान और प्रकाशन तथा लोकहितकारी मौलिक साहित्यका निर्माण—लोकोदय, मूर्तिदेवी एवं माणिकचन्द्र ग्रन्थमालाके अन्तर्गत

संस्थापक
शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

सम्पादकीय एवं प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०/२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५
प्रमुख वितरक : बैनेट कोलमैन ऐण्ड कम्पनी लि०, बम्बई-१

मासिक प्रकाशन
ज्ञानोदय
ज्ञानपीठ पत्रिका

एक लाख रुपये के
पुरस्कार-सम्मान :
ओटक्कुषल (मलयालम)
जी० शंकर कुरुप
गणदेवता (बंगला)
ताराशंकर वन्द्योपाध्याय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक भावबोध,
कला-संचेतना
और
नवीनताका
प्रतिनिधि

ज्ञा।नो।द।य

शेष
शताब्दी
विशेषांक

नवम्बर १९६७

वर्ष : १९
अंक : ५
पूर्णांक : २३३

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

'शेष शताब्दी : एक कोलॉज'
मुखपृष्ठ : र० ब०

अ।नु।क्र।म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तर्सज्जा :

रंग-संयोजन : बीरेश्वर बैनर्जी

सज्जा-चित्र : मिर्ज़ा इस्माईल बेग १५

भाऊ समर्थ २१, ४८, ७४, १२७, १४६, १८७, २८९

आशालता शर्मा ७३, २६३, २६९

हन्सजोर्ग मेयर ९७

सल्वादोर डाली १९९

स्टीफ़ेन गार्डिनर २२१

असीम २२७

छायाचित्र :

प्रसाद १७१, १७९, २०३, २८३

व्यंग-चित्र :

मदन जैन १९३

विज्ञान-सम्बन्धी तथा सूचनात्मक छाया-चित्रोंके लिए सौजन्य-सहयोग :

अमेरिकी सूचना-विभाग

रशियन सूचना-विभाग

पत्र-सूचना-विभाग (भारत)

विश्व-स्वास्थ्य-संघ

एक्सपो-६७

जे० डी० आर० रिव्यू

सहसामग्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आभार :

हम श्रीहरीश अग्रवाल और रमेशदत्त शर्माके विशेष आभारी हैं जिन्होंने इस विशेषांक और इसके पूरक अंक (दिसम्बर १९६७) के लिए विज्ञान-सम्बन्धी सामग्री जुटानेमें विशेष सहयोग दिया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदय

जनवरी					
र०	....	७	१४	२१	२८
सो०	१	८	१५	२२	२९
मं०	२	९	१६	२३	३०
बु०	३	१०	१७	२४	३१
बृ०	४	११	१८	२५	....
शु०	५	१२	१९	२६	....
श०	६	१३	२०	२७	....

फ़रवरी					
र०	....	४	११	१८	२५
सो०	....	५	१२	१९	२६
मं०	....	६	१३	२०	२७
बु०	....	७	१४	२१	२८
बृ०	१	८	१५	२२	....
शु०	२	९	१६	२३	....
श०	३	१०	१७	२४	....

मार्च					
र०	....	४	११	१८	[illegible]
सो०	....	५	१२	१९	[illegible]
मं०	....	६	१३	२०	[illegible]
बु०	....	७	१४	२१	[illegible]
बृ०	१	८	१५	२२	[illegible]
शु०	२	९	१६	२३	[illegible]
श०	३	१०	१७	२४	[illegible]

अप्रैल					
र०	१	८	१५	२२	२९
सो०	२	९	१६	२३	३०
मं०	३	१०	१७	२४	....
बु०	४	११	१८	२५	....
बृ०	५	१२	१९	२६	....
शु०	६	१३	२०	२७	....
श०	७	१४	२१	२८	....

मई					
र०	....	६	१३	२०	२७
सो०	....	७	१४	२१	२८
मं०	१	८	१५	२२	२९
बु०	२	९	१६	२३	३०
बृ०	३	१०	१७	२४	३१
शु०	४	११	१८	२५	....
श०	५	१२	१९	२६	....

जून					
र०	....	३	१०	१७	[illegible]
सो०	....	४	११	१८	[illegible]
मं०	....	५	१२	१९	[illegible]
बु०	....	६	१३	२०	[illegible]
बृ०	....	७	१४	२१	[illegible]
शु०	१	८	१५	२२	[illegible]
श०	२	९	१६	२३	[illegible]

जुलाई					
र०	१	८	१५	२२	२९
सो०	२	९	१६	२३	३०
मं०	३	१०	१७	२४	३१
बु०	४	११	१८	२५	....
बृ०	५	१२	१९	२६	....
शु०	६	१३	२०	२७	....
श०	७	१४	२१	२८	....

अगस्त					
र०	....	५	१२	१९	२६
सो०	....	६	१३	२०	२७
मं०	....	७	१४	२१	२८
बु०	१	८	१५	२२	२९
बृ०	२	९	१६	२३	३०
शु०	३	१०	१७	२४	३१
श०	४	११	१८	२५	....

सितम्बर					
र०	३०	२	९	१६	[illegible]
सो०	....	३	१०	१७	[illegible]
मं०	....	४	११	१८	[illegible]
बु०	....	५	१२	१९	[illegible]
बृ०	....	६	१३	२०	[illegible]
शु०	....	७	१४	२१	[illegible]
श०	१	८	१५	२२	[illegible]

अक्तूबर					
र०	....	७	१४	२१	२८
सो०	१	८	१५	२२	२९
मं०	२	९	१६	२३	३०
बु०	३	१०	१७	२४	३१
बृ०	४	११	१८	२५	....
शु०	५	१२	१९	२६	....
श०	६	१३	२०	२७	....

नवम्बर					
र०	....	४	११	१८	२५
सो०	....	५	१२	१९	२६
मं०	....	६	१३	२०	२७
बु०	....	७	१४	२१	२७
बृ०	१	८	१५	२२	२९
शु०	२	९	१६	२३	३०
श०	३	१०	१७	२४	....

दिसम्बर					
र०	३०	२	९	१६	[illegible]
सो०	३१	३	१०	१७	[illegible]
मं०	....	४	११	१८	[illegible]
बु०	....	५	१२	१९	[illegible]
बृ०	....	६	१३	२०	[illegible]
शु०	....	७	१४	२१	[illegible]
श०	१	८	१५	२२	[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक वाक्य

वह—प्लेनेटोरियममें किसी दोपहर अगले महीनेकी शामका आकाश देखना हो या कैलेण्डर देखकर अगली सदीके पहले दिनकी खुशनुमा सुबहकी कल्पना करना हो या अगले सूर्यों और अन्तरिक्ष-शोधों और कम्प्यूटर्सके चेहरों और किसी समर्थ स्वतन्त्र दुनियाका चित्र बनाते, उसे तीसरे विश्वयुद्धके हॉरर और एटम-हायड्रोजनके लटकते खतरे और किसी अकाल अवस्थासे विभाजित करके, उस सही समीकरण तक पहुँचना हो जो प्रगतिकी आस्थामें-से उगता नक्शा हमारे सामने रख सके—एक वैज्ञानिक विधि है क्योंकि धुरीपर घूमना निश्चित है, वह तो क्रम है और कालकी अनन्ततामें व्यक्ति अपने कमरे या क़ैदखानेमें अपनी ही कीलपर घूमता रहे या घूमना बन्द कर दे वह समयकी दृष्टिमें महत्वहीन है...काल तो प्रदक्षिणा-पथको देखता है क्योंकि जीवनमें बदलते मौसमका कारण चरैवेति है; गति है....इसलिए देश-कालके सन्दर्भमें यह बात उठे या व्यक्ति-विश्वके, शताब्दीके बचे हुए वर्षोंकी अगली किसी भी तारीख़पर आप उँगली रखें—हाथ लगेगा एक समीकरण ही....उसे जो जिस तरह हल करेगा, भावीकी वैसी ही तसवीर उभर आयेगी...., वैसे प्रश्न स्वप्न बनानेका नहीं है, स्वप्न तक पहुँचनेका है और यह रास्ता कोई भी किसी भी तारीख़पर बना सकता है (चाहें तो ऋग्वेदको याद करें : 'वे नहीं रहे जो कल सुबह देखते थे, वे हम हैं जो आज सुबह देख रहे हैं और वे आ रहे हैं जो कल सुबह देखेंगे'....) लेकिन यह सही है कि पिछले दो-तिहाईने हमारे नाम कोई स्वप्न नहीं छोड़ा, केवल साँप-सीढ़ीके खेल-जैसा समीकरण हमें वसीयतमें मिला है....

आईए, उसे हल करें—आज शामका दीपक शुरूआत है, किसी एक सूर्य तक....

दीपावली : १९६७]

—रमेश बक्षी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन सवालोंमें प्रलय

■

शेष शताब्दीकी परिकल्पनाके बीच किसी निष्कर्ष, किसी सर्वश्रेष्ठ उत्तर या किसी सर्वेक्षणके लिए हमने ज्ञानोदयके लेखकोंसे प्रश्न नहीं पूछे थे लेकिन जब ऐसा लगा कि सारी वैज्ञानिक उपलब्धियोंके बीच सृजनकी जगह संहारने एक भयावहता फैला रखी है और हर ड्राइंगरूम में किसी-न-किसी विपद्का अस्थिपंजर बार-बार जबड़ा हिलाकर एक मारक दुश्चिन्तासे चलती हुई दुनिया को आतंकित किये जा रहा है तो इस जिज्ञासाने बल पकड़ा कि मन से, वचनसे, और कर्मसे उस अन्तिम बिन्दुपर हम क्या सोचेंगे, क्या बोलेंगे और उस क्षणकी तात्कालिकतामें क्या कर गुज़रेंगे,....। हमने तीन प्रश्न भाषाके हेरफेर सहित अलग-अलग उम्र, पद, प्रतिष्ठा, अनुभव और स्थितिके व्यक्तियों को भेजे। उत्तर हमने एक ही आवेशमें चाहा था—कि मनकी स्थिरता अथवा अस्थिरता प्रतिक्रियामें सामने आ सके !....चूँकि यह चिन्तनकी प्रक्रिया है, हम किसी भी तरहका 'उपसंहार' यहाँ नहीं देना चाहते। प्राप्त उत्तरोंका एक विवरण (प्रतिशतमें) अवश्य अन्यत्र देखेंगे, वह चिन्तनका केवल गणितीकरण है। अपेक्षा यह अवश्य है कि साहित्यकारोंके जिस सम्पन्न बुद्धिजीवी वर्गके स्वर यहाँ एकत्रित हैं उनके साथ यदि आप अपनी प्रतिक्रिया भी सामने रख लें तो उस मारक दुश्चिन्ताका आतंक निश्चित ही कम होगा।....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाप्ति से पहले,
कोई एक,
अन्तिम वाक्य…

—अनामिका, अन्विता अग्रवाल, अमृतलाल नागर, अमरजीतसिंह, अवध-नारायणसिंह, असग़र वजाहत, अहमद सलीम, इन्द्रनाथ मदान, इलाचन्द्र जोशी, कल्याणमल लोढ़ा, कंचनकुमार, काका हाथरसी, किरन जैन, कुन्तलकुमार जैन, कैलाश वाजपेयी, कृष्ण चराटे, कृष्णाचार्य, गंगाप्रसाद विमल, गिरिराज किशोर, गिरीश पाण्डेय, गुलाबदास ब्रोकर, घनश्याम रंजन, चन्द्रकान्त देवताले, जगदीश चतुर्वेदी, ज़फ़र अहमद, जितेन्द्रकुमार मित्तल, दण्डमूडि महीधर, धनंजय वर्मा, नगेन्द्र, परेश, प्रभाकर, माचवे, प्रमोद सिन्हा, प्रियदर्शी प्रकाश, बच्चन, बनारसीदास चतुर्वेदी, बालकृष्ण राव, बीना माथुर, भंवरमल सिंघी, भवानीप्रसाद मिश्र, मंगलेश डबराल, मधु राय, महीपसिंह, महेन्द्र भल्ला, मिर्ज़ा इस्माइल बेग, मोना गुलाटी, रणजीत, रमेश कुन्तलमेघ, रमेश सत्यार्थी, रामदास मिश्र, लीलाधर जगूड़ी, विष्णु प्रभाकर; सुमित्रानन्दन पन्त, श्याम परमार, हजारी प्रसाद द्विवेदी, हबीब कैफ़ी, हंसराज रहबर, हरिशंकर परसाई।

तीन प्रश्न :

१. यदि केवल दो मिनट बाद सारी दुनिया समाप्त होनेवाली हो तो आप तत्काल क्या करेंगे?
   या—
   अभी ऐसा लगा है कि सारी दुनिया कौलेप्स हो जायेगी। आप क्या करेंगे?—ज़ोरसे चीखेंगे? सहायताके लिए किसीको पुकारेंगे या जड़ हो जायेंगे?

२. यदि उस समय आप अपने अलावा किसी एकको बचा सकें तो किसे बचायेंगे: परिवार, आजीविका देनेवाली संस्था, मित्र-मण्डली या शासन तन्त्र को? या राष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री, मुख्य मन्त्री, माँ, पिता, बहन, भाई, प्रेमी, प्रेमिका, पति, पत्नी, पड़ोसी, अभिनेता या अभिनेत्री को?

३. आप वह कौनसा अन्तिम वाक्य बोलना चाहेंगे जिसे कालपान्तरके बाद लोग याद रख सकें या एक-एक पंक्ति प्रलयसे पहले बोलिए: वह मेरा अतीत था? यह मेरा वर्तमान है? वह मेरा भविष्य होता?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्तावन उत्तर :

अनामिका [श्रीमती] १-मैं जड़ हो जाऊँगी। २-मैं अपने पतिको बचाऊँगी। ३-यह मेरा वर्तमान है।

अन्विता अग्रवाल : १-क्या जड़ हो जायेंगी? हाँ। २-पिता ३-कोई जरूरी नहीं कि जीवन-क्रम हस्तरेखाओंके अनुसार चले!

अमृतलाल नागर : १-(पहले मिनिट में) हाय, मेरा यह उपन्यास पूरा न हुआ! (दूसरे मिनिट में)—श्रीमती, भागके चूरनका डिब्बा लाओ, अब देर न करो। २-यदि बचानेकी शक्ति होगी तो दुनियाको बचाऊँगा जिससे कि सब बच जाय, वरना यह प्रश्न ही निरर्थक हो जाता है। ३-इस प्रलयभूमिको छोड़कर यदि कोई अभिनव मनु उर्फ़ नूः अन्तरिक्षयानपर होकर जानेसे पहले मुझसे 'गुडबाई-चीरियो' करने आया तो कहूँगा, 'आजको सिर्फ़ आज ही में न जी डालना, कुछ कलकी भी सोचना। अन्यथा यह हाल होगा'।

अमरजीत सिंह : १-मैं कुछ भी फ़ैसला न कर पाता। २-प्रेमिका। ३-वह मेरा भविष्य होता।

अवधनारायण सिंह : १-आज यह दुनिया जिस ढंगसे चल रही है वह किसी भी संवेदनशील कविको जड़ बना देनेके लिए काफ़ी है। चीखना तथा सहायताकी याचना करना आज कोई अर्थ नहीं रखता है। आजकी इस दुनियाको देखकर कवि भवानी-प्रसाद मिश्रने लिखा है कि 'मैं जड़ हो जाना चाहता हूँ'। और जब सारी ही कौलेप्स हो जानेवाली हो तो जड़ताके अलावा कोई दूसरा विकल्प शेष हो ही नहीं सकता है। लिहाज़ा मैं ऐसी परिस्थिति उत्पन्न होनेपर जड़ बन जाना चाहूँगा। २-जब मैं स्वयं ही जड़ बन चुका होऊँगा तो किसी भी व्यक्ति-को चाहे वह कितना ही महान् अथवा आत्मीय क्यों न हो बचानेका सवाल ही नहीं उठता है। प्रलयके बाद बचा हुआ आदमी न राष्ट्रपति रहेगा, न प्रधान मन्त्री और न प्रेमी अथवा प्रेमिका ही। उस समय शायद कोई रिश्ता बचा भी रहेगा या नहीं, कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। अगर सम्भावना होती कि कोई सिनेमाघर अथवा कोई फ़िल्म-स्टूडियो शेष रह भी पायेगा तो अभिनेता या अभिनेत्रीको जड़ताके बावजूद बचानेकी बात सोची भी जा सकती थी। ३-यह कौलेप्स होता वर्तमान कितना अर्थवान् है।

असग़र वजाहत : १-सहायताके लिए किसे पुकारोगे? जो भी थोड़ी-बहुत सहायता कर सके। २-वह प्रेमिका होगी। क्योंकि दूसरे लोगोंमें-से किसीको बचा लेनेसे, बादमें काफ़ी बोर होनेका डर रहेगा। ३-यह मेरा वर्तमान है।

अहमद सलीम : १-आपने क़यामतका ज़िक्र छेड़ ही दिया आखिर। यह जानते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी कि क़यामतका ज़िक्र छिड़ेगा तो बात उसकी जवानी तक जायेगी। उर्दूका वह शेर तो आपने भी सुना ही होगा। यही :

'ज़िक्र जब छिड़ गया क़यामत का
बात पहुँची तेरी जवानी तक'

ऐसेमें चीखना कैसा? सहायताके लिए पुकारूँगा क्यों? मैं तो उर्दूके ही महाकवि 'इक़बाल' को याद करूँगा जो पहले ही फ़रमा गये हैं :

'अपने मन में डूबकर
पा जा सुराग़े-ज़िन्दगी'

सो, मैं क्षण भरके लिए अपने मनमें डूबकर ज़िन्दगीको ढूँढ़ना चाहूँगा। और हाँ-बिलकुल उसी क्षण, क़यामतकी उस घड़ीको शहरयारके शब्दोंमें यह कहकर टालना भी चाहूँगा कि :

'अभी नहीं, अभी पलकोंपे ख़्वाब मचलता है
अभी नहीं, अभी कम्बख़्त दिल धड़कता है'

२-और ज़ाहिर है जब दिलके धड़कनेकी बात बीचमें ही आ पड़ी है तो मैं बचानेके लिए प्रेमिकाका ही नाम लूँगा। अपने उस महबूबका, जिसके बारेमें मैं आपसे कुछ कहना चाहूँ तो बस यही कहूँगा कि :

'आबे-हयात की-सी
हर एक रविश है उसकी....'

३-और यह कि : ये मेरा वर्तमान है।

इन्द्रनाथ मदान : १-सोचना बन्द कर दूँगा। २. अपने नौकरको, जो मेरा

'उत्तर-शती'का चिन्तन प्रतिशत :

प्रश्न : १

- जड़ होनेका इरादा : २० प्रतिशत
- चीखनेकी तमन्ना : १२ प्रतिशत
- ठहाका लगाने, सिगरेट-शराब पीने या कविता-की इच्छा : १५ प्रतिशत
- किसीको पुकारनेका मन : १२ प्रतिशत
- अनिर्णयकी स्थिति : १६ प्रतिशत
- तरह-तरहके विचार : २५ प्रतिशत

प्रश्न : २

- किसीको भी नहीं : १५ प्रतिशत
- किसीको भी : ८ प्रतिशत
- प्रेमिका : २२ प्रतिशत
- प्रेमी : ६ प्रतिशत
- पति : ४ प्रतिशत
- पत्नी : ८ प्रतिशत
- माँ : ४ प्रतिशत
- पिता : १ प्रतिशत
- परिवार : १६ प्रतिशत
- मित्र-मण्डली : ४ प्रतिशत
- कुत्ता : २ प्रतिशत
- अन्य (गुणी व्यक्ति, गर्भवती स्त्री, मादा, नौकर, कामराज, सम्पादक आदि) : १० प्रतिशत

प्रश्न : ३

- कुछ-न-कुछ सोचा है : ६० प्रतिशत
- जो सोचना ही नहीं चाहते : ४० प्रतिशत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाना बनाता है, उसके बिना मुझे तकलीफ़ होगी। ३-इसका क्या फ़ायदा है? याद किया जाना बेकार है।

इलाचन्द्र जोशी : १-मैं इस नवीनतम परिस्थितिका हार्दिक स्वागत करूँगा—उस अपूर्व क्षणकी नयी संवेदनाकी निराली अनुभूतिके लिए। यह धरती अब वैसे भी जीने योग्य नहीं रह गयी है। इसके सारे भौतिक साधन समाप्त हो चले हैं, इसकी मानसिकता एक विकृत 'विशस सर्कल' के दायरेमें उलझकर रह गयी है और इसके अन्तरमें निहित अध्यात्म-तत्त्व किसी दूसरे ही 'प्लेन' में जा छिपा है। २-उस स्थितिमें किसीको बचा सकनेकी शक्ति तो शेष क्या रहेगी, पर यदि कुछ रही भी—तो भी मैं किसीको भी नहीं बचाना चाहूँगा—क्योंकि तब किसीको बचानेका कोई अर्थ ही नहीं रहेगा। ३-कल्पान्तरमें कौन किसकी याद रखेगा, जब कि कल्पमें ही कोई किसीकी बात याद रखना नहीं चाहता। फिर भी, शून्यमें ही सही, मैं अपनी यह आवाज़ छोड़ जाना चाहूँगा कि जो मुट्ठी-भर लोग बच गये हैं वे जबतक इस धरती-पर रहें प्रजनन-क्रियासे पूर्णतः विरत रहें और तबतक विवाह न करें जबतक उनके पाँव इस धरतीकी धूलमें धूसरित हैं—जबतक किसी नये ग्रहकी क्वाँरी मिट्टीको वे अपना नहीं लेते।

कल्याणमल लोढ़ा : १-किस तरह अपनेको बचाया जा सके। यदि नहीं, तो सरल[illegible] किस प्रकार प्राप्त हो। २-परिवारके अति[illegible] ऐसी स्थितिमें, किसी अन्यको बचाने[illegible] कल्पना भी नहीं कर सकता। मनुष्[illegible] व्यक्तित्व और उसके जीवनकी सर्वश्र[illegible] इकाई उसका परिवार है····वही उस[illegible] अपना जगत्, अपनी संस्था, अपनी म[illegible] अपना तन्त्र। ३-उपर्युक्त स्थितिमें ऐ[illegible] अन्तिम वाक्य कहना, जो कल्पान्तर त[illegible] याद रहनेकी क्षमता रखता हो, मेरे लिए [illegible] असम्भव होगा।

कंचन कुमार : १-मैं अपने-आप[illegible] 'कौलेप्स' होनेसे बचानेकी कोशिश करूँगा··· २-वैसे मैं किसी औरको बचानेके पक्षमें न[illegible] रहूँगा। फिर भी अगर आप उसे आवश्यक[illegible] मानते हों तो मैं अपने पोमेडियन शेल्[illegible] एक 'चान्स' दूँगा। क्योंकि मुझे डर [illegible] कि अगर मैं उसे बचानेकी कोशिश न [illegible] करूँ तो भी वह शायद बच जायेगा औ[illegible] उस हालतमें वह मुझे उसी नज़रसे देखने लगेगा, जिस नज़रसे कमलेश्वर देखता है। ३-ये दो स्थितियाँ अगर वाक़ई पैदा हो गयीं तो मुझसे अपने तीसरे प्रश्नके उत्तर[illegible] अपेक्षा न रखें। क्योंकि इस दुनियाको छोड़ने-से पहले अपने-आपको इस अखण्ड विश्व[illegible] राष्ट्रपति या प्रधान मन्त्री या तानाशाह—क्या घोषित करना चाहिए यह तय कर लेना मेरे लिए बहुत ज़रूरी होगा····।

काका हाथरसी : १-भगवान्से प्रार्थना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन सवालोंका कोलॉज

: मिर्ज़ा इस्माइल बेग़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
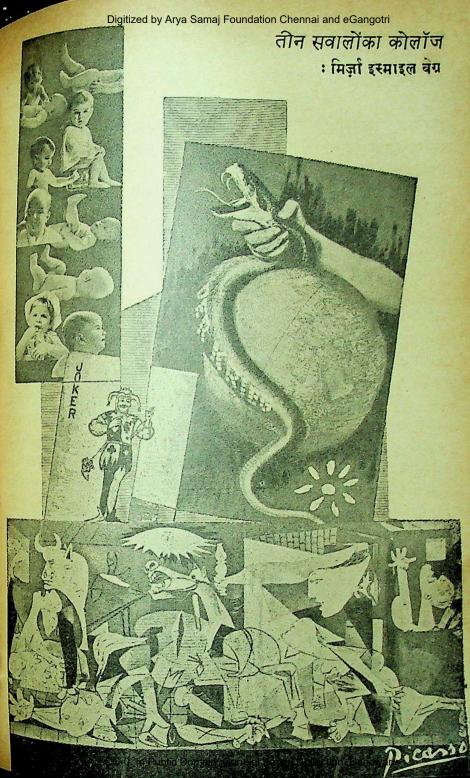
करूँगा कि अपनी कैबिनेटमें एक सीट काकाके लिए और एक काकीके लिए रिजर्व कर लेना। २-कामराजको बचाऊँगा। क्योंकि कामराज होंगे तो शासन-तन्त्र चालू कर ही लेंगे। शासन-तन्त्र चालू रहेगा तो आजीविकावाली संस्था अपने हाथमें आ ही जायेगी और आजीविका होगी तो नया परिवार बननेमें क्या देर लगी है। ३-हास्य और विनोदसे जीवनकी गर्दको झाड़ते रहो।

किरन जैन (श्रीमती) : ज़ोरसे चीखूँगी। २-प्रेमी। ३-यह मेरा वर्तमान है ?

कुन्तलकुमार जैन : १-प्रश्न अपने-आपसे मज़ाक़ करता हुआ है, वैसे अगर मैं जीवित रह जाता हूँ तो इस कौलेप्स होनेका स्वागत करूँगा और इस समूची क्रियाको बारीकीसे देखूंगा ? नहीं। इस विध्वंसपर तालियाँ बजाकर प्रसन्न होऊँगा। सहायतासे घृणा है। पुकारनेका प्रश्न ही नहीं उठता। २-इनमें-से कोई नहीं। किन्तु यदि कोई युवा गर्भवती स्त्री मिल गयी तो उसे बचाना चाहूँगा। ३-वह मेरा अतीत था, यह मेरा वर्तमान है और वह मेरा भविष्य होता-जैसी दार्शनिक मुद्राएँ उस समय मैं नहीं बनाऊँगा। अस्तित्व-के बचावका प्रश्न ही मेरे सामने महत्त्वपूर्ण होकर रहेगा।

कैलाश वाजपेयी : १-जड़ हो जाऊँगा। २-कोई नहीं। ३-चुप्पी।

कृष्ण चमाडे : १-सम्भवतः नहीं, क्योंकि चीखने-चिल्लानेकी आदत नहीं है, वरना इस दुनियामें प्रलय होनेसे ज़्यादा कष्टदायी हादसे हो चुके हैं। पुकारूँगा अपनी बेफ़िक्र तबियतको जिसके सहारे ज़िन्दा हूँ। २-पत्नी और प्रेमिका, जो कि एक ही स्त्री है। ३-अतीत : एक दु:ख-भरी कहानी। वर्तमान एक रोमांचक अनुभव, जो चाहकर भी लिखा न जा सकेगा। भविष्य : अनिश्चित...

कृष्णाचार्य : १-केवल बढ़ियासे बढ़िया चा, कॉफ़ी या दूध परिवारके सामने रख दूँगा—पीता-पिलाता रहूँगा और किसीको कुछ भी नहीं सोचने दूँगा। केवल प्रसन्न रहूँगा और सबको वैसा ही रखनेका उपक्रम करूँगा। २-किसी एकके बच रहनेका कोई अर्थ नहीं। वह केवल महाभारतके पाण्डवोंकी तरह आत्मघात ही करेगा। ३-जब सारी दुनिया समाप्त हो जाने-को है तब कोई वाक्य बोला ही क्यों जाय? वह वाक्य भी क्या अमर रह सकेगा ?

गंगाप्रसाद विमल : १-२-३-तीनों सवालों के जवाबमें मैं सिर्फ़ श्री रमेश बक्षीको गालियाँ दूँगा। उन्होंने इस भयानक परि-कल्पनाको सामने रखा है।

गिरिराज किशोर : १-व्यर्थ आतंकित है। और यदि होगा भी तो उसे 'भोगा' जायेगा। २-सम्पादक महोदय को। ३-इस प्रश्नका

[शेष पृष्ठ ३०७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ कृष्णार्जुन संवाद ॥ यह संवाद चल रहा है एक अन्तरिक्ष-यानमें, जो पृथ्वीके आसपास चक्कर लगा रहा है। अर्जुनके शब्द हैं: 'तुम अब मुझे धोखेमें नहीं रख सकते। तुम्हारी ठगीको मैं राईरत्ती पहचान चुका हूँ इसलिए दार्शनिकता और मानवकल्याणकी लच्छेदार बातोंकी आड़में शिकार खेलकर तुम अब मुझे धोखेमें नहीं रख सकते...।' और कृष्णने लम्बी साँस खींचकर उत्तर दिया—'यह मैं स्वयं भी अनुभव कर रहा हूँ कि आजकी स्थिति महाभारतकालीन स्थितिसे हज़ारों गुना उलझी हुई है और गीताज्ञान उसे सुलझानेमें तनिक भी सहायक नहीं हो सकता...।'

उ । त्त । र । गी । ता

इलाचन्द्र जोशी / कृत्रिम उपग्रहके ढंगका एक विचित्र यान पिछले कुछ दिनोंसे पृथ्वीकी परिक्रमा कर रहा था। उसमें कभी इन्द्रधनुषके सातों रंग चमकते दिखाई देते थे, कभी दो या तीन और कभी केवल एक ही रंग—हरा, लाल या पीला—उभरता हुआ नज़र आता था। और कभी कुल रंग ग़ायब हो जाते थे और केवल एक उज्ज्वल श्वेत बिन्दु चक्कर लगाता हुआ जान पड़ता था।

जो संवादपत्र अभीतक बन्द नहीं हुए थे, उनमें यह समाचार था कि अभीतक इस बातका पता नहीं चल पाया है कि यह अनोखा यान किस देश-द्वारा अन्तरिक्षमें प्रक्षेपित हुआ है और क्यों अभीतक किसी भी युद्धरत राष्ट्र-द्वारा गिराया नहीं जा सका है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तमें एक दिन किसी परमाणु-अनुसन्धान-केन्द्रमें काम करनेवाले एक उदीयमान वैज्ञानिकने स्वयं अपने द्वारा आविष्कृत एक विशेष एलेक्ट्रॉनिक कर्ण-यन्त्र-द्वारा सहसा यह पता लगा लिया कि उसी विशेष अन्तरिक्ष-यानसे दो व्यक्तियोंको आपसमें गुरु-गम्भीर वाणीमें कुछ बातें करते हुए सुनाई दे रहा है। उसने बताया कि वार्तालाप किसी ऐसी भाषामें हो रहा है जो या तो संस्कृत है या संस्कृतसे मिलती-जुलती है।

उस वैज्ञानिक युवकने एक संस्कृतके पण्डितके कानोंमें वह एलेक्ट्रॉनिक हेड-फ़ोन लगाया और एक विशेष पुर्ज़ेको कुछ घुमाया, जिससे सुदूर अन्तरिक्षसे आनेवाली उस आवाज़का घनत्व कई गुना अधिक बढ़ गया और एक-एक शब्द सुस्पष्ट सुनाई पड़ने लगा। पण्डितके चेहरेसे लगता था कि वह सुन-सुनकर अत्यन्त पुलकित और भाव-विभोर हो रहा है।

वह घण्टों आराम-कुरसीपर बैठे-बैठे बड़े मनोयोगसे उस वर्तालापको सुनता रहा। अपनी स्मृति-शक्तिकी तीक्ष्णता और कुशाग्रताके लिए वह प्रसिद्ध था। सुन चुकनेके बाद उसने सारी बातें अक्षर-अक्षर लिख डालीं और फिर उन्हें एक प्रसिद्ध पत्रमें छपा डाला। उसने बताया कि उस रहस्यमय अन्तरिक्ष-यानमें कृष्ण और अर्जुन बैठे हुए हैं और जो प्रलयंकर युद्ध संसारमें छिड़ा हुआ है उसीके विषयमें दोनों बातें कर रहे हैं।

उसकी बातपर किसीको भी विश्वास नहीं हुआ। पर मैं अत्यन्त कुतूहल और उत्सुकताका अनुभव कर रहा था। जैसे आव देखा न ताव, सीधे परमाणु-अनुसन्धान-केन्द्रमें जा पहुँचा और वैज्ञानिक युवकको किसी तरह राज़ी करके मैंने हेड-फ़ोन अपने कानोंसे लगाया। सुनकर चकित रह गया। बातें अच्छी तरह सुननेपर मेरा रहा-सहा अविश्वास जाता रहा। वास्तवमें दोनों कृष्ण और अर्जुन ही थे। दोनोंके बीच जो बातें मैंने सुनीं वे इस प्रकार थीं :

अर्जुन : वह देखो, देखो, केशव, नीचे पूर्वकी ओर वह कैसी प्रलयंकरी ज्वालाएँ धधक रही हैं! सामूहिक विनाशकी कैसी ताण्डव-लीला चल रही है! और यह सुनो, मूल युद्ध-क्षेत्रसे बहुत पीछे हटे हुए लोगोंकी कैसी हृदय-विदारक चीख-पुकार और कराह सुनाई दे रही है! बचाओ, बचाओ, कृष्ण, संसारको इस महानाशसे बचाओ! मैं न तो ये विकट दृश्य देखनेकी शक्ति रखता हूँ और न सामूहिक पीड़ाका यह मर्मान्तिक सम्मिलित स्वर ही सुन सकनेका धैर्य मुझमें शेष रह गया है!

कृष्ण : हाः! हाः! हाः! भूल गये अर्जुन, द्वापरमें जो युग-युगकी वाणी मैंने सुनायी थी? भूल गये मेरे असली रूप—विश्वरूप—को? याद आता है, तब मैंने क्या कहा था—

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो
लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः।
ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे
येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हे श्रीकृष्ण, दोनों सेनाओंके बीचमें रथ खड़ा कर दो।'... (जेमिनी १० में जान यंग और माइकेल केलिन्सकी अन्तरिक्ष-यात्रा।)

←— श्री कृष्ण ? नहीं चन्द्रतलपर उतरनेकी वेषभूषा, चेहरेपर स्क्रीनका भ्रम।

अर्जुन ? —→ नहीं, चन्द्रतलके लिए बोरिया-बिस्तर। चेहरा गतसन्देह।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूल गये यह बात ? अब भी तुम मुझे केवल अपना मानवीय सखा कृष्ण ही समझ रहे हो ? मेरे महाकालवाले उस प्रचण्ड रौद्र रूपकी याद करो, जिसे मैंने तुम्हें कुरुक्षेत्रकी युद्धभूमिमें दिखाया था।

अर्जुन : पर क्या आजकी इस सारी विश्व-विनाशी लीलाके भी मूलमें तुम्हीं हो ?

कृष्ण : हूँ - हूँ - हूँ ! मेरी विकट विभीषिका-भरी व्यंग्योक्तिसे मत घबराओ। मैं वही चिर-पुरातन पुरुष हूँ, जो चिर-नवीन भी है।

अर्जुन : पर चिर-पुरातन पुरुषका मूल धर्म क्या केवल सामूहिक ध्वंस ही है ? मानवीय सृष्टि क्या चिरकाल—युग-युग तक—केवल पारस्परिक विद्वेष और विनाशका ही नाटच रचती चली जायेगी ? क्या विश्वरचनाका एकमात्र उद्देश्य यही है कि मनुष्य अपनी प्रगतिको अपने-आप समयान्तरसे मिट्टीमें मिलाता चला जाये ? द्वापरसे लेकर आज तक हज़ारों वर्ष बीत चुके हैं। इस बीच मनुष्यके चमत्कारी मस्तिष्कने सामाजिक, धार्मिक, दार्शनिक, राजनीतिक और वैज्ञानिक क्षेत्रोंमें विभिन्न प्रकारके आश्चर्यजनक आविष्कार किये हैं। किस लिए ? मानव-जगत्की ज्ञान-वृद्धि, व्यक्ति और समाजकी सुख-सुविधा और स्थायी शान्तिकी सुरक्षाके लिए ? नहीं ! केवल अपने झूठे अहम्के विस्फोटके लिए ! तब ऐसी आत्मघाती सृष्टिके लिए ईश्वरी प्रेरणाकी आवश्यकता ही कहाँ रही ? तुमने तो बराबर मुझे यही उपदेश दिया कि 'मैं ही इस जगत्-चक्रकी प्रगति और विध्वंसका मूल प्रेरक हूँ।' तो क्या तुम्हारी इस प्रेरणाकी परिणति हर युगमें यही रहेगी ? क्या बराबर, प्रत्येक युगमें, कुरुक्षेत्रका दृश्य दुहराते रहनेकी प्रेरणा मानव-समाजको देते रहोगे ? मानव-जीवन-प्रगतिकी किसी भी सार्थक उपलब्धिके पूर्व ही हर युगमें व्यक्तियों और राष्ट्रोंके बीच पारस्परिक विद्वेष, व्यापक अशान्ति और सामूहिक नरमेधके महाप्रलय-यज्ञकी पूर्ति करते रहोगे ?

कृष्ण : इतना क्रोध मत करो, पार्थ ! मैं तुम्हें फिर वही पुराना उपदेश देना चाहूँगा कि :

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप॥

अर्जुन : (पहलेसे अधिक तीखे स्वरमें) मुझे घृणा हो गयी है तुम्हारे इस लिपे-पिटाये उपदेशसे। युग-युगके मानवीय इतिहासकी ऐसी लोमहर्षक परिणतिको आँखोंसे प्रत्यक्ष देखते हुए भी मैं उत्तेजित न होऊँ ? मेरी इस स्वाभाविक उत्तेजनाको तुम 'क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं' कहकर टाल जाना चाहते हो ! तुम ईश्वर नहीं, शैतान हो ! तुम्हारी सृष्टिका मूल प्रेरणा-स्रोत ही जीवोंका पीड़न है। 'परंतप' मैं नहीं, तुम हो। तुम ईश्वर नहीं, विकट शैतान हो ! महारुद्र-पिशाच हो ! यदि सचमुच तुम इस सारी भूत-सृष्टिके रचयिता हो तो तुमने यह सृष्टि जीवोंके कल्याणके लिए नहीं, विशुद्ध आत्मतृप्तिके लिए रची है। और तुम्हारी यह आत्मतृप्ति चरम बिन्दुको तब पहुँचती है जब किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युगकी लम्बी अवधि तक तुम जीवोंके सर्वोच्च प्रतिनिधि मनुष्यको विचित्र प्रलोभनों और निरर्थक महत्त्वाकांक्षाओंमें उलझाकर, उसके अन्तरमें वैयक्तिक और सामूहिक रूपसे असन्तोष और अशान्तिके कीटाणुओंका जाल बिछाकर, उसे तिल-तिल करके कचोटते रहनेके बाद, अन्तमें युगान्तकी सन्ध्यामें महायुद्धोंके रूपमें सामूहिक कालाग्निमें झोंक देते हो। तब कितना आन्तरिक आह्लाद होता है तुम्हें ! तुम्हारा रोम-रोम तब एक दानवीय हर्षातिरेकसे पुलकित होकर नाचने लगता है। इस समय भी, जब सारा मानवजगत् अनन्तकालीन विनाशकी लपटोंकी लपेटमें धायँ-धायँ करके जल रहा है, तब सामूहिक नरमेधकी इस पूर्णाहुतिके अवसरपर भी मैं तुम्हारी आँखोंमें करोड़ों शैतानोंके उल्लासका ताण्डव देख रहा हूँ ! मैं देख रहा हूँ····

कृष्ण : ठहरो, ठहरो, अर्जुन, इतनी जल्दी मत करो। पहले मेरी बात तो सुन लो !

अर्जुन : बहुत सुन चुका हूँ तुम्हारी घोर निष्ठुर छलनासे भरी बातें ! युग-युगसे
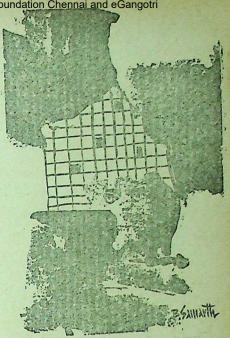
• आदिम राग

युद्ध फिर छिड़ गया····
यात्रियों से लकदक जहाज़ अब डूबेंगे
····आ····हा····हा····
चिनार का पीला दिन क्रॉस पर टाँगा जायेगा
लौहफेन उगलेगा समुद्र
डिग डिग डिगा डिगा
मौसम सिगा सिगा
सण्डे कॉमिक्स से कॉफ़ी के कप तक का सुख
मेज़पोश पर बिखेरोगे ? आख़िर क्यों ?
कमर में हाथ डाल
आओ, हम दोनों आख़िरी बार हँस लें····।

—रवीन्द्रनाथ त्यागी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारी ही वाणी सुनता चला आ रहा हूँ। प्रत्येक पीड़ित युगका कभी शान्त न होनेवाला सन्त्रास जब चरम सीमा तक पहुंच जाता है, तब तुम्हारा यही घोर पैशाचिक रूप, पृथ्वीके चिर-काल सताये हुए प्राणियोंकी छातियोंको रौंदता हुआ, अपने मर्मान्तिक, क्रूर अट्टहाससे महाकाशसे लेकर पृथ्वीकी प्रत्येक कन्दराको गुँजाता रहता है।

तुमने प्रत्येक युगमें महाविनाशकी प्रेरणा मानवात्मामें भरी है। कुरुक्षेत्रमें तुमने मेरे भटके हुए अन्तरमें इसी महानाशका मन्त्र जगाया था; तैमूर, हलाकू और चंगेजके युगोंमें तुमने अपने दानव-प्रतिनिधियोंके अन्तरमें महामरणका यही राग भरा था, विगत दो विश्व-महायुद्धोंमें तुमने इसी उद्देश्यसे झूठे ज्ञानसे प्रमत्त, घोर अहंवादी विश्व-नायकोंके अन्तरमें यही महामारक मन्त्र फूँका था, और आज भी युग-युगसे भटके हुए मनुष्यके शान्ति-सम्बन्धी सारे प्रयत्नोंको झूठा करके तुमने महाप्रलयका वह विकटतम नारकीय दृश्य उपस्थित किया है जिसकी कल्पना शायद तुमने भी पहले कभी नहीं की होगी !

कृष्ण : इसमें क्या केवल मेरा ही हाथ है, मनुष्यका नहीं ? युग-मानवके भीतर जिन प्रवृत्तियोंका प्राधान्य अधिक रहता है वे, प्रकृतिके नियमसे, अपने-आप गुणात्मक रूपसे उभरती हुई, अपनी स्वाभाविक परिणतिको, जाने-अनजाने, चरम स्थिति तक पहुँचाये बिना चैन नहीं लेतीं। जो दृश्य तुम आज देख रहे हो वह उसी प्राकृतिक नियम-का परिणाम है...मैं तो निमित्त-मात्र तटस्थ द्रष्टा हूँ।

अर्जुन : तुम अब झूठ भी बोलने लगे। कुरुक्षेत्रके महायुद्धमें तुमने मुझसे कहा था : 'मैं पहले ही विरोधी पक्षके इन सभी वीरों-को मार चुका हूँ, तुम्हें केवल निमित्त बनना है।' 'निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्।' और अब तुम स्वयं 'अपनेको निमित्त-मात्र' कहने लगे हो !....

कृष्ण : तनिक धैर्य और विवेकसे काम लो, धनंजय ! मेरी तबकी और आजकी बातोंमें तुम्हें आत्मखण्डन लग सकता है, पर वास्तविकता ऐसी नहीं है। एक ही सत्यके अनेक पहलू होते हैं। अलग-अलग सन्दर्भोंमें एक बात अपने अर्थ बदल सकती है। कुरुक्षेत्रमें मैंने अवश्य तुमसे यह कहा था कि मैं तुम्हारे शत्रुओंको पहले ही मार चुका हूँ। इस बातसे मेरा आशय यह था कि मैं उन्हें तात्त्विक रूपसे मार चुका और तुम उन्हें शारीरिक रूपसे मारनेके निमित्त बनो। पर यह बात तब मैंने तुम्हें नहीं समझायी थी कि तुम्हारे उन शत्रुओंको तात्त्विक रूपसे मारनेमें मैं भी निमित्त-मात्र हूँ, क्योंकि वे लोग मेरे द्वारा नहीं, अपने कर्मों, कुप्रवृत्तियों और अशुभ चिन्तनोंके कारण, सभी कर्मोंके फलाफलका निर्णय करनेवाली मूल प्रकृतिके पूर्व-निर्धारित नियमोंके फलस्वरूप, मारे जा चुके थे। प्रकृतिके अपने स्वतन्त्र-निर्धारित नियम हैं, उन नियमोंकी मूल-परिचालिका वही है। मैं उसके कामोंमें भरसक हस्तक्षेप नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता। और उसी प्रकृतिके नियमोंसे आज फिर सारी पृथ्वीमें ध्वंसलीला मची हुई है।

अर्जुन : तुम भरसक हस्तक्षेप नहीं करते—माना, पर चाहनेपर प्रकृतिकी ध्वंसलीलापर रोक तो लगा ही सकते हो!

कृष्ण : पर मैं ऐसा क्यों चाहूँ? प्रकृति यद्यपि किसी हद तक मेरी ही मायासे प्रभावित है, तथापि मुझे उसके स्वतन्त्र विवेकपर पूरा विश्वास है और उसकी किसी भी योजनाको मैं निरर्थक नहीं मानता—उसकी व्यापक संहार-लीलाको भी नहीं!

अर्जुन : इस सामूहिक संहार-लीलाकी सार्थकता तुम किस बातपर मानते हो?

कृष्ण : पहला कारण तो यह है कि सृष्टिके मूलमें ही संहारका तत्त्व निहित है। यदि संहार हो ही नहीं, और सृजन-चक्र अबाध-गतिसे निरन्तर बढ़ता चला जाये, तो जीवनका सारा रस-वैचित्र्य ही जाता रहे और जी उबानेवाली एकरसता मनुष्यके प्राणोंको घुटनसे भरकर, उसकी आत्माके मूल स्रोतको ही सुखा डाले। असल बात यह है कि सृष्टि और संहारसे सम्बन्धित प्रश्न अत्यन्त गहन और जटिल हैं। उनके रहस्यको तुम्हें समझा पाना तो दूरकी बात, स्वयं मैं भी समझनेका प्रयत्न करते हुए अकसर चक्करमें पड़ जाता हूँ। फिर भी इतना तो मैं तुम्हें विश्वास दिला ही सकता हूँ कि संहार—चाहे वह खण्डित हो या पूर्ण—कभी अनन्तकालीन विनाश नहीं हो सकता। हर संहारके बाद ह्रासका दौर आरम्भ होता है, और जब वह सामूहिक ह्रास भी एक निश्चित बिन्दु तक पहुँच जाता है तब वह अपनी ही कर्म-गतिके फलस्वरूप सामूहिक संहारमें परिणत हो जाता है। उस सामूहिक संहारके बाद जब सृष्टिका नया उद्यम आरम्भ होता है तब पाया जाता है कि जीव-जगत् अपनी पिछली ह्रासोन्मूलक प्रवृत्तियोंसे खोयी हुई मारसे नयी शिक्षा लेता हुआ, विकासकी उन्नततर दिशाको पकड़ता है। यह मैं जानता हूँ, और इसी कारण प्रलय-लीलाका उपस्थित दृश्य देखते हुए भी मैं विचलित नहीं हो रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि प्रकृति जो-कुछ भी करती है वह अन्ततः सामूहिक जीव-कल्याण-के ही निमित्त होता है।

तनिक सोचो तो सही कि तुम्हारी इस छोटी-सी पृथ्वीमें जिस तेज़ीसे जनसंख्या बढ़ती चली जा रही है, यदि वही क्रम चलता रहा तो एक दिन यहाँ आवासके लिए स्थानकी बात तो दूर रही, ज़मीनपर पाँव रखनेके लिए भी मानव-प्राणियोंको ठौर नहीं मिल सकेगा। आज मनुष्य-जाति जितनी भी विकट समस्याओंसे उलझी हुई है उन सबके मूलमें जन-संख्याकी अभूतपूर्व वृद्धि है। न पृथ्वीके पास इतने लोगोंको खिलानेके पर्याप्त साधन शेष रह गये हैं, न खेलानेके। तब पृथ्वीको फिरसे हरा-भरा करने और मानव-प्राणियोंको पारस्परिक होड़ और विद्वेषसे मुक्त करके, उन्हें बाहर और अन्तरसे सुखी, सन्तुष्ट, समृद्ध और सच्चे अर्थोंमें विवेकशील बनानेकी सम्भावना ही पूर्णतः नष्ट हो जायेगी। इसलिए यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामूहिक संहार पृथ्वीके निवासियोंके लिए वरदान भी बन सकता है।

अर्जुन : तुमने अभी खिलाने और खेलानेकी बात कही। 'खिलाने' का अर्थ तो समझमें आता है, पर 'खेलाने' से तुम्हारा तात्पर्य क्या है?

कृष्ण : 'खेलाने' से मेरा तात्पर्य है—प्रकृतिके मूल कोषमें आनन्दका जो मूलतत्त्व निहित है—जो व्यक्ति या समूहकी चेतनामें कभी अर्द्धस्फुट रूपसे खिलता और खुलता है, कभी पूर्णत: प्रस्फुटित हो जाता है, और कभी एकदम बन्द पड़ा रहता है—उसके नये-नये आयामोंको परत-दर-परत उघाड़ते हुए, मानव-प्राणीको धीरे-धीरे सृष्टिके मूल रहस्यसे परिचित कराते जाना। केवल खाने या खिलानेकी प्रवृत्ति मनुष्यके भीतर प्रकृतिके स्थूल और निश्चेतन रूपने डाली है। पर स्वयं मनुष्यकी अवचेतना जानती है कि इस स्थूल खाद्यकी आवश्यकता प्राणीको आदिकालसे एक ऐसे विकट दासत्वकी विवशतामें बाँधे हुए है, जो उसे खेलनेकी तनिक भी छूट नहीं देना चाहता। यही स्थूल आवश्यकता मनुष्यकी युग-युगीन अशान्ति, असन्तोष, व्यक्तियों और समूहोंके पारस्परिक संघर्ष, अन्तर-राष्ट्रीय युद्धों और महायुद्धोंका मूल कारण बनी हुई है। इसी स्थूल आवश्यकताके दो जगद्दल पाटोंके बीच पिसते रहनेसे मानव-प्राणीको मुक्तिका अहसास नहीं हो पाता। विशुद्ध सौन्दर्यानुभूति और विशुद्ध आनन्दकी अनुभूति और अभिव्यक्तिकी तीव्र इच्छा मनमें रहते हुए भी वह अवकाशसे उसका उपयोग ही नहीं कर पाता है और धीरे-धीरे उसकी चेतना इस क़दर जड़ हो जाती है कि उसका आनन्दमय कोष ही एकदम बन्द हो जाता है। और वह आनन्दानुभूति की सहज उपलब्धि न हो पानेसे, उस दिव्य संवेदनाको अयथार्थ और असम्भावित समझकर, उसे महत्त्वहीन घोषित करता हुआ, उसका मज़ाक़ उड़ाने लगता है। जो एकमात्र संवेदना अरबों-खरबों बरसोंसे विकास और ह्रासकी क्रमिक चक्र-प्रगतिका एकमात्र लक्ष्य और प्रकटमें ऊबड़-खाबड़ लगनेवाले बिखरे हुए जीवनकी चरम सार्थकता और चरम उपलब्धि है, उसे आज सभ्यताके सबसे ऊँचे पिरामिडकी चोटीसे लुढ़कता हुआ मनुष्य केवल एक पौराणिक कल्पना और मूर्खोंका अनावश्यक प्रलाप मान रहा है। इससे स्पष्ट है कि मानवीय सभ्यताके चेहरेके ऊपरी चाकचिक्यके भीतर कोढ़का कीड़ा घुस गया है....

अर्जुन : इसलिए सामूहिक मानव-संहार 'वरदान' सिद्ध हो सकता है—यही कहना चाहते हो न तुम? वाह कृष्ण भैया, वाह! तुम पैदा होनेके समयसे लेकर आज तक वही छलियाके छलिया ही बने रहे! मैं अब तुम्हें खूब जान चुका हूँ। कुरुक्षेत्रके युद्धमें मैं तुम्हारा यह छलिया-रूप देख ही न पाया, अपनी उस निपट मूर्खताके लिए मैं आज भी अपने-आपको क्षमा नहीं कर पा रहा हूँ। यदि मैंने तब तुम्हारी प्रवृत्तिकी सहज धूर्तताका तनिक भी आभास पा लिया होता तो महाभारतका युद्ध न हुआ होता, और, और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते, इतिहास क्या करवटें लेता।

जो भी हो, आज तुम अब मुझे धोखेमें नहीं रख सकते। तुम्हारी ठगीको मैं राई-रत्ती पहचान चुका हूँ। इसलिए दार्शनिकता और मानव-कल्याणकी लच्छेदार बातोंकी आड़में शिकार खेलकर तुम अब मुझे धोखे-में नहीं रख सकते। मैंने आज जीवनके यथार्थके नये आयामको पकड़ लिया है। और उस नये आयामसे परिचित होनेपर मुझे तुम्हारी सारी ऐंशी माया एकदम ढकोसलेसे भरी मालूम होने लगी है। मेरी आजकी खीझ और पीड़ाका यही कारण है।

तुम्हें याद होगा, दस वर्ष पहले हम दोनों आजकी ही तरह एक अदृश्य अन्तरिक्ष-यानमें सवार होकर, पृथ्वीकी केवल परिक्रमा ही करने नहीं, वरन् पृथ्वीके आजके जीवनके बहिरंग और अन्तरंगसे परिचित होनेके लिए धरतीपर, आजके बहुरूपी मानव-जीवन प्रवाहके बीचमें कूद पड़े थे। तब भी हम आज-की ही तरह अदृश्य और अज्ञात रूपमें विचर रहे थे। और जगत्-चक्रकी एक दूसरी ही परिधिसे पृथ्वी और मानव-जीवनका निरीक्षण कर रहे थे। तुम अलग अपनी निराली धुनमें मस्त रहकर कभी व्रज-विहार कर आते थे, कभी द्वारकाकी सैर करने चले जाते थे, कभी हिमालय और सीमान्तके पार चले जाते थे, कभी पश्चिमी सागरके आर-पार। पर मैं आधुनिकतम जीवनकी यथा-र्थताके अनुभव प्राप्त करनेकी चिन्तामें था। इसलिए मैं तुमसे अलग होकर, आधुनिक नगर-जीवनकी भीड़में घुसकर, आजके सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवनका अदृश्य द्रष्टा और अज्ञात उपभोक्ता बनना चाहता था। राजनीतिक जीवनका सारा चक्कर तो मैं दो ही दिनमें समझ गया। गहन कूटनीति-के नामपर आजके अहंमन्य राजनीतिज्ञके बचकाने तौर-तरीक़े देखकर मुझे हँसी छूटती थी। पर जब मैं सांस्कृतिक जीवनके क़िलेके भीतर घुसा तब उसके निवासियोंकी बातें सुनकर मेरे छक्के छूट गये।

सबसे पहले मैं दिल्लीमें उतरा था। मेरे बसाये हुए पुराने इन्द्रप्रस्थका नया संस्करण कैसा बना है, यह देखने और जाननेकी तीव्र उत्सुकता मेरे मनमें बहुत दिनोंसे थी। जो हो, सन्ध्याको बिजलीके लट्टुओं और नलि-काओंकी जगमगाहटके बीच मैं जब कनाट-प्लेस पहुँचा तो पहली ही दृष्टि एक भव्य चाय-घरमें गयी। अपना अदृश्य रूप त्याग कर मैंने अपनेको एक आधुनिक सुसज्जित व्यक्तिके उपयुक्त वस्त्रोंसे लैस कर लिया और एक चौड़ी-सी गोलमेज़के एक किनारे बैठ गया। मेज़को घेरकर कुछ नवयुवक बैठे हुए थे। संयोगसे उस समय चर्चा 'ईश्वर' और 'धर्म' पर चल रही थी।

सहसा एक 'बिगड़ेदिल' युवक बोल उठा : 'ईश्वर मर गया है, तुम लोगोंको अभीतक इतनी भी खबर नहीं है? जो मर चुका हो, उसकी चर्चा चलाकर क्यों बोर कर रहे हो!'

तत्काल एक दूसरा तरुण आधी पी हुई चायके प्यालेको बायें सरकाते हुए बोल उठा : 'स्साला कभी पैदा भी हुआ था जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर गया है !'

तीसरा नवयुवक, जो चाय नहीं पी रहा था और कुरसीपर अधलेटा हुआ-सा बैठा था, सहसा उठ बैठा और बोला : 'क्यों, इतनी जल्दी भूल गये कि तुम लोगोंका आदि-गुरु टी० एस० ईलियट भगवद्गीताका महत्त्व घोषित कर गया है। और गीतामें केवल अजन्मा और निराकार ईश्वरका ही अस्तित्व प्रमाणित नहीं किया गया है, बल्कि उसके मनुष्य-रूपमें अवतरित होनेकी बात भी घोषित की गयी है। जिस कृष्णको तुमने मनुष्य समझा है, वही था वह अवतार, समझे ?'—बोलते हुए उस युवककी आँखोंके कोनोंमें व्यंग्यकी-सी तीखी मुसकान झलक रही थी।

दूसरा बोला : 'तुम स्साले, सिनिक ही नहीं, नम्बरी वह भी हो। चले हैं सोलह हज़ार गोपियोंके रसिया कृष्णके ईश्वरत्वका गुण गाने ! जानते हो, तुम्हारा वह कृष्ण कितना बड़ा धूर्त और आत्मप्रचारक था। किसी अपने पिट्ठूसे गीता लिखवाकर उसने अपनेको ईश्वरसे भी बड़ा और शक्तिशाली प्रचारित किया है। उसने कहा है कि वह साधुओंके परित्राण, दुष्टोंके विनाश और धर्मकी रक्षाके लिए युग-युगमें अवतरित होता रहता है। किस युगमें किन साधुओंका परित्राण उसने किया ? अखाड़ेवाले भोजन-भट्ट साधुओंको छोड़कर उसने कब किस भले आदमीका हित किया ? युग-युगमें यथार्थद्रष्टा लोग देखते आये हैं कि हर बार इस दुनियामें धूर्तों और गुण्डोंका ही बोलबाला रहा। जो लोग वास्तविक अर्थमें सच्चे, ईमानदार, प[...] पीड़नसे विमुख और पर-हितमें रत रहे हैं, [...] ही बराबर इस धूर्तोंकी दुनियामें मार [...] चले आये हैं। सत्पुरुषोंके परित्राण और [...] के दलनवाली बात एक बार नहीं, हर [...] झूठी सिद्ध हुई है। कृष्ण केवल एक ही [...] अवतरित हुआ था और उस बार भी [...] किसी भी कल्याणकारी योजनामें सफ[...] नहीं पायी, पाण्डवोंको जीवन-भर महा[...] में झोंकनेवालोंका वह कुछ भी नहीं बिग[ाड़] सका। चिर-कालके निर्यातनोंसे थके-[...] पाण्डवोंको महायुद्धके लिए भड़काकर [...] किसका भला किया ? मानवताका ? [...] महायुद्धके परिणामस्वरूप जन-साधार[ण] [...] जो हर दृष्टिसे दुर्गति हुई वह किसीसे छि[पी] नहीं है। केवल सगे-सम्बन्धियोंकी सामूहि[क] हत्याके शोकसे ही मानवता विकल नहीं हु[ई], बल्कि अन्न, धन, अनुशासन और प्रशा[सन-] व्यवस्थासे रहित होकर सारा भार[तीय] समाज भ्रष्टाचारियों और दुराचारि[यों]की ज्यादतियोंसे त्राहि-त्राहि कर उठा। क[्या] सचमुच कृष्णने पाण्डवोंका हित किया ? [...] मत भूलो कि युद्धके अन्तमें महाग्लानि [और] महाशोकसे पीड़ित होकर वे हिमाल[य] गलने चले गये। स्वयं अपने सगे-सम्ब[न्धी] यादवोंको तुम्हारा कृष्ण पारस्परिक विना[श] से बचा न पाया और अन्तमें एक साधार[ण] व्याधके शरसे वह मारा गया। इ[...] असहाय और इतना निःशक्त हो गया था [...] तुम्हारा पुराण-पुरुष—कृष्ण ! इन बातों[से] क्या यह सुस्पष्ट प्रमाणित नहीं होता [...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर नामकी किसी आत्माका अस्तित्व न पहले था, न आज है ? मनुष्य अपने कर्मोंके लिए स्वतन्त्र है और निश्चित विनाशकी ओर मनमाने ढंगसे अग्रसर होते रहनेके लिए भी। अर्थात् व्यक्तिको उच्छृंखल आचरणकी पूरी छूट है। धर्म, नीति, परोपकार, समाज-कल्याण सब निरे ढोंग हैं। इसलिए आओ, हम सब नंगे ही नाचें, तबतक जबतक हमारा अस्तित्व ही पूर्णतः विलीन नहीं हो जाता। मानव-जातिका न कभी उद्धार हो सकेगा न सुधार। वह युग-युगमें इसी तरह गलती-सड़ती रहेगी।'

इतना कहते ही वह युवक सहसा उठकर चाय-घरके बाहर चला गया। मैं दंग था। पहले ही दिन आधुनिक मानवके निकट सम्पर्कमें आनेपर मुझे ये चुभती हुई बातें सुननेको मिलीं और जीवन-सत्यके एक नये और घोर यथार्थ पहलूकी ओर मेरी दृष्टि गयी।

तबसे कितनी ही बार मुझे विभिन्न स्थानोंमें आजके बौद्धिक मनुष्यके विचारों और समस्याओंसे परिचित होनेका अवसर मिला है और साथ ही जन-साधारणके प्रतिदिनके जीवनकी कठिनाइयों और परेशानियोंकी भी यथार्थ जानकारी मैंने प्राप्त की है। और अब देख रहा हूँ, सामूहिक विनाशके इस दुर्निवार पागलपनका प्रकोप! सब-कुछ देखने, सुनने और समझनेके बाद आज मैं भी इसी परिणामपर पहुँचा हूँ कि चिरकालिक दुःख, पीड़न, यन्त्रणा, अन्याय और अत्याचार ही मानवीय सृष्टिका मूल उद्देश्य है। मनुष्य ज्यों-ज्यों अधिकाधिक बौद्धिक और विवेकशील होता जायेगा त्यों-त्यों उसके कष्टोंका 'कोटा' भी बढ़ता चला जायेगा, और विवेकहीन धूर्तों, दुष्टों और अत्याचारियोंका ही सदा, सभी युगोंमें बोलबाला रहेगा। ईश्वरीय न्याय और धार्मिक विधान एकदम असम्भावित, अविश्वसनीय और अप्रभावी हैं।

कृष्ण : (एक लम्बी साँस खींचकर) मैं देख रहा हूँ, अर्जुन, कि मैंने कुरुक्षेत्रमें तुम्हें जो ज्ञान बताया था वह शायद अवसरानुकूल नहीं था; और आज तो उसे दुहरानेका कोई अर्थ ही शेष नहीं रह गया है। क्योंकि यह मैं स्वयं भी अनुभव कर रहा हूँ कि आजकी स्थिति महाभारतकालीन स्थितिसे हज़ारों गुना अधिक उलझी हुई है, और गीता-ज्ञान उसे सुलझानेमें तनिक भी सहायक नहीं हो सकता। चाय-घरमें मेरे सम्बन्धमें तुमने जो भी बातें सुनी हैं उनमें-से एकका भी खण्डन मैं अपनी सफ़ाईमें नहीं करूँगा, क्योंकि जो भी बातें मैं उन आरोपोंकी सफ़ाईमें कहूँगा उनपर आज कोई भी विश्वास नहीं करेगा—एक नादान बच्चेसे लेकर परम विवेकी प्रौढ़ तक। जब तुम्हीं आधुनिक जीवनके सभी पहलुओं, सभी तथ्यों और विचारोंसे परिचित होनेपर भी इस क़दर आस्थाशून्य बन गये हो, तब इस सामूहिक पागलपनके बीच सृष्टि, स्थिति और प्रलयसे सम्बन्धित कोई भी उदात्त वाणी जन-साधारणमें परिहसित हुए बिना कैसे रह सकती है! इसलिए इस महाप्रलयके दृश्यके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीच महामानव ही श्रेयस्कर है। फिर भी केवल एक बात तुम्हारे कानोंमें डाल देना चाहता हूँ—क्योंकि सब-कुछके बावजूद तुम मेरे जन्म-जन्मके प्रिय सखा रहे हो, आज भी हो और आगे भी रहोगे। तुम्हारी सभी बातोंके उत्तरमें मैं इतना ही कहना चाहूँगा कि जीवन और जगत्के आदि-अन्त-रहित विराट् चक्रके सम्बन्धमें तुम जब भी सोचो या बात करो तब केवल इतना-सा ध्यान रखना कि मानवीय सभ्यताके पिछले पाँच-सात हज़ार वर्षोंका इतिहास इस महा-विषय-को समझनेके लिए उपयुक्त पृष्ठभूमि कभी नहीं बन सकता--ठीक उसी तरह जिस प्रकार एक पाँच-सात दिनके बच्चेकी जीवन-चर्या देखकर उसके भूत, वर्तमान और भविष्यकी गति-विधि, चिन्तन-चक्र और अन्तिम परिणतिका अनुमान कुछ छिटपुट मनोवैज्ञानिक लक्षणोंसे लगाना अत्यन्त हास्यास्पद है। सारी मानवता अभीतक विकासकी अति-दीर्घकालीन प्रगतिके निपट बचकाने दौरसे होकर गुज़र रही है। तथा-कथित ज्ञान-विज्ञानके जिन कंकरोंसे वह महाजीवनके असीम महासागरके तटपर इतने दिनों तक खेलती आयी है, वे सब आज, महाप्रकृतिके किन्हीं विशेष नियमोंके फलस्वरूप, मारक रूपसे या तो रेडियम-धर्मी हो गये हैं या तीव्र विद्युत्वाही। अतएव मानव-जातिका तात्कालिक सामूहिक विनाश तो निश्चित है ही, पर उस विनाशसे मानवीय-तत्त्वोंका लोप अन्तिम रूपसे नहीं हो जायेगा।

अर्जुन : क्या होगा तब उस सामूहिक विनाशके बाद ?

कृष्ण : तब मानवता पूर्णतः नष्ट हो जायेगी, ऐसा मैं नहीं मानता। मैं मार्क्सके इस सिद्धान्तको भी नहीं मानता कि तब करोड़ों चीनी बचे रहेंगे और सारे संसारमें माओवाद फैल जायेगा। माओवाद ही आज की दुनियाके विनाशके मूल बीज अपने भीतर छिपाये था और परिणामस्वरूप इस महायुद्ध के बाद माओवादी तत्त्वोंका पूर्ण उन्मूलन सबसे पहले हो जायेगा। और तब पूरी पृथ्वी में मानव-जीवनके जो भी रूप और तत्त्व शेष रह जायेंगे, उनमें बड़ी तीव्रतासे परिष्करण की प्रक्रिया आरम्भ हो जायेगी। पिछली सामूहिक भूलोंसे लाभ उठाकर नयी मानवता संगठित होकर धीरे-धीरे वास्तविक अर्थमें नये और स्वस्थ निर्माणकी दिशाकी ओर उन्मुख होगी। पर निर्माणका वह प्रयास भी प्रारम्भमें बचकाना ही होगा। वास्तविकता तो यह है, जैसा कि मैं पहले ही इंगित कर चुका हूँ, कि मानवको यथार्थ मनुष्य बननेमें अभी हज़ारों वर्षोंके विकासके दौरसे गुज़रना पड़ेगा—और उस दौरके समाप्त होनेके बाद बौद्धिक मनुष्य मेरे द्वारा प्रचारित गीताके तत्त्वार्थको समझनेकी ओर पूरी लगनसे प्रेरित होगा। अभीतक तो शायद बड़े-बड़े विद्वान् भाष्यकार भी उसका केवल ककहरा ही समझ पाये हैं—

अर्जुन : और यदि परमाणु-महायुद्धके बाद संसारमें एक भी मानव-प्राणी शेष न रहे या कुछ मुट्ठी-भर लोगोंके शेष रहनेपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी महासागरोंकी बाढ़से पृथ्वीमें निवास ही सम्भव न हो, तब ?

कृष्ण : मानवीय तत्व तब भी शेष रहेगा। क्योंकि अरबों बरसोंके विकास-चक्रके बाद जिस सृष्टिमें मानव-नामधारी जीवकी उत्पत्ति हुई है, उसका पूर्ण अन्त अधूरे विकासके बीचमें ही कभी नहीं होगा। यह प्राकृतिक नियम है। तब केवल यह होगा कि मनुष्य पृथ्वीको त्यागकर किसी दूसरे ग्रहको आबाद करनेके लिए यहाँसे भाग खड़ा होगा, और तभी सच्चे अर्थोंमें नये मानवके नये रूपका नया विकास आरम्भ होगा।

■

इसके बाद सहसा दोनोंके बीच वार्तालाप बन्द हो गया। मैंने आँख उठाकर अन्तरिक्ष की ओर नज़र दौड़ायी। ड़ेढ़-दो घण्टे बीत चुके थे, पर वह विचित्र अन्तरिक्ष-यान फिर लौटकर नहीं आया !

■ ■

८ नवाब युसुफ़ रोड
इलाहाबाद

दीपावली की अनन्य शुभकामनाओं सहित :

चमड़िया ब्रदर्स

६, क्लाइव रो,
कलकत्ता-१

फोन: २२-१७०३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकर्षक पैकेज आकर्षक लेबेल

************** क्रेता की दृष्टि आकर्षित करने को बाध्य है

यह सही है कि चीजों की अच्छाई ही क्रेता को उन्हें खरीदने को मजबूर करती है— साथ ही साथ उन पैकेजों की विशेषता भी जिनमें चीजें हिफाजत से बन्द रहती हैं। पैकेज की सुन्दरता उसमें बन्द चीजों की सुन्दरता ही प्रकट करती है।

रोहतास डालमिया नगर स्थित अपने आधुनिक और उन्नतशील कारखाने में कार्टन और पैकेज बनाने लायक सर्वोत्तम पैकेजिंग पेपर और बोर्ड तैयार करते हैं, जिन पर बहुरंगी छपाई के लिये भी भरोसा किया जा सकता है।

रोहतास पेपर्स और बोर्ड्स अच्छाई के प्रतीक हैं

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमिया नगर (बिहार)

मैनेजिंग एजेन्ट्स :—साहू जैन लिमिटेड, ११, क्लाइव रो, कलकत्ता-१
सोल सेलिंग एजेन्ट्स :—अशोका मारकेटिंग लिमिटेड, १८ए, ब्राबोर्न रोड, कलकत्ता-१

PC : RI : 492 H

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
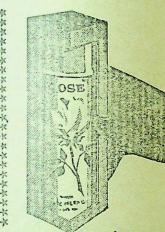
॥ एक और संवाद ॥ यह एक ऐसा संवाद है जिसे सवालोंके कारतूससे टेप किया गया है। वाक़ईमें एक दिन संगीत-साहित्य-कलासे ताल्लुक़ रखनेवाले कई लोगोंसे बात की गयी—'आख़िर क्या होगा शेष शताब्दीमें?' एक झल्ली ढोनेवालेने उत्तर दिया था—'यह मेरे कामका वक़्त है।' यहाँतक कि उसने तसवीर उतरवानेसे भी साफ़ इनकार कर दिया। बोला था—'ख़ासे बेकार लोग दुनियामें पड़े हैं, काम नहीं करेंगे, सवाल पूछेंगे...'।

प्रश्नग्रस्त शब्दावलीका 'उत्तर'-पुरुष

प्रेमकपूर / शेष शताब्दीके सामने सैकड़ों सवाल हैं :

- 'मृत्यु-संकट और सन्त्रास—हमारी सहज अवस्थामें ये कितना भाग अदा करते हैं?
- क्या वास्तवमें हम आनेवाले ज़मानेसे भयाक्रान्त हैं?
- आनेवाला समय क्या होगा?
- उसमें हम क्या चाहते हैं?
- यदि एकबारगी हमें सूचना मिले कि बस यह घड़ी प्रलयकी है तब?

—ये कुछ ऐसे प्रश्न थे जिनके उत्तर बिना सोचनेका समय दिये मैंने एकत्र करनेकी चेष्टा की और सारे उत्तर टेपपर रिकार्ड करता गया, जिससे आपके सामने विभिन्न लोगोंके सोचनेकी सही स्थिति आ सके कि लोग किस तरह जी रहे हैं और आनेवाले ज़मानेके उनके सपने क्या हैं? या कि उनकी सहज अवस्थामें वह सब भी आता है, जो हिन्दीमें लिखा जा रहा है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
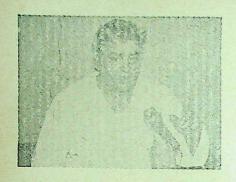
पृथ्वीराज कपूर (रंगमंच और फ़िल्मके माने हुए कलाकार) : अपने देशमें हर आनेवाला दिन नयी बहारें, नयी प्रेरणाएँ, नयी फ़सलें, नये फूल लेकर आयेगा। यहाँ उत्साह गिरनेका सवाल ही नहीं उठता। ज़रा पीछे घूमकर देखिए, उतार-चढ़ावकी एक रेखा दिखेगी। आजसे पाँच हज़ार साल पहले 'ओम तस्यो देवै:.....' वाले श्लोकमें ऋषि कहता है : मैं सौ वर्षों तक तुम्हारी दृष्टिसे देखूं, मैं सौ वर्षों तक जियूं और ऐसे नहीं ठीक तरहसे जियूं, सुनूं, देखूं और बोलूं और जो बात करूँ अच्छी बात करूँ और वह इससे भी आगे बढ़कर कहता है : स्वतन्त्र होकर जियूं—मुझे मोहताज न होना पड़े। पी० एल० ४८०—वह सब नहीं भोगना पड़े—(कहकर वे हँसे) मैं सुबह गा रहा था (उन्होंने सामने रखा हारमोनियम बजाया) 'गंगा-जमुना तीर.....।' और अखबारमें पढ़ता हूँ कि वहाँ बाढ़ आ रही है—लेकिन फिर भी हम उन्हें प्यार करते हैं.....यह प्यार करनेवाला क्या महान् नहीं होता ? यह प्यार केवल अपने तक ही ऐसा नहीं है। हम दूरके सूरजको अपने पास खींच लाये हैं। शरीरमें वह आँख है। घरमें वह बड़ा [कर्ता-धरता] है। मुहल्लेमें वह बुज़ुर्ग है। इसी तरह गाँव और शहर और प्रदेश और राष्ट्रसे चलते-चलते विश्व ब्रह्माण्ड तक वह पहुंच जाता है। उसकी रोशनी सीमित नहीं। विश्वका कल्याण चाहनेवाला देश कुछ सौ-डेढ़ सौ साल ग़फ़लतमें रहा और अब 'ममी' 'डेडी'वाली 'एज' आ गयी है। हमपर बाहरकी छाप पड़ी है, जिससे हम घबड़ा उठे हैं--लोग रोते हैं। मेरे इसी मुहल्लेमें हर बिल्डिंगके साथ गैराज थे जो खाली पड़े रहते थे, पर अब गैराज ही नहीं सड़कपर गाड़ियोंकी क़तारें हैं, फिर भी लोग रोते हैं और 'देश गर्तमें जा रहा है'के नारे लगाते हैं—उन लोगोंको ऐसी कहनेकी आदत पड़ गयी है। यह कुण्ठा बाहरी छापके कारण आयी है, या बाहरवालोंने हमपर लाद दी है ताकि हम उनके गले लग जायें।

मैं तीन नवम्बरको ६१ का पूरा हो जाऊँगा और मैं हारमोनियम लेकर रियाज़ कर रहा हूँ कि फिर बारह वर्ष बाद स्टेजपर आ सकूँ और गाँव-गाँव घूम सकूँ। अभी मैं बड़े-छोटे शहरोंमें ही स्टेजके साथ गया था पर अब नये प्रोग्रामकी तैयारीमें लगा हूँ। उस समय मैं ७३ का हो जाऊँगा। पहले क़र्ज़ नहीं था, अब क़र्ज़ है, जो उत्साह देता है—काम करो हिन्दी अँगरेज़ीका झगड़ा २°|० का झगड़ा है। मैंने हिन्दी अपनी बीवीकी चिट्ठी पढ़कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीखी, गुरुमुखी एक मित्रकी चिट्ठीसे सीखी थी, अब तमिल पढ़ रहा हूँ (उन्होंने कॉपी उठाकर दिखायी) देखलो, मैं अब कन्नड़ बोलूंगा, मलयालम बोलूंगा और अगर कल मर जाऊँगा तो फिर पैदा होऊँगा और पाँच सालका फ़र्क़ पड़ेगा। यहाँ कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता।

प्रलय चीज़ ही क्या है! आप मरा तो जग मरा—हर एकको अपने-अपने मरनेका डर है। 'नैनम् छिन्दन्ति····' वाली बात है····मैं मरूँगा ही नहीं तो प्रलय कहाँ होगा?

• एक ओर मिनी स्कर्ट : दूसरी ओर शेरवानी···

विजय राघव राव (फ़िल्म्स डिवीज़नमें संगीत-निर्देशक तथा चित्रकार–हुसैनकी फ़िल्म : 'एक कलाकारकी निगाहमें राजस्थान'के संगीत-निर्देशक) : कलाकारसे हर तरहके प्रश्नके उत्तरकी अपेक्षा नहीं की जा सकती, वह इन्साइक्लोपीडिया तो है नहीं। किसी भी तरहकी क्रान्तिमें कूड़ा-कचरा छँट जाता है, चाहे वह उलट-पलट हो या विनाश हो। कलाकारके पीछे एक परम्परा होती है जिससे वह प्रेरणा लेता है और भविष्य होता है जिसमें वह निर्माण करता है। कलाकार परम्परा और भविष्यके बीचकी कड़ी है।

कलाकार नये ज़मानेका निर्माता है, और आनेवाला समय चाहे जिस तरहके परिवर्तनसे आये अगर उसमें कलाकारका हाथ है, तो उसमें आजकी गन्दी-गलीज चीज़ोंका कोई स्थान नहीं होगा और इसे एक कलाकार ही कर सकता है।

• हम लोग स्पेस-एजमें रह रहे हैं···

चुनीलाल माड़िया (गुजराती कथाकार) : आनेवाले समयमें विश्वका नेतृत्व अफ़्रीकी देशोंके हाथ रहेगा। रूस नहीं, अमरीका नहीं, चीन नहीं। अच्छा होता भारत अग्रणी होता, पर···। (वे चुप हो गये) अफ़्रीकाके बारेमें मैं इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि आपने पढ़ा होगा, वहाँ ५०-६० देशोंको हाल ही में स्वतन्त्रता मिली है और मैंने वहाँका नवनिर्माण देखा है और वहाँ सभी देश—क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जापान, क्या चीन, क्या रूस, क्या अमरीका सभीकी निगाहें लगी हैं।

मैंने पिछले दिनों अफ्रीकाके साथ-साथ युरॅपका भी सफ़र किया है और उसका अच्छा-बुरा पहलू देखा है। इतना तो कहा जा सकता है कि मनुष्यने प्रगति की है, विज्ञानके क्षेत्रमें बड़ी खोज हुई है और आज हम आणविक नहीं, हाइड्रोजन नहीं 'स्पेस एज' में रह रहे हैं। चन्द्र-मंगल तक जानेकी बात हो रही है—यह सम्प्राप्तिकी जमा बाजू है, लेकिन खर्चकी ओर हमने खोया कम है? शान्ति, राजनीतिकी नहीं, चित्तकी शान्ति। भारतका सौभाग्य है कि अभी विदेश-जैसी अशान्ति यहाँ नहीं आयी है (पर लोग उसे लानेपर तुले हुए हैं)। प्रकृतिने हवा-पानी मुफ़्तमें दे रखा है, पर पश्चिममें सोने तकके लिए खर्च करना पड़ता है—ट्रैंक्वेलाइजर्स लेनी पड़ती है। यदि आजका आदमी आन्तरिक शान्ति नहीं पाता तो विज्ञानकी खोजका क्या अर्थ हुआ?

आजका आदमी तनावमें जी रहा है। उसे उग्रता कम करनेके लिए गोलियाँ खानी पड़ती हैं। गोलियाँ खानेवाले बीटनिक और हिप्सटरोंसे भी मैं मिला हूँ। कविता-पाठ करते हुए एलन गिन्सबर्गको मैंने सुना है, और उसके श्रोताओंकी भीड़को देखा है। लन्दनमें उसके इर्दगिर्द सारे बीटल लोग एकत्र हो गये थे और उन्हीं दिनों वहाँ आये थे प्रयाग विश्व-विद्यालयके एम० ए०—ऋषिकेशके महेश योगी (ध्यान विद्यापीठ, ऋषिकेश) जिनका भाषण सुनने तथा ध्यान लगानेके लिए सारे बीटल जा बैठे थे और पद्मासन लगाकर बीटल भी 'हरे राम हरे कृष्ण'की धुनमें झूमने लगे थे। और मैं सोच रहा था: चित्तकी शान्तिकी खोजमें क्या पश्चिमकी दुनिया पूर्वाभिमुख होगी? शायद हो?—पर आज अगर प्रलय हो जाये तो एक आफ़तकी बात होगी क्योंकि 'देना-पाउना' में सन्तुलन नहीं हुआ है। विज्ञानने फ्रेंकें-स्टाइन राक्षस पैदा किया है। उसे क़ाबूमें लानेकी कोई करामात नहीं निकाली गयी है। उसे अंकुशमें लानेका कोई तरीक़ा होना चाहिए—बिना उसके प्रलय ···!

इसके बारेमें अगर स्वयंसे पूछूँ तो उत्तर आता है—दुनिया खत्म होनेवाली है तो होने दो! जीनेका रंग नहीं है—आनन्द नहीं है। भौतिक समृद्धिके साथ-ही-साथ है व्यग्रता—भारत भी रोज़-रोज़ पश्चिमाभिमुख होता जा रहा है। मैं अपने जवान भाई-बहनोंको कैफ़ेमें ट्विस्ट करते देखता हूँ तो निराश हो जाता हूँ। मैं कोई इनका विरोधी हूँ ऐसा नहीं है—पर समझ नहीं पाता, भारतमें यह क्या हो रहा है? मध्यपूर्वके कुछ देशोंने पश्चिमके प्रभावको रोकनेके लिए नियम-क़ानून बनाये हैं।

मैं यह नहीं कहता कि 'मिनी स्कर्ट' खराब है, (मैंने अपनी आँखों लड़कियोंको मिनी स्कर्टमें देखा है) बल्कि मैं नाराज़ हूँ कि सौन्दर्य-प्रदर्शनके लिए यह अच्छा नहीं। हमारे विदेशी मित्रोंने भी मेरी बात मंजूर की है। उनका भी कहना है कि साड़ी ऐसा पहरावा है जिससे शरीरकी रेखाओंका अच्छा प्रदर्शन हो सकता है—फिर मैं सोचता हूँ, साड़ीके बाद भी मिनी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्कर्ट क्यों ? भारत देखा-देखीमें पड़ गया है—अपनी संस्कृतिकी जड़ोंसे लोग हट गये हैं, अभी तो शुरूआत है....मैं 'प्यूरिटन' तौरसे नहीं बोलता हूँ—कलात्मक रुचिसे भी यह सब मेल नहीं खाता। मैं आपको बताऊँ, आइवरी कोस्टमें पी० ई० एन० के मेहमानोंके लिए राष्ट्रपति-भवनमें दावत थी, जिसमें जानेके लिए कपड़ेका ब्योरा दिया गया था —सूट यूँ तो टाई यूँ तो कपड़ा यूँ....। मेरे पास जूनी शेरवानी थी। मैं वही पहनकर गया और रास्तेमें सोचता रहा—नहीं मानेंगे तो मैं वापस आ जाऊँगा, कभी तो वह सब पहना नहीं।

उन्होंने सत्कार ही नहीं किया बल्कि कपड़ेके बारेमें पूछ-ताछ भी करते रहे। अपने देश-में उन्होंने उस चूड़ीदार पायजामे और शेरवानीमें पहला आदमी देखा था।

पर आज यह ज़माना आया है कि अगर वही शेरवानी पहनकर बाहर निकलूं तो लोग मुझे हिक़ारतकी नज़रसे देखेंगे—यह बात चिन्ताप्रद है। काश मैं अपने देशका अपना आदमी रह सकूँ....!

• यान्त्रिक ज़माना और नींदकी गोलियाँ...

अनन्त काणेकर (शिक्षाविद् एवं मराठी साहित्यकार) : मैं किसी धर्मका माननेवाला नहीं हूँ पर हिन्दू-धर्मके प्रलय और उसके बाद सृष्टिकी कल्पना मुझे अच्छी लगती है और लगता है कि यह कल्पना सच है, लेकिन आजकी इस दुनियाके बारेमें मुझे बहुत-कुछ कहना है। हम नहीं रहेंगे, पर हमारे बाद भी यह दुनिया रहेगी। इस दुनियाके आरम्भमें यानी मेरे जन्मके बाद दुनियाका बड़ा ही यन्त्रीकरण हुआ, केन्द्रीकरण हुआ, औद्योगीकरण हुआ और यह सब बढ़ता गया और लोग सोचते हैं कि समाजवाद हो गया, पर अनुभवमें यह बात सही नहीं उतरती। केन्द्रीकरणका यह फल हुआ है कि दुनिया हमारे हाथसे निकल गयी है, दूर हो गयी है बिखर गयी है। हवाई जहाज़से नज़दीक तो आयी है, लेकिन आदमी एक-दूसरेसे दूर होता गया है। शक्ति एक जगह एकत्र हुई है, पैसा कुछ लोगोंके पास आया है, बहुत सारे लोग ग़रीब होते गये हैं। कोई एक आदमी कहींसे पैसा लेकर सारी दुनियाका भ्रमण कर सकता है क्योंकि जगत् केन्द्रीकृत है, लेकिन सब लोगोंको इससे लाभ नहीं हुआ है।

विकेन्द्रीकरणसे दुनियाका लाभ होगा—गान्धीजीका यह कथन मुझे भी अब सही लगने लगा है। आज हमारे मानसमें एकताका जो रूप है—सारे लोगोंका एक जगह एकत्र हो जाना—वह एकता नहीं एकरूपता है। लोग एकता और एकरूपताके अन्तरको नहीं समझते। विभिन्न प्रादेशिक भाषाओंको स्वतन्त्रता देनेकी अपेक्षा डेढ़ सौ वर्षोंसे चली आ रही गुलामी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की प्रतीक अँगरेजीको लादकर कहते हैं कि वह केन्द्रकी भाषा होनी चाहिए—लेकिन भूल जाते हैं कि थोड़ी देरके लिए कुछ फ़ीसदी लोगों-द्वारा उससे देशमें एकरूपता तो आ जायेगी, पर एकता कैसे आयेगी। सारे सफ़ेद फूल एक बाग़में लगाकर हम कहें कि यह एकता है—यह सही नहीं है। वहाँ एकरूपता तो है एकता नहीं।

यान्त्रिक युगकी देन—अमरीकाका आधुनिक विकास—एलेक्ट्रॉनिक यन्त्रोंकी पुण्य स्थली—में लोग अच्छी तरह सो नहीं सकते और नींदकी गोलियाँ खा-खाकर अपना मानसिक सन्ताप मिटाते हैं। वहाँ लोग इसलिए परेशान हैं कि उनके पास जो पैसा है उसे विश्व-विद्यालयके अनुदानमें दें या टैक्समें, समझ नहीं पाते—यानी कि केन्द्रित अवस्थाका अतिरेक हावी है। अपना कहलानेवाला कोई एक चाहिए और वह वहाँ नहीं मिलता। आनेवाली दुनिया एकरूपताके बजाय विविधतामें-से सचमुचकी एकताके आधारपर आगे बढ़ेगी। सब स्वरमें-से ही संगीत निकलता है। मगर एक ही स्वर लगाये जायें तो वह राग नहीं होगा—रोना-धोना होगा। नहीं जानता कि मैं उस नयी दुनियाको देख सकूँगा या नहीं क्योंकि उतने दिन मैं जी सकूँगा या नहीं यह मैं नहीं जानता।

क्योंकि आज तक हुआ यह है कि मानवताकी दृष्टिसे समाजवादी होते गये और यान्त्रिकताके पुजारी बन गये और मानवताको नष्ट कर बैठे! जिसका सपना हम देखते थे हुआ उसका उलटा। कुछ लोगोंने क्रान्तिकी और कोई और ऊपर आ बैठा—क्रान्ति की जाती है लोकतन्त्रके लिए पर आ जाता है कोई और जिसे लाभ मिलता है और क्रान्ति करनेवाले फिर-फिर पिसते रहते हैं····नयी दुनियामें इससे सबक़ लिया जायेगा—ऐसी मेरी आशा है।

आजकी स्थिति अराजकताकी स्थिति है और इसके बीचसे कोई अच्छी समाजवादी व्यवस्था बनेगी—ऐसी मेरी आशा है, पर यह कौन कर सकेगा इस बारेमें स्थिति अनिश्चयकी है, तरह-तरहके राजनीतिक दल हैं लेकिन उनमें-से कोई भी कुछ कर पायेगा मुझे ऐसा नहीं लगता—

● प्रलयका सवाल ही अजीब है···

के० विक्रमराव (पत्रकार) : अखबारनवीस हूँ अतः अपने पेशेकी दृष्टिसे देखूँ तो आनेवाले ज़मानेमें तमाम विलक्षण सम्भावनाएँ होंगी। तब न टाइपराइटर होंगे, न नीली पेन्सिलें और न सम्पादक। एलेक्ट्रॉनिक यन्त्र सारा काम कर देंगे। इस तरह चिन्तन-प्रतिक्रिया भी बदल जायेगी, शायद रहे ही न। तकनीकी विकास इतनी पराकाष्ठा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर होगा कि कम्प्यूटर्स भी पिछड़े हुए लगेंगे। सेक्सका संवेदन, पारिवारिक रिश्ते-नाते मानसिक क्रियाएँ—यहाँतक कि मानवका नाक-नक्शा भी बदला होगा। लोगोंकी ख्वाहिश तब यही होगी कि बस दूसरे ग्रहोंकी सैर करें। अभी विदेशी संवाददाता होते हैं, तब अन्तरिक्षके पत्र-प्रतिनिधि हुआ करेंगे। आज शक्तिके नवीनतम स्रोतोंकी कल्पना अजीब लगती है, ठीक पिछली सदीके लोगोंकी तरह जिन्हें आसमानमें उड़नेका विचार ही चौंका देनेवाला लगा करता था।

और प्रलयका सवाल अजीब है। भौतिकवादी हूँ, अणुयुग है, अतः ऐसी बातोंपर जल्दी यक़ीन नहीं आता, फिर भी मान लूँ तब तो जीवित नहीं रहूँगा और अगर सोचनेका समय मिला तो अपार दुःख होगा। इतनी प्रगति, आजकी ज़िन्दगी और आनेवाली हसीन सुबहकी बाट—सब मिटते नज़र आयेंगे। प्रलयसे बचनेवालेको मार्कण्डेयसे ईर्ष्या होगी।

• आजकी स्थिति नहीं रहेगी···

भीष्म साहनी (कथाकार एवं सम्पादक) : आनेवाले ज़मानेमें क्या होगा यह स्पष्ट कह पाना कठिन है। मैं तो चाहूँगा, शान्ति बनी रहे, महायुद्ध न हो जो तबाही लाये और देश प्रगतिके रास्तेपर स्थिरतासे बढ़े। यह बदलावका ज़माना है, इस परिवर्तनके लिए कौन आयेगा—यह कह पाना कठिन है, नेता लोगोंमें-से ही उठते हैं—हो सकता है, आनेवाले ज़मानेमें विज्ञान और तकनीक हमें बहुत दूर ले जाये और मनुष्य किसी नक्षत्र तक भी जा पहुँचे, पर नये हथियारोंके बारेमें भी आशंका है, यदि बहुत-से देशोंने आणविक अस्त्र तैयार कर लिये तो शान्तिके लिए खतरा बन जायेगा, पर साथ ही हो सकता है, हमारे लिए विज्ञान नये द्वार भी खोल दे या कि खाद्य-संकट बहुत तीव्र हो उठे—मैंने कहीं पढ़ा था, यदि आबादी ऐसी ही बढ़ती गयी तो आनेवाले ज़मानेमें स्थिति बड़ी भयंकर हो सकती है!

और अगर आज प्रलयकी बात सुनूँगा तो कुछ क्षणोंके लिए स्तम्भित रह जाऊँगा लेकिन उसके बाद मेरा व्यवहार वैसा ही होगा जैसा हर दिन होता है। मेरा मस्तिष्क कुछ कर पाने या कुछ समेटनेके लिए इतना क्रियाशील होगा—मैं नहीं समझ पाता।

आनेवाले समयमें आजकी स्थिति नहीं रह जायेगी—यह निश्चित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● आजका चिन्तन अन्दरसे खण्ड-खण्ड हो गया है···

अरुण कौल (कलात्मक फ़िल्म आन्दोलनके प्र विशिष्ट कार्यकर्ता) : यह राष्ट्र नपुंसकोंका है जबतक यहाँ एक कड़ी डिक्टेटरशिप नहीं होगी जो सपने लेकर हम आये थे वे यहीं खत्म हो जायें और आनेवाली पीढ़ियोंको हमसे कहीं अधि भुगतना पड़ेगा । हमने अपने पहलेकी पीढ़ीका कि बहुत कम ही भोगा है । जिस ढंगके विचारक आज हैं, वे हमारे देशकी उपज नहीं उनका बहुत-कुछ बाहरसे लिया हुआ 'प्लेगराइज्ड' है । नेताकी, राजनीतिकी बातको हम साहित्यमें ही देख लें । दूर क्यों जायें, हिन्दीमें देख लें—लिखनेवालोंका एक वर्ग है जिसमें-से अधिकांश सतही जीवन जीते हैं और सतही लेखन करते हैं । उनकी अपनी फ़ीलिंग है, जो देशके जीवनके साथ नहीं जुड़ती । युद्ध और अकालपर हमें एक अच्छी रचना नहीं मिलती । क्या हमारा जीवन वही है जो गेलार्डमें होता है या कि फ़ौलादवाले आकाशमें घटता है--आजके अच्छे साहित्यकी पहचान क्या है ?····

जिस ढंगपर चिन्तन हो रहा है वह देशको भौगोलिक परिधिमें तो चाहे रहने भी दे पर अन्दरसे वह खण्ड-खण्ड होगा और पाश्चात्त्य प्रभाव हमें नहीं रहने देगा । मेरा अपना माध्यम 'फ़िल्म' है—वहाँ जन-स्वीकृतिवाली बात है । आजका नेता हर क्षेत्रमें डिसआनेस्ट है--नॉन कम्यूनिकेशन ही तो साहित्य नहीं है । प्रेमचन्दने शरतके साहित्यको स्त्रैण साहित्य कहा था, पर आजका हमारा साहित्य तो केवल नपुंसक होकर रह गया है—यह मैंने उदाहरणके लिए कहा । यही दशा राजनीतिमें है, और वहाँ भी इसी तरहकी बातें हैं । ▪▪

२२।३ जवाहरनगर, गोरेगाँव, बम्बई

परिवर्तित निवेदन :

१. ज्ञानोदयके लिए नयी रचनाओंका स्वागत है लेकिन अस्वीकृति-की सूचना देना सम्भव नहीं है । केवल वे अस्वीकृत रचनाएँ हम लौटा देते हैं जिनके साथ पता-लिखा, टिकट-लगा लिफ़ाफ़ा हो ।

२. अनामन्त्रित रचनाओंके निर्णयमें एक मास लग जाता है फिर भी जो रचना ज्ञानोदयके लिए भेजें, कृपया वह हमारे उत्तर तक कहीं और न भेजें ।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ मैं ज्योतिषी हूँ ॥ धर्मतल्लामें भविष्यवक्ता चिड़िया-ने एक लिफ़ाफ़ा उठाकर दिया, सम्पादकके मनमें सवाल था : 'इस शेष शताब्दीमें क्या तीसरा विश्वयुद्ध होगा ?' उत्तर था : 'काम सफल होनेमें सन्देह है।'...लेकिन फिर श्रीमालीजीको जन्म-कुण्डली दिखायी गयी। यह ज़रूरी नहीं कि ज्योतिषके इस फला-फलपर विश्वास किया जाये, ज़रूरी यह देखना है कि क्या ऐसा होगा ? यदि हुआ तो ?...

शेष शताब्दीका भविष्य : फलाफल

नारायणदत्त श्रीमाली / ज्योतिषका प्रसार मुख्यतः ईरानसे हुआ। ईरानकी प्राचीन-तम हस्तलिखित पुस्तक 'जेण्ड अकासीह' जो 'पहलवी' भाषामें लिखित है—में विश्वकी कुण्डली दी गयी है। बहुत समय पहले जरथुस्त्रने इस पुस्तकका अनुवाद कर सर्व-सुलभ बनाया था, फिर भी कई वर्षों तक यह पुस्तक विश्वकी दृष्टिसे ओझल ही रही। इस पुस्तकमें कुल ३६ अध्याय हैं, जिसमें ज्योतिषके दृष्टिकोणसे विश्व-कुण्डलीपर विचार किया गया है। एक प्रकारसे यह मानवताकी कुण्डली है।

इसी पुस्तकमें विचार करते हुए लिखा गया है, कि बृहस्पति और चन्द्र उत्तर दिशाके स्वामी और सूचक हैं, इसी प्रकार शुक्र दक्षिणका, भौम पश्चिमका तथा बुध पूर्व दिशाका सूचक है। साथ ही शनि अन्तरिक्ष और केतु भू-गर्भका सूचक है।

विश्वका फलादेश जाननेके पूर्व उसकी ग्रहदशाका भी संक्षिप्त अध्ययन कर लेना आवश्यक है। द एस्ट्रोलॉजिकल मैगजिन (भाग ५२ अंक ८) में बी० डी० पीठवालाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वकी ग्रहदशाका संक्षिप्त चित्रण किया है, जिससे कि मैं भी सहमत हूँ--उनकी ग्रह दशा विश्व-कुण्डली और सम्यक् घटनाओंसे भी मेल खाती है। पाठकोंकी जानकारी हेतु विश्व-ग्रहदशा और उससे सम्बन्धित प्रमुख घटनाएँ नीचे दे रहा हूँ।

ईरानी ग्रन्थने कुल सात शाहन्शाह माने हैं और उनके पूरे वृत्तका समय ८१,००० वर्षों माना है, जो कि इस प्रकार है :

	शाहन्शाह	वर्ष
१.	बृहस्पति	११,०००
२.	मंगल	१७,०००
३.	सूर्य	४,०००
४.	शुक्र	९,०००
५.	बुध	१३,०००
६.	चन्द्र	१२,०००
७.	शनि	१५,०००
	कुल वर्ष =	८१,०००

८१,००० वर्षके बाद पुनः बृहस्पतिका ११,००० वर्षका साम्राज्य प्रारम्भ हो जाता है। ईरानी ज्योतिषके अनुसार इस समय विश्वके कुल तीन चक्र पूरे हो चुके हैं, और चौथा चक्र चल रहा है। यहाँपर ईरानी और भारतीय ज्योतिषमें काफ़ी मेल है, भारतीय ज्योतिषके अनुसार भी अब तक तीन महायुग--सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग—बीत चुके हैं और चौथा कलियुग चल रहा है।

चतुर्थ चक्रमें भी इस समय बृहस्पति-युग बीत चुका है, और भौम-युग चल रहा है जिसके कि क़रीब १३,००० वर्ष बीत चुके हैं। नीचे चतुर्थ चक्रके बृहस्पति-महादशा, दशा और अन्तर्दशाका चित्रण करते हुए प्रमुख घटनाओंपर संक्षिप्त टिप्पणी दी जा रही है:

महादशा	दशा	अन्तर्दशा	प्रमुख घटनाएँ
१. बृहस्पति	बृहस्पति	बृहस्पति	जल-प्लावन (प्रलय) का अन्त, क़रीब १२,८३९ वर्ष पूर्व।
२. बृहस्पति	सूर्य	चन्द्र	लॉर्ड जरथुस्त्रका जन्म।
३. बृहस्पति	बुध	बुध	श्रीकृष्णका जन्म और उनकी क्रीड़ाएं।
४. बृहस्पति	शनि	शनि	असेरिया, बेबीलोनिया और अन्य कई राष्ट्रोंका उदय।
५. बृहस्पति	शनि	बृहस्पति	इजिप्टका समृद्ध युग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

		भौम	१३०० बी०सी-इब्राहिमका जन्म ।
६. बृहस्पति	शनि	शुक्र	विश्वमें हलचलका युग, और विभिन्न उथल-पुथल ।
७. बृहस्पति	शनि		
८. बृहस्पति	शनि	बुध	महात्मा बुद्धका जन्म ।
९. बृहस्पति	शनि	चन्द्र	ईसामसीहका जन्म और उसका युग ।

इसके बाद भौमका साम्राज्य या उसका चक्र प्रारम्भ होता है। यह क़रीब १३ वीं शताब्दीकी घटना है। नीचे भौम-महादशा, दशा और अन्तर्दशाका विवरण दिया जा रहा है:

महादशा	दशा	अन्तर्दशा	प्रमुख घटनाएँ
१. भौम	भौम	भौम	विश्वमें उलटफेर और जीवन-परिवर्तनका संकेत ।
२ भौम	भौम	सूर्य	यह युग लगभग ४०३ ए० डी० के बाद प्रारम्भ होता है।
३. भौम	भौम	शुक्र	क़रीब ४९३ ए० डी० से प्रारम्भ, ईरानका पतन, और मुहम्मद साहब का जन्म ।
४. भौम	भौम	बुध	क़रीब ६९३ ए० डी० से प्रारम्भ, भारतपर विदेशियोंके आक्रमण प्रारम्भ और भारतका मान-मर्दन ।
५. भौम	भौम	चन्द्र	क़रीब १००८ ए० डी० से प्रारम्भ, समुद्रमें भीषण ज्वार-भाटा ।
६. भौम	भौम	शनि	क़रीब १३१९ ए० डी० से प्रारम्भ । शनिके कारण अन्तरिक्षसे भीषण उल्कामुखियोंका पतन। धन-जन हानि।
७. भौम	भौम	बृहस्पति	क़रीब १६८० ए० डी० से प्रारम्भ । अँगरेज़ोंका आगमन और पूर्वका प्रभुत्व ।
८. भौम	सूर्य	सूर्य	यह समय क़रीब सन् १९४१ से प्रारम्भ होता है। इसी समयमें भारत स्वतन्त्र हुआ, पूर्वका प्रभुत्व घटा, और पश्चिमके कई देश स्वतन्त्र हुए। विश्व-युद्ध भी हुआ, पर यह युद्ध ईरान और भारतके लिए। लाभदायक रहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. भौम	सूर्य	शुक्र	यह समय सन् १९५१ से शुरू हु... है। शुक्र इस समयका अधिपति है जो ऊपरसे उग्र दिखाई देते हुए भी अन्दरसे शान्त है। अतः इस समय शीतयुद्ध उग्र रहेगा, और क्षण-प्रति क्षण विश्वयुद्धकी सम्भावना बनी रहेगी।
१०. भौम	सूर्य	बुध	यह युग सन् १९७१ से प्रारम्भ होगा जो कि क़रीब सन् २००२ तक चलेगा।
११. भौम	सूर्य	चन्द्र	यह युग सन् २००२ से प्रारम्भ होकर २०२२ तक चलेगा।

और इस प्रकार भौम-महादशामें सूर्यका साम्राज्य व्यतीत होगा।

हमारे इस लेखका विवेच्य समय सन् १९६७ से २००० ई० तकका है। इसीका हम विवेचन करेंगे, और भारतीय सायन-प्रणालीसे इस समयमें विश्वपर क्या-क्या प्रभाव होंगे, क्या-क्या घटनाएँ घटेंगी—आदि बातोंका संक्षिप्ततः विचार किया जायेगा।

विश्वका फलाफल : इस समय भौम-महादशामें सूर्यके अन्तरमें शुक्रका प्रत्यन्तर चल रहा है। शुक्र मुख्यतः ऊपरसे उग्र होते हुए भी अन्दरसे शान्त है, अतः इस समय १९६... १९७१ ई० में शीतयुद्ध अपनी पूर्णतापर पहुँचेगा, और प्रत्येक क्षण यह आशंका बनी रहेगी कि तीसरा विश्वयुद्ध प्रारम्भ होने ही वाला है, पर वह ठीक समयपर आकर टल जायेगा। संयुक्त राष्ट्रसंघ एक रैफ़रीकी भाँति काम करेगा, पर वह स्वतन्त्र निर्णय देनेमें असमर्थ रहेगा, फलस्वरूप उसकी प्रतिष्ठा धूमिल होती चली जायेगी।

चीनकी स्थिति : चीन इन दिनों बहुत अधिक शक्तिशाली हो जायेगा। उसका लग्नेश बृहस्पति है। यद्यपि अभीतक शनिश्चरके दुष्प्रभावको गुरुने रोक रखा है, पर इस साल के अन्त होते-होते गुरुका नियन्त्रण शनिपर-से हट जायेगा, फलस्वरूप शनि उद्दण्ड होगा, और चीनके प्रभावमें वृद्धि होगी। इस बीच वह कई आणविक विस्फोट करेगा। एशिया और अफ़्रीकाके कई छोटे-छोटे राष्ट्र उसकी शरणमें चले जायेंगे। भारत और चीनके सम्बन्ध इन वर्षोंमें सुधरनेकी कोई आशा नहीं है।

भारतकी हालत : भारत इन वर्षोंमें धीरे-धीरे केन्द्रीभूत होता हुआ, अपने-आपमें सिमटता चला जायेगा। इस बीच उसे पाकिस्तानसे युद्धका खतरा भी उठाना पड़ेगा, परन्तु भारत सफल रहेगा।

सन् १९७० का वर्ष भारतके लिए प्रबल संघर्ष-काल है। इस वर्ष उसे एक नहीं दो-दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

←विश्व :
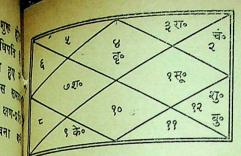
इस समय भौम-महादशा चल रही है : आशंका, शीतयुद्ध और भय।

भारत :→

युद्धकी सम्भावना, संघर्षोंका दौर, अन्तमें सफलता।

१ चं०
११ बृ०
२ रा०
१२
१०
३
९ शु०
बु०
४
६ मं०
के० ८
५
श० ७
सू०

←चीन :

लग्नेश बृहस्पति, शनिका रुद्ध प्रभाव : प्रसार, शक्ति और विस्फोट।
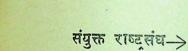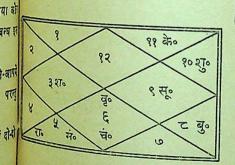
संयुक्त राष्ट्रसंघ→

नया प्रभुत्व लेकिन बिखराव, विशेष परिवर्तन भी।

४ बृ०
के० २
५
३
१
चं० ६ मं०
१२
७
बु० ९ सू०
११
८
शु० रा०
१०

←कांग्रेस :

विघटन और विजय साथ-साथ। नया उबाल और सम्भावनाएँ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शत्रुओंसे संघर्षरत होना पड़ेगा। गुजरात, राजस्थान, पंजाब और काश्मीर प्रमुख युद्ध बनेंगे, साथ ही बंगाल और आसामके गिरिशृंग खूनसे रक्तिम हो उठेंगे। पाकि... वैमनस्य चरम सीमापर होगा। पर युद्धका अन्त भारतके लिए सौभाग्य-सूचक होगा, ... वह अपनी खोयी हुई प्रतिष्ठा प्राप्त करनेमें सफल रहेगा।

■

विश्वके पश्चिममें एक निर्णायक युद्ध अवश्यम्भावी है। दो राष्ट्रोंके इस युद्धमें बड़ी शक्ति... किनारे खड़ी देखती रहेंगी। अरब राष्ट्र इस युद्धमें विजयी ही नहीं होंगे, अपितु ... पदमर्दित प्रतिष्ठा भी प्राप्त करनेमें सफल रहेंगे। रूस और अमेरिका परस्पर निकट आ... इन्हीं वर्षोंमें भयंकर उल्कापातसे भी धन-जनकी हानि होगी।

सन् १९७१ में विश्व-कुण्डलीके अनुसार भौम-महादशामें सूर्यके अन्तरमें बुधका प्रत्य... प्रारम्भ होगा। भारतकी केन्द्रीय शक्ति निर्बल होगी और कांग्रेसका प्रभुत्व क्षीण होगा, ... वह चुनावमें परास्त होगी, यद्यपि उसे कई प्रान्तोंमें आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त होगी। इ... वर्षोंमें उसका विघटन जोरोंसे होगा। केन्द्रमें कांग्रेस बराबरकी सफलतामें रहेगी। नये र... उबाल आयेगा, और वह महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करेगा।

सन् १९७१ से १९८० का वर्ष विश्वमें उलट-फेरका युग है। २४ अक्टूबर, १९७... आसपास मानव चन्द्रलोककी यात्रा करनेमें सफल हो जायेगा। इस कार्यमें यद्यपि रूस ... अमेरिका दोनों संलग्न हैं, पर इस प्रश्नपर दोनोंमें मतभेद बढ़ जायेगा, फलस्वरूप कई अन्त... रिक्ष-यात्रियोंको मौतके घाट उतरना पड़ेगा। रूस इस दिशामें पहल करेगा, पर जनव... १९७३ के आसपास अमेरिका भी मानव-युत रॉकेट चन्द्रपर उतारनेमें सफल हो जायेगा।

१९७३ से १९७८ तकका काल संघर्षका काल है। इस समयमें रूस और अमेरि... परस्पर अभिन्न मित्र बन जायेंगे और फ्रान्स, चीन तथा जर्मनीसे गठबन्धन कर शक्ति... बनेगा। इस प्रकार रूस और अमेरिका दो बड़ी शक्तियोंकी जगह रूस-अमेरिका तथा फ्रा... चीन-जर्मनी—दो बड़ी शक्तियाँ बनेंगी। कई राष्ट्र अपना सम्बन्ध संयुक्त राष्ट्रसंघसे तोड़ दें... फलस्वरूप उसकी शक्ति अत्यन्त क्षीण हो जायेगी। फ्रान्स यह सम्बन्ध तोड़नेमें पहल करेगा... यद्यपि इस समयमें संयुक्त राष्ट्रसंघ अपना प्रभुत्व बचानेके लिए जी-जानसे प्रयत्न करे... परन्तु उसे निराशा ही हाथ लगेगी। इन्हीं वर्षोंमें संयुक्त राष्ट्रसंघमें महत्त्वपूर्ण परिवर्त... होंगे। दिनोदिन उसके विघटनके ही आसार प्रकट होंगे।

विज्ञानके क्षेत्रमें मानव बहुत आगे बढ़ जायेगा। जर्मनी इस दिशामें कई महत्त्व... चमत्कार करेगा। अफ्रीकाके छोटे-छोटे राष्ट्र पुनः सैनिक गठबन्धनोंमें बँधकर अपनी... स्वतन्त्रता खो देंगे। भारत इन वर्षोंमें उठेगा, और वह एक नयी ताकतके रूपमें जगेगा। चीन और पाकिस्तानके सम्बन्ध शत्रुवत् होंगे। इन वर्षोंमें भारत तथा पाकिस्तान मिलक...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुनः एक राष्ट्रमें ग्रथित हो जायेंगे।

सन् १९८१ से १९८५ तकका काल मानवताके लिए भीषणतम काल है। संयुक्त राष्ट्र-संघका अस्तित्व समाप्त हो जायेगा और विश्वमें स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्रकी जगह राजतन्त्र पनपेगा। विश्वमें युद्धके बादल घुमड़ेंगे और राष्ट्र परस्पर सैनिक गठबन्धनोंमें बँध जायेंगे।

सन् १९८३के आसपास निश्चित रूपसे तृतीय महायुद्ध प्रारम्भ होगा, और यह पूर्णतः अणु-परमाणु-युद्ध होगा। बुधका प्रत्यन्तर होनेसे विश्वके पूर्वीय स्थलपर इस युद्धका उदय होगा। और संसारका प्रत्येक छोटा-बड़ा राष्ट्र इस युद्धमें उलझेगा।

प्रसन्नताकी बात यह है कि इस युद्धका निर्णायक भारत होगा। भारत इस समय तक (भारत-पाक-अफ़गानिस्तान) एक महत्त्वपूर्ण शक्तिके रूपमें होगा, परन्तु सन् १९८४ तक भारत तटस्थ रहेगा, और सावधानीसे विश्वयुद्धका अवलोकन करता रहेगा। यद्यपि इस समयमें भारतपर चारों ओरसे भारी दबाव पड़ेगा, पर वह अविचल रहेगा। सन् १९८४ के सितम्बर तक भारत युद्धमें कूदेगा, और नवम्बर '८५में यह युद्ध समाप्त होगा।

पश्चिमी देशों, विशेषकर भारतको, इस युद्धमें सर्वाधिक लाभ होगा, और युद्धके बाद वह प्रमुखतम शक्तिके रूपमें रहेगा। छोटे-छोटे राष्ट्र फिर उदय होंगे, और प्रजातन्त्रका उदय होगा। सन् १९८८-१९९३का समय भी विश्वके लिए साधारण है—चारों तरफ़ दुर्भिक्ष, अकाल और बीमारीका प्रकोप होगा। फलस्वरूप मानवताका बड़ा भारी संहार होगा। इन्हीं दिनों संयुक्त राष्ट्रसंघ-जैसी नयी विश्वसंस्था गठित होगी, जिसमें भारत प्रमुख भूमिका निभायेगा।

इंग्लैण्डके लिए ये वर्ष अत्यन्त साधारण हैं, वह एक साधारण-सा राष्ट्र बनकर रह जायेगा, चीनका प्रभुत्व भी समाप्त हो जायेगा, और भारतके साथ एक मित्रके रूपमें पेश आयेगा, यद्यपि चीनकी जनसंख्या एक तिहाईसे भी कम रह जायेगी।

सन् १९९७में बुध पूर्ण प्रभुत्वमें होगा, और भौमका सम्बन्ध रहेगा, अतः इस वर्ष चन्द्रके अलावा अन्यान्य ग्रहोंकी भी खोज होगी, मानव उन ग्रहोंमें निवास करनेमें समर्थ होगा। मंगल, शुक्र आदि ग्रह मानवके आवासस्थल बनेंगे।

१९९७ से सन् २००२ तकका समय विश्वके लिए सुखकर है, फलस्वरूप चारों तरफ़ प्रसन्नता, समृद्धि और मंगल-भाव विकसित होगा। विश्व समृद्ध होगा, और सम्पूर्ण विश्व-मानवताकी रक्षामें सततः प्रयत्नशील रहेगा।

आजसे आगेके तीन दशक वस्तुतः गम्भीर उथल-पुथलके हैं, और इस बीच उसे ४-५ वर्षों तक विश्व-युद्धमें उलझे रहना होगा, फिर भी विश्वका मंगल-भविष्य सुरक्षित है, और हमारी यही कामना है। ■■

सी। जी २६ हाईकोर्ट, कॉलोनी
जोधपुर (राजस्थान)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ मैं ज्योतिषी नहीं हूँ ॥ आप भी अ-ज्योतिषी तो हो सकते हैं और वर्तमानसे अगर आत्मीयता है आपकी तथा अतीत-राग आपको क़ैद नहीं करता है--तो भविष्यवाणी आप भी कर सकते हैं कि आपकी उम्रमें कोई तैंतीस वर्ष जोड़ दे तो आपकी शक़्ल कैसी हो जायेगी। आप ऐसा न करना चाहें तो क्षमा करें, ख़ासकर महिलाएँ।...

'क्या होगा ?'--के उत्तरमें

गिरीश अस्थाना । इधर मैं महसूस कर रहा हूँ कि वर्तमान शताब्दीका अन्त होते-होते भारतमें प्रचलित (तथाकथित ?) लोकतन्त्रवादी शासन-व्यवस्था समाप्त हो जायेगी। यह शासन-पद्धति भारतकी पचास करोड़ जनताके हितोंकी रक्षा करनेमें वस्तुतः सर्वथा अयोग्य सिद्ध हो चुकी है। हमारे शासकोंने, जिनके दिल-दिमाग़ अँगरेज़ी साँचेमें ढले थे, इंगलैण्ड, अमरीका, स्विट्ज़रलैण्ड आदि देशोंके संविधानोंसे उधार लेकर इसे हमारे ऊपर थोप दिया है। मौजूदा हालतमें देशकी 'जीनियस'से वास्तवमें यह मेल नहीं खाती। तीन-तीन पंचवर्षीय योजनाओंके दौरान हुए औद्योगिक विकासके बावजूद ग़रीबी और अमीरीकी खाई और बढ़ी है। खेतीकी हालत दयनीय है। मध्यमवर्ग पूरी तरह पिस चुका है। चारों ओर अराजकता फैल रही है। आम चुनाव कराके 'सफ़ेद हाथियों'को विधान-सभाओं, परिषदों और संसद्-रूपी 'टॉकिंग शॉप'में भेजनेकी यह महँगी व्यवस्था इस ग़रीब देशके अनुकूल नहीं है। वास्तवमें यह शासन-व्यवस्था केवल उन्हीं पश्चिमी देशोंमें सफल रही है जिनकी जनसंख्या बहुत कम है या जो उपनिवेशवादी थे या हैं। राजनैतिक या आर्थिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपसे परतन्त्र देशोंके लूटपाटके मालसे ये देश अपने यहांके श्रमजीवियोंको सन्तुष्ट रखने और उनका जीवन-स्तर ऊँचा उठानेमें सफल रहे हैं। ग़ौर करनेकी बात यह है कि उन देशोंमें भी, जहाँकी ९५ प्रतिशत जनता शिक्षित है, चुनावोंमें जब खासी धाँधली होती है तो भारत-जैसे देशमें, जहाँ ९५ प्रतिशत जनता अब भी अशिक्षित है, चुनावोंमें कितनी धाँधली मचती होगी। इन चुनावोंपर पैसा पानीकी तरह बहाया जाता है। जो उम्मीदवार क़र्ज़ लेकर या किसी भी तरह पैसा उगाहकर चुनाव लड़ेगा, जीत जानेपर सबसे पहले तो वह अपना ही घर भरेगा। फिर, जो लोग चुनाव लड़नेके लिए किसी राजनैतिक दल-विशेषको पैसा देते हैं, वे यह भी चाहेंगे कि ताक़तमें आ जानेपर वह दल-विशेष उनके स्वार्थोंकी रक्षा करे। तो फिर भूखी-नंगी जनताके हितोंकी रक्षा कौन करेगा ?

• आर्थिक संकट, बढ़ती हुई आबादी, खाद्यान्नकी कमी :

साधारण लोग दिनोंदिन
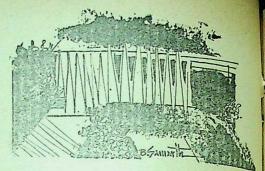
• क्या देखा भविष्यमें ?

विलियमकी भविष्यकी यात्राकी पूरी तैयारी थी। उसे एक कैमरा, एक टेप-रिकार्डर तैयार करके दे दिये थे। उस रात हमने उसकी सफल यात्राकी सद्भावनाओंके जाम पिये। जब वह जाने लगा, मैंने कहा, "कहीं ऐसा न हो कि भविष्यका संसार तुम्हें इतना पसन्द आ जाये कि तुम लौटना ही न चाहो। हम यहाँ तुम्हारी वापसीके लिए परेशान रहेंगे। सो जल्दी लौटना।"

"जल्दी ही लौटूँगा!" उसने आश्वासन दिया। वह सही-सलामत और सही समयपर ही वहाँ पहुँचा होगा क्योंकि हमें आशा थी, वह कई वर्ष पश्चात् आयेगा—परन्तु वह तो इतनी जल्दी वापस आ गया कि लगा, अभी-अभी तो गया ही था।

"कुछ बताओ तो!" हमने अधीरतासे उसे घेरते हुए पूछा।

"पहले कुछ कॉफ़ी-वॉफ़ी तो पिलाओ!" उसने कहा।

मैंने उसे कॉफ़ी दी और उसकी ओर प्रश्नवाचक दृष्टिसे देखा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मुझे कुछ भी याद नहीं है।"

"याद नहीं है ? कुछ भी ?"

कुछ क्षण वह सोचता रहा, फिर बोला "नहीं, बिलकुल कुछ भी नहीं।"

"लेकिन तुम्हारा कैमरा ? तुम्हारा टेप-रिकार्डर ?"

उसने कैमरा हमें पकड़ा दिया, उसमें फ़िल्म अभी भी पहले नम्बर पर थी, जहाँ रखकर मैंने उसे दिया था। टेप-रिकार्डर पर अभी टेप चढ़ाया ही नहीं गया था।

"लेकिन क्यों ? कैसे तुम्हें कुछ भी याद नहीं ?"

"केवल एक बात याद है।"

'क्या ?"

"मुझे सब कुछ दिखाया गया, सब जगह घुमाया गया, फिर मुझसे पूछा गया कि इन सबको तुम याद रखना चाहते हो या नहीं, इनकी फ़ोटो ले जाना चाहते हो या नहीं, चुनाव तुम्हारा है।"

"और तुमने यही चुना कि कुछ याद नहीं रखना चाहते। लेकिन ऐसा क्यों ? आश्चर्य है..."

विलियम बोला, "याद नहीं आता कि मैंने भविष्यमें ऐसा क्या देखा था जिसे मैं याद नहीं रखना चाहता था और न उसकी फ़ोटो लेना चाहता था, यही आश्चर्य तो मुझे हो रहा है !"

(मूल० : वेलैण्ड यंग : : अनु० : ब्रह्मदेव)

त्रस्त और दाने-दानेको मुहताज होते जा रहे हैं। क्या आप बड़े नगरोंके फ़ुटपाथोंपर चलती-फिरती लाशें नहीं देखते ? क्या आपने कभी उनकी आँखोंमें झाँकनेकी, उनके दुःख-दर्दको समझनेकी कोशिश की है ? वोट माँगनेके समयको छोड़कर गद्दीधारी नेता लोग कभी बदबू, सड़ाँध और बीमारियोंसे भरी बस्तियों और तंग अँधेरी गलियोंमें कभी जाते भी हैं ? पानी अब सिरसे गुज़र रहा है। शासन-व्यवस्था टूट रही है। गाँवों और शहरोंमें अराजकता, लूट-मार, डाकाज़नी और आग-ज़नी बढ़ रही है। महँगाई भी दिन-दूनी, रात-चौगुनी बढ़ रही है। एक दिन नौबत आयेगी कि लोग एक पसेरी अनाज या सेर-भर चीनी खरीदनेके लिए बोरा-भर नोट लिये घूमेंगे, जैसा कि चीनमें हुआ था। फलतः वामपक्षी और दक्षिण-पक्षी विचारधाराके लोगोंमें टक्कर होगी। परस्परविरोधी विचारोंवाली प्रतिपक्षी दलोंकी मिली-जुली सरकारें क्या कर सकेंगी और वे कितने दिन टिकेंगी ? हमारे शासक अब भी क्यों नहीं समझते कि वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगसे खेल रहे हैं? यह आग देशके एक कोनेमें भड़केगी तो सारे देशमें फैल जायेगी, और न जाने कितना कुछ इसमें ध्वस्त हो जायेगा।

● नैतिक पतन और राजनैतिक अदूरदर्शिता :

पदलोलुपताने हमारे नेता लोगोंको अन्धा बना दिया है। स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बाद २० वर्षोंमें भारतवासियोंका घोर नैतिक पतन हुआ है। बेईमानी और भ्रष्टाचारका बोलबाला है। युवा पीढ़ी कुण्ठा और निराशाकी शिकार है। उसके सामने केवल अन्धकार है। अन्धविश्वास, भाग्यवादी दर्शन और तथाकथित अहिंसावादी परम्परा-ने हमें निकम्मा और संवेदना-रहित बना दिया है। हर प्रकारके अन्यायको हम आँख मूँदकर सह लेनेके आदी हो गये हैं। जन-साधारण अपनी सामर्थ्यमें आस्था खो बैठा है। हम लोग भेड़ोंकी तरह आँख मूँदकर किसी भी झण्डेके पीछे चल पड़ते हैं, चाहे वह झण्डा धर्म-रक्षावालोंका हो या आर्थिक परतन्त्रतासे छुटकारा दिलानेवालोंका। यही कारण है कि हमारे यहाँ एक-दो नहीं, बीसियों झण्डे हैं।

इतिहास साक्षी है, हमारे यहाँ सदा गृह-कलह रही है। छोटे-बड़े रजवाड़े बनते-बिगड़ते रहे हैं। अपेक्षाकृत शान्ति और व्यवस्था तब रही है जब विदेशियोंने आकर इस देशकी धरतीपर क़ब्ज़ा जमा लिया। अँगरेज़ जाते-जाते देशके तीन टुकड़े कर गया। मगर देशके विभाजनके लिए अँ-रेज़ोंसे भी अधिक हमारे नेताओंकी राज-नैतिक अदूरदर्शिता और गद्दी सँभालनेकी उतावली ही ज़िम्मेदार है। यह ऐतिहासिक सत्य है कि उन प्रान्तोंमें, जहाँ मुसलमानोंका बहुमत था, राजनैतिक सुधारोंके आधारपर सन् १९३७ में हुए चुनावमें कहीं भी मुस्लिम लीगकी मिनिस्ट्री नहीं बन पायी थी हालांकि लीगने साम्प्रदायिकताका ज़हरीला प्रचार करनेमें कोई कसर उठा नहीं रखी थी। अधिकतर लीगी उम्मीदवार उन्हीं प्रान्तोंसे चुने गये थे जहाँ मुसलमान अल्पसंख्यामें थे! उत्तर-पश्चिमी सीमावर्ती प्रान्त, पंजाब सिन्ध और बंगालके मुसलमान इस बातपर विश्वास ही नहीं करते थे कि सम्प्रदाय या धर्मके आधारपर देशका विभाजन होगा। और तो और, स्वयं अँगरेज भी इस बातमें विश्वास नहीं रखते थे। मगर वे मँजे हुए कूटनीतिज्ञ थे, देशको टुकड़े-टुकड़े करनेकी उनकी साज़िशें बराबर जारी थीं। मुस्लिम-लीगकी विघटनकारी नीतिका परोक्ष रूपसे वे समर्थन कर रहे थे। लीग उन प्रान्तोंमें ज़ोर पकड़ रही थी जहाँ मुसलमान अल्प-संख्यामें थे। अँगरेज़ोंने साम्प्रदायिकताकी इस आगको हवा दी और जिन्ना और उनके अनुयायिओंने देशव्यापी रक्तपातकी धमकीकी तलवार काँग्रेसी नेताओंके सिरोंपर लटका दी, कहा कि अगर पाकिस्तान नहीं बनेगा तो देशमें ख़ूनकी नदियाँ बह निकलेंगी। हमारे 'अहिंसावादी' नेता घबरा गये और उन्होंने गान्धीजीके विरोधके बावजूद लीग-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की माँगके सामने घुटने टेक दिये। यहाँ गौर करनेकी बात यह है कि जिस रक्तपात-से बचनेके लिए हमारे नेताओंने देशका विभाजन स्वीकार किया था, वह रक्तपात आखिर होकर रहा; पंजाब, बंगाल और सिन्धमें खूनकी नदियाँ बहीं। अँगरेज़ोंके तत्त्वावधानमें बने सीमा-निर्धारण-आयोग (बाउण्डरी कमीशन) की कमानमें काम करनेवाली फ़ौजके अँगरेज़ अफ़सरोंने मुस्लिम क्षेत्रमें भारतीय सेना और पुलिसके मुसलमान जवानोंको हिन्दुओं-सिक्खोंका, और हिन्दू क्षेत्रमें हिन्दू-सिक्ख जवानोंको मुसल-मानोंका क़त्ल-ए-आम करनेके लिए उक-साया। जब शरणार्थियोंसे भरी स्पेशल गाड़ियाँ पाकिस्तानसे भारत, और भारतसे पाकिस्तानकी सीमामें प्रवेश करती थीं तो उनमें जीवित शरणार्थियोंकी अपेक्षा औरतों, मर्दों, बच्चों और बूढ़ोंकी कटी हुई लाशें ही अधिक मिलती थीं। विचारणीय बात है कि विभाजन अगर करना ही था तो सीमा-निर्धारणके लिए क्या किसी तटस्थ देश, जैसे नार्वे, स्वीडन, यूगोस्लाविया या चेकोस्लोवाकिया आदिकी फ़ौज मध्यस्थताके लिए नहीं बुलायी जा सकती थी? गद्दीपर बैठनेकी आखिर ऐसी उतावली क्या थी? अँगरेज़ तो जा ही रहा था, मगर जाते-जाते भी वह अपना खेल खेला रहा था। हमने इस नाज़ुक मामलेमें फिर भी उसपर विश्वास क्यों किया? उसकी कूटनीतिक चालोंसे हम बेखबर क्यों रहे? हमारे नेता लॉर्ड वेवलकी चेतावनी भी भूल गये जिसने लॉर्ड माउण्टबेटनको गद्दी सौंपकर जाते समय आकाशवाणीसे दिये गये अपने विदाई-सन्देशमें बड़े स्पष्ट शब्दोंमें कहा था : "देअर आर डार्क एण्ड डेन्जरस डेज़ एहेड!"—(भारतके लिए) खतरोंसे भरे, घोर अन्धकारमय दिन अब आनेवाले हैं!

तो यह हमारे नेताओंकी राजनीतिक अदूरदर्शिता ही थी जिसके कारण देशका विभाजन हुआ। भारतकी भावी पीढ़ियाँ इसके लिए उन्हें कभी क्षमा नहीं करेंगी। अगर वे अपनी बातपर अड़े रहते और साम्प्रदायिक शक्तियोंसे लोहा लेनेमें अपनी शक्ति लगाते तो रक्तपात होता ज़रूर, लेकिन इतना अधिक न होता और देश भी अखण्ड बना रहता।....बहरहाल हम जो सोचते थे कि देशका बँटवारा करके हमलोग हिन्दू-मुस्लिम समस्याको हमेशाके लिए हल कर लेंगे, क्या हम ऐसा कर सके? कश्मीर-का सवाल आज भी मुँह बाये खड़ा है। अच्छा, जाने दीजिए इस सवालको!...लेकिन आन्तर-प्रान्तीयताका सवाल? द्रविड़-मुन्नेत्र-कषगम, शिव-सेना और मुनाफ़ाखोरोंकी 'सेना' और राष्ट्रीय स्वयं-सेवक-संघ? नागा, मीज़ो और अन्य पहाड़ी जातियोंके आन्दोलन?

• संकीर्णता और कट्टरताका घुन :

आज भी ऑल इण्डिया रेडियो जिस एकता-की दुहाई देता है, वह एकता देशमें कहाँ है? आज भी हम लोग छोटी-छोटी बातों, जात-पाँत, दीन-मज़हब, बोली-भाषाके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झगड़ोंको लेकर ही एक-दूसरेके सिर फोड़नेको तैयार रहते हैं। बोली-भाषाके आधार-पर नित-नये राज्य बनते जा रहे हैं। जनताके नामपर सभी नेता लोग हलवे-माण्डेमें अपना हिस्सा माँग रहे हैं, वैसे जनता जाय चाहे भाड़-चूल्हेमें। इस प्रवृत्तिका अन्त कहाँ जाकर होगा? देशको सफ़ेद हाथियोंकी फ़ौजकी ज़रूरत है या कर्मठ, ईमानदार कार्य-कर्ताओंकी?—देखा गया है कि जब कोई आक्रामक हमारे ऊपर चढ़ बैठता है तभी हमलोगोंके शरीरमें व्याप्त एकताके कीटाणु कुछ ज़ोर मारते हैं। मगर जहाँ युद्धविराम हुआ कि ये फिर सो जाते हैं और तब संकीर्णता, भेद-भाव और वैमनस्यके कीटाणु फिर क्रियाशील हो उठते हैं। मुझे इस समय प्रथम स्वतन्त्रता-दिवस, १५ अगस्त, सन् १९४७ के उपलक्षमें लिखे गिरिजाकुमार माथुरके गीतकी पहली पंक्ति याद आ रही है; "आज जीत की रात पहरुए सावधान रहना!"—न केवल पहरुए सावधान नहीं रहे, बल्कि विजय-बेलाकी लूटमें उन्होंने वह मुस्तैदी दिखाई कि 'पाँचों घीमें और सर कड़ाहीमें' और 'अन्धा बाँटे रेवड़ी....' वाली कहावतें चरितार्थ हो गयीं। और फिर ताक़त और दौलतके नशेमें चूर हो, लम्बी तान, वे ऐसे सोये कि दुनिया-जहानकी खबर ही नहीं रही। आज भी उनकी आँखें कहाँ खुली हैं? अन्य धन्धोंकी तरह लोग राजनीतिको एक लाभप्रद धन्धेके रूपमें ही अपनाये हुए हैं।

● कलाकारों और साहित्यकारोंकी दुर्गति

लेखक होनेके नाते मुझे यह पूछनेका अधिकार है कि इस शासन-व्यवस्थाने साहित्यकारों और कलाकारोंके लिए क्या किया है? अकादमियाँ तो कई बन गयी हैं जिनमें गिने-चुने लोग मौज मारते हैं, मगर आम साहित्यकार या कलाकारको सरकारकी ओरसे क्या सुविधाएँ प्राप्त हैं? सच्चा कलाकार या साहित्यकार तो नमक-रोटी खाकर भी अपना काम करते रहना चाहता है। महल-दुमहलोंके सपने वह नहीं देखता। लेकिन आजकल तो नमक-रोटी खा सकना भी उसके लिए दूभर हो रहा है। सरकार यदि चाहती तो उसे कतिपय सुविधाएँ दे सकती थी। उसके लिए रेलभाड़ेमें रियायत की जा सकती थी, बड़े नगरोंमें भाड़ेके सस्ते मकानोंकी व्यवस्था की जा सकती थी।

इसीलिए मुझे लगता है कि वर्तमान शताब्दीके समाप्त होते-होते भारतमें इस व्यवस्थाका अन्त हो जायेगा और यहाँ कोई-न-कोई 'तानाशाही' शासन-व्यवस्था (चाहे वह मिलिट्रीकी हो या किसी राजनैतिक दलकी) वजूदमें आ जायेगी। गृह-युद्ध भी हो सकता है। और अगर इसमें अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियोंने हस्तक्षेप किया तो यह स्थिति और भी जल्दी आ सकती है।" मैं कोई ज्योतिषी तो हूँ नहीं, लेकिन वर्तमान परिस्थितियाँ इसी ओर इंगित करती हैं। ▪▪

२३४, मास्टर कन्हैयालाल रोड,
ऐश बाग़, लखनऊ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ द कमीशन ऑन द ईयर २००० ॥ अमेरिकामें लोग अतीतकी जुगाली नहीं करते, भविष्यके नक़्शे बनाते हैं : वहाँ अब भी माता-पिता अपने बच्चोंके निजी विकासको ही देशकी अगली तसवीर मानते हैं। उस समाजकी तुलनामें हम 'क्या' और 'कहाँ' हैं और क्यों नहीं यहाँके 'नये' 'गिन्सबर्ग'की बजाय 'लिण्डबर्ग' बनते ?.........

चाँद हमारा पेरिस है

सोमा वीरा / एक ज़माना था, सुभद्रा-अभिमन्युका—जब आकाश-पातालकी यात्रा उच्च धनिक वर्गके लिए सहज-सुलभ थी....

एक संयोगिता-पृथ्वीराजका—जब आकाश-पाताल परीलोककी कथा बन गये थे, और पड़ोसी देश तलवारोंकी नोकोंपर टँके बन्दीघर....

और एक है आजका—इस अमरीकी आजका—जब कि 'संयोगिता' और 'पृथ्वीराज' एक दूसरेको वरमाला पहनानेके कुछ दिन बाद ही एक दूसरेको तलाक़ दे देते हैं। जन्म-जन्मकी प्यास लिये 'प्यारका उचित पात्र' खोजते गली-गली, कुंज-कुंज भटकते हैं। और फिर कवि रसखानकी तरह यह भान होनेपर कि जिसे वे खोज रहे हैं, वह तो कभीका उन्हें मिल चुका था, झटपट तलाक़का रुक्का फाड़, दोबारासे विवाह कर, फिरसे गृहस्थी जमानेकी कोशिश करते हैं।

• एक ज़माना होगा कलका। तैंतीस वर्षोंके बादका। शताब्दी बदलेगी। ज़िन्दगी एक नयी करवट लेगी। क्या वाक़ईमें ?

एक भारतीय कैलेण्डरके अनुसार शताब्दि अनेक दशक पहले ही बदल चुकी है। दूसरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय कैलेण्डरके अनुसार यह सन् १९६७ नहीं, केवल शक् १८८९ है।

और यहूदी कैलेण्डर...और इस्लामी कैलेण्डर। उनकी अपनी अलग सदियाँ हैं। अलग वर्ष हैं।

बीती सदियोंमें क्या मोड़ बदले हैं? फिसलनें बदलीं हैं? इनसान बदले हैं? या लौट-लौटकर फिरसे फ़ैशनमें आ जानेवाली नववधुकी नाककी नथकी तरह, भौतिक जगत् वही रहा है? केवल, प्रगतिके पत्थरोंकी चोटोंसे, विश्व-तालकी सतहपर जन्म लेते बुलबुलोंके घेरोंका दायरा बढ़ता चला गया है?

उस अधभूले-बिसरे युगकी भौतिक बाँह 'सुभद्रा-अभिमन्यु' थे, और अभौतिक, वे विश्वकर्मा जो आकाशचारी विमानों और अग्नि-जलकी वर्षा करनेवाले यन्त्रोंका अविष्कार करते थे।

उस मध्य-युगके विश्वकर्मा थे वे, जिन्होंने बन्दूक-तोपको जन्म दिया।

भारतीय सम्वत्‌की इक्कीसवीं सदीका प्रथम विश्वकर्मा था चार्ल्स लिण्डबर्ग जो अपने विमानमें, इस सदीमें पहली-पहली बार, न्यूयॉर्कसे पेरिस तक उड़ा।

इस सदीके प्रथम विमानका आविष्कार एक अमरीकीने किया। यह आकस्मिक नहीं था। अमरीकियोंके अतीतमें न तैंतीस करोड़ देवी-देवता हैं, न पातालपुरीपर अपनी धाक जमा वहाँकी राजकुमारी विवाह लानेवाले अर्जुनकी कहानियाँ हैं। न गौतम, मोहम्मद या ईसाके चरण-चिह्न हैं, न हारूँ-अल-रसीदका वैभव है। अतः अमरीकी अतीतकी ओर नहीं देखता, भविष्यकी ओर देखता है। उसकी चिन्ता 'बीते कल' या 'बीतते हुए आज' को लेकर नहीं, 'आनेवाले कल' को लेकर है।

● अमेरिका : २००० :

इस वस्तुस्थितिके सैकड़ों उदाहरणोंके बीच एक उदाहरण, 'द अमेरिकन एकेडमी ऑफ़ आर्ट्स एण्ड साइन्सेज़'-द्वारा स्थापित 'द कमीशन ऑन द ईयर २०००' का। कमीशनका उद्देश्य भविष्यमें पैदा हो सकनेवाली समस्याओंका अनुमान लगाना, और उनके निवारणके लिए उचित और व्यावहारिक हल खोजना है। इसका खर्चा यहाँकी कार्नेगी कॉरपोरेशन दे रही है, और इसकी सदस्यताके लिए देशके प्रमुख मनोवैज्ञानिक और समाज-शास्त्री चुने गये हैं। कोलम्बिया युनिवर्सिटीमें समाज-शास्त्र पढ़ानेवाले प्रसिद्ध प्रोफ़ेसर, डेनियल बेल, कमीशनके चेयरमैन हैं।

इस कमीशनकी प्रथम रिपोर्ट एकेडमी-द्वारा प्रकाशित चातुर्मासिक पत्रिका 'ददालियस' के पिछले अंकमें प्रकाशित हुई है। उसमें कहा गया है—सन् २००० तक तक अमरीकी गृहस्थीका ढाँचा एकदम बदल जायेगा, पति-पत्नीके सम्बन्धोंका एकदम नया रूप होगा, व्यक्तिगत 'प्राइवेसी' का खातमा हो चुका होगा, और देशकी 'प्रॉब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
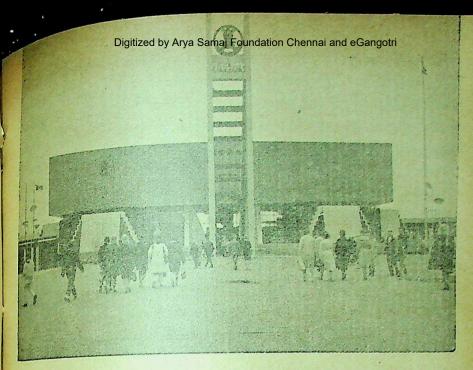
अमेरिकी दर्शक : भारतीय परिवेश (एक्सपो-६७ में भारत-द्वार)

नेशनल प्रोडक्ट' (जी० एन० पी०) लगभग चार ट्रिलियन डॉलर होगी।

शिकागो विश्वविद्यालयके क़ानून (लॉ) के प्रोफ़ेसर हैरि कैलवैन जूनियरका कथन है कि सन् २००० तक, "मेन्स टेकनिकल इन्वैण्टिवनेस-मे, इन टर्म्स आँफ़ प्राइवेसी, हैव टर्न्ड द होल कम्युनिटी इनटू द इक्वीलेण्ट आँफ़ आर्मी बैरक्स!" (इनसानके औद्योगिक आविष्कार 'प्राइवेसी'के क्षेत्रमें सम्पूर्ण समाजकी जिन्दगीको सम्भवतः बैरकमें रहनेवाले सैनिकोंकी-सी ज़िन्दगी बना देंगे।)

वे आगे कहते हैं : "इट मे ब्री ए फ़ाइनल आइरौनिक कमेण्ट्री ऑन हाउ बैड थिंग्स हैव बिकम बाइ २००० ह्वेन समवन विल मेक ए फ़ौरच्यून मेयरली बाइ प्रोवाइडिंग ऑन ए मन्थली, वीकली, डेली और ईविन आवरली बेसिस, ए रूम ऑफ़ वन्स ओन..." (सन् २००० तक ज़िन्दगी कितनी निकृष्ठ हो जायेगी, इसपर एक आखिरी टिप्पणी यह है कि कोई भी लखपति हो सकेगा, सिर्फ़ किसीको, मासिक, साप्ताहिक, दैनिक, या केवल प्रति घण्टेके हिसाबसे ही, एक निजी कमरा किराये पर देकर।)

प्रख्यात एन्थ्रोपोलोजिस्ट, मार्गरेट मीडका कथन है कि वे बहुत-से कार्य जो आजकल गृहस्थीके ज़िम्मे हैं, समाजमें जन्म लेनेवाले विभिन्न क्लबों या अन्य संस्थाओंको सौंप दिये जायेंगे— "कम्पेनियनशिप फ़ॉर, वर्क, प्ले एण्ड स्टेबिल लिविंग वुड कम टु बी बेस्ड ऑन मेनी डिफ़रेण्ट कौम्बीनेशन्स, विदिन एण्ड एक्रौस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेक्स लाइन्स, अमंग डिफ़रेण्ट-साइज़्ड क्लस्टर्स ऑफ़ इण्डिवीजुअल्स....'' (खेल, काम और प्रति दिनकी ज़िन्दगाको नियामक बनानेवाली 'कम्पेनियनशिप'के स्रोत होंगे—दोनों 'सेक्स'-के अलग-अलग और मिले-जुले, तरह-तरहके 'साइज़' के विभिन्न समूह।)

आगे वे कहती हैं : ''द मासिव फ़ेलियर ऑफ़ द फ़ेमिली टुडे ...कुड लीड टु ए न्यू फ़ैमिली स्टाइल, विद-ऐन ऐम्फ़ैसिस ऑर वेरी स्मौल फ़ेमिलीज़ ऐण्ड ए हाइ टौलरेशन ऑफ़ चाइल्डलेस मैरिज ऑर ए मोर एन-कम्पासिंग सोशल स्टाइल, इन ह्विच पेरेण्ट-हुड वुड बी चाइल्ड-रियरिंग, द रेस्ट ऑफ़ द पौपुलेशन वुड बी फ़्री टु फ़न्कशन फ़ॉर द फ़र्स्ट टाइम इन हिस्ट्री, एज़ इनडिविजुअल्स।'' (आजके गार्हस्थिक सम्बन्धोंका वृहत् 'फेलियर'....शायद एक नये प्रकारके गृहस्थ-जीवनको जन्म देगा, जिसमें गृहस्थी एकदम ही छोटी होगी—सन्तानरहित विवाहोंको सामाजिक स्वीकृति मिलेगी, 'पेरेण्टहुड' का अर्थ केवल शिशुपालन होगा; और शेष सभी नारी-पुरुष स्वतन्त्र होंगे, इतिहासमें पहली बार, 'इनडिविजुअल' की तरह ज़िन्दगी बितानेके लिए।)

हारवर्ड विश्वविद्यालयके मनोविज्ञानके प्रोफ़ेसर, जॉर्ज ए० मिलरका विचार है कि सन् दो हज़ार तक इनसानके दिमाग़की नये विचारोंको ग्रहण कर सकनेकी शक्तिका पैमाना पूरा हो जायेगा—''वी मे ऑलरेडी बी नियरिंग सम काइण्ड ऑफ़ लिमिट फ़ॉर मेनी ऑफ़ द लेस गिफ़्टेड अमंग अस....एण्ड दोज़ स्टिल एबिल टु हैण्डिलप प्रेज़ेण्ट लेवे[ल्स] ऑफ़ कौम्पलैक्सिटी वुड बी इन एवर इन्क्री[ज़]िंग डिमाण्ड....'' (उस शीघ्र ही निकट आ[ने] वाले समय तक ही, हममें-से अनेक जो उत[ने] अधिक बुद्धिमान नहीं हैं, एक प्रकारकी दिमाग़ी 'लिमिट' तक पहुँच जायेंगे....और उन लोगोंकी, जिनमें उस कालकी जटिल[]ताओंको समझ सकनेकी क्षमता शेष रहेगी, अधिकसे अधिक माँग होती रहेगी।)

हारवर्डमें समाज-शास्त्रके प्रोफ़ेसर डेविड रीसमैनका विचार है कि, ''ग्रोअिंग प्रेशर्स फ़ॉर पर्सनल ऐचीवमेण्ट कुड ब्रिंग सीवियर सोशल टेन्शन्स् बाई २०००, ऐज़ वेल ऐज़ ए डिक्लाइन इन मैनर्स एण्ड चार्म, एण्ड सोशल डिसएप्रूवल ऑफ़ मेनी हौबीज़।'' (व्यक्तिगत उन्नति प्राप्त करनेकी बढ़ती ज़रूरतें, सन् दो हज़ार तक जन्म दे सकती हैं—तरह-तरहके सामाजिक खिचावोंको, सुसंस्कृत व्यवहारके ह्रासको, और कई प्रकारकी 'हौबीज़' की सामाजिक अस्वीकृतिको। उदाहरणके लिए उस ज़मानेके 'चर्चिल' या 'आइसनहोवर' के लिए यह सम्भव न होगा कि वे अपने अवकाशके समयमें चित्रकारी कर सकें।

हडसन इन्स्टीटयूटके डायरेक्टर हरमैन काहनका विचार है कि सन् दो हज़ार तक अमरीकियोंका 'वर्किंग डे' इतना छोटा हो जायेगा, और उनके पास मनोरंजनके लिए इतना अधिक समय बच रहेगा कि उसका प्रभाव 'कैटेसट्रौफ़िक' होगा। अवकाशके उन क्षणोंको बितानेके लिए वे जिन साधनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्रयोग करेंगे, उन्हें वशमें लाना सहज-सम्भव नहीं होगा।

मि० काहनने लगभग एक सौ यान्त्रिक उपकरणोंकी सूची प्रस्तुत की है, जो उनके विचारमें अगले तैंतीस वर्षोंमें लगभग प्रत्येक अमरीकीको उपलब्ध होंगे। उनमें-से कुछ हैं—ट्रॉसिस्टर रेडियोकी तरह जेबमें रखे जा सकनेवाले टेलीफ़ोन, घरमें नौकरोंकी तरह काम करनेवाली इनसानी शक्ल-सूरत-की मशीनें (रोबॉट), कम्प्यूटर-द्वारा तैय्यार किये गये बटन दबाकर नींदमें लिये जाने वाले सपने (ड्रीम्स) और यान्त्रिक चाँद, जो रातको, एक पूरे नगरको, या उससे भी बड़े भूभागको खूबसूरत रोशनी दे।

मि० काहन, और उनके साथ हडसन इन्स्टीटयूटमें काम करनेवाले मि० ऐन्थनी जे० वाइनरका यह भी विचार है कि आधुनिक अमरीकी नगर सन् दो हज़ार तक इतिहासकी वस्तु बनने लगेंगे। वह ज़माना होगा—महा-महानगरोंका, जिसमें अमरीका की लगभग आधी जनता देशके तीन बृहत् नगरोंमें रहती होगी—'बौसवाश', जिसमें सम्मिलित होंगे आजके बौस्टन, न्यूयार्क और वाशिंगटनसे घिरे हुए सभी भूभाग; 'चिपि-ट्स' शिकागोसे पिट्सबर्ग तकका समस्त भूभाग; और 'सैनसान' जो फैला होगा सैन-फ़ान्सिस्कोसे सैन डीगो तक।

• आइए तुलना करें :

यह है अमरीकी विचारकों-द्वारा कल्पित निकट भविष्यके अमरीकी जीवनकी एक हलकी-सी झलक। हमारे विचारक इस दिशामें क्या कर रहे हैं? ज्ञानोदयका यह विशेषांक क्या इस दिशामें पहला क़दम है?

अमरीकी और भारतीय समाजमें, सामाजिक प्रक्रियाओंके बदलते रूपको सामाजिक स्वीकृति मिलनेके क्षेत्रमें एक प्रमुख विभेद है—प्रक्रियाओंको जन्म देनेवाले सामाजिक अंगोंकी विभिन्नता। इस विभिन्नताका ही यह परिणाम है कि जब पिछले सौ वर्षोंके अन्दर ही यहाँका 'विक्टोरियन' समाज आजके 'रौकफ़ेलर' समाज और 'बीटनिक' समाजमें बदल गया है, हमारे यहाँ आज भी पितामह भीष्मके युगके-से 'लालबहादुर शास्त्री' जन्म लेते हैं जो 'राजा जनक'-सी साधुता और निस्पृहतासे समाजकी प्रक्रियाओंका संचालन करते हैं—आत्मनिग्रहकी इस सीमा तक कि देशका एक उच्चतम पद सँभालनेपर भी, मृत्यु उपरान्त उनका बैंक-एकाउण्ट खाली मिलता है।

• वहाँ माता-पिता अपने बच्चोंकी नक़ल करते हैं :

कुछ शब्दोंमें इस भिन्नताको थोड़ा-बहुत यूँ समझा जा सकता है कि अमरीकी समाजमें, सामाजिक स्थितिको बदलनेकी प्रक्रियाओंको, यहाँका 'टीन' समाज (तेरहसे अठारह-बीस वर्षकी आयुके बालक-बालिका) जन्म देता है। समाज इस बातपर जोर नहीं देता कि बालक माता-पिताके आदर्शोंको समझें-सीखें, और उनपर चलनेकी कोशिश करें। इसके एकदम विपरीत वह इस बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर ज़ोर देता है कि माता-पिता बालककी प्रवृत्तियोंको समझनेकी कोशिश करें, और ऐसा वातावरण बनानेका प्रयत्न करें कि बालकको अपनी उन प्रवृत्तियोंपर स्वतन्त्रता-पूर्वक चलनेका अवसर मिले। इसका एक परिणाम यह होता है कि अधिकांश माता-पिता अपनेको बालकोंके विचारोंके अनुसार ढालनेका प्रयत्न करते हैं। साहित्य, संगीत, कला, खान-पान, पोशाक, सभी क्षेत्रोंमें वे अपनी सन्तानकी नक़ल करते दिखाई देते हैं।

इस स्थितिका एक परिणाम यह है कि परिवर्तन प्रायः परम्परासे जुड़ा हुआ नहीं होता, एकदम कटा हुआ होता है। और दूसरा परिणाम यह है कि यद्यपि यहाँका समाज गृहस्थीकी शृंखलाओंको दिनोंदिन अधिकाधिक टूटते हुए देख सकता है, राज्य-को व्यक्ति और गृहस्थीके दायरोंमें दख़ल डाल उनके उत्तरदायित्व सँभालते हुए देख सकता है, उस टूटनके कुपरिणामोंकी कल्पना और विश्लेषण कर सकता है, किन्तु उस टूटनकी प्रक्रियाको रोकने या उसकी गतिको धीमा करनेमें क़तई असमर्थ है।

किन्हीं भी दो समाजोंकी प्रक्रियाओंको आमने-सामने रखते, प्रश्न अच्छाई-बुराईका नहीं उठता, केवल उनकी प्राकृतिक विशेषताओंका उठता है। किसी भी समाजमें कुछ विशेष प्रक्रियाएँ देश-कालकी स्थितिके अनुसार जन्म लेती हैं। जापानमें राजाको पिता के समान क्यों पूजा गया, और इंगलैण्डमें उसे केवल नामका शासक क्यों बना डाला गया—इसका कारण उन दोनों समाजोंकी प्राकृतिक विभिन्नता ही है। जो प्र[illegible] किसी विशेष समाजको प्रगतिकी ओर [illegible] जाती है, यह आवश्यक नहीं कि वह [illegible] दूसरे समाजको भी वैसी ही प्रगतिकी [illegible] ले जाये। अन्धी नक़ल प्रगति नहीं, [illegible] का अमोघ यन्त्र बन सकती है। जो प्र[illegible] समाजकी जड़ोंमें-से जन्म ले, जड़ोंमें [illegible] जाये, वही प्रगतिका मन्त्र बन सकती है। इसका एक उदाहरण 'असहयोग आन्दोलन' है। भारतीय 'असहयोग-आन्दोलन'की न[illegible] अमरीकी अश्वेतोंने करनी चाही थी। [illegible] आज ख़ून और मार-काटमें बदल गयी है।

● एक उदाहरण : यहूदी संस्कृति

इनसान अपनेको कैसे ज़िन्दा रख स[illegible] है—इसका एक उदाहरण विश्वके [illegible] लोग हैं। इटलीके नगर-राज्योंकी जब [illegible] भी नहीं पड़ी थी, तब उनकी गृहस्थीका [illegible] ढाँचा खड़ा हो गया था, वह आज भी [illegible] प्राचीन रूपमें जीवित है। वे आज भी [illegible] छोटे-बड़े सभी त्योहार उसी धूमधाम [illegible] शानसे मनाते हैं। आजका भारतीय बा[illegible] जनेऊ पहनना गँवारपन समझता है। [illegible] घरोंमें यह संस्कार बन्द-सा ही कर [illegible] गया है, किन्तु प्रत्येक यहूदी बालक [illegible] उत्कण्ठासे अपनी तेरहवीं वर्षगाँठकी प्रती[illegible] करता है जिस दिन उसका 'बार मित्स्[illegible]' संस्कार (उपनयन संस्कारसे मिलता-जुल[illegible] विधान) मनाया जाता है। आनेवाले [illegible] में, जब आजके राष्ट्र, इटलीके नगर-रा[illegible] की तरह ही इतिहासकी वस्तु बन जायें[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब गाँव और नगर मिट जायँगे, और उनकी जगह अनेक नगरोंसे मिलकर बना एक भूभाग नगरपालिकाकी जगह शासन करेगा, यहूदी गृहस्थी तब भी अपनी सन्तानको, दिशा, सन्तुलन और स्वस्थता देती रहेगी।

• एक संघमित्रा और एक शाखा बोधिवृक्ष :

हमारे समाजमें तीर चलानेकी ज़िम्मेदारी सदासे 'अभिमन्यु' और 'एकलव्य' पर रही है, किन्तु वे इस योग्य बन सकें कि कुशलतापूर्वक तीर चला सकें—इसकी ज़िम्मेदारी उनकी अपनी बुद्धिपर नहीं, उनके माता-पिता और गुरुजनके ज्ञानपर आधारित रही है। संघमित्रा बोधिवृक्षकी शाखा श्रीलंका ले गयी थी। उस शाखाको वहाँ भेजनेमें सम्राट् अशोकका अभिप्राय सिर्फ़ बोधिवृक्षकी एक शाखा वहाँ पहुँचाना नहीं था। रामायण-कालसे अशोक-युग तक, श्रीलंकाका भारतके इतिहासमें अपूर्व महत्त्व रहा था। बोधिवृक्षकी वह शाखा श्रीलंका पहुँचानेमें सम्राट् अशोकका वही अभिप्राय था जो लिण्डबर्गका अपना पहला विमान पेरिस ले जानेमें था। लिण्डबर्गका असली अभिप्राय पेरिस जाना नहीं था। उस नगरीका चुनाव उसने इसलिए किया था कि उस भूभागके लगभग सभी व्यक्ति उसके नामसे परिचित थे! कहीं औरकी यात्रा करनेसे उसके प्रयत्नको उससे चौथाई भी विज्ञापन नहीं मिल सकता था। जैसे लिण्डबर्गकी यात्राका यह प्रभाव हुआ कि हवाई यात्राके प्रति जोश युरॅप और अमरीकाके सभी भूभागोंमें फैल गया, वैसे ही संघमित्राकी यात्राके फलस्वरूप बौद्ध-धर्म हिमालय लाँघ गया।

कलके इनसानकी चांदकी यात्रा, संघमित्राकी श्रीलंकाकी यात्रा है, लिण्डबर्गकी पेरिसकी यात्रा है। चाँदपर पड़ते क़दम पहले क़दम होंगे। जैसे लंकाके बाद इण्डोनेशिया आया था, और पेरिसके बाद लन्दन, वैसे ही, चाँदके आगे मार्स है, वीनस है। सैकड़ों नक्षत्र हैं। आनेवाले कलकी सन्तान मानो आज हमसे पुकार-पुकारकर कह रही है—चाँद हमारी लंका है। चाँद हमारा पेरिस है। उस भविष्यमें यातायातके साधन बढ़ेंगे तो जीवनकी सुविधाएँ भी बढ़ेंगी। साधन भी बढ़ेंगे। जो पिछली अमरीकी 'सैटेलाइट' अनाजके दाने आदि लेकर अन्तरिक्षमें गयी थी, उसकी परिक्रमाकी अवधि पूरी होनेके बाद यह निष्कर्ष निकाला गया है कि धरतीकी अपेक्षा, अन्तरिक्षमें अनाज कई गुना अधिक तेज़ीसे बढ़ता है।

भूखी पीढ़ीके सदस्य बन जाना बड़ा सहज है। 'लिण्डबर्ग' बननेके लिए बड़ी भागीरथ तपस्या करनी पड़ती है। हमारी धरतीकी आनेवाली सन्तान भरी सभामें पतलून उतारकर खड़ा हो जानेवाला 'गिन्सबर्ग' बनेगी, या 'चाँद'को एक नया 'पेरिस' बनानेवाला 'लिण्डबर्ग'—इसका उत्तरदायित्व किसपर है? ■ ■

अपार्टमेण्ट ४–बी
२५ वेस्ट, २१वीं स्ट्रीट,
न्यूयार्क, एन० वाई० १००१०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
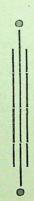
॥ विज्ञानके वशीकरण ॥ कल सूखा, आज बाढ़, फिर कल अनावृष्टि, उसके बाद फिर अतिवृष्टिका डर···क्या आप सोच सकते हैं कि सारे मौसम वशीकरणसे बाँधे जा सकते हैं ? हम तय कर सकेंगे कि फ़लाँ दिन पानी बरसेगा, फ़लाँ दिन मेघदूत सवेरेसे आ जायेंगे या दिन तय करके वसन्तको निमन्त्रित किया जा सकेगा।······

मुट्ठीमें बँधा मौसम

भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव । आदिकालका मानव प्रकृतिकी घटनाओंको समझ पानेमें असमर्थ था। आँधी-तूफ़ान या भूकम्पको वह ईश्वरका प्रकोप मानता। वर्षा होती तो वह सहज ही मान लेता कि यह इन्द्रदेवकी कृपाका फल है। फिर उसने आसपासकी प्राकृतिक घटनाओंका ध्यानपूर्वक निरीक्षण किया तो वह इस निष्कर्षपर पहुँचा कि प्रकृतिकी प्रत्येक घटनाके पीछे एक निश्चित कारण अवश्य मौजूद रहता है, अर्थात् प्रकृति नियमबद्ध है। इन नियमोंकी जानकारी प्राप्त करनेकी कोशिशमें विज्ञानका प्रारम्भ हुआ।

धीरे-धीरे विज्ञानके विकासके साथ मौसमके अध्ययनमें भी प्रगति हुई। ताप नापनेके लिए थर्मामीटर तथा दाबके लिए बैरोमीटर बने तो वैज्ञानिकोंने इन यन्त्रोंके प्रेक्षण और मौसमके परिवर्त्तनका पारस्परिक सम्बन्ध भी पहचाना। उन्होंने देखा कि बैरोमीटरका पारा यदि नीचे उतरता है तो कुछ ही समय बाद उस स्थानपर वर्षा होती है या तूफ़ान आता है; इसके प्रतिकूल यदि बैरोमीटरमें पारा ऊँचा चढ़ता है तो मौसम सुहावना बना रहता है। इस प्रकार इन यन्त्रोंकी सहायतासे आनेवाले मौसमका मोटे तौरपर पूर्वानुमान लगाना उसने सीखा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• मौसमकी निर्माणशाला–वायुमण्डल :

मौसमका निर्माण वास्तवमें पृथ्वीके वायुमण्डलमें होता है जो ५०० मीलसे भी अधिक ऊँचाई तक फैला हुआ है। एक प्रकारसे हम कह सकते हैं कि वायुमण्डल ही मौसम-निर्माणकी फ़ैक्टरी है। अतः मौसमका पूर्वानुमान लगानेके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि समस्त वायुमण्डलका अध्ययन किया जाये तथा उसके अन्दर क्षण-क्षणपर होनेवाले परिवर्त्तनोंका लेखा-जोखा प्राप्त किया जाये। फलस्वरूप सभी देशोंमें मौसम-विज्ञानके व्यवस्थित अध्ययनके लिए अनुसन्धान-शालाएँ खोली गयीं। भिन्न-भिन्न स्थानोंसे वायुदाब, ताप, पवनवेग तथा वर्षाकी मात्रा आदिकी सूचना प्रतिदिन निश्चित समयपर केन्द्रीय मौसम-वेधशालामें संकलित की जाती है। इन आँकड़ोंका अध्ययन करके मौसम-विशेषज्ञ चन्द घण्टोंके लिए देशके विभिन्न भागोंके मौसमके बारेमें पूर्वानुमानकी विज्ञप्तियाँ तैयार करते हैं जिन्हें टेलीग्राफ़ और रेडियो-द्वारा देशके कोने-कोनेमें पहुँचा दिया जाता है। इन्हीं विज्ञप्तियोंके आधारपर समुद्री जहाज़ तथा दूरकी उड़ानपर जानेवाले वायुयान अपना प्रोग्राम निश्चित करते हैं। उदाहरणके लिए यदि मौसम-विशेषज्ञने चेतावनी दी है कि अमुक दिशासे ४० मील प्रति घण्टेकी रफ़्तारसे तूफ़ान अग्रसर हो रहा है तो उस दिशामें वायुयान कदापि उड़ान नहीं करेगा।

विज्ञानकी प्रगतिके साथ वैज्ञानिकको मौसमके रहस्यके नये-नये सूत्र मिलते गये और तब उसने महसूस किया कि किसी प्रदेशके मौसमके बारेमें सही भविष्यवाणी करना आसान काम नहीं है। इसका कारण यह है कि वायुमण्डलके ऊपरी स्तरोंमें प्राकृतिक घटनाओंकी प्रक्रिया अत्यन्त जटिल होती है। जैसे दिल्ली पहुँचनेवाले तूफ़ानका सूत्रपात कदाचित् आठ दिन पहले बंगालकी खाड़ीमें हुआ होगा या कश्मीरमें मेघ-विस्फोट-की मूसलाधार वर्षाके लिए अरबसागरका मानसून उत्तरदायी हो सकता है, अथवा हिन्द महासागरका मौसम ध्रुवप्रदेशके मौसम-परिवर्त्तनसे प्रभावित हो सकता है।

ऊँचे आकाशके वायुस्तरोंका ताप, वायु-दाब तथा पवन-वेग आदिका लेखा प्राप्त करने-के लिए रेडियो-यन्त्रोंसे लैस 'रेडियो सान्डे' गुब्बारे उड़ाये जाते हैं जो ऊर्ध्वाकाशमें पहुँच-कर तत्सम्बन्धी आँकड़े ब्रॉडकास्ट करते हैं। ये सूचनाएँ हेड क्वार्टरके रिसीवर-यन्त्रपर ग्रहण कर ली जाती हैं।

• रॉकेट और उपग्रह :

ये गुब्बारे आकाशमें ८-१० मीलकी ऊँचाई तक ही पहुँच पाते हैं। प्रश्न यह है कि शेष वायुमण्डलकी जाँच कैसे की जाये। अवश्य मौसम-वैज्ञानिकको अन्तरिक्ष-प्रवेशके लिए रॉकेटके रूपमें शक्तिशाली साधन लभ्य हुए हैं। विविध यन्त्रोंसे सुसज्जित रॉकेट ऊर्ध्वा-काशमें भेजे जाते हैं जो उच्च वायुस्तरोंके ताप आदिका ब्योरा रेडियो-द्वारा हेड क्वार्टर-को भेज देते हैं। किन्तु रॉकेट-द्वारा मौसम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आइए, '[illegible]को गुलाम बनाकर कहें
कि पृथ्वीके आसपास 'परिक्रमा करे →

सखि री !
घिर आये बादल नक़ली....
(टिरोससे प्राप्त किया गया मेघदूतोंका चित्र)
↓

गुरुकुल कांगड़ी

लीजिए, एक दर्पण उपग्रहपर स्थापित कर दिया गया और वहाँसे किरनोंको कहा कि ध्रुवप्रदेश-को गरम करें ।
↓
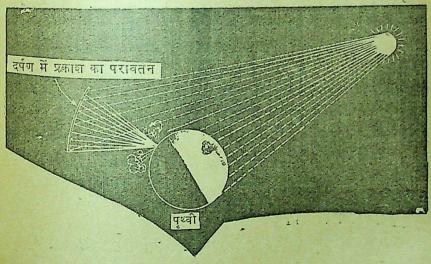
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बन्धित सूचना प्राप्त करनेकी व्यवस्थामें कमी यह है कि ये वायुमण्डलके एक छोटे-से खण्डके बारेमें केवल उतनी ही देर तककी दशाका ब्योरा बतला पाते हैं जितनी देर तक उनकी उड़ान जारी रहती है। वांछनीय तो यह होगा कि वायुमण्डलकी विशेष ऊँचाईपर स्थित वायुस्तरके ताप, दाब आदिका क्षण-क्षणपर बदलनेवाला ब्योरा हमें हफ़्तों और महीनों तक प्राप्त होता रहे। यह काम रॉकेटके बूतेका नहीं है।

अवश्य सन् १९५७ में जब रूसके वैज्ञानिकोंने प्रथम भू-उपग्रह आकाशमें लगभग २०० मीलकी ऊँचाईपर स्थापित किया तो मौसम-वैज्ञानिकोंके मनमें नयी आशा जगी। उन्होंने सोचा कि क्यों न भू-उपग्रहसे मौसम-प्रेक्षणका काम लिया जाये। तदनुसार अमेरिकाने मौसम-प्रेक्षण-यन्त्रोंसे सुसज्जित भू-उपग्रह 'टिरोस' तथा 'निम्बस' ऊँचे आकाशमें सैकड़ों मी.लकी ऊँचाईपर स्थापित किये जो पृथ्वीके गिर्द लगभग डेढ़ घण्टेमें परिक्रमा पूरी करते थे।—(देखिए चित्र 'क') इन उपग्रहोंने अपने कैमरेसे आकाशमें निचले स्तरोंपर तैरते हुए बादलोंकी हज़ारों फ़ोटो उतारीं और उन्हें टेलीविज़न-द्वारा पृथ्वीपर स्थित प्रयोगशालाको प्रेषित किया। महासागरोंके ऊपर स्थित वायुमण्डलके बारेमें भी महत्त्वपूर्ण मौसम-सम्बन्धी सूचनाएँ इन उपग्रहों-द्वारा प्राप्त की जा सकीं जबकि अन्य साधनों-द्वारा इन्हें प्राप्त करना अभी तक सम्भव नहीं हो पाया था। इस प्रकार समस्त वायुमण्डलका प्रथम संसारव्यापी प्रेक्षण ये उपग्रह कर सके। हम कह सकते हैं कि मौसम-निर्माण क्रियाके प्रेक्षणके लिए ये उपग्रह सजग प्रहरीका काम करते हैं। उदाहरणके लिए ये सही सूचना दे सकते हैं कि भूमण्डलके किस भागसे सायक्लोन या हरीकेन उठना आरम्भ हो रहा है तथा किस दिशामें और किस वेगसे यह तूफ़ान बढ़ेगा। अर्थात् यह सम्भावित मौसमी रुझानकी टोह पहले ही पा लेता है और तत्काल अपने हेड क्वार्टरको यह चेतावनी भेज सकता है।

● सूर्यका प्रभाव :

पृथ्वीके मौसमके निर्माणमें सूर्य भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। सूर्यसे निरन्तर उत्सर्जित होनेवाली किरणोंमें प्रकाश, ऊष्मा, इन्फ़ारेड, अल्ट्रावायलेट किरणें, एक्स-रे तथा कॉस्मिक किरणें और रेडियो-तरंगें भी शामिल हैं। उनमें-से अनेक तो वायुमण्डलमें प्रवेश करते ही जज़्ब हो जाती हैं अतः धरतीपर स्थित प्रयोगशालामें सूर्यके विकिरणकी जाँच करनेपर हमें ठीक पता नहीं चल पाता है कि सचमुच सूर्यसे कितनी ऊर्जा विकिरण-द्वारा वायुमण्डलमें पहुँच रही है। इस कार्यके लिए तो अनुसन्धान-उपग्रहोंकी सहायता लेनी पड़ती है। पृथ्वीतलसे ५०० मील ही ऊँचाईपर सूर्यके सम्पूर्ण विकिरणकी जाँच उपग्रहपर लगे यन्त्रों-द्वारा की जा सकती है। ऐसी जाँच-द्वारा तुरन्त इस बातका भी पता लग सकता है कि सूर्यमें कब उद्गार हो रहे हैं। क्योंकि उद्गारके साथ सूर्यपिण्डसे एलेक्ट्रॉन कणोंकी तीव्र बौछार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिकती है जो पृथ्वीके निकट पहुँचनेपर उसके चुम्बकीय प्रभावके कारण ध्रुवोंकी ओर विशेषरूपसे एकत्र हो जाते हैं। नतीजा यह होता है कि इनके प्रहारसे वायुकण उद्दे-लित हो उठते हैं और रंग-विरंगी ध्रुवीय प्रकाश-ज्योति (अरोरा) आकाशमें प्रकट होती है। इस अवसरपर पृथ्वीपर रेडियो संचार-व्यवस्था भंग हो जाती है, तथा रेडर यन्त्र अपना काम बन्द कर देते हैं। इस घटनाको चुम्बकीय तूफ़ान कहते हैं। अतः अन्तरिक्षमें परिक्रमा लगानेवाले ये उपग्रह हमें चुम्बकीय तूफ़ानोंके बारेमें भी अग्रिम सूचना दे सकते हैं।

स्पष्ट है कि समस्त वायुमण्डलकी वर्त्त-मान गतिविधियोंका वैज्ञानिक अध्ययन करके निकट भविष्यकी सम्भावित गतिविधिका सही अनुमान लगाया जा सकता है। अवश्य दीर्घकालीन मौसम–भविष्यवाणी अभी उतनी विश्वसनीय नहीं बन पायी है। कारण स्पष्ट है; सैकड़ों मीलकी ऊँचाई तक फैले हुए वायुमण्डलके बारेमें पूरी जानकारी हासिल करना अभीतक सम्भव नहीं हो पाया है। इस विशाल वायुराशिके विभिन्न उपखण्डोंमें क्या क्रिया-प्रक्रिया चल रही हैं, सूर्यसे कितनी ऊर्जा वहाँ पहुँच रही है तथा पृथ्वीसे परा-वर्त्तित होकर कितनी ऊर्जा पुनः वायुमण्डलमें समा रही है—इन सभी बातोंकी खबर मौसम-वैज्ञानिकको प्रति घण्टे मिलती रहनी चाहिए ताकि उनके आधारपर वह सही मौसम-रिपोर्ट तैयार कर सके।

इस उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए भी प्रयत्न किये जा रहे हैं। उदाहरणके लिए न्यूज़ी-लैण्डके क्राइस्ट चर्च नगरकी मौसम पर्यवेक्षण-संस्थाकी ओरसे गतवर्ष मार्चमें ८८ मौसम-गुब्बारे विभिन्न स्थानोंपर इस तरह उड़ाये गये कि वे लगभग एक वर्ष तक वायुमण्डल-की भौतिक अवस्थाके आँकड़े अपने एलेक्ट्रॉ-निक यन्त्रों-द्वारा ब्रॉडकास्ट करते रहें। यह प्रयोग इतना कामयाब रहा कि अब यह योजना बनायी जा रही है कि पृथ्वीके गिर्द विभिन्न ऊँचाइयोंपर लगभग ६००० मौसम-गुब्बारे स्थापित किये जायें। इन गुब्बारों-से प्रसारित होनेवाले रेडियो-संकेत पहले पृथ्वीके गिर्द परिक्रमा लगानेवाले भू-उपग्रह ग्रहण करेंगे और तब उन्हें परिवर्त्तित करके ये उपग्रह पुनः पृथ्वीकी दिशामें ब्रॉडकास्ट कर देंगे।

● मौसमपर नियन्त्रण :

मौसम-वैज्ञानिक तूफ़ान, सूखा या भारी वर्षा-की अग्रिम चेतावनी देनेके अतिरिक्त इस बातकी कोशिशमें भी है कि वह आनेवाले मौसमको आवश्यकतानुसार बदलकर उसे अपने अनुकूल बना सके। उदाहरणके लिए सायक्लोन कितनी तबाही लाता है, यह सभी जानते हैं। ऐसे तूफ़ानमें सैकड़ों जानें चली जाती हैं, हज़ारों मकान ध्वस्त हो जाते हैं और करोड़ों रुपयोंकी सम्पत्ति नष्ट हो जाती है। १९६५ के एक हरीकेनमें क्यूबाके ७००० व्यक्ति मरे। काश इस तबाही-को हम रोक पाते !

औसत हरीकेन तूफ़ानकी प्रचण्ड शक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगभग ४०० हाइड्रोजन बमकी विस्फोट-शक्तिके बराबर होती है—स्पष्ट है कि ऐसे तूफ़ानपर क़ाबू पाना अत्यन्त कठिन होगा। आइए देखें कि हरीकेनकी उत्पत्ति कैसे होती है। विशेष परिस्थितियोंमें चक्रण करती हुई हवाके बीच वैकुअम पैदा हो जाता है तो समुद्रसे बननेवाली भाप एक स्तम्भके रूपमें ऊँची उठती है और तब समूचा वायुस्तम्भ एक विशालकाय बवण्डर-की शक्लमें आगे बढ़ता है। फिर तो रास्तेमें जो कुछ भी पड़ता है, पेड़—मकान या फ़ैक्टरी—सभीको धराशायी कर देता है।

हरीकेनके केन्द्रपर बादल मौजूद होते हैं; इन्हें घनीभूत करके तूफ़ानकी प्रचण्डता घटायी जा सकती है। इसी उद्देश्यसे एक परीक्षणमें अमेरिकन वैज्ञानिकोंने वायुयान-द्वारा ऊँचाईपर-से सिल्वर आयोडाइडके कण हरीकेनके केन्द्रस्थित बादलोंपर गिराये। सिल्वर आयोडाइड उन बादलोंपर बिखर गयी तो बादलोंमें क्षैतिज दिशामें फैलाव उत्पन्न हुआ। इसका नतीजा यह हुआ कि हरीकेन-की प्रचण्डता विशेष रूपसे घट गयी। अत: इस परीक्षणसे यह आशा की जाती है कि चार-छह वर्षमें ही मौसम-नियन्त्रण-टेकनीक-में इतनी प्रगति हो जायेगी कि हरीकेन और सायक्लोनकी शक्तिको पर्याप्त मात्रामें हम घटा सकेंगे अथवा इनकी मार्ग-दिशाको बदल सकेंगे।

• कृत्रिम वर्षा :

अनेक प्रदेशोंमें आकाशमें लम्बी यात्रा तय करके बादल आते हैं और थोड़ी दे[र] आसमानमें मडराकर बिना पानी बरसा[ये] अन्यत्र चले जाते हैं और धरती प्या[सी] प्यासी ही रह जाती है। वैज्ञानिकोंने [सोचा] 'क्या इन भगोड़े बादलोंको पानी बरसा[नेको] मजबूर नहीं किया सकता?' अवश्य [...] बादलोंकी नन्हीं बूंदोंके आकारको [...] रूपसे बढ़ाकर वर्षा प्राप्त की जा सकती [है]। प्रयोगशालाके अनुसन्धानसे यह ज्ञात [हो] गया है कि हवामें यदि क्षुद्र आकारके [...] कण मौजूद हों तो इनके गिर्द भाप आस[ानीसे] घनीभूत होकर बूंदोंका आकार ग्रहण [कर] सकती है—फिर इनका आकार उत्तरो[त्तर] बढ़ता जाता है।

इस खोजके आधारपर आस्ट्रेलिया, [...] तथा स्वयं भारतमें भी बादलोंसे वर्षा [...] करनेके लिए प्रयोग और परीक्षण कि[ये जा] रहे हैं। (देखिए चित्र 'ख') शुष्क कार्बन[-डाइ-] आक्साइडकी बर्फ़का चूर्ण, नमक [या] कैल्शियम क्लोराइडका चूरा यदि बाद[लोंपर] छिड़का जाये तो नन्हीं बूंदोंका आकार [बढ़] जाता है। अतः अपने वज़नके कार[ण वे] नीचे गिरती हैं और वर्षाके रूपमें धर[ती] पहुँचती हैं। इस क्रियाको बादलोंका 'बी[जारोपण'] कहते हैं। इस सिलसिलेमें भारतीय वैज्ञा[निक] और औद्योगिक अनुसन्धान-परिषद्ने '[...] भौतिकी अनुसन्धान यूनिट' स्थापित की [है,] जो इन दिनों राजस्थानमें जवाई न[दीके] कछारमें प्रयोग कर रही है। आशा की जा[ती] है कि पाँच-दस वर्षके अन्दर ही कृत्रिम व[र्षा]-की सहायतासे राजस्थान-सरीखे मरुस्थ[लों]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपजाऊ भूमिमें परिवर्तित किया जा सकेगा। कुछ उत्साही वैज्ञानिक तो इस धुनमें भी लगे हैं कि आसमानमें बादल न भी हों तो स्वयं कृत्रिम रूपसे बादलोंका निर्माण करके वहाँकी भूमि पर वर्षा करा ली जाये !

मौसम-नियन्त्रणके क्षेत्रमें वैज्ञानिक तो और भी अधिक महत्त्वाकांक्षी योजनाएँ बना रहे हैं। वे चाहते हैं कि पृथ्वीके अतिशय ठण्डवाले प्रदेशों (टुण्ड्रा आदि) में मौसम ऐसा बना दिया जाये कि वहाँ भी खेती की जा सके ताकि संसारकी बढ़ती हुई जन-संख्याकी खाद्य-समस्याको हल करनेमें सहायता मिले। इसके लिए एक प्रस्ताव यह है कि अन्तरिक्षमें एक उपग्रह स्थापित किया जाये जिसपर एक विशालकाय दर्पण लगा हो! (देखिये चित्र 'ग')—इसकी कक्षा इस प्रकार चुनी जायेगी कि इसका दर्पण निरन्तर सूर्यकी किरणोंको परावर्त्तित करके उन्हें ध्रुव प्रान्तोंपर केन्द्रित करता रहे ताकि वहाँकी भूमिको पर्याप्त मात्रामें उष्णता मिल सके।

अन्तरिक्ष-विज्ञानकी उपलब्धियाँ भी इस क्षेत्रमें विशेष योगदान दे सकती हैं। हो सकता है कि इस शताब्दीके अन्त तक अन्तरिक्ष-वैज्ञानिक पृथ्वीके निकट पड़ोसी, मंगल-ग्रहपर पहुँचकर वहाँ परमाणु-शक्ति चालित शक्तिशाली रॉकेटको दागकर उसके धक्केसे मंगल-ग्रहको इस तरह बदल दे कि मंगल सूर्यके और निकट आ जाये। उस दशामें मंगलके धरातलका ताप इस क़ाबिल हो जायेगा कि मनुष्य वहाँ आसानी-से जीवन-यापन कर सकेगा, तब मंगल या शुक्र-ग्रहपर धरतीनिवासी अपने उपनिवेश बसा सकेंगे। सुदूर भविष्यमें तो यह भी सम्भव हो सकेगा कि सौर मण्डलके अन्य ग्रहोंपर धरतीका मानव अपनी वैज्ञानिक सामर्थ्यके बलबूते इच्छानुसार मौसम-दशा स्थापित करके उपनिवेश बसा ले।

समस्त सौरमण्डल तब उसकी क्रीड़ा-भूमि होगी और मौसम उसकी मुट्ठीमें होगा। ■ ■

डी० एस कॉलेज
अलीगढ़

परिवर्तित ग्राहक-शुल्क :

एक प्रति	...	१—५०
वार्षिक विशेषांक	...	३—००
वार्षिक शुल्क	...	१५—००
अर्द्धवार्षिक	...	८—००
तीन वर्ष का	...	४०—००
सात वर्ष का	...	६५—००
पन्द्रह वर्ष का	...	२००—००
आजीवन	...	२५१—००

—व्यवस्थापक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ विज्ञानकी कठपुतली ॥ सच, दुनिया कठपुतलीसे अधिक कुछ नहीं कही जायेगी, लेकिन उसके सूत्र आपके हाथमें होंगे। कम्प्यूटर्स आपकी चाकरीके लिए तैयार रहेंगे। बटन नम्बर ००४४ दबाकर यदि आप कहेंगे कि एक अकविता या एक अकथा चाहिए तो वह दस मिनिटमें आपके सामने हाज़िर होगी······

उँगली पर नाचती दुनिया : कम्प्यूटर्स और ऑटोमेशन

हरीश अग्रवाल । जब कभी भी हम कोई अखबार, पत्रिका या किताब उठाकर देखते हैं, तो कम्प्यूटरकी अजीबो-ग़रीब दुनियाके विषयमें कुछ-न-कुछ लिखा पाते हैं। ये कम्प्यूटर विचित्र मशीनें हैं, जिनका आकार अब पहलेसे बहुत छोटा हो गया है। ये कुछ ही सैकण्डमें जटिलसे जटिल हिसाब-किताब लगा लेती हैं, बड़ीसे बड़ी कम्पनीके कर्मचारियोंकी वेतन-सूची तैयार कर देती हैं, रोगोंका निदान चन्द सेकण्डमें कर देती हैं, हवाई और मोटर यातायातका नियन्त्रण करती हैं, बेकरियोंका संचालन करती हैं, पढ़ती-लिखती हैं, सीखती-सिखाती हैं और यहाँ तक कि कविता करती हैं और कार्टून बनाती हैं।

कम्प्यूटरोंने अब मानवके अनेक कामोंपर अपना अधिकार कर लिया है और इस प्रकार मानवको अनेक कामोंसे मुक्ति मिल गयी है। पहले जिस हिसाब-किताबको करनेमें आदमीको महीनों लगते थे, वे अब कुछ ही मिनिटमें हो जाते हैं। कम्प्यूटर औद्योगिक क्रान्तिके बाद एक नयी क्रान्तिके द्योतक हैं। कम्प्यूटरोंको औद्योगिक, आर्थिक तथा सामाजिक गतिविधियोंसे सम्बद्ध रखनेकी प्रक्रियाको 'साइबरनेशन' कहते हैं। इनको जब मशीनोंसे जोड़ दिया जाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

तो सारी प्रणालीको 'ऑटोमेशन' कहते हैं।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम्प्यूटर आजकी आधुनिक सभ्यताका सबसे महत्त्वपूर्ण आविष्कार समझा जा रहा है। जनरल इलैक्ट्रिक कम्पनीके वाइस-प्रेसीडेण्ट एवं कम्प्यूटर-विशेषज्ञ डॉ० लुई रेडर कहते हैं: "इतिहासमें जितना लाभ इलैक्ट्रोनिक कम्प्यूटरसे मानवको मिल रहा है उतना अन्य किसी आविष्कारसे नहीं मिला।"

कम्प्यूटर एक खामोश मशीन है। यद्यपि अमरीका कम्प्यूटर-विद्यामें सर्वमान्य नेता है, फिर भी कम्युनिस्ट देशोंको मिलाकर अन्य देश भी इसका उपयोग करते जा रहे हैं। यह एक ऐसी विद्या है जिसकी कोई राजनीति नहीं। अमरीकामें यदि एक क्षणको कम्प्यूटरोंको कामसे हटा लिया जाये तो सारे कामकाज ठप्प हो जायेंगे। अमरीकी सरकार ही हिसाब-किताब रखनेसे लेकर आर्थिक नियोजन तक और अतिस्वन प्रक्षेपास्त्रोंका संचालन करनेसे लेकर आकाशका पहरा देने तक, जैसे कामोंके लिए लगभग दो हजार कम्प्यूटरोंका प्रयोग कर रही है। कम्प्यूटर वियतनामकी लड़ाईमें भी पहुँच गया है जहाँ वह सैनिकोंकी जरूरतोंको पूरा करनेमें सहायक हो रहा है।

अन्तरिक्ष-विज्ञानकी असाधारण प्रगति कम्प्यूटरोंके कारण ही सम्भव हो सकी है। अन्तरिक्ष-यानों और कैप्सूलोंकी जाँच-पड़ताल अन्तिम क्षणमें वैज्ञानिकों-द्वारा नहीं बल्कि इन्हीं तेज़ कम्प्यूटरोंकी खटखट और सही-सही सूचनाओंसे की जाती है। अगले ३३ सालमें अन्तरिक्ष-यात्राके क्षेत्रमें कम्प्यूटरोंका योग कितना बढ़ेगा—यह कहना इस समय मुश्किल है, लेकिन इतना अवश्य कहा जा सकता है कि अन्तरिक्ष-यात्राके अनेक जटिल कामोंमें इनका प्रयोग अधिकाधिक रूपमें बढ़ेगा।

वर्तमान कम्प्यूटरोंका जो रूप हम देखते हैं उनमें बीस सालमें पर्याप्त सुधार हुआ है। पहले जो कम्प्यूटर बने उनसे एक बारमें एक ही समस्याका समाधान हो पाता था, लेकिन अब ये अद्भुत मशीनें एक ही बारमें अनेक समस्याएँ हल कर सकती हैं। अब इनके कारण समयकी बचत और अधिक होती जा रही है। यहाँ तक कि इनके कारण जीवनकी मान्यताएँ बदलती जा रही हैं। ये मानव, या कहना चाहिए सारे समाजकी सामूहिक बुद्धिमें विकास कर रहे हैं। यही नहीं बल्कि अनेक काम सरल हो रहे हैं, और मानवको अनेक चिन्ताओं और परेशानियोंसे दूर कर रहे हैं। अब समस्या यह पैदा होने लगी है कि यदि कम्प्यूटर ही मानवके अनेक काम कर देंगे तो मानवके सामने जो समय बच रहेगा उसका उपयोग वह कैसे करेगा?

चिकित्साके क्षेत्रमें कम्प्यूटरसे अनेक परिवर्तनोंकी कल्पना मात्र नहीं की जा सकती बल्कि इनका व्यावहारिक रूप भी दिखाई देता है। हो सकता है, डॉक्टरोंको इस शताब्दीके अन्तसे पहले ही रोगीका निदान करनेके कामसे छुट्टी मिल जाये क्योंकि तब यह काम कम्प्यूटर कर सकेंगे। कम्प्यूटरमें आपके स्वास्थ्यका पिछला पूरा विवरण होगा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसके आधारपर डॉक्टरको कम्प्यूटरसे ही रोगका निदान मिल जायेगा। कम्प्यूटर निदान-सम्बन्धी अनेक परीक्षण कर सकेंगे। ये परीक्षण एक या दो योग्य मेडिकल टेक्नीशियनों और साज-सामानकी सहायतासे सम्भव है। शरीरके अनेक अवयवोंकी परीक्षा रेडियो-आइसोटोप 'ट्रेसरों'के प्रयोगसे सम्भव है। शरीरकी पाचन-प्रणालीकी परीक्षा एक रेडियोट्रान्समीटरवाली कैप्सूल निगलकर की जा सकती है। जैसे-जैसे यह कैप्सूल पाचन-मार्गसे गुजरती है, वैसे-वैसे 'अन्दरकी सूचना' ब्रॉडकास्ट करती जाती है।

जी, जब जिन्दा आदमीका मस्तिष्क बटनसे नचाया जा सकता है तो एक नक़ली मशीनको क्यों नहीं दिमाग़की तरह 'तरंगित' किया जा सकता है? ये हैं मदाम बेख़तेरा लेनिनग्रादके एक अनुसन्धान-केन्द्रमें।

कम्प्यूटरमें अभीतक विचार-शक्ति नहीं आयी है। अभीतक तो वे मानव-बुद्धिके दास हैं, लेकिन काम इतनी तेज़ीसे करते हैं कि मानवकी बुद्धि चक्कर खाती है। हमने विज्ञान-गल्पमें पढ़ा होगा कि कम्प्यूटर मानवसे भी उत्तम तर्कशक्ति प्राप्त कर लेंगे और इस प्रकार वे मानवपर शासन करेंगे और उनके इशारेपर सारी दुनिया नाचेगी। हो सकता है कि 'कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग' में इतना विकास हो जाये कि सन् २,००० तक वे मानवसे बढ़कर नहीं, तो उनके बराबरकी विचार-शक्ति प्राप्त कर लें। अभी ही अमरीकामें वर या वधूकी खोजके लिए कम्प्यूटरका सहारा लिया जा रहा है और वे इसमें बड़े कामके सिद्ध हो रहे हैं।

हम यहाँ एक और बड़ा दिलचस्प उदाहरण लेते हैं। हो सकता है निकट भविष्यमें कम्प्यूटरकी सहायतासे यह सम्भव भी हो जाये। यह क्षेत्र है—मानव जीवनकी गतिविधियोंपर निगाह रखनेका और उसके ग़लत कामोंकी सूचना केन्द्रीय कम्प्यूटर प्रणालीको देनेका। भारतमें करोंकी चोरी करनेवालोंकी कमी नहीं। भविष्यमें कम्प्यूटरोंके ज़रिये इस चोरीका पता लगाया जा सकेगा। अमरीकी राजस्व-विभाग एक विशाल कम्प्यूटर लगा रहा है और फिर किसी भी अमरीकीके लिए अपने पूरे आय-करकी अदायगी बचाना मुश्किल हो जायेगा, क्योंकि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब भी वह कोई ऐसा सौदा करेगा जिसमें कर लगे, उसकी सूचना एक केन्द्रीय कम्प्यूटर-प्रणालीमें पहुँच जायेगी। यह तो रही करकी चोरीकी बात, लेकिन उस समय आपको बड़ी खीज होगी जब आपके घरपर जुर्माना देनेका नोटिस पहुँच रहा है। जुर्माना किस बातका? आपने कुछ समय पूर्व किसी निर्जन स्थानमें बहुत तेज मोटर चलायी थी जिसकी सूचना कम्प्यूटरने रिकार्ड कर ली। यह भी हो सकता है कि यह नोटिस ही न हो बल्कि आपको सूचना दी जाये कि आप पर अमुक-अमुक जुर्माना हुआ और आपके बैंक खातेमें-से जुर्मानेका पैसा ले लिया गया।

आजकल टेलीफ़ोनोंका प्रयोग आम बात है, लेकिन सन् २००० में कम्प्यूटरोंका प्रयोग सम्भवतः आम बात हो जायेगी। कम्प्यूटर व्यक्तिगत कामोंमें प्रयुक्त होने लगेंगे। कोई भी व्यक्ति केन्द्रीय पुस्तकालयके उपन्यास-विभागकी झाँकी ले सकेगा, घर बैठे नयीसे नयी फ़िल्म देख सकेगा या द० अफ़्रीकाके स्वर्णखानोंमें स्वर्ण-उत्पादनके ताजेसे ताजे आँकड़े प्राप्त कर सकेगा। अधिक विकसित देशोंमें पुस्तकालय नहीं रहेंगे, हाँ कुछ पुस्तकालय संग्रहालयोंमें रखे जा सकते हैं। संसारका अधिकांश ज्ञान कम्प्यूटर-मशीनोंसे ही उपलब्ध हो जायेगा।

आजकल क्षेत्रीय भाषाओंमें शिक्षा देनेकी चर्चा चल रही है। कुछका मत है कि अँगरेज़ीमें जो साहित्य उपलब्ध है और जो साहित्य भविष्यमें आयेगा, उसका अनुवाद क्षेत्रीय भाषाओंमें करना मुश्किल होगा। इसके लिए पाँच-दस सालकी अवधि बहुत कम होगी। लेकिन बहुत सम्भावना है कि अगले ३३ सालमें हमें मशीनोंसे अनुवाद मिलने लगे। तब अनुवादकोंका काम समाप्त हो जायेगा। आदमी टेलीफ़ोनपर स्वचालित अनुवाद प्राप्त कर सकेगा। यही नहीं टेलीफ़ोन पर आप संसारके किसी भी व्यक्तिसे अपनी भाषामें बातचीत कर सकेंगे।

वास्तवमें कम्प्यूटर और ऑटोमेशनके अगले ३३ सालमें अनेक विचित्र बातोंके होनेकी सम्भावना प्रकट की जा सकती है। यह तो आनेवाला समय ही बतायेगा कि ये 'इलैक्ट्रोनिक मस्तिष्क' भविष्यमें क्या रूप लेते हैं। बहुत-कुछ भविष्यके इंजीनियरोंके मस्तिष्कपर ही निर्भर करेगा कि वे कहाँ तक और किस प्रकारका काम इनसे ले पाते हैं। आखिर मानवका दिमाग़ अबतक का सबसे बड़ा कम्प्यूटर है। जब कि अमरीकाके सबसे ताज़े यान्त्रिक गणकमें २३ हजार वाल्व ही लगे हैं, मानव-मस्तिष्कमें १५ अरब सैल हैं। इसलिए अभी तो मानव-मस्तिष्क ही इलैक्ट्रोनिक मस्तिष्कपर राज करेंगे। हाँ इतना अवश्य है कि जब कम्प्यूटरोंके द्वारा मानवके अनेक काम होने लगेंगे और अनेक समस्याएँ हल हो जायेंगी तो सारी दुनिया इन कम्प्यूटरोंकी उँगलीपर नाचेगी। बहुत सम्भव है कि सारे संसारमें खुशहाली-ही-खुशहाली छा जाये—उस समय तक कम्प्यूटर-सभ्यताका उदय पूरी तरह हो जायेगा। ■

२९।१६० लाजपतनगर-१
नयी दिल्ली—१४
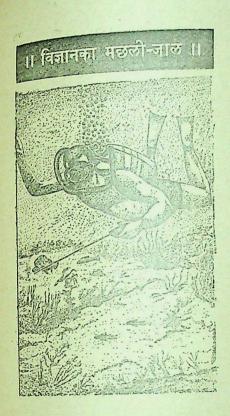
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ० भाभाका स्वप्न था कि समुद्रका सहारा हमें ईंधन देगा···अभी वह चाहे तूफ़ान उठाकर दुश्मन बन जाता है हमारा लेकिन एक दिन यह सेवककी तरह हमारे पैरोंमें लेटा रहेगा।···देखिए, अगले तैंतीस वर्षोंमें वह दिन कब आता है···

पैरोंमें लेटा समुद्र

हरीश / यदि हम यूं कहें कि इस शताब्दीके अन्त तक प्राचीनकालकी तरह समुद्र-मन्थनसे मानवको अनेक बहुमूल्य पदार्थ प्राप्त होंगे, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। पिछले केवल दस वर्षमें ही समुद्रकी खोजका काम इस तेज़ीसे आगे बढ़ा है कि अगले ३३ सालका समय समुद्रको मानवका सेवक बनानेके लिए पर्याप्त प्रतीत होता है। आधुनिक विज्ञान अब यह दावा कर सकता है कि इस शताब्दीके अन्त तक मानवको समुद्रसे पर्याप्त भोजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलेगा, उसे अनेक प्रकारकी धातुएं प्राप्त होंगी, समुद्रमें जमीनकी तरहकी खेती शुरू हो जायेगी, मानव समुद्रके अन्दर उसी तरह रह सकेगा जिस प्रकार वह पृथ्वीपर रहता है और सबसे बड़ी बात यह है कि समुद्रके पानीसे मानवको ऊर्जाका अनन्त स्रोत मिल जायेगा।

सबसे पहले हम समुद्रके अन्दर मिलनेवाले सबसे अच्छे खाद्य स्रोत मछलियोंपर आते हैं। मछलियोंमें प्रोटीन अधिक होती है, इसलिए वे भारत-जैसे देशोंके लिए वरदान हैं। लेकिन विडम्बना देखिए कि समुद्रके अन्दर मछलियोंका अपार भण्डार होते हुए भी मानव उनको पूरी तरह पकड़ नहीं पाता। इसका कारण है—मानवको अभी तक इन मछलियोंके अड्डेका पता नहीं चला है और इनको पकड़नेके साधन भी अपर्याप्त हैं। लेकिन कहा जा सकता है कि अगले ३३ सालमें मानव इन दोनों कमियोंपर क़ाबू पा लेगा और वह पर्याप्त मात्रामें मछलियाँ पकड़ सकेगा। यही नहीं, एक बार मछलियोंके घरोंका पता चलनेपर उन्हीं स्थानोंमें इनको वैज्ञानिक ढंगसे पाला जा सकेगा और इनके भण्डारको दुगुना-चौगुना किया जा सकेगा।

आज हम वैज्ञानिक युगके जिस ... गुज़र रहे हैं, उसे समुद्र-विज्ञानके ... 'पाषाण युग' ही कहा जायेगा क्योंकि ... विज्ञानमें दिलचस्पी बिलकुल नयी ही है। परन्तु यह वैज्ञानिक युग है इसलिए ... विज्ञानका पाषाण-काल भी स्वर्णिम ... कहना चाहिए। इस विज्ञानमें सारे संसारके वैज्ञानिकोंका सहयोग इतना अधिक बढ़ ... है कि यह विश्वासके साथ कहा जा सकता है कि मत्स्य-उद्योगमें एक क्रान्ति आ जायेगी। यही नहीं वैज्ञानिक प्रगतिको जो सहारा मिल रहा है, वह समुद्र-विज्ञानके लिए एक वरदान सिद्ध हो रहा है। ...

थर्मसमें क़ैद कविता

आगामी कविताओं को
बन्द रखा जायगा 'थर्मस' में
जिससे कम से कम
बारह घण्टों तक तो लोग डूबे रहेंगे एक ही रस में

इस घण्टे की कविता पर
दूसरे घण्टे में बासीपन का बोध न होगा
और अपने ही किये पर
क्रोध न होगा....

—रामचन्द्र 'चन्द्रभूषण'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिकोंका कहना है कि शताब्दीके अन्त तक समुद्रकी विभिन्न गहराइयोंमें खोज-के लिए नये प्रकारके यन्त्र बन जायेंगे। ये यन्त्र या नौकाएँ स्वचालित होंगी जिनका नियन्त्रण पानीके ऊपर चलनेवाले जहाजोंसे किया जा सकेगा। वैसे विभिन्न देशोंने अब यन्त्रोंसे सज्जित वैज्ञानिक जहाजोंका निर्माण कर लिया है जो समुद्रके अन्दरकी टोह ही नहीं लेते बल्कि समुद्रके ऊपरके मौसमकी भी जाँच-पड़ताल करते हैं। मौसम-उपग्रहोंने भी समुद्र-विज्ञानमें एक नयी दिशा प्रदान की है। कह सकते हैं कि इन उपग्रहोंके ज़रिये मौसमकी भविष्यवाणी केवल सही ही नहीं बल्कि बहुत पहले की जा सकेगी। कुछ उप-ग्रहोंने ऐसा किया भी है।

हो सकता है, अगले वर्ष ही भारत, जापान और अमरीकाके मौसम-वैज्ञानिक तथा समुद्र-शास्त्री साथ-साथ ही यह सुझाव दें कि समुद्री तूफ़ानों (हरीकेन) को रोका जा सकता है। लेकिन यह कैसे ? यदि हरीकेन-क्षेत्रोंमें समुद्रके पानीको अधिक गरम होने या वाष्पीयकरणसे रोका जा सके। समुद्रकी सतहपर किसी परावर्ती सामग्रीकी पर्त बिछा दी जाये जो सूर्यकी किरणोंको पानीके गरम होनेसे पहले ही परावर्त कर सकती हो। इन वैज्ञानिकोंका सुझाव बड़ा आकर्षक लग सकता है लेकिन इसको असलमें लानेका खर्चा पाँच-सात अरब रुपया बैठ सकता है।

कुछ भी हो, समुद्रकी गतिविधियों तथा इसके अन्दर और ऊपर होनेवाली अनेक घटनाओंके अध्ययनके लिए उपग्रहों और समुद्रोंमें डेरा डालनेवाले जहाजोंका एक जाल बिछ जायेगा। ये जहाज़ समुद्रके अन्दर रहनेवाली पनडुब्बियोंकी भी टोह ले लेंगे और इस प्रकार किसी देशकी सुरक्षाका काम भी करेंगे। उपग्रह सारी पृथ्वीपर बरसनेवाले विकिरण और ऊपर उठनेवाले विकिरणका एक सम्पूर्ण मानचित्र तैयार कर लेंगे। वे पृथ्वीके ऊपर वायुमण्डलमें निर्मित होनेवाले मेघोंके आवरण तथा समुद्री सतहके तापमानोंका आंशिक 'दृश्य' भी उपस्थित कर सकेंगे। ये उपग्रह, जहाज़ और नौकाएँ आँकड़ों और सूचनाओंका अम्बार लगा देंगी जिनका विश्लेषण करनेके लिए कम्प्यूटर लगा दिये जायेंगे जो कई मास आगेके मौसमके सम्बन्धमें सूचनाएँ दे देंगे। अनुमान लगाया गया है कि अकेले अमरीकामें इन सूचनाओंकी उपलब्धिसे दो अरब डॉलर (१५ अरब रुपये) तक की बचत की जा सकेगी। इन सुधरी विधियोंके ज़रिये किसान फ़सल बोने और कटाई करनेके समय बाँध सकेंगे, तेल कम्प-नियाँ तेलके यातायात और संग्रहकी योजनाएँ बना सकेंगी, निर्माण-कम्पनियाँ भावी मौसम-के अनुसार अपने कार्यक्रम बना सकेंगी और सरकारी एजेन्सियाँ बाढ़ और सूखासे सुरक्षा-के लिए पहलेसे कार्रवाई कर सकेंगी।

अब हम आते हैं मानवकी समुद्रके अन्दर रहने और काम करनेकी क्षमता परखनेपर। यह तो तय है कि सन् २,००० तक मानव अधिक समय तक तथा अधिक गहराई तक समुद्रमें रह सकेगा। वह दबाव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युक्त पनडुब्बियोंमें समुद्रकी गहराइयोंमें जाकर तेल, खनिजों, मछलियों आदिकी खोज कर सकेगा। यही नहीं वह समुद्रके अन्दर खेती भी कर सकेगा। समुद्रके अन्दर महीनों तक रहनेवाले गोताखोरोंकी मददके लिए समुद्री सुरंगें बन जायेंगी, टेलीफ़ोन तारोंका जाल बिछ जायेगा और संचारके अन्य साधन उपलब्ध हो जायेंगे। तैंतीस सालमें मानवको पानीके अन्दर बाँध बाँधनेकी विद्या आ जायेगी, जिससे वह समुद्री धाराओंकी शक्तिपर क़ाबू करके उसे विद्युत् शक्तिमें बदल सकेगा। यह बिजली समुद्रके अन्दर और बाहर दोनों जगह काम आ सकेगी। समुद्रके अन्दर इस बिजलीसे खारे पानीको पीने योग्य पानीमें बदला जा सकेगा और बहुमूल्य खनिज निकाले जा सकेंगे।

इस समय सम्भवतः हमें ईंधनकी समस्याकी गम्भीरताका अनुभव नहीं होगा, लेकिन हमारी भावी पीढ़ियोंको अवश्य होगा। कोयला, तेल, लकड़ी आदि समाप्त हो जायेंगी। परमाणु ऊर्जा भी अधिक मात्रामें नहीं मिलेगी क्योंकि यूरेनियमके स्रोत भी कम होते जायेंगे। तब फिर समुद्र-का ही सहारा लेना होगा। समुद्रका पानी एक अनुपम ईंधनका काम दे सकता है। स्वर्गीय डॉ० होमी भाभाने सबसे पहले जेनेवा-सम्मेलनमें, दस साल पूर्व, सुझाव दिया था कि समुद्रके पानीमें उद्जनकी मात्रा अधिक है, इसलिए इस पानीसे परमाणु बिजली उत्पन्न की जा सकती है। हो सकता है, अगले ३३ सालमें डॉ० भाभाका वह स्वप्न सत्य हो जाये। ▪▪

२६।१६० लाजपतनगर-१,
नयी दिल्ली-११

इस ज्योतिर्मय मंगलपर्व पर शुभकामनाओं सहित

रतनलाल डालमिया
प्राइवेट लि०

जूट गुड्स मर्चेण्ट

७, क्लायन्स रेन्ज, कलकत्ता-१

फोन : २२-४५६१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ विज्ञानके ढाई पैर ॥

चन्द्रतलपर कल्पित बस्ती :
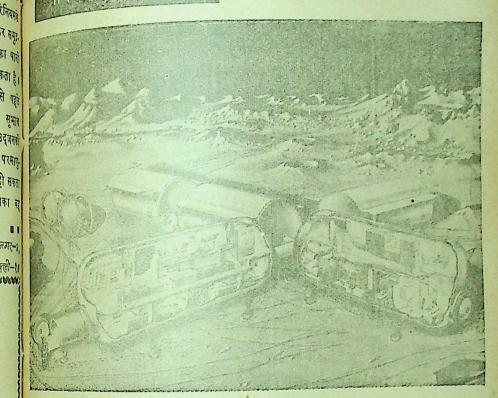
पंखोंपर रखा चाँद

देसराज गन्धर्व । ऊपरके चित्र जैसा ही मोहक है चांद—इसीलिए आकाशकी समस्त वस्तुओंमें मनुष्यको सबसे ज्यादा आकर्षित करनेवाली वस्तु यही रही है। यह उसे सदा ही एक ऐसे लक्ष्यकी भाँति प्रतीत होता रहा है, जिसकी ओर मन लगानेसे उसे एक विचित्र शान्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं मुक्तिका बोध [illegible] है। अब, जो [illegible] इस लक्ष्यपर सशरीर पहुंचनेका कोई व्यावहारिक उपाय नहीं सूझा, वह कल्पनाकी उड़ानोंसे ही वहाँ पहुँचता और विचरता रहा है। यह बात हमें सभी जातियोंके पौराणिक साहित्यमें परिलक्षित होती है।

लेकिन आज यह चिरन्तन साध एक सपना मात्र नहीं रह गयी है, यह स्वयं मनुष्यके बुद्धिबलसे एक ऐसे व्यावहारिक खोज-अभियानका रूप ले चुकी है, जिसे विश्वके बड़े राष्ट्र पूरे मनोयोग एवं आत्मविश्वासके साथ कार्यान्वित करनेमें संलग्न हैं।

आगामी कुछ वर्षोंमें इस पृथ्वीके कुछ प्रतिनिधि इस अभियानपर रवाना हो जायेंगे। वे इस भूतलसे एक ऐसी दीर्घ यात्राके लिए प्रस्थान करेंगे, जिसका पहला चरण यहाँसे लगभग ढाई लाख मीलकी दूरीपर स्थित चन्द्रमापर सम्पन्न होगा, और दूसरा, पुनः इस धरातलको लौटनेपर। इस अभियानमें मानवकी सफलतासे सम्पूर्ण सौर जगत्‌के विजयकी कुंजी उसके हाथ आ जायेगी, और उसके बाद, सम्भवतः, सम्पूर्ण ब्रह्माण्डकी !

● चन्द्र-यात्राका कार्यक्रम :

आइए, हम अपनेको कुछ देरके लिए आजसे कुछ ही वर्ष बादकी दुनियामें ले चलें, और वर्त्तमान विज्ञानकी आँखसे यह देखनेका प्रयास करें कि ब्रह्माण्डके इस भावी विजेता-[illegible] की यह पहली चन्द्र-यात्रा किस प्र[कार] सम्पन्न होगी।

यह सन् १९७० है, या शायद १९[illegible] लेकिन जिस घटनाका वर्णन हम करने [जा] रहे हैं, वह सन् १९७५ से पहले-पहले [अवश्य] ही घट चुकी होगी। अतः यदि आगामी [दस] वर्षोंको हम 'चन्द्र-विजयका दशक' कहें, [तो] अनुपयुक्त न होगा।

...पृथ्वीपर किसी जगह एक विशाल रॉकेट आकाशकी ओर अपना गर्वोन्नत सिर उठाये खड़ा है। यह सचमुच एक महाकार रॉकेट है। मनुष्यकी बुद्धि और परिश्रम द्वारा निर्मित, असाधारण शक्तिका यह लम्बकाय भण्डार इस युगका प्रतीक है जिसमें रहनेका सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ है। यह लगभग इतना ही ऊँचा है, जितना एक २८ मंज़िला भवन हो सकता है। (प्रत्यक्ष अनुमानके लिए कल्पना कीजिए कि यह रॉकेट दिल्लीके कुतुबमीनारसे ज्यादा ऊंचा है।) इसकी रचनामें स्पष्टतः तीन चरण दिख रहे हैं, बल्कि, ठीक तौरसे कहें, तो इसकी नोंकपर एक चौथा चरण भी है। यह चौथा चरण ही वास्तवमें वह अन्तरिक्ष-यान है, जो तीन या चार प्रशिक्षित अन्तरिक्ष-यात्रियोंको लेकर चन्द्रमाके आकाश तक जायेगा। अमरीकाने अपने कार्यक्रमके अन्तर्गत इस यानका नाम 'अपोलो' रखा है और रूसने सम्भवतः 'लूना'। यहाँ हम 'अपोलो' का वर्णन दे रहे हैं, और इसे हम सुविधाके लिए केवल चन्द्र-यान कहेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **राकेटको समझ लें पहले :**

इस चन्द्र-यानके दो भाग हैं। एक तो वह शंकुरूप कैप्स्यूल (डिब्बा) है, जिसमें समस्त नियन्त्रक उपकरण व सूचक आदि तथा यात्रियोंके लिए विशेष प्रकारकी आराम-कुरसियाँ लगी हुई हैं। इसके निचले चौड़े तलेके साथ, जिसका व्यास लगभग ४ मीटर है, यानका शेष भाग जुड़ा है। यह दूसरा भाग, जो लगभग ७ मीटर लम्बा है, दर-असल यानका ईंधन व सामग्री-भण्डार तथा उपकरण-केन्द्र है। दोनों भागोंमें यानकी अपनी स्वतन्त्र रॉकेट-व्यवस्थाएँ जुड़ी हुई हैं, जिनकी सहायतासे यानको इच्छानुसार किसी भी दिशामें संचालित किया जा सकता है।

जिस स्थानपर यह चन्द्र-यान रॉकेटके सबसे ऊपरवाले तीसरे चरणके साथ जुड़ा हुआ है, वहाँ इस चरणके खोखले भागके भीतर चार पायोंवाला एक मकड़ीनुमा ढाँचा रखा है। यह भी वास्तवमें एक रॉकेट-व्यवस्था युक्त यान ही है, और यात्राके अन्तिम चरणमें चन्द्रमाके आकाशसे उसके तलपर उतरनेका काम इसी ढाँचे-द्वारा लिया जायेगा। इसके भी दो भाग हैं : एक, यात्रियोंके बैठनेका कैप्स्यूल, और दूसरा चार पायोंवाली कुरसी। यह लगभग ६ मीटर ऊँचा और ५ मीटर चौड़ा है।

अब हम देखते हैं कि रॉकेट-समूहके सिरेपर जुड़ा हुआ यह चन्द्र-यान और उसका सहायक चार पायोंवाला 'अवतरण यान' अपना कार्य किस तरह करते हैं।

रॉकेट-समूहके छूटनेके लगभग दस मिनिट बाद, जब पहला और दूसरा चरण अपना-अपना काम समाप्त कर, समूहसे अलग होकर, बारी-बारीसे पृथ्वीकी ओर गिर जाते हैं. और तीसरा चरण अपनी नोंकमें लगे चन्द्र-यान समेत भूमण्डलके गिर्द कक्षामें स्थित हो जाता है, तब एक जटिल और जोखिमभरी गतिविधि आरम्भ होती है।

भूमण्डलकी परिक्रमाके दौरान अति सूक्ष्म गणक यन्त्रों (कम्प्यूटरों) - द्वारा निर्धारित एक ठीक मुहूर्तपर तीसरे चरणके इंजन फिर एक बार चल उठते हैं, और पाँच मिनिटके भीतर समूहकी गति उस सीमाको छू लेती है, जो उसे पृथ्वीके गुरुत्वाकर्षणसे पूर्णतया मुक्त करनेके लिए अपेक्षित है, अर्थात् लगभग ३८८८० किलोमीटर अथवा २५ हज़ार मील प्रति घण्टाकी गति। इसके साथ ही वह भूमण्डलके गिर्द अपने वृत्तीय पथको छोड़कर एक दीर्घवृत्तीय प्रेक्षण पथपर मुड़ जाता है, जो उसे ठीक उस स्थल तक ले जायेगा, जहाँ चन्द्रमा यात्रामें लगनेवाले समयके बाद स्थित होगा। उस स्थलकी ओर जाते हुए समूहकी गति धीरे-धीरे कम होने लगती है, यहाँ तक कि वह लगभग ४८०० किलोमीटर प्रति घण्टापर स्थिर हो जाती है। यह चन्द्रमा तक जानेकी यानकी सामान्य गति रहेगी।

अबतक, ध्यान रहे, रॉकेट-समूहका तीसरा चरण यानके साथ जुड़ा है। अतः अब समूहके चन्द्रोन्मुख होते ही एक नयी गतिविधि आरम्भ होती है। इसके लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यानके यात्री एक बारूदी व्यवस्थाको चालू करते हैं, जिसके विस्फोटसे तीसरे चरणके ऊपरी सिरेके ढकने उड़ जाते हैं, और उसके भीतर फँसा हुआ मकड़ीनुमा ढाँचा दिखाई देने लगता है।

अब यात्री अपने यानको तीसरे चरणसे अलग कर लेते हैं। और फिर अपनी नियन्त्रक रॉकेट-व्यवस्था-द्वारा यानको बिलकुल उलटकर उसकी नोंकपर तीसरे चरण के भीतर फँसे हुए उस ढाँचेको जोड़ लेते हैं। इसके बाद वे फिर एक बार अलग हो जाते हैं। अब ढाँचा यानकी नोंकपर जुड़ा हुआ है, अतः वह यानके हटते ही तीसरे चरणके भीतरसे निकल आता है और इसके साथ ही उसके पाये अपने आप खुल जाते हैं। इसके बाद यात्री फिर एक बार यानको उलट देते हैं, अर्थात् पूर्व स्थिति में ले आते हैं। इससे यानकी नोंक, जिसपर अब वह ढाँचा भी जुड़ा हुआ है, पुनः गति-दिशामें हो जाती है। अब आगे चन्द्रमा तककी यात्रा इसी स्थितिमें सम्पन्न होगी। इस बीच तीसरे चरणके साथ यानका सम्बन्ध बिलकुल टूट जाता है, वह चरण अब किसी और ही दिशामें निकल जाता है। और यहींसे वास्तवमें चन्द्रमाकी यात्रा शुरू होती है।

इस यात्रामें लगभग ६५ घण्टेका समय लगता है। इस बीच यात्रियोंको अलग-अलग बारियोंमें यानके उपकरणों व सूचकयन्त्रों पर सतत दृष्टि रखनी पड़ती है। यह बिलकुल आवश्यक है कि यान अपने निश्चित पथसे किंचित् मात्र भी भटकने न पाये। स्मरण रहे, स्वयं चन्द्रमा पृथ्वीके गिर्द लगभग ३७०० किलोमीटर प्रति घण्टाकी गति से परिक्रमा करता है। अतः एक ऐसे गतिमान लक्ष्यकी ओर जाते हुए यान-संचालनमें दिशा-निर्धारणकी समस्याएँ कुछ विशेष ही कठिनाइयाँ लिये होती हैं, जिन्हें हल करनेके लिए हर गतिविधिका बिलकुल ठीक व संगत मुहूर्तपर होना बहुत जरूरी है।

● खतरेका डर :

बाह्य अन्तरिक्षमें छोटी उल्काएँ भारी परिणाममें मिल सकती हैं। लेकिन यानका बाहरी खोल ऐसी धातुकी चद्दरोंका बना हुआ है, जिससे छोटी उल्काएँ उसमें प्रवेश नहीं कर सकतीं। अवश्य किसी बड़ी उल्कासे टकरावकी सम्भावना लगभग उतनी ही है जितनी किसी वायुयानके कभी-कभी किसी बड़े पक्षीसे टकरा जानेकी होती है। अतः हर अन्य यात्राकी भाँति इस चन्द्र-यात्रामें भी किसी छोटी-बड़ी दुर्घटनाकी सम्भावना तो है ही। पर जो वीर पुरुष ऐसी कठिन यात्राओंपर रवाना होते हैं, उन्हें यह प्राणों का जोखिम तो उठाना ही पड़ता है।

एक और खतरा है—सौर विकिरण और अन्तरिक्षीय किरणोंके घातक प्रभावका। लेकिन इसके विरुद्ध यात्रियोंकी प्राण-रक्षाकी पूरी व्यवस्था है। साथ ही यानके केबिनमें यद्यपि कृत्रिम हवाका अपेक्षित दबाव बना हुआ है, फिर भी यात्रियोंमें-से एक सर्वदा अपना अन्तरिक्षीय वस्त्र और ऑक्सिजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

←
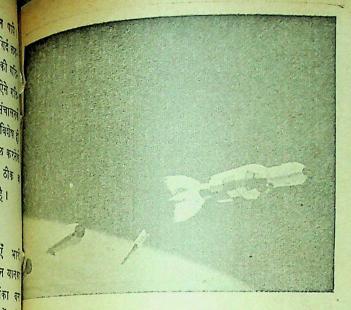
राकेटका पहला और दूसरा चरण अपना-अपना काम समाप्त कर समूहसे अलग होकर गिर रहे हैं और चन्द्र-यान समेत तीसरे चरणको पृथ्वीके गुरुत्वाकर्षणसे पूर्णतया मुक्त करनेके लिए फिर एक बार चालू कर दिया गया है।

चन्द्रमाके पथपर तीसरे चरणके ऊपरी सिरेके ढकने उड़ा दिये गये हैं, जिससे उसके भीतर रखा ढाँचा दिखने लगा है। चन्द्र-यानको अलग करके उलटा जा रहा है।

↓

चन्द्र-यानको उलटकर ढाँचेसे जोड़दिया गया है।
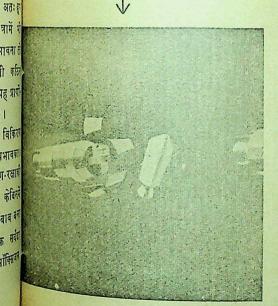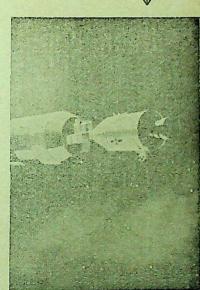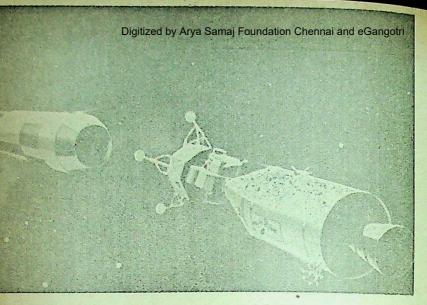
↓

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

←
चन्द्र-यानको फिर ...
कर लिया गया है ...
ढाँचा यानके साथ ...
आगे यानको ढाँ...
एक बार उलट दि...

चन्द्रतलपर मानव...
र्गण। काल्पनिक चि...
ढाँचा (अवतरण-यान...
निकट एक-यात्रीको ...
दिखाया गया है। ...
पृथ्वी चमक रही है...

चन्द्रमाके निकट आकर (चापाकार क्षितिजसे परे पृथ्वी और सूर्यके विम्ब दिख रहे हैं) कार-द्वारा एक यात्रीको यानके केबिन-से पायोंवाले ढाँचेमें प्रवेश करते दिखाया गया है।
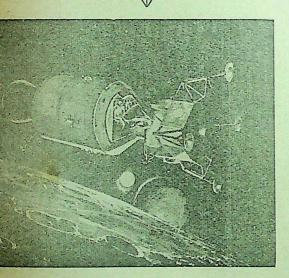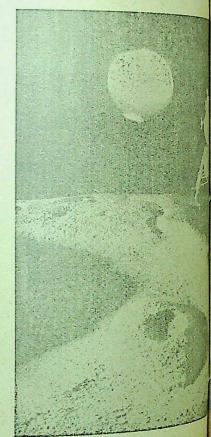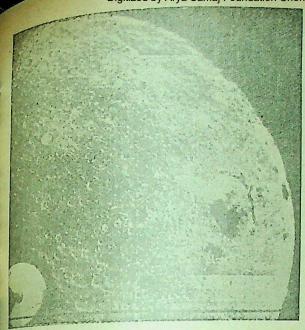
↓

टोप अ...
में किस...
द्वारा ...
सहसा ...
यात्री ...
बीच उ...
टोप ध...
अ...
चन्द्रमा...
उसकी ...
से क्रम...
को पि...
अर्थात्...
लगे ...
(गति...
यह सि...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

←
चन्द्रमाकी दूसरी तरफ़का चित्र-सोवियत ऑटोमैटिक ज़ोन्द—३ स्टेशनसे ।

टोप आदि पहने रहता है, ताकि यदि केबिन-में किसी कारण (जैसे किसी बड़ी उल्का-द्वारा खोलमें छेद हो जानेसे) हवाका दबाव सहसा कम हो जाये, तो यह वस्त्रधारी यात्री यानपर नियन्त्रण रख सके और इस बीच उसके साथी झटपट अपने वस्त्र और टोप धारण कर सकें ।

अब जैसे-जैसे यान पृथ्वीसे दूर तथा चन्द्रमाके निकट पहुँचता जाता है, तैसे-तैसे उसकी गति चन्द्रमाके बढ़ते हुए गुरुत्वाकर्षण-से क्रमशः बढ़ने लगती है । इस स्थलपर यान-को फिर एक बार उलट दिया जाता है, अर्थात् उसकी नोंक पीछेकी ओर तथा पीछे लगे रॉकेट-इंजनका रुख चन्द्रमाकी ओर (गति-दिशामें) कर दिया जाता है । यह स्थिति लेकर एक ठीक मुहूर्त्तपर इंजन-को चला दिया जाता है । इसके उलटे दबाव-से यानकी बढ़ती हुई गति शीघ्र ही घटकर ठीक उतनी रह जाती है, जितनी यानको चन्द्रमाके गिर्द कक्षामें स्थापित करनेके लिए अपेक्षित है । यान अब लगभग ५७६० किलोमीटर प्रति घण्टाकी गतिसे चलते हुए चन्द्रतलसे केवल १३८ मीलकी ऊँचाईपर एक वृत्तीय कक्षामें स्थित हो जाता है ।

● आइए, उतरें :

हमारे यात्री चन्द्रमाके आकाशमें तो आ गये, पर अभी चन्द्रतलपर उतरनेका कार्यक्रम शेष है । इसके लिए यात्रियोंमें-से दो या तीन अपने यानके भीतरसे एक खिड़कीके रास्ते पायोंवाले ढांचेके भीतर आ जाते हैं । शेष एक-दो यात्रियोंको कक्षमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घूमते चन्द्रयानमें ही रहता है। जैसा कि बताया जा चुका है, यह ढाँचा भी अपनी स्वतन्त्र रॉकेट-व्यवस्थासे युक्त एक यान ही है, और इसीको अपने चार पायोंपर धीरेसे चन्द्रतलपर उतरना है। अतः इसके भीतर आते ही यात्री इसे यानसे अलग कर लेते हैं और साथ ही इसके इंजनको चालू कर देते हैं। इससे लगभग ३० सेकेण्डके भीतर वह एक दीर्घवृतीय कक्षामें आकर चन्द्रतलसे केवल १६ किलोमीटरकी ऊँचाई-पर आ जाता है।

इस स्थलपर उसे उलट दिया जाता है, जिससे उसके इंजनका रुख उसकी गति-दिशाके विपरीत हो जाता है। ऐसा करके उसके इंजनको फिर एक बार चला दिया जाता है। इससे उसकी गति बड़ी तेज़ीसे कम होने लगती है, और वह चन्द्रतलकी ओर गिरने लगता है। इस अवतरणके साथ-साथ उसके इंजनकी शक्ति भी स्वचालित यन्त्रों-द्वारा नियन्त्रित होती जाती है, यहाँ-तक कि सिर्फ़ १५० मीटरकी ऊँचाईपर आकर वह एक साधारण जेट-हेलीकॉप्टरकी भाँति शून्यमें स्थिर हो जाता है। चन्द्रमापर उतरनेमें जहाँ अनेक कठिनाइयाँ और जोखिम हैं, वहाँ इस बातसे बड़ी सुविधा होती है कि उसके चारों ओर किसी प्रकारका वायुमण्डल न होनेसे उसके वातावरणमें तीव्र गतिके साथ प्रवेश करते समय घर्षणसे आग लगने-की कोई आशंका नहीं होती।

अब इस मामूली ऊँचाईपर-से चारों ओर देखभाल कर वे स्वयं ही उतरनेका कोई उप-युक्त स्थान तलाश कर सकते हैं, अथवा यानको संचालित करके किसी दूसरे स्थानपर ले जा सकते हैं। यदि उन्हें तलपर कोई भारी संकट दिखाई पड़े, वह इसी स्थितिसे इंजनकी शक्तिको बढ़ाकर फिरसे कक्षामें स्थित मुख्य चन्द्र-के पास लौट सकते हैं।

हमारे यात्री एक समतल और लगनेवाले उपयुक्त स्थानका चुनाव उतरनेका निर्णय लेते हैं। और कुछ ही में वे बड़े आरामके साथ, केवल ११ कि-मीटर प्रति घण्टाकी अवतरण-गतिसे, तलपर आ टिकते हैं। बस, उसके साथ उनकी यात्राका पहला चरण सम्पन्न जाता है। यह चाँदपर मानवका प्र-पदार्पण है।

• जो कुछ दिखाई देता है :

यात्री अपने केबिनकी पारदर्शी खिड़ बाहरके दृश्यपर एक सतर्क दृष्टि डालते हैं जो कुछ दिखता है, वह सचमुच डरा है। चारों ओर सिलेटी रंगकी शुष्क ऊब-खाबड़ भूमि, जगह-जगहसे कटी-फटी, भयानक मालूम होती है। कहीं ति नोकीली चट्टानें सूर्यके प्रकाशमें चाँदी तरह चमक रही हैं, कहीं टेढ़ी-मेढ़ी छा काली स्याहीके स्तूप-से साकार हो खड़े हैं सफ़ेद प्रकाशकी चमक इतनी अधिक है कि आँखोंके आगे काली स्क्रीन लगाये बि देखना असम्भव है। सर्वत्र राख और धू बिखरी हुई है, सारी भूमि कंकरों व छो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असंख्य गढ़ोंसे अटी पड़ी है। न कोई पेड़ है, न पौधा, न नमी न हवा, दृष्टि-सीमा तक बस एक उजाड़, सुनसान मरूभूमि है— ज्वलन्त, निर्वात, ध्वनिशून्य और घातक !

अब एक यात्री अपने पूरे वस्त्र और ऑक्सिजन-टोप धारण कर, रेडियो-टेलीविज़न, कैमरे तथा अन्य उपकरण लेकर, चन्द्रतलपर उतर जाता है। और सम्भवतः वह सबसे पहले जिस प्रश्नका उत्तर अपने साथियों तथा पृथ्वीको भेजता है, वह यह है कि चन्द्रमाकी भूमि किस पदार्थ या पदार्थोंसे निर्मित है।

यात्री इस क्षेत्रमें लगभग २४ घण्टे बिताते हैं। इस बीच वे चार-चार घण्टोंकी बारियोंमें चन्द्रतलका विस्तृत सर्वेक्षण करते हैं। उन्हें जितने भी प्रकार या रंगोंकी चट्टानें, कंकर या धूल मिलती हैं, उन सबके यथासम्भव अधिकाधिक नमूने वे एकत्र करते हैं। अपने आसपासके समस्त क्षेत्रका विस्तृत मानचित्र भी वे बनाते हैं और उसपर उन तमाम स्थानोंको निर्दिष्ट करते हैं, जहाँ-जहाँसे वे नमूने लेते हैं। उसके अलावा वे चन्द्रभूमिमें स्थान-स्थानपर अनेक ऐसे स्वचालित उपकरण भी स्थापित करते हैं, जिनके-द्वारा उनकी वापसीके बाद भी अनेक प्रकारकी वैज्ञानिक जानकारी संग्रहीत हो-होकर पृथ्वीको प्रसारित होती रहेगी।

सर्वेक्षणके दौरान यात्रियोंका आपसमें तथा पृथ्वीके साथ निरन्तर रेडियो-सम्पर्क बना रहता है और वे प्रत्येक बातकी लगातार जानकारी देते रहते हैं तथा उपयुक्त निर्देश प्राप्त करते रहते हैं।

इन यात्रियोंको चन्द्रतलपर जो भी अनोखे व आश्चर्यजनक दृश्य देखनेको मिलते हैं, उन्हें वे अपने हाथके टेलिविज़न कैमरों-द्वारा प्रत्यक्षतः पृथ्वीपर भी दिखाते हैं। अतः इस बीच दुनिया-भरके लोग अपने घरेलू टेलिविज़न-सेटोंपर वह सब कुछ देख रहे होते हैं, जो ये यात्री चन्द्रतलपर देखते हैं। इसमें एक विलक्षण दृश्य होता है— चन्द्रमाके घोर काले आकाशमें चमकती कलापूर्ण पृथ्वीका। पूर्णमासीके चाँदसे बारह गुनी बड़ी दिखनेवाली पृथ्वी सचमुच एक अविस्मरणीय दृश्य उपस्थित करती है। लोग इस दृश्यको अपने टेलिविज़न सेटोंपर देखते हैं, तो उन्हें सहसा विश्वास नहीं आता कि इसी उद्दीप्त मण्डलके किसी बिन्दुपर वे स्वयं विराजमान हैं। वस्तुतः विज्ञानके इस साक्षात् चमत्कारके आगे मानवी मस्तिष्क-द्वारा कल्पित अतीतके सब चमत्कार मन्द पड़ जाते हैं।

आखिर वापसीका समय आ जाता है। यात्री अपने पायोंवाले यानमें पुनः आरूढ़ होकर, तथा उसे उसकी कुरसीसे अलग करके उसके मध्यस्थित रॉकेट इंजनको चालू कर देते हैं। इससे यानका ऊपरी भाग (कैबिन) सहज ही एक साधारण रॉकेटकी तरह आकाशमें उड़ जाता है, और पायोंवाला निचला भाग वहीं चन्द्रतलपर टिका रह जाता है, मानो बादमें आनेवाले चन्द्रयात्रियों-को इस बातका स्मरण करानेके लिए कि कोई उनसे पहले भी यहाँ हो गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● चन्द्रमासे मुक्त होना भी समस्या :

उधर ये चन्द्रयात्री कुछ ही क्षणोंमें कक्षामें पहुँचकर अपने मुख्य चन्द्र-यानके साथ मिलन करते हैं, और अपनी समस्त सामग्रीसहित, जो उन्होंने चन्द्रतलपर एकत्रित की है, वे उसी खिड़कीके रास्ते मुख्य यानमें अपनी कुरसियोंपर आ जाते हैं। इसके बाद वे उस ढाँचेको मुख्य यानसे अलग करके वहीं चन्द्रमाके गिर्द कक्षामें घूमनेके लिए छोड़ देते हैं, और मुख्य यानके रॉकेट-इंजनको चालू कर देते हैं। इससे उनकी गति लगभग ८७३६ किलोमीटर प्रति घण्टा तक बढ़ जाती है। यह गति उनके यानको चन्द्रमाके गुरुत्वाकर्षणसे मुक्त करनेके लिए अपेक्षित है। अतः अब उनका यान चन्द्रमाके गिर्द वृतीय कक्षाको छोड़कर एक दीर्घवृतीय पथपर पृथवीकी ओर रवाना हो जाता है।

यात्राका यह वापसी चरण लगभग ६० घण्टेमें पूरा होता है, क्योंकि पृथ्वीके अपेक्षाकृत अधिक प्रबल गुरुत्वाकर्षणके कारण यानकी गति पृथ्वीके निकट आनेपर अधिक तीव्रतासे बढ़ती है। वस्तुतः जब यान पृथ्वीके काफ़ी निकट आ जाता है, तब उसकी गति लगभग ४० हज़ार किलोमीटर प्रति घण्टा होती है। (उल्काएँ प्रायः इसी गतिसे पृथ्वीके वायुमण्डलमें प्रवेश कर कुछ ही क्षणोंमें नष्ट हो जाती हैं) अतः इस स्थलपर यानके पिछले बड़े भाग (ईंधन-भण्डार आदि) को शंकुरूप कैप्स्यूलसे अलग करके अन्तरिक्षमें छोड़ दिया जाता है, और केवल नोकीले कैप्स्यूलको पृथ्वीकी ओर गिरने दिया जाता है। इससे पहले कैप्स्यूलको उसकी नियन्त्रक जेट-व्यवस्था-द्वारा उलटकर उसके चौड़े तलेको (जिसपर हवाकी रगड़से जलकर नष्ट होनेवाला रासायनिक पदार्थ चढ़ा हुआ है) वायुमण्डलकी ओर कर दिया जाता है। शेष प्रक्रिया उसी तरह होती है, जैसे किसी भी कक्षास्थित अन्तरिक्ष-यानको उतारते समय की जाती है, अर्थात् पहले ऊपरी वायुमण्डलमें-से, एक जलते हुए गोले के रूपमें, और फिर भूतलके काफ़ी निकट आकर छतरियोंकी सहायतासे।

कैप्स्यूल सहज गतिसे खुले महासागरमें किसी निश्चित स्थलपर आ गिरता है, जहाँ से उन्हें तुरन्त ही उठानेकी व्यवस्था पहलेसे मौजूद रहती है। इस प्रकार यह प्रथम चन्द्र-यात्रा सम्पन्न होती है।

मानवका एक पुराना सपना साकार होता है, पर साथ ही एक नया सपना जन्म लेता है—कोई नया लक्ष्य, कोई नयी मंज़िल, जो उसे फिर अपनी ओर पुकारती है, क्योंकि मनुष्य जबतक जीवित है, उसके सपने भी जीवित हैं, और उन सपनोंको यथार्थ बनाने का उसका अन्तविहीन प्रयास भी। प्रयास ही जीवन है। ■

द्वारा—भारतीय ज्ञानपीठ,
९, अलीपुर पार्क प्लेस,
कलकत्ता-२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ विज्ञानका ब्रह्म-हस्त ॥ यह डायरी हैरिस और लिआना-को ही नहीं है, हरिहरन और लेखाकी भी हो सकती है···उस समय तक पहुँचनेमें देर नहीं है। कैसा लगेगा कि पिता या माँ नम्बरसे जाने जायेंगे, प्रेमका वायरिंग होगा, रिश्ते कमरेमें स्विचकी तरह लगे होंगे और बच्चा जब जन्म लेकर आँखें खोलेगा तो हर तरफ़ यन्त्र-ही-यन्त्र होंगे···?

प्रयोगशालामें उगते प्राण

रमेशदत्त शर्मा । २ सितम्बर २००० ई० : लिआना :

नहीं, नहीं, नहीं, हैरिस मुझे प्यार नहीं करता। बड़े भ्रम पाल लिये हैं मैंने हैरिसको लेकर। आज दो महीने बाद मेरी उससे भेंट हुई। एण्टार्कटिका (दक्षिण-ध्रुव) चली गयी थी। डॉक्टरका खयाल था कि मुझे इस तमाम भीड़-और शोर-शराबेसे दूर—बहुत दूर, कहीं एकान्तमें चले जाना चाहिए। मगर एण्टार्कटिका (दक्षिणध्रुव) में भी अब कहाँ धरा है एकान्त। भीड़से ऊबे हुए लोगोंने ही वहाँ कैसी खासी भीड़ जमा कर रखी है। उपग्रहसे प्रसारित होनेवाले टैलीविजन-कार्यक्रम वहाँ भी इस दुनियाकी खबरें पहुँचाते रहते हैं। दो पलको भी नहीं लगा कि मैं किसी ऐसे शान्त स्थानमें रह रही हूँ, जहाँ न अन्तरिक्ष-युद्धकी भयावह आशंकाकी प्रेत-छाया है और न कम्प्यूटरोंका घेराव। शायद हैरिस मेरे साथ होता तो ऐसी स्थिति नहीं होती। पर उसे मेरी पीड़ा समझनेकी फ़ुरसत ही कब है। जब देखो तब अपनी टिश्यू कल्चर लेबोरेटरीकी चर्चा लेकर बैठ जायेगा।···सोचती थी, दो महीने बाद उससे मिल रही हूँ। देखते ही मुझे बाँहोंमें भर लेगा। चूम-चूमकर बेहाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर देगा। बार-बार पूछेगा, क्यों चली गयी थीं तुम! तुम्हारी तबियत अब कैसी है। तुम्हारी यादमें पता है किस तरह काटे हैं ये दो महीने!

""नहीं, नहीं, नहीं—वैसा कुछ भी तो नहीं हुआ। हम मिलें—वह मेरी ओर बढ़ा और हाँ, उसकी बाँहें उठी थीं—पर मेरे हाथसे एण्टार्कटिकासे इकट्ठे किये गये फ़ॉसिलोंका डिब्बा लेकर वह बैठ गया था। मैं प्रतीक्षा करती रही…पर उसने तो यह भी न पूछा कि""उफ़ मुझसे नहीं सही जाती उसकी यह उपेक्षा! ""फ़ॉसिल देखनेमें—सदियों पहले बर्फ़में दबे-पथराये पौधोंको लेकर—वह इतना मगन हो गया कि मेरी उपस्थिति ही भूल गया—एक बार भी उसने मेरी पथरायी आँखोंमें झाँकनेकी कोशिश नहीं की। हारकर मैं खुद ही उसके कन्धेसे लग गयी थी। और तब मुझे लगा था जैसे उसके कन्धे किसी टेरिडोस्पर्म जैसे फ़ॉसिल फ़र्नके तने हों—स्पन्दनहीन!

"मेरे नामका मतलब जानते हो, हैरिस?" मैंने उसके कन्धोंपर अपना भार डालते हुए पूछा था।

"हाँ, हाँ, तुम्हारा नाम है—लिआना! लिआना! यानी महा लता। इतनी बड़ी लता कि बड़ेसे-बड़े पेड़को अपने दायरेमें समेट ले!"

"सच""?" मैंने शरारतसे उसकी आँखोंमें झाँकते हुए अपनी बाँहोंकी गिरफ़्त और गहरी कर दी थी; फिर पूछा था, "क्या इतने बड़े पेड़को भी बाँध लूंगी मैं!"

"मगर, मैं पेड़ नहीं हूँ लिआना!" मेरी बाँहोंको झटककर गिरफ़्तसे बाहर होते हुए उसने कहा था।…ये उसी हैरिसके शब्द थे, जिसके बिना मैं एण्टार्कटिकापर बेचैन रहती थी, कि कब अपने हैरीके पास पहुँचूँ…। कहता है, मैं पेड़ नहीं हूँ; एकदम पेड़ है, पर ऐसा पेड़ जिसे वसन्त कभी नहीं छूता, जिसपर पत्तियाँ कभी फूटी ही नहीं, कलियाँ कभी खिली ही नहीं""जिसकी शिराओंका क्लोरोफ़िल सूख गया है""एक पेड़""एक फ़ॉसिल!…पागल ही तो हूँ मैं जो फ़ॉसिलको हासिल करनेके लिए परेशान हूँ!

● हैरिस : १० सितम्बर २००० ई०

ये लिआनाको क्या हो गया है! एण्टार्कटिकासे इतना अच्छा कलेक्शन करके लायी है फ़ॉसिलोंका कि प्रोफ़ेसर ऐण्ड्रूज़ तो मारे खुशीके उछल पड़े। कहने लगे, "जल्दीसे इनके माइक्रोसेक्शन कटवाकर इलेक्ट्रॉन-फ़ोटो ले लो! दिसम्बरमें पैलिओबाटनिस्टोंका अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन होनेवाला है—भारतके साहनी इस्टीटयूटमें। वहाँ इनका प्रदर्शन करेंगे!"

पर लिआना है कि कोई दिलचस्पी ही नहीं लेती। जब देखो तब फ़िजूलकी बातें करती रहेगी। कोई ज़रा भी कड़ी बात कही कि आँसू टपकाने लगेगी।

उस दिन तो उसने पूरे चौबीस घण्टे खराब कर दिये। हवापर फिसलनेवाली 'होवरकार' लेकर आ गयी कि चलो योसे-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
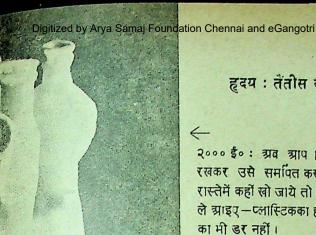
हृदय : तैंतीस वर्ष बाद

←

२००० ई० : अब आप दिल हथेलीपर रखकर उसे समर्पित कर सकते हैं या रास्तेमें कहीं खो जाये तो बाजारसे दूसरा ले आइए—प्लास्टिकका ही तो है, टूटनेका भी डर नहीं।

लो। खोल दी है दुकान दिलकी। टूटे-फूटे वाल्व बदलवाइए—दल बदलनेसे पहले दिल बदलिए।
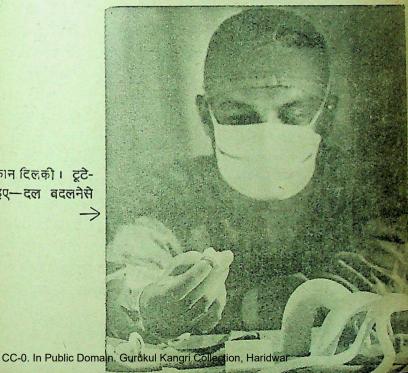
→

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यन्त्रबद्ध शिशु

उफ़ ! क्या इक्कीसवीं सदीका शि... इस संसारमें प्रवेश करनेपर आँखें खोलेगा तो अपने ऊपर माँकी ममतामयी छाया नहीं यन्त्रोंका शुष्क जाल पायेगा ?
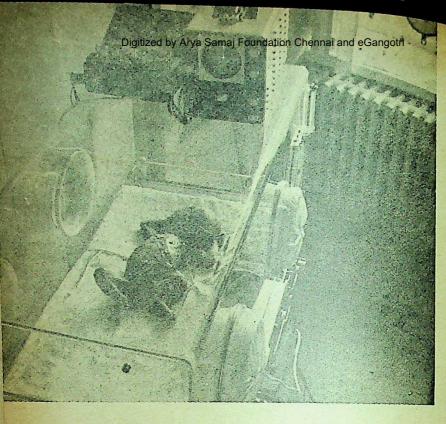
(WHO के सौजन्य...)

मिटी घूम आयें। पता नहीं योसेमिटी घाटीमें ऐसा क्या नज़र आता है उसे। फिर भी यह सोचकर कि शायद वहाँ घूम आनेके बाद यह अपने फ़ॉसिल-अनुसन्धानमें जुट जायेगी, मैं चल दिया।

"अभी तो तुम एण्टार्कटिकासे लौटी हो, अब योसेमिटी-घाटी घूमने चल दीं ! क्या ज़िन्दगी-भर यों ही घूमती रहोगी ?" मैंने मिरर लेकमें तैरते हुए पूछा था।

वह बोली, "वहाँ-तो मैं अकेली गयी थी; यहाँ तुम साथ हो।····फिर तुम साथ रहो तो घूमती ही रहूँ···सारी दुनिया···सारे ग्रह····सारे उपग्रह, सबका चक्कर लगा आऊँ !"

"ठीक है, ठीक है, अबकी बार 'नासा' के किसी प्रोफ़ेसरसे कहूँगा कि कृत्रिम उपग्रह तो बहुत छोड़ लिये गये, अब सीधे तुम्हें ही उठाकर ऑर्बिटमें रख दें, फिर करती रहना परिक्रमा सारी दुनियाकी।"

मेरी इस बातपर फिर उसने टप्प-टप्प आँसू गिरा दिये।

मिरर लेकसे लौटकर मैंने बहुत चाहा कि वापस लेबॉरेटरी लौट चलें। पर कितनी ज़िद्दी लड़की है। कहने लगी, एक रात योसेमिटी विलेजमें गुज़ारेंगे। निहायत ही पुराने ढंगकी कॉटेज। एयर-कण्डीशनिंगका गया-गुज़रा तरीक़ा। यहाँके लोगोंने इधर एटोमिक प्लाण्ट ही नहीं लगाने दिया, फि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारी प्राकृतिक शोभा नष्ट हो जायेगी ! आज भी लोग प्रकृतिके कितने गुलाम हैं, आश्चर्य होता है मुझे तो !....उस कॉटेजमें मेरा तो दम घुट रहा था। फिर यह लिआना....सारी रात उसने सोने नहीं दिया !

१० सितम्बर २००० ई०

लिआना :

योसेमिटी विलेजकी उस कॉटेजमें रात उतरी तो मैंने तय कर लिया था कि आज हैरिस और अपने बीचके सभी अँधेरे मिटा दूँगी। मैंने सोच लिया था कि प्रेमकी जो चिनगारी मैं और उपायोंसे हैरिसके मनमें नहीं फूँक सकी, आज देहके स्तरपर जगाऊँगी।

झीने-झीने प्रकाशमें मैंने वह खेल शुरू किया। हैरिसके हाथसे किताब छीनकर फेंक दी। मैंने कहा, "मेरी ओर देखो हैरिस ! मेरी आँखोंमें तुम्हें क्या नज़र आता है ?"

"कोई खराबी नहीं है, तुम्हारी आँखों-में,। बिलकुल ठीक हैं, जैसी कि किसी उच्चश्रेणीके स्तनधारी जीवकी आँखें होनी चाहिए !"

स्तनधारी जीवकी आँखें ! उसके इस सूखे जवाबसे मेरा उत्साह ठण्डा होने लगा।

"बड़ी गरमी लग रही है मुझे !" हालांकि कमरा एयरकण्डीशण्ड था, पर मैं तो हैरिसको जीतनेके लिए उतावली थी....और मैंने देहपर चढ़ा झीना आवरण उतारकर हैरिसकी ओर फेंक दिया।

मेरी देह-यष्टि सचमुच ही ऐसी है कि कोई भी लड़की गर्व कर सकती है। फिर

• टेस्ट-ट्यूब से अलग :

रोती हुई औरत को घेर
खड़ी थी भीड़
उसका मृत पुत्र गोद में था।
"पेट का बेटा था न
इसीलिए रो रही है यह।"—
एक पियक्कड़ बोला
जो काफ़ी मोद में था।

—श्रीकान्त जोशी

जहाँ-तहाँ आदिम वासनाकी ललकसे छलकती आँखें-मुझे इसका अहसास करा चुकी थीं। रोशनीकी धार कटावोंको और तीखा कर रही थी, यह मुझे मालूम था। लेकिन हैरिस....हैरिस मेरी देहमें नहीं, देहसे उतार कर फेंके गये आवरणमें उलझा हुआ था।

"ये जैली-वस्त्र तुम्हें किसने दिया !"

"किसीने भी दिया हो, तुम्हें क्या ?" बेहद अपमानित हुई मैं। क्या समझता है ये हैरिस....सिर्फ़ एक स्तनधारी जीव !

"अरे रे....नाराज क्यों होती हो, मैं तो इसलिए पूछता था कि यह तो अन्तरिक्ष-यात्राकी पोशाकके काम आता है। मुझे क्या मालूम था कि तुम महिलाओंके फ़ैशनमें भी यह प्रचलित हो गया है !" वह जिस संजीदगी और धैर्यसे बोल रहा था, उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा रहा-सहा धीरज भी खो दिया। हथेलियोंमें मुँह दबाकर सिसक पड़ी।....

इसके बाद भी हैरिसने सिर्फ़ इतना किया कि उठा और जो जैली-वस्त्र सिकुड़कर रूमालनुमा हो गया था, उसे मेरी देहपर चढ़ा दिया। रोते हुए भी मैंने कनखियोंसे देखा था कि मेरी निरावरण देहको छूते और उलटते-पलटते हुए उसके चेहरेका रंग ज़रा भी तो नहीं बदला था, उसकी आँखोंमें वही शून्य था, निरासक्त शून्य—गोया मैं कोई मानवी नहीं उसकी लेबोरेटरीकी 'गिनी पिग' थी।....शायद मैं सारी रात रोती रही थी। सारी रात कमरा रोशनीमें डूबा रहा था, और मुझे लगा था—एक काला स्याह दलदल मुझे निगलता जा रहा है और मैं उसमें धँसती जा रही हूँ। मैं चीख़ पड़ी थी—"मैं इस दलदलमें डूबकर मरना नहीं चाहती...मुझे बचा लो हैरिस! बचा लो!" पर सुबह आँख खुली तो हैरिस जा चुका था।

११ सितम्बर, २००० ई०

लिआना :

टिश्यू-कल्चर-लेबोरेटरीमें मैं गयी हूँ। हैरिस नहीं मिला, एक पंक्तिका पत्र था मेरे नाम—"प्रिय लिआना, मैं मंगल-ग्रहपर जा रहा हूँ। वहाँ मोलीक्यूलर बायोलॉजीकी लेबोरेटरीमें मुझे अनुसन्धानका अवसर मिल गया है। अलविदा!"

पूरी पंक्ति लेसरकी लाल रोशनीकी छुरीकी तरह मेरे कलेजेमें उतर गयी है।

तभी पीछेसे कोई हाथ मेरे कन्धे थपथपाता है।—"हैरिस!"—मैं मुड़कर देखती हूँ।

"मैं हैरिसकी माँ हूँ बेटी!" स्नेहमयी महिलाने बड़े प्यारसे कहा, "तुम....तुम हैरिसको बहुत चाहती थीं!"

मैं उनकी गोदमें सिर छिपाकर सुबकने लगती हूँ।

"उसका प्यार कोई नहीं पा सकता पगली," माँने मेरे आँसू पोंछते हुए कहा, "चल, मेरे साथ मैं तुझे समझाती हूँ।"

'प्रोडक्सन सेण्टर फ़ॉर रेडीमेड बेबीज!'—साइनबोर्ड पढ़कर चौंकती हूँ मैं—"ये आप कहाँ ले आयी हैं मुझे?"

"तू, आ तो सही!" उनका यह स्नेह भरा सम्बोधन अनायास पाँवोंको खींच लेता है और उनके पीछे-पीछे चल पड़ती हूँ। मैं प्रोडक्शन सेण्टरके मुख्य अधिकारीसे मिलकर सेण्टर देखनेकी इच्छा प्रकट करती हैं। और एक लड़की हमारी गाइड बनकर सेण्टर दिखाने ले चलती है। बटन दबानेसे एक ऑटोमैटिक द्वार खुलता है—बहुत भारी भरकम। हमारे भीतर घुसनेके बाद द्वार खुद-ब-खुद बन्द हो जाता है। थोड़ी दूर चलनेके बाद फिर एक गोल ढक्कननुमा दरवाज़ा आता है जिससे हम पार होते हैं।

"ये इतने भारी-भरकम दरवाज़े क्यों हैं यहाँपर?" मैंने गाइडसे पूछा।

"इस सुरक्षा-व्यवस्थाके पीछे," मुसकुराते हुए गाइडने कहा, "किसी दुश्मनके हमलेका कोई डर नही है, पर कुछ अदृश्य शत्रुओंसे बचावके लिए यह प्रबन्ध किया गया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अदृश्य शत्रु ?"

"हाँ, हाँ, वाइरस और बैक्टीरिया वग़ैरह—ये अदृश्य शत्रु ही तो हैं !"

"तो क्या हमारे साथ ये सभी सूक्ष्म जीव अन्दर नहीं आ गये होंगे ?"

"नहीं, आपको पता नहीं लगा—जब आप उन दो द्वारोंके बीचकी छोटी गैलरीमें खड़ी थीं—तभी आपपर अल्ट्रावायलट किरणोंकी वर्षा हुई, जिसमें कोई वाइरस या बैक्टीरिया जीवित नहीं रह सकता ।"

मैं आश्चर्यमें डूबी देख रही हूँ—एक बिलकुल नयी दुनिया ! रेडीमेड बच्चे ! माँकी कोखसे नहीं, परखनलीकी कोखसे पैदा हुए बच्चे ! इससे पहले कि मैं बच्चे पैदा करनेवाली फ़ैक्टरीके बारेमें कुछ पूछती, गाइडने हमें एक लिफ़्टमें बिठाकर बटन दबा दिया। लिफ़्ट जिस विशाल कक्षमें जाकर रुकी, वह एक संग्रहालय है—प्रयोगशालामें प्राणोंके निर्माणसे सम्बद्ध वैज्ञानिकोंकी आदमक़द मूर्तियाँ ! जीव-विज्ञानकी छात्रा होनेके नाते ये सारे चेहरे मेरे जाने-पहचाने हैं। ये ल्यूवेनहॉक जिसने सबसे पहले सूक्ष्म-दर्शीमें शुक्राणुके दर्शन किये थे । फिर सर्व-प्रथम जैव रसायनका संश्लेषण करनेवाले वूहलर और लीबिग; देहकी इकाई 'कोशिका'-केखोजी श्लाइडन और श्वान ! 'जीवनसे ही जीवन पैदा होता है'—इस सिद्धान्तको स्थापित करनेवाले पास्चर; आनुवंशिकताके नियम खोजनेवाले मेण्डेल, और मोर्गन; आनुवंशि-कतामें कृत्रिम रीतिसे उत्परिवर्तन पैदा करने-में सबसे अगुआ मुलर; फफूँदियोंमें आनुवंशि-कताके खोजी बीडल और टाटम; जीवनके मूल यौगिक डी० एन० ए० की संरचनाके खोजी क्रिक और वाटसन तथा आर० एन० ए० का रहस्य खोलनेवाले ओकोआ और कौर्नबर्ग; प्रोटीनोंके भेदिया—सांगर और पॉलिंग। इन्हीमें एक दूसरी क़तार थी—हाल्डेन, बर्नार्ड, काल्विन, ओपारिन और फ़ाक्सकी जिन्होंने जीवनके उद्भव सम्बन्धी सिद्धान्तोंकी परिकल्पना की थी। रूसमें ओपारिनने प्रयोगशालामें जीवनके आदि रूपके निर्माणकी घोषणा की और अमरीकामें फ़ॉक्सने। इन्हीके साथ भारतके दो वैज्ञानिक कृष्णबहादुर और ओंकारनाथ पर्ती भी विराजमान थे, जिन्होंने प्रयोगशालामें कुछ रसायनोंकी सहायतासे 'जीवाणु'का निर्माण कर दिखाया था। और भी बहुत-से वैज्ञानिक दीवारसे लगे चित्रोंमें सुशोभित हैं। इनमें-से कुछ तो पिछले ही दशकके युवा वैज्ञानिक हैं।

"अब हम रेडीमेड शिशु-उत्पादक फ़ैक्टरीके प्रमुख निर्माण-कक्षमें आ गये हैं," उसी लिफ़्टसे एक दूसरे विशाल भवनमें पहुँचानेके बाद गाइडने बताया।

"ये विविध जीनोंके मिश्रण हैं। आप शिशुका उपयोग किस क्षेत्रमें करना चाहते हैं, इस आधारपर जीनोंके मिश्रण तैयार किये जाते हैं। सैनिक बनाना है, तो वीरता और हिंसक भावनावाले जीन; मजदूर बनाना है तो परिश्रमी और दासवृत्तिवाले जीन; वैज्ञानिक बनाना है तो अत्यन्त प्रतिभाशाली जीन....."

गाइड आगे बताती है, "अब मान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लीजिए, आपने जीन-मिश्रण चुन लिया तो हम उस जीन-मिश्रणको तेईस पैतृक क्रोमोसोमों और तेईस मातृक क्रोमोसोमोंमें व्यवस्थित करके भ्रूणका निर्माण शुरू कर देंगे। हर सप्ताह भ्रूण असेम्बली लाइनमें आगे चलता रहेगा और उसकी परिवर्धन-सम्बन्धी आवश्यकताओंके अनुसार हर चरण-पर उसको अपेक्षित पोषक द्रव्य, तथा एंजाइम वग़ैरह मिलते रहते हैं। देखिए....!"

मैंने देखा—एक क़तारमें खिसकती हुई बोतलें और हर बोतलमें पलता हुआ भ्रूण !

"देहका रंग कैसा हो, बाल कैसे हों, आखें कैसी हों, नाक-नक्श कैसे हों—सब कुछ पूर्व निर्धारित होता है।"

"कितने दिन लगते हैं पूरा शिशु बननेमें !"

"पहले तो हमने वृद्धिकी गति तीव्र करके तीन-चार महीनेमें पूरा शिशु तैयार करना शुरू कर दिया था। पर उन शिशुओं-के बारेमें, बादमें शिकायतें आने लगीं, तो अब ९ से ११ महीनेकी प्राकृतिक अवधि ही प्रयोगशालामें भी आजमायी जा रही है।"

जहाँ नवजात शिशुओंका परिचर्या-कक्ष बना था—वहाँसे हम लोग बाहर निकले तो मैंने देखा, माँ बार-बार आँखें पोंछ रही हैं।

"क्या हुआ माँ, बताओ न क्या बात है?" मैं उन्हें इस तरह बच्चोंकी तरह रोते देखकर असमंजसमें पड़ी।

"लिआना, तुम नहीं जानती लिआना, मेरा हैरिस मेरी कोखसे नहीं पैदा हुआ, वह इस कम्पनीसे खरीदा गया रेडीमेड बच्चा है। उसके पिताने मेरे बहुत मना करनेपर भी उसके जीन-मिश्रणमें-से वह जीन ग़ायब करवा दिया था, जिसके हैरि प्राणीमें विपरीत सेक्सके प्रति झुकाव है होता है—उसके मस्तिष्कमें यौन-उत्तेजना केन्द्र ही नहीं है, लिआना! वह एक संवेदन-हीन वैज्ञानिक है जिसके लिए सभी मान स्तनधारी जीव हैं। उसका हृदय प्लास्टिक का है—रुधिर-परिसंचरण करनेवाला पम्प; उसमें प्रेम नाम-की कोई चीज है ही नहीं—मैं तरसती रही कि कभी 'माँ-माँ' कहकर मेरे गलेसे लिपट जायेगा। अपनी छोटी-छोटी बाँहोंमें मुझे बन्दी बना लेगा। पर वैसा कुछ भी नहीं हुआ। मैं जानती थी और मन-ही-मन डरती रहती थी, उस अभागि लड़कीके बारेमें सोच-सोचकर जो कभी जीवनके किन्हीं उत्ताप-क्षणोंमें इस प्रेम-ग्रन्थि-हीन प्राणीसे प्रेम-निवेदन कर बैठेगी।

"....बस करो माँ, बस करो!"

पंक्तिबद्ध भ्रूण मेरे चारों ओर चक्कर काट रहे हैं, और उन भ्रूणोंमें-से अचानक एक शिशुकी आकृति उभरती है: बिल्कुल हैरिसकी शक्लका, मगर जब मैं उसको चूमनेके लिए अपना मुख उसके मुखके पास ले जाती हूँ, तो वह थूक देता है—मेरे माथे पर। अचानक मुझे लगता है जैसे मेरा माथा नहीं इक्कीसवीं सदीके सितम्बरका आकाश है और उसपर लगा थूकका गोला ही सूरज बन गया है, जिसकी रोशनी अन्धा किये दे रही है—मेरी आँखें मुँद जाती हैं....!

डी-३, राणाप्रताप बाग, दिल्ली-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ साहित्य : एक परिवेश ॥ देशके बारेमें, परिवेशसे भीतर और परिवेशसे बाहर रहकर कुछ अँगरेज़ी-दाँ विचारकोंने इतिहास-संस्कृति-साहित्य-कलाकी चार गेंदें दोनों हाथोंसे बड़ी सफ़ाईके साथ ऐसे उछाली हैं कि देखते ही बनता है। प्रश्न अनेक हैं लेकिन उत्तर आत्मविश्लेषणमें-से ही निकलेगा। हमारी बौद्धिकता कन्धेपर प्रश्नचिह्न लेकर चढ़ाईपर चल रही है लेकिन...

मेज़पर रखी हुई शताब्दी

रमेशचन्द्र शाह / अभी पिछले महीनेकी ही बात है—इलाहाबादके कॉफ़ी-हाउसकी एक मेज़पर नीरद चौधुरीकी चर्चा छिड़ते ही अपने एक साहित्यकार मित्र निहायत संजीदगीके साथ मुसकुराये और बोले, "कितने सौभाग्यकी बात है कि हम हिन्दी-प्रदेशके लोग बढ़िया अँगरेज़ी लिखना नहीं जानते! वरना यहाँ भी नीरद चौधरियोंकी भरमार हो गयी होती!"

इस बातपर वहाँ उपस्थित सब लोग और मित्र स्वयं ठठाकर हँस पड़े और बहुत देर तक हँसते रहे....। मैंने भी उन ठहाकोंमें शरीक होना चाहा। मगर बावजूद बड़ी कोशिशके ठीकसे मुसकुरा तक नहीं पाया और बहुत बेचैनीके साथ अनुभव करता रहा कि मेरी हालत उस हँसीसे भी ज्यादा हास्यास्पद हो गयी है।

प्रसिद्ध कथाकार बी० एस० नेपॉल जब घुमा-फिरीके लिए अपने पुरखोंकी जन्मभूमिमें आता है तो बेचारेको पग-पगपर मुसीबतोंका सामना करना पड़ता है। होटलके बैरोंसे लेकर दफ़्तरोंके बाबुओं और अफ़सरों तक, बसों रेलगाड़ीके कर्मचारियों और सहयात्रियोंसे लेकर स्कूटर-रिक्शावालों तक यत्र-तत्र-सर्वत्र उसे मूर्खता, अशिष्टता, कामचोरी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गन्दगी, आपाधापी और भ्रष्टताका ही वातावरण दीख पड़ता है : कड़वा थूक घोंटते-घोंटते एक-एक दिन कटता है और बेचारे पर्यटकका सारा मज़ा किरकिरा हो जाता है। और उसकी चिड़चिड़ी प्रतिभा दिनपर दिन और अधिक, और अधिक चिड़चिड़ी होती जाती है। यूरोपियन करेलेपर हिन्दुस्तानकी सारी नीम चढ़ाकर जब वह घर यानी इंगलैण्ड वापस लौटता है तो इस सारी जहालतके विरुद्ध एक मौलिक प्रतिशोध लेता है। **'एन एरिया ऑव डार्कनेस'** लिखता है।

बहुत दिलचस्प किताब है। हम पढ़ते हैं और चिढ़ते नहीं। नेपॉल चिढ़ता है। और जितना ही वह चिढ़ता और कुढ़ता है, उतना ही मज़ा हमें आता है। स्पष्ट है कि वह हमें हमारे इस आतिथ्यके लिए कभी क्षमा नहीं करेगा। पर हमें लगता है कि उसकी किताबमें ऐसा बहुत-कुछ है जो हमें उसे क्षमा करनेका सुख प्रभूत मात्रामें प्रदान करता है।

हम क्षमा कर सकते हैं क्योंकि नेपॉलका मन और संवेदन सब युरॅपका गढ़ा हुआ है। हम क्षमा कर सकते हैं जैसे आजसे चालीस साल पहले ई० एम० फ़ार्स्टरकी विदूषक प्रतिभाको—प्रोफ़ेसर गॉडबोलेके करामाती ब्रह्माको—स्वीकार कर सके थे। हम इस बातको निरे संयोगसे अधिक महत्त्व नहीं देते कि नेपॉलकी धमनियोंमें हिन्दू-रक्त है याकि उसके पूर्वज कभी उत्तर प्रदेशसे प्रव्रजन करके ट्रिनिडाडमें जा बसे थे। (नीरद चौधरी सम्भवतः अपनी किताबके अगले संस्करणमें नेपॉलका भी वही उपयोग करें जो उन्होंने फ़ॉर्स्टरका किया है।) जो भी हो, नेपॉल हमारे लिए एक विशेष लेखक है जिसकी संवेदना ही नहीं—संस्कार भी, अनिवार्यतया योरोपीय ही है। और हम जानते हैं कि हमारी आबोहवा और परिवेशमें ऐसा भी कुछ है जो अत्यधिक संवेदनशीलताके लिए पथ्य नहीं है। हममें इतनी उदारता है ही कि नेपॉलके साथ थोड़ी नहीं, काफ़ी दूर तक चल सकें और अपनी आँखोंके साथ उसकी आंखोंका भी तालमेल बिठा सकें।

वह हमें सोचनेको भी बाध्य करता है, इसलिए नहीं कि नेपॉल स्वयं सोचनेको बाध्य हुआ हो····काश, कि सचमुच ऐसा होता! मगर अफ़सोस यही है कि वैसा नहीं है। नेपॉल भारतवर्षके सुदूर अतीतको तो क्या, उसकी गिनी-चुनी उन्नीस सदियोंको भी नहीं जानता; न इस बीसवीं शताब्दीके भारतवर्षसे ही उसका कोई लगाव है। नेपॉलका भारतवर्ष वैसी बौद्धिक रचना भी नहीं है जैसी कि नीरदकी—निर्विवाद रूपसे है।

मगर क्या इसीलिए वह उपयोगी नहीं है? 'द सर्पेण्ट एण्ड द रोप' पढ़कर मुझे लगा था, मैं कोहरेमें भटक रहा हूँ। राजारावका भी एक भारतवर्ष है। पर वह मुझ-जैसोंकी संवेदनाको नहीं पकड़ता। निस्सन्देह राजारावका भारतवर्ष एक औपन्यासिक रचना है। परन्तु सन् १९६... और सन् १९६७ की जंगली तारीखोंके बीच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्थर-बड़े मुख-जैसे अजनबीको वह अपने अभिज्ञानसे आश्वस्त करती प्रतीत नहीं होती। जबकि व्युत्पन्न पत्रकारिता ही सही, नेपॉलका भारतवर्ष एक ऐसा अनुभव है जिसमें मैं थोड़ा-बहुत हिस्सा बँटा सकता हूँ। जिसमें और कुछ यदि नहीं, तो हमारी शताब्दीकी अपराह्ण-वेलाके कुछ निहायत ज़िन्दे-फड़कते फ़ोटोग्राफ़ तो हैं ही जिनको हम अपने अलबममें आनेवाली पीढ़ियोंके मनोविनोदके लिए सजाकर रख सकते हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि जब हम लोग अपना सारा आयुष्य शेष शताब्दीको सौंपकर चले जायेंगे और अगली शताब्दीके युवा लेखक और पाठक अपने पूर्ववर्त्ती लेखकोंमें अपने देश-
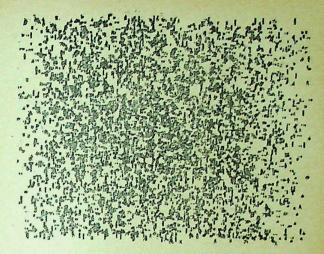
• ठोस कविता :

(ऊपर है हन्सजोर्ग मेयरके एक कविता-संग्रह 'टायपोक्शनेन'से एक पृष्ठ। यह एक ही पृष्ठकी पुस्तक है लेकिन इसे ३२ बार मोड़ा गया है। ४ वर्ष पहले मेयरकी पहली पुस्तक आयी थी 'राट १३'। कविने २६ अक्षरोंको एक इंचके $\frac{१}{८}$ हिस्सेमें छोटा किया और बिखरा दिया। हमने उस पृष्ठको आधा कर दिया है यानी एक इंचका $\frac{१}{१६}$वाँ दृश्य है....। एमेट विलियमकी भी एक ऐसी ही पुस्तक है जो उल्टी तरफ़से शुरू होती है। यह टायपोग्राफ़ी विदेशमें बहुत प्रचलित हो गयी है। केण्डर्स'-जैसे प्रकाशक भी ऐसे प्रकाशनमें रुचि लेने लगे हैं। विदेशमें 'कांक्रीट पोयट्री' भी जब सन्निपातकी स्थिति-में है काका हाथरसीने 'तुकान्त शब्दकोष' तैयार किया है कि गीत-लेखनका विकास हो!....र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का चेहरा पकड़नेकी कोशिश करेंगे तो—जहाँतक अँगरेज़ी लेखनका प्रश्न है—उन्हें शायद राजाराव या मुल्कराज आनन्दकी तसवीरोंसे बेहद निराशा और कोफ़्त होगी और वे नेपॉलकी इस 'तफ़रीह'को इन लोगों-की अपेक्षा—और आर० के० नारायणकी तुलनामें भी—कहीं ज्यादा दिलचस्प और दिमाग़चस्प भी पायेंगे।

हम लोग 'निन्दक नियरे राखिए' के क़ायल हैं। (हैं क्या सच-मुच ? या सिर्फ़ अब हुआ चाहते हैं ?) और इसीलिए सोचना चाहते हैं कि राजाराव और डॉ० आनन्दकी अपेक्षा नेपॉल और नीरद हमें अधिक प्रिय हैं। हमें अच्छा नहीं लगता कि निसीम इज़ेकील नेपॉलके आक्रोशको पुचकारें-सहलायें और आश्वासन दें कि "नहीं भाई नेपॉल ! ऐसी बात नहीं है। तुम तो खामखाह घबड़ा गये। हमारे इण्डियाके बाबू लोग तो बेहद शिष्ट और मृदुभाषी हैं। बसोंके कण्डक्टर, रेलोंके कर्म-चारी और यात्री लोग भी सबके सब भद्र-लोक हैं। पता नहीं तुम कैसे यहाँसे इतनी जल्दी उकता गये !"....हमें उनकी यह विधुर-मुद्रा अनावश्यक और अप्रासंगिक भी लगती है।

• कुछ स्थापनाएँ :

नीरदकी स्थापना यह है कि हम हिन्दू मूलतः यूरोपियन थे। और हमारी और अँगरेज़ोंकी नस्ल एक ही है। नीरदका दावा है कि हम इस वक़्त जिस दलदलमें हैं, उससे भारतकी शेष शताब्दी और अ[illegible] शताब्दियोंका उद्धार तभी सम्भव होगा [illegible] हममें-से प्रत्येक स्वयंको भारतीय मा[illegible] दुराग्रहपूर्ण झूठसे सदा-सदाके लिए मुक्त [illegible] ले और अपनी 'यूरोपियन आत्मा'की [illegible] प्रतिष्ठा करे।

नीरद व फ़ैज अहमद 'फ़ैज' क़री[illegible] क़रीब एक ही पीढ़ीके हैं। पर उन[illegible] संवेदना ज़रा अलग पड़ती है और अ[illegible] रंजना भी। नीरदकी ठण्डे बौद्धिक विश्ले-षणकी प्रतिभा उन्हें हमारा समसामयिक बना देती है। उन्होंने भारतवर्षके इतिहास-में—जो उनके लिए विश्व-इतिहासका [illegible] रंगमंच है—अपने बिखरे हुए स्नायु जाल[illegible] समझने-बटोरनेकी चेष्टा की है। उन[illegible] इतिहासका अध्ययन उनके लिए अ[illegible] व्यक्तित्वहीनताके आतंकसे उबरनेका [illegible] है। यह दूसरी बात है कि इस दीर्घयात्रा[illegible] उन्हें भारतवर्ष तो नहीं मिला, मगर भार[illegible]-वर्षकी एक रोमैण्टिक धारणा अवश्य मि[illegible] गयी। इतिहासके सुदीर्घ अध्ययनसे उन[illegible] निकट यह स्पष्ट हो गया कि हमारा जा[illegible] इतिहास वस्तुतः भारतवर्षका जातीय इति-हास है ही नहीं : वह तो एक परिच[illegible] जातिका इतिहास है और उस जाति[illegible] निरन्तर आत्मविस्मृति और स्वरूप-विस्मृ[illegible] की करुण गाथा है।

वे सोचते हैं—और कुछ हद तक ठी[illegible] ही सोचते हैं—कि भारतका आगामी इति-हास 'हिन्दू चरित्र' की ही निर्मिति होगा। इस 'हिन्दू चरित्र'का ऐतिहासिक (?)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्लेषण करते हुए वह जिस निष्कर्षपर पहुँचे वह यह है कि यह हिंदू-चरित्र दर-असल आर्य-चरित्रका ही क्रमिक भ्रंश, उत्तरोत्तर स्खलन है; और चूँकि यह आर्य-चरित्र शत-प्रतिशत यूरोपियन (अर्थात् ऐंग्लो सैक्सन—अँगरेज़) चरित्र था और चूँकि अँगरेज़ जाति आज दुनियाकी सबसे जीवित जाति है और हिन्दू—वर्तमान 'हिन्दू' सबसे भ्रष्ट जाति, अतः अब हमारे वतनकी खैर इसीमें है कि हम हिन्दू लोग अपने मूल जातीय गौरवका पुनः विस्फोट सम्भव बनायें। हमारी इस बीसवीं सदीकी कुरूप वास्तविकताओंका—दुस्साध्य व्याधियोंका एकमात्र उपचार यही है कि हम भूल जायें कि हम भारतीय हैं और इस तरह सोचने और आचरण करने लगें जैसे कि हम विशुद्ध सौ फ़ीसदी 'अँगरेज़' हों। और अँगरेज़ हम हैं ही : यह तो हमारा दुर्भाग्य था कि हम यूरोपियन 'इथाका'को लौट जानेकी बजाय इस निशाचर मायाके चक्करमें फँस गये जिसने हमें सुरसा की तरह ग्रस लिया। (नहीं—सुरसा नहीं Circe; नीरदको भारतीय प्रतीकोंसे क्या वास्ता ! उन्होंने तो अपने यूरॅपियन होमरकी कल्पनाको ही दुह लिया है : उनके लेखे भारतवर्ष CIRCE नामकी मायाविनीका द्वीप है जिसने हमारी यूरोपियन आत्माके 'ओडीसियस' पर ऐसा वशीकरण डाला कि हम तीन हज़ार बरसोंसे उसके पालतू पशुओंकी तरह यहीं क़ैद हैं और इसीको अपना घर समझे बैठे हैं।)

और जब 'आत्मा' (?) ही योरोपीय है तो सारी समसामयिक समस्याओंकी यन्त्रणासे एकबारगी छुटकारा मिल जाता है। जब हमारी आत्मा ही 'योरोपीय' है तो 'भारत भाग्य विधाता' और कौन हो सकता है ?....नीरदने इतिहासका अध्ययन यों ही नहीं किया है। उन्हें सब सबक़ोंका सबक़ यह मिला है कि जब-जब विदेशी जातियोंने हमपर आक्रमण किया, तब-तब हमारा जातीय जीवन भी जीवित और सक्रिय रहा। स्वाभाविक ही है। क्योंकि हम कैसे भी देशभक्त क्यों न हों, जब हम अन्तरात्मासे इस देशको अपना घर स्वीकारते ही नहीं तो विदेशी आक्रमणका प्रतिकार भी क्यों करते ? किसलिए करते ? साफ़ ज़ाहिर है कि अँगरेज़से अलग होकर जो स्वतन्त्रता हमने पायी है, वह स्वतन्त्रता नहीं, मृत्यु है।

● हमारी जातीय प्रतिभा हनुमान-जैसी है :

इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमने इतिहासको अपने व्यक्तित्वकी परिभाषा कभी नहीं गढ़ने दी और एक संगठित राष्ट्रके रूपमें कभी अपनी जिजीविषाको नहीं जाना। एक-एक कर उन्नीस शताब्दियाँ हमारे सिरपरसे धूल उड़ाती गुजर गयीं और हम कैलास और गोलोक और क्षीरसागरके चित्र बनाते रहे। अब लगता है कि यह बीसवीं शताब्दी उन सारी उपेक्षिताओंका बदला गिन-गिनकर ले रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन कहता है कि सोमनाथकी मूर्त्तिको महमूद ग़जनवीने तोड़ा था? आख़िर 'वे' हम नहीं, यूनानी थे जिन्होंने इतिहासको देवत्व प्रदान किया था : देवता (MUSE) के स्थानपर इतिहासकी प्रतिष्ठा की थी—संगीत और कविताके ही समकक्ष उसे आसन दिया था। हम भारतीयोंने तो तैंतीस कोटि देवताओंके गणतन्त्रमें भी उसके लिए गुंजाइश नहीं रखी....और यह तो सभी जानते हैं कि उपेक्षित देवता अपना यज्ञ-भाग न पाकर नाराज़ हो ही जाते हैं। (चाहे फिर वे होमरके देवता हों; चाहे ऋग्वेदके, चाहे वाल्मीकिके)....हमारा कालपुरुष कालपुरुष ही है, 'इतिहास-पुरुष' नहीं।....

ख़ैर जो भी हो, अब हमने अपनी त्रुटि सुधार ली है। अब अपने यहाँ भी 'इतिहास-चक्रकी गति तेज़ करने' की बात हमारे राजनीतिज्ञ ही नहीं, बल्कि साहित्यकार और बौद्धिकजन भी करने लगे हैं। अब हम पीढ़ियोंकी चर्चामें पाश्चात्य समाजोंके साथ होड़ बदलने लगे हैं। 'पचासोत्तर' 'साठोत्तर' और 'शेष शताब्दी'-जैसे शब्दोंमें सोचने लगे हैं। अब हमारे कालबोधमें 'करेण्ट अफ़ेयर्स' ने भी 'दिनमान'-जैसी नितान्त भारतीय अभिधा (और नितान्त भारतीय अनूठी व्यंजना भी) पाकर अपनी जगह सुरक्षित कर ली है। वस्तुतः देखा जाये तो यह हमारा जातीय स्वभाव ही जान पड़ता है कि या तो पहले हम किसी चीज़के प्रति उन्मुख ही नहीं होते या जब होते हैं तो फिर अतिशय उदग्रताके साथ ही होते हैं। प्रेरणाका पहला स्पर्श, पहला धक्का भर चाहिए फिर तो हम आनन-फाननमें कहाँके कहाँ जा पहुँचते हैं। क्या हमारी जातीय प्रतिभा भी बजरंगी हनुमान-जैसी ही नहीं है जो स्वभावतः अपनी शक्ति और सम्भावनाओंके प्रति आत्मचेतन नहीं हो पाती जबतक कोई जामवन्त ही आकर उसे न छेड़े—उसे अपने स्वरूपकी स्मृति न दिलाये।

सचमुच भ्राता नीरद यदि स्वयं जामवन्तकी भूमिका-भरसे सन्तुष्ट हो जाते तो हमें उनसे कोई शिकायत न होती। मगर मुश्किल यह है कि वे जिसको जामवन्त समझते हैं, उसीको हनुमान, और—और इतना ही नहीं—उसीको राम भी समझने का हठ करते हैं। ऐसा नहीं है कि उन्होंने रामायण-महाभारत पढ़ी ही न हो; उन्होंने पढ़ी है और ख़ूब तबीयतसे पढ़ी है। (जहाँतक मैं जानता हूँ, वे पहले पाठक हैं जिन्होंने इन महाकाव्योंमें 'ट्रैजिक विज़न' को देखा और समझा है।) मगर हमें कुछ ऐसा आभास होता है कि उनकी प्रतिभा और उनकी विद्वत्तामें 'नारदीय' (मैं 'विभीषणी' कहते-कहते रुक गया) तत्व कुछ ज़रूरतसे ज़्यादा ही है।

वे जर्मन भारतवेत्ताओंका मख़ौल बहुत प्रेमपूर्वक उड़ा सकते हैं। किन्तु स्वयं उनकी कल्पना कितनी ऊँची उड़ान भर सकती है, इसकी कल्पना—सम्पातीकी तरह—उन्हें नहीं है। यदि ओल्डेनबर्ग ट्रॉयको लंका, सीताको हेलेन, रामको मैनीलॉस या अग-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेम्नोन, पेरिसको मेघनाद और एकिलसको लक्ष्मण मानने-मनवानेका आग्रह करते थे तो हमें इसमें परेशान होनेका कोई कारण नजर नहीं आता था क्योंकि अन्ततः वह विशुद्ध विद्वत्ताका क्षेत्र था और यह विद्वत्ता (विद्या) अपने-आपमें बड़ी प्यारी, बड़ी निर्दोष-सी चीज़ मानी जाती रही है।

मगर जब कोई विद्वान् अपनी विद्वत्ता-को अपने टूटे-फूटे स्नायुओंका जीर्णोद्धार करनेके लिए इस्तेमाल करने लगता है, तब हमारी आँखें फैलने लगती हैं और कान बड़े होने लगते हैं।

• हमारी बौद्धिक (?) प्रतिक्रिया :

यह एक तथ्य है कि इस बीसवीं शताब्दीने लगातार एकके बाद एक तमाचे लगाकर हम हिन्दुस्तानियोंकी सपाट सहिष्णुतामें काफ़ी बल डाल दिये हैं। मार खाते-खाते अब हमें इतना इतिहास-बोध हो ही गया है कि हम अपने राष्ट्रीय और व्यक्तिगत अस्तित्वकी सबसे संकटापन्न 'क्रूसियल' घड़ियों अर्थात् शेष शताब्दीकी रक्षा दोनों नाज़ुक मोर्चोंपर एक साथ कर सकें। एक मोर्चेपर नीरद चौधरीवाली ऐतिहासिक प्रतिभासे और दूसरेपर फ़ैज़ अहमद 'फ़ैज़' छाप डिकेडेन्स—अर्थात् अर्द्ध-फ़ासिज़्मसे।

इतना विवेक हममें है और इस तमाम आपाधापी और भेड़ियाधसानके बीच भी हमारी पीढ़ीके कुछ लोग और हमारे कुछ आत्मचेता अग्रज भी इस बातके लिए कटि-बद्ध हो चुके हैं कि राजनीतिमें भले ही हमारा अधकचरापन अभी आनेवाले कुछ वर्षों तक—बावजूद निरन्तर संघर्षके—चालू रहे; मगर साहित्य, कला और अन्य सम्बद्ध विद्याओंके क्षेत्रमें अब हम किसी भी क़ीमतपर अपनी बुद्धि और संवेदनाके साथ बलात्कार नहीं होने देंगे। यह खतरा बिलकुल मिट गया है—इतने आधुनिक हम हो गये हैं—ऐसा दावा तो नहीं किया जा सकता। पर खतरेको हम पहचानने लगे हैं, इतना ही क्या कम है?

हमारे देशका एक दुर्भाग्य यह भी रहा है कि यहाँ नेता और अनुयायीके बीच अपाटच खाइयाँ दीख पड़ती हैं। यह सच है कि हमारा सामूहिक मन नेतृत्वको चुनने में चरित्र और व्यक्तित्वकी कतिपय विशेषताओंके प्रति ज़रूरतसे ज़्यादा आग्रहशील रहा है। जॉन गैण्डर की इस आलोचनामें कुछ-न-कुछ दम अवश्य है कि राजनीतिके क्षेत्रमें अपने नेतामें गुरुत्वका यह आग्रह और आरोप हमेशा स्वस्थ और कल्याणकर नहीं होता। हालाँकि खालिस भारतीय सन्दर्भमें इस मनोवैज्ञानिक विवशताका अपना एक अलग मूल्य भी है, यह समझ लेना आवश्यक है।

मगर मुसीबत यह है कि हमारा सारा बौद्धिक जीवन इस मानसिकतासे ग्रस्त हो गया है। एक छोरपर प्रथम श्रेणीकी प्रतिभा और दूसरे छोरपर तृतीय और चतुर्थ श्रेणीके अनुयायी····। मध्यम श्रेणीका या तो पता ही नहीं लगता, या फिर उसका होना, न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होना बराबर हो रहता है। ऐसे वातावरण-में कोई भी विचार संक्रामक शक्ति नहीं पा सकता। क्रिया-प्रतिक्रियाका दौर बेहद अल्पायु और निष्प्रभ रहता है। मध्यम श्रेणी-का सेतु बहुत कच्चा होनेके कारण प्रतिभाकी चिनगारी इतनी चौड़ी खाइयाँ पार करते-करते नितान्त शिथिल हो रहती है। यों भी अपने यहाँ वैचारिक उत्तेजन और आलोच-नात्मक स्फूर्तिकी कमी है। यह हमारी एक बहुत बड़ी कमी है और इसीके चलते हमारे यहाँ सशक्त बौद्धिक और नैतिक चिन्तन-परम्पराएँ विकसित नहीं हो पातीं। सच बात तो यह है कि हमारे बौद्धिक वर्गने अपनी भूमिका निबाहना तो दूर, पहचानना भी अभी-अभी बस शुरू ही किया है। ऐसे वातावरणमें यदि तटस्थताका सिद्धान्त भी नैतिक मूल्य-मूढ़ता अथवा नैतिक-विवेक-चेतनाकी अनिवार्य पीड़ासे पलायनका प्रतीक-जैसा प्रतीत होने लगे तो कुछ अजब नहीं।

नीरद चौधरी क्यों वह सब लिखते हैं? जो वे लिखते हैं, यह हमारी चिन्ताका विषय नहीं है। नहीं हो सकता। चिन्ताका विषय तो तब होता जब नीरद चौधरी होते ही नहीं। चिन्ताका विषय तो वह सन्नाटा या वह गाली-गलौज है जोकि उनके लेखनके प्रति हमारे बौद्धिकोंकी एकमात्र प्रतिक्रिया जान पड़ती है।

• कुछ निष्कर्ष :

रिल्केने भी रूसको अपनी 'अन्तरात्माका घर' कहा था। पर यह बात भी उसने जर्मन भाषामें कही थी और कवि भी वह आखिर जर्मन ही है। बिना जर्मन दार्शनिक-काव्या-त्मक परम्पराकी पृष्ठभूमिके—मसलन बिना गेटे और नीत्शे (और फ्रेंच प्रतीकवादके) रिल्केकी कल्पना नहीं होती। उसी तरह जैसे ईसा और ईसाइयतके बिना नीत्शेकी कल्पना (मुझे कमसे कम) नहीं होती।

हाँ, नीरद चौधरीके लिए अवश्य यह सम्भव हो गया है कि वे सबसे ज़्यादा भार-तीय चीज़ोंके बग़ैर भी 'भारतीयता' और 'भारतीय इतिहास' और 'हिन्दू-चरित्र'की कल्पना व व्याख्या दोनों कर लें। यह आकस्मिक नहीं कि उन्हें शंकराचार्यके बाद एकमात्र मौलिक चिन्तक बंकिम ही दिखाई देते हैं और बंकिमके बाद शून्य-ही-शून्यका विस्फार नज़र आता है।

नीरदकी विडम्बना यह है कि उन्होंने 'व्यक्तित्वकी खोज' की समस्याको 'आत्म' और 'आत्मा'की खोजकी गहनतर समस्याओं-से बुरी तरह उलझा लिया है। जबकि वस्तुतः बाक़ी दोनों चीज़ोंसे उनका साबक़ा कभी पड़ा ही नहीं प्रतीत होता।

उनके लिए सत्य—और मानुष-सत्य उतना ही है, जितना कि वह इतिहास या नृतत्त्व या जर्नलिज़्म है। निश्चय ही उन्होंने अपने निष्कर्षोंको हिन्दू-चरित्रके प्रामाणिक निरीक्षण-विश्लेषणका आधार भी दिया है। जहाँ-जहाँ आँखों, और आँखोंसे कहीं बहुत ज़्यादा किताबों-द्वारा उनकी पहुंच हो सकती थी, वहाँ-वहाँ वे पहुँचे हैं और इससे इनकार नहीं कि उनके विश्लेषणमें बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ ऐसा है जो बारीक भी है और विश्व-सनीय भी। मगर प्रश्न यह है कि क्या मानव-नियति इस हद तक नृतत्त्वशास्त्रीय है जहाँतक नीरदने उसे खींचा है। सहज बुद्धि अधिकसे अधिक इतना ही तो कह सकती है कि मानव-नियतिके बीस निर्धारकों-में एक यह भी हो सकता है। मगर इससे भी बड़ा प्रश्न यह है कि क्या बीसवीं शताब्दी-के इस चरणपर इस स्तरकी वैचारिकता और इस तरहकी दृष्टि निहायत स्वस्थ मानसिकताकी द्योतक है? क्या इस सारे इतिहास-मन्थन और चरित्र-विश्लेषणकी परि-णति एक जातिवादी रोमैण्टिसिज़्ममें ही हो सकती थी? क्या नीरद चौधरीकी यह थीसिस फ़ासिस्ट मनोवृत्तिके आरोपोंसे सर्वदा और सर्वथा सुरक्षित रह सकती है? (नीत्शेको मनुस्मृतिसे अत्यधिक प्यार था न!)

अपनी आत्मकथामें नीरदने बताया है कि सन् १९२१ से १९३७ तक की अवधि (जो स्वाधीनता-संग्रामके इतिहासका और हमारी राष्ट्रीय चेतनाके सामूहिक जागरणका उज्ज्वल अध्याय माना जाता है) में उन्हें न केवल अपने भीतर, बल्कि अपने बाहर राष्ट्रीय परिवेशमें भी लगातार एक भयावह जड़ता और कुण्ठाका अनुभव होता रहा। ऐसा नहीं, कि इसके बाद उनके लिए सब कुछ एकाएक जीवन्त और गतिमय हो उठा हो। दरअसल वे अपने परिवेशमें अपनेको हमेशा बेहद अकेला और अजनबी महसूस करते रहे और स्वतन्त्रता-प्राप्तिने उन्हें और अधिक अकेला करके रख दिया। आत्म-हीनताके इस आतंकसे जूझते हुए उन्हें सहसा एक प्रकाश-किरण दीख पड़ी और भारतका इतिहास उनके लिए सहसा एक नये अर्थसे आलोकित हो उठा। असह्य आत्मपीड़नका एक लम्बा दौर ख़त्म हुआ और उन्हें वह चिरअभीप्सित मोक्ष मिल गया जो 'भारतीय' भले न हो, पर 'भारतीय' होनेकी—और बीसवीं सदीके भारतका 'भारतीय' होनेकी अन्तहीन यन्त्रणा और दायित्व-चेतनासे मोक्ष तो था ही।

बहरहाल अब उनके पास भारतीय भविष्यकी—शेष शताब्दीने कुशल-क्षेमकी—दो ही कल्पनाएँ हैं: या तो फिर विदेशी आधिपत्य हो जाये (जो कि वे निश्चय ही नहीं चाहते) या फिर हम अपनी मौलिक यूरॅपियन आत्मापर-से इन तीस शताब्दियों-की जमी काईको एकबारगी छुड़ा लें और पुनः वही हो जायें जो हमारे पूर्वज थे—विजेता, युयुत्सु, साहसिक, अभिजात।

एक इतिहासके विद्यार्थीकी दृष्टि इतनी संकीर्ण और पक्षाग्रही हो, और फिर वह इतिहास-चिन्तन अपने निष्कर्षमें इतना अनैतिहासिक हो उठे—यह भी एक विचित्र दृश्य है। यदि अठारहवीं या उन्नीसवीं शताब्दीमें भी वे विचार रखे जाते तो भी एक बात थी—हालाँकि मुझे इसमें काफ़ी सन्देह है कि राममोहनराय जैसे व्यक्ति तक नीरदकी इस थीसिसको गम्भीरतासे ले पाते।

बीसवीं शताब्दीमें रहते हुए बीसवीं शताब्दीकी सबसे क्रूर सिखावनोंकी यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपेक्षा क्या सूचित करती है ? बीसवीं सदी-के भारतीय चिन्तनमें नीरदकी यह चिन्ता उतनी ही बेमेल, उतनी ही विचित्र लगती है जितनी कि हिन्दी उपन्यासमें रांगेय राघव-का द्रविड़वाद। जिस वक़्त हिन्दीके कवि और उपन्यासकार पूर्व और पश्चिमकी टकराहटके बौद्धिक-आध्यात्मिक सन्दर्भोंमें पैठनेकी कोशिश कर रहे थे—'व्यक्तित्वकी खोज' और आधुनिक संवेदनाकी अभूतपूर्व चुनौतियोंसे जूझनेमें जुटे थे, उस वक़्त रांगेय राघव—जी हाँ, प्रगतिवादी-साम्यवादी रांगेय राघव—आर्य-द्रविड़-संघर्षका उत्तेजक रोमान उकसा रहे थे।....मेरे लिए तो यह विश्वास करना भी कठिन है कि जिस बंकिमका हवाला देते-देते चौधरीजी नहीं थकते, वे बंकिम भी स्वयं अपने सारे उग्र राष्ट्रवादको लेकर भी उनकी पीठ ठोंकते ही। इस तथ्य-से अवश्य ही इनकार नहीं किया जा सकता कि इस बीसवीं सदीमें भी हम भारतीयोंके लिए राष्ट्रीयताकी परिकल्पनाका अपना मूल्य और महत्त्व है। एक बुनियादी तथ्य यह भी है कि हमारा राष्ट्रवादी चिन्तन कभी भी पश्चिमी राष्ट्रवादके अतिरेकोंको नहीं छू सकता। जो ऐसा समझते हैं, वे मूर्ख हैं। यह नितान्त आवश्यक है—हमारे सच्चे आधुनिकीकरणकी पूर्वप्रतिज्ञा भी—कि हम अपने राष्ट्रीय स्वरूप और चरित्रके प्रति उस मूलगामी जिज्ञासा और आत्म-चेतनाका आग्रह रखें जो हमने कभी प्राप्त नहीं की। दूसरे शब्दोंमें, बिना भारतीयता (और हिन्दू'पन') की एक सर्जनात्मक प्रतिमा और प्रतिभाका पुनराविष्कार कि[ए] अपना निस्तार नहीं है। राष्ट्रीयता[का] आग्रह इस सर्जनात्मक समग्रताका ही आ[ग्रह] हो सकता है। इस तथ्यको रेखांकि[त] करना भी आवश्यक है कि हमारी अस[ली] बीमारी राष्ट्रीयता नहीं बल्कि प्रान्तीय[ता] है। वस्तुतः वही सारी व्याधियोंका मूल है और आज भी उसका खतरा कम नहीं बल्कि पहलेसे ज़्यादा ही है। साम्प्रदायिक[ता] भी इस सड़ाँधमें-से ही पनपती है।

• आत्मनिर्णयकी ज़मीन :

मैं उन व्यक्तियोंमें-से नहीं हूँ जो राममोहन रायका अवमूल्यन करते हैं। मेरी दृष्टिमें [वे] भारतकी आधुनिकताके आदिपुरुष हैं। [मैं] बंकिमकी प्रतिभाका भी क़ायल हूँ। [पर] साथ ही यह माननेको भी बाध्य हूँ कि तत्कालीन परिस्थितिमें स्वामी दयानन्दका राष्ट्रवाद बंकिमके राष्ट्रवादकी तुलनामें कहीं अधिक राष्ट्रीय, कहीं अधिक व्याप[क] था। यदि हम आर्यसमाजकी सम्भावनाओं तथा क्षमताओंका आधा उपयोग भी नहीं कर पाये तो यह आर्य-समाजका नहीं, हमारा ही दुर्भाग्य कहा जायेगा। निश्चय ही आर्यसमाजकी भी अपनी सुस्पष्ट सीमाएँ थीं : सबसे बड़ी सीमा तो यही कि आर्यसमाजका 'आर्य' उस समग्र राशीभूत समृद्धि उस जटिल अन्तर्विरोध-सम्पन्न समग्रताका भरपूर प्रतीक नहीं उभार पाया था, जिसका नाम 'हिन्दुत्व' है वह हिन्दुत्व जिसकी गढ़न और संस्कारमें ईसाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहलेकी पन्द्रह शताब्दियोंका भी उतना ही हाथ रहा है जितना कि ईसाके बादकी उन्नीस शताब्दियोंका। इस दृष्टिसे रामकृष्ण, विवेकानन्द तथा उनके बाद गान्धीजीने 'हिन्दू' की जो प्रतिमा प्रस्तुत की थी वह यथार्थके अधिक निकट थी। नीरद चौधरीने रामकृष्ण-मिशनके साधुओं—विशेषकर विदेश-में सेवारत साधुओंको 'नीमहकीम'की उपाधि दी है—जो कि उन्हींके योग्य है।

क्या बीसवीं शताब्दीकी दो-तिहाई दूरी तय कर लेनेके बाद भी हमारे बौद्धिक मनुष्य-को इतिहास, नृतत्त्व और अर्थशास्त्रके ही पिंजड़ोंमें जीवित समझने और रखनेका हठ करते रहेंगे? आजकी तारीख़में जब कि अमेरिकी उपन्यासकार* आधुनिक मनोविज्ञान और आधुनिक राजनीतिके सर्वग्रासी आतंकके सामने अपनी संवेदनाको सर्वथा नग्न करके व्यक्तिकी सारी पूर्वस्वीकृत परिभाषाओंको छिन्न-भिन्न करनेका आत्मघाती जोखम उठानेके बाद, ऐतिहासिक मनुष्यकी अच्छी तरह चीर-फाड़ झेल चुकनेपर समसामयिक यथार्थके दबावोंमें घिरकर मनुष्यत्वकी सारी पहचानोंसे वंचित होकर नये सिरेसे उसकी वास्तविकताका साक्षात् करनेकी असम्भवता-से संघर्ष कर रहे हैं तब ऐसेमें हमारे नीरदजी अपने सारे नैतिक दायित्वको नकारकर उन्नीसवीं सदीके रोमैण्टिक जातिवादमें ही अपनी और अपनी देशकी आत्माके उद्धार-का मार्ग ढूंढ़नेको प्रेरित हुए हैं! इससे बड़ी विडम्बना और क्या होगी? वह आत्म-संघर्ष नहीं, आत्मपलायन है; साहसिक चिन्तन नहीं, बल्कि परले सिरेकी कुण्ठा है।

साहसिकता थी राममोहन में, जिन्होंने एक ज़िन्दा गतिशील धर्मकी ललकारको अपने हिन्दू-मानसकी इतिहास-कीलित जड़ोंमें उठते बवण्डरकी ताक़तकी तरह महसूस किया था; और उससे भी अधिक उन जड़ोंको सींचने-संजीवित करनेका महान् ऐतिहासिक कार्य सम्पन्न किया था। साहसिकता थी स्वामी दयानन्दमें जिन्होंने इस बवण्डरको न केवल अपनी धमनियोंमें झेला-पचाया था, बल्कि उसकी टक्करमें, उसीके वज़नपर आत्म-चैतन्यका वह गौरवपूर्ण प्रतिरोध खड़ा किया था। जो उस समय हमारी जातीय निर्वीर्यता-का एकमात्र उपचार हो सकता था।

साहसिकता थी माइकेल मधुसूदन दत्त में जिन्होंने अपने कवि-व्यक्तित्वको ही नहीं, प्रत्युत अपनी धार्मिकताको भी आत्मनिर्णय-की ठोस ज़मीनपर खड़ा किया था। आज हम अपनी नितान्त भोथरी आध्यात्मिक संवेदनाको लेकर 'धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रीयता'-जैसी शाब्दिकताकी आड़में अपनी टुच्ची

---

* सन्दर्भ : 1. Seize the Day & Henderson the Rain King —by Saul Bellow उपन्यास
2. The Thin Red line —by James Jones ,,
3. Morte d' Urban —by J. F. Power ,,
4. The Cape Cod Lighter —by John O' Hara (कहानी-संग्रह)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिकताका इज़्हार करते हुए बड़ी आसानीसे एकको अतीतोन्मुख पलायनवादी, दूसरेको राजभक्त चाटुकार और तीसरेको धर्मद्रोही क़रार दे देते हैं--क्योंकि अपने इन शब्दोंकी जड़में जाना हमारी औक़ातसे बाहरकी बात है—क्योंकि अब हमारे बीच किसी दूसरे राममोहन और दयानन्दकी सम्भावना नहीं रह गयी है जो शेष शताब्दी-की दहलीज़पर खड़ा होकर हमको हमारा असली चेहरा दिखलाये और बताये कि जिसे हम अपनी धर्मनिरपेक्षता समझते हैं—वह दरअसल हमारी आध्यात्मिक नपुंसकता ही है—कि बिना अपनी सामूहिक चेतनाके पथरावकी नितान्त अस्तित्ववादी यन्त्रणासे जूझे हम कभी भी अपनी विंशशताब्दीय जिजीविषा—अर्थात् आधुनिकता—को अपने तईं परिभाषित भी नहीं कर सकते—कि भारतवर्षके सन्दर्भमें परम्पराके पुन: परीक्षण और पुनराविष्कार तथा उसके वज़नपर आधुनिकीकरणकी प्रक्रिया न केवल योरोपकी एतादृश प्रक्रियासे भिन्न है, वरन् उससे कहीं अधिक जटिल और जोखमपूर्ण भी है।

इस दृष्टिसे राममोहनकी समन्वय-चेष्टा-में—धर्मतत्त्वके प्रति उनकी उस गहरी मानवीय प्रतिश्रुतिमें—नीरदकी अपेक्षा कठिनतर आधुनिकता थी। क्योंकि उन्होंने समसामयिक चुनौतियोंको झेल-पचाकर अगली शताब्दियोंकी ओर न केवल अपने देशकी धार्मिक संस्कृतिको—बल्कि अपने देशके आत्मविश्वासको भी उन्मुख किया था। यह भी स्पष्ट है कि माइकेल भी नीरद-की अपेक्षा न केवल अधिक आधुनिक, ... अधिक 'भारतीय' भी थे। क्योंकि ... भी पूर्व-पश्चिमकी टकराहटके सम्मुख ... ईमानदार आत्मसंघर्षको सही-सही परि... षित किया था और इस तरह न केवल ... व्यक्तिगत मोक्षका, बल्कि अपनी मातृभा... के भी विकासका मार्ग निकाला था। ... दृष्टिमें तो उन्होंने ईसाइयतको चुनकर ... उसी साहसिक आत्मनिर्णयका परिचय दि... था जो उन्होंने अँगरेज़ीका मोह छोड़... बँगलाको अपनी सृजनशीलताका माध्य... चुनकर दिया था। हिन्दू धार्मिक दृष्टि... पहला पाठ ही यही है कि कोई मतवाद न... बल्कि स्वयं व्यक्तिका अपना स्व... आत्मनिर्णय ही उसकी धार्मिकताको ... दिशा दे सकता है और उसे यह अधिका... देता है कि वह अपना धर्म, अपना मसीह... अपना इष्टदेव, अपना ईश्वर स्वयमेव चुने... अतएव दत्तने अपना धर्म स्वयं चुनकर ... हिन्दुत्वके विधानकी न सही, हिन्दू ध... दृष्टिकी मौलिकताकी रक्षा अवश्य की ... जबकि इसके विपरीत नीरद चौधरीने ... समग्र मानसिक-आध्यात्मिक यथार्थको ... अनचाहे विकृत और विद्रूपित ही किया ... जिसके, और मात्र जिसके, सम्पूर्ण स्वीकृ... और सम्पूर्ण रचनात्मक प्रयोगसे ही हम... देशकी प्रतिभा और जीवनी-शक्ति निर्धारि... और प्रमाणित होगी।

• हम उत्तर दें :

मगर उपरोक्त विवेचनकी सार्थकता तभी है ... जब हम उस कोटिकी आलोचनाके महत्त्व...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी अपने समसामयिक बौद्धिकमें साग्रह रेखांकित करें जिसने हमारी इस चर्चाको उल्लेरित किया है। हम एक आत्मतुष्ट आलोचना विमुख प्रजा हैं और हमारी बौद्धिक परम्पराएँ—यदि उनका अस्तित्व है, तो—सम्प्रति घोर अव्यवस्था और संकीर्णता की शिकार हैं। जिस देशके शैक्षिक मानदण्ड तक मौसमके मुताबिक़ उठते-गिरते हों—जिस देशके विश्वविद्यालय हमारी राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक आकांक्षाओंके उच्चतम स्तरको प्रतिबिम्बित करनेकी बजाय स्वयं एक ओर सरकारी शिक्षाविदों और दूसरी ओर अधकचरी छात्र-राजनीतिके असहाय आखेट बनकर किसी तरह अपने व्यक्तित्वहीन कलेवरको घसीटते चले जाना ही अपना एकमात्र पुरुषार्थ समझते हों—उस देशके भाग्यपर एक नहीं, अनेक प्रश्नचिह्न लगाये जा सकते हैं। और लगाये जाने चाहिए। इस भयावह स्थितिके प्रतिकारका प्रयत्न—अर्थात् राष्ट्र-जीवनके सभी जीवित सन्दर्भोंमें एक स्वतन्त्र दायित्व-क्षम आलोचनात्मक सक्रियताका पुरस्करण—मैं समझता हूँ, हमारी आद्य-प्राथमिक आवश्यताओं-मेंसे एक है : इतनी प्राथमिक कि पूरीकी पूरी शेष शताब्दी स्वयंको इसके लिए खपानेको कटिबद्ध हो, तभी आगे किसी मार्गकी सम्भावना दिखाई दे सकती है।

यह हमारी नियति है—हमारे सम्पूर्ण जनमानसकी नियति—कि हमारा बौद्धिक जीवन भी हमारे जातीय-सांस्कृतिक जीवनकी तरह, हमारे धर्मकी तरह, अनेकस्तरीय, अन्तर्विरोध-सम्पन्न और अनेक फलकीय हो। अनेक दृष्टियोंकी भरपूर टकराहट ही—ऐसा लगता है कि—आनेवाले कई-कई वर्षों तक हमारी एक मात्र सार्थक-ससृज दृष्टि बन सकती है। यह हमारी समसामयिकताका ही नहीं, बल्कि हमारे सम्पूर्ण इतिहास, हमारे सम्पूर्ण मनोवैज्ञानिक यथार्थका तक़ाज़ा है। इसीमें-से वह आधुनिकीकरण सम्भव होगा जो नीरद चौधरी ही को नहीं, बल्कि सेलिग हेरिसन और एडवर्ड शिल्स-जैसे विशेषज्ञों—हमारे कटुतम आलोचकों—को हमारा सही निर्णायक उत्तर होगा; सही निर्णायक उत्तर होगा—उस टी० एस० एलियटको भी, जिसने हमारे देशकी वर्तमान अराजकता-पर निहायत आत्मतुष्ट-अहम्मन्यताके साथ तरस खाते हुए—इतिहासकार ट्वॉयनबीकी तर्ज़पर अपना मिशनरी राग अलापते हुए फ़तवा दे डाला था कि 'भारतकी यह दुर्दशा न हुई होती यदि हम यूरोपियन साम्राज्यवादियोंने यूरोपियन संस्कृतिका प्रचार करनेसे पहले—उसकी पूर्वप्रतिज्ञाके तौरपर—यूरोपियन धर्मके प्रचार-प्रसारको भी अपना बुनियादी लक्ष्य बनाया होता।"

■ ■

अँगरेज़ी विभाग,
गवर्नमेण्ट डिग्री कालेज,
सीधी (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ आरोह-अवरोहसे आगे ॥ अमेरिकाके बहुचर्चित नृत्य-समारोहसे लौटकर श्रीमती अमला शंकर अमूर्त और एब्सर्ड नृत्य-प्रदर्शनोंके बारेमें यह इम्प्रेशन लेकर आयी हैं कि उनमें अपील, साधन और सन्देशकी कमी है जबकि वे प्रदर्शन केवल 'हैपनिंग्ज़' पर आधारित हैं। शायद यह प्रभाव हर कला-विधाके बारेमें ठीक उतरता है। यहाँ अनिल विश्वास, दिनकर कायकिनी, माधुरी श्रीवास्तव, आचार्य बृहस्पति, सुमति मुटाटकर और उस्ताद रहीमुद्दीनख़ाँ डागरसे शेष शताब्दीके संगीतपर विचार प्रस्तुत हैं…।

कलका संगीत

श्याम परमार / शेष शताब्दीके आगामी वर्षोंकी परिकल्पनाके सन्दर्भमें आधुनिक युगकी उपलब्धियोंको उपेक्षित करके कुछ भी सोचना असंगत होगा। जिस सन्धिकाल पर आकर हमारा वर्तमान भविष्यकी ओर देख रहा है, वह अब मात्र अनुमानोंपर आधृत नहीं रहा। प्रारम्भिक वर्षोंमें, जब कि शताब्दीने पहले दशककी कसमसाहट अनुभव की थी, किसीने नहीं सोचा था कि अर्द्धशतीमें हमारा जीवन विज्ञानकी अनेकानेक विजय-यात्राओंसे समृद्ध हो उठेगा। औद्योगिक विकासके एक बिन्दुपर आकर मानव-सभ्यता जिस रूपमें यन्त्राधीन हुई वह अब विवादास्पद विषय नहीं रहा। अणु-शक्तिकी सम्भावनाओंके द्वैत मार्ग-पर आकर सयभ्यताने जहाँ तनिक श्वास लेना चाहा, वहाँ अनास्था, भय, सन्त्रास और भीड़की नियतिने उसे घेर लिया। परिवर्तित होते हुए सम्बन्धों, परिवेशों, मूल्यों एवं कला-गत विधाओंकी मर्यादाविहीन स्थितियोंमें अनिश्चयका दर्शन हमारा प्रारब्ध हो गया। फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी, आगामी दशकमें क्या होने जा रहा है उसकी कल्पना करना असाध्य नहीं लगता। इतिहासके एक लम्बे मार्गसे होकर मनुष्य वर्तमान तक आया है। बीसवीं शताब्दीकी अन्तिम सन्ध्या तक मार्ग अब बहुत छोटा है। इस बीच आदमीकी क्षमता हमने परख ली है। दुसाध्य और दारुण परिस्थितियोंमें भी उसने अपनी शक्तिका भरपूर उपयोग किया है। तीसरे महायुद्धकी भयावह परिणति और अणुअस्त्रोंके संहारक परिणामोंकी कल्पनाएँ उसे एक ओर वर्तमानमें मुक्त-भावसे जीनेका आग्रह करती हैं, तो दूसरी ओर उन सम्भावनाओंके प्रति आकृष्ट भी करती हैं, जो विनाशके घटित न होनेकी स्थितिमें, मानव-सभ्यताको वर्तमानसे भी अधिक उन्नत अवस्थामें ले आयेंगी।

राजनैतिक दृष्टिसे भावी सभ्यतामें बीसियों अवान्तर परिवर्तन हो सकते हैं। चाहे गृहयुद्ध या शीतयुद्धकी काली कठिनाइयोंसे जूझना पड़े, मगर यह भी कम रोमांचक नहीं है कि बावजूद बहुतेरी समस्याओंके, शेष शताब्दी अपने लिए उपादेय मार्ग अन्वेषित करती जायेगी। मनुष्य अपनी परिस्थितियोंके अनुकूल कलाओंको नया संस्कार देगा। भारतीय संगीतका भावी रूप समयके स्पन्दनसे अलग लीकपर नहीं चलेगा। यह विचित्र लगता है कि मर्यादाओंसे पोषित शास्त्रीय संगीतके समक्ष जो चुनौती समयने फेंकी है वह उतनी ही तीव्रतासे लोक-प्रचलित परम्परागत संगीतके प्रति भी घटित होती है। सहस्रों ट्रांजिस्टरों-पर शौक़से सुने जा रहे सिने-गीतोंका प्रभाव रक्तमें घुल रहा है। पश्चिमका 'पॉप' संगीत पढ़े-लिखे युवकों और युवतियोंको एक सिर-कनमें बाँधता है। इसे देखते हुए शास्त्रीय संगीत श्रोताओंके एक वर्गविशेषका संगीत बनकर रह जाता है। नयी पीढ़ीको उसे सुनकर पचा लेनेकी आस्था नहीं रही। पश्चिममें अब बेथोवनकी सिम्फ़नीपर नीग्रो 'स्प्रिच्युअल्स' और 'ब्लूज़' हावी हैं। पश्चिमके उदात्त संगीतके 'डायटोनिक' सप्तकका जादू अफ़्रीकी संगीतके 'पेण्टाटोनिक' सप्तककी विविध लयोंकी ओर इस तेज़ीसे आया कि आश्चर्य होता है। एक समय था कि भारतीय जीवनमें कीर्तन-गान साधनाकी ऊँचाई तक सम्मानित किया गया। कीर्तन उसके गायकको उन्मादकी उस अवस्थामें पहुँचा देता था, जहाँ भौतिक स्थितियाँ व्यर्थ हो जाती थीं। जॉज़में हम वही उन्माद क्यों पाते हैं? वह कौन-सा वातुल भाव है जो संगीतके दोनों रूपों-द्वारा मनुष्यको एक ही तरहसे प्रभावित करता है?

इधर 'वेस्ट मीट्स ईस्ट' शीर्षकसे एक रेकार्ड अभी कुछ समय हुआ प्रकाशमें आया है। इसमें रविशंकर और यहूदी मेनुहिनने एक साथ अपने वाद्योंका उपयोग किया है। दोनों ही कलाकारोंने भारतीय रागोंको बजाया है। रेकॉर्डके एक ओर वॉयलिन-पर प्रभातीका निस्सरण मेनुहिनने पूरी तन्मयतासे किया है और उसी रेकॉर्डमें राग-तिलंगमें नियोजित स्वर-काकली रविशंकर और मेनुहिनकी एक जुगलबन्दी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मगर इस प्रयोगके पक्षमें भी, लगता है, कोई अच्छी राय भारतमें नहीं बनी।

आधुनिक युगमें हम प्रतिदिन छत्तीस घण्टेके रूपका निर्वाह कर रहे हैं। इस शताब्दीके आरम्भमें हमारा क्रम बारह घण्टेसे अधिकका नहीं था। छोटे स्थानोंमें तो वह और भी कमका रहा होगा। तब पश्चिममें तीन-चार घण्टों तक चलनेवाले नाटक या देर तक बजायी जानेवाली बेथोवनकी रचनाएँ सहज भावसे ग्रहण की जाती थीं। वेगनर और वर्डीके ऑपेरा लम्बे समय तक देखना भारी नहीं लगता था। भारतीय नागरिक रातभर कीर्तन सुन सकता था। घण्टों शास्त्रीय संगीतकी महफ़िलें सजती थीं। परन्तु अब समयने बहुत सारी सीमाएँ खड़ी कर दी हैं। शास्त्रीय रागोंके सम्बन्धमें यह कहना अभी कठिन है कि उसे नये आयामोंमें बाँधकर हमें कोई विशिष्ट उपलब्धि होगी। यों देखें तो वर्तमान युग तक आते-आते उसमें अनेक नूतन स्पर्श उभरे हैं। फिर यह भी प्रकट है कि कलाके क्षेत्रमें कुछ विधाएँ अपना अस्तित्व बहुत कम प्रभावित होने देती हैं। शास्त्रीय संगीतका मर्यादा-बोध उसे और उसके विशिष्ट श्रोताओंको एक ऐसी आस्थासे बाँधे हुए है कि उसकी मोटी पर्त यकायक नहीं तड़कती। तब भी सैकड़ों अन्य पर्तें इस क़दर उद्घाटित हुई हैं कि एक व्यापक समूह संगीतकी हलकी-फुलकी, चंचल और चटकदार धुनोंकी कीमियागिरीमें फँस गया है। अर्थात् शास्त्रीय संगीत समयके इस दबावसे जितना अधिक बचकर रहा उतना ही उसके बाहर एक बड़ा वृत्त संगीतको उसकी रूढ़ मर्यादाओंसे बाहर खींचता गया। यों देखें तो, द्वन्द्वात्मक विकासका प्रभाव स्वभावतः बोझिल शास्त्रीयताके निषेधको जन्म देता है, और फिर निषेधकी एक अति समन्वयकी तलाश करती है। सन्देह होता है कि अगर समन्वयका रूप 'नार्वेजियन वुड' या 'विदइन यू विदाउट यू'-जैसे रेकॉर्डोंकी शक्लमें आया तो हमारे पास आस्थाके लिए कौन-सा आधार होगा? भले ही रविशंकर जॉर्ज हेरिसनके साथ सितार बजाये या अँगरेज़ी गाने भारतीय रागोंमें तबला और इसराजके साथ बाज़ारोंमें पहुँचाये जायें, किन्तु अधुनातन मनको अभीतक वह सामग्री नहीं मिली है जिसे संगीतका नया संस्कार कहा जा सके। इस द्विविधामें हर प्रयत्नको प्रयोग मात्र कहकर हम अलग हट जाते हैं। 'एक्शन पेण्टिंग'के प्रयोक्ता जेक्सन पॉलाक बिना सोचे-समझे कैनवसपर रंग फेंकनेका आग्रह कितना ही करें—संगीत-जैसी विधामें वैसी उथल-पुथल तभी हो सकती है जब स्वरोंकी मर्यादाको तिलांजलि दे दी जाये। विद्युत्-तरंगोंसे टेपपर ध्वनि अंकित कर 'इलेक्ट्रॉनिक' संगीतका प्रयोग मानवेतर संगीत होगा। उसमें मनुष्यकी संवेदना कैसे नियोजित हो पायेगी, और उसके अभावमें वह समाज-स्वाद्य संगीत भी कैसे होगा? हमारी मर्म-मुद्रा इन प्रश्नोंके सामने कई तरहसे सोचती है।

इन बातोंके परिप्रेक्ष्यमें संगीतसे सम्ब-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्धित कुछ व्यक्तियोंके समक्ष मैंने एक प्रश्न-सन्दर्भ प्रस्तुत किया। उसका आलेख इस प्रकार है :

"बीसवीं शताब्दीके समाप्त होनेमें अब केवल तैंतीस वर्ष शेष हैं। आनेवाले इन वर्षोंमें विज्ञानकी कई महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ सम्भव होंगी। दुनिया तेज़ीसे छोटी होती जा रही है। अन्तरिक्ष यात्राएँ असम्भव नहीं लगतीं...मगर इन सबके साथ हमारी आबादी कई गुना बढ़ने जा रही है। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध जटिल होते जा रहे हैं। अणु-आयुधोंका ख़तरा भी सभ्यताके समक्ष है। संस्कृतियाँ भविष्यमें क्या रूप ग्रहण करेंगी—इसका स्पष्ट चित्र हमारी कल्पनामें नहीं आता। कुल मिलाकर अच्छी और बुरी दोनों स्थितियोंकी सम्भावनाएँ हमारे मस्तिष्कमें उभरकर आती हैं। अतएव आगामी वर्षोंमें घटित होनेवाले शुभ और अशुभ दोनों परिवर्तनोंके सन्दर्भमें बीसवीं शताब्दीके सम्पन्न होने तक भारतीय संगीतके स्वरूपकी क्या परिकल्पना की जा सकती है?"

(छह उत्तर :)

• प्रयोग-शालाएँ और ध्वनियोंका व्यवसाय :

ईसवी सन् दो हज़ार तक आते-आते संगीतका भविष्य क्या होगा—इसका अनुमान प्रत्येक संवेदनशील व्यक्ति अच्छी तरहसे कर सकता है। भावी पीढ़ियोंके प्रति बिना किसी पूर्वाग्रहके इस विषयमें मेरे विचार कुछ इस प्रकार हैं :

प्रत्येक देशमें संगीतका स्वरूप उनमें आर्थिक, राजनैतिक और वैज्ञानिक परिवर्तनों से प्रभावित होता रहेगा। मानव-जीवनकी बहुत-सी व्यवस्थाएँ और मूल्य विघटित होंगे तथा उनके स्थानपर अणुयुगकी शक्ति और गतिके साथ नयी व्यवस्थाएँ और अभिनव मूल्य विकसित होंगे।

समाजोपयोगी विज्ञानके प्रभुत्वके समक्ष संगीत अपने आपमें कोई अलग वस्तु न होकर, समयकी आवश्यकताके अनुसार, विभिन्न कार्योंके लिए मात्र एक उपयोगी विधा होकर रह पायेगा। मैं सोचता हूँ, या तो वह 'इलेक्ट्रॉनिक' संगीत होगा अथवा उसका कोई एक संकलित रूप विकसित होगा। दोनों ही अवस्थाएँ अभी प्रगतिके गर्भमें धीरे-धीरे पनप रही हैं। ऐसा संगीत मात्र बटन दबानेसे सहजोपलब्ध होगा और विविध अवसरोंके लिए उसके अनेक पूर्व-संकलित रूप पहलेसे तैयार होंगे। आपको भोजनके समयका संगीत चाहिए? तो बटन नम्बर ग्यारह दबाइए। मुझे विश्वास है ऐसा संगीत प्रयोगशालाओंमें बिन्दुओं और रेखाओंके निश्चित संकेतों-द्वारा ध्वनि-पट्टियोंपर लिखा जायेगा।

संसारकी दूरियाँ कम हो जानेसे विभिन्न देशोंकी संगीतविषयक मान्यताएँ—किसी खास पात्रमें एकत्र किये जानेके बाद उनका अर्क खींचा जा सकेगा और तब जो अर्क बनकर आयेगी उसका सिवा 'विश्व-संगीत' के और क्या नाम हो सकता है।

मुझे लगता है, भविष्यमें कलाके नाते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संगीतका कोई अस्तित्व नहीं होगा, न उसका स्वतन्त्र व्यक्तित्व होगा। सौन्दर्यके तत्त्व बोथरे हो जायँगे और संगीत व्यापार-सामग्रीकी तरह काममें लिया जायेगा। वह जरूरतके लिए किसी आनन्द या इतर अनुभूतिको पानेकी मात्र एक खुराक होगा।

यह सही है कि हर देशकी अपनी परम्परा होती है, अपना परिवेश होता है, अपना भूगोल होता है। समस्त गतिविधियाँ और स्वाभाविक विधाएँ इसी परिवेशमें पनपती हैं और तदनुरूप अपना अस्तित्व नियोजित करती हैं। इस दृष्टिसे मैं उन लोगोंसे सहमत नहीं हूँ जो संगीतको विश्व-भाषाका दरजा देते हैं। जिस संगीतसे एक जापानी भाव-विभोर होगा उससे भारतीय श्रोताकी अनुभूति ठण्डी और विपरीत होगी। ठीक वही भारतीय संगीतके प्रति जापानीकी प्रतिक्रिया होगी। फिर विश्व-व्यापी प्रभाव कहाँ रहा? कुछ व्यक्ति जो

• **नवगीत :**

[न्यूयॉर्कके एक रेस्तराँमे पियानो हथौड़ेसे बजाया जाता है। ढोलक-पर हाथ नहीं पैर मारे जाते हैं और नृत्य शुरू होता है। गीत है—]

यू – यू – यू – यूह – ह
यु – यु – यु – यु
यू – य – ऊ – य – ऊ – ऊ – ऊ
यु – यू – यु – यू ....
य – य – य – य · य – य – य – य:

(इसीको दस हज़ार बार दुहरा लीजिए!)

—प्लेबॉय से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व-संगीतकी बात करते हैं—उन्हें छोड़कर अन्य व्यक्ति अपने परिवेशसे इतर जातिके संगीतको कठिनाईसे आत्मसात् कर पाते हैं।

व्यापक अर्थमें संगीत और मुख्य रूपसे भारतीय संगीतका अपना नैतिक स्तर है। तमाम जीवन-मूल्यों (प्रेम, धर्म, सत्य आदि) और संवेदनाओंके साथ भारतीयोंने उसका अभ्यास बहुत आस्था और आदरके साथ किया है। प्रकट है, भारतीय संगीतका इतिहास सात हज़ार वर्ष पुराना है। इसपर भी आजके अणु-युगमें वह किसी तरह अपनी गहरी परम्पराका निर्वाह कर रहा है। भारतीय स्वभावकी चिरपरिचित धीमी गति किसी भी नयी बातको कठिनाईसे स्वीकार करती है और धीमेपनसे यह अन्दाज़ लगाया जा सकता है कि हमारे संगीतमें भी परिवर्तन बहुत मन्द गतिसे होगा।····मगर अन्ततः उसकी मृत्यु निश्चित है। शास्त्रीय संगीत और लोकसंगीत कालके चक्रमें अपनी स्वाभाविक मृत्युको प्राप्त होंगे। किन्तु प्रश्न यह है कि उसके स्थानपर कौन-सा रूप उत्पन्न होगा? उसको हम नहीं, बल्कि उस वक़्तकी पीढ़ी जानेगी (?)।

अगर अणुयुद्ध हुआ तो उस स्थितिमें समूची मानव-जातिके लिए सिवा मौतके संगीतके क्या बचेगा? मुझे तो इस बातकी ख़ुशी है कि उस समयकी घटनाओंको देखनेके लिए मैं जीवित नहीं होऊँगा।

—अनिल विश्वास

[सिने-जगत्के प्रख्यात संगीत-निर्देशक]

● **आवाज़ोंसे जन्मा कैक्टस :**

बीसवीं शताब्दीके पूर्ण होने तक भारतीय संगीतके स्वरूपकी कल्पना करना बहुत ही रोचक लगता है। यह प्रश्न निश्चय ही महत्त्वपूर्ण है, पर उसके विषयमें सोचते हुए मुझे अपनी आयुमें तैंतीस वर्ष और जोड़ना होगा। विज्ञानकी अन्य शाखाओंके साथ संगीतका मूल्यांकन करना या उसके विषयमें सोचना मुझे उचित नहीं जान पड़ता। यह सच है कि पिछले वर्षों हमने बैलगाड़ीसे लगाकर रॉकेट तक प्रगति की और दियासलाई से अणुशक्ति तक हमारी पहुँच हो सकी है, मगर संगीतके क्षेत्रमें अबतक बाहरी रूपमें उन्नति हुई है। उसकी आन्तरिक क्षमतामें प्रगति हुई है या नहीं—यह कहना यक़ीनन मुश्किल है। इससे एक प्रश्न भी मनमें आता है : सम्भवतः हमारी इस कलाने पहलेसे ही एक प्रकारकी ऊँचाई और अच्छे संस्कार लिये थे जिनके लिए अब प्रयत्न करनेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती। अर्थात् यह कला एक तरहसे परिपूर्ण है, और अब तो संगीतज्ञोंका ही काम रह गया है कि वे उसकी आन्तरिक आत्माको जाननेकी कोशिश करें और उसकी ऊँचाईको बनाये रखें। यहाँ मेरा मतलब संगीतके सभी प्रचलित रूपोंसे है। इन रूपोंमें शास्त्रीय संगीत, रेडियो-द्वारा प्रसारित होनेवाला सरल संगीत, लोकसंगीत और फ़िल्मी संगीत सभी मेरी दृष्टिमें हैं। एक विचारकके नाते मैं समझता हूँ कि इस वर्गीकरणमें कुछ तथ्य अवश्य है और उसमें पहले तीन रूपोंका अपना स्वतन्त्र महत्त्व स्पष्ट है। भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो हर मानेमें है ही, सिवा फ़िल्म-संगीतके जिसमें देशीयताकी कमी है। इसमें एक बड़ी बात यह हुई कि संगीतके अन्तर्राष्ट्रीय तत्त्वों-को उभरकर सामने आनेका मौक़ा मिला। इसमें पश्चिम पश्चिम न रहा, पूर्व-पूर्व नहीं। कुल मिलाकर एक ऐसा स्वरूप आया जो एक मानेमें हमारे भावी संगीतके स्वरूप-का संकेत देता है। एक वक़्त ऐसा भी आ सकता है कि फ़िल्मी संगीत हमारे बहुत-से भेदोंको खत्म कर दे। उसमें और लोकसंगीतमें फ़र्क़ न रहे। एक दृष्टिसे वह लोगोंको आकृष्ट करनेवाला 'पॉप' संगीत होकर हमारे भीड़-भरे समाजके संस्कारोंका अंश बन जायेगा। तब वह सिर्फ़ एक तरफ़ ध्वन्यात्मक संगीत होगा और दूसरी तरफ़ अर्जित (कल्टीवेटेड) संगीत। पहले तो हमने प्रकृतिकी ध्वनियोंसे बहुत-कुछ लिया था, अब शायद हमारी सभ्यता उन ध्वनियोंका प्रयोग करेगी जो समाजमें आदमीने अपने वैज्ञानिक साधनोंसे पैदा की हैं। उन ध्वनियोंका अपना प्रभाव होगा और भविष्यके संगीतमें उनका योगदान देखा जा सकेगा।

शास्त्रीय संगीत तालीम और रियाज़ माँगता है। भविष्यमें दोनोंके लिए इतना धैर्य और संयम नहीं होगा। यदि कोई उसे अपनाना भी चाहेगा तो उस व्यक्तिका मज़ाक़ उड़ाया जायेगा, क्योंकि दौड़ते हुए वक़्तके साथ वह एक अलग क़िस्मका प्राणी लगेगा, जो ऐसा कुछ प्राप्त करना चाहता है जिसकी कल्पना उस वक़्तके आदमीके बसके बाहर होगी। मेरा आशय है, वह व्यक्ति तब का 'बीट' होगा, और 'बीट' उस ज़मानेमें बहुत कम होंगे।

मैं निराश नहीं हूँ। मैंने अपने युगमें बहुत-कुछ बनते-बिगड़ते देखा है। ज़्यादातर इस युगमें नव-निर्माण ही अधिक हुआ। प्रत्येक विनाशके बाद हम बने हैं। संसारकी हलचलोंने हमें एक विश्वास यह दिया है कि आदमी हर खतरेमें बढ़कर आगे आता है। मुझे उम्मीद है, आज संगीतका रूप चाहे कितना ही विवादास्पद हो, पर यह भी सम्भव है कि अनुभव हमें शीघ्र ही इस नतीजेकी ओर ले जायेंगे कि संगीतको मात्र कोई अजनबी चीज़ न रहने दिया जाये, बल्कि उसे इनसानके उपयोग और अच्छे संस्कारकी कला भी बनायी जाये। आदमीका दिमाग़ बहुत-कुछ करता है। आजके आदमी-पर ही भविष्यका बोझ क्यों हो। भविष्यमें भी तो संगीतका अस्तित्व होगा। उसे भविष्यका इनसान अनुकूल बनानेसे कभी नहीं चूकेगा, मगर वह आवाज़ोंकी भीड़से जन्मा सिर्फ़ एक कैक्टस होगा।

इस सिलसिलेमें मुझे अपने एक स्वप्नका स्मरण आता है। उसमें मैंने देखा कि मैं अपने कमरेमें कुछ पढ़ रहा हूँ, और मुझे ऐसा लगा कि उस कमरेके बाहर लोगोंका एक हुजूम जमा हो गया है। उसमें-से एक आवाज़ आयी—'यह इमरजेन्सी केस है, इसे पहले अन्दर भेजो।' एक व्यक्तिको स्ट्रेचरपर उठाकर भीतर लाया जाता है। मैं पढ़ना छोड़कर उस व्यक्तिके नजदीक जाता हूँ और उससे पूछता हूँ कि उसे क्या तकलीफ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। वह अपनी तकलीफ़का बयान करता है। मैं अपनी एक नोटबुकमें उसके रोगका निदान ढूँढ़ता हूँ और फिर दूसरे कमरेमें जाकर एक छोटा-सा टेप-स्पूल लाकर उससे पूछता हूँ—'तुम खाली टेप लाये हो?' वह व्यक्ति अपना खाली टेप मुझे देता है और मैं अपने सहायकसे मूल टेपकी प्रति बनाकर उसे देनेका आदेश देता हूँ और उसे बताता हूँ कि वह चार घण्टे बाद उसे सुने।

यों तो यह एक स्वप्न मात्र है, पर अब लगता है कि भविष्यमें ऐसा भी सम्भवत: हो सकता है और संगीत हमारी आवश्यकताओंका निदान बने तथा उसे दवाओंकी तरह हम लोगोंमें तकसीम कर सकें।

—दिनकर कायकिनी

[सुप्रसिद्ध युवा गायक एवं 'भारतीय संगीत' के सम्पादक]

■

• सत्यं शिवं सुन्दरम्:

भविष्यमें क्या होगा, इसका अन्दाज़ कुछ लोग काफ़ी सही हद तक लगा लेते हैं। यदि हम ज्योतिषका आधार न भी मानें तो भी कुछ अनुभवके आधारपर, कुछ इतिहासके आधारपर और कुछ बुद्धि-बलके आधार पर भावी सामान्य रूप-रेखाका निर्धारण किया जा सकता है; किन्तु यह केवल सामाजिक रीति-रिवाजों, राजनीतिक प्रश्नों तथा साहित्यके लिए लागू है। संगीतकी परम्परा इससे भिन्न है। अगले ३३ वर्षोंके बाद संगीतकी क्या स्थिति होगी—यह साहित्य, इतिहास, समाज आदिके आधार-पर नहीं बताया जा सकता। इसके लिए तो वर्तमान युवक-युवतियोंकी मनोवैज्ञानिक स्थितिका विश्लेषण ही कुछ संकेत दे सकता है।

जहाँ तक शास्त्रीय संगीतका सम्बन्ध है, वह तो रहेगा ही क्योंकि उसके प्रेमी रहेंगे, चाहे उनकी संख्या कितनी ही कम क्यों न हो जाये। यह सत्य है कि शास्त्रीय संगीतके अध्ययन और उसकी प्रशंसाके लिए संगीतका पर्याप्त ज्ञान और समय होना चाहिए जिसका लोगोंके पास दिनों-दिन अभाव होता जा रहा है। फिर उच्च स्तरके सुगम संगीतकी नींव भी तो शास्त्रीय संगीत है। अत: तीसरे वर्षकी परीक्षा तक शास्त्रीय संगीत तो रहेगा ही।

३३ वर्षोंके बाद सुगम संगीत शास्त्रीय और लोक संगीत दोनोंकी अपेक्षा अधिक मात्रामें होगा। बल्कि लोकसंगीतके वर्तमान रूपका, हो सकता है, पूर्णतया लोप हो जाये, यदि उसे बचानेका पर्याप्त प्रयास नहीं किया गया। मेरा तात्पर्य सावनकी कजरी, भादोंके बिरहा, होलीके फाग, जन्मके सोहर, विवाहके बन्ना-बन्नी-जैसे लोकगीतोंसे है। उस समय या तो सुगम संगीतके 'सोलो' होंगे या सामूहिक संगीत होगा। आधुनिक जीवनका संघर्ष और हमारा युवा समाज जिस दिशामें तेज़ीसे बढ़ रहा है, उसे देखते हुए ऐसा लगता है कि बहुत शीघ्र ही संगीतमें स्वरकी प्रधानता हो जायेगी और लय दे भी तो 'सोलो'में ताल समाप्त हो जायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी जिन उलझनों और आहत भावनाओं को व्यक्ति अपने शब्दों तथा कर्मोंके द्वारा प्रकट नहीं कर सकेगा उन्हें वह करुण रस-प्रधान, ऊँचे-नीचे स्वरोंके जालसे बुने संगीत-को, बल-प्रोत्साहन व लोकप्रियता देकर व्यक्त करेगा और यदि वह स्वयं संगीतकार हुआ तो वैसे ही संगीतका सृजन भी करेगा। भौतिकतामें बँधा हुआ वह मुक्त कण्ठसे रो या चिल्ला नहीं सकेगा—तब वह जैसे कवितामें मुक्तक व रबड़ छन्दोंकी उत्पत्ति हुई है उसी तरह संगीतमें बिना ताल वाले संगीतकी रचना करेगा।

देशमें भौतिकवादकी बढ़ोत्तरीको देखते हुए जो आर्थिक व औद्योगिक उन्नतिके साथ बढ़ेगा ही, सामूहिक संगीतके बढ़नेकी अधिक सम्भावना है और सामूहिक स्तर कैसा है या हो सकता है, यह हम सब जानते ही हैं। उससे बहुत उच्च स्तरकी आशा करना तो व्यर्थ ही होगा। इस क्षेत्रमें तबला, मृदंग आदि अवश्य रहेंगे। यह लिखते समय मुझे उदयशंकरकी 'कल्पना' नामक फ़िल्मके संगीतकी याद आती है।

संगीतका उपासक तो, चाहे वह प्रत्यक्ष में हो चाहे परोक्षमें, भीड़-की-भीड़ जाती हुई जनताके कोलाहलमें भी संगीत पायेगा, और उस कोलाहलका जो संगीत उसके अन्तर्मनमें अनुभूत होगा, वैसा ही संगीत वह अपने कण्ठ और वाद्यके द्वारा प्रकट करेगा। ३३ वर्षोंके बाद वाद्य-समूहोंकी महत्ता अवश्यम्भावी है। इसलिए आर्केस्ट्रा (वाद्य-वृन्द) भी लोकप्रिय होगा—इसके लक्षण अभी ही दिखने लगे हैं। देशकी बढ़ती हुई जनसंख्याके अनुपातमें उच्च स्तरके संगीत-कलाकारोंकी संख्या उतनी तेज़ीसे नहीं बढ़ी है, किन्तु अपेक्षाकृत संगीत केन्द्रोंकी संख्या तथा संगीतके कार्यक्रमोंका पहलेसे अधिक आयोजन होता है, चाहे वह संस्था विशेष या वर्ग विशेष अथवा किसी समस्याके लिए धन इकट्ठा करनेके उद्देश्यसे ही क्यों न हो। अतः संगीत कुछ सस्ता हो गया-सा लगता है। चित्रपट-संगीत भी सस्ते संगीतका ही प्रचार कर रहा है। ३३ वर्षों बाद यह सस्तापन बढ़कर कहाँ पहुँचेगा। इसकी कल्पना करने पर मुझे लगता है कि वादन संगीत रह जायेगा, मौखिक बहुत कम हो जायेगा क्योंकि सस्तेपनकी भी एक सीमा है, विशेषकर संगीतके क्षेत्रमें।

औद्योगिक व भौतिक उन्नतिके शिखर-का आस्वादन करके योरप और अमरीकाके देश अब भारतीय संगीतकी माँग कर रहे हैं। लय-बद्ध भारतीय शास्त्रीय संगीतकी छाप उनके वर्तमान संगीतपर प्रत्यक्ष है। विदेशी संस्थाएँ भारतीय संगीतका अध्ययन काफ़ी मात्रामें कर रही हैं। हम अभी औद्योगिक उन्नति करनेमें लगे हैं और जिस भौतिकवादसे वह निकल रहे हैं हम उसमें पदार्पणकी तैयारी कर रहे हैं। हमारा युवा वर्ग तेज़ीसे उधर झुक रहा है। ३३ वर्षों बाद हमारा संगीत बहुत कुछ वैसा ही होगा जैसे आजका पाश्चात्य संगीत। हाँ, संगीत-क्षेत्रमें क्रान्ति हो सकती है और 'सोलो' संगीतकी रूपरेखा बदल सकती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि विष्णु दिगम्बर या रवीन्द्रनाथ-जैसा कोई नादका उपासक इस बीच जन्म ले ले।

अन्तमें, मैं कहूँगी कि ३३ वर्षोंके बादके संगीतकी रूपरेखा रेडियो व टेलीविजन (जिसका प्रसार व विकास असंदिग्ध है) के कार्यक्रमोंपर बहुत कुछ निर्भर होगी। चित्रपटका संगीत पैसा कमानेके लिए है किन्तु रेडियो व टेलीविजन अपने संगीतके द्वारा जनताकी रुचिको बना सकते हैं। और जनताके अनजाने ही उसे मोड़ सकते हैं। टेलीविजनकी उन्नतिके साथ चित्रपटकी लोकप्रियता घटती जायेगी और उसके सस्ते संगीतसे भयकी आशंका नहीं है किन्तु रेडियो व टेलीविजनको अपने क़दम दृढ़ व समझ-बूझकर बनाने होंगे—यदि संगीतको सत्यं शिवं सुन्दरम्के आसनपर रखना है।

— माधुरी श्रीवास्तव

[संगीत-मर्मज्ञ; उपमहानिदेशक (प्रशासन), आकाशवाणी]

• गात्र-वीणा :

प्रबुद्ध वर्गोंमें संगीतके प्रति चेतना जागी है और शालेय शिक्षा प्राप्त करनेवाले गायक ये समझने लगे हैं कि उनकी साधनामें कहीं कोई ऐसी कमी अवश्य है जो आनुवंशिक शिक्षाके अभावमें रह गयी है। साथ-ही-साथ आजका शिक्षित और विचारशील नवयुवक यह भी सोचने लगा है कि जहाँ पुरानी बन्दिशोंके गेय पक्षकी रक्षा होनी चाहिए वहाँ यह भी जानना चाहिए कि उन बन्दिशोंमें सौन्दर्य क्या और क्यों है और उस सुन्दरताके मूलमें क्या-क्या उपादान हैं। कुछ विचारपूर्वक ध्यान इस ओर भी जा रहा है कि जिन बन्दिशोंका साहित्य-पक्ष दुर्बल है उनमें समयानुकूल सजीव भाषामें उन स्वर-प्रबन्धोंको जहाँ एक ओर नया जीवन दिया जाना चाहिए वहाँ समर्थ स्रष्टाओंके द्वारा नयी चीज़ों और बन्दिशोंकी सृष्टि आवश्यक है।

यह युग वेगप्रधान है। युगकी इस प्रवृत्तिसे कलाकारोंका एक वर्ग प्रभावित हुआ और वह गान-वादनमें भी स्पीडके पीछे भागने लगा, परन्तु अब वह भी यह समझने लगा है कि रूपसियोंके कटाक्षका सौन्दर्य उनका वेगपूर्वक होते रहना नहीं है यदि प्रति सेकण्ड एक हज़ार नयन-बाण मारे जायें तो वे निष्प्रभाव हो जायेंगे। अतः एक विशिष्ट वर्ग पुनः शान्ति और निमग्नता देनेवाले स्वर-समुदायोंकी खोजमें लगा है।...चिन्तनकी समृद्ध परम्परा कहीं-कहीं निरर्थक रूढ़ियोंको तोड़ती प्रतीत होती है।

भारतीय संगीतके वादन और नर्तनने विदेशों तक अपने अंचल फैलाये हैं। भारतीय वादक तन्त्री वाद्योंके साथ अवनद्ध वाद्योंको भी विदेशी श्रोताओंके समक्ष ले गये हैं। इन कलाकारोंके प्रयत्न प्रभावी हुए हैं, परन्तु इस सम्बन्धमें अत्यन्त सतर्कताकी आवश्यकता है। यह सत्य है कि संगीत सार्वभौम है, परन्तु संगीतसम्बन्धी सनातन तथ्योंका साक्षात्कार समान रूपेण प्रत्येक देशको हुआ ही हो—यह नहीं कहा जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निस्सन्देह इस दृष्टिसे हमारी परम्परा अत्यन्त समृद्ध है। भारतीय गान भी विदेशोंमें जायेगा और निस्सन्देह पसन्द किया जायेगा।

मानव-शरीरको हम लोग गात्र-वीणा कहते हैं। जहाँ मानव-शरीरका उपयोग एक वाद्यकी भाँति होता है वहाँ स्वर, राग, ताल और 'बोल' व्याकरणकी दृष्टिसे सार्थक नहीं होते। जिह्वासे उच्चरित होने-वाले कुछ बोल केवल गात्र-वीणाके लिए हैं और गात्र-वीणा विभिन्न वाद्योंमें व्यवहृत बोलोंका उच्चारण करनेमें भलीभाँति समर्थ है, जैसे 'झलतिति', 'कलगिति', 'ऋंदुं', 'तेन्नाम', 'तननन', 'दिगितन' जैसे बोल गात्र-वीणाके अपने हैं और वाक्करण (वाणीका साधन) अथवा मुखपाट कहलाते हैं और 'डगर डर', 'घनानघननन' (वीणा), 'तकधुम किटतक', 'तक तक धिलांग' (पखावज), 'तुतुर तुतुर तुर' (शहनाई), 'ताँय किटी किट ताँय' (मजीरा)-जैसे विभिन्न वाद्य-पाटोंका अनुकरण उच्चारणके द्वारा गात्र-वीणाका कार्य है। मैं समझता हूँ, आगामी वर्षोंमें विदेशोंमें गात्र-वीणाका यह उपयोग भलीभाँति रखा जायेगा। गानके इस रूपमें भाषाके माध्यमकी कठिनता नहीं होगी।

अब रहा भारतीय संगीत और विदेशी भाषाके समन्वयका प्रश्न। इतिहास हमें बताता है कि कौलके रूपमें अरबी; नक्श, गुल और तरानामें विभिन्न पाटाक्षरोंके साथ फ़ारसी ग़ज़लोंमें फ़ारसी और उर्दू; ध्रुपदोंमें ब्रजभाषा, चुटकुलोंमें जौनपुरी; ख्यालमें ब्रजभाषा, राजस्थानी और पंजाबी; ठुमरियों और दादरोंमें पूर्वी और कर्नाटक संगीतमें संस्कृत तथा दक्षिणकी अन्य भाषाएँ भारतीय रागों और तालोंके अंकमें खिलती रहीं। यदि अरबी और फ़ारसी-जैसी विदेशी भाषाएँ भारतीय रागोंकी अंकशायिनी चुपचाप बन गयीं तो कोई कारण नहीं है कि अन्तर्राष्ट्रीयताके इस युगमें भारतीय रागों और तालोंकी आत्माको सुरक्षित रखते हुए विश्वकी इतर भाषाएँ भारतीय संगीतके सार्वभौम और सनातन वितानकी छायामें अटखेलियाँ न कर सकें।

— आचार्य बृहस्पति

[आकाशवाणीके प्रमुख संगीत-सलाहकार]

■

• पार्श्व-ध्वनि और संगीतकी गोलियाँ:

मुझे ऐसा लगता है कि बीसवीं शताब्दीके प्रारम्भसे संगीतके क्षेत्रमें जो क्रान्ति हुई उसे देखते हुए इस शताब्दीके समाप्त होने तक कोई मूलभूत परिवर्तन कदाचित् नहीं होगा। क्रान्तिसे यहाँ मेरा आशय ध्वनिके उस विशेष गुणसे है जो उत्पन्न होते ही नष्ट हो जाता है तथा जिसके लिए मनुष्य विगत युगमें कुछ नहीं कर पाया था, जो उसने इस शताब्दीके आरम्भ होनेके बाद किया। आरम्भमें अन्य कलाओंकी तुलनामें संगीतकी स्थिति अलग थी। उस समय संगीतका उसके प्रस्तुतकर्त्ता-कलाकारसे विच्छेद नहीं किया जा सकता था। मगर अन्य कला-माध्यमोंकी यह विशेषता रही है कि उन्हें अभिव्यक्तिके स्तर पर कलाकारसे अलग करके सुरक्षित रखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा सकता था। संगीत-क्षेत्रमें यह क्रान्ति ध्वनि-मुद्रणके आविष्कारके साथ हुई। वह एक चमत्कार था क्योंकि उसके कलाकारोंकी 'चीजें' उनके वास्तविक रूपमें अंकित करनेके बाद सुरक्षित रखना आसान हुआ। यहाँ गायकसे संगीतको अलग किया जा सका। एक ही रचनाकी कई प्रतियाँ जनसुलभ हुईं। इसका सबसे बड़ा फ़ायदा यों हुआ कि कलाकारको बिना कहीं भेजे संगीतको पुस्तकोंकी तरह हर कहीं पहुँचना सम्भव हो गया। अब तो हम जेबमें भी संगीत लिये फिरते हैं। ध्वनि-प्रसारणसे संगीतकी पहुँच और भी बढ़ गयी। परिणामस्वरूप संगीत लोकप्रिय भी हुआ और लोकरुचिके प्रति अधिक ध्यान दिये जानेसे यह भी हुआ कि बहुत-सी विशुद्ध परम्पराएँ, जिन्हें शास्त्रीय मर्यादाओं और नियमित तालीमसे सुरक्षित रखनेकी कोशिशें की जाती थीं, वैज्ञानिक साधनोंके प्रचारमें आ जानेसे उनकी क्षति हुई। इससे सम्मिश्रित संस्कारोंको प्रश्रय मिला। इसे हम एक दृष्टिसे संगीतका विकास ही कहेंगे क्योंकि उसे नयी परि-स्थितियोंमें सृजनात्मक क्षमताके लिए अनेक मार्ग सहज ही मिल सके।

जिसे हम शास्त्रीय संगीत कहते हैं वह मेरे विचारसे आनेवाले वर्षोंमें भी प्रचलित रहेगा, लेकिन उसके स्थायी मूल्य अवश्य बदल जायेंगे। इससे उसके स्वरूपमें भी फ़र्क़ पड़ेगा। वैयक्तिक सृजन-क्षमता उसे नये संस्कारोंमें सँवारती चली जायेगी।

हम जानते हैं कि दुनिया सिमटती चली जा रही है। इससे आदान-प्रदानमें प्रगति आयी है और आगे यह विनिमय बढ़ेगा। उसका प्रभाव हम फ़िल्म-संगीतमें देखते भी हैं। हमारी संस्कृतिके अन्य क्षेत्रोंमें जिस प्रकार बाहरी विचार-धाराएँ प्रविष्ट हुईं उसी तरह संगीतका क्षेत्र भी अछूता नहीं रहा। इस कारण विशुद्ध भारतीय परम्परा नामकी कोई वस्तु भविष्यमें कहाँ तक रहेगी यह कहना कठिन है। यह स्पष्ट है कि हमारा संगीत अब बाहर जाने लगा है। कुछ भारतीय कलाकार तो 'हिप्पीज़' और बीटल-गायकोंके हीरो भी बन गये हैं। यह क्या कम खुशीकी बात है? मगर एक प्रश्न मनमें आता है कि शास्त्रीय संगीत, जिसके प्रति हमारे संस्कारोंमें उदात्त भावनाएँ और गहरी आस्थाएँ हैं, वह विदेशमें जब नाइट-क्लबोंके मनोरंजनका विषय बनता है तब उसका रूप कहाँ तक सुरक्षित रहता होगा? इस सम्बन्धमें निश्चित कुछ कह पाना मुश्किल है। भारतमें जिसे हम विशिष्ट श्रोताओंके मध्य गम्भीरतासे सुनते हैं उसे क्लबोंके शोर-शराबेमें उस आस्थासे कैसे सुना जा सकता है? एक स्थिति ऐसी भी ज़रूरी है कि अगर भारतीय संगीतको उसके वास्तविक रूपमें सीखना है तो उसे भारतीय वातावरणमें ही सीखना उचित होगा।

भविष्यमें चाहे तीसरा महायुद्ध न हो, फिर भी हम अभीसे एक भारी तनावमें जी रहे हैं। हम अनुभव करने लगे हैं कि अब एक चित्त होकर उदात्त संगीतका आनन्द लेना कठिन हो गया है। कुछ परिकल्पनाएं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनमें आती हैं : शायद ऐसा भी हो सकता है कि संगीत औषधिकी तरह उपयोगमें लाया जाये, उसे हम दवाकी गोलियोंकी तरह जरूरतके मुताबिक़ ग्रहण करने लगें। सच तो यह है कि आदमीमें जबतक संवेदना है वह संगीतको अपने मनसे निकालेगा नहीं। उसके प्रति उसमें बराबर एक ललक होगी। चाहे उसका भावी रूप कैसा भी हो, लेकिन पार्श्व-ध्वनि की तरह उसका संचार उसे अवश्य सन्तोष देगा।

— सुमति मुटाटकर

[सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ एवं गायिका]

■

• कव्वाली और प्रभाव-संगीत :

बात यह है कि आबादी बढ़ती जा रही है। लोगोंके सामने खाद्यकी समस्याएँ हैं। पहले जैसा वातावरण भी अब नहीं रहा। भविष्यमें यह भी नहीं रहेगा। अगर आज-जैसी स्थिति बनी रही तो समय और भी बुरा आयेगा। नियमबद्ध संगीत आनेवाले वर्षोंमें अनियमित होता जायेगा। वाद्य बजानेवालोंकी शैलीमें वादनका एक ऐसा रूप प्रचारमें आयेगा कि सितारको सारंगी-जैसा बजाया जायेगा या सरोदको सितार-जैसा। आज रविशंकर और अली अकबर क्या करते हैं? वही तो बजाते हैं जो सुननेवाले अपेक्षा करते हैं। श्रोता और संगीतज्ञोंका सम्बन्ध अब बदल गया है। कलाकार अपने अस्तित्वके लिए कलाका स्वरूप लोगोंकी इच्छाओंके अनुसार बदलना अपना कर्तव्य समझेगा। कह नहीं सकते कि असलमें क्या होगा। उसका कोई साफ़ चित्र नहीं बनाया जा सकता है। एक बड़ा परिवर्तन भी हो सकता है।

····पर आजके संगीतकी दुरवस्था देखते हुए मुझे यह भान होता है कि बीसवीं शताब्दीके पूर्ण होने तक घटिया क़िस्मकी कव्वाली शेष रह जायेगी। ऐसा अनुमान मैं परिवार-नियोजनकी वर्तमान अवस्थाको देखकर करता हूँ। वाद्य-वादनके अन्तर्गत अगर कुछ बाक़ी बचेगा तो वह होगा मात्र प्रभाव-संगीत अर्थात् 'इफ़ेक्ट म्युज़िक'।

— नरेन्द्रराय शुक्ल

[आकाशवाणीके भूतपूर्व चीफ़ प्रोडचूसर, संगीत। आजकल संगीत-सम्बन्धी शोध-कार्योंके सलाहकार]

■

• अल्ला अल्ला खैर सल्ला :

होगा यह कि धुन रह जायेगी। ध्रुपदका तो आजकल जो हाल है उसे देखते हुए मुझे आगे उसके बने रहनेकी उम्मीद नहीं है। लगता है, ऊपरवालेकी यही मन्शा है। जिस कलाको सालों रियाज़ करनेके बाद हासिल किया वह अब टूट रही है।···

यह माना कि सुरका असर वहशीपर भी होता है, मगर भाई, सुर हो तब न! अब तो संगीतके हालात इतने बिगड़ गये हैं कि असली चीज़ नहीं रही। हम बाज़ारू चीज़ोंकी तरफ़ झुक गये हैं। गानेका मखरज बदल गया है। सेक्ससे आवाज़का बड़ा ताल्लुक़ है। उदाहरणके लिए कौवे और नपुंसकका काकु एक ही है। अगर मर्दमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेक्स नदारत है तो उसकी आवाज़ मेंढक-जैसी होगी। औरतमें भी उसकी कमी हुई तो आवाज़में नक्कीपन आ जायेगा। मेरा मतलब है कि अगर मखरज तबदील न किया जाये तो हम कुछ बचाकर रख सकते हैं।

फ़िल्मने गाँवसे गाने उठाये और उन्हें मशहूर कर दिया। इनसान यही तो कर सकता है। ग़ुलाम अली लोगोंको पसन्द तब आया जब उसने अपनी ऊँचाईसे उतरकर 'आये न बालम का करूँ सजनी' गाया। देख लो···

आराधनासे उठकर जो संगीत तहज़ीब-में आया वह फिर लोगोंके पास पहुँचकर अपनी ऊँचाईसे गिर गया है। दरअसल ऊँचाईसे गिरकर ही वह पहुँच पाया है। अब संगीतमें कलाकारके रियाज़ ... तालीमका महत्त्व नहीं, बल्कि महत्त्व ... बातका है कि लोग खुश किस बातसे ... हैं। ले-देकर गाना अब चौं-चौंका मु... हो गया है। गानेमें ड्रामा आ गया ... अल्फ़ाज़का गठाव अपनी जगहसे कम ... हो गया। मेरी रायमें तो भैया, अल्फ़ाज़ ... तासीर कम नहीं होती। जो है वह आगे ... और बदल जायेगा। ध्यान इस बात ... दिया जायेगा कि सुननेवाले वाह-वाह क... यही होगा और क्या होना है? ... अल्ला अल्ला, ख़ैर सल्ला!

— उस्ताद रहीमुद्दीनख़ाँ डा...

[डागुरवाणी परम्पराके एक मात्र पो... और प्रसिद्ध डागर-बन्धुओंसे सम्ब...]

६।१३ पूर्वी पटेलन...
नयी दिल्ली...

Phone : Resi : 34-9004 & 34-0764
Office : 22-3227 & 22-6440

Keshoram Aggarwal Company

21-B, Canning Street,

CALCUTTA-1.

Member :

East India Jute & Hassian Exchange Ltd.

Brokers for :

Jute Goods Specialities.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगमगाते दीपोंसे सुसज्जित दीपमालिका हमारी उन्नति और
प्रगतिका मार्ग प्रकाशयुक्त करे ।

दीप-मालिका के सुअवसर पर सादर अभिनन्दन;:—

रामचन्द्र-शिवदत्त राय

फैन्सी बाजार-गौहाटी-१

विद्युत-सन्देश : "रामशिव" :: विद्युत-ध्वनि : ३५६३-५२१०

वितरक—	प्रधान कार्यालय—
रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड	१६१/१ महात्मा गाँधी रोड
डालमियानगर	कलकत्ता-७
जे० के० पेपर मिल्स	ता
रायगाडा (उड़ीसा)	र
ऐसोसियेटेड पल्प एण्ड पेपर मिल्स	"साथिन फ्लैग"
अहमदाबाद	फो
संग्राहक—	न
रोहतास सिमेण्ट	३३-६००५
एवं	३३-६४७८
रोहतास एसबेस्टर शीट्स्	निवास ४६-६२२०

सभी प्रकार के कागज एवं बोर्ड आदि के अधिकृत विक्रेता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ कलाके करिश्मे ॥ यह अजब तरीक़ा है कि सारे सपनोंपर शेष शताब्दीको बिखरा दिया जाये। व्यक्तिके अनुसार ही सपने मूर्त होंगे और शेष शताब्दीकी बहुरंगी झलकियाँ सामने आ जायेंगी। यह एक चित्रकारका सपना है जिसने कैनवास बदल दिये और फ़ैशनकी रिसर्च करने लगा···

२००० के फ़ैशन-फ़ारमूले

मिर्ज़ा इस्माइल बेग। मैं देखता हूँ–मैंने चित्र केनवासपर बनाना छोड़ दिया है। शहरकी एक खास सड़कपर मेरा स्टुडियो है। जिसके अगले कमरेमें डॉक्टरकी तरह एक वेटिंग रूम है, जिसमें सुन्दर-सुन्दर सोफ़े लगे हुए हैं, जो दूरसे पत्थरोंका आभास देते हैं। मेरी ग्राहक अधिकांश युवतियाँ और बड़ी उम्रकी स्त्रियाँ हैं। सब नग्न बैठी हैं। मेरी सेक्रेटरीने सिर्फ़ आजके लिए पाँच ग्राहकोंको नम्बर दे दिये हैं।

मैं आवाज़ देता हूँ—"नम्बर एक।"

वह कोई ३५ वर्षकी स्त्री होगी। उम्र ढ़ल चुकी है। चेहरेकी हालत वैसी ही है जैसी पुती दीवारसे चूना टपक जाये। उसके सिरपर बाल नहीं है। वह गंजी हो गयी है।

"कहिए! आपको विग्ज़ चाहिए?"

"जी नहीं! मैं इतनी आऊट-ऑफ़-डेट नहीं।" तमककर बोली।

"बेशक भूल हुई!" मैं अपनी ग़लती सुधारता हूँ।

"विग्ज़!" उसने कहा, "यह पुरानी फ़ैशन है और महँगी भी। देखते नहीं, इस तीसरे महायुद्धके बाद दुनियाकी आबादी एक-तिहाई रह गयी है। बाल कहाँसे आयेंगे और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर जो बचे हैं उन्हें गंजेपन की बीमारीने सता रखा है। जो विग्ज़ मिलते हैं उनकी क़ीमत बीस गुना बढ़ गयी है।"

"·····तो फिर ?"

"इसलिए मैं चाहती हूँ आप मेरे सिर-को ओरियण्टल डिजाइनसे पेण्ट करें। जिसमें कमलके फूल, कलियाँ, पत्ते और कहीं-कहीं भँवरे हों। जिनके मुँह·····" इतना कहते-कहते वह रुकी और पर्ससे एक पुरुषकी तस्वीर निकालते हुए कहा, "ऐसा होना चाहिए।"

वह पुरुष आजके बीटलकी तरह था। उसने अपनी कमरके निचले हिस्सेमें प्लैस्टिक-के पत्ते बाँध रखे थे और मुँहमें एक रंग-बिरंगी तितली दबा रखी थी। इसके साथ ही मुँहमें गुलाब-जैसे लाल फूल थे जो दूरसे खून-जैसा दिखाई देता था।

"हाँ! तो आज मुझे तितली देशके एम्बेस्डरकी पार्टीमें जाना है। मैं चाहती हूँ। एक ही नावेल्टी हो।"

"ठीक है।" मैं सोचते हुए कहता हूँ, "देखिए, पार्टी रातको होगी। कमल रातको लड़ाईसे पहले सो जाते थे। इसलिए कुमु-दिनीके फूल बनवाइए। वे छोटे और अच्छे लगेंगे। पत्ते भी छोटे होते हैं। पानीकी शेड भी गहरी रहेगी और फूल सफ़ेद। इसके साथ ही आपके सिरसे चार इंच ऊँचा प्लैस्टिक-का चाँद होगा, जिसमें बेटरीके बल्ब होंगे।"

"बेटरी कहाँ रखेंगे ?" उसने पूछा।

"इसके लिए आपको ट्रान्सपेरेण्ट कपड़े पहनने होंगे। उसीमें यह बेटरी रख दी जायेगी। बेटरी दिखे नहीं, इसलिए दो बल्ब यहाँ जलेंगे। उजालेसे आसपास अँधेरा रहेगा। मालूम है न! दिये तले अँधेरा।" मैंने समझाया।

वह खुशीसे उछल रही थी—"ओह! माय हायड्रोजन बॅम! क्या कल्पना है! ····आय एम अनकान्शिएस!"—वह मुझे चूमती है।

मैं उसका मेकअप करता हूँ। वह मुझे जीनियसकी उपाधि देती है और हाथोंमें एक हज़ार 'रु–रूबलो-डालर-पौण्ड' रख देती है। (लड़ाईके बाद संसार एक हो गया है। सिक्कोंका अन्तर्राष्ट्रीयकरण हो गया है। भारतका रु-रुपयाका प्रतिनिधि, रूबलो रशियाका है ही और डालर-पौण्ड अमेरिका और ब्रिटिशके क्रमशः मिला लिये गये हैं। फ़्रान्स और जापान इस मार्केटमें शामिल नहीं हुए क्योंकि वे अब इस तीसरी लड़ाईमें समाप्त हो चुके।)

■

मैं आवाज़ देता हूँ—"नम्बर दो।"

मिस उजाड़वाला अन्दर आती हैं। उम्र कोई ३५ वर्ष।

"हॉय!" कहकर वह मेरा अभिवादन करती है। मैं उसे मुह्विग स्टैण्डपर खड़ा होनेको कहता हूँ। केस हिस्ट्री तैयार करता हूँ—उम्र ३५ वर्ष····(वह मुझे डाँटती है—२५ वर्ष लिखवानेपर ज़ोर देती है।) क़द ५ फ़ुट २ इंच, कमर मुश्किलसे २० इंच,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उरोज ढले हुए, कालर बोन निकली हुई, टखने पेड़की गाँठकी तरह।

"कहिए, आपको किस तरह सजाऊँ?" मैंने पूछा।

मैं मिनी साड़ी न पहनकर भी, मिनी साड़ीमें दिखना चाहती हूँ। खेत उजाड़ हो गये। कपास नहीं। मिल चलाना आता है। काम करनेवाले नहीं, जो हैं वे अब क्यों काम करने लगे? खानेको खूब, लोग कम। उफ! कहाँ गया मेरे पिताजीका ज़माना। वह कपड़ा मिल, हज़ारों कपड़ेकी गाँठें। हाँ! देखिए, बीमारीसे उम्र बढ़ी है। वरना कोई खास बात नहीं। चेहरेका रूखापन और झुर्रियाँ खत्म हो जानी चाहिए। मेरा चेहरा, पिताजी कहते हैं, किसी जमानेकी सायरा बानोसे मिलता है।"

"आप कौन-सा रंग पसन्द करेंगी?" मैंने पूछा।

"ओह। यू आस्क मी। आप जीनियस हैं! इतना कहकर वह कुरसीपर बैठ जाती है। मैं अपने अॅसिस्टेण्टको बेस-कलर बनाने-
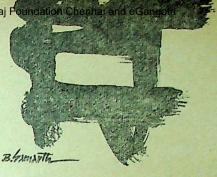
• निर्विवाद : एक नयी क़लम का वक्तव्य :

हम भूखी पीढ़ी का सन्त्रास ओढ़कर
औपचारिक जीवन जीने को
जीवन की एक कलात्मक उपलब्धि नहीं मानते हैं
हम विक्षिप्त या पागल भी नहीं हैं
न बहुरूपिया बनना
हमारी मान्यता से मेल ही खाता है।
और आप क्या हैं
यह हम ख़ूब जानते हैं
क्यों कि हमारे पास भी एक दर्पण है
जिसमें सब कुछ यथावत् दिखाई देता है।
हम ऐसा दर्पण लेकर चलना नहीं चाहते
जिसमें वस्त्र धारण किये हुए लोग नंगे दिखाई दें
और नंगे दृष्टि से ओझल ही हो जायें।

निश्चय ही हम अधिक ठोस आधार की खोज में हैं
जो भ्रान्तियों से परे—
निर्विवाद कविता का मंच बन सके।
ठूँठ की तरह खड़े रहने की
निरर्थकता से परिचित हैं
आकाश की भाँति झुकते हैं
और लो—आश्वस्त भाव से सम्पन्न
शेष शताब्दी का स्वागत करने को उठते हैं।

—ओमप्रकाश ठाकुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को कहता हूँ। रंग तैयार होता है। मैं पहले लाईट कलरसे पोतता हूँ। ब्रशकी रगड़से वह सी-सी करनेका बहाना करती है। वैसे शरीर सरसराहटकी संज्ञासे हीन हो गया है। झुर्रियाँ साफ़ करता हूँ। वह पुतली-सी बन जाती है। आईनेमें अपनी शक्ल देखती है। खुश होती हैं। मैं उसे कलर फ़िक्सिग केबिनमें बैठनेके लिए कहता हूँ।

■

मैं आवाज़ देता हूँ—"नम्बर तीन।"

एक ग़ुस्सेसे तमतमाई १३ वर्षकी लड़की दाखिल होती है और हिस्टेरिकल आवाज़में चीख़ती है—"वह ओबेराटो होटलवाला, एटमका बच्चा मुझे मायनर कहता है। आय से, आय एम मेजर। वह मुझे होटेलमें आने नहीं देता।"

इतनेमें नम्बर दो फ़िक्सिग केबिनसे बाहर आती है। मैं उसे निहारता हूँ। मुझे अपनी कलापर गर्व होता है।

वह बोली, "क्या यह रंग पक्का रहेगा? फ़्रीस्टाईल डॉन्समें ख़राब तो नहीं होगा?"

इसके पहले कि मैं जवाब दूं, उसने मुझे भड़ाकसे चूमा और मेरे बदनसे ऐसे रगड़ खाने लगी जैसे भैंस दीवारपर घिसटती है। फिर उसने मेरे कपड़े देखे और बादमें अपना शरीर। रंग अपनी जगह था। वह खुश हुई। पाँच सौ 'रु-रूबलो-डालरो-पौण्डे' मेरे हाथोंमें थे।

वह लड़की यानी नम्बर तीन इस देरीसे खफा हो रही थी।

"यू इडियट! ओल्ड बिच! जब यह जवान बन सकती है तो मैं क्यों नहीं?" वह चीखी।

"देखिए," मैंने समझाना चाहा, "आप अभी कमसिन हैं। क़ानूनी-तौरपर आप इस प्रकारसे मेकअप नहीं कर सकतीं। होम मिनीस्टर खेडेगाँवकरका सख़्त आदेश है। मैं क़ानूनी गिरफ़्तमें नहीं आना चाहता। वेरी सॉरी।"

वह रोती है, चीख़ती है, सारे स्टुडियोमें पैर पटकती है। मुझे अपना शरीर दिखाकर कहती है—"सी यू ओल्ड डेविल, एम आय ओल्ड? तुम्हें करना होगा। आज मुझे कामुकीका डॉन्स देखना है।"

मुझे हारकर उसे जवान बनाना होता है। उसने दो हजार सिक्के दिये। वह खुश थी।

■

सेक्रेटरीने पूछा, "और क्लाईण्ट भेजूं?"

मैंने मना कर दिया। मैं थक गया था। रात हो चली थी। घर गया। न जाने कब नींद लग गयी। रातके बारह बजे घंटी बजती है। मैं बाहर आता हूँ। चार सिपाही और एक इन्सपेक्टर खड़े हैं। मेरे हाथोंमें वारण्ट देते हुए उसने कहा, "यू आर अण्डर अरेस्ट! तुम्हें कमसिन लड़कीको जवान बनानेके अपराधमें क़ैद किया जाता है।"

मैं जेलमें था। दूसरे दिन सारे शहरमें तहलक़ा मच गया। सारे कॉलेज, स्कूल, सिनेमा और होटेल मेरी गिरफ़्तारीके विरोधमें बन्द रहे। मेरी कला और नमूनोंपर लेख प्रकाशित हुए। हर घरमें मातम छा गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोर्टमें केस शुरू हुआ। कोर्टके अन्दर और बाहर लोग खचाखच भरे थे। स्त्रियाँ अधिक थीं। अधिकांश मेरी फ़ैशन पहने थीं।

मेरे वकीलने जिरह प्रारम्भ की—"माय लार्ड! हायड्राजनके प्रतीक! मेरे मुवक्किल पर आरोप है कि उसने एक ऐसा अपराध किया है जो सिर्फ़ ईश्वर ही कर सकता है। मेरे कलाकार मुवक्किलने एक कम उम्रकी लड़कीको जवान बनानेकी बेहतरीन कोशिश की है। जब एक बूढ़ी स्त्री जवान बननेका ढोंग कर सकती है तो एक कमसिनको युवा बननेका पूरा-पूरा हक़ है। इस हक़की मुख़ालफ़त उसके माता-पिता भी नहीं करते। इस किशोरीकी कोशिश उसी प्रकारकी है जिस प्रकार सन् १९६७में विद्यार्थी एक साथ दो इम्तेहान देते थे। मस्तिष्कपर ज़ोर न पड़नेका ख़याल जब उस वक़्त नहीं रखा जाता था तो यह तो सिर्फ़ फ़ैशन है। फ़ैशनपर कोई रोक नहीं लगायी जा सकती। जहाँ तक 'इम्मॉरल एक्ट'का प्रश्न है, यह उस वक़्त सही था जब भारतमें करोड़ों लोग थे। आबादीका ९० प्रतिशत, ग़रीबी और भूखमरीसे ग्रसित था। लेकिन दस प्रतिशत लोग उसी प्रकार से हॉटेल, क्लबोंमें फ़ैशन करते थे जिस प्रकार आज इस कलाकारके द्वारा प्रचलित फ़ैशन है। हमारी इस सदीमें तीन-चौथाई लोग तीसरे महायुद्धमें समाप्त हो चुके हैं। एक चौथाईमें वही फ़ैशन क़ायम है जो उस वक़्त समयके क्रीममें क़ायम थी। यह पुरानी संस्कृतिका 'रिवायवल' है। जब पुराना पहले पूजा जाता था तो फिर आज क्यों नहीं? इसके साथ एक बात और क़ाबिले-ग़ौर है। आज जो यह क़ानून बनानेवाले कुछ लोग हैं वे तीसरे महायुद्धमें इसलिए बचे कि वे जंगलोंकी कगारोंमें जीवन-यापन करते थे। वहाँ किसी प्रकारकी बमबारी नहीं हुई। वे पहले भी जंगली कहे जाते थे और आज भी वे जंगली हैं। इसके साथ ही इस नयी सदीमें सामान्य ज्ञान पहलेसे कहीं आगे बढ़ गया है। विनाशने जीवनकी अस्थिरता-को खुले रूपसे जन-जीवनके सामने रखा है। आज 'लिव्ह इन मोमेण्ट'को मूर्तरूपमें ला खड़ा किया है। मानवकी स्वच्छन्दता सर्वोपरि है। उसे किसी भी प्रकारसे क़ानूनी तौरपर कम नहीं किया जा सकता अतः इस महान् कलाकारको बाइज़्ज़त रिहा किया जाये। एक्प्रेशनपर रोक महान् सामाजिक गुनाह है। इसपर, माय लार्ड, हेड्रोजन बॉम, ग़ौर करें और सरकारसे दरख़ास्त करें कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और फ़ैशनमें कोई दुराव न हो।"

अदालत मुझे ससम्मान रिहा करती है। कोर्टके बाहर मेरी जय-जयकार होती है। मेरी जीत व्यक्तिगत स्वतन्त्रताकी एक नयी मंज़िल घोषित की जाती है। मेरी फ़ैशनसे बढ़ने वाली संस्कृतिको 'नयी सदीका मसीहा' कहा जाने लगा है।

सन्ध्याको जनता-चौकमें मेरा सम्मान होता है। श्रोतागण मेरी फ़ैशनको अपनाये हुए, आजकी ज़बानमें नंगे बैठे थे। बड़ी-बड़ी तक़रीरें होती हैं। इतनेमें एक जोशीला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नौजवान माईकपर मेरी जय-जयकार करता है। मुझे माला पहनाता है। माला पहनाते-पहनाते उसका ध्यान मेरे कपड़ोंपर जाता है—"यह क्या!" वह आश्चर्यसे कहकर माईकपर बोलता है—'यह कलाकार हमारी नंगी पीढ़ीका, प्रकृतिकी पीढ़ीका कलाकार है। वह हमारा अगुआ है, नेता है। उसे फ़ुरसत ही नहीं कि कभी खुद भी फ़ैशन करे। यह पुरानी कहावत के अनुसार, कुम्हारकी तरह फूटी हँडियामें खाता है।"

इतना कहकर वह अपने प्लैस्टिकके पत्ते कमरसे निकालकर, मेरे कपड़े फाड़ता है। मै घबरा जाता हूँ। मेरे मुँहसे चीख निकलती है। मैं देखता ही रह जाता हूँ...

■■

१९४ नयापुरा न०
इन्दौर सिटी
इन्दौर

Gram : JAICLAY.

Phone : Show Room 24-2594
Office 23-9865

St. Thomas's Medical Agencies
& St. Thomas's Clinic
& Pharmacy

19A, Free School Street, Calcutta-16

RELIABLE SHOP FOR
100% PURE MEDICINES

WHOLESALE DEALERS AND RETAIL SELLERS OF ALL KINDS OF DRUGS AND SURGICAL INSTRUMENTS, HOSPITAL APPLIANCES, SANITARY GOODS AND ARTICLES FOR

BIRTH CONTROL
IN MODERATE PRICE

Please step in to our Show Room at :
19A, Free School Street, CALCUTTA-16
WITHOUT OBLIGATION.
UTILISE YOUR EACH PAISA-BUYING GOODS FROM US.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments from:

Mahabir Goods Suppliers Pvt. Ltd.

208, Mahatma Gandhi Road,
(1st Floor)
CALCUTTA-7

Selling Agents of :

M/s. British India Corporation Ltd.

Cooper Allen Branch, Kanpur

For 'BETA' Brand Picking Bands and other Industrial Leather Goods

Sole Selling Agents

M/s. Vizianagram Press & Mills Co., Ltd.

Vizianagram, A. P.

For Tamarind Seed Powder (Jute and Textile Quality) All kinds of H. C. Carbon Steel, Bright Shaftings, Tool and Alloy Steel, Light and Heavy Chemicals Etc.

Gram : ROUNDBELT

Phone : 33-6189

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ हमारा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य ॥ यदि इतिहास-क्रम के अन्दर संस्कृतिकी अन्तर्धाराको प्रमुख मान लें तो अपने अतीतका निष्पक्ष विश्लेषण करते हम ऐसे बिन्दुपर पहुँच सकते हैं जहाँ वर्तमान है और जहाँसे भावीपर दृष्टि डाली जा सकती है...

पुरानी ग़लतियाँ : आगामी सम्भावनाएँ

महेन्द्र कुलश्रेष्ठ / गत कुछ वर्षोंमें जीवनके विविध क्षेत्रोंमें जिस तेजीसे प्रगति हुई है और आज ज़िन्दगी जिस रफ़्तारसे चल रही है, उसे देखकर भविष्यके विषयमें आश्चर्य-मिश्रित तीव्र जिज्ञासाका भाव उत्पन्न हो जाना स्वाभाविक ही है। परन्तु यह प्रगति ज़िन्दगी के बाहरी धरातलपर ही है। भीतर देखने पर—विशेषतः भारतके सांस्कृतिक जीवनमें—तो यह प्रतीत होता है कि प्रगति हो ही नहीं रही है बल्कि कहीं एक ऐसा तीव्र गतिरोध पैदा हो गया है जिसके परिणाम हमारे राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक जीवनपर भी दिखाई देने लगे हैं। चुनावके पश्चात्से देशमें जो विविध प्रकारका दिग्भ्रम और खींचातानी दिखाई दे रही है, वह भी कहीं इसी बातसे जुड़ी हुई है। इसी तरह साहित्यिक क्षेत्रमें भी जो मौलिकता और शक्तिकी कमी चारों ओर दृष्टिगोचर है, उसका कारण भी हमें इसी अनवस्थामें ढूँढ़ना चाहिए। साहित्यके लिए तो यह बात और भी ज़्यादा सच है क्योंकि सांस्कृतिक चेतना और स्थितिसे उसका सीधा सम्बन्ध होता है।

भारतकी सांस्कृतिक स्थितिका विवेचन करनेके लिए शताब्दीके अबतक बीते ६७ वर्षों-की मीमांसा करनी होगी। गत शताब्दीमें ही आगत शताब्दीके बीज छिपे हैं। यदि ये बीज स्वस्थ हैं तो शेष शताब्दीका सांस्कृतिक जीवन भी स्वस्थ होगा, यदि ये सड़े-गले हैं तो शेष शताब्दी सांस्कृतिक अकालसे भूखी मर जायेगी। ऐसी दशामें नये बीज बोना ही--जो देश-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालकी दृष्टिसे सही हो--अकालसे बचनेका उपाय हो सकता है। मेरी अपनी रायमें यह अकाल गत १०-१५ वर्षोंसे अभी पड़ रहा है और भविष्यमें यह और भी तेज़ होगा।

• अतीतके २ टुकड़े :

राजनीतिक दृष्टिसे गत शताब्दीके जो दो टुकड़े हैं--१९४७ से पहले और उसके बाद लगभग वही टुकड़े सांस्कृतिक दृष्टिसे भी हैं। इसका कारण यह है कि १९४७ से पूर्व स्वाधीनता-प्राप्तिका राजनीतिक आन्दोलन मूलतः भारतीय संस्कृतिके नवोदय आन्दोलन से ही सम्बद्ध रहा--बल्कि उससे उत्पन्न ही हुआ और काफ़ी दूर तक साथ-साथ भी चला। १९वीं शताब्दीके आरम्भमें भारतकी सांस्कृतिक चेतनाका पुनरुत्थान आरम्भ हुआ, इससे पूर्व लगभग १ हज़ार वर्ष तक यह सभी दृष्टियोंसे कुचली रही थी। ऐतिहासिक दृष्टिसे यह सहस्रवर्षीय दीर्घकाल बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इससे उस गहरी पराधीनताका आभास होता है जिससे मुक्त होकर हम आज अपने पैरोंपर खड़े हुए हैं।

सांस्कृतिक नवोत्थानके इन आन्दोलनोंका विवेचन एक प्रकारका पिष्टपेषण ही है, फिर भी संक्षेपमें हमें इन्हें देख जाना चाहिए। पूर्वमें यह नवोदय राजा राममोहन रायके ब्रह्मसमाजके द्वारा सम्पन्न हुआ और पश्चिमोत्तरमें स्वामी दयानन्दके आर्यसमाज-द्वारा। ये दोनों ही आन्दोलन बड़े सशक्त थे और जनताको जगानेमें बहुत सीमा तक सफल रहे। प्रार्थनासमाज और देवसमाज कुछ छोटे आन्दोलन थे जो थोड़ा-बहुत काम करते-कराते रहे। यहाँ यह द्रष्टव्य है कि दक्षिण भारतमें ऐसा कोई भी आन्दोलन नहीं पनपा और शायद इसी कारण वहाँ आज भी कट्टरता बहुत ज़्यादा है और छूआ-छात तथा आर्य-अनार्यके झगड़े अभी भी चल रहे हैं। उत्तर और दक्षिणकी सांस्कृतिक असमानता भारतीय सांस्कृतिक जीवनका एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है जो दुर्भाग्यपूर्ण भी है। अनेक स्तरोंपर यह पारस्परिक संघर्ष व्यक्त होता है।

नवोत्थानका अगला अध्याय रामकृष्ण परमहंस तथा स्वामी विवेकानन्दके मिशनमें सामने आया। विवेकानन्दके यौवन तथा विदेशोंमें सम्मानसे देशकी चेतना पहलेसे अधिक प्रखर हुई और इसकी गरमाई दूर-दूर तक लोगोंने महसूस की। परन्तु संगठन-के रूपमें केवल साधु संन्यासियों तक सीमित रहने और स्वामी विवेकानन्दके अकाल मरणने इसे समुचित रूपसे व्यापक नहीं होने दिया। परन्तु समय पाकर इसी नवोदय ने राजनीतिक आन्दोलनका रूप धारण किया और गोखले, तिलक, गान्धी तथा सुभाष-जैसी हस्तियोंको पैदा किया। स्व-तन्त्रताकी लड़ाईके सैनिक भी प्रायः वही लोग थे जो इन सांस्कृतिक-धार्मिक आन्दो-लनोंसे सम्बद्ध थे और उनके सक्रिय कार्य-कर्ता थे। यहाँ पर भी यह बात द्रष्टव्य है कि सारे राजनीतिक आन्दोलन उत्तर भारत में ही हुए, दक्षिण भारतने इक्के-दुक्के नेताओं को छोड़कर उसमें प्रायः किसीने भी योगदान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं किया। इसका कारण उनकी सांस्कृतिक भूमिकाका ज्यों-का-त्यों बने रहना ही है।

स्वाधीनता मिलने तक ब्राह्मसमाज, आर्यसमाज और रामकृष्ण मिशन-जैसी संस्थाओंका बल समाप्त हो गया, क्योंकि कार्य भी पूरा हो गया था और इसके आगे कुछ और इससे भी महत्त्वपूर्ण होनेकी आवश्यकता थी। यह हुआ और कुछ समय-के लिए ऐसा लगा कि भारतकी समग्र सांस्कृतिक-धार्मिक-दार्शनिक प्रतिभा पुंजीभूत होकर एक ऐसा चमत्कार करने जा रही है जो भारत ही नहीं समस्त विश्वके जीवनमें एक ऐसी अभूतपूर्व क्रान्ति उत्पन्न कर देगा जो उसने न कभी देखी, न सुनी, न सोची हो। यहाँ मेरा संकेत श्रीअरविन्दके पूर्ण-योग द्वारा अतिमानव (सुपरमैन) के उस घोषित निर्माणकी ओर है जिसको प्रत्यक्ष करनेके लिए उन्होंने सब कुछ छोड़-छाड़कर ४० वर्ष तक एक ही घरमें बन्द रहना स्वीकार किया। उन्होंने आध्यात्मिक दर्शन-की दृष्टिसे जैवी विकासका समर्थन करते हुए यह घोषणा की थी कि विकासके क्रममें अब वह समय आ गया है जब मनुष्यके आगेकी अवस्था सामने आये, वह अवस्था अतिमान-सिक प्राणीकी है जिसे पूर्णयोगके अभ्यास-द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। उनका यह पूर्णयोग भी सब प्राचीन योगोंसे भिन्न था और एक प्रकारसे उन सबका समन्वय था। आध्यात्मिक विचार-सरणीके तर्कसे श्रीअर-विन्दके अतिमानवकी सम्भावना सम्भव भी लगती थी और यद्यपि सामान्य जनता तक यह समाचार नहीं पहुँचा, बुद्धिजीवियोंमें—जो श्रीअरविन्दकी क्लिष्ट भाषाका सही तात्पर्य समझनेकी योग्यता रखते थे—बड़ी खलबली मच गयी, और वे दलके दल आश्रममें आकर साधन करने लगे। वे सब परिवर्तित अतिमानवोंके पहले ऐतिहासिक दलके सदस्य होनेका गौरव पाना चाहते थे। साहित्यपर भी इस सबका प्रभाव पड़ने लगा और कविताओंमें सोनेका अतिमानव प्रकट होने लगा। मैं खुद भी उन दिनों अध्यात्मवादी था और इस विचारका उत्साही 'फैलो ट्रैवेलर' भी था।

परन्तु १९५० में एक दिन अचानक श्रीअरविन्दका देहान्त हो जाने पर यह महास्वप्न एकदम ठण्डा पड़ गया। यह घटना अत्यन्त आश्चर्यजनक भी रही क्योंकि उन्हें सामान्य दीर्घजीवी व्यक्तिकी आयु भी प्राप्त नहीं हुई। अतिमानवके अवतरणका प्रश्न भी वहीं पर रह गया और यद्यपि यह प्रयोग असफल हो गया पर यह बात बड़ी कुशलतासे दबा दी गयी। माताजीके नेतृत्व-में आश्रम चलता रहा और अब भी चल रहा है पर इस बातका कभी कोई तर्कसंगत और स्पष्ट उत्तर नहीं दिया गया। कभी-कभी दबी जबानसे यह कहा गया कि श्रीअरविन्द मरे नहीं हैं बल्कि शरीरमुक्त होकर सूक्ष्म धरातलपर इसी प्रयोगको कर रहे हैं और १९६४ में अतिमानव बनकर प्रकट होंगे। परन्तु अब तो १९६४ भी बीत चुका है और यह बात एकदम खत्म हो गयी है। वैसे माताजीने यह भी घोषित कर दिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

था कि अवतरण हो चुका है और सूक्ष्म धरातलपर वे अपना काम कर रहे हैं। वे कल्पनामें उन लोकोंकी सैर भी कर आती हैं जो अति-मानवी लोक हैं।

इसे मैं भारतके समस्त सांस्कृतिक इतिहासकी एक महत्त्वपूर्ण घटना मानता हूँ। यह इसलिए कि आत्माकी कल्पना भारतीय चिन्तनका बिलकुल अपना और मौलिक विचार रहा है और इसीके चारों ओर सम्पूर्ण भारतीय दर्शन, आचार-विचार और नैतिक मान्यताएँ विकसित होती आयी हैं। आत्माकी वास्तविकताका निश्चय करनेकी दिशामें श्रीअरविन्दका प्रयोग एक महत्त्वपूर्ण क़दम था और उसकी असफलताने इस विषयमें भी एक बड़ा

• चन्द्रलोक : एक मंच :

जैसे कोई मंचपर खड़े होकर भाषण दे, ऐसे चन्द्रलोकको मंचके रूपमें लेकर एक व्यक्ति भाषण दे रहा था। सामने कुरसियोंपर बैठे श्रोताओंकी तरह मंगल, गुरु और शुक्रमें बैठे अनेक व्यक्ति उसे ध्यानपूर्वक सुन रहे थे।

इसी बीच वक्ताने जाने क्या कहा कि उससे मंगल ग्रहके लोग नाराज़ हो गये। और क्षण-भरमें एक व्यक्ति वहाँ पहुँचकर वक्ताको इस क़दर ढकेला कि वह चन्द्रलोकसे लुढ़ककर अधरमें लटकने लगा।

इसपर शुक्रग्रह-वासियोंको दया आ गयी और उन्होंने उसे ऊपर खींचकर अपने कक्षमें बिठा लिया।

उधर मंगल-ग्रहसे चन्द्रलोकमें पहुँचा व्यक्ति कह रहा था :

"भाइयो, चन्द्रलोककी बातें सुनते-सुनते हम ऊब चुके हैं। अब हम द्वापर-युगके बच्चे नहीं रहे जो चाँदको आसमानी थालीमें देखकर ख़ुश हुआ करते थे। अब तो हमने चाँद के हृदयमें पहुँचकर यह अच्छी तरह जान लिया है कि ऊपरसे चाँदीकी तरह चमकनेवाला चाँद अन्दरसे कितना खोखला है! वह न तो हमें रोटी दे सकता है और न हमारे आवास-निवासकी समस्याको ही हल कर सकता है। यद्यपि आज हमने इतनी तरक़्क़ी कर ली है कि हम अपने भवनके कक्षोंकी तरह विभिन्न लोकोंका उपयोग कर सकते हैं, कल्पवृक्षकी तरह कल्पना मात्रसे इच्छित वस्तु

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पा सकते हैं तथा बिना विवाह किये ट्यूब-बेबीके रूपमें मनचाही सन्तान प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन इन सबमें वह सुख कहाँ है जो धरतीके मनुष्योंको प्राप्त था।

"कहते हैं वहाँ ग्रीष्म, वर्षा व शरद्-जैसी तीन ऋतुएँ हुआ करती थीं। लताओंमें फूल खिलते, वृक्षोंमें फल लगते और खेतोंमें फ़सलें लहलहाया करती थीं। कामधेनुकी तरह गायें दूध देतीं तथा जिस घृतसे वैदिक युगमें यज्ञ सम्पन्न हुआ करते थे वह धरतीके साधारण जनको सहज प्राप्त था। क्षीर-सागरकी तरह मनुष्य फ़सलोंके अन्न-सागरमें रहा करता था। तथा स्त्री-पुरुष प्रेमकी अव्यक्त शक्तिसे प्रभावित होकर विवाहके स्नेहिल बन्धनोंमें बँधकर सन्तानके माध्यमसे मानवीय विकासकी परम्पराको टूटने नहीं देते थे।

आपको यह जानकर ख़ुशी होगी कि हमारे यहाँके एक साधारण नागरिकने धरतीकी यात्रा कर इस बातका पता लगा लिया है कि आजसे १०० वर्ष पूर्व जिस धरतीको मनुष्यजातिने अणु-विस्फोटोंसे तहस-नहस कर दिया था वह अब पुनः मनुष्यके रहने योग्य बन चुकी है।"

इसका इतना कहना था कि अनेकों ग्रहोंमें बैठे अनेकों व्यक्तियोंने धरतीकी ओर छलाँग लगा ली तथा धरतीपर पुनः मानव-जातिका इतिहास आगे बढ़ने लगा।

— रामनारायण 'उपाध्याय'

प्रश्नचिह्न अंकित कर दिया है। श्रीअरविन्दके प्रयोगमें वस्तुतः समस्त भारतीय इतिहासकी समग्र आत्मवादी उपलब्धि और प्रतिभा कसौटीपर चढ़ी थी जो शायद अब बुरी तरह पराजित हो गयी है। इससे भारतीय संस्कृति, जीवन और मूल्योंकी सब आधारशिलाएँ एकबारगी ध्वस्त हो जाती हैं।

उपनिषदोंके कालमें आत्मा और ब्रह्मकी कल्पनाका प्रतिपादन किया गया था। फिर आत्माद्वारा ब्रह्मके साक्षात्कारके लिए योगकी पद्धतिका आविष्कार किया गया परन्तु यह अपने उद्देश्यमें कितनी सफल रही, यह बात कभी स्पष्ट नहीं हुई। अब विकास-क्रमको बढ़ानेके लिए आत्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सहायता लेनेका प्रयत्न किया गया जो सफल नहीं हुआ। इस सबसे क्या ध्वनि और निष्कर्ष निकलता है—क्या इसका तात्पर्य ब्रह्म या ईश्वरकी सत्ता और आत्मा-का नितान्त कपोलकल्पित होना है ?

भारतीय जीवनपर आत्मवादके प्रभावके विषयमें इतिहासका कहना यह है कि इसने हमें वास्तविक जीवनके लिए एकदम निकम्मा बना दिया, इसीके कारण हमारा भौतिक जीवन नितान्त उपेक्षित हो गया और हम दरिद्रता-को आदर्श मानकर चलने लगे। इसीके परिणामस्वरूप हम पराधीन हो गये और हज़ार वर्षों तक एकके बाद दूसरेकी गुलामी सहते रहे। आत्मवादका अच्छा परिणाम सामाजिक समानतामें हो सकता था परन्तु उसे हमने स्वीकार नहीं किया जो आज भी हमें विशृंखल किये हैं। इसीके कारण हम पराधीनताके पूर्वार्ध (इस्लामी युग) में संघर्ष करनेके स्थानपर राम और कृष्णको सर्वस्व समर्पित करके नाचते-गाते रहे। भक्तिवाद आत्मवादका सम्भवत: सबसे हानिकर पक्ष था।

सभी भारतीय दर्शन इस आत्मवादसे कमोबेश प्रभावित रहे और अपने सहवर्ती धर्मों तथा सम्प्रदायोंसे अनुवर्ती बने रहे। यहाँ शुद्ध चिन्तनका विकास कभी नहीं हो सका। सम्भवत: इसी कारण वे एकपक्षीय रहे और उनमें न तर्कसंगत आचार-शास्त्रका विकास हो सका, न सौन्दर्य-शास्त्रका और न समाज-शास्त्र तथा राजनीतिका। अनेक भारतीय दार्शनिक इस मौलिक कमीका अनुभव भी करने लगे हैं। राजस्थान-दर्श परिषद्की अध्यक्षता करते हुए कुछ वर्ष डॉ० देवराजने कहा था कि प्लेटो, अरस् काण्ट या हीगेल की तुलनामें हमा नागार्जुन, धर्मकीर्ति, शंकर या रामानु बौने-से लगते हैं। यहाँ प्लेटोके 'रिपब्लि और काण्टके 'क्रिटीक ऑव प्रेक्टिक रीज़न'-जैसी कृतियाँ नहीं रची गयीं। प्रायोगिक विज्ञानोंका जन्म न हो पा भारतीय मेधाकी एक बड़ी पराजय र है। इसके कारणकी मीमांसा करते हुए वा यही कहते हैं कि आत्मा, ब्रह्म और ईश्व तथा मरणोत्तर जीवनको जरूरतसे ज्या महत्त्व देकर हम वास्तविकताओंसे दूर पड़े और आज भी पड़े हैं। एक पाश्चा दार्शनिकने भारतीय विश्वविद्यालयों निरीक्षण करके यह मत व्यक्त किया कि इनमें बौद्धिक वातावरणका नितान्त अभा है और प्राचीन मतवादोंका समर्थन कर ही दर्शनका आदि और अन्त माना जा है। आर्थर कोस्लर, अगेहानन्द भार एडवर्ड शिल्स, होरेस अलेक्जेण्डर आ विद्वानोंने भी भारतीय संस्कृतिके विवि पक्षोंकी बड़ी सही, यद्यपि कटु, आलोच की। देशमें इनका जिस सीमा तक विरो हुआ उससे भी यही प्रकट होता है कि स को स्वीकार करनेकी हमारी शक्ति ब कुण्ठित हो गयी है। सांस्कृतिक नवोत्था बाद 'सांस्कृतिक आलोचना' का यह बहुत समयोचित और आवश्यक था औ यदि हमारे विचारक-लेखक इस सु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पकड़कर आगे बढ़ चले होते तो सम्भवत: यह प्रवृत्ति भी आन्दोलनकी तरह संस्कृतिकी रग-रगमें फैलकर उसकी सफ़ाई कर देती और उसे आधुनिक युगके साथ क़दम मिला-कर खड़े होने और चल पानेके योग्य बना देती। यह न हो पाना ही संस्कृतिका वर्तमान गतिरोध है और इसके कारण जो जड़ता, ठहराव और सड़ाँध पैदा हो रही है वह समूचे राष्ट्र-जीवनको विषाक्त किये दे रही है।

• सांस्कृतिक हलचलें :

इस युगमें सांस्कृतिक असफलताके कुछ और भी उदाहरण हैं। एक है विनोबाके मिशनकी असफलताका जिन्होंने महात्मा गान्धीकी परम्पराको सँभालकर भूदानके द्वारा देशकी आर्थिक समस्याको हल करनेका बीड़ा उठाया था। किसे याद नहीं है कि जब उन्होंने पद-यात्रा करते हुए यह झण्डा उठाया था तब देशमें चेतनाकी एक अनोखी ही लहर दौड़ गयी थी और लोग बड़े उत्साह से इस आन्दोलनमें सम्मिलित होने लगे थे। विदेशोंसे अनेक व्यक्ति इस नये अर्थशास्त्रीका चमत्कार देखने आने लगे। परन्तु ४-५ साल-के भीतर ही यह लगने लगा कि जितनी जमीनकी आवश्यकता है उसका दसवाँ भी नहीं मिलेगा। जो जमीन मिली उसमें अधिकांश बंजर थी। और भी दो-चार साल में आन्दोलन ठण्डा पड़ गया और अब वह भी इतिहासके डस्टबिनमें जा पड़ा है। इससे यह भी परिणाम निकलता है कि आध्यात्मिकताकी आर्थिक अभिव्यक्ति सम्भव नहीं है यानी आध्यात्मिकता अपने आपमें ही कहीं मौलिक रूपसे अपूर्ण है।

दूसरा आन्दोलन, जिसने एक समय बड़ी आशा दिलायी थी, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघका है। यह १९४५ से बहुत प्रबल हुआ और उत्तर भारतकी एक प्रबल जन-शक्ति बन गया। परन्तु इसके सामने कोई लक्ष्य या उद्देश्य नहीं थे और न कोई कार्यक्रम ही था। यह बहुत मोटे तौरपर सांस्कृतिक नवोत्थान और चरित्र-निर्माणका उद्देश्य लेकर चला था और यद्यपि इसने अपनी सांस्कृतिकताकी कोई व्याख्या नहीं की, यह कहा जा सकता है कि यह पुराणपन्थी और प्रतिक्रियावादी विचारोंका संगठन था। गान्धीजीकी हत्याके बाद प्रतिबन्ध लगनेपर इसकी सब दुर्बलताएँ प्रकट हो गयीं और इसकी शक्ति भी समाप्त हो गयी। फिर आन्तरिक संघर्षके फलस्वरूप संगठनके कुछ कर्मठ लोगोंने जनसंघ नामक राजनीतिक दल बनाया जिसने गत चुनावोंमें कुछ स्थानों-पर अच्छी सफलता प्राप्त की है। परन्तु इनसे देशकी रीति-नीति और वृत्तिमें कुछ मौलिक परिवर्तनकी आशा तो कदापि नहीं की जा सकती। वस्तुत: देशपर इनका शासन सांस्कृतिक दृष्टिसे दुर्भाग्य ही है और गतिरोधके फ़ॉसिलाइज़ हो जानेका सूचक है। परन्तु चुनावमें कुछ स्थानोंपर जीतना कोई बड़ी सफलता भी नहीं कहा जा सकता क्योंकि इस प्रकारकी सफलता सभी दलोंको प्राप्त हुई और एक तरहसे नकारात्मक स्थिति-की सूचक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्तुतः आजकी राजनीतिक और सामाजिक अस्थिरताके लिए संघ बड़ी सीमा तक ज़िम्मेदार है। यह इस प्रकार कि १९४२-४७ के दिनोंमें, जब भारतका इतिहास एक नया मोड़ ले रहा था और यह निश्चित हो रहा था कि यह किधर जायेगा, तब संघने देशके युवकोंको अपनी शाखाओंमें इकट्ठा करके, परन्तु उन्हें कोई काम-धाम न देकर, कुछ इस तरहसे नाकारा बना दिया कि संघके माध्यमसे देशके लिए उनका कोई योगदान तो हो ही नहीं सका, अन्य किसी दलके माध्यमसे भी यह असम्भव हो गया। इसके विपरीत समाजवादी दलके पास बौद्धिक नेताओंकी तो भरमार थी—इतने अच्छे चिन्तक और नेता, और इतनी बड़ी संख्यामें, सम्भवतः किसीके पास न थे—पर उनके पास 'रैंक एण्ड फ़ाइल' एकदम नहीं के बराबर थी। यदि यही युवक-शक्ति मुक्त होती तो वह समाजवादी दलमें जाती या किसी भी दलमें जाती और देशको कोई कार्यक्रम और कोई दिशा मिलती। सिर्फ़ नेताओंके जमावके कारण समाजवादी दलमें जो फ़्रस्ट्रेशन पैदा हुआ और जिस तरह वह टूटा-फूटा, वह दुःखद मनोरंजनका ही विषय है।

आश्चर्य तो यह है कि संघने स्वाधीनता प्राप्तिके लिए भी अपनी शक्तिका प्रयोग नहीं किया—दरअसल यह विचार भी उनके नेताओंने कभी नहीं किया और जब कभी ये विचार नीचेके लोगोंमें उठे तो उन्हें दबाया गया। यह भी तथ्य है कि १५ अगस्त १९४७ के दिन ये लोग जनतां यह कह रहे थे कि यह आज़ादी धोखा है, इसके चक्करमें नहीं आना चाहिए। वैचारिक भ्रमका इससे बढ़कर उदाहरण शायद ही कहीं मिलेगा।

इस प्रकार १९५०-५२ तक न केवल भारतकी सांस्कृतिक गति नितान्त अवरुद्ध हो गयी अपितु उसकी राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक चेतना भी गतिरोधका अनुभव करने लगी। कम्युनिस्ट आन्दोलन भी जड़ जमानेमें असफल हो चुका था। इधर आर्थिक संकट भी मुँह बाकर सामने आ खड़ा हुआ। इन सब बातोंसे गहरी निराशा फैली जो गत डेढ़ दशाब्दीसे सबको ग्रस्त किये है। साहित्यमें भी यह काल निराशा तथा वेदनाकी अभिव्यक्तिका काल रहा और है, यद्यपि लेखक उसकी वास्तविकताओंको नहीं पकड़ पाये हैं—व्यर्थता, असंगति आदिकी भावनाओंको जिन परिस्थितियों और समस्याओंपर उन्हें आरोपित करना चाहिए उनपर वे नहीं कर पाये हैं, उनका यह अभियान एक काल्पनिक हौवेके विरुद्ध सीमित होकर रह गया है। इसका कारण भी यही है कि वे अपनी सामाजिक, राजनीतिक, व्यक्तिगत तथा अन्य समस्याओंके प्रति कमिटेड नहीं हैं, उन्हें समझते तक नहीं हैं। वे बुरक़ेकी तरह आधुनिकताको ओढ़े हुए हैं। हिन्दीके किसी आलोचक, सम्भवतः नामवरसिंह, ने ठीक ही कहा है कि मनोवृत्तिसे हिन्दीके लेखक सामान्यतः जनसंघी हैं। यह हास्यास्पद दुःखकी बात है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय संस्कृतिका यह गतिरोध ऐतिहासिक दृष्टिसे एक आश्चर्य ही माना जाना चाहिए। स्वाभाविक तो यह होता कि सहस्र वर्ष बाद मिली स्वतन्त्रतासे उसकी प्रतिभाको प्रबल अभिव्यक्ति मिलती और जीवनके सभी क्षेत्रोंमें स्फूर्ति और नवचिन्तन तथा निर्माणका एक ज्वार-सा आ जाता। परन्तु हो इसका एकदम उलटा ही रहा है। सच तो यह है कि गतिरोधकी इस समस्यापर अभी किसीका ध्यान तक नहीं गया है।

सांस्कृतिक दृष्टिसे हम आज भी आठवीं शताब्दीके आस-पास ही खड़े हैं और बीचकी १०-११ शताब्दियोंमें संसार तथा विशेषतः युरोपमें जो महती प्रगति हो गयी, उससे हम प्रायः अछूते ही हैं। आश्चर्य होता है कि समानतावादी इस्लामके राजनीतिक प्रभावमें सुदीर्घ काल तक रहकर भी हम अपना समानतावादी दर्शन नहीं विकसित कर सके।

शेष शताब्दीके द्वारपर देशकी जो स्थिति है उसे कामूके शब्दोंमें यों व्यक्त किया जा सकता है : "बॉर्न इन ए करप्ट सोसाइटी इन ह्विच आर मिंग्लड रिवोल्यूशन्स दैट हैव फ़ेल्ड, टेकनिक्स गौन मैड, डेड गॉड्स एण्ड आउटओर्न आयडियोलॉजीज, इन ह्विच सेकण्ड रेट पावर्स आर कैपेब्ल ऑव डिस्ट्रोइंग एवरी थिंग बट कैन नो लांगर कनविन्स अस, इन विच इण्टेलिजेन्स हैज सन्क सो लो एज टु सर्व द कॉज ऑव हेट्रेड...."

■ ■

द्वारा-हिन्द पॉकेट बुक्स
जी० टी० रोड, शहादरा, दिल्ली

GRAMS : MILLPAPER PHONES { SHOP : 324926 / RESI. : 356874

mohanlal & co.

paper & boards

DEALERS :
ROHTAS
INDUSTRIES
LIMITED

56. SUTAR CHAWL. BOMBAY-2. BR.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ सही और ग़लत ॥ समयके साथ रहते हम अपने विचारोंकी धुरीपर भी घूमते हैं और देश-समाज और परिवारके परिप्रेक्ष्यकी परिक्रमा भी चलती रहती है, यहींपर व्यक्ति-मनके स्वीकार-अस्वीकार सामने आते हैं। प्रश्न यही है कि यह 'सोचना' हमारी यात्रा है या केवल चिन्ता ?...

जो सोचा था और जो सोचता हूँ...

■

सुदर्शन चोपड़ा / ग़लती हर कोई कर सकता है। मान लेनेमें कोई हेठी नहीं, सोचकी भूलें स्वीकारता चला आता हुआ जीव ही मानुष है। वह आज जिस तारीख़पर खड़ा है, उसके पीछेका फ़ासला नापनेका ग़ज़ भी यही है और आगेके मार्ग-निर्धारणका यन्त्र भी यही—वह फ़ासला चाहे बीसवीं शताब्दीका दो-तिहाई रास्ता हो, चाहे गत छह सहस्राब्दियोंका, अथवा शेष शताब्दीका। चिन्तनके भ्रम निवारते चले जाना ही व्यक्तित्वके सकारात्मक तत्वोंका विकास करना तथा प्रकृतिके गुणात्मक परिवर्तनोंके लिए सही, यथार्थ और बौद्धिक आधार प्रस्तुत करनेकी ऐतिहासिक प्रक्रिया है।

जिन्हें समाजके गतिशास्त्रका ज्ञान है और पदार्थकी स्वतः परिवर्तनशीलता तथा स्वतः गतिमानताका पता है, वह इतनी सहजतासे फ़तवोंकी भाषामें नहीं बोल सकता कि जो सोचा था वह निश्चित रूपसे ग़लत था और जो अब सोचता हूँ वह यक़ीनन सही है। किसी भी निर्णय तक पहुँचने तथा अपनी ग़लतियाँ ठीक करनेके लिए वस्तुओं या वस्तुस्थितियोंका अध्ययन उनके विकास तथा परिवर्तनकी प्रक्रियाके सन्दर्भमें ही किया जा सकता है। क्योंकि मन स्वयं कोई अलग सत्ता या वस्तु नहीं, न विचारकी ही कोई अलग सत्ता हो सकती है। पदार्थके ही अणुओंके द्वन्द्वात्मक विकासकी एक स्थितिका नाम मन है। यानी पदार्थका ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक गुणात्मक परिवर्तन। जैसे पानीसे बनी भाप। दूसरे लफ़्ज़ोंमें कहें तो यह कि पदार्थ ही दिमाग़में पड़कर सोच पैदा करने लगा और फिर इसीका विकास होने लगा। भौतिक परिस्थितियोंमें होनेवाले परिवर्तन इसमें भी गुणात्मक परिवर्तन उत्पन्न करते गये; करते जा रहे हैं; रहेंगे भी। इसी तरह और इसी आधारपर सभ्यताएँ बनती और बदलती रही हैं, रहेंगी भी। अबतक जितनी भी सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्थाएँ थीं, वे मनुष्यकी ऐतिहासिक जरूरतों या तक़ाज़ोंसे ही पैदा हुईं। जब-जब बदलीं भी, तो इन्हीं तक़ाज़ोंके फलस्वरूप ही। व्यक्तिको अपनी अस्मिताके रक्षार्थ बेहद संघर्ष करना पड़ता है, और कोई हैरानी नहीं कि कभी-कभी उसकी पशुता भी उजागर हो आये। मगर इसका यह अर्थ नहीं कि वह अपनी आदिम अवस्थामें पलट रहा है, या कि उसका आदिम स्वभाव अपरिवर्तनीय है। उदाहरणार्थ अब इसी शेष शताब्दीके अन्त तक ही सम्भवतया विश्व-भरमें ऐसी कोई सामाजिक स्थिति बन जाये कि मानवके पशु-तत्त्वमें कोई गुणात्मक परिवर्तन हो आये और मानुष वर्तमान विवशताके युगसे स्वाधीन युगमें प्रवेश कर जाये। परन्तु विकासकी ऐतिहासिक प्रक्रिया-को ठीकसे समझे बिना सिर्फ़ दिशाहीन विद्रोह ही समझमें आ सकता है, और व्यक्तिके सोचके सारे सूत उलझकर टूट भी सकते हैं, और कुछ नहीं हो सकता। यही इस बीच मैंने महसूस किया है और अब अपनी 'भूल-सुधार' करने तथा उसे स्वीकारने की मनःस्थितिमें हूँ। यही स्थिति, कमसे कम भारतके, बाक़ी बुद्धिजीवी लोग भी शायद महसूस करने लगें, बशर्ते समाजके गतिशास्त्र और ऐतिहासिक प्रक्रियाको पूरे तौरपर समझनेका प्रयास करें। विकट संघर्षोंमें पड़े सामान्य जनमानसका बौद्धिक धरातल भी इस बीच उभरा है (जिसे हम गत दो दशाब्दियों तक मृत या ह्रासशील समझनेकी ग़लती करते रहे)।

• बात मानसिक प्रतिरोधकी :

इन दिनों हम जिस स्थितिसे गुज़र रहे हैं वह संकटकी स्थिति भी है, परिवर्तनकी भी। ऐसेमें बौद्धिक वर्गको सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने पड़ रहे हैं। और यह स्थिति हर ऐसे देशपर आती ही है जो विकासकी प्रक्रियामें पड़कर गुणात्मक परिवर्तनके बिन्दु तक आ चुका होता है। रूसमें यह स्थिति सन् १९०५ की विफल क्रान्तिके बाद आयी थी। उसके बाद ही गोर्कीके सृजनका स्वर भी बदला था, वरना तबतक उसे ऐतिहासिक विकासकी दिशा नहीं मिली थी, वह भी ग़लत क़िस्मके वहमोंमें जी रहा था और आवारों और जेबकतरोंके प्रति सहानुभूति चित्रित करता रहा था। चीनमें यह स्थिति सन् १९१९के आन्दोलनके साथ आयी थी। लूह सून-जैसे लेखक भी उससे पूर्व मानसिक गतिरोधकी स्थितिमें थे, मगर बादमें उनका गतिरोध टूटा और वे सांस्कृतिक क्रान्तिके अग्रणी सैनिक बन गये। भारतमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह स्थिति सन् १९४७में राजनीतिक सत्ता-हस्तान्तरणके बाद आयी और पूरे दो दशक तक रही। सन् '६७के प्रारम्भमें चौथे आम चुनावके बादसे यह गतिरोध सहसा टूटता दिखाई देने लगा है, यद्यपि यह कहना भी असंगत होगा कि परिवर्तन-प्रक्रियाके गुणात्मक स्वरूप-धारण कर लेनेका कोई एक निश्चित वक़्त होता है। यह परिवर्तन हमारे चिन्तन-द्वारा धीरे-धीरे व्यक्त होता रहता है और किसी एक महत्त्वपूर्ण घटनाके बाद सहसा उभरकर आता दिखाई देने लगता है। सन् '२०से '४७ तक लड़ी गयी स्वराज्यकी लड़ाई लड़नेवाली संस्था दो दशकमें ही जड़-मूलसे उखड़ चली है तो यह भी अकारण नहीं। स्वराज्य-प्राप्तिके बाद जनताका कोई ऊँचा सपना पूरा होना तो बहुत बड़ी बात है, पेट भरने और तन ढकनेकी समस्या भी हल नहीं की जा सकी। बल्कि उल्टे हालत यह हो गयी कि जगह-जगह अकाल, महामारी, और लूट-खसोटका नंगा नाच होने लगा। हर कहीं भ्रष्टाचारका बाज़ार गर्म हुआ। रुपयेका अवमूल्यन, मूल्योंमें कमर-तोड़ हद तक वृद्धि हुई। पढ़े-लिखे बेकारोंकी संख्या बढ़ी। सामान्य जनता ज्यों की त्यों अशिक्षाके अँधेरेमें पड़ी रहने दी गयी। मातृभाषामें शिक्षाका कोई प्रबन्ध नहीं किया गया। उल्टे भाषा-समस्याएँ पैदा कर-करके लोगोंको आपसमें ही लड़वाया-मरवाया गया। संक्षेपमें यह कि अँगरेज़ी हुक़ूमत और कांग्रेसी हुक़ूमतमें कोई आधार-भूत अन्तर नहीं रहा। अँगरेज़के ज़मानेकी सारीकी सारी प्रतिक्रियात्मक शक्तियाँ ज्योंकी त्यों कार्यरत रहीं। हू-ब-हू वही जन-विरोधी तत्त्व पलते-पुसते रहे। अलोकप्रिय तानाशाह क़िस्मके नेता ऊँची-ऊँची गद्दियाँ सम्हाले रहे। चुनाव-हारे हुओंको भी गवर्नरियाँ बख़्शी जाने लगीं।

● **हालत देशकी :**

देशका बँटवारा माननेका जन-द्रोह करके कांग्रेसने ऐसा काम किया था कि अगर जनता-में समझ रही होती तो उसी समय बग़ावत हो जानी चाहिए थी। भारतकी सीमा-ख़ैबर-दर्रे तक थी, लेकिन अब रावीसे इधर तक सरका दी गयी थी। कश्मीरकी समस्याका कैंसर देशकी छातीमें उगानेके लिए भी सिर्फ़ कांग्रेस ही ज़िम्मेदार है। देशको अमरीकाका आर्थिक ग़ुलाम बनानेकी ग़द्दारी भी 'कांग्रेसी-राष्ट्रीयतावादियों'ने की। राज्यकी प्रभुसत्ता दिल्लीसे बदलकर वाशिंगटनमें भेजनेकी जवाबदेही भी इसी संस्थापर है। बीस बरस बाद भी अगर भारतकी ७६ प्रतिशत जनता निरक्षर है तो यह साजिश सिर्फ़ कांग्रेस की है। साम्प्रदायिकता, जातीयता और बिरादरीयताकी बाड़ें ऊँची-कर-करके इस पार्टीने मुल्कको बेतरह टुकड़े-टुकड़े कर डाला। राष्ट्रीयता और भारतीयता नामकी चीज़ देशमें पैदा ही नहीं होने दी गयी। भारतीयताके नामपर अगर बचा तो सिर्फ़ राज्यीयता।

कांग्रेसकी राष्ट्र-विरोधी साज़िशोंका ही नतीजा था कि नेताओंके अन्तरविरोध उभर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आये। राष्ट्रपति तक २५ जनवरी १९६६को सन्देश-भाषणमें यह कहे बिना न रह सके कि : 'इस प्रकारकी निकम्मी और भ्रष्टाचारीसे ग्रस्त सरकार को अब देशकी जनता बरदाश्त नहीं कर सकेगी।'

और आख़िर फ़रवरी '६७में जनता ने अपना फ़ैसला दे दिया। मगर वह फ़ैसला सिर्फ़ यही कर सकी है कि इस षड्यन्त्रकारी कांग्रेस-पार्टीको हम सहन नहीं करेंगे। राज्यकी प्रभुसत्ता किस संस्थाको सौंपेंगे, इस बातका निर्णय अभी सन् '७२ तक टल गया है।

● यदि साज़िश है तो ?

अब थोड़ा रुककर हम इस बातका जायज़ा ले लें कि कांग्रेसकी इस ज़ाहिर हो चुकी
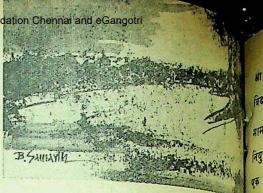
● समाधिस्थ अस्थियाँ :

युद्धस्थल। यहाँ कभी दो राष्ट्रोंके बीच एक महान यु[द्ध] हुआ था। इस युद्धका बखान दोनों ही राष्ट्र बड़े ग[र्व के] साथ करते थे। अनेक लोगोंने यहाँ अपनी जानें दे[दी] थीं और दूसरोंकी छीन ली थीं। युद्धस्थलके दोनों [ओर] बड़े-बड़े स्मारक खड़े कर दिये गये थे—उन लो[गोंके] स्मारक जिन्होंने देशपर अपने शीश चढ़ाये थे और [जो] अब एक लम्बी और मीठी नींदमें यहाँ सो रहे थे— चिर निद्रामग्न !

अपने-अपने राष्ट्रके स्मारकोंपर लोग श्रद्धांजलि अर्पित क[रने] आते थे। उन हुतात्माओंकी विरुदावली गाते थे जिन्हों[ने] अपनी वीरता और बलिदानसे अपने देशका मस्तक ऊँ[चा] उठाया था और जिनकी अस्थियाँ अब इन स्मारकों[में] समाधिस्थ थीं।

फिर एक दिन एक अफ़वाह उड़ गयी। बड़ी भयान[क] अफ़वाह थी यह ! लोग सुनकर स्तम्भित रह गये[।] मृतात्माएँ अपनी समाधियोंसे निकलती थीं और यु[द्ध]भूमिके पार जाकर शत्रुसे मिलती थीं।

जिसने सुना उसीने माथा पीट लिया। स्वयं वे लोग [जि]जिनपर सारा राष्ट्र उनके देश-प्रेमके कारण गर्व कर[ता]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ रहा था, देशके शत्रुसे मिले हुए हैं। कैसी विडम्बना है!

मामलेकी जाँच करनेके लिए दोनों राष्ट्रोंने एक आयोग नियुक्त किया। आयोगके सदस्य युद्धभूमिके पास खड़े एक सूखे पेड़के नीचे बैठकर अर्द्धरात्रिकी प्रतीक्षा करने लगे।

हाय, अफ़वाह सही निकली। भयानक आकृतियाँ धरती फाड़कर निकलीं और मोर्चेकी ओर चल दीं। लगता था, वे अपने साथ कुछ लिये जा रही हैं। आयोगके सदस्य उनकी ओर दौड़े। लज्जासे उनका मस्तक झुक गया था।

"आह, तुम! तुम यह सब क्या कर रहे हो! तुमने अपना जीवन अपने देशपर न्योछावर किया। तुम्हें हमने इसके लिए अतुलनीय सम्मान दिया। तुम्हारी याद चिरस्थायी रखनेके लिए हमने तुम्हारे स्मारक बनाये। उन्हें हमने पवित्रता दी। उनकी हमने पूजा की। मगर तुम, तुम शत्रुसे मिल रहे हो, उससे मैत्री बढ़ा रहे हो!"

मृतात्माएँ खड़ी रह गयीं। आश्चर्यचकित। "कहाँ?.... नहीं तो....बिलकुल नहीं....हम तो अब भी शत्रुसे पहले जितनी ही घृणा करते हैं। मगर क्या करें, हम तुम्हारी ही गलतियाँ दुरुस्त कर रहे हैं। तुमने सब कुछ गड़बड़ कर दिया है: हमारी समाधियोंमें शत्रुओंकी और शत्रुओंकी समाधियोंमें हमारी अस्थियाँ रख दी हैं। और हम इन गलत अस्थियोंकी शत्रुओंसे अदला-बदली कर रहे हैं। बस।

(मूल: लैगरफ़िस्त : अनु० : प्रकाश कुलश्रेष्ठ)

साज़िशकी जड़ें कहाँ तक हैं। भीतरी बातें जान लेनेके बाद ही हम यह फ़ैसला कर पानेकी स्थितिमें आ सकेंगे कि आगामी चुनावमें क्या रुख अपनायें! तहकी बातें जाननेके लिए हम अगर उस ज़माने-से ही अपनी बात शुरू करें तो सुविधा रहेगी, जब ब्रिटिश सरकारने भारतकी जनताका क्रान्तिकारी चेहरा देखा था; किसान - विद्रोह, श्रमिक - हड़तालें, विद्यार्थी - आन्दोलन और सशस्त्र सेना तथा नौ-सेनाके विद्रोही उबाल देखे थे। संघर्षके उमड़ते हुए ज्वारको देखकर ब्रिटिश हुकूमत साफ़-साफ़ समझ गयी थी कि यह विद्रोह किसी भी क्षण जन-क्रान्ति-का रूप ग्रहण कर सकता है। अतः ब्रिटिश साम्राज्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वादियोंने अच्छी तरह यह जान लिया कि अब भारतको ग़ुलाम बनाये रखना मुमकिन नहीं रहा। दूसरी तरफ़ काँग्रेसके नेता इस बातसे डर रहे थे कि अगर साम्राज्यवादके विरुद्ध विद्रोहने जन-क्रान्तिका रूप धारण कर लिया तो जनताकी लीडरी उनके हाथसे सरक जायेगी। इस डरसे काँग्रेस और मुस्लिम लीगके लीडरोंके बीच बँटवारेका भारत-विरोधी षड्यन्त्रकारी समझौता हो गया। इस प्रकार १५ अगस्त '४७को भारतके शासनकी बागडोर काँग्रेसने हथिया ली।

इधर जनताको यह आशा थी (बँधायी गयी थी) कि आज़ादीके बाद औपनिवेशिक अतीतके सारे अभिशाप मिट जायेंगे और हमारी उत्पादक शक्तियोंकी सारी बेड़ियाँ टूट जायेंगी, रचनात्मक शक्तियाँ मुक्त हो सकेंगी, आर्थिक पराधीनता और पिछड़ापन मिट जायेगा, अभाव और ग़रीबी की लानतोंसे छुटकारा मिलेगा, सम्पन्न औद्योगिक शक्तिके रूपमें भारतका उदय होगा तथा जन-सामान्यकी भौतिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओंको पूर्तिके अवसर प्राप्त होंगे। परन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ। सामन्ती और अर्ध-सामन्ती ज़मींदारी तक नहीं मिटायी गयी। हमारी राष्ट्रीय अर्थ-नीतिपर विदेशी इजारेदार पूंजी लूटनेवाला शिकंजा भी ज्योंका त्यों रहा। हमारे उद्योगों-को पर्याप्त कच्चा माल तक नहीं मिला। हमारी कृषिकी हालत भी बदसे बदतर होती गयी। और हमारी इजारेदार काँग्रेस हुकूमत-ने साम्राज्यवादके साथ समझौता कर लिया तथा इस बातपर राज़ी हो गयी कि ब्रिटिश कामनवेल्थका जूआ इस देशपर लदा रहेगा और ब्रिटिश वित्तीय व्यवस्थाको भारत-लूट की खुली छूट रहेगी। दूसरी तरफ़ सामन्ती राजाओंको बड़ी-बड़ी सुविधाएँ, ओहदे और प्रिवी पर्स दे-देकर जनताका धन लुटाया गया। ब्रिटिश हुकूमतके समर्थक ज़मींदारोंको काँग्रेस-पार्टीमें मान-सम्मान दिया गया। नौकरशाहीका सारा ताम-झाम ठीक वैसेका वैसा ही रहने दिया गया जैसा कि अंगरेज़ोंके वक़्त चल रहा था। जनताके साथ ग़ुलामों-का-सा सलूक करनेवाले वही अफ़सर ठाटसे कुरसियाँ सम्हाले रहे।

• राजनीतिक स्वाधीनता कहाँ है ?

हमारे युगके राष्ट्रीय मुक्ति-संघर्षोंका ऐति-हासिक अनुभव यह है कि अगर जन-सामान्य-से ऊपरी तबक़ेके लोग स्वतन्त्रता-संग्रामके नेता बने रहते हैं तो राष्ट्रीय जनतान्त्रिक क्रान्ति कभी भी सम्पूर्ण नहीं हो सकती—उल्टे राजनीतिक स्वाधीनता प्राप्त कर लेनेके बाद सामाजिक अन्तरविरोध जैसे-जैसे बढ़ते हैं, वे लोग साम्राज्यवादके साथ समझौता करनेकी कोशिश करते हैं और अपने देशकी ज़मींदाराना प्रतिक्रियाके साथ गठजोड़ कर लेते हैं। ऐतिहासिक अनुभव ही यह भी बताता है कि जब साम्राज्य-विरोधी राष्ट्रीय मोर्चा जन-सामान्यके व्यक्तियोंके नेतृत्वमें होता है, केवल तभी जनतान्त्रिक क्रान्तिकी भी सारी अवस्थाएँ पूरी हो पाती हैं और सही अर्थोंमें सामाजिक सुख-समृद्धिका मार्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी प्रशस्त होता है। भारतकी स्थिति पहले वाली है। दूसरी रही होती तो आज देशकी यह दुर्दशा न होती।

जिस तबक़ेके लोगोंके हाथमें लीडरीका ज़ोर था उन्होंने अपने तबक़ेकी स्थिति ही और अधिक मज़बूत बनानेके लिए आज़ादी-का पूरा-पूरा इस्तेमाल किया, इस रास्तेपर चलकर जन-सामान्यकी जो हालत हो सकती थी वही इन बीस वर्षोंमें हुई भी। और इसी रास्तेपर चलकर इन लोगोंने ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवादियोंसे मदद ली, तथा मददका मोल चुकाया जनहितकी बलि देकर। जिनकी मदद ली जाती है उनके स्वार्थोंकी रक्षा भी करनी पड़ती है, लिहाज़ा मदद देनेवाले भारतीय राज्यको अपनी युद्ध-योजनाओंमें खींच लानेके लिए हर तरहका दबाव डालने लगे और ऐसी-ऐसी चालें चलने लगे जिनसे भारतकी राजनीतिक स्वतन्त्रता तक खतरेमें पड़ सकती थी।

भारतको भारी उद्योगकी आवश्यकता थी, मगर इसके 'मददगारों'ने इस दिशामें कोई मदद नहीं दी। गिड़गिड़ाकर माँगनेके बावजूद नहीं दी। उल्टे इस देशकी पौण्ड-पावनेकी भारी रक़में तक लूट लीं। दूसरे विश्वयुद्धके दौरान हमारी जनताके खून-पसीनेकी कमाईसे वे पौण्ड-पावनेकी रक़में बनी थीं। विदेशी मुद्रा बचानेमें मददके बहाने विदेशी इजारेदारोंके साथ ऐसे सौदे लाद दिये गये जो हमारे राष्ट्रीय हितोंके प्रतिकूल पड़े। खनिज तेल-शोधनालय, जहाज़-निर्माण, रासायनिक उद्योग इत्यादि इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

सरकारकी बजट-सम्बन्धी तथा सामान्य अर्थ-नीतियाँ, विशेष रूपसे टैक्स-सम्बन्धी कार्यवाहियाँ और मूल्य-नीति, मुख्यतया जन-विरोधी हैं। अप्रत्यक्ष कर-वृद्धि की गयी है। हीन वित्त-प्रबन्धनके अधीन झूठे नोट छापे जाते हैं। वस्तुओंके मूल्य बेतरह बढ़ रहे हैं। मुद्रास्फीति और मूल्यवृद्धिके द्वारा जन-साधारणको बेतहाशा पीसा जा रहा है। बैंकोंकी जमा-रक़में झूठे नोटोंकी छपाई (हीन वित्त-प्रबन्धन)के फलस्वरूप अत्यधिक बढ़ रही हैं तथा वे रक़में जन-सामान्यका कोई हित-साधन नहीं कर रहीं। यही स्थिति विशेष ऋण-संस्थानोंकी है, उदाहरणार्थ, औद्योगिक वित्त-निगम, राष्ट्रीय औद्योगिक विकास-निगम आदि। परिणाम यह है कि काँग्रेस-शासन और उसकी पंचवर्षीय योजनाओंके अन्तर्गत एक ओर तो तेज़ीके साथ बड़े पैमानेपर पूँजी केन्द्रीभूत होती रही है और दूसरी तरफ़ औद्योगिक तथा बैंक-पूँजी परस्पर गुँथती रही है।

सार्वजनिक क्षेत्र अर्धविकसित अर्थनीति-में प्रगतिशील भूमिका निभा तो सकता है—बशर्ते उसे जनतान्त्रिक मार्गपर चलाया जाये, क्योंकि इससे अर्थनीतिक पराधीनता भी कम होती है और औद्योगीकरणके लिए पूँजीका आधार भी मज़बूत होता है। साथ ही विदेशी पूँजीका शिकंजा भी कमज़ोर किया जा सकता है। मगर गत दो दशकोंके दौरान भारत-सरकारकी जो जन-विरोधी नीतियाँ रही हैं, उनके कारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सार्वजनिक क्षेत्रके व्यावहारिक परिणामोंने ऐसी सारी सम्भावनाएँ मिट्टीमें मिला दी हैं। सार्वजनिक तथा निजी दोनों ही क्षेत्रोंमें विदेशी पूँजी अबाध रूपसे बढ़ रही है। योजना-सम्बन्धी तथा अन्य सभी बड़े-बड़े सरकारी ठेके चन्द बड़े-बड़े लोगोंको ही दिये जाते हैं, यही लोग सार्वजनिक क्षेत्रके तैयार मालका वितरण-नियन्त्रण भी करते हैं, इसके अतिरिक्त सार्वजनिक क्षेत्रमें विदेशी इजारेदारों तथा देशीय निजी पूँजी आमन्त्रित करके सार्वजनिक क्षेत्रका मूल अभिप्राय ही समाप्त कर डाला गया है। अगर सार्वजनिक क्षेत्रमें इस प्रकारके तत्त्वोंका समावेश किया जाये तथा नौकरशाहीका नियन्त्रण बढ़ाया जाये तो राजकीय पूँजीवादका अपना प्रगतिशील चरित्र ही ग़ायब हो जाता है। अतः भारतीय राजकीय उद्योगोंमें सभी जन-विरोधी ख़ूबियाँ पूरी तरह मौजूद हैं।

कांग्रेस-सरकारने ब्रिटिश तथा दूसरी विदेशी पूँजीको और अधिक मात्रामें आमन्त्रित करनेके लिए उदारतापूर्वक सुविधाएँ, गारण्टियाँ और नये अवसर देनेके वादे किये और कर रही है। तथाकथित स्व-उत्पादक अर्थनीतिके निर्माणके नामपर तथा विदेशी मुद्राकी कमी दूर करनेकी आड़में कांग्रेसी शासक ब्रिटेन; अमरीका और पश्चिम जर्मनी तथा अन्य पाश्चात्य देशोंके इजारेदारोंको भारतमें पूँजी लगाने तथा मुनाफ़े कमानेकी छूट दे रही है। हर साल करोड़ों रुपये मुनाफ़े, लाभांश, व्याज, वेतन और भत्ते, कमीशन, बीमे और भाड़ेके रूपमें तथा अन्य प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष मदोंमें हमारे देशसे बाहर खींच लिये जाते हैं। इस नीतिसे राष्ट्रीय अहित हो रहा है क्योंकि हमारे साधन बेरहमीसे लुट रहे हैं; हमारी अर्थनीति कमज़ोर होती चली जा रही है। अतः साम्राज्यवादी विदेशी पूँजीके साथ गठजोड़ कांग्रेसी इज़ारेदारीकी एक खतरनाक साज़िश है।

इस प्रकार पंचवर्षीय योजनाओंके अन्तर्गत मौलिक कृषि-सुधारोंके ज़रिये अपनी कृषिको कृषक-हितमें पुनर्गठित करनेके बजाय भारत-सरकार एक तरफ़ तो विकासके नाम जनतापर कर-बोझ लादती चली जा रही है और दूसरी ओर देशको विदेशी पूँजीपर अधिकाधिक निर्भर बनाती जा रही है।

● अब आइए भविष्यपर...

यह सब देशके भविष्यके लिए खतरनाक है। हमें आन्तरिक तथा बाह्य दोनों मामलोंमें स्वाधीन नीति बरतनेका कोई हक़ ही नहीं रहा। फलस्वरूप हमारे देशमें घोर दक्षिणपन्थी प्रतिक्रिया जन्म लेती जा रही है जो अमरीकाके साथ फ़ौजी गठजोड़ और अमरीकी आर्थिक पराधीनताका खुलकर समर्थन करने लगी है। देश-भरमें सी० आई० ए०के भारतीय दलालोंका जाल बिछा हुआ है।

अगर इन स्थितियोंको समय रहते समाप्त न किया गया तो भारत निकट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भविष्यमें अमरीकी नव-उपनिवेशवादका सबसे मजबूत गढ़ बन जायेगा। अभी यह हालत तो हो ही चली है कि हम अमरीकी दबावके कारण न तो अपने देशसे सम्बद्ध किसी परराष्ट्रीय समस्याका कोई सन्तोषजनक समाधान कर पा रहे हैं, न ही अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें होनेवाले किसी अन्यायके खिलाफ़ खुलकर अपनी आवाज़ बुलन्द कर सकते हैं। अनाजके दानों तकके लिए हमें जॉनसनकी मेज़पर हस्ताक्षरार्थ पड़ी फ़ाइलोंका इन्तज़ार करना पड़ रहा है। हमारे देशकी प्रतिक्रियावादी शक्तियोंके साथ अमरीकाका सीधा सम्पर्क स्थापित हो चुका है। भारतकी इस दुर्दशाका ही नाजायज़ फ़ायदा उठाकर यहाँके बुद्धिजीवीके मस्तिष्कमें भी हीनता, ह्रास और हताशाके दर्शन भरे जाने लगे हैं। फलस्वरूप उसे दिल्ली भी पराया शहर लगने लगा और दिल्लीकी मौतके माध्यमसे वह औद्योगिक और वैज्ञानिक सभ्यता तकका विरोध करने लगा तथा गुण्डों और बदमाशोंके प्रति सहानुभूति प्रकट करने लगा।

● नवलेखनके नामपर :

मनुष्यमें हीनता और हताशा उपजाकर ही संघर्ष और संगठनके आधारपर चोट पहुँचायी जा सकती है। इसलिए देशी-विदेशी जन-विरोधी शक्तियोंने एकजुट होकर भारतमें नवलेखनके नामपर हर भाषामें कई-कई कान्शस सेवक तैयार किये। मगर इनके अलावा बहुत-सी भीड़ ऐसे बुद्धिजीवियोंकी भी थी जो देश-भरमें व्याप्त दरिद्रता, भ्रष्टाचार तथा दमन-चक्रसे निराश होकर तथा मनस्तप्त होकर इस जन-द्रोही प्रचार-दर्शनके चंगुलमें स्वतः ही फँस गये, इस फँसावका एक कारण साहित्यमें प्रगतिशील आन्दोलनका ग़लत हाथोंमें होनेके कारण बुरी तरह विफल होना भी माना जा सकता है। स्वयं एक कम्युनिस्ट लेखक-चिन्तकने इसे इन शब्दोंमें व्यक्त किया है : 'इसमें सन्देह नहीं कि सन् १९४७ के बाद प्रगतिशील आन्दोलन कम्युनिस्ट पार्टीके प्रभाव और नेतृत्वमें चलता रहा, लेकिन जब राजनीतिमें ही पार्टीकी नीति सही नहीं थी तो साहित्यमें उसका सही होना सम्भव नहीं था। अतएव जब पार्टीकी नीति ग़लत सिद्ध हुई तो प्रगतिशील आन्दोलन और संगठनको ज़ोरदार आघात लगा और वह एकदम ख़त्म हो गया।····यदि ऐतिहासिक दृष्टिसे देखा जाये तो प्रगतिशील आन्दोलनको नये साहित्य और नयी चेतनाका प्रतिनिधि कहना भूल होगी, बल्कि गुणात्मक परिवर्तनको न समझनेके कारण जो एक ग़लत और नकारात्मक प्रवृत्ति उत्पन्न हुई, यह आन्दोलन मुख्य रूपसे उसका प्रतिनिधि था।····इसी कारण प्रगतिशील आन्दोलन ख़त्म हुआ। यह एक ऐतिहासिक घटना है, जिसे किसी तरह भी टाला नहीं जा सकता था।'

[प्रगतिवाद : पुनर्मूल्यांकन—रहबर]

उपर्युक्त ग्रन्थकी भूमिकामें यह विश्लेषण भी प्रस्तुत किया गया है कि 'आदर्शवादको तो छोड़ा गया, लेकिन द्वन्द्वात्मक भौतिकवादको सिद्धान्तरूपमें अपनाया नहीं गया।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्क्स और एंगल्सने कम्युनिस्ट मैनिफ़ेस्टोमें सन् १९४८ में ही यह घोषित कर स्पष्ट कर दिया था कि : 'पूँजीवाद कोई शैतानी व्यवस्था नहीं जो शैतानों-द्वारा संसारपर थोपी गयी है, बल्कि ऐतिहासिक विकासका एक अनिवार्य युग है···'

मगर प्रगतिशील साहित्यके नामपर सिर्फ़ 'पूँजीवाद : मुर्दाबाद' और 'किसान-मज़दूर : जिन्दाबाद'के नारे लिखनेवाले बुद्धिजीवी खुद ही अपने खोखले लेखनसे ऊबकर तथा भारत-भरमें आज़ादीके बाद भी जनताकी ही मुर्दाबादियाँ देख-देखकर अपने खोलमें सिमटने लगे थे। नीत्शे, वर्ग साँ और फ़्रायडके दर्शनमें उन्हें अपनी मनःस्थितिके अनुकूल बातें मिलीं। आन्द्रेज़ीद, जॉयस, इलियट, लारेन्स, सार्त्र, कामू और काफ़्का तथा एज़रा पौंडकी रचनाओंने उन्हें खींचा। और वे समाजके गतिशास्त्रका तथा पदार्थकी गुणात्मक परिवर्तन-प्रक्रियाका वास्तविक ज्ञान प्राप्त करनेके बजाय मनकी अवचेतन गहराइयोंमें भटकते हुए बर्बरताके उस आदिम युगमें जा पहुँचनेकी कोशिश करने लगे जहाँ वे सब बन्धनोंसे मुक्त और स्वतन्त्र महसूस कर सकें।

जिस प्रकार राजनीतिक क्षेत्रमें वामपक्षने आदर्शवादसे तो सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया लेकिन उसकी जगह समाजवादी विचारधाराको नितान्त अवैज्ञानिक ढंगसे बिना समझे ही अपनाया गया, उसी तरह साहित्यके क्षेत्रमें भी अनायास ही 'प्रतिबद्धता' और 'भारतीयता'का नारा दिया जाने लगा, जब कि भारतमें भारतीयताका मतलब सिर्फ़ राज्यीयता ही रह गया था। और जन-वादी पार्टियाँ भी नाम-मात्रको ही बची थीं। जो रह भी गयी थीं उनकी नीतियाँ अव्यावहारिक थीं। इसीलिए देशमें स्वस्थ विरोधी दल भी उभार न पा सका। यही दशा साहित्यमें रही।

जो हो, आज पूरा देश गुमराहीके चंगुलसे छूट निकलनेको बेताब हो उठा है। इस बेताबीको सही दिशा देनेके लिए यह अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि हम आगे का कोई कार्यक्रम निर्धारित करनेके लिए पिछली भूलोंका जायज़ा ले लें तथा अवतक का (कम-से-कम गत बीस वर्षोंका) सर्वांगीण लेखा-जोखा कर लें। इतना तो तय हो ही चुका है कि विकासका जो मार्ग हमने दो दशक तक अपनाये रखा वह अर्द्धविकसित देशोंके लिए व्यर्थका प्रयास है। इस रास्ते पर चलकर हमारी आर्थिक पराधीनता और पिछड़ापन भी ठीक नहीं हो सकता तथा हम भौतिक साधनोंका पूरा-पूरा उपयोग कर सकनेके क़ाबिल भी कभी नहीं हो सकते। क्योंकि इस मार्गमें हमें पग-पगपर अन्त-र्विरोधों तथा असन्तुलन और संकटोंका सामना करना पड़ेगा। इस रास्तेपर चलते रहनेसे आम जनतापर असह्य बोझ और कष्ट लदते चले जायेंगे, और उन्हें बेहतर दिनोंकी आस तक नहीं रहेगी।

काँग्रेस-शासनके दो दशकोंने निस्सन्देह सिद्ध कर दिया है कि उसकी कृषि-नीतियों का लक्ष्य तथा दिशा हमारे भूमि सम्बन्धों की सामन्ती और अर्द्ध-सामन्ती बेड़ियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काटना बिलकुल नहीं था। सामन्ती देशी रियासतोंका अन्त भी राज-परिवारोंके हाथमें लूटका धन और खेती लायक़ जंगलात की ज़मीनोंके बड़े-बड़े चक छोड़कर तथा हर साल करोड़ों रुपयोंकी व्यक्तिगत थैलियाँ सौंपनेका आश्वासन देकर किया गया। ज़मींदार, जागीरदार, इनामदार आदि बिचौलिये खत्म करनेकी दिशामें जो भी क़ानूनी कार्यवाहियाँ की गयी हैं उनमें जान-बूझकर ऐसी गुंजाइशें छोड़ दी गयी हैं जिनसे इन बिचौलियोंकी सीर और खुदकाश्तकी आड़में बड़ी-बड़ी ज़मींदारियाँ बनी रह सकें, इसके विपरीत लाखों काश्तकार या तो क़ानून या ग़ैरक़ानूनी तौरपर एकदम बेदख़ल कर दिये गये या फिर ज़मींदारोंको मोटी-मोटी रक़में देकर ज़मीनके अधिकार ख़रीदनेको मजबूर किये गये। क़ब्ज़ेकी ज़मीनकी ऊपरी हदबन्दीके सम्बन्धमें बने क़ानूनोंको लें तो वे कुछ इस तरहसे बनाये गये हैं कि ज़मीनोंके बड़े-बड़े मालिक या तो ऊपरी ज़मीनें अपने पास बेदाग़ बनाये रख सकें या झूठे बँटवारेके ज़रिये अपने परिवार-के सदस्योंमें ही बाँटकर बड़े मज़ेमें पूर्ववत् ही स्वामी बने रहें। अधिकांश मामलोंमें तो ऊपरी हद रखी ही बहुत ज़्यादा गयी है। इसके अलावा तथाकथित 'सुव्यवस्थित फ़ार्मों' 'बग़ीचों' और 'चरागाहों'के नामपर ज़मीनें बरी करके इस क़ानूनकी जड़ ही काट दी गयी है। इसमें कोई शक नहीं रहा कि ये क़ानून ज़्यादातर मामलोंमें तो काग़ज़ी ही बने रहे। बहुत थोड़ी-सी ज़मीन मेहनती कृषकोंमें बाँटनेके लिए प्राप्त की जा सकी। फलस्वरूप खेतिहर मज़ूरोंकी लम्बी-लम्बी क़तारें पूरे देशमें लगी पड़ी हैं। परती भूमि तक जोतनेके हक़ उन्हें नहीं दिये गये, किसान-परिवारोंकी लगभग पचास प्रतिशत जनसंख्या इन खेतिहर मज़ूरोंकी है और उनका स्तर इस क़दर अमानुषिक है कि उन्हें भारतीय कहते हुए किसी भी सोचदार भारतीयका सर शर्मसे झुक जाये।

देहातोंमें रुपयेपर आधारित अर्थनीति तेज़ीसे बढ़ी है, फलस्वरूप खाद्यान्न तथा अन्य पैदावारका अग्रिम क्रय-विक्रय तथा होर्डिंग या जख़ीराखोरी बेहद बढ़ी है, बढ़ते हुए बैंक-ऋण तथा अन्य आधारोंपर ही यह स्थिति आती है। कृषि-उत्पादनोंपर भारतीय तथा विदेशी व्यापारी स्वार्थोंका शिकंजा बड़ी तेज़ीके साथ बढ़ा है, फलस्वरूप असमान विनिमय और दामोंका तीव्र उतार-चढ़ाव होने लगता है। इन सबसे सूदखोर पूंजीकी पर्याप्त वृद्धि हुई है। रिजर्व बैंककी सबसे हालकी जाँच-रिपोर्टके अनुसार देहातों-का क़र्ज़ जो कि १९५६ में ९०० करोड़ रुपये था, अब बढ़कर ३००० करोड़से ज़्यादा हो गया है। इसपर प्रतिवर्ष १०० करोड़ रु०से अधिक ब्याज होगा, साधारण ब्याज-दरपर क़र्ज़ पाना किसानोंके लिए कठिन हो रहा है। सहकारी समितिका क़र्ज़, सरकारी क़र्ज़ और बैंक क़र्ज़—ये सब मिल कर भी देहातोंके क़र्ज़की कुल आवश्यकताओं को बहुत ही सीमित मात्रामें पूरा कर पाते हैं। सो भी अधिकांशतः ज़मींदार और धनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसान ही इनका उपयोग करते हैं।

इन्हीं कृषि-नीतियोंका दीवालियापन देश-में खाद्य-संकट पैदा किये हुए है। कृषिका तथा सिंचाई आदिकी योजनाओंपर करोड़ों रुपये खर्च होनेके बावजूद हमारे कृषि-उत्पादनमें वृद्धि एकदम नाकाफ़ी रही है और पिछले तीन-चार वर्षों तक तो उत्पादन प्रायः स्थिर बना रहा। इस वर्ष तेज़ीसे गिरा। अकाल पड़े। देश-भरमें हाहाकार मची।

● आज़ादी के बाद :

आज़ादीके इन बीस वर्षोंमें ढेरों कृषि-सुधारों-के बावजूद हम कृषि-विकास नहीं कर पाये; बड़े पैमानेपर अपने राष्ट्रीय उद्योग नहीं बना सके। और हालत यह है कि हमारी कुल आबादीका अस्सी प्रतिशत कृषक-वर्ग कार-ख़ानोंमें बने मालकी न्यूनतम मात्रा भी खरीद सकनेमें असमर्थ है। लाखोंकी तादादमें लोग गाँव छोड़-छोड़कर शहरोंमें भाग रहे हैं और श्रमके बाज़ारमें बेकारोंकी बेपनाह फ़ौज बढ़ानेपर मजबूर हैं। फलस्वरूप श्रम-का मूल्य गिर रहा है।

विदेश-नीतिका लेखा-जोखा करते समय जो मोटी-मोटी ग़लतियाँ उभरकर आती हैं वे यह हैं : मलायाके स्वाधीनता संग्रामको दबानेके लिए ब्रिटिश साम्राज्यवादियों-द्वारा गुरखोंकी फ़ौजी भरतीके लिए भारत-भूमिपर शिविरोंकी इजाज़त; वियतनामके खिलाफ़ लड़नेको जानेवाले फ़ान्सीसी विमानोंको भारतीय हवाई अड्डोंका उपयोग करनेकी सुविधा प्रदान करना; कोरियामें अमरीकी फ़ौजोंको मदद भेजना; पाकिस्तान औ[र] चीनके साथ युद्ध; वायस ऑफ़ अमेरि[का] साथ सौदा; अमरीकी और ब्रिटिश ह[वाई] क़वायदें; हिन्द-महासागरमें अमरीकी [...] बेड़ेकी गश्तके प्रसारमें सरकारकी वास्त[विक] सम्मति; हिन्द-महासागरमें ही फ़ौजी अ[ड्डे] स्थापित करनेकी अँगरेज़-अमरीकी चे[ष्टा] भारतकी वास्तविक सम्मति—इन [...] मिलकर हमारी निरपेक्षताकी नीतिको [...] किया है और नतीजा यह कि एशिया औ[र] अफ़्रीकाके देशोंमें भारतकी प्रतिष्ठा [...] मिल गयी है।

संक्षेपमें यह जो जायज़ा हमने लिया [...] इसके प्रकाशमें अब शायद हमें यह सोच[ने] सुविधा रहे कि जो सोचा था वह ग़लत [...] कि सही, और अब जो सोचना है वह [...] ढंगसे सोचना होगा, ताकि हमारी सोच[की] ग़लतियोंका दण्ड शेष शतीमें तथा आ[गामी] शताब्दीकी हमारी भावी पीढ़ियोंको [न] भोगना पड़े। भले ही इसमें कोई सन्देह [...] कि हममें-से बहुत कम लोगोंको सन् २०[...] देखना नसीब हो सकेगा, मगर मा[नव] इतिहासकी जिस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण [...] हम रह रहे हैं, उसमें होनेका अवसर भी [...] अन्य किसी शतीके मानुषको नसीब न [...] सकेगा। अतः हमारा दायित्व भी अ[...] गुरुत्वपूर्ण है, और उसे निवाहना [...] होगा ही। ■

एल २१, नवीन श[ाहदरा]
दिल्ली-[...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
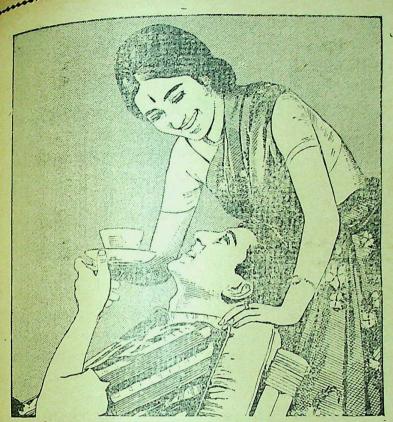
लिपटन की येलो लेब्ल चाय

होगी ज़ोरदार कड़ी लिकर—देगी साथ साथ ताज़गी। चाय हो तो ऐसी। उम्दा असम चाय और उसके साथ अच्छी अच्छी दूसरी चाय ब्लेण्ड कर बनी है लिपटन की येलो लेब्ल। रंग होगा चोखा! गन्ध से होगी भरपूर। पायेंगे गाढ़ी मलाईदार लिकर।

लिपटन
यानी अच्छी चाय

LYC-39 HIN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

 एक बार हो तो ठीक हैं लेकिन जो राजनीति सुबह-शाम करवटें बदलती रहती है उसके बारेमें कुछ भी कहना मुश्किल है। बीस सालमें कम घटनाएँ नहीं हुई हैं, तब अगले तीसके बारेमें केवल अटकलें ही लगायी जा सकती हैं।...

३ दशक, १ देश और 'एक'-ता

मन्मथनाथ गुप्त । ३० साल पहले भारतकी जो रूपरेखा थी, वह अब वैसी नहीं है, इसलिए यदि अगले तीस सालमें भारत वैसा न रहे जैसा कि वह आज है, तो कोई आश्चर्यकी बात न होगी और इसके लिए हमें तैयार रहना चाहिए। यह परिवर्तन केवल भारतपर ही लागू है, ऐसी बात नहीं है। युरँप या एशिया और अब अफ्रीकाके मानचित्र उठाकर देखिए, तो आपको ज्ञात होगा कि गत तीस सालमें कितना परिवर्तन हुआ है। बहुत-से राजाओंके मुकुट लुढ़क गये, बहुत-से अधिनायक दुःस्वप्नकी तरह चुक गये, कुछ अब भी बाक़ी हैं जैसे स्पेनमें, कई देशोंमें समाज-पद्धति बदल गयी, इत्यादि-इत्यादि। यदि केवल इन परिवर्तनोंका एक संक्षिप्त खाका तैयार किया जाये, तो वही एक बहुत बड़ा लेख हो जायेगा।

इसी कारण हम भारतपर ही मुख्यतः अपनी दृष्टि निबद्ध रखेंगे। पर साथ ही यह चेतावनी दे दें कि आज यह सम्भव नहीं है कि कोई भी देश अपने पड़ोसीसे अथवा दूसरे देशोंसे सम्पूर्ण रूपसे कटा-फटा और अलग हो। सारे संसारमें कोई भी घटना घटित होती है, तो उसके असरोंकी लहरें दूसरे देशोंके बन्दरगाहोंसे जाकर टकराती हैं और उससे कभी-कभी जहाज़ भी डूब सकता है और दूसरी दुर्घटनाएं हो सकती हैं। अभी-अभी पश्चिम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एशियामें जो घटनाएँ हुईं, यानी इसरायल और अरब देशोंमें जो ४–५ दिनका युद्ध हुआ उसका भारतपर कितना बुरा असर पड़ा है, यद्यपि भारत इस युद्धके पास-पड़ोसमें भी नहीं था। मनुष्यकी सभ्यताकी यह महान् विजय थी कि उसने १८६९ में स्वेज नहर-जैसी नहर प्रस्तुत की जिसने ईश्वरके कार्यमें बुरी तरह हस्तक्षेप कर मनुष्यको मनुष्यके पास लानेका कार्य किया, पर इस युद्धके कारण वह नहर बन्द हो गयी है और अब हम जहाज़रानीके क्षेत्रमें एकाएक अपनेको उसी युगमें पाते हैं जिसमें वास्कोडिगामा (१४६९–१५२४) मौजूद था। लोगोंको केवल यात्रा-सम्बन्धी असुविधा हुई हो यही बात नहीं, अन्न और मालके आवागमनमें दिक़्क़तें हो रही हैं और उसके फलस्वरूप हमारे दुर्भिक्षवाले प्रान्तोंकी स्थिति बिगड़ गयी—ऐसा कहा जाये तो अत्युक्ति न होगी।

इसलिए भारतके भविष्यपर विचार करते समय हमारा ध्यान केवल भारत तक सीमित नहीं रह सकता। कई ऐसी घटनाएँ देशको बाहरसे प्रभावित करती हैं। हमारा सबसे निकट पड़ोसी पाकिस्तान है। सच तो यह है कि वह हमारे शरीरका कटा हुआ टुकड़ा है, पर अब वह हमारे लिए एक टाइम-बम है, जो जब-तब विस्फोटित होता रहता है, शायद किसी अदृश्य शक्तिके इंगितपर। पाकिस्तानके ज़हरबादसे हमपर बहुत तरहके असर पड़ते हैं, जिनमें सबसे बड़ा असर यह है कि उसकी मौजूदगीके कारण चाहे हम ज़ाकिर हुसैनको राष्ट्रपति बनायें चाहे कुछ करें भारतके मुसलमान शायद कभी सन्तुलित हो ही न सकें। हमारे दुर्भाग्यसे—पर ऐसा न समझा जाये कि हम यहाँ दुर्भाग्य शब्दका प्रयोग कर रहे हैं इसलिए हम यह सुझाव दे रहे हैं कि इस दुर्भाग्यके पीछे कार्य-कारण सम्बन्ध नहीं है—पाकिस्तान बराबर भारतका विरोध करता रहा है। अभी-अभी अयूबकी जो आत्मकथा प्रकाशित हुई है उससे यह तथ्य ज्ञात होता है। पाकिस्तान किसी भी तरह भारतके साथ शान्ति स्थापित करनेके लिए तैयार नहीं। बार-बार भारतके नेताओंकी ओरसे यह प्रस्ताव दिया गया कि वह हमारे साथ अनाक्रमण-सन्धि करे, पर वह इसपर राज़ी नहीं हुआ। बात यह है कि पाकिस्तानका गर्भाधान ही दो राष्ट्र सिद्धान्तरूपी पापमें या अयुक्तिमें हुआ है। पाकिस्तान जिस सिद्धान्तपर आधारित है, जिसका वक्तव्य यह है कि भारतके हिन्दू और मुसलमान दो अलग-अलग राष्ट्र हैं।

● राष्ट्रीयताका रूप :

यहाँ हम थोड़ा ठहरकर यदि दो राष्ट्र सिद्धान्तकी जड़ तक जायें तो हमें ज्ञात होगा कि यह सिद्धान्त जितना मुंहफोड़ मालूम होता है, वह उतना है नहीं। इसके पीछे भी कार्य-कारण कड़ियाँ बड़े ज़ोरोंके साथ मौजूद हैं। मैं इस सम्बन्धमें बहुत ब्यौरेमें नहीं जाऊँगा। फिर भी दो-एक बातों की ओर ध्यान दिलाना बहुत आवश्यक है। प्रारम्भसे ही भारतमें जबसे राष्ट्रीयताका उन्मेष हुआ, तबसे राष्ट्रीयता-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का रूप बहुत कुछ हिन्दू-रूप हो गया। बंकिमचन्द्रके आनन्दमठमें बन्देमातरम् गीत मुसलमानोंके विरोधमें भी आता है, यद्यपि बंकिमचन्द्रने जो कुछ भी साहित्य लिखा उसका उद्देश्य मुसलमानोंका विरोध नहीं था, बल्कि भूतपूर्व मुसलमान शासकोंके विरोधकी आड़में अँगरेज़ोंका विरोध करना था। ऐसा केवल भारतके लेखकोंने ही नहीं किया है, इटली आदि देशोंमें भी, जब वे पराधीन थे, उस समयके शासकोंके विरुद्ध आवाज़ उठाने-में असमर्थ रहकर भूतपूर्व शासकोंके विरुद्ध आवाज़ उठाकर पुस्तकें लिखी गयी थीं। प्रताप और शिवाजी हमारी राष्ट्रीयताके मूर्त रूप बने। जो कुछ भी हो, इन विचारों और प्रतीकोंका असर तो होना ही था। क्रान्तिकारियोंने आनन्दमठसे तथा दूसरे सूत्रोंसे अपने विचार लिये। वे भी प्रारम्भमें बहुत धार्मिक रहे। सावरकर, लोकमान्य तिलक और उसके पहले जायें तो क्रान्ति-कारी वीर मंगल पाण्डेसे लेकर अरविन्द, हरदयाल, शचीन्द्रनाथ सान्याल, रामप्रसाद बिस्मिल—सभी लोग धार्मिक थे। अवश्य बादको चलकर क्रान्तिकारियोंने धार्मिक विचारधारा छोड़ दी और भगतसिंह-जैसे व्यक्ति उत्पन्न हुए जो नास्तिक और भौतिक-वादी थे। पर क्रान्तिकारी-आन्दोलन लग-भग सन् २४ तक मुख्यतः धार्मिक विचार-धारापर ही चलता रहा। यह हालत क्रान्तिकारी-आन्दोलन तक की थी। दूसरे तो हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तानके कीचड़में फँसे ही रहे।

जब महात्मा गान्धी भारतीय रंगमंचपर पधारे, तो उन्होंने भी धर्मकी आड़ लेकर अँगरेज़ोंके विरुद्ध भारतीयोंको जगाना शुरू किया। उन्होंने अहिंसा आदि जिन विचारों-का प्रतिपादन किया, उनका प्रतिपादन सम्पूर्ण रूपसे राजनैतिक और व्यावहारिक आधारपर भी हो सकता था, पर ऐसा न करके उन्होंने धार्मिक आधारपर ही अपने आन्दोलनका ढाँचा खड़ा किया। मुसल-मानोंको साथ रखनेके लिए उन्होंने पंजाब-हत्याकाण्ड यानी जलियाँवाला बाग़-हत्या-काण्डके साथ ख़िलाफ़त-समस्याको भी मिला लिया। जैसा कि बादको पता चला, ख़िलाफ़त-समस्याको इस प्रकारसे राष्ट्रीय आन्दोलनमें घसीटना बहुत बड़ी राष्ट्रीय पैमानेकी बेव-क़ूफ़ी थी। ख़िलाफ़त-आन्दोलनका वक्तव्य यह था कि प्रथम महायुद्धके बाद तुर्कीके पराजित होनेके कारण खलीफ़ाके साम्राज्य-को जिस प्रकार बाँट दिया गया है, उस प्रकार उसे विखण्डित न किया जाये और खलीफ़ाको उस साम्राज्यका प्रधान माना जाये। महात्मा गान्धी या भारतके मुसल-मानोंके लिए इस प्रकारके आन्दोलनको उठाना बहुत ग़लत था। बात यह है कि इसमें अरबके लोगोंका भी सम्बन्ध था। उनसे बिना पूछे कि तुम तुर्कोंके अधीन रहना चाहते हो या नहीं, तुर्कोंसे यह बिना जाँचे कि तुम थियोक्रेसी या धार्मिक मुल्लाओंका राज्य चाहते हो या नहीं, इस प्रकारकी माँग रखना दूसरे देशकी राज-नीतिमें मूर्खतापूर्ण हस्तक्षेप था। भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसलमानोंने ऐसा किया; यह उनका अहमक़पना था। पर महात्मा गान्धीने उसे अपनाया–यह और बड़ी बेवक़ूफ़ी थी, क्योंकि गान्धी स्वयं भारतमें थियोक्रेसी नहीं चाहते थे। इसलिए एक दूसरे देशके लिए इस प्रकारकी राजनैतिक पद्धति वह कैसे चाह सकते थे। पर उन्होंने पेंचके रूपमें स्वतन्त्रता और लोकतन्त्रकी सब तरहके सिद्धान्तोंके विरुद्ध ऐसा नारा दिया–यह एक ऐतिहासिक तथ्य है।

नतीजा भी वही हुआ जो होना था। जब ग़ाज़ी मुस्तफ़ा कमालपाशाने अपने देशसे ख़लीफ़ाको निकाल बाहर किया और तुर्कीमें कई सौ मुल्लाओंको फाँसी देकर

• परीक्षण

एक ग्रह था ; यथार्थ-सा, सामान्य-सा नहीं, बल्कि ऐसा जहाँ सिर्फ़ इस-उसपर प्रयोग होने थे; ग़लतियाँ कर-करके देखा जाना था कि किस तरहसे क्या बनता है, क्या बन सकता है, किसी प्रयोगशाला-जैसा, जिसमें विभिन्न कल्पनाओं और विचारों के आधारपर परीक्षण किये जाने थे। यदि कभी किसी परीक्षणका सन्तोषजनक परिणाम निकलता, कोई 'चीज़-सी' बन जाती, तो उसका अन्यत्र उपयोग होता।

शुरूआत छोटी-मोटी चीज़ोंसे की गयी। कुछ पौधे और पेड़ लगाये गये। लगे, थोड़े बढ़े और नष्ट हो गये। दूसरे लगाये गये। पशुओंपर अनेक परीक्षण किये गये। चले, बढ़े; फिर एकदम रुक गये, बल्कि जहाँसे चले थे, वहीं पहुँच गये। सब कुछ ठप्प-सा हो गया। प्रयत्न छोड़े फिर भी नहीं गये। आख़िर असफलताओंकी सम्भावना भी थी। कुल मिलाकर परीक्षण बुरे नहीं रहे। काफ़ी कुछ सीख लिया गया।

अब सोचा गया, देखें, इन्सान कैसा बनता है। बना। बल्कि बढ़ा। मगर कुछ ठीक-सा नहीं। देखनेमें लगा, परीक्षण बड़ा सफल रहा है। बड़ी-बड़ी सभ्यताएँ बनीं, संस्कृतियाँ बनीं, महान् राष्ट्र बने। इन्सान ने, लगा, बहुत प्रगति कर ली है, पूर्णता प्राप्त कर ली है। मगर बादमें वह लुढ़क गया। बल्कि पशुओंसे भी गया-बीता साबित हुआ। सब कुछ तहस-नहस हो गया। तरह-तरहकी इन्सानी हड्डियोंसे धरती पट गयी। मगर ख़ैर, परीक्षण ही तो था। कैसा होना चाहिए, यह भले ही पता न चला हो मगर कैसा नहीं होना चाहिए, यह तो ज्ञात हो ही गया।

फिर सोचा गया, चलो दो-एक को ही जाँचा परखा जाये, इतने सारे लोगोंको एक साथ लेनेसे नहीं चल पाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुल्ला-राज्य समाप्त किया, तब खिलाफ़त-समस्याका पैदा निकल गया, क्योंकि जब तुर्कीके लोग ही नहीं चाहते थे और उस समयकी दृष्टिसे एक हद तक क्रान्तिकारी मुस्तफ़ा कमालपाशा यह नहीं चाहते थे कि खलीफ़ाका राज्य रहे, तो भारतीय मुसलमानों या गान्धीके चाहनेसे क्या होता?

अरबोंने भी तुर्कोंके साथ रहना पसन्द नहीं किया। यही नहीं, अरबोंमें और तुर्कोंमें यह आन्दोलन चला कि इस बीच भाषा-जैसे क्षेत्रोंमें भी अरबों और तुर्कोंमें जो आदान-प्रदान हुआ है, उन शब्दोंको भी भाषाके शरीरसे निकाल बाहर किया जाये। पर अरब-जनता भी एक भाषा और एक धर्मके

एक बालक लिया गया। और एक बालिका। धरतीके सर्वाधिक रमणीक भागमें इन्हें छोड़ दिया गया। दिन-दिन भर दोनों जंगलोंमें भागते-दौड़ते रहते। गिरि-शृंगोंके ऊपर, पहाड़ी झरनोंके किनारे और पेड़ोंके झुरमुटोंके नीचे वे खेलते-कूदते। आसपासकी हर चीज़में ख़ुशियाँ तलाश कर लेते। लगता, धरतीके इस छोरपर वसन्त आ गया है।

बालक बढ़ता रहा। बढ़ते-बढ़ते एक दिन युवक बन गया। और बालिका युवती। दो दिलोंमें प्यारका सागर हिलोरें लेने लगा। वे एक-दूसरेकी आँखोंमें आँखें डालकर घण्टों कुछ खोजते रहते।

अबतक किये गये परीक्षणोंकी असफलताओंके अवशेष इन्हें देखते। देखते कि इनमें कुछ ऐसा है जो पहले नहीं था, जो अब भी और कहीं नहीं है। वे हर्ष प्रकट करते। कमसे कम इतना तो कर ही सकते थे।

प्रेम दोनोंको अत्यधिक निकट खींच लाया। एक प्रकाश-पुंज फैल गया। दिन अब साधारण दिन नहीं रहा, एक ऐसे प्रकाशमें परिणत हो गया जिससे उनकी आँखें चौंधिया गयीं। उन्होंने आँखें बन्द कर लीं। हृदयकी धड़कनें कई गुनी बढ़ गयीं। होठोंसे कुछ अस्फुट-से स्वर निकलने लगे।

सुवासित पुष्प-गुच्छों और लता-गुल्मोंके नीचे वे लेट गये—धरतीके सर्वाधिक सुन्दर स्थान में—एक ऐसी अद्भुत रात्रिमें जो विशेषतः उन्हींके लिए बनायी गयी थी।

और वे सो गये। प्रेमसे आप्लावित सौन्दर्यकी गोदमें। परस्पर आलिंगनबद्ध। वे फिर नहीं जगे। अब वे मृत थे। अब उनका उपयोग कहीं अन्यत्र होना था।

(मूल० : लैगरफ़िस्त : : अनु० : प्रकाश कुलश्रेष्ठ)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बावजूद एक जाति नहीं बन सकी और कई जातियोंमें बँट गयी। हालमें वे इसरायलके विरुद्ध एक होने लगी थी। पर अब तो उस एकताका भेजा ही खुल गया।

इस निराशाके बावजूद गान्धीजी जबतक जीते रहे तबतक राजनैतिक आन्दोलनको धार्मिक आन्दोलनका ही रूप देते रहे। यह तो रहा भारतके हिन्दुओंका रवैया। दूसरी तरफ़ यदि हम देखें तो मुसलमानोंने भी इसी प्रकार शुरूसे ही अपनी एक अलग राष्ट्रीयता बनानेकी चेष्टा की। हाली की कवितासे इसका सूत्रपात होता है, सर सैयद अहमद और अलीगढ़, ये कुछ नाम हैं जो इस सम्बन्धमें लिये जा सकते हैं। बादको मुस्लिम लीग चली और सारे भारतीय मुसलमान कुछ अपवादोंके सिवाय बराबर लीगके ही साथ रहे। यहाँ तक कि जब प्रान्तीय स्वराज्यकी स्थापना हुई तब मुस्लिम प्रधान प्रान्तोंमें काँग्रेस विजयी न हो सकी। अवश्य पंजाबमें बहुत दिनों तक मुस्लिम लीग विजयी नहीं हो सकी थी पर काँग्रेसने इसका फ़ायदा नहीं उठाया और उन मुसलमानोंसे दोस्ती करनेकी चेष्टा नहीं की जो लीगको हरानेमें समर्थ हुए थे, यह दूसरी बात है। पर हमारे विषयसे उसका भी सम्बन्ध किसी-न-किसी रूपमें बैठता है।

जो कुछ भी हो, हम चाहे जिस चीज़से बचें, पर ऐतिहासिक शक्तियोंसे नहीं बच सकते। ऐतिहासिक शक्तियोंके फलस्वरूप ही पाकिस्तानका निर्माण हुआ। यह बात और है कि यदि काँग्रेसके नेता किसी भी हालतमें देशका विभाजन स्वीकार न करते तो हमें दूसरे प्रकारकी स्वतन्त्रता मिलती, पर काँग्रेसके नेता शक्तिआरूढ़ होनेके लिए लालायित हो रहे थे। इसके अलावा उन्हें यह भय भी था कि आज़ाद हिन्द फ़ौज, क्रान्तिकारी आन्दोलन, समाजवादी आन्दोलनसे देशकी जैसी परिस्थिति हुई थी, यदि उसे ८-१० सालों तक और चलने दिया जाता, तो पता नहीं उसका क्या नतीजा होता। मैं समझता हूँ कि जैसा कि मैंने अपनी पुस्तक 'राष्ट्रीय आन्दोलनका इतिहास' तथा 'क्रान्तिकारी आन्दोलनका इतिहास' में बहुत ब्यौरेके साथ दिखाया है कि अँगरेज़ भी इस प्रकार भविष्य-भयसे प्रताड़ित होकर भारत छोड़ गये। और इससे उनका लाभ ही हुआ है, क्योंकि आज भारतमें जितनी ब्रिटिश पूँजी सक्रिय है स्वराज्यके पहले भारतमें उतनी ब्रिटिश पूँजी नहीं थी। दूसरे शब्दोंमें कहा जाय तो ब्रिटिश राजनैतिक सत्ताकी तो समाप्ति हो गयी, पर हमारी अर्थ-व्यवस्थापर उसकी जकड़ और बढ़ती ही चली गयी और उसके आर्थिक साम्राज्यका विस्तार हुआ। पता नहीं, यह क्या-क्या गुल आगे चलकर खिलायेगा। आगे-आगे देखिए होता है क्या?

यदि हम इन परिस्थितियोंको साथ मिलाकर देखें तो अकेला पाकिस्तान ही एक ऐसा उत्पादन है, जिसके कारण हमारे अगले दो दशक पता नहीं कैसे क्या हो जायें। मैं यह नहीं मानता कि पाकिस्तान और भारत दो देश बनानेके साथ ही भारतके सारे मुसल-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मान भारतीय दृष्टिसे राष्ट्रीयतावादी और पाकिस्तानके हिन्दू पाकिस्तानी दृष्टिसे राष्ट्रीयतावादी हो गये। यह एक तथ्य है जिसे स्वीकार करनेकी आवश्यकता है। शुतुर्मुर्गी ढंगसे बालूमें मुँह छिपाकर इस तथ्यसे मुँह मोड़ लेनेसे काम नहीं चलेगा, विशेषकर जबकि पाकिस्तान बराबर आक्रामक ढंगसे तैयारियाँ कर रहा है और अयूबकी आत्मकथामें यह स्पष्ट कहा गया है कि वह कश्मीरको लेकर ही मानेंगे। पंचमांगी तैयारियाँ और धर्म खतरेमें है—यह तो जारी है।

• दो राष्ट्रवाला सिद्धान्त :

इस प्रकार जिस चित्रकी रूपरेखा हमारे सामने प्रस्तुत होती है, वह कुछ अधिक सुखकर नहीं है। हमने एक मुसलमानको अपना राष्ट्रपति बना दिया, पर क्या इससे पाकिस्तानके किसी मुसलमानके मनमें यह धारणा एक मिनिटके लिए भी आयी कि दो राष्ट्रवाला सिद्धान्त ग़लत था, पाकिस्तानका बनना ठीक नहीं था और हमें फिर एक हो जाना चाहिए। मैं समझता हूँ कि भारतके सम्प्रदायवादी मुसलमानोंका मन इससे बिलकुल बदला नहीं होगा। बल्कि उनको कुछ ऐसा विश्वास हुआ होगा कि हम जो कुछ सोच रहे हैं सही रास्तेपर सोच रहे हैं और हम हावी होते जा रहे हैं। फिर मैं इस बातपर आता हूँ कि यह एक तथ्य है जिसे स्वीकार करनेकी आवश्यकता है। भारतका भविष्य इस तथ्यसे बुरी तरह बँधा हुआ है। उससे बचनेका उपाय है, पर वह उपाय न तो काँग्रेसके हाथमें है और न जनसंघके हाथमें है, न किसी दूसरे शक्ति-आरूढ़ दलके हाथमें है। हम, जैसी परिस्थिति है, उसमें भारतके मुसलमानोंको राष्ट्रीयतावादी नहीं बना सकते, पर हम उन्हें अन्तर्राष्ट्रीयतावादी बना सकते हैं और इसीमें हमारी समस्याओंका समाधान छिपा हुआ है। तभी पाकिस्तानका अन्त होगा क्योंकि जब हिन्दू हिन्दू नहीं रहेगा और मुसलमान मुसलमान न रहेगा, जैसा उजबेकिस्तानमें है, तो न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी, पर मैं शायद बहुत बड़ी क्रान्तिकी बात कह रहा हूँ। फिर हम इस लेखमें समाधान उतना नहीं बता रहे हैं, जितना कि स्थितिका मन्थन कर रहे हैं।

इधर एक नया शोशा छिड़ गया है। वह यह है कि असममें एक ईसाई-राज्य बनानेकी परिकल्पना चल रही है। सच तो यह है कि ईसाई-राज्य केवल असम तक ही सीमित होगा ऐसी बात नहीं। अन्तर्राष्ट्रीय ईसाई-शक्तियाँ जिन इलाक़ोंको ईसाई-राष्ट्र-के रूपमें बनाना चाहती हैं उनमें हैं—(१) नागालैण्ड, लगभग १०० फ़ीसदी ईसाई (२) असमका मिजो ज़िला, (३) उत्तर पूर्व सीमांचल, (नेफा) का तिरप ज़िला, (४) खसिया और जयन्तिया-संयुक्त पहाड़िया ज़िला जिसका कि शिलांग भी एक हिस्सा है, (५) असमकी गारो पहाड़ियाँ और (६) संयुक्त मिकिर और कछार पहाड़ियाँ। इसके अलावा अन्तर्राष्ट्रीय ईसाई शक्तियाँ बर्माके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी कुछ हिस्से इस ईसाई-राष्ट्रमें शामिल करनेका स्वप्न देखती हैं। बात यह है कि बर्माके अन्दर भी सरहदी इलाक़ोंमें वे ही आदिम जातिके लोग बसे हुए हैं जो सरहदके इस पार बसे हैं, जैसे मिजो, नागा आदि।

यदि भारतमें एक ईसाईप्रधान राज्य बन जाये, तो इसपर कोई आपत्ति नहीं की जा सकती क्योंकि हिन्दूप्रधान तथा मुस्लिम-प्रधान राज्य (जैसे कश्मीर) हो सकते हैं, तो ईसाईप्रधान राज्य भी धर्मनिरपेक्ष भारतमें हो सकता है—बशर्ते कि वह और दृष्टियोंसे सही हो। इसमें ईसाईवाला तत्त्व प्रधान नहीं है, बल्कि यह तत्त्व प्रधान है कि इनके पीछे रस्साकशी कौन कर रहा है? कौन करोड़ों रुपये इसके प्रचार और संगठनमें खर्च कर रहा है? किन राष्ट्रोंको इस प्रकारके ईसाई-राज्य बनानेमें लाभ है और कौन लोग उसका उपयोग किस रूपमें करेंगे?

● एक जीवन्त ज्वालामुखी :

ऊपर जो रेखाएँ प्रस्तुत की गयी हैं, उनसे यह स्पष्ट है कि हम एक जीवन्त ज्वालामुखी-पर बैठे हुए हैं। पर नहीं, अभी हमने ज्वालामुखीका सही और पूरा विनाशकारी रूप चित्रित नहीं किया है। जो कुछ बताया गया है, वह अब जो कुछ बताने जा रहा हूँ उसके मुक़ाबलेमें काफ़ी निम्नस्तरीय है। संसारमें दो शक्ति-गुट हैं। एक तो समाजवादी राष्ट्रोंका और एक एंग्लो-अमेरिकी गुट। यदि हम बिलकुल ही इस पचड़ेमें न पड़ें कि उनमें से कौन-सा गुट सही है और कौन-सा ग़लत, कौन-सा गुट हमारे लिए उपयोगी है और कौन सा गुट हमारे लिए उतना उपयोगी नहीं है, पर तथ्य तो यह है कि हम अपनी अर्थ-व्यवस्थाको सँभालनेके लिए और अपनी भूखे लोगोंको रोटी देनेके लिए दोनों गुटोंकी सहायता ले रहे हैं और दोनोंके प्रति हम कृतज्ञ हैं। सरकार बदल जाये तो भी और किसी बातके लिए न सही, अन्नके लिए हमें दूसरे देशोंका मुंह ताकना ही पड़ेगा। धन्यवाद है हमारे राजनेताओंको, हम ऐसी अद्भुत स्थितिमें पहुँच गये हैं। अब ये दोनों गुट बराबर यह षड्यन्त्र कर रहे हैं कि संसारमें उनका प्रभुत्व हो। इसके लिए वे सभी तरहके उपायोंका प्रयोग करते है। गुप्तचर हैं, एजेण्ट हैं, धर्म और शिक्षित कर्मचारी-वर्ग हैं, दल हैं और जाने कौन-कौन-से उपाय हैं जिनसे ये दोनों गुट केवल भारतमें ही नहीं, बल्कि सारे संसारमें अपना प्रभाव फैलाने लगे हैं। बहुत-से चिन्तकोंका यह कहना है कि हमारी अर्थ-व्यवस्था बहुत कुछ अमरीका के अधीन हो चुकी है। पर जैसा कि हमने बताया कि हम इस लेखमें कोई निर्णय नहीं देने जा रहे हैं। फिर भी इन दो गुटोंका होना ही इस बातका प्रमाण है कि हम आज जिस रूपमें हैं; सम्भव है अगले तीन दशकोंमें हम उस रूपमें न हों। यह समझना भी भूल है कि यदि इन दो गुटोंकी लड़ाई हुई, तो पूरा भारत एक गुटके क़ब्ज़ेमें ही चला जायेगा। सम्भव है, भारतके कुछ प्रान्त एक गुटमें चले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जायें और दूसरे कुछ प्रान्त दूसरे गुटमें चले जायें। इस प्रकार भारतकी एकताका प्रश्न इस दृष्टिसे देखनेपर भी सम्पूर्ण रूपसे खतरेमें पड़ा हुआ है।

हमने अभीतक केवल दो गुटोंकी बात कही, पर एक तीसरी शक्ति भी है जिसे किस गुटमें रखा जाये, यह संसारके महान् चिन्तक भी ठीकसे नहीं समझ पा रहे हैं। हमारा मतलब चीनसे है। चीन अपनेको समाजवादी देश कहता है और वह हमारा पड़ोसी है। पहले समझा जाता था कि हिमालय हमारा प्रहरी है। इसी रूपमें हम हिमालयको देखते आये हैं, पर १९६२के चीनी-आक्रमणसे यह प्रकट हो गया कि हिमालय हमारा प्रहरी नहीं है और हिमालय-के ऊपरसे होकर आसानीसे हमपर आक्रमण हो सकता है। चीनके द्वारा प्रभावित एक दल भी भारतमें मौजूद है जिसका चीनसे लगे हुए प्रान्तोंमें प्रभाव भी है। ऐसी अवस्थामें केवल दो गुटों तक ही अपने विवेचनको सीमित रखना ग़लत होगा। इस समय चीन रूसके विरुद्ध जिस प्रकार ज़हर उगल रहा है, उससे तो यही लगता है कि चीन और रूसमें कभी दोस्ती नहीं होगी, पर अयूब-जैसे लोग भी, जो चीनको काफ़ी हद तक समझते होंगे, यह मानते हैं कि अमरीका और रूसमें कोई बहुत बड़ा संघर्ष हो जाये तो सम्भव है कि चीन दूसरी करवट ले ले और रूसका साथ दे दे। यदि अयूबके इस विचारका विश्लेषण किया जाये तो उसका अर्थ यह हुआ कि चीन इस प्रकारसे रूस और अमरीकाके बीचमें सन्तुलन क़ायम रखनेवाली एक महाशक्ति है। इसमें विचारधाराका प्रश्न नहीं उठा रहा हूँ और मैं उठाकर ही क्या करूँगा जब रूस चीनको फूटी आँखों भी नहीं भाता।

• क्या भारत 'एक' है ?

यह हमारी स्थिति बहुत अजीब है, पर इसके साथ एक आन्तरिक स्थिति जोड़ लीजिए जो भाषा-सम्बन्धी विवादके कारण भारतमें उत्पन्न हुई है। जब फ़ान्सीसी राज्य-क्रान्तिके बाद नये ढंगके राष्ट्रोंकी स्थापना हुई, तब भाषा इन राष्ट्रोंका एक बहुत बड़ा उपादान रही। आमतौरसे यह माना जाता है कि एक भाषा और एक राज्य। पर भारत इस दृष्टि-से एक नहीं है। भारतमें कई बहुत बड़ी भाषाएँ हैं। स्वतन्त्रताके पहले भावुकताके युगमें सब प्रान्तोंके देशभक्त यह मानते थे कि स्वतन्त्रताके बाद हिन्दी अँगरेज़ीका स्थान ले लेगी, पर बादको जब स्वतन्त्रता मिली और हर विषयपर भावुकतासे नहीं बल्कि व्यावहारिक रूपसे यानी मछली-रोटीकी दृष्टि-से विचार होने लगा, तब यह विचार बिखरने लगा और आज स्थिति यहाँतक पहुँच गयी है कि भाषाके कारण ही स्थिति अधिक विस्फो-टक बन गयी है। पाकिस्तानमें भी यह स्थिति उत्पन्न हुई थी, पर वहाँ दो मुख्य भाषाएँ थीं, इसलिए दोनोंको राष्ट्रभाषा मानकर यह झगड़ा समाप्त कर दिया गया। पर भारतमें कई बहुत बड़ी भाषाएँ होनेके कारण यह स्थिति निरन्तर बिगड़ती ही चली गयी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और यदि इसे और स्थितियोंके साथ मिलाया जाये, तो ज्ञात होगा कि कुछ भी हो सकता है। यों तो लोग कहते हैं कि भाषा एक होनेसे एक प्रकारकी भावुकता पैदा होगी। उनकी बात इतिहाससिद्ध नहीं है। उदाहरण-स्वरूप, जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं कि अरब देशोंकी भाषा ही नहीं, धर्म भी एक है, पर वे किसी भी रूपमें एक राज्य नहीं हो सके। यहाँ तक कि इसरायलके विरुद्ध उनका सामान्य स्वार्थ होते हुए भी एक नहीं हो सके और युद्धके बाद भी उनकी स्थिति कुछ सुधरी है, ऐसा नहीं जान पड़ता। अभी-अभी फ़ान्सीसी राष्ट्रपति दिगाल कनाडा गये थे। वह कनाडाकी यात्रा करते हुए क्वेबेक प्रान्तमें गये जहाँ फ़ान्सीसी ही मुख्यतः रहते हैं। वहाँ पहलेसे ही स्वतन्त्रताका एक आन्दोलन चला था। उसे राष्ट्रपति दिगाल अन्तर्राष्ट्रीय शिष्टाचारके विरुद्ध अपना आशीर्वाद दे आये। इस प्रकार एक अँगरेज़ी भाषा होते हुए भी अमरीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, इंगलैण्ड, सब अलग-अलग राष्ट्र हैं।

ये सारी गड़बड़ियाँ बहुत यथेष्ट हैं। धर्म हमें तोड़ना चाहता है, अन्तर्राष्ट्रीय गुट हमें तोड़ना चाहते हैं, भाषाओंके कारण हमपर पागलपन सवार है, इस कारण हम ख़ुद टूटना चाहते हैं, इनके साथ आर्थिक कारण और आबादी-समस्या भी मिल गयी है जो स्वयं इतनी ख़राब समस्या है कि इसीके समाधान-में देशका सारा बजट लग जाये, तो वह थोड़ा है। कुछ लोग कह रहे हैं, सारा काम रोक दो, केवल ऑपरेशन करो, और इस धर्मान्ध जाहिल देशमें बिना ज़बर्दस्तीके कुछ न होगा। महाराष्ट्र सरकारने सही दिशामें सोचा है कि दो-तीन बच्चोंके बाद ज़बर्दस्ती ऑपरेशन करो। आज महाराष्ट्र जो सोच रहा है, सारे भारतको वही सोचना पड़ेगा।

एक और प्रश्नको लीजिए। पाँचवाँ इस्पात-कारखाना कहाँ, किस प्रान्तमें हो, इसपर दक्षिण भारतके तीन राज्योंमें बड़े झगड़े चल रहे हैं और यह झगड़ा लगभग उसी ढंगसे चल रहा है जैसे ये तीन राज्य न हों, बल्कि तीन अलग-अलग राष्ट्र हों।

अवश्य हमें जोड़नेवाली भी कुछ शक्तियाँ हैं जैसे हमारा इतिहास। पर हमने देख लिया कि इतिहासने हमें उस समय कोई सहायता नहीं दी, जब पाकिस्तान बना। वह आगे भी मदद देगा, ऐसा हमें ज्ञात नहीं होता क्योंकि अब भावुकताका युग समाप्त हो चुका है। अब सभीको रोटी-कपड़ोंके लाले पड़े हुए हैं। प्रकृति भी कुछ हमारे साथ पता नहीं कबकी दुश्मनी निकालनेपर तुली हुई है। हमारी आबादी बुरी तरह बढ़ रही है। सबसे ताज़े, आँकड़ों-के अनुसार हमारी आबादी ५१ करोड़से ऊपर जा चुकी है। आबादी बढ़नेके साथ-साथ हमारा उत्पादन नहीं बढ़ रहा है बल्कि जानकारोंका तो यह कहना है कि आर्थिक मन्दी आ चुकी है। कारखानोंमें हमारा माल सड़ रहा है। ऐसी अवस्थामें हम रामबाणके रूपमें जिस अचूक दवा यानी औद्योगीकरणका नुस्खा फड़फड़ाते रहे हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह भी अब बेकार सिद्ध हो रहा है।

काँग्रेस एक दूसरी शक्ति थी जो देशको एक किये हुए थी, यद्यपि सिद्धान्तोंकी दृष्टिसे देखा जाये तो काँग्रेसके पास कोई आधारभूत सिद्धान्त नहीं थे और जो सिद्धान्त थे उन सभीकी धज्जियाँ उड़ चुकी हैं। गान्धीजीने अध्यात्मवादका ढिंढोरा बहुत ज़ोरोंसे पीटा। पर उनका अध्यात्मवाद ऐसा रहा कि ज़रा-सी ज़रूरत पड़ते ही उस अध्यात्मवादको बालाए-ताक रखकर वह व्यावहारिक बात करने लगते थे। जैसे उनका सबसे बड़ा सिद्धान्त अहिंसाको ही लीजिए। प्रथम कश्मीर-युद्धके समय वह जीवित थे और यद्यपि उन्होंने लिखकर या बोलकर इस युद्ध-को अपना आशीर्वाद नहीं दिया, फिर भी संसद्‌के सामने दिये गये जवाहरलाल नेहरूके वक्तव्यसे हम जानते हैं कि वह उस युद्धको अपना आशीर्वाद दे चुके थे। इसी प्रकार वह यदि जीवित रहते तो और युद्धोंको भी आशीर्वाद देते, यद्यपि जब पोलैण्डपर हिटलर-का आक्रमण हुआ था, उस समय उन्होंने एक लेख लिखकर पोलैण्डवालोंको सत्याग्रहके लिए कहा था। इस दृष्टिसे देखनेपर गान्धीको बुद्ध या महावीरके साथ एक पंक्तिमें बैठाना महज़ राजनैतिक प्रचार है। उसका गुब्बारा फूटनेमें ही भलाई है।

इस प्रकारसे उन्होंने अर्थ-व्यवस्थाके बारेमें बड़े उद्योगोंके विरुद्ध, विशेषकर मशीनी उद्योगोंके विरुद्ध जो नारे दिये थे उनकी व्यर्थता कहाँ तक पहुँची है यह उनकी आत्मा आकर उन दंगे-फ़सादोंको देखती जो मैसूरमें पाँचवें इस्पात-कारखानेके लिए वहाँ-की सरकारके विरुद्ध किये गये थे, तो उनको पता लगता कि उनका दर्शन-शास्त्र कितने गहरे गया है। इसी प्रकार सामाजिक क्षेत्रमें उनके परिवार-नियोजनका सिद्धान्त भी भारत-सरकार और योजना-आयोग-द्वारा ठुकराया जा चुका है। इसके अलावा शराब-बन्दीके सम्बन्धमें क्या मत प्रचारित हो रहा है यह हमें ज्ञात है।

• प्रश्न विचारधाराका…

यह कहना ग़लत होगा कि भारत गान्धीको छोड़ रहा है, बल्कि यह कहना सही होगा कि गान्धीके पास कुछ था ही नहीं जिसे भारत लेता। मैं समझता हूँ कि जिन मामलोंमें भारतने गान्धीवादका परित्याग किया है, वह अच्छा ही किया है। इस प्रकार काँग्रेसके पास कोई विचारधारा नहीं है। नेहरूने एक विचारधारा सामने रखने-की चेष्टा की थी। गान्धीवादके प्रवाहके आगे और उससे भी बढ़कर फैले हुए भ्रष्टा-चारके कारण सारे सिद्धान्त धरे रह गये और काँग्रेसके पास यदि कोई दृष्टिकोण है, तो इतना ही है कि किसी प्रकार चुनाव जीता जाये। दूसरे शब्दोंमें, काँग्रेसके पास एक ही दृष्टिकोण है, शक्तिआरूढ़ होना। इस बार चौथे आम चुनावमें काँग्रेस मुँहकी खा चुकी है और इससे आगे भी उसकी रीढ़ सीधी होनेकी कोई विशेष सम्भावना ज्ञात नहीं होती, बशर्ते कि वह दो हिस्सोंमें बँट न जाये—एक दायें बाज़ूके साथ और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा बायें बाजूके साथ मिल जाये, पर उस हालतमें भी काँग्रेसका अन्त तो निश्चित ही है।

जहाँ तक मैं देख पा रहा हूँ, आगामी तीन दशकोंमें भारतका इस रूपमें बने रहना, जिस रूपमें आज वह है, बहुत ही असम्भव है। अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियाँ इस बीच क्या पहल करेंगी, घटनाएँ क्या रूप लेंगी, यह कहना मुश्किल है, फिर भी मैं समझता हूँ कि भारतके सामने एक आशा यह है कि यदि वह कोई ऐसी विचारधारा अपना सका जिसमें धार्मिक झगड़े, भाषाई मतभेद समाप्त हो जायें, साथ ही अब्राहम लिंकन द्वारा प्रतिपादित जनताके लिए जनता-द्वारा जनताका राज्य स्थापित हो तो एक हो सकता है, यही नहीं पाकिस्तान भी भारतके साथ मिल सकता है, क्योंकि धार्मिक भेद न रहनेपर पाकिस्तान और भारतमें कोई झगड़ा ही न रहेगा, न कश्मीरका प्रश्न रहेगा और न कोई और ऐसा प्रश्न रहेगा। देखना यह है कि ऐसी विचारधाराका भारतमें जोर हो पाता है या नहीं।

१४-डी, निज़ामुद्दीन, ईस्ट,
नयी दिल्ली-१३

Why do you worry for **STEEL ?**
CONSULT US
FOR ALL YOUR STEEL REQUIREMENTS

Gyan Trading Co.

Iron and Steel Merchants
and
General Order Suppliers

63, Sir Hariram Goenka Street,
CALCUTTA-7

Phone : OFFICE : 33-8794
RESIDENCE : 33-2761

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ २१वीं शताब्दीका स्कूप ॥ कोई आश्चर्य नहीं कि अगली शताब्दीकी ख़बर अ-ख़बर कहलाये। तेज़ीसे आगे बढ़ती दुनियाके २४ घण्टोंमें कमसे कम चार अख़बारोंकी ज़रूरत पड़ेगी। मॉर्निंग और इवनिंगके अलावा 'नाइट' और 'मिडनाइट' एडिशन भी निकलेंगे...

बेख़बर दुनियाकी ख़बरें

ओमप्रकाश शर्मा। जनवरी सन् २००० ई० का सुप्रभात चायके साथ ताज़ा समाचार-पत्रसे शुरू नहीं हुआ क्योंकि यह आदत बीसवीं शतीकी ढलती हुई जवानीमें ही ढल चुकी थी और बीसवीं शतीके अस्तसे पहले ही समाचार-पत्र सोते समय पढ़े जाने लगे हैं।

सौभाग्यका विषय है कि अब कोई भी समाचार-पत्र राष्ट्रीय स्तरका नहीं रहा और प्रदेशोंकी सीमा भी समाचार-पत्रोंके लिए बहुत बड़ी लगने लगी है। वस्तुतः विज्ञानकी प्रगतिके साथ दुनिया जितनी छोटी हुई है समाचार-पत्रोंके उत्तरदायित्व उतने ही बढ़ चुके हैं अतः नगर और ज़िलेसे बाहर समाचार-पत्रोंकी सीमा राज्य तक पहुँचना ही बढ़ी टेढ़ी खीर हो चुकी है और परिस्थितियाँ एवं वातावरण किसी राष्ट्रीय स्तरके समाचार-पत्रके अस्तित्वको इजाज़त ही नहीं देता। यद्यपि मालिक 'श्र' बिहारमें एक पत्रके मालिक हैं और बंगालमें भी; तथा बिहारमें उनका पत्र बगनको सब्ज़ियोंका सम्राट् बतलाता है किन्तु बंगालमें उन्हींके पत्रके अनुसार बैंगन दुनियाकी सबसे बुरी सब्ज़ी है। बिहारका पत्र एक विशेष प्रकारकी हिन्दीमें छपता है और बंगालका बँगलामें अतः बिहारके लोग बंगलाको और बंगालके लोग बिहारी-हिन्दीको पढ़ना पाप समझते हैं। हाँ मालिक 'श्र' को दोनों ही राज्योंसे लाभ होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देशमें किसी राष्ट्रीयपत्रके अभावका एक कारण यह भी है कि ऐसी कोई भाषा ही नहीं है कि जिसके माध्यमसे सारे देशके लोगोंसे कुछ कहा जा सके। अँगरेज़ी इतिहासकी कड़ी बन चुकी है तथा हिन्दी कतिपय राज्योंकी भाषा है—फिर उत्तर-प्रदेशमें पूर्व उत्तर प्रदेश और पश्चिम उत्तर प्रदेशकी हिन्दीमें उतना ही अन्तर है जितना कि बिहार और मध्य प्रदेशकी हिन्दीमें। उत्तर प्रदेशका कोई व्यक्ति जब मद्रास जाता है तो उसे उसी प्रकार दुभाषियेकी ज़रूरत पड़ती है जैसे कि बीसवीं शतीमें किसी मन्त्रीको अमरीकामें पड़ती थी। अख़बारोंकी हालत इन दिनों ठीक वैसी ही है जैसी कि बीसवीं शतीके मध्यमें लाउड-स्पीकरकी दुकानोंकी हुआ करती थी। राष्ट्रीय समाचार-पत्रके नामपर जो लकीर पीट भी रहे हैं उनके पढ़नेवालोंको उँगलियोंपर नहीं तो सैकड़ों तक गिना जा सकता है।

● **एक समाचार :**

एक नगरकी बीच सड़कपर एक बालक मोटरके नीचे आ गया!

अब इस ख़बरको उस नगरसे निकलनेवाले चार अख़बारोंने इस प्रकार छापा :

पहला अख़बार :

आज यहाँ एक मोटरने एक बालकको सड़कके बीचों बीच कुचलकर मार डाला। घटना इस प्रकार हुई कि एक बालक सड़कपर जा रहा था कि एक मोटर जो काफ़ी देरसे इसी ताकमें थी—आयी और उसने बालकको कुचल दिया। मोटरके मालिकपर बालककी हत्याका मुक़दमा चलाया जाना चाहिए। अगर मुक़दमा नहीं चलाया जाता है तो इसका अर्थ यह होगा कि मोटर-मालिकने रिश्वत देकर मामला हर स्तरपर दबवा दिया है।

दूसरा अख़बार :

आज यहाँ एक बालकने सड़कके बीचों बीच एक मोटरके नीचे आकर मोटरमें बैठे उसके मालिककी हत्या करनेका प्रयत्न किया। मोटर-मालिक तो बाल-बाल बच गया पर मोटर क्षतिग्रस्त हो गयी। घटना इस प्रकार हुई कि एक मोटर जैसे ही सड़कसे गुज़र रही थी कि अचानक यह बालक उसके आगे आ गया। उसका इरादा सम्भवतः यह रहा होगा कि मोटर दुर्घटनाग्रस्त हो जाये और मोटर-मालिक जानसे हाथ धो बैठे किन्तु ऐसा नहीं हो सका। बालकका षड्यन्त्र व्यर्थ गया। बालकको मोटर-मालिकके एक दुश्मनने भेजा था। अमुक नेताने तथा अमुक पार्टीने एक प्रस्ताव पास करके माँग की है कि बालकको भेजनेवाले गिरोह अथवा उसके माता-पितापर मुक़दमा चलाया जाये तथा मोटरकी क्षति-पूर्ति करवायी जाये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कमाल'-पीढ़ी (सन् २०००) : "...लेकिन मम्मी, आप लोग मुरदोंकी तरह क्यों रहे ? मोहब्बत-जैसी लिजलिजी चीज़की यादमें बना हुआ यह फूहड़ मास्क आपने सहन क्यों किया ? आय विल आस्क माई जेनरेशन टु अन डू दिस ताज..."

मुद्दे पर एक आम सभाका भी आयोजन किया गया है।

तीसरा अख़बार :

एक बालकने आज एक मोटरके नीचे आकर आत्महत्या कर ली। कुछ निहित स्वार्थी तत्व इस मामलेको तूल देकर मोटरके मालिक तथा बालकके माता-पिताको फाँसने-का प्रयत्न कर रहे हैं।

चौथा अख़बार :

आज यहाँ कुछ लोगोंने अमुक सड़कपर दिन दहाड़े एक बालककी हत्या करवा दी। कुछ लोग एक बालकको घेरते हुए सड़कपर ले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आये और तेजीसे दौड़ती हुई एक मोटरके सामने कर दिया। विश्वस्त सूत्रोंके अनुसार इस मामलेमें पुलिस भी शामिल है। फिर भी पुलिस सरगर्मीसे मामलेकी जाँच कर रही है।

इसी समाचारपर एक अखबारने जो **अग्रलेख** छापा उसका अंश यह है :

मोटरको आना ही था और बालकको मरना ही था अतः वह मर गया। होनीको कोई नहीं रोक सकता। सड़कोंपर दुर्घटनाएँ बढ़ रही हैं लेकिन यह बहुत जरूरी भी है क्योंकि यही तो हमारी प्रगतिका प्रतीक है। हर विकसित देशमें काफ़ी सड़क-दुर्घटनाएँ होती ही हैं। अगर हमें विकसित कहलाना है तो इन दुर्घटनाओंको विज्ञानकी समृद्धिका प्रसाद समझकर ग्रहण करना ही पड़ेगा। जो लोग यह कहते हैं कि अपराध बढ़ रहे हैं, वे तो कूप-मण्डूक हैं क्योंकि उन्हें यह पता ही नहीं कि अन्य पड़ोसी राज्योंमें अपराधोंकी क्या स्थिति है। वैसे इस दुर्घटनाके लिए पुलिस-विभाग बिलकुल दोषी नहीं है—विशेषज्ञोंकी भी यह रिपोर्ट है।

दूसरे प्रदेशमें : इसी समाचारको दूसरे प्रदेशके समाचार-पत्र इस प्रकार छापेंगे : अमुक राज्यमें वहाँकी सत्तारूढ़ पार्टीने एक बालकको सड़कपर मरवा दिया क्योंकि वह विरोधी पार्टीके एक कार्यकर्त्ताका लड़का था। राज्यमें अराजकताका ही बोलबाला है क्योंकि वहाँ अमुक दलका ही शासन है।

• कुछ छुटपुट समाचार :

एक :

सेशन-कोर्टने आज यहाँ बहुचर्चित 'दाँत-केस' में श्रीमती अमुकाको छह माहके सश्रम कारा-वासकी सज़ा दे दी। विश्वस्त सूत्रोंके अनु-सार श्रीमती अमुका हाई-कोर्टमें अपील करेंगी।

विद्वान् न्यायाधीशने अपने फ़ैसलेमें लिखा है कि : "श्रीमती अमुकाने इरादतन दालमें-से कंकड़ नहीं अलग किया ताकि उसके पतिका दाँत टूट जाये। मुक़दमेमें हुए बयानात, गवाहियों एवं जिरहसे यह साबित हो गया कि श्रीमती अमुका अपराधी हैं तथा उन्हें छह मासका सश्रम कारावास दिया जाता है।"

उल्लेखनीय है कि विगत दिनों खाना खाते समय दालमें कंकड़ आ जानेसे श्री अमुकका दाँत टूट गया था और उन्होंने इस दुर्घटनाके लिए अपनी पत्नीको दोषी ठहराया था तथा उसपर मुक़दमा दायर कर दिया था। वादीके वकीलने कहा था कि श्रीमती अमुकाकी यह ज़िम्मेदारी थी कि वह दालमें कंकड़ नहीं आने देतीं लेकिन चूँकि वे अपने पतिका दाँत तुड़वाना चाहती थीं अतः उन्होंने दालमें-से कंकड़ नहीं चुना।

दो :

चमचा-पार्टीकी सरकारके पतनके पश्चात् चमची-पार्टीने सत्तारूढ़ होते ही सभी क्षेत्रों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनतन्त्रके चार स्तम्भ—संसद्, कार्यपालिका, न्यायपालिका और राजनीतिक दलके पश्चात् पाँचवें स्तम्भ समाचार-पत्रकी आज जो स्थिति है वह न तो शेष चार स्तम्भोंमें-से बेहतर है और न ही बदतर। बहरहाल आज जनतन्त्रके चारों स्तम्भोंकी जो स्थिति एवं गति है वह २१वीं शतीमें कहाँ पहुँच जायेगी—इसका अनुमान तबके समाचार-पत्र-जगत्से ही लगाया जा सकता है क्योंकि समाचार-पत्र-जगत्को ही समाज एवं जनतन्त्रका दर्पण होनेका श्रेय प्राप्त है। तो आइए, आपको २१वीं शताब्दी-की देहलीजपर ले चलें…

सरगर्मीसे कार्य शुरू कर दिया है। आज चमचा-पार्टीके मुख-पत्र 'चमचा'के प्रधान सम्पादकको गिरफ़्तार कर लिया गया। उनपर अपहरण, बलात्कार तथा हत्याओंके कई मामले हैं।

तीन :

एक सरकारी विज्ञप्तिके अनुसार आज घसीटू-की मिल सरकारने अपने हाथमें ले ली क्योंकि वे अपने धन-साधनों और अखबारके द्वारा सत्तारूढ़ पार्टीका विरोध कर रहे थे। साथ ही चपेटूमलकी मिल सरकारी नियन्त्रणसे मुक्त कर दी गयी है क्योंकि उन्होंने सत्तारूढ़ पार्टीको चन्दा दिया था और इसी वजहसे गत भ्रष्ट सरकारने उनकी मिल अपने हाथमें ले ली थी।

चार :

चपरासी श्री चम्पू मास्टरको आज राज्यपाल-ने 'वीर-पुरुष'की उपाधिसे सम्मानित किया। एक विशेष समारोहमें मुख्य मन्त्रीने श्री चम्पू-की सेवाओंका उल्लेख करते हुए कहा कि श्री चम्पूने बड़ी बहादुरी, साहस और वफ़ादारीके साथ एक विधायकका अपहरण करके उसे हमें सौंपा था जिसकी बदौलत हम गत भ्रष्ट सरकारको च्युत करके सत्ता-रूढ़ हो सके अतः इनका जितना सम्मान किया जाये उतना थोड़ा है।

पाँच :

पुलिस-स्टेशनके रोज़नामचेके अनुसार आज पुलिसने १७ व्यक्तियोंको रँगे हाथों पकड़ा इनमें चार जेबकतरे, ३ उठाईगीरे, २ नकब-जन, ५ चोर थे और बाक़ी अपने आपको पत्रकार बतलाते हैं।

● एक पत्रकारके मुँहसे :

समझमें नहीं आता कि मेरे पिताजीको पत्र-कारिता क्यों पसन्द थी और उन्हें पसन्द भी थी तो रहती पर मुझे इस लाइनमें डालकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हें क्या मिल गया। वे तो अब कहीं स्वर्गमें चैनकी बंशी बजा रहे होंगे लेकिन मेरा तो जीवन ही नरक बना हुआ है। मेरे पत्रकार पिताजी निहायत ही अदूरदर्शी थे। उन्हें जीवनकालमें ही इस धन्धेके भविष्यका अन्दाज़ लगा लेना चाहिए था और क़ुलीगीरी को ही इस धन्धेसे प्राथमिकता वे देते तो कहीं अच्छा होता।

वे खुद ही तो कहते थे कि इस देशकी स्वाधीनताके लिए किये गये संघर्ष (मुझे विश्वास नहीं होता कि इस देशके लोग कभी अपनी आज़ादीके लिए संघर्ष भी कर सके होंगे) के दौरान अगर उनके पिताजी अर्थात् मेरे दादा किसी विषयपर चार लाइनें भी लिख देते थे तो तहलका मच जाता था। उनके ज़िला-केन्द्रसे लेकर प्रान्त और कभी-कभी तो केन्द्रका तत्कालीन अँगरेज़-शासक भी उन चार लाइनोंसे काँप जाता था। मेरे दादाने मेरे पिताजीको पत्रकार बना दिया तो अच्छा किया लेकिन पिताजीने मुझे यह विरासत क्या समझकर दी जब कि उनके जीवन-कालमें ही आज़ादी मिले जब केवल बीस वर्ष ही हुए थे तो वे कॉलमके कॉलम रँगते थे लेकिन किसीके कानपर जूँ तक नहीं रेंगती थी। फिर उन्होंने मेरे लिए कोई दौलत भी तो नहीं छोड़ी कि कोई उद्योग चलाता तथा अख़बार भी निकालता। सरकारें बनवाता और बिगड़वाता। अब सिर्फ़ नौकरी करता हूँ और आज एक अख़बारमें नौकरी करके लिखता हूँ कि तारे रातमें दिखलाई देते हैं तो दूसरे दिन दूसरे अख़बारमें नौकरी करके लिखता हूँ कि जब तारे निकलते हैं तो वह अक़्लमन्दोंका दिन होता है।

वैसे तो आज भी बहुत-से मेरे साथी-पत्रकारोंके लिए धन अथवा किसी भी चीज़-की कमी नहीं फिर भी मेरी दरिद्रता शायद उसी वजहसे है जिस वजहसे कि स्वाधीनता-संग्राम लड़नेके बावजूद मेरे दादा मन्त्री न बन सके थे और भूखसे मरे थे। समयके साथ आवाज़ न मिलाकर बदलती हुई सरकारों और समाजके साथ न बदलकर पिताजी जीवन-भर दरिद्र रहे और इलाजके अभावमें मर गये तथा पत्रकारिताके साथ दरिद्रता भी मुझे विरासतमें दे गये। लेकिन मैं अपने बेटेसे कहकर जाऊँगा कि भले ही क़ुलीगीरी करना पर पत्रकार मत बनना।

समझमें नहीं आता कि बीसवीं सदीका एक रोग नयी कविता, नयी कहानी, अ-कविता और अ-कहानी, आदि न जाने कितनी सीढ़ियाँ पार करके आज 'अ-खबर' तक आ पहुँचा है और मुझे डर है कि समाचार और खबरकी दुनियासे अपने परिवारका परम्परागत पीछा छुड़ाते ही अ-ख़बर और अ-समाचार अपने चंगुलमें मेरी नयी पीढ़ीको न फाँस ले।

दैनिक नवज्योति,
केसरगंज, अजमेर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ छपते-छपते ॥ यह सोच लेना कहीं आसान है कि ऐसा होगा लेकिन यह सोचना कहीं मुश्किल है कि ऐसा हो सकता है। हो सकनेकी सम्भावनामें हमें वैज्ञानिक रीतिसे स्वप्न देखना होता है। रेडिशेवके अनुसार पाँव ज़मीनपर, आँखें समयपर और मन मुक्तयानकी तरह हो तो सही सपना देखना सम्भव है।...

२000 के लिए सम्भावित ख़बरें

प्रेमानन्द चन्दोला / **भूख और भोजन :** भारी संख्यामें आबादी बढ़ जानेके कारण पर्याप्त भोजनके लिए भविष्यमें प्राणियों व पौधोंके 'जीनी'-(पैतृकतासे सम्बद्ध) सुधार, तथा भोजनके रासायनिक व जैविक संश्लेषणकी आवश्यकता होगी।

समुद्रकी सतहपर तिरते रहनेवाले छोटे जीवों या प्लक्कों (प्लैंक्टन) तथा छोटी-छोटी मछलियोंसे सुपाच्य भोजन तैयार किया जाने लगेगा।

जलीय काइयों (शैवाल) तथा पत्ती आदि पदार्थोंसे प्रोटीन आदि भोजन-पदार्थ प्राप्त करना पेटकी समस्याके लिए अनिवार्य हो जायेगा।

समस्याओंमें भोजनकी प्रमुख समस्याके सन्दर्भमें काफ़ी परिवर्तन आ जायेंगे। भोजनकी आदतोंमें काफ़ी परिवर्तन और सुधार आ जायेगा। संपूरक खाद्य पदार्थोंका भरपूर प्रयोग होने लगेगा। आधुनिक सागर-मन्थनके फलस्वरूप प्लैंक्टन, मछलियों तथा अन्य जल-जीवोंके आटेसे रोटी, डबल रोटी, बिस्कुट, केक आदिका प्रचलन विशेष बात नहीं रहेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• आबादीका बैलून :

संयुक्त राष्ट्र-संघके सांख्यिकीविदोंका अनुमान है कि आबादी बढ़नेकी अगर यही रफ़्तार रही तो दुनियाकी आबादी २००० ई० तक ७ अरब ४० करोड़के लगभग हो जायेगी।

• वैज्ञानिक कैलेण्डर :

हाल ही में संयुक्त राज्य अमेरिकामें आयोजित संगोष्ठी-द्वारा आगामी वैज्ञानिक सफलताओं-का कैलेण्डर निम्नलिखित प्रकारसे बनाया गया है :

१९८२ : मानव शरीरके लिए कृत्रिम प्लास्टिक और इलेक्ट्रोनीय अंग।

१९८३ : व्यक्तित्वमें परिवर्तन लानेवाली औषधियाँ।

१९८९ : प्रयोगशालामें आदि जीवोंका पुनः सृजन। सागर-मन्थनका व्यापारिक स्तरपर आ जाना।

१९९० : संश्लेषित प्रोटीन-खाद्यका व्यापारिक उत्पादन।

२००० : विश्व प्रक्षेप्य परिवहन (बैलिस्टिक ट्रान्सपोर्ट) व्यापारिक स्तरपर।

• स्वर्ण जयन्ती :

• भारतीय स्वतन्त्रताके रजत और स्वर्ण जयन्ती समारोह धूमधामसे मनाये जायेंगे।

• सस्ते ज़मानेके महँगे लोग नहीं रहेंगे।

• भारतमें अधिक जनसंख्या स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बाद जन्मे लोगोंकी होगी। स्वतन्त्रता प्राप्तिके प्रथम वर्षमें जन्मे बच्चे अधेड़ाव[illegible] रहेंगे।

• विलक्षण भविष्य :

असफलताका अर्थ होगा—भयंकर य[illegible] और सफलताका अर्थ—भयंकर था[illegible] भयानक खतरे हैं परमाणु-युद्ध तथा जनसं[illegible] के गुब्बारेका विस्फोट, और आनन्द है वि[illegible] प्रगतिकी उपादेयता।

• वैज्ञानिक पूर्वानुमान :

यदि इसी तेज़ीसे परमाणु-आयुधोंका प्र[illegible] जारी रहा तो अनेक विकासशील [illegible] जानेवाले देश परमाणु-बम बनाने [illegible] क्षमता अर्जित कर लेंगे, और सम्भव[illegible] अनेक देश बना भी डालें।

विद्युत्की प्राप्ति परमाणु-बिजलीघ[illegible] होगी। परमाणु-संगलन (फ़्यूज़न) की [illegible] से विद्युत् उत्पन्न करनेके प्रयत्न किये [illegible] और विभिन्न ऊर्जा (शक्ति) स्रोतोंका वि[illegible] होगा। हो सकता है कि आकारमें [illegible] संगलन-इंजनोंका विकास कर लिया [illegible] जिन्हें कम खर्चपर चलाया जा सकेगा। [illegible] तरह ईंधनकी समस्या हल हो जा[illegible] सूर्यके तापको विद्युत्में परिवर्तित करने[illegible] पम्प (जिनमें तापायनिक और ताप-[illegible] जेनेरेटरोंका प्रयोग होता है) सिंचाई [illegible] के लिए उपयोगमें लाये जाने लगें—यह [illegible] सम्भव है। सूर्य-ऊर्जाका काफ़ी [illegible] उपयोग होने लगेगा।

गैसीय ईंधन-द्वारा चालित 'ईंधन[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
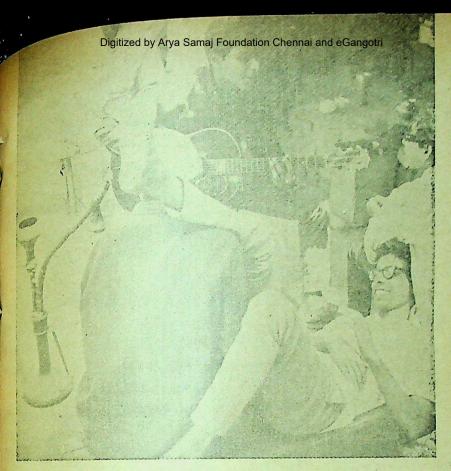
'कमाल'-पीढ़ी (सन् २०००) : "यार क्या तुम कल्पना भी कर सकते हो कि हमारे डैडी-मम्मी अकथा और अकविता-जैसी चीज़ें लिखते थे और अपने-आपको तीसमारखाँ समझते थे। उठाना ज़रा हुक़्क़ा.... ।

जेबी रेडियो और अन्य छोटे यन्त्रोंको चलाय-मान करेंगे। उत्तरोत्तर शक्तिशाली सेल-निर्माणसे परिवहन और संचार-साधनोंपर अपरिमित प्रभाव पड़ेगा। 'लेसर' आदि प्रकाश-उत्पादनके स्रोत भी सामने आयेंगे।

संगणकों (कम्प्यूटरों) का प्रचलन काफ़ी संख्यामें होने लगेगा। इनके अतिरिक्त हमारे अनेक कार्य स्वचालित मशीनों-द्वारा सम्पन्न होंगे, जैसे कि टेलीफ़ोन-केन्द्रोंमें मशीनों-द्वारा सन्देश-संग्रहणके पश्चात् बारी-बारीसे उनका सम्प्रेषण और एक भाषा या लिपिसे दूसरी भाषा या लिपिमें अनुवाद-का रूपान्तरण। भारतके सभी (प्रमुख) शहरोंमें टेलीफ़ोनके 'डायल-सिस्टम'का जाल बिछ जायेगा।

यह भी अनुमानित है कि चन्द्रमापर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक स्थायी शिविर स्थापित हो चुका होगा । पृथ्वी और विभिन्न ग्रहों (चन्द्रमा, शुक्र, मंगल)के बीच परस्पर रॉकेट-सेवा शुरू हो जायेगी ।

मशीनोंकी बहुलतासे मानवकी जीवन-शैली ही बदल जायेगी । पढ़ाई-लिखाई ऊँचे स्तरकी रहेगी और विषय भी अधिक पढ़ाये जायेंगे । दो-तिहाई जिन्दगी पढ़ाईमें ही बीत जायेगी ।

रासायनिक और विद्युत् ट्रैंक्विलाइजरोंका प्रयोग बढ़ जायेगा । आदमी बाहरसे शान्त बना हुआ लेकिन अन्दरसे तना हुआ रहेगा ।

• फ़ैशन :

भारतमें 'मिनि साड़ी' और 'मिनि-चोली' (कंचुकी)का बहुत रिवाज़ हो जायेगा ।

• मनोरंजन :

प्रत्येक शहरमें ७० मि०मि० वाले सिनेमा-हॉल आम बात हो जायेगी ।

नयी कहानी, नयी कविता तथा अकहानी, अकविताकी तरह नयी फ़िल्मों, अफ़िल्मोंका खूब प्रचलन रहेगा ।

सिनेमाके सन्दर्भमें अनेक अचरज सामने आयेंगे । सिनेमाके दृश्य दर्शककी इन्द्रियोंको भौतिक रूपसे छूनेका प्रयास करेंगे । उदाहरण-के लिए, अगर परदेपर गुलाबका फूल आयेगा तो सिनेमा-हॉलमें गुलाबकी खुशबू महक उठेगी । इसी तरह अगर एक पात्र दूसरेको थप्पड़ मारेगा तो दर्शकको लगेगा कि उसी-को थप्पड़ मारा गया है, आदि-आदि ।

• मसीहा :

'क्रिस्टल-बॉल'वाली भविष्यवाणीके अनु-सार अवतार या मसीहा जन्म ले चुका है, इसलिए वह प्रकट होगा ।

• पृथ्वीका तापमान :

मिशीगन स्टेट युनिवर्सिटीके प्रोफ़े-मेयोनार्ड मिलरने ग्लेशियरोंके अध्ययन-आधारपर कहा है कि पृथ्वीके अधिकां-भागमें आजकी अपेक्षा मौसम अधिक ठं-और गीला (नम) रहेगा । बर्लिनकी युनिवर्सिटीके आँकड़ोंके अनुसार दुनियाका तापमान १९६४-६५ से एक या दो डिग्री नीचे पहले ही गिर चुका है ।

• विज्ञानके बढ़ते चरण :

ब्रिटेन, स्वीडन और युरॅपके अन्य समुद्रतटी देशोंके वैज्ञानिकों-द्वारा यह सोचा जा रहा है कि लाइट हाउस या प्रकाश-स्तम्भोंके लिए परमाणु बैटरियोंका उपयोग किया जायेगा ।

सूती कपड़ोंको रसायनों और फिर कि-किरणसे प्रभावित करके नये-नये प्रकारके वस्त्र सामने आयेंगे ।

इस बातकी सम्भावना है कि शताब्दी के अन्त तक मानव-भ्रूणको कृत्रिम रूपसे 'उगा' लिया जा सकेगा । इस प्रकार यदि आदाताओंको मान्य होगा तो परखनलीमें गर्भसे लेकर मनचाहे स्त्री या पुरुष भ्रू-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मातृ-गर्भमें रोपे जा सकेंगे।

• काले-गोरेका प्रश्न :

अमरीकामें गोरे-काले या काले-गोरेके मिश्र विवाह काफ़ी संख्यामें होने लगेंगे।

यह भी हो सकता है कि अमरीकाका राष्ट्रपति कोई नीग्रो हो।

• जीनियागरी :

रसायन-विज्ञानकी शाखा कीमियागरी (एलकेमी) की तरह जीवविज्ञानकी शाखा 'जीनियागरी' (एलजेनी) है। यह जीनियागरी 'जीनों'की कारीगरी है। ये जीन आनुवंशिकता या पैतृक गुणोंसे सम्बद्ध मूल पदार्थ या कुंजियाँ हैं, जो कोशिका-केन्द्रकोंके गुणसूत्रों (क्रोमोसोम) में विन्यस्त होते हैं। इनमें विविध परिवर्तनोंके उत्प्रेरण-के फलस्वरूप विभिन्न प्रकारके जीव व नस्लें उत्पन्न करना ही जीनियागरी है। इस बढ़ते विज्ञानके फलस्वरूप इस दिशामें प्राणियों व पौधोंकी कायापलटमें क्रान्तिकी सम्भावना है।

• विकिरण, हमारा शरीर और वातावरण :

नाभिकीय आयुधों और बम-परीक्षणोंके फलस्वरूप विकिरण (रेडिएशन)से हमारे शरीरमें सीजियम १३७ और स्ट्रोंशियम ९० नामक मुख्य रेडियो ऐक्टिव तत्त्व तथा वायु व भूमिमें बेरियम, लैन्थनेम, नियोडिमियम, रयेनियम और यूरेनियम परमाणुके अन्य आइसोटोप उत्तरोत्तर काफ़ी मात्रामें जमा होते जायेंगे। इनसे शरीरमें संदूषण बढ़ता जायेगा और इस कारण रक्त व अस्थि-कैंसर आदि अनेक रोग शरीरमें घर करते जायेंगे। आनुवंशिकताके मूल पदार्थों या 'जीनों' पर इनका काफ़ी गहरा प्रभाव पड़ता चला जायेगा, जो कि ऋणात्मक रहेगा।

• साहित्यका पूर्वाभास :

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदीके अनुसार—"संवेदनशील चित्तमें सन्त्रासके स्थानपर आस्था, अजनबीपनके बदले प्रेम, और आशंकाकी जगह विश्वासकी तरंगें हिलोरें लेंगी। संचित विक्षोभ कुछ तोड़-फोड़कर नयी आस्थाकी संजीवनीको अपना स्थान देगा। साहित्यमें अपूर्व शक्ति आयेगी। पिछलग्गूपनकी प्रवृत्तिके स्थानपर साहित्यको नेतृत्व प्रदान करनेकी क्षमता आयेगी।

साहित्य स्वस्थ होगा—अर्थात् देशके भीतरी जनजीवनकी उगती हुई आकांक्षाओं-के साथ क़दम मिलाता हुआ आगे बढ़ेगा। रचनात्मक साहित्य जनजीवनके सम्पर्कमें अधिकाधिक आयेगा और जनजीवनकी चरितार्थताकी खोजमें अधिकाधिक संलग्न होगा।"

• भावी पंखयुक्त परिवहन-यान :

भविष्यमें सामान्य परिवहनके लिए नये प्रकारके तीव्र गति और अधिक क्षमतावाले हवाई यान उड़ा करेंगे, जिनमें मुख्य होंगे—होवरक्राफ़्ट, हेलीटैक्सी या हेलीकॉप्टर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीटीओएल (वर्टिकल टेक ऑफ एण्ड लैण्डिग), एयरबस, जम्बो जेट (७४७), लॉकहीड (एल–५०) सुपरसोनिक ट्युपोलेव (टीयू–१४४), बी० ए० सी० सुड कॉनकोर्ड, हाइपरसोनिक रैमजेट, स्क्रैमजेट, प्रक्षेप्य यान आदि। इनमें कुछ पानीकी सतहपर और कुछ ऊर्ध्व प्रकारसे उड़नेवाले अन्तरिक्ष उत्थापन-यान (लिफ्टिंग वेहिकल) होंगे।

• चलते-फिरते शहर :

मॉस्कोके वास्तुकला-विशेषज्ञोंने रूसकी राजधानीके एक ज़िलेका २००० ई० वाला बड़ा विलक्षण खाका खींचा है। इसके अनुसार मकानोंका ऐसा जटिल ढाँचा तैयार होगा, जो बड़ी नीवोंपर स्थापित और आकाशकी ओर मुँह बाये हुए तथा परस्पर काटते हुए शंकुओंके रूपमें होगा। इसके पीछे आधारभूत सिद्धान्त है—कमसे कम स्थानका अधिक से अधिक उपयोग।

स्थान-विशेषके निवासियोंकी इच्छाके अनुसार इस नये डिज़ायनवाले सारे क्वार्टर एक जगहसे दूसरी जगहपर बड़े मज़ेमें ले जाये जा सकेंगे और विभिन्न शहरोंमें आबादीको भी नियन्त्रित किया जा सकेगा। ऐसे चलते-फिरते एक शहरमें क़रीब १० करोड़ निवासी बसेंगे। ■■

२१, निकल्सन स्क्वेयर,
नयी दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हनुमान वनस्पति से

कम खर्च में भोजन तैयार करिये

यह खाना बनाने में कम व्यय होता है

इससे तैयार किया हुआ भोजन एव
मिठाइयां देर तक स्वादिष्ट रहती हैं।

यह दानेदार व बिल्कुल सफेद है।
यह स्वास्थ्यपूर्ण ढंग से ऐसें
टिनो में पैक किया
जाता है जो प्रयोग के
बाद दूसरे कामों में
आसानी से इस्तेमाल
किये जा सकें।

निर्माता—
रोहतास
इन्डस्ट्रीज
लिमिटेड
डालमियानगर
(बिहार)

IPC/HV-531

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ घड़ीबद्ध जीवन ॥ वैसे ही क़लम हाथमें लेकर बैठो और सोचते जाओ कि क्या-क्या हुआ है और क्या-क्या होता जा रहा है तो बीते-अनबीतेकी एक तसवीर बन ही जाती है। शायद इतिहास भी तसवीरें बनाता है लेकिन वह समयपर लिखता है। लिखते हम भी हैं, लेकिन पानी पर...............

'समय' : गत-अनागत

प्रभाकर माचवे/नेपोलियनने सेण्ट हेलेनामें फ्रेडरिख दि ग्रेटकी ईनाम दी हुई घड़ीको अपनी प्रेयसी जोज़ेफ़ीनकी एक लटसे बाँध रखी थी। और उस अज्ञातवासमें अपनी डायरीमें लिखा : 'मैंने कालको अपने प्रणयसे बाँध रखा है।'

कालको बाँधनेकी कोशिशें नक्षत्रोंकी नाप करनेवाले असुरियोंसे लगाकर आइन्सटाईन तक बहुतोंने की। पर वह अ-काल तत्त्व है। अत्यन्त सापेक्ष। मनुष्य हमेशा समझता रहा कि वह कब घड़ियोंसे बँधा है। घड़ियाँ हमेशा उसपर खिलखिलाती रहीं।

फ़ायबर्ग (पश्चिम जर्मनी) में बराबर ग्यारह बजे रोज़ सवेरे उस बड़े चौकमें एक गिरजाघरकी घड़ी इस तरह पाँच मिनिट तक तमाशा दिखाती है कि हर घण्टेकी चोटके साथ-साथ एक-एक बाजेवाला सामने आता है। फिर नाचनेवाले जोड़े कठपुतली आते हैं। राजपुत्र सबका मुजरा लेते हैं। पाँच-दस मिनिट तक यह खेल चलता रहता है। फिर सब पात्र उस शिखरमें लुप्त हो जाते हैं। यह सैकड़ों वर्षोंसे अनवरत चल रहा है और उसे देखने चौकमें पूरी भीड़ जमा हो जाती है।

अखण्डता-अनवरतताका ऐसा मोह मनुष्यको है कि आगरेके क़िलेमें 'गाइड' कहेगा—"यहाँ जी, ऐसा दिया जलता था कि बराबर जलता ही रहता था। अँगरेज़ोंने उसके गुरको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाननेकी कोशिश की। खोला तो ज्योति गायब हो गयी। अब वह चिराग़ कहाँ से आयेगा और हमामका पानी कैसे खौलेगा? गयी जी, वह विद्या उन्हीं पुराने बुजुर्गोंके साथ गयी!"

एक क्षणको अनन्त-कालतक यों विजड़ित बनाये रखनेकी मनुष्यकी यह निरन्तर संघर्ष-मयता—इसीमें कितने सैकड़ों-हजारों-लाखों क्षण बीतते चले जाते हैं!

■

इतिहासकी गतिमें कोई विवेकमय एकसूत्रता देखने-खोजनेकी मनुष्यकी सारी चिन्तामें-से इतिहास-शास्त्र निकला। हेगेलका 'इतिहास का दर्शन'। पर कई घटनाएँ या दुर्घटनाएँ ऐसी हो जाती हैं कि विवेक है कि कुण्ठित है।

एक सदीके तेईस वर्षोंके भीतर दो-दो महायुद्ध! यह अजीब ज़लज़ले-जैसे तानाशाह! ये मुसोलिनी और हिटलर, स्तालिन और माओ—और भी कई नाम हो सकते हैं। यह सब क्या है? क्या इनके पीछे कोई सुसूत्रता है?

एक काग़ज़का टुकड़ा मेरे पास तैरता हुआ चला आता है। अरे, यह तो कोई पत्र है! सौ सालसे भी पुराना। पढ़ूँ?

....(कार्ल मार्क्सका ऐन्गेल्सको पत्र)

"लन्दन, जून २, १८५३

यहूदियों और अरबोंके बारेमें तुम्हारी चिट्ठीने मुझमें दिलचस्पी पैदा की। मैं यों ही सोचता हूँ कि :

१—जबसे इतिहास शुरू हुआ तबसे [illegible] पूर्वी प्रजातियोंमें एक तरहकी [illegible] सम्बन्ध-दृष्टि देखी जा सकती है। कुछ [illegible] बसते जाते हैं और कुछ अपनी घुमक्कड़ी हमेशा जारी रखते हैं।

२—मुहम्मदके समय युरॅपसे एशिया [illegible] व्यापार-मार्ग बहुत कुछ सुधर चुके थे [illegible] अरब-राष्ट्रोंके नगर, जिन्होंने भारतके [illegible] व्यापार आदिमें बहुत भाग लिया [illegible] वे व्यापारी दृष्टिसे गिरावटकी हालतमें [illegible] इससे भी काफ़ी प्रेरणा मिली।

३—जहाँतक धर्मका प्रश्न है, सारा [illegible] एक सामान्य और इसीलिए सहज [illegible] होनेवाली स्थितिमें आ जाता है : सारे पू[illegible] इतिहास धर्मोंके इतिहास-जैसा क्यों दि[illegible] देता है?"

आगे उस चिट्ठीमें मार्क्सने लिखा : "फ्रांस्वा बर्नियरका वर्णन पढ़ो। [illegible] औरंगज़ेबका नौ वर्ष तक चिकित्सक [illegible] कश्मीरमें वह महान् मुग़ल कैसे ४००,[illegible] आदमियोंकी फ़ौज ले गया? यह [illegible] कहाँ से?"

■

और एक काग़ज़का पुर्ज़ा मेरे पास [illegible] हुआ आ रहा है : 'लन्दन टाइम्स' का [illegible] अगस्तका रविवासरीय विशेष संस्करण—[illegible] दिनोंके युद्धके बाद येरूशेलम। इसमें [illegible] है कि यहूदी जो बहुत कट्टरपन्थी थे, [illegible] नहीं कटाते थे। "जो भगवान्ने दि[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे हम कैसे काट सकते हैं?"

बालोंमें जादू रहता है। कुन्तलीनका विज्ञापन नहीं, सैम्सन डलाइलाका क़िस्सा नहीं, कवि पन्तकी वीणा-ग्रन्थि नहीं कि 'तुम्हारा ही स्वर्गिक उपहार, धरा है सिर पर मैंने देवि!', 'बाल' और काल। 'काल भी सच, अकाल भी सच!'

■

मैं घड़ियोंकी दुकानके सामने खड़ा हूँ, ज़ूरिकमें। मैं एक कुक्कू-क्लॉक ख़रीदने जा रहा हूँ— सस्ती हो, हलकी हो और हवाई जहाज़से आरामसे ले जाऊँगा। बच्चे इसे देखेंगे और ख़ुश होंगे। यह कोयल असमय बाहर निकलती रहेगी, गाती रहेगी। 'एक भारतीय आत्मा'को 'कोकिल बोलो तो....' नहीं लिखना होगा। उनसे पहले गडकरीने 'अवेळी ओरडणाऱ्या कोकिळेप्रत' कविता

चित्र : भाऊ समर्थ

गत ''आकाश-कुसुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मराठीमें लिखी थी। समय-असमय-पशु-पक्षियों के लिए होता है। वसन्तमें 'पुंस्कोकिल' हैं, पावसमें दादुर-पपीहे-मोर हैं, शिशिरमें भी कुछ पक्षी बोलते होंगे—मनुष्य ही है कि उसे समय-असमयका कोई विचार नहीं होता। हर समय वह समयकी चिन्ता करता रहता है। उसके लिए शकुन-शास्त्र हैं—कुसमयके विचार आँक रखे हैं। पर वह नहीं मानता।

■

सारी कला कालातीत होनेका यत्न है। जबकि अमरता एक निरा अपवाद होता है। क्या अधिक समय तक याद किये जाने-वाली सभी साहित्य-कृतियाँ और कला-कृतियाँ अमर होती हैं ?

■

जीवैषणाका एक भाग है—गतको झुठलाते जाना, अनागतकी प्रतीक्षा करना। आशा-पर जीना।

विवेक यह बताता है कि सारा गत व्यर्थ नहीं होता। वह स्मृति बनकर मनकी भीतरी परतोंमें कहीं चिपक जाता है।

समाजका भी एक अचेतन मानस होता है और वह बुरी तरह उभरता है: कभी गो-हत्या विरोधी आन्दोलनके रूपमें, कभी अँगरेज़ी-विरोधके रूपमें, कभी समय काटनेके विविध साधनोंसे ऊबके रूपमें।

प्रतिक्रिया अक्रियाका ही एक रूप है। जिस दिन गति इतनी तीव्र हो जायेगी कि वह अ-गतिका रूप ले लेगी—तो क्या होगा ?

■

२००० ईसवी तक 'मृत्युंजयी' आदि ... केवल अध्यात्म-रहस्यवादकी दुनियामें ... नहीं रहे—सच हो गये। और मौतका ... दिन मुअय्यन है वाली बात तब कोई ... संवेदना ही नहीं जगाती थी। उलटे ... इन्तज़ार करते थे कि मौत कब ... कैसे आयेगी।

युद्ध समाप्त हो गये थे—चूँकि ... पास जो कुछ युद्ध-सामग्री थी वह सड़ ... थी—या ज़ाया हो गयी थी। फ़ौजी ... एक अनैतिहासिक वस्तु बन गयी थी। ... आजकल हम चन्द्रगुप्त या अकबरके ज़माने ... फ़ौजी पोशाकको केवल म्यूज़ियमके ... सुरक्षित रखते हैं। आखिर इफ़रात होने ... अणु-शक्तिके शान्तिपूर्ण कार्योंमें लगानेपर ... बहुत अधिक मात्रामें भौतिक साम... उत्पादन बढ़नेपर—ईर्ष्या द्वेष, परस... संघर्षका कोई कारण ही नहीं बचा ... आपाधापी किसलिए ?

ज़मीनके लिए—इस पृथ्वी गोलक... ज़मीनमें क्या धरा है ? चाँद, मंगल ... दूसरे ख-पिण्डोंपर बस्ती हो गयी थी। ... इसी तरह चर्चा करते थे कि "हाँ ... परसों मंगलसे आये। कल शनिपर जा ... हैं।" जैसे आजकल हम कहते हैं: "... मास्कोसे आये। परसों न्यूयॉर्क जा रहे हैं।"

ज़रके लिए ? अर्थशास्त्रीके ... ही बदल गये थे। रुपये-पैसे-टके-कौड़ि... सारी मुद्राएँ अब मूल्यहीन हो गयी ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोनेसे ज़्यादह प्लैटिनम और उससे ज़्यादह युरेनियमके बाद ऐसा एक नया द्रव्य निकला था, जिससे अणु-शक्ति संचलित होती थी—और वह इतना भयानक था कि किसी एक राष्ट्र या राष्ट्रमण्डलके साथ वह रह ही नहीं सकता था। साझा मिल्कियत विश्वकी उसपर हो गयी थी। सो बैंकें ऐसी ही हो गयी थीं, जैसे आजकल हम ज़मीनमें गड़े हुए ख़ज़ानोंकी बातें बच्चोंकी कहानियोंमें पढ़ते हैं। पैसेकी शक्ति बदलकर विज्ञानके हाथोंमें चली गयी थी।

जोरू? यह शब्द भी काफ़ी पुराना हो चुका था। स्त्री-पुरुष-भेद समाप्त हो गये थे। एक नया सेक्सहीन समाज था, जिसकी कल्पना बर्नार्डशाने 'बैंक टु मेथुसेलाह'में की है—किसी स्त्री-विशेषपर सत्ता या अधिकार जमानेका कोई कारण किसी पुरुषको नहीं लगता था। और वही बात पुरुषके विषयमें सही थी। सन्तति स्त्री-पुरुष समागमके बिना सम्भव थी। सो यह सब झगड़े किसलिए?

■

सबसे बुरा किसीका हुआ तो ज्योतिषियोंका। २००० में जब जनसाधारणको अनागतके लिए कोई उत्सुकता ही नहीं बची रही तो हाथ बँचवाये कौन, किसका, किसलिए? ज्योतिष-शास्त्र केवल शुग़ल बनकर रह गया! कुछ बूढ़े लोग स्टुटगार्टके श्लासगार्टेन पार्कमें जिस तरह बड़ी-बड़ी शतरंजकी गोटोंसे खेलनेमें शाम बिताते हैं, वैसा ही एक ग्रह-पिण्डोंका खेल, मात्र दिमाग़ी क्रीड़ा।

■

गत-अनागतको जोड़नेवाली एकमात्र शक्ति है स्मृति। उसपर मानवको विलक्षण अधिकार प्राप्त हो गया था। शतावधानी लोगोंकी तरह दशकोंकी बातें याद रखनेवाले निकल आये थे। जो चीज़ें आजकल हमें याद रखनी पड़ती हैं, वे २००० में व्यर्थ हो गयी थीं। टेलीफ़ोन-नम्बर, बीमा-पालिसीका नम्बर, कारका नम्बर, जन्म-तारीख़, कितनी व्यर्थ-की चीज़ोंसे हम अपनी सूक्ष्म और कोमल स्मृतिको लादा करते हैं। वह सब अनावश्यक हो गया। मनके भीतर विचार आया और उसका ठोस वस्तुकरण सामने मौजूद। फिर आई० बी० एम० या कम्प्यूटरकी तरह मशीन हैं और सब कुछ स्वयंचालित ढंगसे होता जा रहा है। मानवेच्छा-जैसी चीज़ केवल एक 'ख़याली पुलाव' बनी रह जायेगी। मसलन मैंने एक कविता लिखी और जानना चाहा कि इसका प्रभाव क्या होगा? उसे जाँचनेवाली संगणक यन्त्रमाला उपस्थित है। तो अब मैं कविता इस तरह लिखूँ कि उनका हिप्नाटिक असर अमुक-अमुक व्यक्ति, समूह या समाजपर पड़े। शब्द समय-से यहाँ बँध गया। स्फोट क्या होगा। पाणिनि और यास्क, जैस्परसन और सैपीर बॉप्प और हुम्बोल्ट—बेकार हैं भाषा-शास्त्री और कोश।

यार लोगोंने मौनके भीतर भी पैठकर अनुकम्पनोंके अर्थ जान लिये हैं। संकेत-भाषाएँ बन गयी हैं २००० में। तो 'कार्डियो-ग्राम' की तरह कविता भी ग्राफ़ और बिन्दुओंमें लिख दी गयी। समझनेवाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझ गये, नहीं समझे सो, उनसे हमें क्या ?

'कम्युनिकेशन'—परस्पर-सम्प्रेषण काल-सापेक्ष नहीं रहा। तो फिर केवल वही बचा जो सत्य है। और वह साधारणीकरणसे बाहरका ही हो सकता है। जो नकारता है सारे सामान्यीकरणको, वही विशिष्ट बोध-जन्म और बोधगम्य है। बाक़ी सब तो सपाट है, पठार। समतल। 'टैबूला रास्ता'।

■

अगत-विगतकी झंझट सिर्फ़ वहीं है 'जहाँ बही-खाते हैं, आवक-जावक है, जमा-बाक़ी है।

पर एक बार 'काल'की कक्षा टूटनेपर यह प्रश्न ही कहाँ उठता है। विशुद्ध प्रज्ञा। नकार-स्वीकारसे परे। बसने-उखड़नेसे परे। अच्छे-बुरेसे परे। 'यह' और 'वह' से परे। इदं न मम।

'वाच-टॉवर'से परे, दीवारोंसे परे, शिकारी कुत्तोंसे परे, बिजलीके तारोंसे परे—एक अमूर्त झाग, एक मन्द-मधुर सुगन्ध, एक ऐसी दुनिया जिसमें बेटोफ़ेनकी दसवीं सिम्फ़नी (बहरे होनेके बाद भी रची गयी) कैथ कोलविज़की 'डेथ सीरीज़' के चित्र, ब्रेश्टकी पुनः क्लासिकको प्रतिष्ठित करनेवाली दिगन्त-भेदी विद्युत्प्रतिभा, गोएटेकी काल-जयी मूर्ति, पूर्व-पश्चिमके भेदसे परे—एक अखण्ड पितृदेश !

वही अनवच्छिन्न बहनेवाली निकर, हरी इज़ार, नीली डैन्यूब, एल्ब और नुगोल्ड-जैसी नदियाँ। उनपर बने पुल, जिनपर एक बन्दरका शिल्प आदमीपर हँसता है। ■■

१२०, रवीन्द्रनगर
नयी दिल्ली

With Best Compliments from:

Ashoka Stores Agency

Importers & Stockists of Bright Bars,
Shaftings, Tool & Alloy Steels etc.
24, Strand Road, Calcutta-1.

Grams : ENONEA

Phone : 22-4453
Resi. : 55-7694

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
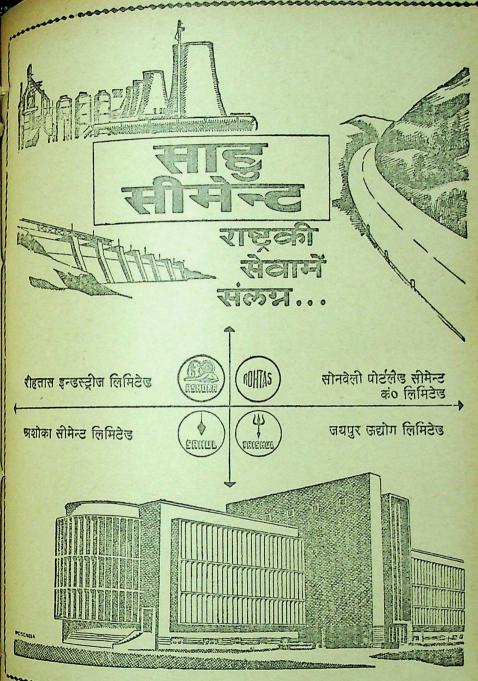
॥ चलती हुई घड़ी : बोलते प्रतिबिम्ब ॥

दिसम्बर १९९९

■
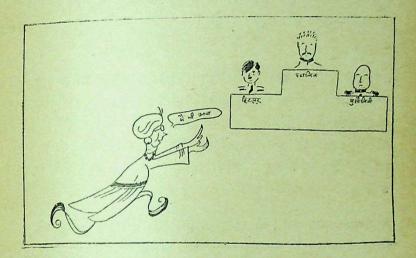
पुष्पधन्वा / पुरुष-सौन्दर्य-प्रतियोगिताके समावेशको प्रणाम ! इन सालाना 'मिस्टर इण्डिया' साहबका राजनीतिक् प्रभाव भी कुछ कम नहीं। तानाशाहसे इनकी निकटता होनेके नाते उसी पुरानी कहावत 'एक बलिष्ठ शरीरमें ही स्वस्थ मस्तिष्क होता है' का बोल-बाला है। यही कहावत आजका सर्वोत्तम नारा है। चूंकि मिस्टर इण्डियाका मस्तिष्क 'स्वस्थतम' है। वे ही हर साल शिक्षा-मन्त्री बनाये जाते हैं। पिछले कई वर्षोंमें यह अनुभवित हुआ है कि हर नया मिस्टर इण्डिया किसी-न-किसी क्षेत्रीय भाषाका समर्थक था। देशको इससे विशेष लाभ हुआ है। जनताको लगभग सभी भाषाओंका 'क-ख-ग' तो आ ही गया है जो कि वास्तवमें सराहनीय है। भारतवासियोंका जल्दी ही भाषाविद् हो जाना निश्चित है।

—न्यूज़वर्क (अमरीका)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

●

खाद्य-दिवसपर तानाशाह-राष्ट्रपतिने संवाददाताओंसे कहा कि खानेकी समस्या मु[illegible] जानी चाहिए और देशमें खाना बहुतायतमें हो जाना चाहिए। राष्ट्रपतिके इस प्र[illegible] बाद खानेकी समस्या जैसे हल ही हो गयी है क्योंकि अख़बारोंमें भूखके कारण मृत्यु [illegible] दिनके बाद पढ़नेमें नहीं आयी। अमरीकाके नीग्रो-राष्ट्रपति, अब्राहम लिंकन द्वितीयने [illegible] की खाद्य-समस्यापर टिप्पणी करते हुए कहा कि अमरीकाके श्वेत अल्पसंख्यकोंको [illegible] दृष्टान्तसे चेत जाना चाहिए और यह ख़ूब अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि तानाशा[illegible] अंजाम हैं—भूख और पट्टी-बन्द मुँह !

टाइम (अमरी[illegible]

●

अणुबमकी प्राप्तिमें भारतको अगणित कष्ट और असीम दरिद्रताका सामना करना पड़[illegible] लेकिन बमकी प्राप्तिके साथ एक और प्राप्ति हुई—वह थी चीनकी मित्रता ! अब भा[illegible] और चीनके बीच सांस्कृतिक और व्यापारिक प्रतिनिधि-मण्डलोंका जैसे ताँता लगा हुआ [illegible] और पाकिस्तानकी उपमा उन दोनों देशोंके समाचार-पत्रोंमें दी जाती है एक ऐसे कम[illegible] व्यक्तिसे जो पश्चिमकी जूठनपर जी रहा है।

—द ईजिप्शियन हरम (काहिरा[illegible]

●

तानाशाही ख़त्म करो ! तानाशाही धर्मका गला घोंटती है—जिसकी लाठी उसकी भैंस[illegible] सिद्धान्त भारतकी आत्माके विरुद्ध है ! आध्यात्मिकता ही हमारा एकमात्र सहारा है[illegible] तानाशाही हाय ! हाय ! शंकराचार्यकी वाणी''''क्या ये एक दिनके सुल्तान मतदाताओं[illegible] अपने भाग्यका निर्णय करानेकी हिम्मत रखते हैं ?····

—सड़कपर उड़ता एक अतिदुर्लभ पोस्टरका टु[illegible]

●

पाँच वर्ष तक पृथ्वीके गर्भमें सोये रहनेके पश्चात् एक महात्मा जीते-जागते बाहर नि[illegible] आये। उनके मुखमण्डलपर तेज था और अंगोंमें स्फूर्त्ति। हज़ारों लोगोंकी उमड़ती हुई [illegible] उनके दर्शन करके धन्य हुई और उसे महात्माजीकी चमत्कारी सिद्धिमें अपने पापों [illegible] कष्टोंसे निवारणकी किरण दिखाई दी।

—'प्रयाण' पत्रिकासे उद्[illegible]

●

राष्ट्रीय अभिलेखागारपर शताब्दीकी धूल इकट्ठी हो गयी है। दीमकोंके पैदा हो जा[illegible] फ़ाइलोंकी दशा और भी जर्जर हो चली है। दीमकोंने १९८४ तक के रिकॉर्ड तो भूल[illegible] खा ही डाले हैं, जो बचे हैं वे 'कीपर्स'के लिए समस्याका विषय हैं। यदि तानाशाह[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कीटाणुनाशक दवाइयोंको ख़रीदनेकी अर्ज़ी दी गयी तो उसकी मंज़ूरीमें समय लगेगा और तबतक बचे हुए रिकॉर्डोंका भी निश्चित सफ़ाया हो जायेगा।

तानाशाहका हर छोटी-से-छोटी चीज़पर निजी दृष्टि रखनेका ढंग निश्चय ही बधाई व सराहनाका विषय है।

—द वॉरडियन (लन्दन)

•

भारतीय रेल-जाल, जो दुनियामें दूसरे नम्बरपर है, इस समय शस्त्र, गोला-बारूद और सिपाहियोंको सीमाओं और तटोंकी ओर ले जानेमें व्यस्त है। यह समझमें नहीं आता कि भारत आखिर क्यों परम्परागत लड़ाईकी ही सम्भावना कर रहा है जबकि उसके विरोधियोंके पास अदृश्य 'मृत्यु-किरणें' हैं? यह बात भी आश्चर्यजनक है कि अपनी अवश्यम्भावी मृत्युको पास खड़ा देख भी भारत अपने दार्शनिक-सन्त चार्वाककी नसीहतोंसे लाभ क्यों नहीं उठाता और 'क़र्ज़ लेकर घी खाने और मौज उड़ाने'का रास्ता क्यों नहीं अपनाता?—वह रास्ता जिसमें न दरिद्रता है और न सैनिक निरर्थकताओंपर अन्धाधुन्ध व्यय।

—द टाईम्स (लन्दन)

•

भारतवासी एक ऐसे शोषणका सामना कर रहे हैं जो उन पण्डितोंकी प्रार्थनाचालित अकर्मण्यतासे कहीं कठोर है जिन्होंने इस देशपर सदियों तक राज्य किया।

बग़ावतकी लहर कबतक न आती? यह बग़ावत उठी आर्थिक स्थितिके विरुद्ध जब सिपाहियोंको (जो आबादीका ५० प्रतिशत भाग हैं) रसद बाँटते समय कहा गया कि वे अपनी पेटियाँ ज़्यादा-से-ज़्यादा कस लें। जब दुर्बल मरने लगे तो कहा गया कि यही देशके लिए हितकारी है।

अब लोग बिना परमिट जहाँ चाहें नहीं जा सकते। असलमें तो लोगोंके पास घूमने-घामनेका अवकाश ही कहाँ है! शायद भारत अपनी लम्बी सुस्ती और निकम्मेपनकी क़ीमत चुका रहा है!

—ला मौं (पेरिस)

•

विशाल भारत, बुद्धका यह देश, पश्चिमके धोखेका शिकार बनकर रह गया है। पश्चिमने इसे उसी तरह गहरे अँधेरे गड्ढेमें डाल दिया है जैसे एक आततायीने भोले, कोमल शिशुको राहपर भटका दिया हो। इन सारे दाँव-पेंचों और हथकण्डोंका कुल जमा-जोड़ यह है कि भारतके उद्योग अन्तिम साँस ले रहे हैं। काग़ज़की कमीके फलस्वरूप पहले ही से मुँह-बन्द अखबारोंने पूर्व-निर्धारित कोटेमें ५० प्रतिशतकी और कमी कर दी है और इस्पातकी कमीके कारण भारी मशीनोंके सारे कारखाने शान्त पड़े हैं। ज़ाहिर है कि इस बीमारीको फैलाने वालोंका ध्येय आर्थिक नहीं राजनीतिक है।

—पीप्ल्स रैली (पीकिंग)

•

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हालाँकि चीन अब उसका दोस्त है, भारत सच्चे अर्थोंमें कम्यूनिस्ट-विरोधी है। और फिर मित्रताके कच्चे-पक्के तानों-बानोंको कब कौन समझ पाया है ? अब तो लगता है कि राष्ट्रों दोस्तीके पवित्र बन्धन भी सामयिक और अस्थिर हो सकते हैं। पचास साल भी नहीं हुए जब भारत और चीन गरज-गरजकर अपने भाई-चारेका डंका पीट रहे थे। अब वही और फिर ! क्या इन दोनों राष्ट्रोंकी स्मरण-शक्ति इतनी क्षणभंगुर है ?

हमारे कन्धेसे कन्धा मिलाकर अमरीकाने भी भारतकी शारीरिक व बौद्धिक भूख सदा मिटायी किन्तु भारत अपने हितैषियोंसे भागता ही रहा है। —वोल्गा (मॉस्को)

●

संसारके अधिकतम अनपढ़ देशोंमें-से एक है भारत जो एक लम्बे समय तक चश्माधारी बौद्धिकोंके हाथोमें कठपुतली बना रहा—वे बुद्धिवादी जिन्हें आनुभविक कर्मण्यताका कोई ज्ञान न था। अब, एक साक्षात् चश्माधारी नीरो इसके विशाल आँगनमें अपना घोड़ा घुमाता-पीटता डोल रहा है और इन दो पाटोंके बीच पिसी जनता अभी तक मनुज-क्रान्तिके पहले चरण तकको छू नहीं पायी है। सभ्यताकी क्रान्तिकारी दौड़की पहली मंजिल—कृषि-क्रान्ति !

—फ़्यूजी यामा (जापान)

●

भारत—यह नाम ही अर्थहीन हो चुका है क्योंकि भारतके अधिकांश राज्य अधिक-से-अधिक स्वराज्य पानेके प्रयत्नमें अब स्वतन्त्र इकाइयाँ बन गये हैं। और भी छोटे-छोटे राज्योंमें बँट जानेके साथ-साथ इस समय भारतमें सन् साठ की १७९ भाषाओं और ५५४ लिपियोंके स्थानपर २०० भाषाएँ और ६०२ लिपियाँ हैं। ऐसी स्थितिमें राष्ट्रभाषा या सम्पर्क-भाषाकी चर्चा ही निरर्थक है। —द ईस्टर्न रिव्यू (अफ्रीका)

●

भारतकी माली और सियासी उथलपुथलसे भी बड़ा है उसके ज़िन्दा रहनेका मसला। क़रीब चौथाई सदीसे नसबन्दी क़ानून मुसलमानोंको छोड़कर सबपर लागू है। अंजाम है कि भारतके मुसलमानोंने कुल आबादीका ५९·०७ फ़ीसदी होनेका दावा किया है। उनकी माँग है कि रायशुमारीकी बिनाहपर उन्हें मुस्लिमस्तान मिलना चाहिए। भारतके मुसलमानोंकी यह माँग रूहानी और जज़्बाती तौरपर तो मौजूँ है ही उनकी दलीलोंसे भी इन्कार नहीं किया जा सकता। —द पाकिस्तान क्लाइम्स (लाहौर)

ए-५०, निज़ामुद्दीन ईस्ट
नयी दिल्ली-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
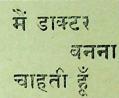
...और इसके लिए आप को इसे पढ़ाना पड़ेगा। पढ़ाई के लिए पैसा होना जरूरी है, जो सुनियोजित बचत से ही मिल सकता है। इसलिए सेविंग्स खातेमें या रिकरिंग डिपोज़िट स्कीम के अंतर्गत अपनी बचत पंजाब नेशनल बैंक में जमा कीजिये। आप इसके सपने को पूरा कर सकेंगे।

पंजाब
नेशनल
बैंक

PR-PNB-6715-2 Hin

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"HINDUSTAN" is a name
That has acquired fame
In the field of card-game
Didn't I tell you so, Sam ?

Well ! Well !!
Go in for Playing Cards of this name
Made better to please buyer
&
Thus cater to the requirement
of
Discriminating customer.

Brands:—

BONAT, MARTIN, BARONET, PARIS, PLANET, PASTIME, WINPACK, METROVAN, BLUE-HEAVEN PHILIPS, ROYAL, CAMARA, BEAUTY PACK, GREAT PRATAP, ELEGANT, CAFLA, WINNER, RIO, DENIS, SANAM.

THE
Hindustan Playing Cards Mfg., Co.,
C. S. T. Road, Kalina,
BOMBAY-29 AS.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरर्थ । इन्दु जन

मरूँगा नहीं मैं अभी—
अभी और मुझे जीना है।
साँसों की बहुत-सी गिनतियाँ गिननी हैं।
शताब्दी पर शताब्दी पर शताब्दी
तपे हुए हलक़ पर बूँद-सी पड़ने दो....
अभी तो टूटी मर्यादाओं की
बेहिसाब बोतलें पीनी हैं!

जीने की संज्ञा पर पहरे कब पड़ते हैं?
जब-जब ज़रूरत जैसी थी, जो भी थी
पैंतरा-पहलू वैसा बदल डाला है—
फाँसी पर जी कर
कूड़े में पल कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar
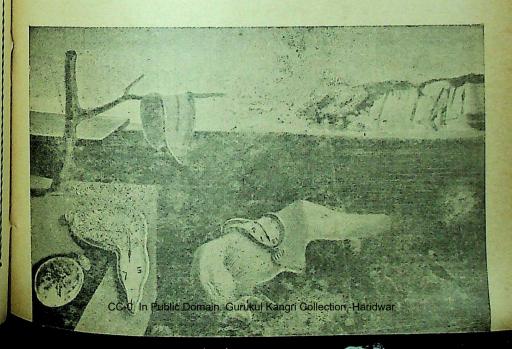
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हज़ारों बदलते रंगों ने मुझे
गिरगिट कर डाला है।

मुझे एक फ़ालतू मज़ाक के तौर पर बनाया था
चाबीदार—
चलने पर जिसमें चाबी और भरती है।
मुझसे कुछ सिद्ध नहीं होता—
असिद्ध नहीं होता—
मेरे सारे कल-यन्त्रों की इतनी ही गति है—
डिब्बे का ढक्कन स्वयं खुलता है
—भीतर से एक हाथ आकर
उसे फिर बन्द करता है।
और कोई गति, निगति, परिणति नहीं होती
यक्ष्मा और चेचक के पंजों से छूट कर
नये विध्वंस की प्रतीक्षा में बैठा हूँ,
प्रिस्मिक, बहुरूपिया इमारतें गढ़-गढ़ कर
क्षण में झुलसाने की शक्ति पर ऐंठा हूँ।

मेरा यह वेष है—
माथे पर जूता
छाती पर साँप
और पैर में बैसाखी;
मेरे लिए इतनी अधिक राहें उन्मुक्त रहीं
तभी तो शुरू से यहीं पर खड़ा हूँ।
वैसे—
मैं भावुक हूँ—
परदुःखकातर हूँ—
हर एक द्वार की ज़ंग लगी कुंजी
फ़ौलादी बुद्धि में बन्द है।
कितना अज्ञान है ऊँचा उठ जाना
तुम्हें बुरा कहना—

यही तो तर्क है मेरी अच्छाई का
मैं सब कुछ सहता हूँ
नकुल की तरह कभी कुछ नहीं कहता हूँ
इसीलिए
मैं पहले जन्म में एकाक्षी कौवा था
इसमें हूँ जोंक
और अगले में उदरहीन कीड़ा बनूँगा।

ए-८०, निज़ामुद्दीन ईस्ट,
नयी दिल्ली—१३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ मान लीजिए समय 'क' है ॥ तब इस 'क' तक पहुँचनेके लिए किसी एक समीकरणको हल कर लेनेसे ही उत्तर तक नहीं पहुँचेंगे, शायद 'क' तक पहुँचनेके लिए ख़ासे योग साधने पड़ें। लेकिन इस समय को जान लेनेपर भी अगर उसके 'साथ' चल पाये तो उसके आगे चलना कैसे सम्भव होगा और 'आगे' चले तो वह भी क्या समयका सम्मान होगा ?..

समयका गणित : मनका विभाजन

कन्हैयालाल ओझा । एक पहेली ही है क्या शेष शताब्दी ?—पूरी शदाब्दीको भारतीय-पद्धतिका त्रिभुज कहा जाये या पाश्चात्त्य-पद्धतिका त्रिकोण, लगता है, कोई फ़र्क़ नहीं पड़ेगा। अच्छा, देख लिया जाये ! त्रिभुज कहकर उसका दो-तिहाई यानी दो भुजाएँ बिता डालिए तो शेष रह जाती है केवल एक भुजा और कोण तीनों ग़ायब ! ठीक ?—अब लीजिए त्रिकोण, और बिता दीजिए उसका दो-तिहाई यानी दो कोण, तो शेष क्या रह जायेगा ? थोड़ी-बहुत तीनों रेखाएँ शेष रह जाती हैं, और एक कोण भी साबित बच जाता है। यदि एक पूरी रेखा बिता दी जाये तो भी दो पूरी रेखाएँ और एक कोण बच रहता है तथा दो-तिहाई बीत जानेकी शर्त पूरी हो जाती है। त्रिभुज और त्रिकोणके बीच कोई समीकरण नहीं है ! तो क्या विगत शताब्दीका $\frac{2}{3} + \frac{1}{3}$ अनागत शताब्दी = पूरी एक शताब्दी नहीं होगी ?—विगत एक इतिहास है, अनागत एक कल्पना—कहाँ हैं दोनों समराशि ?—विगत एक अनुभूति, अनागत एक चिन्तन—फिर चिन्तन करनेवाला, हाड़-माँसकी गणितात्मक संयुतिवाला कायिक मनुष्य ही नहीं, दार्शनिकोंका प्रत्येक क्षण चिर-नवीन प्रतीत-समुत्पाद्य, सतत-प्रवहमान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव भी नहीं, अपितु, मेंढककी तरह, कण-तरंगकी प्रतीतिसे परे, कहींसे कहीं उछलकर कूदनेवाला शुद्ध चैतन्यमय मन हो, तो उसका चिन्तन, गणितकी तरह निरपेक्ष होनेकी अपेक्षा आकांक्षापेक्ष्य ही अधिक हो सकता है।

● गणित बन्धु है :

माना कि बहुत कुछ गणित हमारे साथ है। न केवल विगत दो-तिहाई शताब्दी, पूर्व-गत दो सहस्राब्दियाँ भी नहीं, उससे भी पूर्वकी अलिखित बीस सहस्राब्दियोंको पृष्ठभूमिमें रखकर हमें आगेकी एक तिहाई शेष शताब्दी-को प्रक्षिप्त करके देखनेकी सुविधा भी है, लेकिन इससे क्या कहा जा सकता है ? स्वयं विज्ञान ही क्या इलेक्ट्रोनकी दिशाका संकेत कर सकता है ? पीछे देखकर तो यही कहा जा सकता है कि अगले तीन दशकोंमें खास कुछ होनेवाला नहीं है, किन्तु आगे देखकर क्या अघटनीय नहीं घट सकता ? मसलन १९१४ और १९४५ तकके तीन दशकोंमें दो महायुद्ध घटित हो गये तो अगले तीन दशकों-में ? आकांक्षा यह है कि वैसा कुछ घटित न हो। कछुआ-एकिलस न्यायके अनुसार साबित करना अधिक प्रिय लगता है कि गत २२ वर्षोंमें (१९४५ से १९६७ तक) कोई महायुद्ध नहीं हुआ, इसलिए अगले ग्यारह वर्षोंमें आधा महायुद्ध होनेका भी प्रमाण नहीं है। और लीजिए, तब पिछले बाईस, अगले ग्यारह यानी तैंतीस वर्ष !—यही तो अवधि है शेष शताब्दीकी।—यदि १९४५ से १९७८ तकके तैंतीस वर्षोंमें कोई महायुद्ध नहीं तो १९६७ से २००० तकके तैंतीस वर्षोंकी कुण्डलीमें भी कोई महायुद्ध नहीं! गणितका समीकरण है, और गणितमें महायुद्धका कोई अंक नहीं है।—चीन, पाकिस्तान, भारत, वियतनाम, अरब, इसराइल——ये महायुद्ध नहीं हैं, गणितसे बाहर हैं, इनकी बात बादमें होगी।

कॉस्मिक-स्केलपर हम निश्चित हो सकते हैं, कि खास कुछ होना-हवाना नहीं है, तैंतीस-वर्षकी अवधिसे उसके क्षुद्रसे क्षुद्र क्षणांशकी प्रतीति भी नहीं की जा सकती! पृथ्वीका परिक्रमण-पथ प्रायः उतना ही बना रहेगा, क्योंकि पूरी एक शताब्दीमें जाकर कहीं उसमें एक इंचके हज़ारवें हिस्सेके बराबर ह्रास होता है। अतः न तो उसकी ३६५ दिन ५ घण्टा ४८ मिनिट ४६ सैकण्ड की परिक्रमण-अवधि और न २३ घण्टा ५६ मिनिट ४.०९ सैकेण्डकी परिभ्रमण-अवधिमें किसी तरहका फ़र्क़ पड़ेगा। प्रति सैकण्ड विकीरणके बहाने अपना चालीस लाख टन स्वाहा कर देनेवाला सूर्य भी इन तैंतीस वर्षोंमें अपनेपर एक खरोंच भी महसूस नहीं करेगा, कि आन्तरिक ऊष्मा या हीलियमकी राखसे पीड़ित होकर नोग या सुपर नोवाकी रौद्रमूर्ति धारण करले !

ध्रुव नक्षत्रको हम स्थिर माननेके आदी हैं, किन्तु बात ऐसी नहीं है। वह केंद्रके चारों ओर २° के व्यासमें परिक्रमा अन्य तारोंके समान ही करता है, क्योंकि वह सच्चे ध्रुवसे १° दूर है। यह दूरी अन्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीस वर्षोंमें कम होगी यानी ८० रह जायेगी। पृथ्वीका अपना एक कमर-तोड़ नाच है, जिसकी एक लयकी अवधि २५८०० वर्ष है, इसे वॉबलिंग (दोलन) कहा जाता है। इस अवधिमें सूर्य और चन्द्र-ग्रहणोंमें भी कोई नवीनताकी आशा नहीं की जानी चाहिए। २ नवम्बर १९६७ से २००० तक पृथ्वीपर कुल २६ खग्रास सूर्य ग्रहण होंगे, सन् २००० में कोई खग्रास सूर्य ग्रहण नहीं होगा। इनमें-से तीन—एक १६ फ़रवरी १९८०, दूसरा २४ अक्तूबर १९४५ तथा तीसरा ११ अगस्त १९९९ को भारतके कुछ हिस्सोंसे दिखाई देंगे। इसके अतिरिक्त १६ कंकड़ (annular) सूर्यग्रहणों-में-से भारतमें किसीके दिखाई देनेका योग नहीं है।

सन् २००० में फ़रवरी २९ दिनकी होगी। सन् १५८२ में जब वर्तमान ग्रेगरिअन कलैण्डर स्वीकार किया गया तो उसकी अवधि ३६५.२४२५ दिन मानी गयी, लेकिन पता लगा कि यह अवधि ०.०००३०१ दिन अधिक है जो चार हज़ार वर्षमें जाकर पूरा एक दिन बन

• जीवनका चिलम-बोध

चिता की लपटों में
जो रंग दीखते हैं
उन्हीं रंगों के परदे बन
तो कितने बीटनिक
ड्राइंग रूम में लगायेंगे ?

चर्बी के जलने की
जो गन्ध है
उसका सेण्ट बने
तो कितनी आधुनिकाएँ
उसे ख़रीदेंगी ?

कपाल फूटने की
जो ध्वनि है
उसे संगीत में बाँधा जाये
तो कौन अपनायेगा उसे
शास्त्रीय संगीतज्ञ
या बीटिल्स ?

—दिनकर सोनवलकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाती है। अतः यह नियम बनाया गया कि शताब्दी-वर्ष तबतक लीप-वर्ष नहीं माना जायेगा जबतक कि उसमें चार-सौका भाग न लग जाये ! यदि यह नियम भी बना दिया जाये कि शताब्दी-वर्ष जो ५००० से विभाजित हो सकता हो, लीप-वर्ष नहीं माना जायेगा तो यह अन्तर बीस हज़ार वर्षमें जाकर १ दिनके बराबर हो सकेगा।

इस नक्षत्र-विद्याकी चर्चा इसलिए आवश्यक हो उठी कि समयका हमारा एहसास मूलतः खागोलिक है। समय-मापकी मूल इकाइयाँ, दिन-मास-वर्ष, ये सब खागोलिक तथ्य हैं, दिन उसे कहते हैं जिस अवधिमें पृथ्वी अपनी धुरीपर एक चक्कर काट लेती है, मास (अवश्य ही चान्द्र मास) चन्द्रमाकी कलाओंके प्रत्यावर्तनपर निर्भर करता है, और वर्ष उस अवधिका नाम है जो पृथ्वी सूर्यकी एक परिक्रमामें लेती है। ऋतुएँ भी पृथ्वीके अक्षके झुकाव तथा दिन-रात्रिकी पारस्परिक घटा-बढ़ी सूर्यसे उसकी कम-अधिक दूरीपर निर्भर करती हैं।—ये तथ्य परिवर्तनशील होते हुए भी, इस शताब्दीके शेष होने तक किसी खास परिवर्तनके जनक नहीं होंगे।

तो फिर इस पृथ्वीके बाहर, जहाँ अन्तर्नक्षत्रीय—गतियाँ भिन्न हैं, वहाँ समयका क्या परिमाप होगा ? गत-विगत-अनागत-शेष आदि ये शब्द क्या समयकी 'ट्रिक' नहीं हैं ?—जिस कपड़ेको हम एक ग़ज़ लम्बा कहते थे उसे अब ९१.४४ सेन्टीमीटर लम्बा कहने लग गये हैं। एक ग़ज़ और ९१-४४ सें० मी० के बीच तुल्यताकी इकाई ... आरोपित नहीं ? प्लैंक साहब ... गये हैं कि मूल इकाईका मूल्य है ... 'क्वैंटम' !—सकेत है 'एच' (h), ... यदि संख्यामें इसका रूप देखना हो तो ... है ०. ०००, ०००, ०००, ०००, ... ०००, ०००, ०००, ००६, 547, ... सैकण्ड (arg second) !—समझने ... इच्छा हो तो कहा जा सकता है कि ... बार पलक झाँपनेकी क्रियाका पूरा मूल्य ... सकता है एक अर्ग सैकण्ड। अर्ग सैकण्ड ... क्रिया (action) का माप है, यानी ... और उसकी आवर्तता (fregvevey) ... बीचके सम्बन्धका नाम !—सो, समय ... आखिर क्या स्वरूप हुआ ?—आइन्स्टाइन साहबके मर जानेके बाद शायद अब यह ... समझमें आने लगा है कि लम्बाई-चौड़ाई ... मोटाईकी समाईके साथ इस सृष्टि ... सृष्टिगत विषयोंका एक और आयाम है ... समयका आयाम है। क्या इसका ही पैमाना क्वैंटमका 'h' है ?

समयके साथ एक और तत्त्व जुड़ा हुआ है वह है 'प्रकाश'। अँधेरी कोठरीमें ... हो जानेपर न तो दिशाका ज्ञान हो सकता है, न समयका ! और प्रकाश एक गति... पदार्थ पाया गया है, जिसकी गति है ... सैकण्डमें १,८६,२८२ मील, जो इस ब्रह्माण्ड... की चरम गति मानी जाती है। फलतः ... गये हैं आइन्स्टाइन साहब ही कि इस ... पर समयके देवता मौन साध लेते हैं ... यानी यदि इस गतिसे उन्हें दुलराया-हुलराया ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाये तो समय-साहबको नींद आ जाती है। अगर गति कुछ कम हो तो समूची नींद नहीं, तन्द्रा हो आती है, अर्धनिद्रामें पैर भारी हो जाते हैं। मान लीजिए, आप लुब्धक-नक्षत्र (sirius) के किसी ग्रहकी यात्रापर जाना चाहते हैं, जो यहाँसे १० प्रकाश-वर्ष दूर है। आने-जानेमें प्रकाशकी गतिसे भी आपको बीस वर्ष लग जायेंगे। लेकिन वैसे कोई बीस वर्षके खाने-पीनेकी व्यवस्थाकी ज़रूरत नहीं है, अगर आपका यान काफ़ी तेज़ चल सकता हो। फ़र्ज़ कीजिए आपका रॉकेट यान प्रकाशकी गतिकी ९९-९९९९९९९ प्रतिशत चालसे जा सकता है तो आप मज़ेसे जलपानके बाद रवाना होइए। आपकी घड़ी ही नहीं, आपके शरीरकी समस्त क्रियाएँ भी ७०००० के एक भाग इतनी धीमी हो जायेंगी। आप दुपहरका भोजन अपने गन्तव्यपर करके रातके भोजनके लिए फिर पृथ्वीपर अपने परिवारके बीच पहुँच जायेंगे। किन्तु, ठहरिए, आपको रिप ह्वैन विंकलकी अवस्था स्मरण आये बिना नहीं रहेगी, क्योंकि तबतक पृथ्वीके १८ वर्ष बीत जायेंगे। तीस वर्षकी अवस्थामें जिस पुत्रको आप दस वर्षका छोड़कर गये थे वह अब अट्ठाइस वर्षका हो गया होगा, जब कि आप वही तीस वर्षके ही रहेंगे।—और यह कोई कबीरकी उलट-बाँसी नहीं है।

फिर समय क्या है?—प्रकाश १,८६, २८२ मील जितनी देरमें चला जाये उसे एक सैकण्ड कहना उचित होगा? लेकिन १,८६,२८२ मीलकी लम्बाईका बोध? —यह नहीं कि एक सैकण्डमें प्रकाश जितनी दूर चला जाये वह दूरी १,८६, २८२ मील?—और जब दूरी या समय दोनों ही धीमे पड़ जानेकी आदतसे मजबूर हों तो?—जय हो आइन्स्टाइन साहबकी!

पूछा जा सकता है कि प्लैंक साहब और आइन्स्टाइन साहब विगतकी वस्तु होकर अनागत शेष-शताब्दीसे क्या सरोकार रखते हैं?—बात यह है कि प्लैंक साहबका क्वैंटम और आइन्स्टाइन साहबकी गति दोनों मिलकर ही हमारे समयका बोध बनते हैं। प्रकाश चलता हो चाहे १, ८६, २८२ मील प्रति सैकण्डकी चालसे, किन्तु वह भी फुदक-फुदककर। यह मेंढक-कुदान उसे कणका रूप दे देती है, किन्तु यह गति इतनी तीव्र है, जैसा कि क्वैण्टमके मानसे प्रकट है, कि कणको स्थिर रूपमें कभी देखा ही नहीं जा सकता, अतः उसे तरंगके रूपमें ही समझा जा सकता है। जो दिखाई देता है उसके बारेमें कहा जाता है कि उसकी इमेज हमारी आँखकी पुतलीपर, वस्तुके हट जानेपर भी १/१० सैकण्ड तक बनी रहती है। परदेपर सिनेमाकी रीलसे एकके बाद एक जो चित्र प्रक्षिप्त किये जाते हैं, उनकी गति बारह चित्र प्रति सैकण्ड होती है, १/१२ सैकण्ड प्रतिचित्र। जबतक कि हमारी पुतलीसे पहले चित्रकी इमेज बिदा हो उसके १/६० सेकण्ड पहले ही दूसरा चित्र आँखोंके सामनेआ जाता है, और हमें लगता है कि हम अलग-अलग चित्र नहीं बल्कि सचल चित्र हिलते-डुलते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पदार्थ और व्यक्ति देख रहे हैं। और भ्रम भ्रम नहीं रहता, बल्कि सचाई हो जाती है, क्योंकि संगीतमें भी ऐसा ही कुछ होता है। सुरकी श्रुति श्रवण-पटलपर कुछ क्षणांश-के लिए अटक जाती है, तबतक दूसरी श्रुति उससे मिल जाती है और इस तरह सुरोंका एक मोहक अनवरत जाल तनता जाता है जिसे सुनकर हम बेसुध हो जाते हैं। सुरको अकेला करके सुना जाये या फ़िल्मी-रीलके चित्रको अकेला करके देखा जाये तो उनमें गतिकी, प्राणकी प्रतीति नहीं होती। १/१० सैकण्डमें और क्वैण्टमके अर्ग-सेकण्डके उल्लिखित मानमें वही अन्तर हो सकता है जो क्षण-भर और कल्पमें हो सकता है, किन्तु दोनोंका सिद्धान्त एक ही है। तो क्या जिस तरह स्लो-मशीन रीलसे हम 'क्रियाको लम्बा या छोटा करके देख सकते हैं, उसी तरह समयके क्वैण्टमको स्लो-मोशन करके नहीं देखा जा सकता?—देखा जा सकता है, यह हम लुब्धकके किसी ग्रहकी यात्रामें ऊपर बता चुके हैं।—बीती दो-तिहाई शताब्दोको यदि इसी स्लो-मोशनकी गतिसे लम्बा किया जा सकता तो क्या ज्ञानोदयका यह अंक सन् २००० में न प्रकाशित होता?—नहीं क्योंकि तब हम भी उसी स्लो-मोशनके शिकार होते और ज्ञानोदयका और हमारा कैलेण्डर एक होता।

● प्रकाश-वर्षोंकी स्केल :

अतीतका विन्यास करनेके प्रसंगमें एक और तथ्य प्रस्तुत करनेका लोभ नहीं रोक पाता। अन्तरिक्षमें नक्षत्रोंका प्रकाश चलकर पृथ्वी तक पहुँचनेमें उनकी दूरीके हिसाबसे समय लेता है। सूर्यके प्रकाशको पृथ्वी तक पहुँचनेमें ५०० सेकेण्ड यानी ८ मिनिटसे कुछ ऊपर लग जाते हैं। यानी सूर्यके क्षितिके ऊपर आ जानेके बाद भी आठ मिनिट तक हम उसे नहीं देख पाते। लुब्धक नक्षत्रके प्रकाशको हम तक पहुँचनेमें दस वर्ष लग जाते हैं। ध्रुव-नक्षत्र हमसे इतना दूर है कि उसका प्रकाश १,८६,२८२ मील प्रति सेकेण्डकी चालसे चलकर हम तक पहुँचनेमें ८०० वर्ष लेता है, यानी जो ध्रुव-नक्षत्र हम आज देख रहे हैं, वह उसकी आजसे ८०० वर्ष पूर्वकी तसवीर है। यदि इस बीच किसी दुर्घटनासे वह नष्ट हो गया हो, या विस्फोट होकर सुपरनोवा हो गया हो तो यह तथ्य हम तब तक नहीं जान सकते जबतक कि उस घटनाको घटे आठ सौ वर्ष न हो जायें। ज़रा कल्पना कीजिए कि एक ग्रह है जिसकी हमसे दूरी पाँच हज़ार प्रकाश-वर्ष है, यानी हमारी पृथिवीका प्रकाश उस ग्रह तक पहुँचनेमें पाँच हज़ार वर्षका समय ले लेता है। वहाँके निवासी, मान लीजिए, विज्ञानमें इतनी प्रगति कर चुके हैं कि एक दूरबीन बनाकर वह यहाँपर जो कुछ हो रहा है उसे बख़ूबी देख सकते हैं। ज़रा सोचिए, आज उन्हें वहाँ क्या दिखाई देगा?—उन्हें दिखाई देगी पाँच हज़ार वर्ष पूर्वकी यह पृथिवी, जो सभ्यताकी काफ़ी प्रारम्भिक अवस्थामें है। वे देखते हैं कि हमारी पृथ्वीकी धुरीका रुख तब ध्रुव या आजका 'पोलेरिस' नहीं, बल्कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दूसरा ही धुँधला नक्षत्र 'थूबान' है। वे मिस्रमें नील नदीके किनारे गिज़ामें बनते हुए बड़े पिरेमिडको देख रहे हैं, क्योंकि उसमें एक गैलरी पृथिवीकी धुरीके समानान्तर इस उद्देश्यसे बनायी जा रही है कि आकाशका वेध किया जाये। पिरामिडोंके निर्माणके सिलसिलेमें बड़े-बड़े पत्थर नावों-द्वारा नीलसे तथा तट भूमिपर गुलामों-द्वारा ढोये-खींचे जा रहे हैं। गुलामोंका सरदार हाथमें हण्टर लिये उन्हें जल्दीके लिए उकसा रहा है। मज़दूरोंके बदनसे पसीना ही नहीं, चाबुककी मारसे ख़ून भी चू रहा है। उन्हें यह निष्कर्ष निकालनेमें प्रमाणकी कमी नहीं है कि यह पृथ्वी बड़ी बर्बर है। यदि वे बराबर देखते रहें तो हज़ारों वर्ष बाद उन्हें बुद्ध, अशोक, ईसा आदिके दर्शन होंगे। फ़ान्स-रूसकी राज्यक्रान्तियाँ अभी उन लोगोंके लिए हज़ारों वर्ष भविष्यके गर्भमें हैं। और ये कल-परसों-के विश्व-युद्ध ?—अणु-बमका विस्फोट ?—मानवका अन्तरिक्ष-भेदन ? उन्हें पृथिवीके पाँच हज़ार वर्ष तक उन्हें अपेक्षा करनी होगी।

सो, जिसे हम अतीत कहते हैं, वह किसीके लिए व्यतीत हो सकता है, किसी अन्यके लिए वही क्या वर्तमान या 'भविष्य' नहीं हो सकता ?—पाँच हज़ार वर्ष पूर्वका मिस्रका सम्राट् फैरो यहाँ न रहा हो, किन्तु उस अनाम, अतिदूर ग्रहपर तो वह 'इस समय' उसी पंचभौतिक शरीरमें गुलामों-द्वारा अपने पिरेमिडके निर्माणका निरीक्षण करता दिखाई दे रहा है ? आँखोंके सामनेसे हट जानेसे 'अतीत', या बने रहनेसे 'वर्तमान', और न आनेसे ही क्या 'भविष्य' बन जाते हैं ?—अणु-बमका विस्फोट, जो हमारे लिए अतीत हो गया है उस अनाम-ग्रहपर वह 'भविष्य' है। क्या उस अनाम-ग्रहके वासी किसी तरह हमारे इस अतीतको—उनके भविष्यको—आज नहीं जान सकते ?—क्या प्रकाशकी गतिको और तेज़ करनेसे अनिदूर 'भविष्य'को 'निकट भविष्य' नहीं किया जा सकता ? दृष्टिके विस्तारसे आगे और पीछे जो बहुत कुछ है, वही क्या भविष्य और भूत नहीं ?—मृत्यु क्या है ?—हम उसे क्या इसीलिए अन्त नहीं समझते कि जहाँसे हम उसे देखना चाहते हैं, उसके आगे हमारी दृष्टि नहीं जा पाती ? एक मील लम्बी सड़क-के एक छोरपर खड़ा होकर मैं दूसरे छोरको नहीं देख पाता, पर यदि देख सकूँ तो ? ऐसी दूरबीन क्या नहीं बनायी जा सकती, जो समयके अन्तरालको पास खींच लाये ?—दूरबीनमें स्थान सिमट आता है, खुर्दबीनमें स्थान बढ़ जाता है। वक़्तबीनके दो लेंस हों जो अतीतको समेट लें और भविष्यको खींच लायें ?—सम्भावना नहीं है कि शताब्दीके अन्तिम वर्ष तक कोई माईका लाल ऐसा समय-दर्शक यन्त्र बना ले।

• भविष्य जाननेकी 'ट्रिक' :

यदि किसी 'ट्रिक'से चरम-गति १,८६,२८२ मील प्रति सेकेण्डको तीव्रतर किया जा सके ?—तो क्या भविष्यके दर्शन हो सकेंगे ?—यह सच है कि प्रकाशके अतिरिक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और किसीके लिए ब्रह्माण्डमें यह गति प्राप्त करना सम्भव नहीं है, क्योंकि तब पदार्थका आकार एक निरा बिन्दु और भार अनन्त हो जाता है।—कहते हैं कि अन्तरिक्ष वक्र है। यह वक्र खुला (Posetive) है या बन्द (Negative), घोड़ेकी जीन-जैसा है या मुद्रिका (doughnot)-जैसा कुछ कहा नहीं जा सकता। समय यदि एक आयाम मात्र है, और जिस अन्तरिक्षका यह आयाम है, यदि वह खुला हुआ वक्र है, तो इस आयामको एक ही दिशामें बढ़ते चलनेपर पुनः उसी बिन्दुपर आ जाना पड़ेगा, जहाँसे वह चला है। यानी मैं किसी दिन सामने देखते हुए अपनी ही पीठको देख सकूँगा। और तब सीधी यात्राके लिए किसी अज्ञात कविकी यह तुकबन्दी सार्थक हो जायेगी :

> एक विद्युतगामिनी थी मिस चमक-
> बाला—
> चाल जिसकी प्रभा की किरणसे आला !
> मचल कर चल पड़ी वह एक दिन,
> और निज चाल की सापेक्ष्यता गिन
> गयी गन्तव्य पर पहुँच गत शाम को वह
> विद्युत्-बाला !

याद करनेको सुधाकर द्विवेदीके एक दोहेकी यह अर्द्धाली भी मनसे जा लगती है—"आज गये कल देखि कै, आज ही लौटे फेरि !" जिसपर भारतेन्दुजी बेबात फ़िदा नहीं हुए थे।

● इस पार प्रिये नाटक ही नाटक :

एक मील लम्बी सड़कको हम एक सिरेपर खड़े होकर नहीं देख सकते किन्तु ऊपर आकाशमें उड़ते हुए हवाई जहाजसे एक मीलसे अधिककी समूची लम्बाई भी हमें आसानीसे दिखाई दे जाती है—जितनी दूरीसे देखें उतना ही विस्तार आँखों-में समाता जाता है। पृथिवी-तलसे हम सुदूर अन्तरिक्षकी खागोलिक दूरियाँ इतनी सरलतासे देख लेते हैं, मानो वे दूरियाँ इंच-फ़ुट-गज़में समा गयी हों !—क्या समयके आयाममें भी ऐसा कुछ तथ्य है ?—समयकी सीमासे बाहर निकलकर शायद समयके भूत और भविष्यको त्रिकोण मितिकी सहायतासे देखना-समझना सम्भव होगा ?—समयसे बाहर निकलनेका क्या अर्थ है ?—क्या मृत्युका दरवाज़ा हमें समयकी क़ैदसे मुक्त कर देता है ?—यदि समयकी रीलको उलटी घुमाया जाये तो ? हज़रत वेलसने टाइमकी गाड़ीमें अपने मनका घोड़ा जोतकर भविष्य ही में नहीं अतीतमें भी तो सफ़र की थी। —तब १९६७ से १९६६,६५,६४""तब शेष-शताब्दी ३३ वर्षकी न होकर ६७ वर्षकी होगी, और स्पेस-युगसे प्रारम्भ करके अणु युग द्वितीय महायुद्ध प्रथम महायुद्ध आदिके रास्ते हमें जंगलकी ओर दौड़ना पड़ेगा !—यदि कोई मुर्दा क़ब्र फोड़कर उठ खड़ा हो तो भी क्या वह अपनी स्मृतिकी सम्पत्ति अपने पास सुरक्षित पायेगा ?—तब क्या उसके लिए उसका वास्तविक अतीत ही भविष्य नहीं हो उठेगा ? कैसी असुविधा है ? कितनी विवशता है ?—मृत्युसे बढ़कर मानवकी और कोई नियति नहीं है, और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके बारेमें ही वह कुछ नहीं जान पाता, सोच पाता !—जीवनकी दिशाके अलावा अन्य किसी दिशासे हम मृत्युको नहीं देख पाते, पर इसीलिए क्या वह जीवनका विलोम हो जायेगी ?—नये रास्तेका वह मोड़ क्यों न हो ? रंगभूमिके पार परदेके पीछे कुछ नहीं है यह कैसे कहा जा सकता है ?—क्या पता, इस पार केवल नाटक-ही-नाटक हो, लेकिन सच्चा वास्तविक जीवन उधर ही हो ? नाटकके लिए मेकप, पूर्वाभ्यास और प्रॉम्प्टिंग, सभी तो उधरसे होता है ! —यानी इधर सिखा-सिखाया, पूर्वानुयोजित एक अनिवार्य नियति है, अभिनय-कलामें वास्तविकताका भ्रम पैदा करने-भरकी छूट है। जो कुछ वास्तविक है वह उधर ही, नेपथ्यके पार, नियति नहीं !—उधर क्या मनुष्य अधिक उन्मुक्त है ? क्या उसकी इच्छा-वासनापर किसी तरहका अंकुश नहीं ? —क्या उसकी आवश्यकताएँ उस पार अभाव नहीं जानतीं ?—और यदि ऐसा है तो वह जीवित (?) किस लक्ष्यके लिए रहता है ? —उस अवस्थामें वह जीवित होता है या जीवन्मृत-अवस्थासे भिन्न किसी अवस्थामें ? —वासना-आकांक्षा संघर्षसे हीन जीवन क्या एक गम्भीर सुषुप्ति नहीं ?

मृत्युके बारेमें विचार इसलिए आवश्यक हो गया कि शेष-शताब्दीमें कई व्यक्तित्व अपनी नियतिको प्राप्त करनेके लिए विवश होंगे। पचासके पार पहुँचे हुए निश्चय ही इस दिशामें देखनेकी चेष्टा कर रहे होंगे। उनमें-से निश्चय ही एक मैं भी हूँ। शताब्दी-[illegible] नहीं देखना चाहता। सिक्स्थ-सेन्सकी बात कभी-कभी सुनाता हूँ। १९८४ के नवम्बर तक मुझे चल देना चाहिए—जार्ज ऑरवेलकी वह १९८४ की दुनिया एक अच्छी-खासी मंजिल है।

सिक्स्थ-सेन्स—मानवने केवल पाँच बोध ही काममें लिये हैं। कोई कारण नहीं कि वह अन्य प्राणियोंकी तरह अपनी घ्राण, दृष्टि, स्पर्श, श्रुति और स्वादको अधिक पैना नहीं कर सकता, बल्कि कुछ बोध तो वह नये प्राप्त कर सकता है। जानवरोंको प्रकृति-के आसन्न-प्रकोप, जैसे आँधी, तूफ़ान, भूकम्प आदिका काफ़ी पहले एहसास हो जाता है। कुछ पक्षी अपने काम-सहचरको ढूँढ़नेके लिए पृथ्वीकी पूरी लम्बाईकी बाधाको बाधा नहीं मानते !—क्या सिक्स्थ-सेन्स किसी ऐसे ही बोध-विकासकी पहली सीढ़ी तो नहीं ?—तब शायद इस दिशामें शताब्दीके अन्त तक कुछ ठोस प्राप्ति मानवको हो सकती है।

● दिमाग़में जो कीड़ा रेंगता है···

कहते हैं कि बुद्धि नामक तत्त्व दिमाग़में भरे किसी भूरे पदार्थपर निर्भर करता है। शरीर-की अन्य कोशिकाएँ (सेल्स) तो घटती-बढ़ती रह सकती हैं, यानी पुरानी कोशिकाके नष्ट होनेपर उसके स्थानपर नयी कोशिका उसका स्थान ले लेती है, किन्तु मस्तिष्ककी कोशिकाएँ यदि एक बार नष्ट हो जायें तो उनकी स्थान-पूर्त्ति असम्भव है। इसीलिए मस्तिष्कमें एक बार यदि किसी तरहकी तोड़-फोड़ हो जाये तो उसकी मरम्मत नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो सकती। अवश्य ही विकास (इवोल्युशन) के साथ मस्तिष्ककी समाई बढ़ती गयी है, स्वयम् मानवके आदिकालीन मस्तिष्ककी आजके मस्तिष्क-भारसे तुलना करनेपर यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है, किन्तु यह सम्भव नहीं दीखता कि शेष-शताब्दीमें मानव-मस्तिष्ककी क्षमतामें कोई अनुपेक्षणीय वृद्धि होगी!—किन्तु एक दूसरी दिशामें सम्भावनासे इनकार नहीं किया जा सकता! मानव-शरीरके प्रथम तेईस जोड़े कृमिसूत्रोंपर समूचे मानवके भावी शरीर, जीवन और शक्तिके स्रोतोंका दारोमदार है। इन ४६ अदद कृमिसूत्रोंको अभी पहचाना नहीं जा सका है कि दिमाग़में रेंगनेवाले कीड़ोंका जनक कीड़ा कौन है। हाँ नर और मादाकी तमीज़ करनेवाले कीड़ोंको अवश्य 'एक्स' और 'वाइ' नामकी संज्ञा दी गयी है। इस दिमाग़ी कीड़े ही में तो कहीं सिक्स्थ सेन्सका रंग नहीं छिपा हुआ है? अवश्य ये कीड़े वंश-परम्परागत गुणोंका ही आनुगत्य करते हैं, किन्तु गाहे-ब-गाहे इनमें उत्प्रवर्त्तन (म्यूटेशन) भी होता है, और वस्तुतः यह उत्प्रवर्त्तन ही विकासका मार्ग प्रशस्त करता है। आजके थर्मोन्यूक्लिअर युगमें उत्प्रर्त्तनको नियन्त्रित करनेकी दिशामें प्रगति चालू है। इसीके द्वारा हम फ़सलोंको जल्दी उगानेके प्रयोग कर रहे हैं। बहरहाल, लगता यही है कि, अपवादोंको छोड़कर, शेष शताब्दीमें मनुष्य अपने वर्त्तमान पंच-बोधके दायरेमें ही क्रियाशील रहेगा, चाहे राजनीतिके क्षेत्रमें पंचशीलकी बात बिलकुल ही क्यों न भुला दी जाय।

फ़सलें बढ़ानेकी बातके साथ ही, बढ़ती आबादीकी बात मनमें आये बिना नहीं रहती। अगली जन-गणनाका अंक पचास करोड़से काफ़ी ऊपर रहेगा। वर्तमान दर-भावकी प्रवृत्ति यदि बनी रही, और दर-भावोंकी प्रवृति शायद बढ़ती रहना ही जानती है— तो शेष शताब्दीके अन्त तक, गत-गणनाका दुगना, यानी ९० करोड़की आबादी भारतके मत्थे मढ़ी हुई है। व्यक्ति और सरकारके परिवार-नियन्त्रण (नियोजन—माफ़ कीजिए यह शब्द 'सॉफ्ट पेडलर्स'के लिए ही मौज़ूं है) के प्रयत्न यदि कामयाब हुए तो इसे ७४ करोड़ तक रोका जा सकता है!—तो सरकारका लक्ष्य, १९७१ तक खाद्यके मोर्चे पर आत्मनिर्भरता, पूरा हो सकेगा?— न हो सके, तो इस हतभागे देशकी लम्बाई-चौड़ाईमें, न सूखोंकी कमी होती है न बाढ़की, जिनके कन्धे किसी भी दोषको ढोनेके लिए काफ़ी मज़बूत हैं। अगर स्टेटिस्टिक्सकी ट्रिकसे १९७१ तक आत्मनिर्भरता प्रमाणित की भी जा सके और यह स्मरणीय है कि यही वर्ष जन-गणनाका वर्ष भी है—तो भी शेष-शताब्दी तक न भरनेकी अपेक्षामें खुले नये मुखोंमें न खाद्य-समस्याकी सुरसाके मुख-में कोई छोटा हो सकेगा। अलबत्ता विज्ञान तबतक सिंथेटिक खाद्यकी कुछ गोलियाँ इस सुरसाके मुँहमें डालना प्रारम्भ कर सके तो कुछ गति दिखाई दे सकती है। और भारत ही क्यों, यह संकट तो सारे विश्वका है!— सारे विश्वकी आबादी यदि सन् २००० तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनी हो जाती है तो निश्चय है कि हमें दिवालिया जमींदारकी खाली थैली एक ओर पटककर दरिया दिल सखी समन्दरकी ओर निगाह दौड़ानी होगी। खाद्यकी आदतोंको बदलनेका काम तो अभी भी शुरू हो ही गया है।

• ऊर्जा और डॉ० फाउस्ट :

पृथ्वीपर अवतरित होनेके बादसे ही मनुष्य शक्ति या ऊर्जाके प्रयोगके तीन स्तर पार कर चुका है। आदिम अवस्थामें वह ऊर्जाके लिए पूर्णतः प्रकृतिपर निर्भर करता था। कन्द-मूल, जंगली फल या शिकार उसके खाद्य थे। हवा-धूप-पानी अनजाने ही प्रचुरतासे उसे प्राप्त थे, प्राकृतिक गुफाएँ उसका आवास थीं। दूसरे स्तरकी शुरूआत तब होती है जब वह निजी प्रयत्न-द्वारा ऊर्जा प्राप्त करने लगा। उसने अग्निसे परिचय प्राप्त किया, धरतीका कर्षण करके उसके रससे वह शस्त्र पैदा करनेके काममें प्रवृत्त हुआ। वर्षाके जलके अलावा नदियोंसे पानी नालियोंके द्वारा लेकर उसने जमीन सींची, और एक नयी सभ्यता, कृषि-सभ्यता जन्म लेने लगी। परिवार क़बीले और राज्य अस्तित्वमें आने लगे। ऊर्जाके प्रयोगके इस स्तरकी साक्षी आज भी कई आदिम-जातियोंमें और पिछड़े देशोंमें प्रचुरतासे पायी जाती है। तीसरे स्तरका आदिकाल तो अभी कुछ ही शताब्दियों पूर्व प्रारम्भ हुआ है, जब कि मानवने ऊर्जाको प्राप्त करनेके यान्त्रिक तरीक़े इस्तेमाल करना शुरू किया। वस्तुतः यही हमारी आजकी औद्योगिक-सभ्यताका प्रवेशकाल है। यान्त्रिक साधनोंसे प्रगतिकी रफ़्तारमें पहलेकी अपेक्षा बहुत अधिक वृद्धि हुई है। इस युगकी उपलब्धियों और समस्याओंपर विचार करनेका यह प्रसंग नहीं है। हम आज--प्रायः सारा संसार इसी अध्यायके अन्तिम चरणमें गुजर रहा है।

ऊर्जाके प्रयोगका चौथा चरण प्रारम्भ होता है अणुकी नाभिको खोलकर उसमें-से अखूट ऊर्जाको उन्मुक्त करना—केवल मात्र उन्मुक्त करना ही नहीं, क्योंकि तब तो वह पिण्डोराके बाक्सका ढक्कन उठाना ही हुआ। उस अखूट ऊर्जाको अपनी सेवामें नियोजित करना, इस फ्रैंकन्स्टाइनको पालतू बनाना। इसकी सम्भावनाओं—और एक बार फिर समस्याओं—पर विचार हो रहे हैं।—विचार होने तक यह फ्रैंकन्स्टाइन अपनी उद्दण्डताका, वहशीपनका परिचय दे सकता है, दे रहा है। गेटेके विश्व-विश्रुत पात्र डॉ० फाउस्टकी आत्मा अभी इस राजनीतिके मेफिस्टोफेलिसके हाथों बिकी हुई है। लेकिन हर्ष और सन्तोषका विषय है कि ग्रेटचेनके बलिदानके बाद डॉ० फाउस्टको पश्चात्ताप होता दिखाई दे रहा है। चिकित्साके क्षेत्रमें इससे सहायता ली जाने लगी है। कृषिके क्षेत्रमें भी संघटित खेती-द्वारा वर्षमें तीन-तीन और उससे भी अधिक फ़सलें प्राप्त करनेके प्रयत्न किये जा रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• गरदनपर सवार राजनीति :

राजनीतिकी जब चर्चा आ गयी तो ऐसा लगने लगता है, मानो हम ऊर्जाके क्षेत्रमें ही नहीं, नीतिके क्षेत्रमें भी पृथक्-पृथक् स्तरोंपर रहते आये हैं। प्रारम्भिक स्तर तब शायद भय-मिश्रित धर्म-नीतिका था, उसके बाद कृषिकी उत्प्रेरणाके साथ हम विशिष्ट समाज-नीतिके स्तरपर पहुँचे जिसमें परिवार-राष्ट्र आदि सम्बन्ध संगठित-विकसित हुए। अगला चरण अर्थनीतिका था, जिसके सायेमें पूँजीवाद-समाजवाद, मिश्रित-अर्थप्रणालियाँ, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार आदिका जाल-तना फैला। अभी इस अध्यायके अन्तिम परिच्छेद लिखे ही जा रहे हैं कि राजनीतिने करवट लेकर हमारी ओर मुँह फेर लिया है, और उत्पादनके सब साधनोंपर सहज ही राजनीति हावी होती जा रही है। अर्थनीतिकी प्राथमिकता नष्ट हो जानेसे कई देशोंमें आर्थिक-संकट छाया हुआ है, और वह कम होनेकी अपेक्षा बढ़ता ही जा रहा है। भारत इसका एक बड़ा अच्छा उदाहरण हो गया है।

गत दो वर्षोंका सूखा भारतीय-इतिहासमें नया नहीं है। यदि आश्चर्य किसीको हो तो इस बातपर हो सकता है कि अन्तर्राष्ट्रीय-सहकारके इस युगमें, इतने प्रचुर परिमाणमें खाद्य और मुद्रा दोनों रूपोंकी सहायताके बावजूद, हमें इस संकट-के लिए इतनी बड़ी क़ीमत चुकानी पड़ी और पड़ रही है। शायद यह कहनेमें किसी-को संकोच न होगा कि इस संकटके लिए मूलतः राजनीति ही जिम्मेदार है, जिसकी सूक्ष्म-आलोचना करनेका यह स्थान नहीं है। यदि खाद्य-सामग्रीका अभाव होता तो स्पष्ट है कि कालाबाजारमें भी वह उपलब्ध न होता। यह सरकार और सरकारी नीति-के नामपर बड़ा कलंक है कि कालाबाजार-में आप जो चाहें और जितना चाहें उतना प्राप्त कर सकते हैं!—अवश्य ही १९६२ के चीनी आक्रमण तथा १९६५ के पाकिस्तानी-युद्धने हमारे आर्थिक ढाँचेको झकझोर डाला है, और अब भी इनके सीमान्तोंपर आक्रमणकी आशंकाएँ हमें निश्चिन्त होकर अपनी अर्थनीति सँभालनेका अवसर नहीं देतीं, किन्तु यह सब भी तो राजनीतिक-षड़यन्त्र ही है, जिसका मूल्य चुकानेको हम बाध्य हैं। आसार देखते हुए सम्भव नहीं लगता कि आगामी शेष-शताब्दी-में हमें किनारा मिल सके।

चीनकी निजकी समस्याएँ कम नहीं हैं किन्तु उनको बढ़ा-चढ़ाकर देखना हमें ठीक लगता है। यही बात पाकिस्तानके लिए भी कही जा सकती है। चीनकी घरेलू समस्याओंके बावजूद उसकी प्रगतिसे इनकार नहीं किया जा सकता। वहाँपर संघर्ष है तो सत्ताका, जिसमें हमारी दिलचस्पी कूट-नीतिक ही हो सकती है, कि दोनों दल आपसमें लड़कर अपना बल क्षय करें, किन्तु आसार उलटे ही दिखाई देते हैं। चीन आणविक-अस्त्रोंमें तीव्र प्रगति कर रहा है और अब तो बड़े आणविक राष्ट्रोंके लिए भी चुनौती हो गया है। आसार यह दिखाई देते हैं कि इस खतरेके मुक़ाबलेके लिए शीघ्र ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य दो शत्रुओंको अपना वैर भुलाकर उसके खिलाफ़ मोर्चा तैयार करना पड़ेगा।—चीन अपने ही कारनामों और जल्दबाज़ीसे विश्व-के सारे राष्ट्रोंमें अकेला पड़ता जा रहा है, केवल पाकिस्तान उसके पीछे लगा हुआ है, वह भी शायद इसलिए कि भारतसे उसकी दुश्मनीको बराबर खाद मिलती रहे। भारत-के राजनेता शायद अपने स्वार्थों तथा कुरसी-की चिन्तामें इतने मशगूल हैं कि वे बाहरी अवसरों और खतरोंको नहीं देखते!—यह समय है जब कि वह दक्षिण-पूर्व एशियाके स्वतन्त्र-चेता राष्ट्रोंका अगुआ बनकर चीन-की सर्वग्राही-दृष्टिसे सबको बचानेवाले संग-ठनका सूत्रपात करे! भावुकतापूर्ण हवाई बातोंकी अपेक्षा राजनीतिमें ठोस क़दम और तत्काल लाभका ही सम्मान होता है। यह आशा की जा सकती है कि बीसवीं शताब्दीके अन्त तक किसी ऐसे संगठनका आविर्भाव होगा, जिससे चीनकी बेतहाशा-भूखको लगाम लग जाये।

चीनका गृह-युद्ध बढ़ता जायेगा, लेकिन अगले चार-पांच वर्षोंके भीतर ही सत्ताके संघर्षका निर्णायक समाधान हो जायेगा। उससे भारतको या दुनियाको किसी बड़े लाभ या राहतकी आशा नहीं करनी चाहिए, क्योंकि चीनकी विस्तारवादी नीतिमें कुछ अन्तर होनेकी सम्भावना नहीं है। पाकि-स्तानके नेता युद्धोन्माद बनाये रखेंगे किन्तु भारतके खिलाफ़ कोई साहसिक क़दम उठानेका अवसर न पाकिस्तान लायेगा न चीन ही। सीमापर छुटपुट झगड़े चलते रह सकते हैं। सम्भावना नहीं है कि शेष शताब्दीके अन्त तक भारतके इस सिरदर्द-का समाधान हो जाये।

वियतनाम युद्धका फ़ैसला तबतक हो चुकेगा। उत्तर वियतकांगके पक्षमें विश्व-जनमत बनता चला जा रहा है। स्वयम् अमरीकामें राष्ट्रपतिके विरोधमें काफ़ी दृढ़ता आयी है। इसी आधारपर अमरीका और अमरीकी प्रधानकी प्रतिष्ठा विश्वमें नष्ट हो रही है। अमरीका अभी साँप-छछूंदरकी स्थितिमें है। वह अवसरकी खोजमें है कि जिससे उसकी नाक भी रह जाये और वह स-सम्मान इस बेमतलबके सर्वनाशसे हाथ खींच सके।

मध्यपूर्वमें स्थिति यथावत् ही रहेगी। इसरायलने जो भूमि हड़प ली है, उसे वह नहीं छोड़ेगा, और अरब राष्ट्र उससे उसी तरह वह ज़मीन खाली नहीं करवा सकेंगे, जैसे भारत चीनसे अपनी अधिकृत भूमि नहीं खाली करवा सका है। हाँ, नारा यह बराबर चलता रहेगा कि वे दुश्मनसे एक-एक इंच भूमि वापस लौटा लें—क्योंकि राजनेताओंकी कुरसीको टिकाये रखनेका यह भी आसान तरीक़ा है।

भारतवर्षमें अभी छह और चुनाव शताब्दीके अन्त तक होने हैं। कांग्रेसके खण्डहरको खड़ा रखनेके लिए अभी अगले दो चुनावों तक प्रयत्न किये जा सकते हैं। लेकिन राजस्थान-जैसे प्रान्तमें मन्त्रियोंके खम्भे खड़े करके अपनी उम्र बढ़ानेकी कोशिशोंके बावजूद खण्डहरका आखिर क्या भविष्य हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता है ?—कांग्रेसकी प्रतिष्ठा रहती यदि वह अपनी नीतिकी विफलता देखते ही अपने-आपको भंग करके; सदस्योंको दूसरे दलोंके निर्माणका अवसर देती !—कांग्रेसको गये चुनावमें जो धक्का लगा है, उससे कोई खास सबक़ कांग्रेसको मिलनेवाला नहीं है। अगले चुनावमें कांग्रेसको और गहरा आघात लग सकता है। शायद अगले दो चुनावों तक कोई नया दल अस्तित्वमें आये, जिसमें कांग्रेसका आदर्श, जनसंघकी तत्परता, तथा साम्यवादियोंकी निष्ठा हो।

देशमें साम्यवादियोंका भविष्य सन्दिग्ध है, वामपक्षियोंका तो शायद नहीं ही है। स्वतन्त्र-पार्टी और जनसंघ यदि परस्पर मेल कर लें तो उनकी शक्ति बढ़ सकती है। संसोपा और प्रसोपामें नेतृत्वका अभाव अभी दूर होनेकी सम्भावना नहीं है। देश-की आर्थिक-अवस्था इसकी राजनीतिसे जुड़ी हुई है। दुर्भाग्यसे एक ऐसा विषचक्र फैलता और बढ़ता जा रहा है कि दिन-ब-दिन स्थिति बदतर होती जा रही है।—मज-दूरों और कारीगरोंका रोष समझमें आने-वाली चीज़ है, किन्तु सरकारकी शिथिलता तथा अनिश्चयकी स्थितिसे काले बाज़ारियों-की ताक़त घटनेकी बनिस्बत बढ़ती ही जा रही है। उच्छृंखलता आज प्रजातन्त्रका पर्याय होने जा रही है। छात्रोंकी ग़ैर-ज़िम्मेदाराना हरकतें, नगरोंमें बढ़ती हुई गुण्डागर्दी, सभ्य नागरिकोंकी सुरक्षाकी भावना और सर-कारके प्रति आस्थाको चरती जा रही है।—अन्तर्राष्ट्रीय कुचक्र भी किसी राष्ट्र-की सरकारको ठीक तरह कार्य करनेसे रोक सकते हैं, जैसा कि अफ़्रीकाके कुछ देशोंमें (वियतनाममें भी !) देखा गया है, किन्तु भारतके लिए अभी ऐसी कोई स्पष्ट बाधा दिखाई नहीं पड़ती। आवश्यकता यही है कि सत्ताके लोभ तथा स्वार्थको त्यागकर कोई दल दृढ़तासे काम ले।

● अब नया ब्लू-प्रिण्ट···

साहित्य और कलाके क्षेत्रमें इस शताब्दी-में काफ़ी परिवर्तन हुए हैं। उन्नीसवीं शतीके साथ ही इम्प्रेशनिज़्मका युग चला गया, और वास्तविकताके किसी भी भ्रमका बलपूर्वक बहिष्कार करके जीवनके प्रति जो दृष्टिकोण अभिव्यक्तिके लिए मौज़ूं समझा गया वह प्राकृतिक तत्त्वोंको विकृत करके प्रस्तुत करनेका हुआ। क्यूबिज़्म, कंस्ट्रक्टिविज़्म, एक्सप्रेशनिज़्म, दादावाद, सुर-रीलिज़्म आदि इज़्म और वाद दृढ़ताके साथ प्राकृतिक और वास्तविक प्रभाववाद (इम्प्रेशनिज़्म) से मुंह मोड़ते हैं। साम्प्रतिक साहित्य और कला एक और मानेमें पूर्वगत साहित्य तथा कलासे पृथक् है, वह आग्रहपूर्वक 'कुरूप' (अग्ली) हो रही है, पेण्टिंगके क्षेत्रमें चित्रात्मक मूल्यों तथा कविताके क्षेत्रमें उत्तेजक और मोहक बिम्बोंको तथा संगीतमें सुरीलेपन तथा मिठासके तत्त्वोंको नष्ट करनेपर तुली हुई है। बल अभिव्यक्तिके आवेगमय (इमोशनल) पहलूपर नहीं, बौद्धिक पहलूपर दिया जाता है।—इसीलिए आज नयी कविता, नयी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी, नया साहित्य या नवलेखन-जैसे नाम ही नहीं, बल्कि अ-कविता, अ-कहानी, अ-निबन्ध, अ-साहित्य आदि शब्द धड़ल्लेसे सुनाये और चलाये जा रहे हैं। शेष-शताब्दीमें एण्टी-यूनिवर्सकी अवतारणाके पूर्व ही साहित्य और कलाके क्षेत्रमें एण्टीके वज़नपर निष्कविता, निष्कथा, विनिबन्ध या निस्साहित्य-जैसी विधाएँ प्रचलित हो जायें तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

लेकिन नहीं, मुझे ऐसा लगता है कि आनेवाला युग न दार्शनिकोंका होगा, न वैज्ञानिकोंका! प्रजातन्त्रमें हम देख रहे हैं कि एक ओर यदि अर्थने सत्ता सँभाली है तो दूसरी ओर नारेबाजी और हुल्लड़बाज़ी-से भरी राजनीतिने। आनेवाला युग अर्थ-नेता या राजनेताका भी नहीं रहनेका। उपयोगितावाद कसौटीपर कसा जा चुका है। आजकी नवजवान पीढ़ी करवट बदल रही है, और उसको नियन्त्रित करनेवाला क्षेत्र है शिक्षाका क्षेत्र। दुर्भाग्यसे शिक्षकोंका स्तर सुधारनेकी अपेक्षा बिगड़ा ही अधिक है। इसी क्षेत्रसे मिलता-जुलता क्षेत्र साहित्यका क्षेत्र है। और यदि आशा की जाये तो इसी क्षेत्रसे कुछ आशा की जा सकती है! कहीं-कहीं चर्चा सुनाई देती है कि भारतकी समस्याओंके अन्तका एक ही तरीक़ा है—फौजी शासन! मैं नहीं जानता, ऐसी आशा करनेवाले व्यक्तियोंका मन और बुद्धि कितनी दिवालिया है! मैं समझता हूँ, आनेवाले युगका मसीहा साहित्यकार होगा!

अवश्य ही अभी साहित्यके क्षेत्रमें पर्याप्त उच्छृंखलता है, ग़ैर-ज़िम्मेदारी है! उसमें तड़प है, छटपटाहट है, और सबसे बड़ी बात उसमें लिप्सा नहीं है, लाग-लपेट नहीं है, अपने-आपके प्रति न केवल अनासक्ति है, बल्कि एक निर्मम, चिकित्सककी ऑपरेशन-द्वारा मवादको बाहर निकाल फेंकनेकी शक्ति, साहस और इच्छा है।

मैं निराशावादी नहीं हूँ, और मेरी ये आशंकाएँ मेरी पीढ़ीकी हैं, जिसके बारेमें मेरी सूचना है कि शेष शताब्दीमें यह पीढ़ी विगत हो जायेगी। जीवनका भार ढोते रहनेका नाम ही जीवन नहीं है। हर पीढ़ी-के सोचनेका, और समस्याओंके सींग पकड़ने-का अपना तरीक़ा होता है। शेष-शताब्दीकी जिस पीढ़ीकी बात मैं करना चाहता हूँ उसकी अधिकसे अधिक उम्र होगी ३२ वर्ष! और यह उमर है जो किसी बाधा-को नहीं पहचानती, किसी समस्यासे नहीं डरती। जिसकी रगोंमें गरम खून बहता है, और दिमाग़में उस भूरे पदार्थके न्यूरोन मचलते रहते हैं, जो किसी निषेध (इनहि-बिशन)के सामने नहीं झुकते। यदि उन कोशिकाओंकी संख्या बढ़ती नहीं तो भी वे किसी आसन्न-अन्तकी आशंकासे भी ग्रस्त नहीं हैं। वे इन समस्याओंको अपने लिए क्रीड़ाकी, खेल ही की कसौटी समझ सकते हैं, और इस परिप्रेक्ष्यमें उनका अगले तीन दशकोंका ब्लूप्रिण्ट इससे बिलकुल जुदा हो तो भी प्रसन्नता ही होगी। ■ ■

८।ए नन्दन रोड,
भवानीपुर, कलकत्ता-२५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग
ण
दे
व
ता

• भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित
एक लाख रुपयेके सर्वोच्च साहित्य
पुरस्कारसे इस वर्ष सम्मानित—

• बंगलाके मूर्द्धन्य उपन्यासकार
ताराशंकर वन्द्योपाध्यायकी
अद्वितीय उपन्यास-कृति--

• जो देशके लाखों-लाख
बंगला-भाषी पाठकों-द्वारा
पढ़ी-सराही गयी--

• जिसका हिन्दी रूपान्तर
अब आपके लिए प्रस्तुत हो रहा है !

गणदेवता : अर्थात् भारतीय जीवनकी परम्परागत सांस्कृतिक चेतनाका जीवन्त रेखांकन ! भारतीय जन-जागरणके विध्वंसकारी और निर्माणकारी प्रभावोंके परिप्रेक्ष्यमें मानव-मनकी सरल-जटिल अभिव्यक्ति ! विविध चरित्रोंके उदात्त-अनुदात्त क्रिया-कलापोंका हृदयग्राही विवरण ! जन-गणके देवत्व-रूपकी आस्थामय प्रतिष्ठा करनेवाला मोहक शिल्पसे ग्रथित यह उपन्यास जन-जीवनका गद्यात्मक महाकाव्य है।

मूल बंगलामें गणदेवता 'चण्डीमण्डप' और 'पंचग्राम' शीर्षकोंके अन्तर्गत अलग-अलग खण्डोंमें प्रकाशित हुआ है, भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रस्तुत हो रहे इस हिन्दी रूपान्तरमें दोनों पुस्तकें एक ही जिल्द 'गणदेवता'में समाहित हैं।

अपनी प्रतियाँ कृपया अभीसे सुरक्षित करायें।

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन
कलकत्ता :: वाराणसी
विक्रय-केन्द्र
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीकी शोध-समीक्षाके क्षेत्रमें
नयी क्रान्तिकारी कृति

तुलसी

आधुनिक वातायन से

डॉ० रमेश कुन्तल मेघ

प्रस्तुत कृति मध्यकालीन संस्कृति, कला और समाजको आधुनिक बोधकी दृष्टिसे समाजशास्त्र एवं सौन्दर्यबोधशास्त्रके अधुनातम आधारोंपर प्रतिष्ठित करनेका नवीनतम और सम्भवतः अपने प्रकारका पहला प्रयास है। इसमें जहाँ तुलसीकी जीवनी, उनका मनोवैज्ञानिक व्यक्तित्व, उनके मस्तिष्कका ऐतिहासिक विकास और उनके युगका इतिहास-दर्शन नये आयामोंमें उभरकर आये हैं वहीं तुलसीके सौन्दर्यबोध-तत्त्व और मिथकरचना-तत्त्वका पहली बार गम्भीर अध्ययन-मन्थन किया गया है। इस दृष्टिसे निश्चित ही यह कृति नये आयामोंकी खोजका एक व्यापक अनुष्ठान है।

मूल्य १२-००

तुलसीके प्रत्येक अध्येता और देशके
सभी पुस्तकालयोंके लिए सर्वथा अनिवार्य

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

३६२०/२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ एक बेफ़िक्र दुनिया ॥ वह दुनिया भी है—उसके सहीपन और ग़लतपनकी चर्चा बाद को बात है लेकिन उसका 'होना' यहाँ चर्चाका विषय है। 'छूट भागनेकी प्रवृत्ति' और 'रिहा हो जानेकी ललक' बड़ी तेज़ीसे बढ़ती जा रही है। यह मुक्ति आदमीको अन्दर-बाहर दोनों तरफ़से तोड़ती है। यदि यह टूटना ज़रूरी है तो···? यदि यह ग़लत है तो···?

बीट, रेडगार्ड, हिप्पी

कैलाश वाजपेयी / लगता है जैसे दुनिया-भरमें वर्तमानका लतमर्दन किया जा रहा है। कला, राजनीति, चिन्तन सबपर एक विचित्र प्रकारकी ऐंठन फैल रही है। सब अवाक् होकर एक द्विमुखी नाटक देख रहे हैं। एक ओर हैं लाल रक्षक—भयंकर क्रूर और हर प्रकारकी मानवीय संवेदना एवं प्रतिक्रियासे कटे, पूर्ण निरंकुश सपाट और उद्धत। दूसरी ओर हैं हिप्पी—विभक्तमनस्क और उत्थे! ग़लत सन्दर्भोंमें गान्धी और बुद्धको पुकारते अन्तर्मुखी यात्राके बहाने 'मारिजुआना' और एस० टी० पी० के स्फारमें यौन-स्वच्छन्दताका आनन्द लेते। जिनकी अवसांस्कृतिक गतिविधियोंसे चौकन्ना होकर राज्यको दो हजारसे अधिक नये मनोचिकित्सा-गृह खोलने पड़े हैं। चिकित्साके लिए आनेवाले युवक-युवतियोंमें अधिकांश अठारहसे पच्चीस वर्षकी आयुके बीचके हैं, अधिकतर लड़कियाँ गर्भवती हैं या फिर रतिरोगकी शिकार। इन मानस-रोगियों—जिनकी संख्या अब हज़ारोंमें पहुंच रही है—का कोई ठीक-ठिकाना नहीं है। माँ कहींकी थी, पिता कहींका, दोनों अभी भी साथ रह रहे हैं या उनमें सम्बन्ध-विच्छेद हो चुका है—नहीं ज्ञात। चिकित्सा-गृहसे निकलकर वे कहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जायेंगे—नहीं ज्ञात। चिकित्सा-गृहके प्रार्थना-कक्षमें उनकी अवसन्न चेतनाको सामान्य धरातलपर लानेके लिए अनेक 'शमक' देनेके साथ ही हलकी करुण स्वर-लिपियोंमें बँधी प्रार्थना-कड़ियाँ बजायी जाती हैं जिन्हें सुनते हुए वे कभी-कभी अपनी अन्तर्मुखी यात्राओं के विषयमें भी कुछ बुदबुदाते हैं! 'कैज़नोवा' के संस्मरण इनकी यौन-स्वच्छन्दताके समक्ष फीके लगते हैं और याद आता है भ्रष्ट बौद्धयुगीन भारत।

● आधारसे अलग विश्लेषण :

बौद्धधर्मकी विकृत परम्पराके रूपमें वज्रयानी सम्प्रदायके सिद्ध डोमिनी और रजकी आदि को ठर्रा पिलाकर उसे भोगते थे और रति-की प्रक्रियामें साँस खींचकर ध्यानावस्थित हो जाते थे। हठयोगी तान्त्रिकोंने इस मुद्रा-को वज्रासनकी संज्ञा दी थी। यहाँ हमारा ध्येय चमत्कार एवं आतंक पैदा करनेवाले सिद्धों और नाथोंको आध्यात्मिक दृष्टिसे धनी तथा प्रेम ओर पुष्पयुद्धका नारा लगानेवाले हिप्पी-समुदायको दिवालिया घोषित करते हुए उनकी तुलना करना नहीं वरन् उन कारणोंकी खोज-बीन करना है जिसके परिणामस्वरूप पृथ्वीपर अलग-अलग तरह-के अवसांस्कृतिक विस्फोट हो रहे हैं।

चाहे लाल रक्षक हों चाहे हिप्पी—इतना तो स्पष्ट है कि दोनों बुरी तरह खिन्न हैं और आद्यन्त विरुचि-रोगसे ग्रस्त। जिनमें एककी प्रतिक्रिया आक्रामक है, दूसरेकी विनयपूर्ण। लाल रक्षकोंने यह सिद्ध कर दिया है कि आदमी दीमक नहीं है जो [illegible] दम तक रानी दीमकके लिए कार्य [illegible] चला जाये। जबकि पुष्पयुद्धका नारा [illegible] वाला हिप्पी-समुदाय यन्त्रग्रस्त व्यक्ति [illegible] अपनी वैयक्तिक विशिष्टताको पुनर्मूल्यांकि[illegible] करनेका एक कमज़ोर प्रयत्न है जिसके [illegible] आजके जटिल तन्त्रवाले युगमें पिसते, [illegible] होते व्यक्तिकी क्षीण आवाज़ [illegible] देती है।

हम सभी इस तथ्यसे अवगत हैं [illegible] आजका समाज मनुष्यमें अपनत्वके स्थान[illegible] परायेपनका भाव अधिक भरता है। [illegible] तानाशाही हो, चाहे गणतन्त्र, दोनोंका प्र[illegible] यही है कि व्यक्ति महत्त्वहीन हो जाये [illegible] यान्त्रिक प्रगति और नगरीकरणने मनुष्य[illegible] अकेला कर दिया है, अब व्यवस्थाएं चाह[illegible] हैं वह 'अव्यक्ति' हो जाये और हो [illegible] धीरे-धीरे यही रहा है—सामाजिक जीव[illegible] जीते हुए भी मनुष्य असामाजिक हुआ [illegible] रहा है! दृग्विषयशास्त्रके अनुसार अकेला[illegible] और क्रूरता अनिवार्यतः अन्तःसम्बन्धित हैं, [illegible] क्रूरता, स्वपीड़ा, परपीड़ा आदि रूपोंमें स्वयं[illegible] व्यक्त करती हैं। प्रागैतिहासिक मानव [illegible] बर्बर इसीलिए था कि उस युगमें समाज[illegible] चेतनाका जन्म नहीं हुआ था। समाज [illegible] था, इसलिए भय भी नहीं था, इसीलि[illegible] उत्तरदायित्वकी भावना भी नहीं थी। किन्तु जैसे-जैसे समाज-चेतनाका आग्रह ब[illegible] गया मनुष्यको यह लगने लगा कि जीने[illegible] लिए आदान-प्रदान अनिवार्य है। समाज[illegible] उसे जहाँ एक ओर अपनत्व मिला[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा वहीं दूसरी ओर भयकी भावना भी बनी रही कि उसके द्वारा किये जानेवाले ग़लत कार्योंमें समाज हस्तक्षेप करेगा ! परिणामतः समाज द्वारा निर्धारित सीमाके भीतर रहकर मनुष्य उन्नति करता रहा किन्तु इधर पिछले चार-पाँच दशकोंमें सामाजिक जीवन कुछ इतना जटिल हो गया है कि मनुष्यको समाजसे अपनापेके स्थानपर ठण्डी उपेक्षा अधिक मिलती है, हालाँकि इसमें दोष किसीको नहीं दिया जा सकता किन्तु इस उपेक्षा और परायेपनके परिणाम बड़े भयंकर हो सकते हैं ।

• आजके आदमीका रोग :

यदि राजनीतिक विचारधाराको परिप्रेक्ष्यमें रखकर विचार किया जाये तो हम पायेंगे कि पार्टीकी सत्ताका अन्त गृहयुद्ध है जबकि व्यक्ति-स्वातन्त्र्यकी दुहाई देनेवाली गणतन्त्रात्मकताकी परिणति अकर्मण्य दर्शन, भ्रष्टाचार एवं यौन-स्वच्छन्दता हो सकता है । यह उक्ति इतिहासमें पूरी तरह चरितार्थ न हो किन्तु लाल रक्षक और हिप्पी आजके युगकी कुछ ऐसी स्वाभाविक परिणतियाँ हैं जिनके जन्मके बीज उनकी शासन-व्यवस्थामें पहलेसे ही विद्यमान थे । देखनेमें यह समस्या सतही लग सकती है क्योंकि अराजकता, बर्बरता, दुराचार, अपहरण और युद्ध-जैसी बुराइयाँ समाजमें प्रारम्भसे चली आ रही हैं किन्तु समाजशास्त्रीय दृष्टिसे आजके आदमीका रोग कहीं अधिक घातक और उसके परिणाम कहीं अधिक ध्वंसी हैं ।

• हिप्-हिप्-हिप्पी···

(स्टीफ़ेन गार्डिनर-द्वारा एक चित्र । उनके अनुसार नर-नारीका भेद अब नहीं रहा, हाथ ग़ैरजरूरी हैं और दिलकी जगह सूराख़ हो गया है ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाज-शास्त्र कहता है—जब समाजमें जीनेवाले व्यक्तिको यह लगने लगे कि उसकी क्षमताओंका उपयोग समाजके लिए उदासीनताका विषय बन चुका है, वह कुछ करे या न करे समाज उसे किसी भी रूपमें उत्साहित या निन्दित करने नहीं जा रहा तब व्यक्ति एक परोक्ष-सी अवहेलनाका अनुभव करता हुआ आहत होता है; यही वह बिन्दु है जहाँसे आदमी अपराधोंकी ओर आकृष्ट होने लगता है! अपराध-वृत्ति मनुष्यकी आदिम वृत्तियोंमें-से है, मनुष्य उसके प्रति भावुक भी बहुत है। अनजाने ही हम सब किसी-न-किसी रूपमें अपनी अपराध-वृत्तिका पोषण करना चाहते हैं। किन्तु समाज-द्वारा जब मनमें अवहेलनाका भाव पुख्ता होने लगता है तब कोई भी ऐसी शक्ति नहीं जो आदमीको अपराधोंकी ओर जानेसे रोक सके। परिणामतः मनुष्य वही-वही कार्य करना प्रारम्भ करता है जो समाजमें वर्जित हैं। वर्जनाओंको तोड़नेका सुख सामान्य सुखकी अपेक्षा अधिक लज़्ज़तदार होता है। इसीलिए अपरिचित माँसके साथ सहवास मनुष्यको सबसे अधिक सुख देता है, और तो और, प्रेम तक, जिसके साथ सात्त्विक आदि न जाने कितने विशेषण जोड़े जाते हैं और जिसे विषय बनाकर डलियों साहित्य रचा गया है, इसीके अन्तर्गत आता है। प्रेमसे मिलनेवाला सुख दरअसल अपराध-वृत्तिके पोषणका ही सुख है। इस प्रकार जहाँ एक ओर हत्या, लूट, आक्रामकता, अकेलेपनका अनुभव करनेवाले अस्त होते व्यक्तिकी क्रूर अभिव्यक्तियाँ हैं वहीं दूसरी ओर मादक द्रव्योंके सहारे आन्तरिक यात्राकी तैयारी और स्वच्छन्द यौनाचार भी अस्त होते व्यक्तिकी ग़ैरज़िम्मेदार क्रूर अभिव्यक्तियाँ ही हैं। (यह अलग बात है कि दुनियाके तमाम सारे अनुभवोंमें केवल सम्भोगका अनुभव ही ऐसा है जिससे मनुष्य कुछ नहीं सीखता) किन्तु यहाँ तो समस्या केवल यह है कि वे कौन-से कारण हैं जिनके परिणाम-स्वरूप अपराध-वृत्ति (यौन स्वच्छन्दता एवं आक्रामकता) आजके समाजमें सामूहिक रूपसे अपना सर उठाती है। हम यहाँ जान-बूझकर 'विद्रोह' शब्दका प्रयोग नहीं कर रहे क्योंकि बीमार समाजमें विद्रोही नहीं अपराधी जन्म लेते हैं और हमारे मतके अनुसार आजका युग विद्रोहियोंके उतना अनुकूल नहीं जितना अपराधियोंके लिए।

• यह हाहाहूती दुनिया :

जो हो, लगता है आजसे बीस वर्ष पूर्व हिरोशिमापर जो गेंदके आकारकी चमकदार वस्तु गिरी थी उसके परिणामोंने मनुष्यके मनोविज्ञानमें एक क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया है। उद्जन बमके भीषण परिणामोंके विषयमें जैसे-जैसे अधिक जानकारी प्राप्त होती जा रही है उसी अनुपातमें समूची मानव-जाति और अधिक भयभीत भी होती जा रही हैं। यही कारण है कि 'भविष्य' और 'सुरक्षा'-जैसे शब्द आजकी हाहाहूती दुनियामें कोई विशेष अर्थ नहीं ध्वनित करते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थिति यहीं तक रहती तब भी ग़नीमत थी किन्तु युद्ध-भयके साथ ही यन्त्रकी जटिलता और आर्थिक वैषम्यके फलस्वरूप 'परिवार' और 'पत्नी'-जैसे शब्द भी बेमानी हो चले हैं। जिन देशोंमें छोटी-से-छोटी मानवीय क्रिया तकपर यान्त्रिकताकी मुहर लग चुकी है वहाँ 'पत्नी'-जैसे सम्बन्धोंमें भी व्यापारीकरण-द्वारा विकृति आ जाना स्वाभाविक है। सामाजिक उपेक्षाकी कचोट-पर पारिवारिक अपनत्वकी गरमाहट मरहम-का कार्य करती है किन्तु दुर्भाग्यसे दुनियाके कई देश ऐसे भी हैं जहाँ मनुष्यको वैयक्तिक और सामाजिक दोनों स्तरोंपर भयंकर निर्वातका सामना करना पड़ता है और यह उसी दोहरे निर्वातका परिणाम है कि एक प्रकारकी दानवी स्वच्छन्दता विचित्र और अनगढ़ रूप रखकर आये दिन इन देशोंमें अपना सर उठाती है।

■ ■

एच-२६ साउथ एक्सटेन्शन,
भाग-१,
नयी दिल्ली-३

Heartiest DIWALI Greetings
From

KOHINOOR RUBBER WORKS

35/1A, Canal East Road, CALCUTTA-11

Leading manufacturers of :
Rubber & Canvas Footwears, Rubber Bladders, Hospital Rubber Sheetings, Cycle Tubes, Rubber Insertion Sheetings and other moulded goods.

Sole Selling Agents for Delhi, Punjab, Haryana and Himachal Pradesh.

PRAKASH BROTHERS

69-A, Narain Market,
Sadar Bazar,
DELHI-6

Telegram : "JUSTIFYING" *Phone* : 227460

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्माकी अविनश्वरता :

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥

शस्त्रोंके द्वारा इस आत्माका छेदन नहीं हो सकता, अग्नि इस आत्माको दग्ध नहीं कर सकती, जल इसको गीला नहीं कर सकता, तथा वायु इसे शुष्क नहीं कर सकती।

प्रसारक :

सेठ हरदत्तराय राधाकिशन चमरिया ट्रस्ट

१७८, महात्मा गान्धी रोड,

कलकत्ता – ७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ जो कल लिखी जायेगी ॥ यह आम लोगोंके लिए खुली डायरी है, आप भी स्वतन्त्र हैं कि अगली किसी तारीख़पर बैठकर दो-चार सफ़े रंग डालें—शर्त केवल एक है, आप बहैसियत आलोचक ही यह लिख सकेंगे। अगर आप कलाकार हैं तो अगले कम्पोज़ीशन की बात कीजिए।…

एक आलोचककी डायरी

■

अहमद सलीम / १५ जनवरी १९८० : आज एक पुराने लेखककी पुस्तक 'सृजन' समीक्षार्थ मुझे प्राप्त हुई है। पुस्तक देखनेमें आकर्षक है पर जाने क्यों छूते हुए भय लग रहा है। फिर भी मैं इसे पढ़ना चाहता हूँ। सो :

"साफ़ और स्वच्छ पानीके बहुत-से कटोरे मेरे आस-पास पड़े हैं। साफ़-स्वच्छ आकाशपर साफ़-स्वच्छ धूप लहरें लेती हैं। ऊपर देखूं तो यही आकाश और धूप पानीके कटोरोंमें विद्यमान। भागनेका कोई रास्ता नहीं। चुपके-से हाथ बढ़ाकर मैं एक कटोरेका आकाश हलक़में उंडेल लेता हूँ। आकाशका यह टुकड़ा मेरे भीतर उतरकर फैलने लगता है। मेरी हथेली साँस लेने लगती है। मेरे हाथकी हर उँगली आँख बन जाती है। मेरी आँखें दृष्टि। धड़कता, देखता, सुनता हुआ हाथ काग़ज़के स्तरपर सरसराता है। उजाड़, वीरान, बेजान काग़ज़को जीवित हाथका स्पर्श नींदसे जगाता है। हवा चलने लगती है। हवा घूम-घूमकर कहीं पहाड़ खड़े करती है, कहीं मैदान बिछाती है, कहीं सदाबहार जंगल उगाती है। मेरा हाथ हवाका सहचर है। जहाँ हवाने नदी बनायी, मेरे हाथने रंगोंमें डूबी हुई तूलिकाके साथ वहीं उस अस्तित्वमें अपनी साँस घोल दी—परन्तु ठीक उसी समय एक विचार मेरे मनको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घेर लेता है : भला देखो तो यदि तुम्हारा पानी सूख जाये तो कौन है जो तुम्हारे लिए मीठे पानीका स्रोत बहा लाये ?

सच पूछिए तो यह प्रश्न मुझीसे सम्बद्ध नहीं। हर कलाकारकी छातीमें यही प्रश्न धूम मचाये रहता है कि रचनाका स्रोत कहाँ है और उसका रक्षक कौन है ? यों समझिए कि जिसने इस प्रश्नका उत्तर ढूँढ़ लिया उसके लिए उसका रास्ता आकाश और धूपकी तरह साफ़-स्वच्छ है। और जिसने इसे महत्ता न दी, या जिसे इस प्रश्नका उत्तर न मिल सका वह तने हुए रस्सेपर खड़ा वह अन्धा है जिसे यह ज्ञान नहीं कि नीचे खाई है या नर्म सूखी घासका ढेर, जिसे यह भी ज्ञान नहीं कि रस्सा आगे-पीछे भी है या यहीं इस रस्सेका अन्त हो जाता है।"

और मैं पुस्तकको बहुत ही बेदिलीके साथ बन्द करके रख देता हूँ।

२० मार्च १९८० :

मैंने
सूरज चबाके थूक दिया
घोलकर चाँद कड़वे ठर्रे में
पी गया हूँ कि कुछ न देख सकूँ !

२५ मार्च १९८० :

रचना क्या, रचनाका स्रोत कैसा ? निरी बकवास हैं ये सारी बातें। ज्ञान काहेका ? हम तो वही लिखेंगे, जो हम सोचेंगे। समाज बिगड़ता है तो बिगड़े। हम कोई समाजके ठेकेदार हैं क्या ? कितने मसखरे थे अपने बुज़ुर्ग भी जिन्होंने एकसे एक बढ़कर शब्द गढ़ रखे थे। उन्हीं शब्दोंमें एक कला-की साधना भी थी। तो क्या हम मिट्टी-को कलाकार मान लें। जो बड़ी लगन और मेहनतसे छत्ता तैयार करती हैं। कलकी गोष्ठीमें ताहिर कुमारकी कहानी 'पीला तालाब, काली बिल्ली' बहुत पसन्द की गयी। मेरे लेख 'उदास भेड़ोंका साहित्य उर्फ़ बैंगनका भुरता'पर खासी ले-दे हुई जो मैंने पिछले बीस वर्षोंके साहित्यका मूल्यांकन करते हुए लिखा था। इस सम्बन्धमें सभी बन्धु एक मत थे कि घृणासे ही नहीं हम अतीतकी ओर क्यों देखें। जो कुछ है वह वर्तमान है। मैं प्रसन्न हूँ कि साहित्यमें वहीं चीज़ें जीवित रह जाती हैं जो सहन न की जायें।

१० अप्रैल १९८० :

'नीत्शे' की स्मृतिमें मैत्री-केन्द्रकी ओर-से जो 'नीत्शे-सप्ताह' मनाया जा रहा था, उसके अन्तिम दो दिन बड़े ही दिलचस्प रहे। परसोंकी साहित्य-गोष्ठीमें बहुत-सी कृतियाँ पढ़कर सुनी और सुनायी गयीं जिसमें सरला नसीमका लेख 'एक भाई, एक बहन : सम्बन्धोंकी कसौटी पर', रंग नारायण जौज़फ़की कहानी 'चरवाहा' शोभा पुखराज-की कहानी 'पागलखानेका देवता' और यूसुफ़ बलराजकी लम्बी कविता 'भटकाव : एक जीवन रहस्य' खासी कृतियाँ थीं। समन-द-बउवाकी बिटियाने (जो पेरिससे पन्द्रह मिनिटके लिए आयी थी''''क्या नाम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है उसका !…अपनी डायरीके टेप-रिकार्डरसे एक रिकार्ड सुनाया कि "भारतमें जुकामकी शिकायत करना बदतमीज़ी है, क्योंकि अच्छे भारतीयको कभी जुकाम नहीं होता।"

कल इसी सिलसिलेमें पाँच युवक चित्रकारोंके पचीस चित्रोंकी एक मिली-जुली प्रदर्शनीका आयोजन किया गया। प्रदर्शनीका उद्घाटन 'डायरी ऑफ़ ए जीनियस' वाले सलवादोर डालीके चहेते शिष्यने किया। मैं इसका नाम फिर भूल गया। यह भी बड़ी अजीब बात है कि पुरानोंकी अपेक्षा मैं नये नामोंको भूल जाता हूँ। कहीं ऐसा तो नहीं है कि मेरे व्यक्तित्वकी तहोंमें चिनगारी दबी पड़ी हो। पर यह तो बड़ी ही खतरनाक बात है। मेरे लेखक-मित्रोंको इसकी ज़रा भी सुनगुन मिल गयी तो वे मुझपर पलायनवादका आरोप लगाकर लम्बा-चौड़ा जुलूस निकाल देंगे। फिर तो चारों ओर मेरे नामकी मुरदाबाद होने लगेगी।

प्रदर्शित चित्रोंमें बिन्दु गोपालके चित्र 'गर्भवती : छातियोंकी थूथनियाँ और पराये नाखून'को प्रथम और सफ़िया शान्तिके चित्र 'कम्पोज़ीशन नम्बर दस'को द्वितीय पुरस्कार दिया गया। दोनों चित्रकारोंको नीत्शेके कन्फ़ेशनकी एक-एक प्रति और उस देवताका एक-एक चित्र (जिसमें नीत्शे और उसकी बहन नग्न अवस्थामें दिखाये गये हैं) पुरस्कारस्वरूप भेंट किया गया। परंतु मेरा विचार मान्य होता तो मैं सफ़िया शान्तिको ही प्रथम पुरस्कारका

'नया चिलमवाद'

अधिकारी ठहराता। उसकी कलामें बड़ा ही अछूतापन है; एक और भी कुछ है जिसे मैं भी स्वयं अबतक समझनेमें असमर्थ रहा हूँ। इस छोटी-सी आयुमें ही उसने इतने सारे प्रयोग कर डाले हैं कि उसका कोई भी चित्र अब एक दूसरेसे ज़रा भी मेल नहीं खाता। जिस काग़ज़पर उसे चित्र बनाना होता है, उसे लेकर अब वह सबसे पहला काम यही करती है कि उसपर दाहिने कोनेमें ऊपरकी ओर मोटी-मोटी रेखाओंसे अपना नाम खींच देती है। अब ऐसा न करे तो चित्र तैयार हो जानेपर स्वयं उसकी समझमें न आये कि यह चित्र किसका बनाया हुआ है। विषय उसके लिए कोई अर्थ नहीं रखते इसलिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी ओर वह ध्यान ही नहीं देती। यही सारी विशेषताएँ उसे दूसरे चित्रकारोंसे अलग करती हैं। यों वह करनेको बहुत कुछ करती रहती है। चित्रकारीके लिए रंग और काग़ज़को छोड़कर कोई भी वस्तु उसके लिए आवश्यक नहीं है। तूलिका न हो न सही, वह अपने बढ़े हुए नाख़ून, अपने पाँव-की स्लीपरको ही रंगोंमें डुबोकर काम कर लेती है। इसी पुरस्कृत चित्र 'कम्पोज़ीशन नम्बर दस' की तैयारीमें उसने जिस होशियारीका सुबूत दिया है वहाँ तक आजके कम ही चित्रकार पहुँच पायेंगे। उसने किया यह कि एक चार फ़ुट लम्बे और तीन फ़ुट चौड़े काग़ज़पर हरा, लाल और काला रंग थोड़ी-थोड़ी दूरीपर लेकर उछाल दिया। फिर उसपर अनाजके दाने छींटकर धूपमें छोड़ दिया। और आप कॉफ़ी-हाउस चली गयी। वहाँसे लौटकर आयी तो उसने देखा कि अनाजके दानोंको चिड़ियोंने चुग लिये हैं, सारे रंग आपसमें मिलकर सूख चुके हैं और अब काग़ज़पर एक अद्भुत आकृति तैयार थी—कम्पोज़ीशन नम्बर दस !

नयी दिशाओंका संकेत : सफ़िया शान्ति !

१० जून १९८० :

दिगम्बर-पीढ़ी नाटक-मण्डलीकी ओरसे शंकर रोगीकी एक लम्बी कविता 'टूटन, घुटन, सन्त्रास' स्टेज की गयी। कविता चौपाटीकी एक रंगीन शामसे शुरू होती है। बिना किसी मोड़के महाभारतका एक दिन सामने आता है, फिर कुन्ती आती है और कुन्ती सारे दृश्यपर छा जाती है। फिर अचानक दसवीं शताब्दीकी एक प्रसिद्ध हत्याकी झाँकी, उसके साथ ही एक कलाकारकी मुसीबतोंपर प्रकाश और अन्तमें स्ट्रिपटीज़, साथ ही पृष्ठभूमिमें भागते-दौड़ते हुए लोग, बहुत-सी मिली-जुली आवाज़ोंका शोर कि :

'ये मेरा तावूत है कि जिसमें
मेरा ही शव
कल
पड़ा मिलेगा।'

तालियोंके बेपनाह शोरमें परदा गिर जाता है। मैं शंकर रोगी और कई मित्रोंके साथ कॉफ़ी-हाउस चला आता हूँ। अभी कॉफ़ीके दो ही दौर चल पाये थे कि एक बुड्ढा हमें ढूँढ़ता हुआ आता है जो सूरत-शक्लसे किसी कॉलेजका रिटायर्ड प्रोफ़ेसर लगता है और आते ही मुझसे कहने लगता है, "यह लौण्डे भी ख़ूब हैं ! भला कविताको स्टेज करनेकी क्या तुक थी ! कुछ भी तो समझमें नहीं आया—-जाने क्या ऊट-पटांग बातें थीं !" बड़ा क्रोध आया मुझे उस बुड्ढे की बात सुनकर। मैंने कहा, "गुरुजी, तुम्हारे बाप-दादे, जिन्होंने 'कबीर'के नाम-की माला जपी होगी उनकी समझमें उस जुलाहेकी 'बरसे कम्बल भीगे पानी' वाली बात आयी थी क्या ? और तुम्हारे बापने तो ग़ुलामीमें आँख खोली थी। उसने अंग-रेज़ी साहित्यका अध्ययन तो अवश्य ही किया होगा, तो क्या उसने अपनी ज़िन्दगीमें जेम्स ज्वायसको समझ लिया था ?" मित्रोंने समझा दिया मुझे, कि बुड्ढा है, सठिया गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, नहीं तो आज मेरे हाथों एक हत्या हो जाती। आया था हमें साहित्य सिखाने। हम तो इतना जानते हैं कि स्टेजपर वह सब कुछ देखकर हमें अच्छा लगा था, हमने आनन्द लिया था उसका। और हम लोगोंके लिए बस इतना भर ही काफ़ी है। बुड्ढा कहींका !

१३ जुलाई १९८० :

'सृजन' के लेखकने आज फिर हमें पत्र लिखकर याद दिलाया है कि मैं उसकी पुस्तकपर समीक्षा लिख दूँ। पुरानोंसे हमें बड़ी घृणा है पर यह सोचकर कि बिना मेरी समीक्षा पढ़े उसकी पुस्तक खरीदेगा कौन— मैं 'सृजन' उठा लेता हूँ। पढ़ने लगता हूँ :

"......अभी कई दिन हुए शंकर रोगीने नयी कविताओंपर अपने वक्तव्यमें कहा है कि हम जिस दौरसे गुज़र रहे हैं उसका एक-एक क्षण उलझा हुआ है और इस एक क्षणमें एक अकेले व्यक्तिपर क्या कुछ नहीं गुज़र जाता। सो, इस उलझे हुए क्षणकी व्याख्यामें उलझाव नहीं होगा तो क्या सुलझाव होगा? मैं—जिसे पुराना कहकर लोगोंने परे झटक दिया है—मैं पूछता हूँ कि क्या एक कविका कर्त्तव्य यह नहीं है कि इस उलझावका प्रस्तुतीकरण इस प्रकार करे कि उसकी सारी गाँठ खुल जाये और यह उलझाव इस योग्य हो जाये कि मनुष्य उसे स्वीकार कर ले। रहा इस युगका एक विशेष प्रकारका उलझाव, तो हर युग अपने अतीतकी अपेक्षा जटिल, दुर्बोध और गूढ़ होता है। क्या प्रेमचन्द, शरत और ग़ालिबका युग किसी सीधी रेखापर चल रहा था? क्या साने गुरुजी और यशपालका युग आईनेकी तरह साफ़ और स्वच्छ था? और क्या आजका युग इसलिए जटिल हो गया है कि हमने ऐटमकी शक्तियोंको वसमें कर लिया है? हमने हाइड्रोजन बमके छोटे-छोटे कैपसोल अपनी मुट्ठियोंमें बन्द कर रखे हैं और हममेंसे बहुत सारे लेखक, कलाकार चांदकी धरतीपर जा-जाकर वहाँ अपने लिए स्थान देख आये हैं? यह जटिलता और उलझावके लक्षण तो नहीं हैं। जब तोपका आविष्कार हुआ था या मनुष्यने अमरीकाको खोज लिया था तो क्या सारी दुनिया पागल बन गयी थी?"

और आगे मुझसे पढ़ा नहीं जाता। मैं एक झटकेके साथ पुस्तक फेंक देता हूँ। सोचता हूँ—यह ज़हर कहीं फैल गया तो? फिर तो सारे लोग ही कवि-कलाकारको उसका कर्त्तव्य याद दिलाते फिरेंगे। और यह कर्तव्यकी गोली हम साहित्यकारोंके हलक़के पार उतरती कहाँ है! मैं आज ही अपने मित्रोंके सामने यह प्रस्ताव रखूँगा कि 'सृजन' की सारी प्रतियाँ खरीद ली जायें और किसी वीरानेमें चलकर आग लगा दें। 'सृजन' की उसी आगसे हम अपना-चिलम भरेंगे।

■ ■

भारतीय ज्ञानपीठ,

९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ अच्छे पशुके लक्षण ॥ आदमी अगर 'सोशियल एनिमल' है तो पशुका सामाजिक होना अच्छे पशुके लक्षणोंमें गिना जायेगा···। जी, यह रिसर्च यहींसे शुरू हुई और पहुँची यहाँतक कि—'आगामी बीस वर्षोंमें सारे पशु शिक्षित हो जायें और पशुके नाते अपने उत्तरदायित्वको भलीभाँति समझने लगें।' अब आप यह प्रश्न भी उठा सकते हैं कि जो पशु शिक्षित हो चुके हैं उनका क्या हो ?···

पशु-शिक्षा उर्फ़ तालीमे-जानवरान

■

शरद जोशी / मनुष्य पशुओंका पुराना मित्र है। जबसे यह दुनिया बनी मनुष्य पशुओंके बीच रहता आया है और पशु निस्संकोच उसे अपनाते और स्वीकारते रहे हैं। यहाँतक कि कालान्तरमें मनुष्यने यह मान लिया कि पशुओंमें बुद्धिकी पर्याप्त मात्रा है। सेवाभाव, क्रोध, त्याग, आत्मोत्सर्ग तथा हर्ष आदि जो मर्ज़ आदमीमें पाये जाते हैं वे सब पशुओमें भी माने गये हैं। पशुओंमें बुद्धि होती है अथवा नहीं इस विषयमें उच्चतम पशु अर्थात् मनुष्य सदैव बहस करता रहा है और उसे अन्ततः इसी निर्णयपर आना पड़ा कि जानवर सोचते हैं—यानी वे भी बिचारे विचारोंसे अनुशासित जीव हैं। वे किसी सिद्धान्त अथवा दर्शनसे अनुशासित जीव भी हो सकते हैं—यह मानना ग़लत न होगा। पर इस विषयमें अन्तिम निर्णय पशु ही लें तो बेहतर है। जैसे—'मनुष्य बुद्धिमान् प्राणी होता है' इस नतीजेपर ख़ुद मनुष्य पहुँचा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक हर कुछ बात सिद्ध कर सकते हैं। जैसे अभी उन्होंने सिद्ध किया कि जानवरोंको भी मनुष्यकी तरह नींदमें सपने आते हैं। जानवरोंको कैसे सपने आते होंगे और सपनोंवाले प्राणी होनेके बावजूद वे कविता क्यों नहीं लिखते—यह बहसका विषय है। सपने आनेपर भी कविता न लिखना मेरे विचारमें पशुके मनुष्यकी अपेक्षा अधिक समझदार होनेका प्रतीक है। उसके सपने दोषहीन हैं।

इधर कुछ हजार वर्षोंसे मनुष्यकी तुलनामें पशु पिछड़ा नज़र आता है। राज-नीतिमें फँसना, वैज्ञानिक खटकरम करना, व्यर्थकी टीम-टाम जुटाना, पाखण्ड और उपदेशको निरन्तर अपनाने और पहियोंका इस्तेमाल कर अपनी गति बढ़ानेसे मनुष्य पशुओंसे आगे बढ़ गया है। देखनेमें यह भी आ रहा है कि इन दोनोंके बीच एक खाई-सी बन गयी है और यह खाई दिनपर दिन बढ़ती जा रही है। मनुष्य पशुको पहचान नहीं रहा। आदमी और पशुके सम्बन्ध जवान बेटे और बूढ़े रिश्तेदारके सम्बन्धोंकी तरह तनावपूर्ण हो गये हैं। पशुओंके सामने भी आदमीसे एडजस्टमेण्टकी समस्या पूर्वा-पेक्षा अधिक नाज़ुक हो गयी है और नये युगमें अपने दायित्वके निर्वाहमें वे असमर्थ अनुभव कर रहे हैं। बुद्धिमान् पशुओंका स्थान बुद्धिहीन मशीनें ले रही हैं। मशीनोंकी बुद्धिहीनताके कारण अन्ततः सारा भार मानव-मस्तिष्कपर आ रहा है जो पूर्णतः विश्वस्त नहीं और किन परिस्थितियोंमें अपने खोखलेपनका परिचय दे देगा, निश्चित नहीं कहा जा सकता।

मैं समझता हूँ, विषयकी गम्भीरता-को देखते हुए उपरोक्त भूमिका पर्याप्त है। और यह जिस विषयको गम्भीरतासे लात मारकर खड़ा करती है वह है—पशु-शिक्षा ऊर्फ़ तालीमे जानवरान।

विषय नया है पर आशा है, जैसे ही पाठ्यक्रममें आयेगा निश्चित रूपसे पुराना हो जायेगा। इस विषयमें वह सारी क्षमता है जो कि प्राध्यापक पैदा कर सकती है, छात्र जुटा सकती है और नौकरी दिला सकती है। विषयकी अनिवार्यताका पहला परिच्छेद आसानीसे लिखा जा सकता है क्योंकि मनुष्य पशुओंका पुराना साथी है।

इस विषयपर प्रकाशित होनेवाली पहली क्रान्तिकारी पाठ्य-पुस्तकके प्रथम अध्यायमें परिभाषा होगी, विषयकी महत्ता और पशुओंकी बुद्धिपर विद्वान् पशुओंके विचारोंके अंश होंगे, मानव-पशु-सम्बन्धोंके लम्बे इतिहासपर प्रकाश डाला जायेगा तथा भविष्यमें इस विषयकी बढ़ती आवश्यकता-पर दूरदर्शितापूर्ण वक्तव्य होंगे। दूसरे अध्यायमें पशु-शिक्षा तथा पाठ्य-विषयोंके परस्पर सम्बन्धोंपर प्रकाश डाला जायेगा। मेरे विचारमें पशु-शिक्षासे दूर और पासके उन सभी विषयोंका सम्बन्ध है जो इस समय विद्यालयोंमें पढ़ाये जा रहे हैं। तीसरे अध्याय-में यह सिद्ध किया जायेगा कि मनुष्य और पशुमें गुरु-शिष्य सम्बन्ध सम्भव है और इसके सैद्धान्तिक पक्ष एवं व्यावहारिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वन्य पशु रक्षा सप्ताह : १ से ७ अक्तूबर १९६७→

तरीक़ोंकी विस्तारसे विवेचना की जायेगी। धोबियोंके गधे, सर्कसके शेर और जासूसी कुत्तोंको प्रशिक्षित करनेकी परम्परागत प्रणालीका अध्ययन करनेके उपरान्त अधिक वैज्ञानिक तरीक़े अपनानेपर ज़ोर दिया जायेगा। डण्डा मारना और हण्टर चलानेकी प्रथाका विरोध कर माण्टेसरी क़िस्मकी पद्धतिसे पशु-शिक्षाकी आवश्यकता प्रतिपादित की जायेगी। यहाँ यह भी घोषणा कर दी जायेगी कि आदमीके बच्चेकी तुलनामें जानवरका बच्चा अच्छा छात्र सिद्ध होता है क्योंकि वह हड़ताल नहीं कर सकता। वह शाला

कलकत्ता : यह 'शैतान'का चित्र है जो चिड़ियाख़ाना कलकत्तामें अपने पिंजरेमें अमीर नामके एक आदमीको देखकर पशुतापर उतर आया और ग़लतीसे वहाँ फँस गये उस आदमीको ऐसा झिंझोड़ा कि वह चल बसा। शैतानकी उम्र १२ वर्ष है और वह कलकत्ता-चिड़ियाख़ानाके बीचोबीच ओपनएयर चायकी दुकानके पासवाले कुंजमें नरभक्षी बन गया है!

दिल्ली : पिछले दिनों दिल्लीमें फ़िरोजशाह कोटलाके पास बँधा हुआ एक रीछ अपनी कमज़ोर रस्सी तुड़ाकर बस्तीकी ओर रवाना हो गया, रास्तेमें एक मन्दिरमें घुसा, जहाँ उसे देखकर पुजारी और उसका परिवार भाग खड़ा हुआ, रीछने भगवान्‌के भोगके लिए रखा हुआ सात किलो दूध पिया और अतिरिक्त भोजनकी तलाशमें एक कॉलनीमें दाख़िल हुआ। दो-तीन घण्टोंमें जाकर उसने कुछ और खाया-पिया, तबतक पुलिसको इत्तिला दी जा चुकी थी। वीर सिपाहियोंने उसे गोलियोंसे मारकर गिरा दिया। जो भीड़ ज़िन्दा रीछके करतब देखने जुड़ती थी, वह उसे मरा हुआ देखने भी इकट्ठी हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनेसे घबराता नहीं, क्योंकि उसके सिरपर होमवर्क करनेकी ज़िम्मेदारी नहीं होती। उससे रोज़ 'हे प्रभो आनन्ददाता क़िस्मका ज्ञान हमको दीजिए'—जैसी प्रार्थना करवाना अवश्य असम्भव है पर वह स्कूलसे ग़ैर-हाज़िर नहीं होगा—इसका आश्वासन ज़रूर दिया जा सकता है।

प्रश्न यह है कि एक पशुको कितनी बातें जानना आवश्यक है जिससे वह सुखी जीवन बिता सके और एक अच्छा पशु सिद्ध हो। यों ज्ञानकी सीमा निश्चित करना सिद्धान्ततः ग़लत है क्योंकि ज्ञानकी चरागाह असीम हरियालीसे पूर्ण हैं और जो पशु चाहे जितना चर सकता है। यह सब पशु-की अपनी प्रतिभा, अध्यवसाय और जिज्ञासु वृत्तिपर निर्भर करता है।

फिर भी घोड़ेको कमसे कम यह जानकारी होना चाहिए कि घासमें कितने प्रकारके विटामिन होते हैं। एक स्वस्थ घोड़ेके लिए प्रतिदित कितनी घास ज़रूरी है, देशमें चनेका उत्पादन कितना है और मानव-उपयोगमें चले जानेके बाद कितना बच रहता है। जिस प्रकार विटामिन-सम्बन्धी ज्ञान हो जानेसे मनुष्यकी रुचियाँ परिवर्तित एवं परिष्कृत हुई हैं उसी प्रकार घोड़ेको भी इस ज्ञानसे नयी दृष्टि मिलेगी। गन्दे पानीमें कितने प्रकारकी बीमारियाँ होती हैं—यह जानकारी हो जानेके बाद भैंसोंके रोज़मर्राके जीवनमें परिवर्तन आ जायेगा और अपने कीचड़मय प्रहरसे मुक्ति पाकर वे नये चिन्तनकी दिशामें बढ़ सकेंगी। जैसा कि मनुष्योंके मामलेमें हुआ कि शिक्षा देनेसे सारी बातें सुधर गयीं वैसा ही अन्तर पशुओंके जीवनमें भी आ जायेगा। शिक्षा पानेसे आज मनुष्य जितना सुखी है उतना पशु भी हो सकेगा। यह नोटिस पढ़ लेनेकी योग्यता आ जानेके बाद कि 'यहाँ घास चरना मना है' और एक पढ़े-लिखे जानवर-की तरह नियम मान लेनेपर उसे कांजी हौद जानेकी तकलीफ़से मुक्ति मिलेगी।

इतना सब हो जानेके बाद शायद कोई समझदार पशु यह सवाल करे कि पशुओंको शिक्षा दी कैसे जायेगी, उसकी प्रणाली क्या होगी? (अब सारी समस्या सुलझानेका ठेका मैंने तो नहीं ले रखा है!) सरकार जिन व्यक्तियोंको पशु-शिक्षक नियुक्त करेगी यह उनका काम है। पहले शिक्षा देना आरम्भ हुआ—फिर शिक्षा-शास्त्र बना। सांदिपनी ऋषि माण्टेसरी-तरीक़ा नहीं जानते थे, वह बादमें आया। इसी प्रकार पशु-शिक्षाकी श्रेष्ठ प्रणाली क्या हो सकती है इसपर निरन्तर प्रयोग, अनुभवोंके आदान-प्रदान तथा अनुसन्धानकी आवश्यकता है। आवश्यकता है कुछ साहसिक व्यक्तियोंकी जो मिशनरी भावनासे जुट जायें और पशुओंमें फैले अज्ञानके अन्धकारको दूर करें।

फिर भी मैं उन व्यक्तियोंके हितार्थ जो पशु-शिक्षाके पवित्र क्षेत्रमें प्रारम्भमें कार्यरत होंगे इतना कह देना चाहता हूँ कि रस्सी खींचनेसे जैसे पत्थरकी सिलपर निशान पड़ जाता है (यों रस्सीकी भी खराब हालत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाती है) तो पशु क्या है ! जब शूद्र, ढोल, नारी सभी ताड़नके अधिकारी अपना ज्ञान बढ़ाकर विरोधके अधिकारी हो गये तो पशु क्या है। आप ज्ञानकी ज्योति जगाकर उनके लिए रहस्यका दरवाज़ा खोल दीजिए ताकि वे निःसंकोच कुलाँचें भरें, दौड़े-भागें और सभी क्षेत्रमें मनुष्यके साथी सिद्ध हों।

पशु-शिक्षाके महत्त्वको हमारा योजना-व्यसनी शासन भी तुरन्त समझ जायेगा। हर नया काम आरम्भ करने और प्रत्येक सम्भावनाओंवाले कटे स्थलमें पैर फँसानेकी शासनको बीमारी है अतः सम्भव हुआ तो वह चौथी या पाँचवीं योजनामें पशु-शिक्षाके लिए कुछ रक़म रख देगी। लक्ष्य यह होना चाहिए कि आगामी बीस वर्षोंमें देशके सारे पशु शिक्षित हो जायें और पशुके नाते अपने उत्तरदायित्वको भली भाँति समझने लगें। अगर गैयाको एक बार समझा दिया जाये कि अधिक उत्पादनसे देशको कितना लाभ है तो वह निश्चित रूपसे ख़ुद ही ज़्यादा दूध देने लगेगी—जैसे कि उत्पादन बढ़ाने-सम्बन्धी पोस्टर छपवानेके बाद किसानोंने फ़सल बढ़ा दी है।

पशु-शिक्षापर मेरी पुस्तक शीघ्र तैयार हो जायेगी। प्रकाशक इस नयी पाठ्य-पुस्तक (बिक्रीका अनुमान लगाइए !) के प्रकाशनके लिए मुझसे सम्पर्क करें। पूरी रूपरेखा फ़िलहाल बताना सम्भव नहीं, अन्यथा मेरी पुस्तक छपनेके पूर्व कुंजियाँ और नोट्स बाज़ारमें आ जायेंगे। ■ ■

साउथ टी० टी० नगर,
भोपाल

The Bengal Paper Mill Co. Ltd.

Regd. Office : **14, Netaji Subhas Road, Calcutta-1.**

Mill : **Raniganj, West Bengal.**

MAKERS OF FINE QUALITY
"TIGER" BRAND
PAPER.
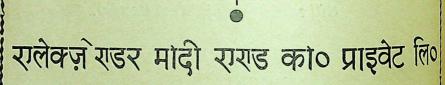
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ पुराने गुलाब : नये गाँव ॥ आप सन् २००० की आसानी-से कल्पना कर सकते हैं :

एक गाँव है। है।...

एक स्कूल-मास्टर है। है।...

तब लोग ४० साल की उम्रमें ही रिटायर होंगे। होंगे।...

तब १०० में से ९० लोग रातमें सो नहीं सकेंगे। नहीं सकेंगे।...

और बाक़ी बातें नीचे... । नीचे...

२००० का गाँव और एक स्कूल-मास्टर

■

विवेकी राय / सुदर्शन मास्टरको कोई चीज़ भूल गयी है। उन्हें कहीं अच्छा नहीं लग रहा है। हरघड़ी ऊमस, गाँवमें सदा सन्नाटा, ध्यानमन करनेके लिए सरेहिमें गये। वहाँ देखा, खेते-खेत लोग डण्डा लिये बैठे, एक-एक दानेपर संगीन पहरा। कहीं खेतके घेरौने पर बबूलका सलफा काँट धसाया है तो कहीं कटइला-तार खिंचा है। मटरकी गदराई छीमी देखकर मास्टरका मन लुलुआकर रह जाता है। कहीं सीवानमें न होरहाका धुँआ उठ रहा है और न बिरहाकी तान। हरिअर पसारपर लोग तरईकी तरह छिटपुट छाये हैं। कुछ साँय-फुस बातें कर रहे हैं। उनकी समझमें कुछ नहीं आता। क्यों नहीं समझमें आ रहा है? अभी तो कुछ ही दिन हुए वे ३१ दिसम्बर सन् १९९९ ई० को चालीससालामें रिटायर हुए हैं। पहले तो लोग साठ-साठ साल घिसकर भी पोढ़ बने रहते थे। अब क्या हो गया है? वे क्यों एकदम विथक-से गये हैं? कोई रोग नहीं है तो भी क्यों नहीं नीरोग अधेड़की तरह खुश रहते हैं? क्यों बूढ़ोंकी तरह तन-मन गिरा रहता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अचानक एक वाक्य सनसनाता हुआ उनके मस्तिष्कमें गूंज उठा––'लड़के मास्टरकी उमर चर गये !' ठिठककर खड़े हो गये। लेकिन, कई दिनोंसे जिस बातको याद कर रहे हैं वह यह नहीं है। उनके पिता कोई किताब काठकी रेहलपर रखकर आगमें चन्दनचूरा भूननेके बाद ज़ोर-ज़ोरसे बाँचा करते थे। वह कौन-सी पुस्तक थी ? क्या लड़के उसे भी चर गये ? अरे अल्ला ! उनके प्राथमिक स्कूलमें, जो एक बार बहुत छोटे गाँवमें था, डेढ़ हज़ार लड़के थे ! नन्हें-नन्हें गिधरोईंकी तरह, मगर कैसा चन्न-चन्न बोलते ! ठूँस दिया कमरोंकी गोदाममें बोरोंकी तरह, चले शिक्षाका व्यापार, पढ़ो बच्चो, तुम्हारे आक़ा यही चाहते हैं। फिर कहाँसे खुशफैल जगह मिले ? छेर-भेंड़की तरह बढ़ते हैं, डण्डेसे हाँके जाते हैं। सरकार सारा धन फूंककर जहरीले सत्यानाशी एटम-आयुध, ब्रह्मकिरण और ब्रह्माण्डनक आदि बनानेमें लगी है। लड़कोंको बनानेकी कहाँ फ़ुरसत है ? फिर लड़के गाँवमें हैं कहाँ ? ये तो कीड़े-मकोड़े हैं। लड़के महानगरोंमें हैं। वे पान-फूलकी तरह सींचे जाते हैं। यहाँ मुदर्रिस घेरकर बैठे हैं। यही बहुत है। क्या करेंगे पढ़कर भी ? सुदर्शन मास्टरने ही पढ़कर क्या किया ? फिर यह बारूदकी बनावटी बगिया कबतक हरी-हरी रहेगी ? दुनिया राख-धुँआ और मलबोंका ढेर हो जानेवाली है। मनुष्यकी लाशें टुकड़े-टुकड़े होकर हवामें उड़नेवाली हैं। जाओ बच्चो, छुट्टी ! पहाड़की खोहसे जैसे टिड्डी, लड़के कमरोंसे निकले, हू-हा, चूं-चूं, कें-कें, हौंऊँ-हाँऊँ, गड्ड-मड्ड, घोर खड़बड़के कुछ क्षण बाद शेष रह गये बदबूदार कमरे और कुछ पिटी-पथरायी मनहूस सूरतें। लेकिन, अब ये बातें भी सुदर्शन मास्टरको याद नहीं आतीं। भर गया दिमाग़में वैज्ञानिक युगका भूसा !

● नयेमें खप नहीं पाते :

अकसर गाँवमें-से खेतमें और खेतसे गाँवमें वे गरदन झुकाये, आगेकी ओर ढहते-से आते-जाते दिखाई पड़ते हैं। क्या करें ? संस्कार पुराना है। नयेमें खप नहीं पाते। उन्हें शिकायत है, कोई खुले कण्ठ नहीं बोलता। हाय राजनीति ! हाय लड़ाई ! आज कल्पनाथकी अनीतिसे बहुत मर्माहत हुए। सुबह उसने कुँआ छेंक दिया। कहता, "कुँआ मेरे बाप-दादोंने खुदवाया। जब कोई अपने खेतमें साग नहीं खाने देता तो क्यों वह अपने कुँएसे पानी भरने दे।"

"लेकिन, गाँवमें कुँएकी बपौती तो जँचती नहीं है कल्पनाथ भाई !" सुदर्शन मास्टरने कहा।

"आपकी अकिलपर भी चालीससाला लग गया है। जब देश-दुनियामें वाटर-सर्विस चालू हो गयी, पानी बिकने लगा तो हम काहे खैरात करें ?

"माफ़ करो दादा ! कुछ नया और अजब लगा। टोक दिया।"

"अब क्या पुराना है ? राकेटपर बैठकर लोग चन्द्रमा और मंगलकी सैर करने लगे। आदमीसे अच्छा काम करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाला मशीनका नौकर बाज़ारमें बिकने लगा। अब क्या पुराना है? गाँवमें क्या कहीं अखाड़ा है? कहीं गायन-कीर्तन होता है? अब तो दातून भी खोजनेपर मुश्किलसे मिलती है। कुँएका पानी साँझ होते-होते सूख जाता है। हम किसके घर तसली लेकर पानीकी भीख माँगें? जिसको गरज हो, सरकारी नलकूपसे पानी ले। पानी पीना है तो पैसा खरचे! जब सबकी झोंटी आग लगी है तो अपना-अपना बुझायेंगे। मूरख मरे परायी फिकिरमें!"

कल्पनाथ देर तक लेक्चर देता रहा। सब लोग खामोश। कल्पनाथके पड़ोसी रामलगन फट पड़े--"कुँआ तो छेंक रहे हो मगर अपने खेतमें बैलोंको किस रास्तेसे ले जाओगे? क्या सभी रास्ते तुम्हारे बापके हैं?"

"नहीं, तुम्हारे बापके हैं। मेरे बैल लाठीके रास्ते चलेंगे।" कल्पनाथने हाथ हवामें भाँजकर कहा।

"तू काँग्रेसी मिनिस्टर चोट्टेका लड़का! जिसकी शहरमें बनवायी काली कमाईकी कोठी सरेबाज़ार नीलाम कर दी गयी और लूटपाट कर बटोरा चहबच्चा 'नया-अभियान' वालोंने ज़ब्त कर लिया और तू मुँह काला कर यहाँ गाँवमें आ छिपा, अब लाठीका जोम दिखा रहा है? रस्सी जल गयी मगर ऐंठन नहीं गयी?"

"और तू पुराने घाघ ज़मीदारका लौण्डा! हदबन्दीमें ज़मीन निकल जानेपर स्त्री-शिक्षाका जाल फैलाकर पवित्र विद्यालय-को नये-नये अधिकारियोंकी चकल्लस-बाज़ी-का अखाड़ा बनानेवाला, अपना ढेंढ़र न निहारे आनकी फुल्ली!"

"हे, गर्ल्स-स्कूलकी काहे छीवि धरता है? उसमें तो तुम्हारी भी लड़की पढ़ने जाती है!" दयाल तिवारी बोले।

"वह तो पंचायती लड़की है।" भीड़में-से कोई बोला मगर पता नहीं चला कि कौन है।

'यह कौन खानदानी साला है।" कल्पनाथ गरज उठा, "मुँह छिपाकर बोलता है? हिम्मत है तो सामने आवे। नहीं तो उसकी माँ पंचायती, उसकी बहन-बेटियाँ पंचायती और उसके सात पुश्तकी औरतें पंचायती!"

अब आगे बढ़े हीरा चौधरी। ऊँचा सुनते हैं। आँखपर चश्मा है जिसकी एक कमानी टूट गयी है और उसकी जगह डोरा बाँधकर कानमें लपेटे हैं। अभी हालकी बनवायी गयी आँख है। मुचुर-मुचुर ताकते हैं। भौंहोंपर बायें हाथकी हथेली छापकर सिर उठाते हुए बोले, "अब क्या पंचायतका नाम ले रहे हो? जवाहरलाल पण्डितकी बनायी पंचायत तो कबकी टूट गयी! अब कहाँ पंचायत है? ग्राम-पंचायत थी हम लोगोंके बखतमें कि मुर्गा-लड़ान होती थी। 'हम सभापत्ती' और 'हम सभापत्ती' हुमाहुमीसे कई-कई आदमी खड़े होते थे। दिन-रात कनवेसिन होती थी। वोटर बेरह लिये जाते थे। गोहार जुटायी जाती थी। वोटके दिन लाठी चलती थी। कितना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनसायन होता था । सभापति रोशन बँटवाता था....।"

● एक रोग सनसनवा :

सब लोग हँस पड़े । हवा बदल गयी और बाहरसे उत्तेजनाके बादल छँट गये पर भीतर तनावकी ऊमस और घनी हो गयी । यही ऊमस सुदर्शन मास्टरको नहीं सहन होती है । कपारपर जैसे बोझ लद जाता है । मस्तिष्कमें कोई चीज़ जकड़ने लगती है । बार-बार सन्देह होता है कि 'सनसनवा' तो नहीं है ! अजब नया रोग है । कोई दवा नहीं । चलते-फिरते आदमी ढह जाता है । शरीरमें फोड़े फूट उठते हैं । कपार सनसन-सनसन करने लगता है और कुछ ही मिनिट-में चोला बदल जाता है ।

दूनी उदासीसे लदे उलटे पाँव वे गाँव-की ओर लौट पड़े । साँझ घिर आयी थी । लखराँव डाँककर गोंयड़ेकी परतीमें पहुँचे । वहाँ लड़के खेल क्या रहे थे—दंगा, हुल्लड़ और हुड़दंग मची थी । शोरके मारे कान नहीं दिया जा रहा था । सुदर्शन मास्टरको आजकल एक नयी हैरानी है । ये कौन लड़के हैं ? दो-चारको छोड़कर कोई पहचानमें नहीं आता । क्या तमाम देहात-भरके लड़के यहीं खेलनेके लिए बटुर गये हैं ? नहीं तो क्या सचमुच उन्हींके मुहल्लेके इतने लड़के हैं ? मास्टरको याद आया कि सहतुआके आठ लड़के हैं और तीन लड़कियाँ । वे सब इसीमें कहीं खेल रहे होंगे । सहतुआ खुद छह भाई था । उसका बाप दूखी जब मरा तब वे छोटे-छोटे थे । सहतुआ चिथड़े लपेटे दिन-भर बंसी लगाया करता था । फिर कलकत्ते चला गया । किसी फ़ैक्ट्रीमें काम मिल गया । कुछ दिन बाद वह चला आया । बोला, छँटनी हो गयी, मशीनें आ गयीं जो सैकड़ों आदमियोंका काम एक आदमीकी देख-रेखमें कर देती हैं । अब सहतुआ गाँवमें ही कुछ इधर-उधर करता है । उसकी औरत सदा पेट फुलाये अपने नन्हें-नन्हें सदा पें-पें करते लड़कोंसे घिरी, एकको गोदमें चिपटाये, कामपर जाती है । सहतुआके भाइयोंने भी खूब परिवार बढ़ाया है । एक दूखीका परिवार गाँवके दखिन ओर छा गया । जहाँपर एक बड़ा-सा पीपलका पेड़ था, एक गड़ही थी, अब घर और झोपड़ियाँ खड़ी हैं । जिस साल अकाल पड़ा, पीपलकी सारी पत्तियाँ लोग जानवरों-को खिला डाले । शेष ठूठ पीपलको एक दिन रामलगनने कटवाकर गर्ल्स-स्कूलके लिए बनवायी गयी ईंटके भट्ठेमें लगवा दिया । उनकी माँ रोती रही कि अब तो गाँव-भरमें यही एक पीपलका पेड़ था, बासुदेवजी थे, जिनकी एक पत्ती भी तोड़ना पाप है । अब शनिवारको दीपक कहाँ जलाऊँगी ? मगर कौन सुनता था । शायद गाँवमें शनिवारको बासुदेवजीको दीपक बारनेवाली वे ही अन्तिम महिला थीं । बासुदेवजी और उनकी एक मात्र 'भक्तिन' दोनों साथ ही बिदा ।

पीपल कट गया तो काफ़ी जगह निकल आयी । दूखीके लड़कोंने मिट्टी भर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर सारी खुली जमीन छेंक ली। बाबू साहब भी नहीं बोले, कि उनकी 'परजा' रह रही है। लेकिन अब ये 'परजा' लोग ही सिर हो गये, अब बाबू साहब मनाते हैं, कहीं पुराने ज़मानेकी तरह बाढ़ आ जाती और तमाम परतीमें बनाये इन कमीनोंके घर ढह जाते तो कितना अच्छा होता! मगर, अब बाढ़ काहेको आवे? फैलनेवाले प्रेमसे गाँवके बाहर फैलते जायें। गाँव रबरकी तरह बढ़ता जाये। छोटी जातियाँ एकसे इक्कीस होती जायें। फ़ैमिली-प्लैनिंग यहाँतक आते-आते थक जाये। गाँवके बाहर साँझ-सवेरे चिथड़े-लपेटे, मरियल, अधनंगे, आठ-दस तककी उमर, नंगे नर-वानरकी भीड़ दिखाई पड़े। यह भीड़ सरेहिकी ओर बढ़े तो नोच-चोंथ, धरो-पकड़ो और कभी-कभी गदर मच जाये। यह भीड़ जवान हो तो रात-भर गाँवकी नींद हराम! चोरीका रिवाज़ खत्म! अब जगी है पूरे गाँव-समाजमें असली भोजपुरिया आत्मा! बोलो! तसलवा तोर कि मोर?

• तोहरा कपारपर हमार वोट :

सुदर्शन मास्टर बड़ी देर तक निहारते रहे। उन्हें पहली बार आज मालूम हुआ कि लड़कोंसे अधिक संख्या लड़कियोंकी है। चुड़ैलकी तरह माथ खौराये ये अलग कोई खेल खेल रही हैं। लड़कोंकी तरह इनके खेलमें मारपीट और हिंसात्मक उपद्रवोंकी छाप नहीं है। ये कोई नक़ल कर रही हैं। यह पुराने युगकी एक असलियतको खेलमें उतार रही हैं। सुदर्शन मास्टरने ग़ौरसे देखा। एक लड़की एक बैल बाँधनेवाले खूँटेको कुरसी मानकर बैठी है। उसके सामने एक बाँसकी सुपेली है। यह बैलेट बक्सका काम कर रही है। दो लड़कियाँ उसके अगल-बग़ल छड़ी लेकर खड़ी हैं। ये सिपाही हैं। शेष वोटर लड़कियाँ सदाबहार नामक पौधेकी पत्तियाँ लेकर कई गोलमें गीत गाती आ रही हैं। जो पास आती हैं वे अपनी-अपनी पत्तियोंका बैलेट-पेपर सुपेलीमें छोड़ती जाती हैं और खूँटेपर बैठी काली मोटी लड़की उन्हें एक-एक घुस्सा, जब वे पत्तियाँ छोड़नेके लिए झुकती हैं पीठपर जमाती जाती है। उनके एक गीतने सुदर्शन मास्टरको झकझोर दिया।

'तोहरा कपार पर हमार वोट रामः
राम।
अइलीं हम चान का दुआर लोट रामः
राम!!'

'राम!' एक ज़ोरका धक्का लगा और सुदर्शन मास्टरका सिर सनसनाकर चकराने लगा। घाव हरा हो गया। बिसरी हुई बाधा उभर गयी। पैर टँटाने लगा। उन्हें क्या भूल गया है। न गाँवमें और न खेतमें कहीं भी वह बात नहीं याद आती है। राम तो श्रीरामचन्द्रका नाम है। वह अयोध्याके राजा दशरथका बेटा था। कहीं इसका बयान आया है। सुदर्शन मास्टर अब मशीनके सामने खड़ा होगा। कहेगा, कोई भाई उसके मनके भीतरकी बातको निकालकर बाहर कर दे तो वह पाँच सौ रुपया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़ीस देगा। वह इसी बाईके झोंकमें मन्दिरके चबूतरेपर आ गया। सीधे ऊपर चढ़ गया। जूता उतारनेकी ज़रूरत अब नहीं समझी जाती। लोग यहाँ आकर बैठते हैं क्योंकि यह किसीका दरवाज़ा नहीं है। दरवाज़ोंपर तो अपने-अपने गोल-पार्टी वाले ही बैठते हैं। किन्तु यहाँ बैठने लायक़ जगह है कहाँ? बहुत दिन हुए मन्दिरके घण्टे-त्रिशूल आदिके साथ राम-लक्ष्मणकी मूर्तियों-को कोई उठा ले गया। कुछ वर्ष हुए, एक दिन फाटक और जंगले दूखीका बड़ा लड़का महेसवा निकाल ले गया। कुत्ते अब अबाध गतिसे भीतर चले जाते हैं। पार्वतीजीकी मूर्ति बची थी। एक दिन किसी भक्तिनने उसपर गुड़ चढ़ा दिया। उसके लिए लड़कोंने ऐसा हंगामा किया कि मूर्ति टूट गयी। कुछ दिन तक वह ऐसे ही पड़ी रही, बादमें कब लड़के उसे खेलनेके लिए उठा ले गये किसी-को पता नहीं चला। बीचमें शिवलिंग अभी है और न जाने किसके घरकी दो बहुत बूढ़ी भक्तिन औरतें उसपर जल ढरका जाया करती थीं, मगर जबसे नदी सूख गयी तबसे वह भी बन्द हो गया क्योंकि अब तो स्नान सरकारी नलकूपके हौजमें होता है जो दूर पड़ता है। सुविधाके लिए उन भक्तिन औरतोंने वहीं कैक्टसके चबूतरेपर शिवजी-की एक पिण्डीको रखकर जल ढरकाना शुरू किया। बादमें तरकारी बेचनेवाली एक कुँजड़िन उसे आधे किलोग्रामका जान-कर उठा ले गयी। तबसे अब उस पेड़की ही जड़पर वे भक्तिनें पानी गिरा देती हैं। वे गाँव-भरमें दो ही हैं अतः लोग इन्हें भगत 'घोघनी जोड़ी' कहते हैं।

बदले गाँव और विश्व सुन्दरी :

सुदर्शन मास्टर उसी टूटे और छितराये चबूतरेपर बैठ गये। सूरजकी आखिरी पीली किरणें बँसवारिके ऊपर पालिस कर रही थीं। ठण्डक छतरी सैनिकोंकी तरह उतर रही थी। बालकोंका हल्ला राकेट गिरनेके क्षणोंकी तरह खौफ़नाक था। सामने आमके पेड़की पत्तियाँ सुदर्शन मास्टरके मनकी तरह छोटी-छोटी पड़कर बदरंग हो गयी थीं और घुघुचाकर मुड़ रही थीं। कभी बड़ी-बड़ी पत्तियाँ होती थीं। उन्हें पल्लव कहा जाता था। आग जलाकर पल्लवसे उसीमें घी''''सुदर्शन मास्टरके मनमें 'ओम् नमो''' करके कुछ अस्फुट रूपसे गूंजा और लगा कि अब उसका मन खुला, अब बातें याद आयीं, अब कुछ गमका, अब कुछ उगा, मगर एक घटना तभी हो गयी और सब हण्डभण्ड हो गया। उन्होंने कहा, "इस 'हू-हू हाँव-हाँव' के बोड़म संगीतमें आग लगे। उँह, कितना सस्ता हो गया यह जेबी-रेडियो! जैसे दियासलाईकी डिबिया!" और सामनेसे गुज़रते विपिनको बुलाया।

"यह तुम्हारा आयरन शूट कितनेमें तैयार हुआ है?"

"एक हजार में।" बताया विपिनने।

सुदर्शन मास्टरने उसे छूकर देखा। मुलायम, धपधप, आरामदेह, पहनो जनम भर, काहे नहीं अब गावें—'चोला बदलि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...तु जाइ, नयी चोलिया न बदले !

"सुना है, तुम्हारे कॉलेजमें रेडियोसे पढ़ाई होती है ?"

"आज टेलीविजनपर विश्वसुन्दरी नोनढ़ीका प्रोग्राम है।" विपिन उनकी जिज्ञासा गोकर कहता है, "खड़ी होगी तो उसके शरीरकी खुशबू....अरे मास्टर साहब, झक्क....झक्क....!"

लगा कि विपिन हाथ फैलाकर मास्टर-को भर लेगा। लेकिन दूसरे ही क्षण मूँगफली-का एक छिलका उनपर फेंककर चला गया। सम्भव था, नोनढ़ीकी विश्वविश्रुत देह-यष्टिकी मादक सुवासकी कल्पना उन्हें क्षणभर आनन्द देती परन्तु उसका सम्बन्ध टेलीविज़न सेटके क्षेत्रभरमें एकमात्र होनेके कारण उस प्रेसीडेण्ट सिंहसे जुड़ गया जिससे मास्टरको घृणा थी। तिमंज़िलेपर नियोन लाइट, चारों ओर अन्हरिया भी अँजोरिया, नहर, ट्यूबवेल, सड़क, फ़ार्म, फ़ैक्ट्री, गोदाम, यन्त्र-साधन, जीपकार, उड़न-टैक्सी, सुना हवाई जहाज़का भी आर्डर दे दिया है! पुस्त-कालय-वाचनालय, टेलीविज़न, सिनेमा, टेली-फ़ोन आदि सब अपना, गाँव रूपी हिन्दुस्तानका दिल्ली-प्रदेश, एक एकड़में चालीस हज़ारका आलू उगानेवाला, तंग दिल, चोरबज़ारका सेठ, घनघोर जातिवादी; अकसर कहा करता है, 'सबते कठिन जाति अपमाना !' सुदर्शन मास्टरसे जब मुलाक़ात होती है उनके कानोंमें उसका यह वाक्य जरूर पड़ता है। एक बार साहस करके उन्होंने पूछा भी तो प्रेसीडेण्ट सिंहने उत्तर दिया कि यह वेदमें आया है। चूँकि ब्रह्माने ही वेद बनाया और उन्होंने जातियाँ बनायीं इसलिए लिख दिया कि हर कोई अपनी जातिका ख़याल रखे। प्रेसीडेण्ट सिंहने इस बातपर बहुत खेद प्रकट किया कि अब लड़की-लड़के बेकहे हो गये हैं। अपने मनसे जहाँ होता है शादी कर लेते हैं। बड़े लोग क्या करें? आखें बन्द कर लेते हैं। लेकिन जाति ऐसी पक्की चीज़ है कि उसपर किसीका कुछ असर नहीं पड़ता।

"विश्व-सुन्दरीकी जय! विश्व-सुन्दरी-की जय" उसी समय मास्टरके कानोंमें तुमुलनादके कई धक्के लगे। जाना, यह विपिन है जो आगे-आगे बोल रहा है। उन्होंने सोचना चाहा कि विपिन किस दर्जेमें पढ़ता है, मगर यह तो पुराना ढंग रहा ! अब दर्जे कहाँ हैं? अब चावलके सील्ड बोतलों में, आटेके पैक्ड डिब्बोंमें और राशन के कूपनोंमें ही दर्जे हैं। एक बेवक़ूफ़ी-भरी बात उस ठण्डमें जड़-पत्थरकी तरह बैठे-बैठे उनके दिमाग़में आयी, 'अब मास्टर भी खेती करेगा।' इसपर वे और कुछ न सोच सके। एक प्रश्न-चित्र उभरा, आखिर भीमकाय तूफ़ानी ट्रक-गाड़ियोंपर लाद-लाद-कर प्रेसीडेण्ट सिंहके फ़ार्मका गेहूँ कहाँ जाता है? वे उठ खड़े हुए। पैरमें झिनझिनी बर गयी थी। पैर झटकारते वे मन-ही-मन इन पंक्तियोंमें उलझ गये—

'धक-धक-धक-धक-धक धरती धक....
चलो गगन पर घूमें।'

लेकिन गँवार आदमी वहाँ जाकर कुकुर हो जायेगा। दुरे....दुरे....दुरे....'सकल पदारथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि जग माहीं, करमहीन नर पावत नाहीं।'

● चायकी दुकान : एक परिकथा :

फिर एक बार मास्टर मनकी भूली हुई पुरानी जगहपर आ गये। यह किस पोथी की पाँती है? कोई एक अच्छी किताब है। दर्जा सातमें एक मास्टर ने एक दिन बताया ज़रूर था मगर भूल गया। एक हनुमान जी थे। वे बोलते गये, वह आदमी लिखता गया। पोथी बन गयी तो विलायतके अँगरेज़ उसे उठा ले गये। कैसा बढ़िया कहा है, 'करम हीन नर पावत नाहीं।' मास्टर भी करमहीन है। वह अब रिटायर होकर क्या करेगा? कैसे दिन कटेंगे? कुछ याद नहीं पड़ता। जल्दी लड़ाई भी नही होती। सब कायर हैं। हथियार भाँज-भाँजकर गरजते भर हैं। तेज चलकर सुदर्शन मास्टर घरके रास्तेमें कोनेपर खुली चायकी दुकानपर बैठ गये। यह रोज़का काम था। दुकानदारने नीले रंगके एक षट्कोण पात्रमें चाय सामने लगा दी। लेकिन चायसे अधिक रुचिकर उन गँजेड़ियोंकी बात रही जो रोज़की तरह आज भी एक ओर जमे थे।

"सुदर्शन मास्टरको तो पता होगा।" एक गँजेड़ी बोला।

"क्या भाई?" मास्टर चिहुँक उठे।

"सुना कि अब जज-कलक्टरका काम मशीनें करेंगी?"

"मैंने समझा नहीं।"

"तो काहे नहीं 'समझ' की एक मशीन मँगा लेते हैं। रूससे आती है।" दूसरा गँजेड़ी बोला।

तीसरा गाँजा मलकर चिलमपर रख रहा था। उसने एक दहला लगाया :

"थाकलि देह, हाड़ भइल भारी;
अबका लदवे रे व्यापारी।"

'ऐसे काहे बकता है!" दूसरा गँजेड़ी आग जलाते हुए कहने लगा, "अभी कहाँ मास्टर बूढ़े हुए? दाँत टूटनेसे क्या हुआ! दाँत अब जवानीमें ही किसके नहीं टूट जाते।"

"भाई मेरे, इस गाँवमें भी नक़ली दाँत लगाने वाली दुकान खुल गयी?"

"सच?"

"और नहीं तो क्या झूठ!"

"अब असली कलजुग आ गया!"

"अब 'कल' लेकर गवर्नमेण्ट गाँवमें आयेगा। कल भिड़ा देगा। उसीपर एक-एक करके सबको खड़ा करेगा। पूछेगा, बोलो, 'तुम क्या सरकार-विरोधी हो?' वह आदमी जवाब देगा। 'कल' तुरन्त बता देगी कि जवाब ग़लत है या सही है!"

"और वह अगर सरकार-विरोधी हुआ तो?"

"तो....ओ....ओ...." वह गँजेड़ी चारों ओर देखने लगा। इसी समय पहले गँजेड़ीने चिलम-स्तोत्रका पाठ शुरू किया :

"बम शैतानी
चीनी पाकिस्तानी
कानी नानी
रूस चुहानी...."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और चिलमपर फूंक लगायी, तबतक [illegible] बदल गयी। भरपूर धुंआ फेंककर उसने अपने तत्त्व-ज्ञानकी गठरी खोली और सबको निचोड़कर बोला, "अब सब ले लेगा!"

"यही तो मैं तीस बरससे कहता आया हूं।"

"तू ही क्यों तेरा बाप भी यही कहते मर गया। तेरा दादा भी यही बककर सिधार गया।" दूसरे गँजेड़ीने हाथमें चिलम ली, सिरसे छुलाया, बम-बम किया, बोला :

"बम तुलसी धतूर
हनुमान की लंगूर
बम गांधी छाप घीव।"

और खींचकर तीतरेको आँख मूँदे-मूँदे चिलम थमा दी। धुएँसे सारी दुकान सोंधी हो गयी। सुदर्शन मास्टरको लगा कि सारा धुंआ उनके मस्तिष्कमें भठ गया। वे अब घर पहुंच जाना चाहते थे। कोई जलूस निकलनेवाला था। छोकरे लुकार लेकर गली-गली घूमते हैं। वे किसीके भी घरकी ओरीसे लुकार छुला सकते हैं। जलूस उठनेके पूर्व चायवाला भी दुकान बढ़ा देना चाहता है। नाकमें दम आ गया है इन जलूसोंके मारे। कहते हैं, हम हुरदंग करेंगे। हम रातभर जगेंगे। सोनेवालोंको जगायेंगे। नारा लगाते हैं :

"हम सब—बेईमान हैं
हमारा दोस्त कौन ?
जो जगत्तर बेईमान है!"

कुछ [illegible] हैं। वे मास्टरकी समझमें नहीं आते। ठीक ही है, उनका समझमें आना जुर्म है। उसके बारेमें सोचना ही बेकार है।

• आगे चले बहुरि रघुराई—यानी अनिद्रा :

सुदर्शन मास्टर पनपनाये-से घर आये। किसीने कुछ नहीं कहा। सामने प्लेट आ गया। रोटीका दो-चार टुकड़ा मुँहमें किसी प्रकार फेंककर वे उठ गये। उस समय वहाँ कोई नहीं था। उनकी स्त्री बच्चोंकी खोजमें बाहर गयी थी। लड़की खाना परसकर पड़ोसमें फ़िल्म देखने चली गयी। आज बिना आग तापे ही सुदर्शन मास्टर बिछौनेमें आ गये। कम्बलमें सिर छिपाकर उन्हें अहसास हुआ कि ग्रामपतिके दरवाजेपर कोई कुत्ता देरसे भूंक रहा है। गली-गलीसे दूसरे कुत्ते बिरादरी-धर्म निभा रहे हैं। सुदर्शन मास्टरकी भी भूंकनेकी इच्छा जगी। इस इच्छाके मूलमें एक कहानी थी जिसे कभी उन्होंने सुन रखा था और जिसके अनुसार बूढ़े लोग कुत्तेकी आयु भोगते हैं। उन्होंने सोचा, वास्तवमें वे कुत्ते हैं! इस विचारसे उन्हें बहुत खुशी हुई। तबीयत फुरफुरा उठी। इसी बीच जड़त्वकी एक लहर भीतरसे उठी। वे कुनमुनाकर चारों ओरसे कम्बल समेटकर किकुरी मार बहुत आरामसे पड़ रहे। उन्हें पता नहीं चल रहा था कि ये खुशीके क्षण कहाँसे आ गये। सबसे आश्चर्य था कि इस समय उन्हें एक गीतकी ऐसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुर्लभ पंक्ति[illegible] आयीं [illegible] एकदम भूली रहीं। उन्होंने मुँह उघारकर गाया :

"राम बिना मोरि सूनि अजोधिया
लछुमन बिन चउपाई,
सीता बिन मोरी सूनि रसोइया...."

और आगे? खैर, नहीं याद रहा, कोई बात नहीं। यही बहुत है और बस आ जाओ, आ जाओ, वह चीज़ भी याद आ जाओ, रामकी किताब कौन? मास्टरने बहुत बल लगाकर सोचा, शरीरसे पसीना निकलने लगा। वे गुनगुना उठे :

"आगे चले बहुरि रघुराई
ऋष्यमूक पर्वत नियराई।"

इसे गाकर वे इतने खुश हुए कि कम्बल फेंककर कमरेमें टहलने लगे। काग़ज़-पेंसिल [illegible] नोट किया फिर याद करने लगे कि इसका लेखक कौन है? यह किस पुस्तकमें लिखा है?

जब बहुत देर तक कुछ याद नहीं आया तो उन्हें जमुहाई आने लगी। याद आया, पेपरमें छपा है कि आज-कल १०० में १० आदमियोंको नींद नहीं आती। सुदर्शन मास्टरको खुशी हुई कि वे सैकड़े दसवाले भाग्यवानोंमें-से एक हैं। उन्होंने स्वयंसे कहा, सो जा सुदर्शन, सब कुछ भूलकर सो जा, अब कुछ याद मत कर, क्यारियोंमें अब विदेशी गेहूँ बोया जा रहा है। गुलाबके पौधे उखाड़कर फेंक दिये जा चुके हैं।

■■

कमरा-३, क्षत्रिय छात्रावास,
गाज़ीपुर

Gram : PAPERBOARD

Phone 55-5765, 55-0392

With Compliments from :

Bagla Supply Company

WASTE PAPER MERCHANTS &
PAPER MILL SUPPLIERS

98, B. K. Paul Avenue,
Calcutta-5.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक समर्पित महिला

नरेश मेहताकी अनूठी कहानियोंका नवीनतम संग्रह

नयी हिन्दी कहानीके एक विशिष्ट कथाकार नरेश मेहताकी अद्वितीय कहानियोंका यह बहुप्रतीक्षित संग्रह अब आपके हाथों पहुँच रहा है।····कहानीके जिस नयेपनकी बार-बार चर्चा की जाती है कदाचित् नरेश मेहताकी कहानियाँ पहली बार उसका सार्थक प्रतिनिधित्व करनेमें सफल हुई हैं। एक विशेष बात यह कि नरेश मेहताकी कहानियाँ उनके रागात्मक बोधकी आधुनिक संचेतना, स्थितियोंकी कॉन्शस शालीनता, भाषाकी नयी अर्थवत्ता, पात्रोंके अभिनव परिपार्श्व, कविता-जैसी रसानुभूति करानेवाली संवेदनशीलता एवं यथार्थके नये सन्दर्भोंके कारण विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं।

आप देखेंगे कि 'एक समर्पित महिला' की कहानियोंकी सर्वाधिक प्रमुख विशेषता जहाँ इनकी अनूठी प्रतीक योजना और भाषाका कलात्मक सौष्ठव है वहीं अपने संश्लिष्ट गुणोंके कारण ये अभिव्यक्तिकी नयी मर्यादाएँ स्थापित करनेमें भी समर्थ हैं। मूल्य ३·००

अपनी प्रतियाँ अपने यहाँके पुस्तक-विक्रेतासे अब प्राप्त करें।

भारतीय
ज्ञानपीठ
प्रकाशन

कलकत्ता :: वाराणसी

विक्रय-केन्द्र : ३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अविराम चल मधुवंती

हिन्दी नवगीतके पुरस्कर्ता
कवि वीरेन्द्र मिश्रके
नवीनतम गीतोंका संग्रह

मूल्य
तीन रुपये

'अविराम चल मधुवंती' की रचनाएँ गीतके धरातलपर एक संगठित बिखराव बनकर महकती हैं, जूझती हैं और टूटती हैं ! इन गीतोंमें जो निस्संग जीवन्तता है वही उस मस्ती और आस्थाको जीवित रखती है जो कटु-यथार्थके आगे कभी-कभी निर्जीव और नीरस-से लगते हैं। इस सबके साथ ही आप देखेंगे कि अनेक दिशाओंकी रंगारंग अनुभूति-ध्वनियाँ इस संग्रहकी रागिनीमें समवेत होकर गूंज रही हैं।

रसवंती कविता-प्रेमी पाठकोंके लिए सर्वथा पठनीय और संग्रहणीय

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

विक्रय-केन्द्र
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ३१ दिसम्बर, शुक्रवार, १९९९ ॥ कई बार यह ज़रूरी हो जाता है कि कल्पनाकी लगाम ढीली छोड़ दी जाये और देखा जाये कि हम तीस-चालीस वर्ष किस गतिसे फलाँग सकते हैं···हो सकता है 'आज' ज़मीनपर रखी 'आगामोकल' की कल्पना 'यथार्थके कल' में झूठी साबित हो जाये और हिप्पियोंकी तरह हमारा 'अमूर्त और ऊलजलूल स्वभाव' अपना जनाज़ा निकालकर 'बी फ़्री' का नारा लगाये···

एक लड़कीकी डायरी

मनहर चौहान / कनाट-प्लेसमें कुछ विदेशी जोड़े अजीबो-ग़रीब पोशाकोंमें घूमते दिखाई दिये। मैं गयी थी। आशा थी कि वे दिखाई पड़ेंगे। दिखाई तो पड़े, लेकिन उनके चेहरोंपर वह हँसी, वह उल्लास नहीं था जो किसी सदीको विदा करते समय होना चाहिए था। मनमें कहीं यह बात छिपी हुई थी—मेरे मनमें—कि किसी सदीको विदा करना युवती प्रेमिकाको विदा करने-जैसा है, लेकिन वे विदेशी मानो किसी वृद्धाको विदा करनेके लिए एकत्र हुए थे। शायद चीनकी बढ़ती ताक़त इसका कारण हो।

शायद क्यों! निश्चय ही यही····

चीनने रूस और भारतका बहुत बड़ा भाग हथिया लिया है। पिछले चालीस वर्षोंसे वह धीरे-धीरे अपनी सीमाओंको फैलाता ही जा रहा है। कोई उसका कुछ नहीं बिगाड़ पा रहा। भारतने तो वक्तव्य ही जारी कर दिया है कि चीनने जो हिस्सा अपने क़ब्ज़ेमें लिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, वह उसीका हिस्सा है--नक्शोंमें अबतक वह ग़लतीसे भारतीय क्षेत्र प्रदर्शित होता रहा ! रूस ख़ामोश है। असलमें रूस सुसंस्कृत हो गया है। वह युद्ध कर तो सकता है, लेकिन करनेसे कतराता है। इतिहास कहता है कि जब कोई संस्कृति बहुत परिष्कृत हो जाती है तो इसका अर्थ है--शीघ्र ही किसी बर्बर जातिका आक्रमण और संस्कृतिका तहस-नहस ! क्या रूस तहस-नहस हो जायेगा ? कह नहीं सकती। शायद हो जाये--किसके द्वारा ? कह नहीं सकती। शायद चीन ही....जिसके भी द्वारा, लेकिन इक्कीसवीं सदी कुछ सभ्यताओंका, कुछ संस्कृतियोंका बलिदान लेकर रहेगी।

उन विदेशियोंको देखकर भी लगा कि वे अपनेको सुसंस्कृत समझने लगे हैं और इसीलिए इतिहासकी सम्भावित पुनरावृत्ति उन्हें खीसें निपोरकर डरा रही है....चीनने दूरमारक प्रक्षेपास्त्र बना ही लिये हैं। जिस तरह भारत, उसी तरह वह इंग्लैण्ड व अमेरिकाको भी त्रस्त कर सकता है....

जब हम किसी संस्कृतिको सभ्यताके रूपमें पहचानने लगते हैं तो वास्तवमें वह संस्कृति बूढ़ी हो चुकी होती है। पश्चिमी सभ्यता....उस बूढ़ी औरतकी विदा....कनाट-प्लेसमें इसी भावनासे वे एकत्र हुए थे। उनकी आँखोंके नीचे झुर्रियाँ थीं और उनके गोरेपन-में फ़र्क़ आ गया था। शायद वे रूसको लेकर भी उसी तरह चिन्तित थे, जिस तरह स्वयं अपने देशोंको लेकर। उन्होंने विचित्र-विचित्र टोप लगा रखा था, उनकी औरतोंने अपने ढले हुए उरोजोंको बहुत नीचे तक उघाड़ दिया था, अपनी पीठें नग्न कर दी थीं--लेकिन जब कोई किसी वृद्धाको विदा करने आता है तो उसका सेक्स मर जाता है। अनेक विदेशी नशेमें धुत थे, लेकिन वे लोग हिन्दुस्तानियोंकी तरह बकवास नहीं करने लगते। नशेने उनकी गम्भीरताको और गहन कर दिया था। गम्भीरताको या चिन्ताको ? बहरहाल, वे खुश नहीं थे। उनकी चहक नक़ली थी। उनकी आँखोंमें तेजस्विताके काण्टेक्ट लेन्स लगे हुए थे। मुझे उन साहित्यकारोंकी याद आ गयी, जो पश्चिमी सभ्यताके काण्टेक्ट लेन्स लगाये हुए हैं।

दो-एक कवियों-लेखकोंको मैं पहचानती हूँ। वे लोग मुँह लटकाये 'टी-हाउस' में बैठे थे—बुक-स्टालके पास। मैंने उन्हें दो-एक बार टेलिविजनपर और कुछेक बार गोष्ठियों-के मंचपर देखा था। वे सिगरेटें पी रहे थे। मैं 'टी-हाउस' में दाखिल होकर उनकी मेज़के नज़दीकसे गुज़री। उनमें-से एकके पास 'मेन-ओनली'का नया अंक था। बीचके पृष्ठोंपर जो रंगीन न्यूड 'मेन-ओनली' में छपती है ('मेन-ओनली' होस्टलकी लड़कियोंमें बहुत लोकप्रिय है !), उसे उसने मेज़के नीचे अपनी गोदमें खोल रखा था। वह न्यूड सचमुच बहुत खूबसूरत थी, जिसकी जवानी उस मुद्रण-स्थितिमें भी जीवित किरणें फ़ेंक रही थी। शायद वे किरणें 'लेसर' किरणोंकी तरह थीं, जो विकिरित होनेपर फैलती नहीं हैं सीधी लीकमें आगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
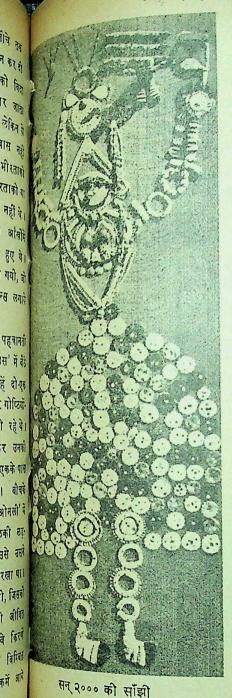
सन् २००० की साँझी

• सन् २००० के पहले और बाद :

वैज्ञानिकोंने अपनी वर्तमान योजनाओंका हिसाब-किताब लगाकर उन बातोंकी भविष्यवाणी की है जो अबसे लेकर सन् २,००० तक या उसके बाद सही होनी चाहिए। ये भविष्यवाणी चिकित्सा, जीवविज्ञान, कम्प्यूटर व ऑटोमेशन, खाद्यान्न, औषधियों, कृषि आदि महत्त्वपूर्ण विषयोंसे सम्बन्ध रखती हैं। यहाँ हम ऐसी ही भविष्यवाणी दे रहे हैं। जिस वर्षमें वे सही हो जायेंगी, वे उनके सामने दिये गये हैं :

समुद्रसे सस्ता ताज़ा पानी	१९८०
सस्ता व प्रभावशाली जनन-नियन्त्रण	१९८५
बहुत हल्के कृत्रिम पदार्थ	१९७८
कम्प्यूटरोंसे अनुवाद	१९७५
शरीरके कृत्रिम अवयव	१९८२
विश्वस्त मौसम-भविष्यवाणियाँ	१९९०
व्यक्तित्व-परिवर्तनके लिए ग़ैर-नशीली ओषधि	२,०००
नियन्त्रित उद्जन बम-शक्ति	२,०००
कृत्रिम जीवन	२,०००
कृत्रिम सस्ते प्रोटीन खाद्य	२,००५
जीनियागरीसे जन्मजात ख़राबियोंपर नियन्त्रण	२,०१०
समुद्री खेतीसे विश्वका २० प्रतिशत भोजन	२,०१५
बुद्धि बढ़ानेके लिए ओषधियाँ	२,०२०

और इनके बाद (पता नहीं कबतक) दिमाग़ व कम्प्यूटरका सम्बन्ध क़ायम हो जायेगा। आदमी ओषधियोंके ज़रिये ५० साल और ज़्यादा जीवित रहेगा, निम्नस्तरके कामोंके लिए बुद्धिमान् जीव-जन्तुओंका संकरण होगा तथा मस्तिष्कपर सीधे रिकार्डिंगसे शिक्षा दी जायेगी।

—हरीश अग्रवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बढ़कर, सामनेकी हर चीज़को रेत देती हैं। वह साहित्यकार उन 'लेसर' किरणोंसे अपनेको भेद रहा था। जब मैं नज़दीकसे गुजरी, किरणें मुझे भी भेद गयीं····

आज यह शताब्दी बूढ़ी होकर विदा ले रही है। सारे कपड़े उतारकर वह नाभि तक लटकते अपने काले स्तनोंको बीभत्सतासे टाँगे हुए है। यदि वृद्धाओंके भी न्यूड छापे जायें तो वे 'लेसर-प्रसारण' न कर पायें, लेकिन यह शताब्दी-वृद्धा ऐसा कर सकती है। उन विदेशियोंकी काण्टेक्ट-लेन्सी चमक ऐसे ही किसी 'लेसर-प्रसारण'से भिदी हुई थी——भले ही यह प्रसारण सेक्सका नहीं था····

कनाट-प्लेसमें मैंने कई एंग्लो-इण्डियनोंको भी चहकते देखा। मुझे याद है, पाँच-सात वर्ष पहले ३१ दिसम्बर काफ़ी उत्साहसे मनाया जाता था। उन पाँच-सात साल पहले यह उत्साह और ज़्यादा रहा होगा। आज वह जगह-जगहसे रीत गया है। लगता ही नहीं कि बड़े दिनका उत्सव हो रहा है····वे विदेशी कनाट-प्लेसमें मानो चहकने-हँसनेकी अपनी ड्यूटीपर आये हुए थे—वे फ़ाइलें निपटा रहे थे। उन्हें देखकर मुझे स्वर्गीय रमेश बक्षीकी कहानी 'मातम' और स्वर्गीय रामकुमार भ्रमरकी 'ड्यूटी मुसकराने की' याद आ गयी थी। ये दोनों कथाकार अभी पिछले ही साल एक कार-एक्सिडेण्टमें मारे गये। एक्सिडेण्टके फ़ोटो मैंने अखबारोंमें देखे थे। पीये हुए होंगे साले! दोनों कहानियाँ एक बहुत पुराने संग्रहमें कभी पढ़ी थीं।

मैं जानती हूँ कि आप मुसकरायेंगे नहीं, यदि मैं आपको बताऊँ कि मैं 'टी-हाउस'में चाय या कॉफ़ी पीने नहीं, 'ईज़ी' होने गयी थी। यह 'ईज़ी' शब्द बड़ा अटपटा लगता है न? लोग इसके लिए 'बाथ-रूम' कहते हैं, लेकिन कल जो शताब्दी शुरू होने जा रही है, उसकी तैयारी आजसे कर लेनी चाहिए। इसीलिए मैंने एक यथार्थ शब्दका प्रयोग किया है। सचमुच मैं नहाने नहीं गयी थी, 'ईज़ी' होने। 'टी-हाउस' इसके लिए बहुत बढ़िया जगह है। आप घुस जाइए, हलके होइए और खुश-खुश बाहर निकल आइए। महिलाओंके लिए हलके होनेकी समस्या बहुत गम्भीर है। पुरुषोंकी तरह तो नहीं कि कहीं भी आड़ देखी और—या, आड़ न हुई तो भी···कभी-कभी ऐसी भी हालत मेरी हुई है कि रोना आने लगे। शायद मैं बहक गयी हूँ। असलमें बीसवीं सदी खुद बहकी हुई है। कलसे मैं 'हैं' के बजाय 'थी' कहने लगूँगी····अगली सदी और ज़्यादा बहकी हुई होगी, इसमें दो मत नहीं हो सकते। जो दो मत रखेंगे, वे खुद बहके हुए होंगे····बहकी-बहकी सदीकी सदस्या मैं! ये पृष्ठ यदि मैं आजके बजाय कल लिखूँ तो और ज़्यादा बहक जाऊँगी····हाँ, तो मैं कह रही थी कि लड़कियाँ व औरतें 'टी-हाउस'का इस्तेमाल पेशाब-घरके रूपमें करती हैं। लोगोंपर यह रहस्य खुल ही चुका है। जब हम लोग प्रवेश करके सीधी उस कोनेकी ओर बढ़ती हैं तो कई आँखें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा इरादा पहचान लेती हैं। मैनेजर और बैरे भी समझ जाते हैं। कभी-कभी वे आपकी आँखोंके सामने ही मुँह बिचकाते हैं, लेकिन ऐसीकी तैसी इनकी! और जब आप कोनेमें लगे उस दरवाज़ेके पीछेसे निपटकर बाहर आती हैं और बुदबुदाती भीड़को पार कर सड़क तक पहुँचती हैं तो यह सब सनसनीखेज होता है—भाँपती हुई निगाहोंके जंगलके बीचसे गुज़रना····इसी सनसनीको लिये-लिये मैं 'टी-हाउस'से बाहर निकल आयी। 'मेन-ओनली', जो पहले इंगलैण्डसे आयात होता था, सरकारी बन्धनके कारण अब····विदेशी मुद्राका प्रश्न बड़ा जटिल है····मम्मी कह रही थीं, पिछले चालीस सालोंसे यही हालत है····इसीलिए 'मेन-ओनली'का एक भारतीय संस्करण बम्बईसे निकलने लगा है। उसके बीचके पृष्ठोंपर अब हिन्दुस्तानी लड़कियोंके जिस्म 'लेसर' किरणोंका प्रसारण करते हैं····

मैं पूछती हूँ, इसमें ग़लत क्या है? बीसवीं सदीकी समाप्तिके समय हमें अपने उन दकियानूसी खयालोंको भी समाप्त कर देना चाहिए, जो इक्कीसवीं सदीमें दफ़न भी न हो सकेंगे—वे खुली सड़कोंपर पड़े रहेंगे और आवागमन उन्हें रौंदता हुआ गुज़रता रहेगा। अगर किसी लड़कीकी नग्न तसवीरें लोगोंने देख ही लीं तो कौन-सा आसमान टूट पड़ा? नये युगमें हम हर चीज़को सार्वजनिक बनाते जा रहे हैं। वैज्ञानिकोंकी उपयोगिता इसीलिए है कि उनके आविष्कार सार्वजनिक हो जाते हैं। सुन्दरता भी यदि सार्वजनिक हो जाये तो क्या हर्ज? पश्चिममें तो ऐसा सोचा जाते अनेक साल गुज़र चुके, लेकिन हिन्दुस्तान हिन्दुस्तान है। पश्चिमकी 'आउट-ऑफ़-डेट' चीज़ ही यहाँ 'अप-टू-डेट' हो पाती है। तो····मेरा तर्क यह है—और क्या आपके पास इसका कोई जवाब है?···· कि मानसिक चीज़ कोई है ही नहीं! जो भी है, शारीरिक है। जिसे आप दिमाग़ कहते हैं, वह भी शरीरके भीतर भूरे तत्त्वका एक गुम्बद ही है! जो दिमाग़से उपजता है, वास्तवमें वह शरीरसे ही उपजता है। वैज्ञानिक आविष्कार क्या शरीरकी उपज नहीं? और जब लड़कियोंकी नग्न तसवीरें खींची जाती हैं, वे तसवीरें भी शारीरिक उपज ही होती हैं। फिर आविष्कारकोंको सम्मान देना और न्यूड्सको ज़रा चौंककर देखना—क्या यह अन्याय नहीं? हम सब शरीरका ही व्यापार करते हैं। अभिनय करते हैं तो शरीरके हाव-भाव दिखाते हैं। साहित्यकार बनते हैं तो शरीरके एक हिस्से (दिमाग़) से उपजी चीज़को दूसरे हिस्से (हाथ)-द्वारा काग़ज़पर लिख देते हैं। शरीर ही सर्वोपरि है। इक्कीसवीं सदीके इस स्वरको जो नकारेगा, मर जायेगा।

यही सब मैं सोच रही थी—जब मैं 'टी-हाउस' से बाहर आयी और सामनेकी रेलिंगसे टिका खड़ा गोप दिखाई पड़ गया। मैं उसे गोप ही कहती हूँ, क्योंकि वह बहुत मोटा है और मम्मी कहती थीं कि गोप नामका एक मोटा-मोटा हास्य-अभिनेता हिन्दुस्तानी फ़िल्मोंमें हुआ करता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन यह गोप मसखरा नहीं है। वह हमेशा चिड़चिड़ाता रहता है, न जाने उसे क्या असन्तोष है। आश्चर्य कि इसके बावजूद वह मोटा है और मुझे इस विरोधाभासपर प्यार आता है। मैं मुसकराती हुई उसके पास जा खड़ी हुई। गोप फ़ोटोग्राफ़र है। हम दोनोंमें कोई नमस्ते नहीं हुई। अबतक हम इस औपचारिकताको ज़रूर निभाते रहे थे, लेकिन आज वह नहीं निभी—हम लोगोंमें इसे लेकर पहलेसे कोई षड्यन्त्र भी नहीं था। हम दोनों अनजानेमें ही इक्कीसवीं सदीमें रह सकनेकी तैयारी कर रहे थे। कलसे सारी औपचारिकताएँ खत्म हो जायेंगी, ऐसा गोपको भी लग आया था—लग आया होगा।

मैं उससे सटी-सटी, रेलिंगसे टिककर खड़ी हो गयी। उसने जो पहला वाक्य कहा, वह था, "तुम फिर वही घटिया ट्राउज़र्स पहनकर आयी हो?"

मैंने कहा, "मैं अपना असली नाम देना चाहती हूँ।"

ये दोनों वाक्य किसी भी तरह एक ही सन्दर्भके नहीं लगते—लेकिन ये हैं।

आपने ध्यान दिया था न? मैंने अभी बताया कि गोप फ़ोटोग्राफ़र है। मैं उसके सामने कई बार अपने कपड़ोंमें-से बाहर निकल आयी हूँ—जैसे कि चूज़े अपने अण्डोंमें-से बाहर आते हैं (मीना सरकारका एक जासूसी उपन्यास मैंने पढ़ा था—'मौतके कोहरेमें'। चूज़ोंवाली यह अभिव्यक्ति उसीमें थी। बढ़िया है न? ज़माना अब जासूसी उपन्यासोंके उद्धरण देनेका है। काफ़्का और अज्ञेय गये कामसे!) वह मेरे जिस्मके एक-एक उतार-चढ़ावसे परिचित है। आज जो ट्राउज़र्स मैंने पहने हैं, वे कुछ इस तरह सिले हुए हैं कि मेरे नितम्ब (नितम्बकी जगह मैंने 'हिप्स' कहा होता तो आप कम चौंकते! ऐसीकी तैसी आपकी अँग्रेजियतकी! इक्कीसवीं सदीमें न कोई अँग्रेजियत होगी, न हिन्दुस्तानियत। रूसियत, चीनियत—सब गोल! वैसे, इन सभी 'यतों' का भ्रम ज़रूर क़ायम रहेगा, लेकिन भ्रमकी भी ऐसीकी तैसी!)....तो, मैं कह रही थी कि मेरे ये ट्राउज़र्स घटिया ढंगसे सिले हुए हैं। इन्हें पहननेपर मेरे नितम्ब बड़े 'आउट ऑफ़ प्रपोर्शन' यानी 'पैमानाहीन' लगते हैं...गोप जानता है कि ये पैमानाहीन नहीं हैं। इसलिए कि मैंने गोपको घूरनेसे मना कर रखा है। वह कैमरेके लेन्समें-से घूरता हो तो अलग बात है, लेकिन वह ऐसा नहीं करता होगा। उसका सेक्स मर चुका है—जैसा कि आजके हर वाक़ई समझदार आदमीके साथ है। वह केवल मेरे फ़ोटो खींचता है ब्लैक-एण्ड ह्वाइट। हिन्दी तर्ज़में—सफ़ेद-स्याह! और मेरी ट्रान्सपेरेन्सियाँ उतारता है। हिन्दी: पारदर्शियाँ! ये ट्रान्सपेरेन्सियाँ उसने विदेशी पत्रिकाओंको भेजी हैं। वे छपी हैं। मेरी शारीरिक उपजोंने विदेशोंके अनेक ऐसे पुरुषोंको आन्दोलित किया है, जिनका सेक्स अभी इतना जीवित रह सका है कि मुद्रित रोशनी देखकर ही उनकी आँखें चौंधिया जायें—कितना मज़ेदार मामला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि मेरे शरीरकी 'लेसर' किरणें न जाने कितनोंको तंग करती होंगी! अभी दो सप्ताह पहले ही मैंने गोपको (पता नहीं, इस ढोलकका पूरा असली नाम क्या है!) अनुमति दे दी है कि वह 'मेन-ओनली' के भारतीय संस्करणमें मेरे न्यूड्स छपवा सकता है। अबतक न्यूड्सके साथ मेरा नक़ली नाम जाता रहा है। परिचय भी नक़ली। लेकिन इक्कीसवीं सदीमें लड़कियों-को इस तरह झिझकनेकी ज़रूरत है--ऐसा मैं नहीं समझती। इसीलिए मैंने गोपसे कहा, "मैं अपना असली नाम देना चाहती हूं।" ऊपरी तौरपर, दोनों वाक्य कितने कटे-कटे लगे थे आपको! नहीं! लेकिन गोप सब समझ गया था। उसे खुश हो जाना चाहिए था, क्योंकि असली नाम दिया जाये, ऐसा उसका आग्रह काफ़ी पुराना था, लेकिन वह खुश नहीं हुआ। उसका चेहरा खुशीके भाव उभार ही नहीं सकता। वह खुशी प्रूफ़ है····उसने बस, मेरी कमरमें हाथ डाल दिया। मैंने भी उसकी कमरमें--या कहिए, उसकी तोंदपर हाथ रख दिया और हम कनाट-प्लेसमें घूमते रहे। दो-चार टोलियाँ ऐसी ज़रूर नज़र आयीं, जो बड़े दिनकी खुशीमें उन्मत्त हुई जा रही थीं—लेकिन सच यह था कि उनकी खुशीको आसपासके लोग—देशी-विदेशी—अचरजसे देख रहे थे।

"आओ, किसीको चौंकायें। हमारी सदी चौंकाये बिना ही गुजर रही है···हम इसकी कसर निकालें!" गोपने कहा। उसने सिगरेट सुलगायीं और एक बूढ़े गोरेकी ओर बढ़ा। बूढ़ा गोरा अपनी गोरी बुढ़ियाके साथ गम्भीरतासे फ़ुटपाथपर चला जा रहा था। दोनोंके हैट बड़े-बड़े थे। लगता था, दो हैट चले जा रहे हैं। दोनोंके हाथमें एक-एक गुब्बारा था। गुब्बारोंपर अजीबो-गरीब शक्लें बनी हुई थीं। वे आकाशकी ओर तने-तने थे—हाइड्रोजन! गोप और मैं चुपकेसे उनके नज़दीक पहुँच गये—पीछे-पीछे। गोपने जलती सिगरेटका सिरा बूढ़ेके गुब्बारेसे छुआ दिया। फट! गुब्बारा गायब! लेकिन बूढ़ा नहीं चौंका। कितना अजूबा कि वह बिलकुल नहीं चौंका। बुढ़िया भी इस तरह चलती रही, जैसे कुछ हुआ ही नहीं। गोपने हताशासे मेरी ओर देखा। फिर उसने बुढ़ियाके भी गुब्बारेको सिगरेट छुआ दी। तेज़ आवाज़के साथ दूसरा गुब्बारा भी लुप्त हो गया, लेकिन बूढ़ा-बुढ़िया चौंके बिना—पलटकर हमारी ओर देखे बिना, खुशी या रंजिशकी कोई रेखा उभारे बिना--जिस तरह वे चल रहे थे, उसी तरह चलते रहे।

"पुह!" गोप बुदबुदाया और रुक गया। वे आगे चलते रहे, दूर हो गये।

"तुम अमरीकी ढंगसे दुतकारते हो—पुह!" मैंने कहा। हममें-से कोई न हँसा।

"अब कोई अमरीकियत, कोई अँगरे-ज़ियत, कोई रूसियत, कोई चीनियत····" मैंने कहना शुरू किया, लेकिन गोपने रोक दिया। बोला, "तुम झूठी हो—और तुम खूबसूरत हो!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"इन दोनोंमें क्या मेल ?" मैंने अचरज-से कहा।

"आओ, पैसे बनायें।"

"यह भी अँगरेज़ी मुहावरा है।"

"क्योंकि मैं अँगरेज़ीसे पैसे वसूलता हूँ।"

मैं उदास हो आयी—"मैं भी तो! लेकिन....खैर, छोड़ो...."

मेरा प्रत्येक न्यूड जितनी बार छपता था और जितने डॉलर या पौण्ड कमाता था, उसमें-से खासी अच्छी रायल्टी गोप मुझे दे देता था। (एक बात बताऊँ, गोपको मैं कभी-कभी पोप भी कहती हूँ!)

"हिन्दुस्तान रूखा देश है। यहाँ कोई उत्सव ही नहीं हो रहा ?" मैंने शिकायत की, "दूसरे देशोंमें कितना हो-हल्ला हो रहा होगा! एक सदी बीत रही है....कलसे नयी सदीकी शुरूआत...."

"तुम बच्ची हो! दूसरे देशोंमें भी यही हाल है...उत्सव सभी जगहसे विदा ले चुका है। सब जगह भय है, आशंकाकी 'लेसर' किरणें हैं या सेक्स है—जीता-जागता या छापेखानेसे निकला हुआ या...फ़िल्मोंमें दीखता हुआ....तुम सेक्स हो। मैं तुम्हारा माध्यम हूँ। तुम मुझसे क्या आशा रखती हो ? माना कि मैं मोटा हूँ, लेकिन क्या मैं हमेशा तुम्हारा माध्यम ही बना रहूँगा ? मेरा सेक्स भरा हुआ लगता है न तुम्हें ?"

मैं चौंक गयी। देखती रह गयी गोप-को। उसने गहरी साँस ली। लगा, उसके चेहरेमें एकाध झुर्री ज़्यादा पड़ गयी है। मैंने उसे तसल्ली देनेके लिए कहा, "ठीक है, मैं तुम्हें मना करती रही हूँ, लेकिन मना सब करती हैं।"

"यह पुरानी परिपाटी है। बीसवीं सदीकी है।" गोपका चेहरा तमतमा आया। फिर उसने वह बात कही जो किसी ज़मानेमें पोप 'पवित्र' ने कही थी। पोप 'पवित्र' ने आज्ञा जारी की थी कि सूर्य पृथ्वीका चक्कर लगाता है,—यह मान्यता पुरानी व अवैज्ञानिक है। उसे बदल दो कि सूर्य पृथ्वीका नहीं, पृथ्वी सूर्यका चक्कर लगाती है और खुद अपना चक्कर लगाती है और सूर्य भी खुद अपना चक्कर लगाता हुआ किसी अज्ञात बिन्दुका चक्कर लगा रहा है और यह सारी आकाशगंगा घूमती हुई, खुद भी न जाने किस बिन्दुकी परिक्रमा कर रही है....

गोप कह रहा था, "जब पोपने पुरानी परिपाटी तोड़ दी तो हम-तुम तो...."

"तुम गोप हो।"

"गोप सही! लेकिन क्या तुम समझती हो...मैं हमेशा तुम्हारा माध्यम...."

"चाहते क्या हो ?"

"बिना पूछे समझ जाओ...."

"बिना पूछे समझ जाना पुरानी परिपाटी है।" मैंने कहा। मैंने सिर्फ़ कहा था, कटाक्ष नहीं किया था। इसके बाद हम एक होटलमें चले गये। पहली बार हम दोनोंने प्यार किया। ग़लत! हम दोनोंने मिलकर प्यार नहीं किया और उसने मुझे प्यार नहीं किया। ये दोनों तो पुराने खयाल हैं। वास्तवमें मैंने उसे प्यार किया—भले ही वह मोटा और थुलथुल था। है। मैंने उसे यक़ीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिखाया कि वह मेरा केवल एक माध्यम नहीं है। वह बहुत खुश हुआ। मैंने उसे इतना प्यार किया कि वह तंग आकर बोर हो गया।

लेकिन मैं जानती हूँ कि वह केवल एक माध्यम ही है। मैं आरामकी जिन्दगी बसर कर रही हूँ। स्टूडियोंमें, कपड़ोंसे बाहर निकल, धधकते लैम्पके सामने, अदाओंमें खड़े रहना पसीना तो पैदा कर सकता है, लेकिन कुल मिलाकर यह आरामकी ही ज़िन्दगी है, जो मैं गोपके कारण बसर कर रही हूँ। (वैसे, यह भी ठीक है कि गोप यदि मर-मरा जाये तो मुझे कोई और गोप मिल जायेगा, लेकिन खोजने-वोजनेकी ज़हमत····) इक्की-सवीं सदीका तक़ाज़ा—कि अपने शरीरका सम्मान सबसे पहले करो—क्योंकि केवल वही व्यापार सम्भव है जो शरीरका है···· मैं क्यों अपने शरीरको किसी तरहकी तकलीफ़ दूँ ?

अच्छा ठहरिए, मैं आपको अपने एक और निर्णयसे अवगत करा दूँ। 'टी-हाउस'-में जो मैं करती हूँ, अब उसे खुली सड़कके किनारे या कहीं भी सार्वजनिकताके साथ किया करूँगी—पुरुषोंकी तरह मैं भी इस सहज कार्यमें कोई गतिरोध नहीं चाहती। कलसे, या आज रातके बारह बजेके बादसे, मेरी नयी सदीकी शुरुआत इसी तरह होगी। ■ ■

के–१०३, कीर्तिनगर,
नयी दिल्ली–१५

Why do you worry for :

Springs & Spring Washers

CONSULT US

Asia Spring Mfg. Co.

(REGISTERED ORIGINAL FIRM)

ENGINEERS & SPRING MANUFACTURERS

21-A, Canning Street, Calcutta-1.

Post Box No. : 2713

Factory at :

20, MUSALMAN PARA LANE,

(Off Belilious Road)

HOWRAH

Gram : "BRON SPRING"

Phone–Office : 22-7980.
Phone–Works : 66-3310.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदाचारका तावीज़

हरिशंकर परसाईकी चिर-प्रतीक्षित व्यंग्य-कृति

हिन्दीमें हास्य और व्यंग्य
है कितना ?
आजका समझदार पाठक
यह अच्छी तरह जानता
समझता है।
और इसीलिए वह जानता है
हरिशंकर परसाई-
को :
जिनकी क़लमकी नोंक
सामाजिक विसंगतियों, मिथ्याचारों,
पाखण्डों और सुन्दर मुखौटों-
का बेलौस परदाफ़ास करती है!

सदाचारका तावीज़
परसाईजीकी
इकतीस व्यंग्य-कथाओंका
नवीनतम संग्रह है।
कहानियाँ सब ऐसी हैं कि यदि
कहीं चोट लगे तो आप तिलमिलायें
और फिर खुद ही क़हक़हे भी
लगायें।
इन कहानियोंका स्वर
सुधारका नहीं बदलनेका है,
यानी सिर्फ़ इतना कि आपकी
चेतनामें एक हलचल हो जाये!

मूल्य ३.००

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन
कलकत्ता • वाराणसी

विक्रय-केन्द्र : ३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FOR RELIABLE

SERVICING

&

REPAIRS

OF

AIR CONDITIONERS

REFRIGERATION EQUIPMENT

CONTACT

FREEZECO

39, Jatin Das Road, CALCUTTA-29

Phone : WORKS-46-1205

OFFICE-22-2258

(A HOUSE OF 2ND HAND AIR-CONDITIONER & REFRIGERATORS WITH ONE YEAR FREE GUARANTEE)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
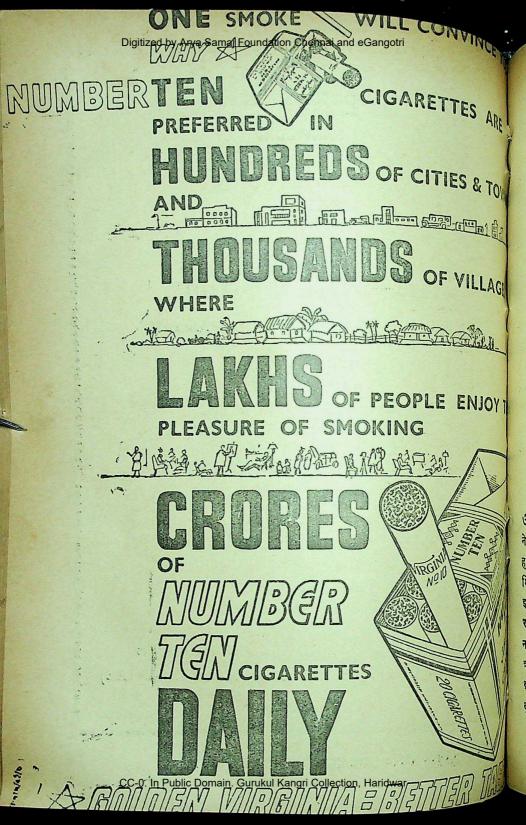
॥ कितनी सारी भीड़ ॥ किसे पता था कि ज़फ़रका दर्द इतनी दूर तक मानवताको प्रभावित करेगा···, दफ़नसे पहले-की समस्याएँ ऐसी भयानक होती जा रही हैं कि सारी दुनिया बढ़ती हुई आबादीसे आतंकित है। यह लाल तिकोनका विज्ञापन नहीं है लेकिन उस चिन्ताका ब्लर्ब ज़रूर है जिससे हम लोग लगातार घिरते और पिटते जा रहे हैं।···

दो गज़ ज़मीन भी न मिली····

आशालता शर्मा। पता नहीं वह कौन-सी घड़ी थी; जब आदि-पुरुष और आदि-नारी-ने वह वर्जित फल चक्खा था जिसका फल आज सारी दुनियाको भुगतना पड़ रहा है। हर क्षण इस सिकुड़ते हुए संसारमें दो जने हिस्सा बँटानेके लिए बढ़ जाते हैं···और हर मिनिट १२०, हर घण्टे ७, २००, हर रोज़ १७, २,८०० और हर साल ६, ३, १००,००० ! इस तरह हर साल कोई साठ मिलियन (६ करोड़) व्यक्ति दुनियाकी आबादीमें जुड़ रहे हैं, जिनमें-से १ करोड़ तीस लाखके उत्पादनका श्रेय इस महादेशको है, जिसे हम भारतके नामसे जानते हैं। दुनियाकी दो-तिहाई आबादी सिर्फ़ दस देशोंमें भरी हुई है, जिनके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं : चीन, भारत, रूस, अमरीका, इण्डोनेशिया, पाकिस्तान, जापान, ब्राजील, जर्मनी (फेडरल रिपब्लिक), यूनाइटेड किंगडम (इंगलैण्ड)। भीड़ के हिसाबसे दुनियाके पहले पन्द्रह महानगर ये हैं (संयुक्त राष्ट्र १९६४ के अनुसार) :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहर	भीड़
तोक्यो :	८७,३३,०००
न्यूयार्क :	८०,८६,०००
शंघाई :	६९,००,०००
मास्को :	६३,३४,०००
बम्बई :	४५,३८,०००
पीकिंग :	४०,१०,०००
शिकागो :	३५,५०,०००
काहिरा :	३५,१८,०००
रिओ द जानेरिओ :	३२,२३,०००
टिएन्टसिन :	३२,२०,०००
लेनिनग्राड :	३२,१८,०००
ओसाका :	३१,९७,०००
लन्दन :	३१,८४,६००
साओपॉलो :	३१,६५,०००
मैक्सिकोसिटी :	३१,१८,०००

दुनियाके कोई ८० महानगर हैं जिनमें भीड़ दस लाखसे अधिक हो गयी है। १९५५ में ऐसे 'लखपति' नगरोंकी संख्या कुल साठ थी। महानगरोंमें तोक्यो सबसे अधिक आबाद भले ही हो, पर जापानने अपने देश-की आबादीको सन्तुलित कर लिया है और वहाँ केवल १५ वर्षमें जन्म-दर पहलेसे आधी हो गयी है। जन्म-दरकी दृष्टिसे माली देश सर्वप्रथम हैं, जहाँ जन्म-दर ६२ प्रति हजार हैं। सबसे अधिक घनी आबादी नीदरलैण्ड्स-में है जहाँ प्रतिवर्ग किलोमीटरमें ३५६ व्यक्ति हैं। जबकि दूसरी ओर आस्ट्रेलिया, लिब्या मार्टीनिया और मंगोलिया-जैसे देश हैं जहाँ जनघनता दो व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है।

दुनियामें औसतन प्रति वर्ग किलोमीटर-में २३ व्यक्ति रहते हैं। यह तब है, जब आबादी कोई साढ़े तीन अरब है।

इन साढ़े तीन अरब लोगोंमें-से ज्यादातर लोगोंको हम भरपेट 'पोषण' नहीं दे पा रहे हैं; बहुतोंको शुद्ध पानी नसीब नहीं है; बीमार पड़नेपर इलाजकी सुविधा नहीं है। सारी आबादीका दो-तिहाई भाग अविकसित देशोंमें रह रहा है और संसारकी आयका छठा भाग ही उसके हिस्सेमें आता है। उत्तरी अमेरिका, पश्चिम युरॅप और रूसमें जहाँ १००० व्यक्तियोंके लिए एक डॉक्टर है, वहाँ भारतमें ६००० व्यक्तियोंके लिए, अफगा-निस्तानमें ३२००० व्यक्तियोंके लिए, मालीमें ३९००० के लिए और ईथोपियामें ९६००० के लिए एक चिकित्सक है। एक अरब लोग जिस हालतमें रह रहे हैं, वे किसी भी सहृदय मानवके लिए बड़े शर्मनाक हैं। महानगरोंकी २० से ३० प्रतिशत आबादी झुग्गी-झोपड़ियोंमें कूड़ेके ढेर पर पलनेवाले कुत्तों-जैसी बदतर ज़िन्दगी बिता रही है। और ये शहर नासूरकी तरह धरती-की छातीपर फूटते-फैलते ही जा रहे हैं। हर साल सारी दुनियामें चार प्रतिशतकी दरसे नगर बढ़ रहे हैं। बड़े-बड़े महानगर तो दुगुनी दरसे बढ़ रहे हैं। हमारे अपने देशकी राजधानी दिल्लीके आयोजकोंको मास्टर प्लान बदलना पड़ता है—पहले जहाँ 'ग्रीन बेल्ट' थी, अब वहाँ बस्तियाँ बसायी जा रही हैं। क्या करें सारे देशमें लोग गाँवोंको छोड़कर नगरोंकी ओर भाग रहे हैं—"जैसे विमनियाँ न हों, असंख्य अजगर हों, जो अपनी साँसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
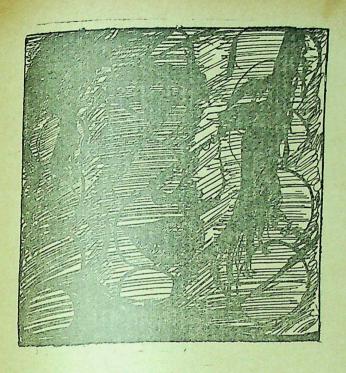
• **इतना बदनसीब है ज़रूर...**

ऊपर एक नारी-आकृति है और चित्र बार्डर सहित वास्तविक आकारमें १५.५ वर्ग इंच है।...यह इतनी जगह इस विशेषांकमें व्यर्थ व्यय करते हुए कोई संकोच नहीं हुआ लेकिन सोचिए तो...आबादीकी रफ़्तार यही रही तो सन् ३००० तक १५ आदमियोंके लिए इतनी जगह जितने घेरेमें ऊपर एक खण्डित नारी-मूर्तिका चित्र मुद्रित किया गया है।...

साथ सैकड़ों-हजारों आदमियोंको खींचें ले रहे हैं...."गाँव जहाँपर मेरा घर था; पगडण्डी, जिसपर चल मैं शिखरों तक पहुँचा....सब कुछ....सब कुछ....नष्ट हो गया। बिदा देती एक दुबली बाँह-सी मेंड़, अँधेरेमें छूटते चुपचाप बूढ़े पेड़; और अब बघकच्चे-से घरके आँगनमें आश्वासनवाला टूटा मन, शहरोंमें डीजल पीता है।—डॉ० धर्मवीर भारतीकी ये काव्य-पंक्तियाँ नगरीकरणकी जिस समस्याकी ओर इंगित कर रही हैं, वह जब आज ही इतनी प्रबल है तो सन् २००० ई० में क्या हाल होगा, इसकी कल्पना करना कठिन नहीं है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• तैंतीस वर्ष बाद डॉ० बेडफ़ोर्ड जीवित हुए तो...

जिन डॉ० बेडफ़ोर्डका शव आज द्रव नाइट्रोजनमें जमा कर रखा हुआ है, मान लें कि वे आजसे तैंतीस वर्ष बाद इक्कीसवीं सदीकी एक सुबह जीवित कर लिये जाते हैं। जिस कैंसरसे उनकी 'मृत्यु' हुई थी, उसका इलाज खोज लिया जाता है और डॉक्टर उन्हें पुनर्जीवन प्रदान कर देते हैं। तो बहुत सम्भव है कि वे जब आँख खोलें और जिस चिकित्सक-मण्डलीका शुक्रिया अदा करें, वह उन्हें बताये कि वे शुक्र-ग्रहपर हैं, जहाँ सामान्यत: ही तापमान हिमांकसे नीचे रहता है। शुक्र ग्रहसे डॉ० बेडफ़ोर्डको धरतीपर लाया गया तो वे बहुत कुछ बदला हुआ पायेंगे! धरतीकी ओर आते हुए रास्तेमें किसी अन्तरिक्षीय जलपानगृहमें पृथ्वीकी परिक्रमा करते हुए वे जलपान कर सकते हैं और फिर हो सकता है कि कैलीफ़ोर्नियामें जहाँ उनका घर था, वहाँका नक्शा ही बदला हुआ मिले। एक मंज़िलवाले घरोंको तबकी दुनिया बरदाश्त नहीं कर सकेगी। हो सकता है कि सबसे छोटे घर छत्तीस-चालीस मंज़िलवाले हों!

फिर कहीं डॉ० बेडफ़ोर्ड विश्व-भ्रमणके लिए निकल पड़े तो देखेंगे कि समुद्रों और रेगिस्तानों-द्वारा निगली हुई धरतीको पृथ्वी-पुत्रोंने छीन लिया है। तबके अगस्त्य-पुत्र समुद्रोंको सुखा भले ही न पाये हों, पर उसके पानीको मीठा बनाकर पीनेके काम ला रहे होंगे (समुद्रके खारे जलको मीठा बनानेके यन्त्र बन चुके हैं और कुछ देशोंमें उनका उपयोग हो रहा है)। समुद्रोंका महत्त्व यातायातके लिए इतना नहीं रहेगा, पर अन्न और खनिज-भण्डारके रूपमें समुद्रका महत्त्व बढ़ जायेगा। भूमध्यसागरसे गुज़रनेपर डॉ० बेडफ़ोर्डको हो सकता है वह महानगर दिखाई दे जिसकी योजना फ़्रान्सके शिल्पी पाल मेयोमोण्टने बनायी है—फ़्रान्सके एक अन्य शिल्पी योना फ़्रीडमैनने 'झूलते हुए नगर' बसानेकी योजना बनायी है। इन नगरोंको कहीं भी—नदियोंपर, जंगलोंपर, पहलेसे बसे नगरोंपर, पहाड़ोंपर खड़ा किया जा सकता है। डॉ० बेडफ़ोर्ड शुक्र-ग्रहसे धरतीपर आनेके बाद जिस नगरमें रात बितायें, हो सकता है, उसके वायुमण्डलपर उस 'जिओडेसिक डोम'का वितान तना हो, जिसकी परिकल्पना अमरीकी अभियन्ता बकमिंस्टर फुलरने की है। इस मानव-निर्मित वातावरणमें कृत्रिम रूपसे पैदा की गयी ऑक्सीजन बेडफ़ोर्ड महोदयके रुधिरमें घुलकर उनकी चेतनाके तार झनझनायेगी—इक्कीसवीं सदीकी हवा। और अगर कहीं हवा खानेके लिए वे स्विट्ज़रलैण्ड जा पहुँचे तो, वहाँ पास्काल हॉसरमान-द्वारा परिकल्पित अण्डाकार भवनोंवाले नगर देखकर उनका सिर चकरा सकता है—खम्भोंपर लटकते कन्दीलसे घर—इन्हें देखकर वे कनाडाके घर-ऊपर-घरवाले भवन-शिल्पकी विचित्रता भूल जायेंगे, जहाँ एक घरकी छत दूसरेका आँगन होगी?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झूला ? नहीं, झूलता हुआ नगर। फ्रांसीसी शिल्पी योना फ्रीडमन-द्वारा कल्पित।
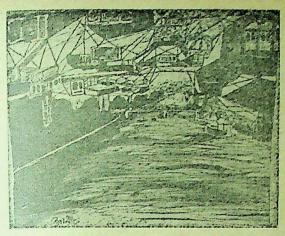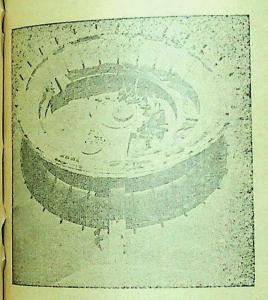
झील ? नहीं, भूमध्यसागरपर नगर-को परिकल्पना : शिल्पी मेयोमोण्ट द्वारा।

कन्दील ? नहीं, कन्दीलनुमा नगर। स्विटज़रलैण्डके पास्कल हासरमैन-द्वारा अभिकल्पित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
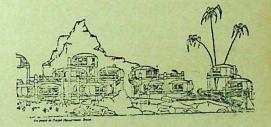
• या रद्दीकी टोकरी :

इस परिकल्पनाका एक दूसरा पक्ष भी है—यदि ग्रहोंपर बस्ती बसाना मृगजल सिद्ध हुआ, यदि सागरों और मरुस्थलोंको नाथनेके प्रयत्न विफल हुए, यदि ग़रीब देश और ग़रीब होते गये और आबादी इसी रफ़्तारसे बढ़ती चली गयी, यदि वातावरणमें कारख़ाने इसी तरह ज़हरीला धुँआ उगलते रहे, नदियोंमें यों ही सब कुछ बहा देना जारी रहा तो फिर इक्कीसवीं सदीकी दुनिया एक रद्दीकी टोकरीकी तरह होगी—चारों ओर सड़ाँध ही सड़ाँध ! उस दिनको दुर्दिन न कहना पड़े, इसके लिए अभीसे ध्यान देना होगा। हमने रोगों और महामारियोंको चुनौती दी है : हमने मृत्यु-दर कम की है, क़ुदरतके काममें खलल डाला है, तो फिर इस हस्तक्षेपको अधूरा नहीं छोड़ सकते। मेरा मतलब है कि जब और बहुत कुछ वैसा ही नहीं है, जैसा प्रकृतिमें अबतक था, तो फिर सृजन-क्रम ही क्यों वैसा रहे ! आबादी बढ़ानेकी रफ़्तार यही रखनी है, तो बाक़ी सब बातें भी रामभरोसे छोड़ दीजिए—फिर अकाल, महामारी और युद्ध अपने-आप आबादीको सन्तुलित स्तरपर ले आयेंगे।

विश्वके भविष्यके लिए चिन्तित विचारकोंने इक्कीसवीं सदीकी दुनियाकी समस्याओंपर गम्भीरतासे मनन किया है और वे इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि हम उस समय, ७ अरबकी जगह आबादी ८ अरब भी हो गयी, तो भी उसे पाल सकेंगे। लेकिन हाथ-पर-हाथ धरकर नहीं—हमें ५ से १४ वर्ष तककी आयुके बच्चोंके लिए ६ करोड़ अध्यापकोंकी ज़रूरत होगी। हज़ार व्यक्तियोंको एक चिकित्सक देनेके लिए .. लाख चिकित्सकोंकी ज़रूरत होगी। इस समय संसारमें १५,००,००० चिकित्सक हैं और यदि २००० ई० के हर आदमीको समुचित पोषण प्रदान करना है तो हमें अबसे तीन गुना अन्न, दूध, मांस, मछली और अण्डे पैदा करने होंगे। विश्व खाद्य एवम् कृषि संगठन (एफ़० ए० ओ०) ने अभीसे २००० ई० के राशनके बारेमें हिसाब लगा लिया है।

• जगह—सिर्फ़ खड़े होनेके लिए…

परन्तु अन्नके बजाय जन-उत्पादन बढ़ता रहा तो छह-सात सौ वर्षोंमें ही आबादी इतनी हो जायेगी कि हर आदमीके लिए मुश्किलसे खड़े होने-भरके लिए जगह रह रहेगी। तब एक आदमीके लिए ३ से ... वर्गफ़ुट जगह तो उस हालतमें मुहय्या हो सकेगी, जब पहाड़ों, रेगिस्तानों और बर्फ़से ढँके हुए ध्रुव-प्रदेशों तकपर आबादी बस जाये। इस हिसाबसे सन् ३००० ई० में ... १५ व्यक्तियोंके हिस्सेमें कुल १५·५ वर्ग इंच ज़मीन आयेगी, यानी एक आदमीके हिस्से १·१ वर्ग इंच… कोई एक अंगूठेपर ही खड़ा रह ले तो रह ले ! इसीलिए प्रोफ़ेसर हेन्ज़ वान फ़ारेस्टर नामक भौतिकीविद्ने ... शुक्रवार १३ नवम्बर २०२६ का दिन निश्चित कर दिया है कि उस दिन भीड़ इतनी हो जायेगी कि उससे कुचलकर ही सब मर ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...आयेंगे ! वह दिन न आये, इसके लिए अनेक दिवास्वप्न देखे गये हैं—अन्तरिक्षमें तैरते नगर बसानेकी योजना सुझायी गयी है—डॉ० डैरेल सी० रोमिकने इस नभचारी नगरमें बाज़ार, खेलके मैदान, मनोरंजन-गृह आदि सबकी व्यवस्था रखी है।

उधर डैंड्रिज एम० कोले साहबका विचार है इस दुनियाको तो छोड़ ही दिया जाये—वैसे भी आदमीके रहने लायक़ नहीं रही है—अतः उनका सुझाव है कि अन्तरिक्ष-यान बनाकर तैयार रखे जायें जिनमें हज़ारों यात्री जा सकें--सभी किताबोंकी माइक्रोफ़िल्म बना ली जाये : घरेलू पशु, पौधे, यन्त्र, कम्प्यूटर ले लिये जायें और संकटकी घड़ी निकट आनेसे पहले ही यह अन्तरिक्ष-यान इस सड़ी दुनियाको छोड़कर चल दे ! गृहोंको मानवके आवास-योग्य बनानेके लिए सबसे रोचक सुझाव कैलीफ़ोर्निया इन्स्टीट्यूट ऑफ़ टेक्नोलोजीके डॉ० फ़्रिज़ ज़्विकीने दिया है कि बृहस्पति और शनि-जैसे ग्रहोंसे द्रव्य लाकर चन्द्रमाका आकार बड़ा किया जाये जिससे कि उसका गुरुत्व-बल बढ़े और वह पृथ्वी-जैसे वायुमण्डलको पकड़कर रख सके ! बर्कले यूनिवर्सिटीकी स्पेस साइन्स लेबोरेटरी-के डॉ० कार्ल सागर्नने शुक्रके वायुमण्डलको सैवाल-जैसी वनस्पतियोंके प्रयोगसे 'शुद्ध' करनेका सुझाव दिया है। मगर आबादी-की यही रफ़्तार रही, तो एक दिन ग्रहोंमें भी 'दो ग़ज़ ज़मीन' भी न मिल सकेगी--हर घण्टे एक अन्तरिक्ष-यान छोड़ना पड़ेगा कि यहाँसे भीड़ [illegible] जाये और किसी ग्रहपर पटक आये। मगर इसका खर्चा कौन देगा ? कैलीफ़ोर्निया यूनिवर्सिटी-के गारेट हार्डिनके अनुसार एक दिनमें जितनी आबादी बढ़ती है, उतनी आबादीको अन्तरिक्ष-यान-द्वारा किसी ग्रहपर भेजनेमें हर रोज़ ३६९ अरब डालरका ख़र्चा आयेगा।

स्पष्ट है कि अन्ततः इसी धरतीपर जीना है और इसीपर मरना है--कमसे-कम २००० ई० तक तो यही स्थिति है। साठसे ऊपरके लोग अपने जीवनका सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य--आबादी बढ़ाना—करके अब मज़ेसे हुक़्क़ा गुड़गुड़ाते हुए या माला जपते हुए नयी पीढ़ीको अपने और विश्वके भविष्यकी चिन्तामें डूबते-उतराते, कराहते-फुँकारते देख रहे हैं ! सन् १८४० में जाकर कहीं दुनियाकी आबादी १ अरब हो पायी थी : फिर सौ से भी कम वर्षोंमें दुगनी हो गयी और उसके बाद केवल ३० वर्षमें ही तीन अरब हो गयी। उसके तेवर चालीस सालमें दुगने हो जानेके हैं। आज भारतमें १५ से ४५ की आयुके बीच ९ करोड़ दम्पति हैं। वे ज़रा सोचें कि कहीं इस पृथ्वीका 'भार' बढ़ानेमें योग तो नहीं दे रहे ! कहीं ऐसा न हो कि ज़फ़र साहब २००० ई० में ग़र दुबारा इस सरज़मींपर जन्म लें, तो उन्हें अपनी वह शिकायत दुहरानी पड़े कि 'दो ग़ज़ ज़मीन भी न मिली ....!'

■ ■

कोठी नं० १४२
गान्धीनगर, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ सम्पन्न शताब्दी ॥ बढ़ती हुई भीड़की भयावहता सामने है और यह भी लगता है कि 'मात्र मानव संख्या ही नहीं बढ़ रही है, वरन् उसकी बढ़ती हुई आवश्यकताओंके साथ आवश्यकताओंका परिणाम भी बढ़ रहा है।' आँकड़ोंसे अलग यदि चिन्तनके स्तरपर समस्याका समाधान ढूँढ़ें तो···?

···और विपन्न मानव

भँवरमल सिंघी / वर्तमान शताब्दीका आरम्भ अनेक उपलब्धियों और समाधानोंके साथ हुआ, पर उसका अन्त अनेक अभावों और संकटोंके साथ होता दीखता है। शताब्दीका जो दो-तिहाई भाग पूरा हो चुका है, उसमें हमने ज्ञान-विज्ञानके क्षेत्रमें अनेक नयी उपलब्धियाँ अर्जित कीं, जिनके द्वारा मानव-जीवनके विकासमें अभूतपूर्व प्रगति हुई। इन साठ वर्षोंकी उपलब्धियोंका यदि हम विगत कई शताब्दियोंमें हुई उपलब्धियोंसे मुकाबला करें, तो हम स्वयं चकित रह जाते हैं। दो भयंकर महायुद्धोंमें हुए संहारको झेलकर भी यह शताब्दी अपनी विकास-चेतनामें अभीतक मन्द नहीं पड़ी है, और नये-नये क्षितिजोंकी ओर दौड़ रही है सचमुच विकासकी गतिमें और शक्तिकी सम्पन्नतामें यह शताब्दी अद्वितीय है परन्तु यह वृद्धि और विस्तार अब शताब्दीकी बाक़ी यात्राको बोझिल और बदहवास बना रही है। सर्वत्र यह अनुभव किया जा रहा है कि वस्तुओं और सामग्रियोंकी निरन्तर वृद्धि होती रहनेके बावजूद आदमीकी औसत प्राप्तिमें ह्रास और संकोच हो रहा है। कारण यह है कि वस्तुओंकी वृद्धिके मुक़ाबले मनुष्योंकी वृद्धि कई गुना ज़्यादा परिमाणमें हो रही है। इस सन्दर्भमें यह भी समझने और ध्यानमें रखनेकी बात है कि मात्र मानव-संख्या ही नहीं बढ़ रही है, वरन् उसकी बढ़ती हुई आकांक्षाओंके साथ आवश्यकताओंका परिमाण भी बढ़ रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। विज्ञानने कितनी नयी बातोंका ज्ञान हमें दे दिया है जिनके कारण हमारी आकांक्षाएँ और अपेक्षाएँ बहुत बढ़ गयी हैं। ये घटेंगी नहीं, घटायी जा नहीं सकतीं। किसी ज़मानेमें एक देशकी बात दूसरे देशमें नहीं पहुँचती थी पर आज तो विज्ञानने दुनियाके विभिन्न देशोंको इतना नज़दीक ला दिया है कि मानव-चेतना लगभग सभी जगह समान है। इससे यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि आज किसी भी समस्यापर विचार करें। हमें सारी दुनियाके सन्दर्भमें सोचना-विचारना होगा।

जब वर्त्तमान शताब्दीका आरम्भ हुआ दुनियामें एक अरबसे भी कुछ कम ही लोग थे। आज लोगोंकी संख्या तीन अरब हो गयी है। और वर्त्तमान शताब्दीका शेष होते-होते यह संख्या दुगनी अर्थात् छह अरब हो जायेगी। सौ वर्षोंमें छह गुनी वृद्धि। इसके साथ-साथ अभी तो विज्ञानकी नयी-नयी खोजोंके आधारपर नये तकनीकी साधनोंसे चीज़ोंका उत्पादन और निर्माण बढ़ाकर हमने जीवन-यापनके स्तरको बढ़ाते चलनेमें भी सफलता प्राप्त की है और हर मनुष्यने यह एहसास किया है कि पूर्वापेक्षा वह अधिक विकसित और सम्पन्न है। स्वास्थ्यमें, शिक्षामें, संस्कृतिमें उसने जीवनके नये आयाम पाये और मानवीय गुणोंके विकासका सन्तोष अनुभव किया परन्तु अब यह लगने लगा है कि ज़मीन तथा अन्यान्य साधनोंकी सीमाएँ आ गयी हैं जिससे हमारे उत्पादन-विस्तारकी प्रगति और अधिक सम्भव नहीं है। यह स्थिति जिस संकटकी बिभीषिकाकी ओर हमें ले जा रही है, उसकी कल्पनासे ही हम सिहर उठते हैं। इसी तरह चीज़ोंकी सीमित वृद्धि और मनुष्योंकी असीमित वृद्धिकी स्थिति क़ायम रही तो जीवनमें मानवीय गुणोंका ह्रास और संकोच अवश्यम्भावी है। हमारी शताब्दीके महान् इतिहासकार ऑरनोल्ड ट्यॉनबीने इस संकटकी ओर संकेत करते हुए कहा है कि "दुनियामें जितने साधन प्राप्त हैं, उनका यदि अत्यन्त वैज्ञानिक तरीक़ेसे प्रयोग किया जाये और वे सारी दुनियाके लिए उपलब्ध हों तो भी निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्याकी आवश्यकताके लिए पूरा नहीं पड़ेगा। इस बातकी हमें चिन्ता नहीं है कि दुनियामें कितने अरब लोग हो जायेंगे किन्तु चिन्ताका विषय यह है कि इतनी जनसंख्या बढ़ जानेपर सारे लोगोंके मानवीय मूल्योंका विकास हो सकेगा या नहीं?....हम हर नये जन्मे हुए व्यक्तिको सुखी जीवनके अधिकसे अधिक अवसर या साधन दे सकेंगे या नहीं?" इन प्रश्नोंका एक और एक ही उत्तर है कि मानवीय मूल्योंकी दृष्टिसे हम जनसंख्या-नियन्त्रणके लिए परिवार-नियोजनका मार्ग शीघ्र और सर्वत्र अपनायें क्योंकि उस मार्गको अपनाकर ही हम इस स्थितिमें पहुंच पायेंगे कि हर उत्पन्न हुए व्यक्तिके जीवनका मूल्य प्रतिष्ठित हो सके। सचमुच वह दिन मानवकी पराजयका दिन होगा, उसके आदर्शों और उद्देश्योंके मखौलका दिन होगा, जब वह अपने विवेकसे और विज्ञानके तरीक़ेसे अपनी संख्याके इस विनाशकारी विस्तारसे बचनेमें सफलता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हासिल नहीं कर सकेगा।

ज्यों-ज्यों हम शताब्दीके अन्तकी ओर बढ़ रहे हैं, हमारा सन्त्रास बढ़ रहा है, नैराश्य बढ़ रहा है। सारे वैज्ञानिक विकासकी सम्भावनाओंके बावजूद हमें यह लग रहा है कि एक जबरदस्त संकट या प्रलयकी ओर हम बढ़ रहे हैं। आनेवाले तैंतीस वर्षोंमें हम अपनी संख्याके नियन्त्रणके लिए क्या करेंगे और कितना कर पायेंगे, इसपर बाक़ी शताब्दीका इतिहास निर्भर करेगा। वस्तुतः आज हमारे विचार और विवेकको एक जबरदस्त चुनौती मिली है। यह चुनौती मानव-जातिके आज तकके इतिहासमें सबसे बड़ी चुनौती है। यदि हमने इस संकटसे बचनेमें सफलता नहीं पायी तो मानव-मूल्यों-के विकासके क्षेत्रमें जो कुछ प्राप्त हुआ है, उस सबका विनाश हो जायेगा। यदि हम इस संहारसे बचनेके लिए आवश्यक उपाय समय रहते नहीं कर सके तो किसी भी प्रकारसे हम मानवताकी रक्षा नहीं कर सकेंगे। मानवोंका जन्म होता जायेगा और मानवता घटती जायेगी तथा मानवीय मूल्यों-का स्तर गिरता जायेगा। मानवता ही नहीं रहेगी तो हम क्या लेकर जियेंगे? जो शताब्दी अपनी सफलताओं और उपलब्धियों-में आज तक पहलेकी किसी भी शताब्दीसे अधिक सम्पन्न और शक्तिशाली मानी गयी है और जिस शताब्दीने मानवको नयी आशाएँ प्रदान करनेवाली क्रान्ति दी है, वही शताब्दी आज इन सारी उपलब्धियों और सम्भावनाओंके बीच अपने भावी शिशुको भुखमरीके किनारे खड़ा हुआ देख रही है। अपनी सारी सम्पन्नताके बीच वह आनेवाले मानवकी विपन्नताकी तसवीर देख रही है। आज ही चारों तरफ़ अभाव और अशान्तिका हाहाकार है जब कि अभीतक उत्पादनके क्षेत्रमें कुछ-न-कुछ वृद्धिका विस्तार हो ही रहा है किन्तु जब यह विस्तार बिलकुल रुक जायेगा और तब भी यदि आदमी अपनी प्रजननकी गतिको रोकनेमें असफल रहेगा, तब क्या होगा? यही आज सबसे बड़ा प्रश्न है जो हमारी शताब्दीकी शेष-यात्राके सामने खड़ा है। इसका उत्तर हमारे पास क्या है, इसीपर शताब्दीका शेष निर्भर करता है। हमको समस्त शक्तिके साथ आज इस समस्या-से जूझना है। परिवार-नियोजन इस शताब्दी-की सबसे बड़ी उपलब्धि है और इसमें मानव-जातिका जो-जो हित निहित है, वह इतिहास-को हमारे युगकी सबसे बड़ी देन है।

क्या हम अपनी वर्तमान सम्पन्नताको भावी विपन्नताके आक्रमणसे बचा पायेंगे? यदि हमने अभीसे समस्त उपलब्ध उपायोंके द्वारा और समस्त शक्तिके साथ अपने अबु-द्धिमत्तापूर्ण प्रजननपर रोक नहीं लगायी तो हमारा इतिहास न जाने कितने युगों तक इस बिभीषिकाको ढोता रहेगा। आज सारे संसारको मिलकर जनसंख्या-नियन्त्रणका कार्य करना है और आनेवाली पीढ़ीके लिए मानवीय मूल्योंकी रक्षा करनी है। मारगरेट-सेंगर—जिन्होंने शताब्दीके शुरूमें ही इस व्यथाको समझकर जन्म-नियन्त्रणके लिए संघर्ष शुरू कर दिया था— ने कहा है :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"व्यक्तिको जब मैं आशा और निराशाके बीच लटकते हुए देखती हूँ, तो मेरा दिल दहल उठता है। मैं सोचा करती हूँ, जब कहीं आग लग जाती है, दुर्घटना हो जाती है, महामारी फैल जाती है, तो सारे लोग मिल-जुलकर अपनी क्षमता और साधनोंका पूरा उपयोग करके उसे कभी फिर न होने देनेकी योजना करते हैं, परन्तु दिन-प्रतिदिन पैदा होनेवाले बच्चोंको देखकर जिनको शारीरिक और मानसिक पोषण नहीं मिलता, जीवन-भर जो प्यारके भूखे रह जाते हैं, किसीकी सद्भावना प्रेरित नहीं होती। सही है कि इन दुखी-पीड़ित व्यक्तियोंको राहत पहुँचानेके लिए हज़ारों-हज़ारों संस्थाएँ हैं, किन्तु क्यों कोई
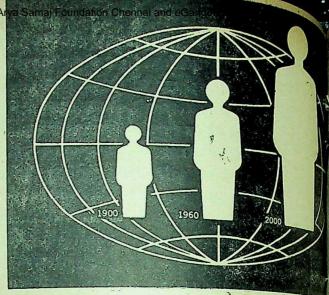
और भी कुछ···शेष शताब्दीके नाम ?

जितना शेष रह रह गया,
'उसे', देना रह गया क्या!
पंख हीन संकल्प,
उसके तुरत बाद
चकरीसे चकराते
अधर में मुँह फुलाये विकल्प,
धुरी हीन निश्चय;
मृत्यु का बोझ जो
लाद चले गये
'न कुछ' की सार्थकतावाले
उनकी मिटी इच्छाओं की
अधबनी तस्वीरें
त्रासमयी छाया
हर कहीं तीसरे का भय"
प्यार के नाम पर
चालू रिश्तों की माँग
रो-धो कर चुप हो जानेवाला विद्रोह
ख़ाली कनस्तर पर
आख़िरी बार हाथ रखे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थके हुए
बूढ़े पागलपन का मौन....
घनी आबादी से निकलता हुआ धुआँ
धुएँ में घुटते हुए सिद्धान्त
झगड़ती हुई नैतिकता,
गिरे हुए सिक्के पर ताल देती
ईमानदारी के विज्ञापन,
पूरी पृथ्वी को बम में
रूपान्तरित करनेवाली
आज़ाद हथेलियाँ,
ख़ाली दिमाग़ों से
महज़ पेट के नाम (!)
की गयी क्रान्ति
क्रान्ति का रस लेते,
हाड़-हाड़ नंगी भावनाओं से खेलते
उनके प्रतिनिधि नेता,
[जो लूट कर कब चल दें उन्हीं को
अन्देशा उन्हें कुछ और]
जनसंख्या के साथ ही
बढ़ते हुए
संभाधारी हिप्पोपोटामस के
ऊँचे-ऊँचे थूथन,
अनावृष्टि....। आकाल....दुर्घटनाएँ
बीमार अस्पताल
काला बाज़ार।
विदेशी गालियाँ।
इसके बाद भी
क्या कुछ देना रह गया
शेष शताब्दी के नाम

—प्रेमलता वर्मा

भी यह नहीं सोच पाता कि जिन बच्चों-के लिए यही भाग्य बदा है, वह पैदा ही क्यों होता है। इस प्रश्नपर हमें अब विचार करना ही होगा नहीं तो हमारी संख्या वृद्धिका विस्फोट प्रबल और विकराल रूप ग्रहण कर लेगा। विज्ञान चाहे हमारे लिए चन्द्रमा और मंगलमें जाकर बसने-के भी रास्ते खोल दे परन्तु उससे जैसा कि आल्डुअस हक्सलेने कहा है—'संसार-वासियोंके अपर्याप्त पोषण और तीव्र गतिसे संख्या-वृद्धि होनेके फलस्वरूप जीवन-यापनके गिरते हुए स्तरमें कोई भी सुधार नहीं होगा। ...कुछ व्यक्तियोंको मंगल ग्रहपर रहनेके लिए भेज भी दिया गया (यातायातके विकासके लिए प्रति व्यक्तिके पीछे करोड़ों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुपये खर्च करके) तो भी इससे हमारे ग्रहपर तीव्र गतिसे बढ़नेवाली जन-संख्याके दबावकी समस्या हल नहीं होगी। और इस समस्याके समाधानके बिना हमारी अन्य समस्याएँ भी नहीं सुलझायी जा सकेंगी। इससे और भी खराब अवस्था उत्पन्न हो जायेगी, जिसमें मानवकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और जनतान्त्रिक ढंगसे सामाजिक प्रतिष्ठामय जीवन व्यतीत करना असम्भव हो जायेगा, जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।" इस स्थितिके विचार-से ही हक्सलेने ज़ोर देकर कहा है—"आने-वाला काल स्पुतनिक युग न होकर अधिक जनसंख्याका युग होगा। स्पष्टतः इसका उत्तर नकारात्मक ही होगा।"

यद्यपि इस समस्याके समाधानके लिए आज सारे विश्वमें आन्दोलन हो रहा है, करोड़ों-अरबों रुपयोंके खर्चवाली योजनाएँ बन रही हैं और हज़ारों-हज़ारों कार्यकर्त्ता इस उद्देश्यकी सिद्धिके लिए कार्यमें लग रहें हैं, पर वास्तवमें जनसंख्या-समस्याका समा-धान अभीतक नहीं हुआ। जिस विज्ञानने मृत्युको घटाकर इस समस्याको उत्पन्न किया है, वह आज जन्मको घटानेके उपयोगकी खोजमें लग रहा है। जन्म और मृत्युके बीच एक दौड़ लगी हुई है। मरनेकी समस्याका समाधान हो गया तो जीवित रहनेकी समस्या कई गुनी बढ़ गयी। मनुष्य-जीवनकी आव-श्यकताओंके वर्तमान स्तरको क़ायम रख पाना भी असम्भव हो रहा है, उसको और विकसित कर पानेका तो सवाल ही नहीं।

वास्तवमें ऐसा लगता है कि संख्या-वृद्धिकी अर्गलाओंने जीवन-मूल्योंके विकासके सारे द्वार बन्द कर दिये हैं—और हमारी आगेकी यात्रा 'मृत्युसे जीवनकी ओर' के बदले 'जीवनसे मृत्युकी ओर' होने लगेगी। इस भयावह और आंतकपूर्ण स्थितिसे बचनेके लिए सारी मानव-जातिको अपनी पूरी ताक़तसे संघर्ष करना है। यदि इस कार्यमें हम सफल नहीं हो सके तो आनेवाले हज़ारों वर्षों तकके लिए मानवी-जीवनको अपार क्षतिका सामना करना होगा। सन् २००० तक पहुँचते-पहुँचते हमारी जनसंख्या जिस जगहपर पहुँच जायेगी, वहाँ मानवकी मानवता रह ही नहीं जायेगी, जब कि आज ही जन-संख्या-वृद्धिका बोझ मानवताको तोड़े डाल रहा है और घुटन, तनाव एवं स्नायु-दौर्बल्य-के कारण नैतिक मुल्य टूट रहे हैं—स्खलित हो रहे हैं तथा आदमी निरन्तर छोटा एवं घटिया होता जा रहा है। हाल ही में किये गये संयुक्त-राष्ट्रसंघके एक सर्वेक्षणके आधार-पर कहा गया है कि जनसंख्या-वृद्धिके कारण उत्पन्न कठिनाइयोंके सबबसे मनुष्य अनेक मानसिक रोगोंसे आक्रान्त है। वास्तवमें बरट्रैण्ड रसलके शब्दोंमें 'जनसंख्या-वृद्धि समूची मानव-जातिको एक भयावह कैन्सरकी तरह ग्रसित किये हुए है।' इस विश्व-व्यापी कैन्सरको जितना बढ़ने दिया जायेगा, उतना ही यह बेक़ाबू बनता जायेगा। इसके घातक परिणामोंसे बचनेके लिए तुरन्त ऑप-रेशन करनेकी आवश्यकता है और यह काम अब ऑपरेशन करनेवालोंको अपने हाथोंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेना चाहिए। अमेरिकाके अर्थशास्त्री जॉन कैनेथ ग्रैलब्रेथ, जो भारतमें अमेरिकाके राजदूत भी थे, ने बिलकुल ठीक कहा है कि "जन-संख्या-नियन्त्रणका कार्य अभी भी विचारकों और दार्शनिकों तक ही सीमित है। अब इस कामको उठानेके लिए उन लोगोंको दृढ़व्रती होकर आगे आना चाहिए जो कठोरताके साथ इसे क्रियान्वित कर सकें।" आज इस बातपर विचार करना ज़रूरी है कि हर पैदा होनेवाले मनुष्यको स्वतन्त्र और सम्मानित जीवन जी सकनेका अधिकार और अवसर होना चाहिए। यह उसका मूलभूत अधिकार है और रहना चाहिए। इस अधिकार और अवसरकी उपलब्धि असम्भव है जबतक कि जनसंख्या-वृद्धिका वर्त्तमान प्रवाह अनियन्त्रित रहेगा। यह प्रवाह जब प्रलयकी स्थिति पैदा कर देगा, तब क्या होगा? आज जो शिशु पैदा हो रहा है, वह जब तीस-चालीस वर्षका होगा, तो उसे कितने अभावग्रस्त जीवनका सामना करना पड़ेगा, इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। उसे चारों तरफ़ नर-मुण्ड-ही-नर-मुण्ड दीखेंगे, जो चीज़ोंके लिए पशुओंकी तरह आपसमें छीना-झपटीमें लगे होंगे। आदमी पशुवत् व्यवहार करने लगेगा और मानवताके जिन गुणोंकी आज हम दुहाई देते हैं, उनका मखौल उड़ाने लगेगा। ज्यों-ज्यों हम वर्त्तमान शताब्दीके शेषकी ओर बढ़ रहे हैं, हम अधिक सन्त्रस्त और आतंकित होते जाते हैं। एक ओर हमें आकांक्षाओंकी ऊँचाइयाँ दीख रही हैं और दूसरी ओर निराशाओंके काले भयावने कूप नज़र आते हैं।

हम अपने ही देशकी बात लें। स्वतन्त्रताके बाद पिछले बीस वर्षोंमें हमने जीवनके विभिन्न क्षेत्रोंमें योजनाबद्ध-विकास किया है। किसी भी योजनामें निहित लक्ष्योंकी पूर्तिमें हम बहुत पीछे नहीं रहे हैं और हर साधन-सुविधाका परिमाण बढ़ा है, तब भी प्रति देशवासीकी दृष्टिसे साधन-सुविधाओंका संकोच ही चारों ओर दिखाई देता है। औसत भारतवासीके जीवनमें आज अभाव, कुण्ठा और तनावका ऐसा वातावरण बना हुआ है, जिसके कारण जीवनके उदात्त गुणों और मूल्योंका विकास करनेकी स्थिति सम्भव हो ही नहीं पाती। वह अपनी संख्याको इतनी बढ़ा रहा है कि दूसरी चीज़ोंकी सारी वृद्धि छोटी होती जा रही है। परिणाम यह है कि जितनी सम्पन्नता देशमें बढ़ी है, उसके बावजूद आदमी विपन्न और विपन्न होता जा रहा है। यह स्थिति हमें कहाँ ले जायेगी, इसका विचार करते समय श्री अशोक मेहताका यह कथन ध्यान देने लायक़ है कि "उद्योगीकरणके लिए जो भी प्रयास हम आज करते हैं और उसमें हमारी जो भी आशाएँ निहित हों, उनके मुक़ाबले हमारा प्रति व्यक्ति उत्पादन गतिहीन हो जायेगा। इस जनसंख्या-वृद्धिसे न केवल जो हम दिनमें बुनते हैं, वह रातमें उघड़ जाता है, बल्कि हमारे धागे भी और बुरी तरह उलझ जाते हैं। इस कठिन समस्याका कोई समाधान नहीं है। यदि शीघ्र इसकी ओर ध्यान नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया गया, तो यह सारे आदर्शोंको खत्म कर देगी।" इस विस्फोटक और चुनौती-भरी स्थितिमें-से गुज़रते हुए जब हम दो-हज़ारवें वर्षकी बात सोचते हैं तो साफ़ समझमें आता है कि अपनी जनसंख्याको आजकी सीमामें बाँधकर रखे बिना मनुष्यकी तरह जी पाना सम्भव नहीं रह जायेगा। जन-संख्याके विशेषज्ञ अर्थशास्त्रियोंने हिसाब लगाया है कि अगर आनेवाले दस वर्षोंमें भारतने अपनी चालीस प्रति हज़ारकी जन्म-दरको घटाकर आधी नहीं कर लिया तो शताब्दीका शेष, जीवनकी सारी आशा, आकांक्षा और आस्थाका भी शेष ले आयेगा। तब इतिहासकार कहेगा कि जिस शताब्दीने मानवको ज्ञान-विज्ञानकी इतनी शक्ति और साधन देकर सम्पन्न बनाया, उसको मानवने अपने अविवेक और अपनी अबुद्धिमत्ताके कारण इतना विपन्न बना दिया। हम आज इस चुनौतीके सम्मुख खड़े हैं और हमें यह निर्णय करना है कि विचार एवं कार्यकी दृढ़तासे इस चुनौतीको झेलकर हम अपने भविष्यकी रक्षा करें या उदासीन एवं निष्क्रिय रहकर निष्ठुर नियतिके बन्दी बने रहें।

■■

१६२।२६।१ प्रिन्स अनवर शाह रोड,
कलकत्ता-३१

Tele : 4039 *Telg* : BOARD

Baroda Stationery Stores

Kharivav Road, Baroda

AUTHORISED DISTRIBUTORS & STOCKISTS OF

Rohtas Industries Limited

DALMIANAGAR

Special items of Manufacture :

White & Coloured Duplex Board, M. G. Poster, Manifold & Tissue, Map Litho S/C & Glazed, Bank & Bond paper, Chromo Board, Chromo Paper, Air Finish Art Board, White Cream Wove etc.

Shop :
DANDIA BAZAR.
BARODA.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments from:

DHUR-TIN-FACTORY

1, Sarat Chandra Dhur Rd.
CALCUTTA-50

Phone : 56-3184

Bengal Stationery Stores

Exporters, Importers and paper Merchants

10, Jackson Lane, Calcutta-1

Stokcist of :

THE TITAGHUR PAPER MILLS CO., LTD.
BENGAL PAPER MILLS CO., LTD.
ROHTAS INDUSTRIES LTD.
ORIENT PAPER MILLS LTD.
SIRPUR PAPER MILLS LTD.
SHREE GOPAL PAPER MILLS LTD.

Sole Distributors of :

M. G. PAPERS FOR THE STATE OF W. BENGAL
FOR STAR PAPER MILLS LTD.

Dealers in :

ALL KINDS OF INDIAN & FOREIGN
PAPER & BOARDS.

Grams : CREAMLAND

Phone : 220801
: 220802

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ सोये हुए बम ॥ यह सही है कि सारे युद्धोंके मूलमें भूख भी कारण होती है। इस कारणके समाधानकी बजाय उसके प्रभावपर विचार प्रकट करना शायद उचित नहीं है लेकिन मौसमका अनुमान लगा लेनेमें कोई हर्ज़ नहीं.....................

तीसरे विश्वयुद्धका नक़्शा

शिवगोपाल मिश्र/३३ वर्ष बाद विश्वकी जनसंख्या ६०० करोड़ हो जायेगी— आजकी जनसंख्या प्रायः दूनी। जनसंख्याकी यह आशातीत वृद्धि प्रमुख रूपसे उन देशोंमें होगी जो अपनी खाद्य-समस्याको सुलझा नहीं पाये हैं। भारत, चीन, पाकिस्तान, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका—ये वे देश हैं जहाँ भूख, कुपोषण एवं जनसंख्याका विस्फोट जारी है। ये आर्थिक दृष्टिसे पिछड़े राष्ट्र भूमण्डलके दो-तिहाई निवासियोंको आश्रय दे रहे हैं। वस्तुतः इन्हींको विकास-पथपर अग्रसर करनेके लिए अमरीका तथा रूस-जैसे उन्नत राष्ट्र उद्यत हैं। कौन राष्ट्र अमरीकाके प्रश्रयमें पलें और कौन-से रूसी छत्रछायामें—बस इसीपर झगड़ा है क्योंकि इसके फलस्वरूप ही उन दोनोंकी सत्ता या उनके प्रभुत्वका अंकन होगा।

भूख और कुपोषणकी समस्याके साथ विश्वयुद्धकी सम्भावनाको संग्रथित करना बहुत रुचिकर नहीं प्रतीत होता किन्तु यह वास्तविकता है कि युद्धोंका उद्भव एवं उनका प्रसार भूखके ही द्वारा संचालित होता है। राज्य-लिप्सा या यश-लिप्साका सूत्रपात ही ऊँच-नीचसे होता है। इस लिप्साका नियन्त्रण राजनीतिज्ञोंपर निर्भर है। वे असन्तुलित मस्तिष्कके प्राणी होते हैं। वे अपनी सफलताके लिए वैज्ञानिक आविष्कारोंकी शरणमें पहुँचते हैं। बस फिर क्या! युद्धकी भीषण ज्वाला प्रकट हो उठती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि सचमुच विश्वमें किसी प्रकारके युद्धकी सम्भावना है तो वह होगी भूख-युद्ध-की। शायद ऊपरसे यह युद्ध युद्ध-जैसा प्रतीत होता नहीं—क्योंकि हम सभी दूसरे प्रकार-के युद्धोंको युद्ध माननेके आदी हैं। किन्तु यह तथ्य है कि २१ वीं शतीमें जनसंख्या-विस्फोट किसी परमाणविक विस्फोटसे कम न होगा। अतः यदि तबतक मनुष्यकी भोज्य-आदतोंमें आमूल परिवर्तन नहीं हो जाता, जो प्रायः असम्भव है, तो न तो वांछित भोज्य पदार्थ ही उपलब्ध हो सकेंगे और न उनकी पर्याप्त मात्रा ही।

यदि मनुष्यको जीवित रहना है और जीवन-संग्राममें सक्रिय भाग लेना है तो उसे अन्तरिक्ष यात्रियोंका-सा खाद्य ग्रहण करके सन्तुष्ट रहना होगा। शायद उसे इसीके लिए बाध्य भी होना पड़े। ऐसी दशामें उन्नत राष्ट्रोंके द्वारा लड़े जानेवाले विश्व-युद्धकी कल्पना की जानी चाहिए।

खाद्य-सामग्री चाहे जिस रूपमें उपलब्ध होगी, उसकी पूर्ति तब भी अमरीका-जैसे वैज्ञानिक एवं अग्रणी राष्ट्रों-द्वारा होती रहेगी। अन्नदानका अर्थ ही होता है—जीवन-दान। जो राष्ट्र जितने अधिक लोगोंको जीवन-दान देगा, उतने ही अधिक लोगोंको वह अपने अधिकारमें भी रख सकेगा। शायद हम यह माननेको तैयार न हों कि अमरीका भारतको अन्न देकर उसपर राजनीतिक दबाव नहीं डाल रहा किन्तु यह वास्तविकता है कि उसका आन्तरिक उद्देश्य यही है, भले ही हम जागरूकतावश कुचक्रसे बच रहे हों। हमारी तटस्थताकी नीति और भी आकर्षक है—शायद पड़ोसी पाकिस्तानके साथ लड़ते समय उसके प्रति अधिक समवेदना प्रकट करनेका रहस्य यही हो।

जो भी हो—युद्ध होते रहे हैं और होंगे, अतः यह कहा नहीं जा सकता कि २१ वीं शतीके पदार्पण तक विश्वयुद्ध नहीं होगा। हाँ, यदि किसी सम्बन्धमें मतभेद हो सकता है तो वह है युद्धस्थलका सही-सही अनुमान-निर्देश एवं युद्धमें प्रयुक्त शस्त्रास्त्रोंके प्रकार। वस्तुतः ये दोनों ही बातें २००० ई० तकके विश्व-युद्धको रोमांचकारी बनानेमें सहायक हैं।

द्वितीय महायुद्ध युरॅपमें लड़ा गया और उसका अन्त हिरोशिमामें—एशियामें—हुआ। इस समय युद्धके जो बादल घिर-घिर आते हैं वे मध्यपूर्व एशिया या दक्षिणी-पूर्वी एशियाके देशों तक सीमित हैं किन्तु उनके पीछे जिन महान् राष्ट्रोंके हाथ हैं वे उनसे दूर ही नहीं—दूरसे दूर तक निकटसे निकट के हैं।

यह सच है कि अगला विश्वयुद्ध टैंकों या जेटोंसे नहीं लड़ा जावेगा। युद्धके साधन तब अतीतकी गाथा बताते रहेंगे।

अमेरिका और रूस :

यदि सचमुच ही भावी युद्धके स्वरूपकी झाँकी लेनी है तो हमें अमरीका तथा रूसकी नाभिकीय ऊर्जा तथा अन्तरिक्ष शोधोंके परि-प्रेक्ष्यमें पूरी भूमिका समझनी होगी। आज जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुका है, आगे उसीका उपयोग होना है ।

नाभिकीय ऊर्जाके शान्तिकालीन प्रयोगों-वाले पक्षको छोड़कर आगे बढ़िए । शस्त्रास्त्रों-की होड़में रूस तथा अमरीका तबतक इतनी उन्नति कर लेंगे कि क्षण-भरमें उनके आणविक एवं परमाणविक शस्त्रास्त्र विश्व-का ध्वंस कर दें । ये शस्त्रास्त्र नाभिकीय क्षेपणास्त्र कोटिके होंगे जो पूरे महि-मण्डल-की परिक्रमा बातकी बातमें कर सकेंगे । ज़रा सोचें, क्षेपणास्त्रोंसे सज्जित आगार । इनमें दानवमुखी क्षेपणास्त्र मुँह बायें संकेत पानेके लालायित होंगे । बस बटन दबा नहीं कि वे उड़ चले और लक्ष्यको भेदकर ध्वंस-लीला प्रारम्भ कर दी ।

• कौन पहले धैर्य खो देगा···

कौन देश किसपर पहला आक्रमण करेगा, यह इस बातपर निर्भर करेगा कि कौन राष्ट्र पहले अपना धैर्य खो देता है और जान-बूझकर या बेचैनीसे किस राष्ट्रके युद्ध-प्रेरककी अँगुली उस बटनको स्पर्श कर लेती है जिसके अनुसार समस्त टोहक स्थलोंके यन्त्र एक साथ जाग्रत होकर एक साथ नाभिकीय क्षेपणास्त्रोंको उन्मुक्त करके ध्वंस-लीलाका समारम्भ कर देंगे । ये क्षेपणास्त्र लक्ष्यको बेधनेके साथ ही समूचे विश्वमें अत्यन्त घातक रेडियो सक्रिय धूलि एवं विकि-रण भर देंगे जो स्थलकी क्या जलमें डूबने-पर भी मनुष्यका पिण्ड नहीं छोड़ेंगे ।

एक हिरोशिमाके युद्ध-पीड़ितोंकी करुण-कथाओंसे यह जगतीतल सिहर-सिहर उठता
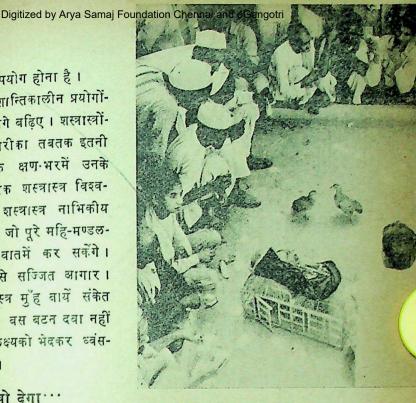
तीतर-युद्ध हो या तीसरा विश्वयुद्ध, तटस्थोंके लिए दोनों समान हैं । हार-जीतसे बड़ा प्रश्न 'मज़ें' का है पर अगले युद्धका क्या कोई तमाशाई होगा भी ?···

है । तब तो पूरा विश्व विकिरणोंसे पीड़ित होकर त्राहि-त्राहि करेगा । शायद वे ही प्राणी बच रहेंगे जो सौभाग्यवश विकिरणोंसे बच सकेंगे—शायद समुद्री भागोंमें स्थित कोई टापूके वासी । यदि दुर्भाग्यवश पृथ्वी-पर मानव नामकी कोई वस्तु बची भी तो उसकी सन्तान कैसी होगी—अत्यन्त विकृत रूप, रंग एवं आकार-प्रकारकी । यह कल्पना करना कठिन है कि आजका सभ्य मानव किस आकृतिमें परिवर्तित हो जाये । उसके सभी ज्ञान-तन्तु नष्ट हो जायेंगे—वह क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खा सकेगा और क्या पहचान सकेगा, यह कह पाना कठिन है। शायद वह पुनः आदि मानवके युगमें प्रवेश करेगा।

तब दूर कहीं बचे बुद्धिमान् मनुष्य विश्वकी ध्वंसलीलासे परिचित होनेके उद्देश्यसे भ्रमण करते हुए प्रलयग्रस्त भूखण्डोंमें पहुँचेंगे और ठीक उसी प्रकार हर्षोल्लाससे उछलेंगे जैसे कोलम्बस तथा उसके साथी नयी दुनियाको खोज करके। शायद वे विकृत मानवोंको पहचान भी न पायें। वे हँसेंगे सृष्टिकी स्थितिपर और साम्राज्य स्थापित करेंगे विकलांगोंपर।

● तीसरे विश्वयुद्धके सम्भावित चमत्कार :

अन्तरिक्ष यात्राओंसे प्राप्त वैज्ञानिक जानकारी-द्वारा भी तृतीय विश्वयुद्धमें कुछ चमत्कार लाये जा सकते हैं। जैसा कि सबोंको ज्ञात है १९७० तक चन्द्रमापर मानव उतर सकेगा और वहाँकी भूमिसे परिचित भी हो लेगा। पृथ्वीके विकसित राष्ट्र चन्द्रमाको प्रक्षेपणास्त्रोंका अड्डा बनाकर वहींपर इतना शस्त्रास्त्र पुंजीभूत कर लेंगे कि समय पड़नेपर वे उपग्रहोंको पृथ्वीकी कक्षामें छोड़कर अपना लक्ष्य साध सकेंगे। तब अदृश्य दिशासे शस्त्रास्त्र छूटेंगे—जिनपर विजय पानेके लिए ब्रह्मास्त्र-जैसे बीचमें काट करनेवाले अस्त्रोंकी आवश्यकता होगी।

तात्पर्य यह कि युद्ध होगा किन्तु अदृश्य या अपरोक्ष रूपमें। शायद जनताका उससे कोई सरोकार नहीं होगा। यदि तबतक मंगल-ग्रहके बुद्धिमान् प्राणी पृथ्वीके सम्पर्कमें आ गये तो सम्भव यह है कि वे भी २००० ई० के युद्धमें भाग लें।

यदि कहीं इस अवधिमें भौतिकीविदोंने ऊर्जाके किसी नवीन स्रोतका पता लगा लिया, जैसा कि लेसर-मेसरके आविष्कारसे आभास मिलता है, तब तो वे अपने इस अखण्ड ग्रह, पृथ्वी, को ही चूर-चूर कर देंगे। नवीन ऊर्जाका तेज इतना होगा कि वह पृथ्वीको खण्ड-खण्डमें परिणत करके उछाल देगा और यह चिरशाश्वत पृथ्वी अपने मौलिक रूपको खो देगी। यह ब्रह्माकी सृष्टिका ध्वंस मनुके पुत्रों-द्वारा एक अद्वितीय घटना हो सकती है। शायद यही प्रलय हो।

अतः यदि विश्वयुद्ध होना है तो वह भी रूस तथा अमरीका—इन दो अग्रणी राष्ट्रोंकी वैज्ञानिक स्पर्धाओंके फलस्वरूप। यदि शान्तिप्रिय या तटस्थ राष्ट्र इन स्पर्धाओंको शिथिल करनेका प्रयास करना चाहें भी तो उनके सभी प्रयत्न विफल होंगे क्योंकि अल्प मात्रामें नाभिकीय शस्त्रास्त्रोंका निर्माण युद्धाभिमुख प्रक्षेपणास्त्रोंके मुखोंकी दिशा नहीं बदल सकेगा। तटस्थ राष्ट्रोंके सभी प्रयास सागरमें विन्दुकी भाँति विलीन होते रहेंगे।

● मनु-सन्ततिकी वैज्ञानिक तपश्चर्या:

मनुकी सन्ततियोंको अपनी वैज्ञानिक तपश्चर्याका फल भोगना ही पड़ेगा। अपनी पीढ़ीका ध्वंस करना होगा। अपने ग्रह अपनी जन्मभूमिका भेदन करना होगा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके कण-कणमें ज्वालामुखीके-से उद्गार देखने होंगे—उन्हें पुनः मिट्टीमें मिल जाना होगा—ऐसी मौत मरना होगा जो अधमों-की भी नहीं हो सकती ।

शायद प्रलयके समय मनुकी नाव पुनः प्रकट हो अपनी सृष्टिके बीज-रूपको सुरक्षित रखनेके उद्देश्यसे। बादल छाये रहेंगे, धूल भरी रहेगी, वृष्टि थमेगी नहीं—आश्रयका कोई स्थल नहीं दिखेगा—आखिर पृथ्वीकी उत्पत्ति-के पूर्व भी तो यही दशा थी !

वैज्ञानिक उत्थानका राजनीतिक पहलू ऐसा ही भयावह है। वह सभ्यताका विनाश करके उसे प्रारम्भिक चरणपर पहुंचा सकता है।

यदि किसी कारणवश युद्ध रुकता है तो वह मात्र इसलिए कि विज्ञानके विराट् रूप-से अग्रणी राष्ट्र स्वयं थर्रा उठें। शायद विज्ञानसे खिलवाड़ करनेवाले अर्जुन कृष्णकी विराट्ताके उपासक बन बैठें। किन्तु इतना बड़ा हृदय-परिवर्तन सम्भव नहीं लगता !

■ ■

सम्पादक : 'विज्ञान'
विज्ञान-परिषद्, थार्नहिल रोड,
इलाहाबाद

You'll be surprised how good packaging keeps a product fresh!

Packaging by
DIAMOND PRODUCTS LIMITED
can do a lot for your product!
4, Clive Row, Calcutta-1.

JAH-13E

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तिम आदमीकी मृत्यु

•

जार्ज मैक्बेथ

बहुत बहुत पहले जब दुनिया एक जंगली जगह थी
जिसमें झाड़ियाँ उगती थीं और बनमानुस रहते थे तब
हमारा सेवा-दल जंगल में कार्यरत था।

कांगो के पास
जब चारा खोजनेवाला दस्ता कीड़े-मकोड़ों की तलाश में था
तो यकायक उसे एक भूरा आदमी दिखा,
आखिरी जिन्दा आदमी,
तितलौकी के वृक्ष पर एक बन्दर का शिकार करने हेतु
दबे पाँव बढ़ता हुआ।

पूर्ववर्ती आदमियों ने अपने मनोरंजन के लिए
जेब्रा, गैंडा, हाथी, शेर, चूहा, हिरन-सरीखे सारे जानवर खत्म कर दिये थे—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आज हमें उनके नाम तक मुश्किल से याद आते हैं।
लेकिन जब युद्धों ने शहरों को मिटा दिया तो
केवल जंगली आदमी शेष रहे, अधनंगे, भूमध्यरेखा के पास।
और यह अन्तिम था, एक बन्दर के लिए भूखों मरता हुआ।

उस समय तक सेवा-दल को ऐसे सैकड़ों आदमी मिल चुके थे
और उनका तरीक़ा, इतिहास बताता है,
केवल उन्हें खाना-पिलाना था। 'खोजो और भोजन दो'—
यह आदेश थे। और यह आखिरी व्यक्ति था।
किसी को मालूम नहीं था कि वह अन्तिम था, किन्तु था।

उसकी सूखी आँखों पर कीचड़ की पपड़ियाँ थीं, अर्धशस्त्रसज्जित वह ;
झुका हुआ था और चौड़ी पत्तियों के बीच
उसका भाला चमकता था। जब कार्यकर्त्ताओं के जबड़ों ने
वृक्ष की छाल को काटा और उसने उनके चमकते हुए दाँत,
गोल घूमती हुई आँखें और मुड़े हुए हाथ देखे
जो तनों की तरह विशाल थे और उसके सिर पर हिल रहे थे
तो वह डर गया।
हमारे कार्यकर्त्ता उसके पैदा होने के पहले
कांगोसे होकर गुज़रे थे, लेकिन शायद उसने उन्हें पहली बार देखा।

चिलचिलाती, स्पन्दनहीन चुप्पी में विस्फारित वह
वहीं दुबका रहा। फिर उछला।
अपनी ढाल से लम्बा हाथ घुमाकर, इससे पहले
कि वे उसे रोक सकें उसने बेहद जल्दबाज़ीमें अपने भाले से
निशाना बनाया और दस्ते के अगुवा सैनिक पर फेंका।
भला वह आदमी कैसे जानता कि
महारानी के आदेश उसकी सहायता के लिए ही थे ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैनिक को जब भाला लगा तो वह तड़प गया। डंक मारना
नितान्त स्वाभाविक प्रतिक्रिया थी।

बाद में महारानी को सूचित किया गया। आदमी नहीं बचे।
एक जल्दबाज़ सैनिक ने, केवल संयोगवश,
अन्तिम प्राणिश्रेष्ठ को मार डाला। जब महारानी को विश्वास हुआ
तो कार्यकर्त्ताओंके कई दल उसकी अस्थियों को पुरातत्त्व-विभाग हेतु लाने
कांगो के इस छोर से उस छोर तक भेजे गये।
मुझे बिलकुल भरोसा है कि किसी ने भी उन्हें नहीं पाया
हालाँकि जितना परिश्रम हो सकता था, किया गया।

हड्डियाँ कहाँ चली गयी थीं?
धरती के ऊपर, बेटे,
दीमकों ने दाँतोंसे पीस डाला और हवा ने उन्हें बिखेर दिया।
डोडो की हड्डियों की तरह।*

---

*सन्दर्भ : एक विशालकाय चींटी अपनी एक सन्तानको यह कहानी सुनाकर सुला रही है। कहानी उस दन्तकथाकी है कि कैसे विश्वके अन्तिम आदमीकी हत्या उसीकी सहायतार्थ भेजे गये कार्यकर्त्ता-दलके हाथों हो गयी। अनुवादकीय नोटः डोडो मारिशसमें पाया जानेवाला एक विशाल पक्षी था, जिसे शिकारियोंने आमूल नष्ट कर दिया। अनु० : विष्णु खरे

अन्तिम आदमीकी मृत्यु : एक कैफ़ियत

विष्णु खरे

(जैसा प्रायः प्रत्येक किंवदन्तीके साथ होता है, उपर्युक्त अन्तिम आदमीकी कहानी कई चींटियोंसे होती हुई इस तक पहुँची थी। नीचे उस सैनिक चींटीका वक्तव्य है जिसपर अन्तिम आदमीने भाला चलाया था। इस वक्तव्यसे, जो महारानीको सम्बोधित है, वस्तुस्थितिपर प्रकाश पड़ता है।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महामहिम साम्राज्ञी,
यदि इस दास को ज्ञात होता कि जिसने उस पर अस्त्र चलाया
वह अन्तिम आदमी था—
तो यह भयानक और अक्षम्य दुर्घटना टल गयी होती।
कौन नहीं जानता कि इस लुप्तप्राय जाति में साम्राज्ञी की बेहद दिलचस्पी थी।
लुप्त होती हुई किसी भी प्राणि-जाति को नष्ट करना तो
आदमियों ने भी अपराध ठहराया था।

(जानवरोंपर क्रूरता करनेवालोंको दण्ड देनेवाली
उनकी संस्थाओंका भी पता चलता है)
और अन्तिम दोपाया ऐतिहासिक दृष्टि तथा वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिए
अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है—यह हम सब प्रजाजन जानते हैं।
उसे नष्ट करना अपराध तो था ही, शव लेकर न आना गुरुतर अपराध था।
हमारे वैज्ञानिक इस अनोखे प्राणी के मस्तिष्क का अध्ययन करना चाहते थे
किन्तु सन्तोष का विषय है कि मैं अपना बचाव नहीं करना चाहता,
सिर्फ़ तथ्य ही प्रस्तुत करूँगा—

शव छोड़कर आने से पहले, सावधानीवश, और कुछ कुतूहलवश,
मैंने उसकी तलाशी ली थी, जिसके परिणामस्वरूप
पुरानी भाषा में लिखे (जिन्हें अब समझ लिया गया है) कुछ काग़ज़ात
बरामद हुए, जिनके आधारपर, अपनी अत्यल्प बुद्धि के अनुसार,
मैं यह निवेदन करनेका दुस्साहस कर सकता हूँ कि
यह आदमी जीवित भी मिल जाता तो
वैज्ञानिकों तथा इतिहासकारों का कोई लाभ न होता
उलटे हानि ही होती।

काग़ज़ों से पता चलता है कि यह आदमी
असभ्य अथवा अर्धसभ्य नहीं था, भगोड़ा था।
जब यह नगर में था तब इसे अपने काम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे परिवार में कोई दिलचस्पी नहीं थी, इसे दूसरे आदमियों का स्पर्श
घृणित लगता था और स्वनिर्मित भय से अवास्तव विश्व में
यह काल्पनिक कष्टों को भोगता हुआ
'मैं मर रहा हूँ', 'मैं मरना चाहता हूँ' कहता हुआ जीता था।
यह न 'काला' था न 'गोरा,' न 'साम्प्रदायिक' न 'धर्मनिरपेक्ष'
न 'पूंजीवादी' न 'सर्वहारा'
(हमारे पुरातत्त्ववेत्ता तथा भाषाशास्त्री
इन मृत शब्दोंका अर्थ खोजनेमें व्यस्त हैं)

स्पष्ट है कि यह न इस तरफ़ था न उस तरफ़
इसे दुनिया की प्रत्येक वस्तु से नफ़रत थी और इसके लिए
सौन्दर्य कहीं नहीं था—यह फलों में कीड़े तथा फूलों में सड़ाँध देखता रहा—
जब आदमी मरते थे तब यह कहता था कि
जब वह दुनिया बदल नहीं सकता तो कोशिश भी क्यूँ करे
और जब युद्ध शुरू हो गये तो उसने न सत्य का पक्ष लिया
न झूठ का
(उसके लिए दोनोंमें कोई फ़र्क नहीं था)
सिर्फ़ अपने अकेलेपन में सुरक्षित यह पीछे भागता रहा
और इसीलिए बचा रह सका—किन्तु हम चींटियों की तरह
आदमी भी अकेला असहाय होता था
(और यद्यपि इसकी बुद्धिमत्ता सन्देहसे परे है)
अकेलेपन की परिणति भय और मृत्यु में ही होगी।

मैं अपने अपराध को तनिक भी कम नहीं बताना चाहता
किन्तु महामहिम साम्राज्ञी को स्वयं आभास हो गया होगा कि
अकेलेपन में भागता हुआ यह आदमी,
जो स्वय को 'कवि' नामक शब्द से पुकारता था
(इसका भी अर्थ खोजा जा रहा है)
हम चींटियों के किस काम का हो सकता था?
■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar
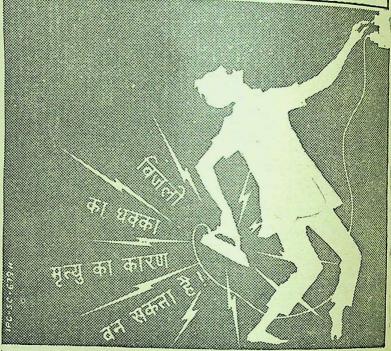
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोड़े ही खर्च में

शाही शान शौकत
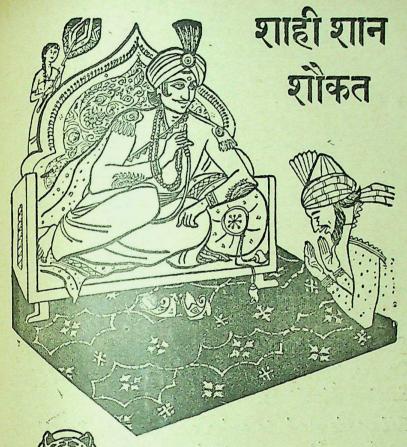
टाइगर ब्रान्ड

पाट के गलीचे

से अपना घर सजाइये

अनेकों आकर्षक डिजाइन में प्राप्त

प्रस्तुत कारक—श्रीं हनुमान जूट मिल्स

८, डलहौसी स्क्वायर, कलकत्ता-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
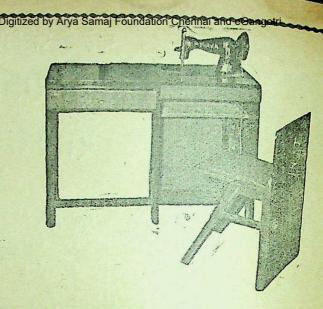
LARGEST MANUFACTURES IN MAHARASHTRA STATE

OF

Sewing Machine Tables, Folding Tables, Covers, Cabinets and Stools of various sizes for Sewing Machines.

All goods made to order and design. Excellent workmanship guaranteed.

We also undertake pressing of Sunmica / Formica under mechanical process.

M/s. Rajaram V. Tarphe & Co.

38/40 PAWALLA STREET,

GIRGAON, BOMBAY-4.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ काशी ३१।१२।२००० ॥ इस तारीखपर खड़े होकर हमारा फ़्लैशबैक क्या होगा ? वह तब जो भी हो, आज वह भविष्य है···लेकिन समय-घड़ीपर अगली तारीखकी कल्पना की हो जा सकती है कि तब 'हिवाकुशा विक्षिप्त पीढ़ी' को कौन किन शब्दोंमें श्रद्धांजलि दे पायेगा··

भविष्यत् शान्ति-पर्व

शिवप्रसाद सिंह / **रात्रि, साढ़े ग्यारह बजेका समय :** सिर्फ़ आधा घण्टा और ! फिर हमारी पृथ्वी एक नयी सहस्राब्दीकी गोदमें उतर जायेगी। दो हज़ार वर्ष पूर्व, उस व्यक्तिको 'क्रूस' पर लटकाया गया था, जिसने धरतीके मानवोंको करुणा और प्रेमका तथा पाप और उससे निष्कृतिका सन्देश दिया था।

कैसा दारुण और रहस्यमय होता है समय-चक्र !

ईसासे दो हज़ार वर्ष पूर्व ठीक ऐसी ही रात्रिको, बल्कि सांझके झुटपुटेमें ही, एक बहेलियेने उस व्यक्तिको विषैला तीर मारा था जिसने अनासक्त कर्मयोगका सन्देश दिया था।

और कृष्णसे भी दो हज़ार वर्ष पूर्व ? क्या हुआ था ? शायद नचिकेता यमके द्वारपर जीवन-अग्निका रहस्य पूछनेके लिए उपस्थित हुआ था। यमके द्वारपर स्वयं अपने ही पिताके हाथों भेजा हुआ। क्या प्रत्येक दो हज़ार वर्षोंके बाद किसी-न-किसी महामानवका 'क्रूस' पर चढ़ना जरूरी होता है ? क्या मनुष्य अपनेको जीवन, कर्म, और प्रेमका सन्देश देनेवालोंकी हमेशा हत्या ही करता रहेगा ? क्या एक पीढ़ी अपनी सन्ततिको अपने ही हाथों यमके द्वारपर भेजनेकी परम्परा हमेशा ढोती ही रहेगी ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजकी रात्रि मेरे सामने ये प्रश्न भी उठे, मैं मानता हूँ, पर सिर्फ़ एक क्षणको ही। क्योंकि २००० ईसवीकी यह अन्तिम रात्रि इतनी सन्दर्भहीन है कि मैं चाहकर भी इसे इतिहाससे जोड़ नहीं पाऊँगा। सारा इतिहास हमारे अस्तित्वसे कटकर लोथड़ेकी शक्लमें छटपटा रहा है। 'छटपटाना' क्रिया शायद ठीक नहीं है, अवसन्न हो चुका है। सन् १९८१ से शुरू होनेवाला विश्वयुद्ध अभी-अभी समाप्त हुआ है। लोग कहते हैं कि दो-एक पीढ़ियाँ पहलेसे ही हम इतिहाससे अलग होने लगे थे, किन्तु असली अलगाव तो हमी भोग रहे हैं, सही अर्थोंमें, स्थूल अर्थोंमें अलगाव। मुझे मालूम नहीं कि विश्व-के दूसरे स्थानोंमें, इतिहासके साक्ष्य कितना कुछ बचे-खुचे, रहे-सहे। पर अपने देशमें तो कुछ भी साबुत न बचा। न तो पूर्वजोंकी निशानी अजन्ता-एलोरा बची, न ताजमहल बचा, न भाखड़ा-नंगल रहा, न अणुभट्टी अपसरा ही बची। सभी कुछ महाकालके अन्ध-उदरमें समा गया। इतिहास इस क़दर घायल और क्षत-विक्षत शायद ही कभी हुआ हो। धर्मविश्वासी पुरानोंके मन्दिर और स्तूप तो गये ही, विज्ञानवादियोंके आधुनिक मन्दिर भी इस विभीषिकासे बच न सके। कालगत इतिहास जब इतना निरर्थक और अस्तित्वहीन बन गया तो देशगत भूगोलकी बात क्या करूँ। 'भू' तो अब भी गोल ही है पर जाना-पहचाना भूगोल समाप्त हो गया है। हस्बमामूल अणुके भीतर छिपी ग़ैरमामूल शक्तिका उद्घाटन करनेवाले पूर्वजोंकी मेधा क्या इतना छोटा-सा तथ्य भी जान न सकी कि देशोंकी सीमाएँ भूगोल-शास्त्रका दिल-बहलाव मात्र होती हैं। ज़मीनका एक चप्पा चाहे इस नक़्शेमें रहे या दूसरेमें, कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। पर नक़्शोंको बदलनेकी नामुराद ख्वाहिशने आज इन्सानको इस क़दर बदल दिया है कि उसे पहचानना भी मुश्किल हो गया है।

■

तृतीय महायुद्ध जब शुरू हुआ तो मैं सिर्फ़ बारह सालका था। माँ डॉक्टर थीं, पिता राजनीतिके प्रोफ़ेसर। हमारा छोटा-सा परि-वार था। खूब खुश, खूब प्रसन्न। पर मुझे हमेशा लगता था कि कोई काली-सी डरा-वनी चीज, बदसूरत चीलकी तरह पंख फैलाये हमेशा हमारे बँगलेपर मँडराया करती है। मैं भूत-सूतमें विश्वास नहीं करता पर चाहकर भी उस मनहूस छायाको भुला नहीं पाता। बोलते-हँसते, बातें करते, चाय पीते, रेडिओ सुनते, अचानक पिताजी काँपने लगते। उनका चेहरा पीला पड़ जाता। ललाटपर पसीनेकी बूँदें उभर आतीं। माँ दौड़ी-दौड़ी आतीं। ठण्डे पानीसे उनका मुँह धोतीं। गालोंको थपथपातीं।

"बन्द करो रेडिओ!" वे चीखकर मुझे डाँटतीं—"सौ बार कहा कि रेडिओ मत खोलो, मत खोलो। इन्हें 'हायपरटेंशन' है। पर तुम सुनते नहीं।"

"मम्मी, मैंने नहीं खोला।" मैं धीरेसे कहता।

"नहीं खोला तो ठीक है, चलो, भागो,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाओ उधर खेलो बगीचेमें ।"

मैं चुपचाप बगीचेमें चला जाता ।

मम्मी जब अस्पताल चली जातीं, पिताजी फिर रेडिओ खोल लेते या अखबार लेकर बैठ जाते । उस समय उनका चेहरा देखने लायक़ होता । वे अकसर बड़बड़ाते : नक्सलबाड़ी ! भूखी पीढ़ी !

मैंने एक दिन बहुत साहस करके उनसे पूछा, "पापा, क्या नक्सलबाड़ी भूखी पीढ़ीसे लड़ रही है ?"

वे बहुत प्यारे ढंगसे मुसकराये ।

"नहीं बेटे ।" उन्होंने मेरे गालपर हलकी-सी चपत लगाते हुए कहा, "इतिहास भूगोलसे लड़ रहा है ।"

मैं कुछ समझ न पाया ।

"क्या नक्सलबाड़ी और भूखी पीढ़ी एक ही आदमीके दो नाम हैं ?" मैंने फिर साहस करके पूछा ।

"अरे नहीं भाई ।" वे इस बार प्रोफ़ेसराना अन्दाज़में बोले, "इन दोनोंमें बहुत फ़रक़ है । नक्सलबाड़ी चीनी रेडगार्डससे प्रेरणा लेती है जबकि भूखी पीढ़ी अमेरिकी बीटनिक्ससे ।

"तो दोनोंमें बहुत फ़रक है ?"

"हाँ, हाँ, बहुत फ़रक़ । चीन और अमेरिका एक दूसरेके दुश्मन हैं । एकदम विरोधी, एक दूसरेके बिलकुल उलटे ।"

"तो उनके एटमबमोंमें भी फ़रक़ होगा ?" मैंने पूछा ।

अचानक पिताजीका चेहरा टेढ़ा होने लगा । उनके सारे बदनमें कँपकँपी होने लगी । घरमें अम्मी भी नहीं थीं । मैं बिलकुल घबरा गया । मुझे समझमें न आया कि क्या करूँ । मैं धीरेसे बगीचेमें भाग गया । ■

लोग कहते हैं कि सन् १९६७ इस शताब्दीका बहुत महत्त्वपूर्ण साल था । आज जो कुछ भी हो रहा है, इस समूचे निरर्थक और रहस्यात्मक घटनाचक्रकी एक पूर्व झलक उस वर्ष अचानक मिल गयी थी । नियति बहुत कंजूस और क्रूर होती है । वह अपने भ्रूणमें विकसित होती दैत्याकार घटनाओंको इस तरह गोपनीय बनाये रहती है कि कहींसे भी कुछ संकेत नहीं मिलता । नियतिका दूसरा नाम ही आकस्मिकता है । इस आकस्मिकताको आकस्मिक रहने देना मानवकी पराजय है, असफलता है । समयसे पूर्व इसे जान लेना, जाननेकी कोशिश करना उसकी शक्तिका द्योतक है, उसकी सार्थकता है । इतिहास मनुष्यका प्रयत्न है, भूगोल नियतिकी क्रीड़ा । इनके बीचकी खाई पाटनेका प्रयत्न ही ज्ञान है, विज्ञान है ।

सन् '६७ में अचानक नियतिके भ्रूणका आवरण थोड़ा चिटक गया था । पश्चिम एशियामें अरबों और यहूदियोंका युद्ध, चीनद्वारा हाइड्रोजन बमका परीक्षण, भारतके आम चुनावोंमें कांग्रेसका टूटना, और नक्सलबाड़ीका विद्रोह आदि घटनाएँ मोटेमोटे शीर्षकोंमें छपी थीं । ये स्थूल घटनाएँ थीं । उतनी ही स्थूल जितना चीनमें सर्वत्र 'रेडगार्ड्स' की अमानवीय सक्रियता अथवा युरॅप और एशियाके अनेक भागोंमें बीट-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर काम में कागज

रोहतास इण्डस्ट्रीज लि.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निक्सन, हिप्पीज और बीटल्सका आक्रमण। ये घटनाएँ सिर्फ़ सुर्खियाँ बनकर रह गयीं। ये तो उपलक्षण मात्र थीं, स्थूल बाहरी 'सिम्प-टम्स'-भर। इनके पीछे, इनके भीतर, तलमें छिपे असली विस्फोटक तत्त्वको जाननेकी न तो कोशिश की गयी और न तो उसके रोक-थामका उपाय ही। हाय री इन्द्रियबोधपरक संस्कृति !

■

पिताजीका स्वास्थ्य निरन्तर बिगड़ता जा रहा था। परेशान तो सभी थे। समूचा जीवन-क्रम उलट गया था। युद्धकी शुरूआत-के वे आरम्भिक वर्ष सिर्फ़ स्नायु-परीक्षाके वर्ष थे। चारों तरफ़ भय, दहशत, और ध्वंस। मैं सोचता हूँ कि पिताजी युद्धकी खबरों और 'ब्लैक आउट' की मनहूस रूटीन-को झेल नहीं पाते थे।

पर शायद यह कहना ठीक नहीं है।

"क्या आप युद्धसे परेशान हैं ? यह तो कोई अलगकी व्यक्तिगत चीज़ नहीं, सभी इसमें फँसे हैं, फिर आप ही क्यों इतना चिन्तित होते हैं ?" मैंने एक दिन बुज़ुर्गाना अन्दाज़में पूछा।

"मैं युद्धसे परेशान नहीं हूँ बेटे !" उनका चेहरा अचानक चमक उठा—"सच कहो तो मैं बहुत दिनोंसे उसकी प्रतीक्षामें था। मैं परेशान सिर्फ़ इसके आकस्मिक मोड़की आशंकासे हूँ।"

"आप युद्धकी प्रतीक्षामें थे ?" मुझे सहसा पिताजीकी बातोंपर विश्वास नहीं हुआ। मेरे पिता बहुत ही कोमल मनके स्नेह-भरे व्यक्ति थे। ऐसे आदमीके मुँहसे ऐसी गन्दी बात सुनकर मुझे धक्का लगा।

"तुम ग़लत सोच रहे हो।" उन्होंने कहा, "युद्धकी प्रतीक्षा इतनी सरल समस्या नहीं कि तुम इसपर अच्छे-बुरेका लेबुल तुरन्त चिपका दो। यदि युद्ध नहीं होता तो बाक़ी दुनियामें जो कुछ होता, सो होता, भारत बिला जाता। खत्म हो जाता। युद्धमें भी वह खत्म होगा, बहुत-कुछ टूट-फूट जायेगा, पर अब कुछ बच भी रहेगा। और जो बचेगा, वह बचने लायक़ होगा। सम्भावना-पूर्ण रहेगा। सन् '६७ के बाद ही मुझे लगने लगा था कि यदि जल्दी युद्ध न हुआ तो हमारा यह हज़ारों साल पुरानी जीर्ण-शीर्ण सभ्यताका देश सड़ जायेगा, विषैले कीटा-णुओंका भोजन बन जायेगा। काश तुम सन् '६७ में रहे होते। तुम्हें यह देखकर हैरत होती कि हर हिन्दुस्तानी कितना बेग़ैरत और दीन हो गया था। भुखमरी, अकाल, बाढ़, और दूसरी ओर सर्वत्र बुभुक्षित सेक्सका घिनौना, अमानवीय प्रदर्शन। सारा सामा-जिक ढाँचा कील-काँटोंसे हीन टूटी मशीन-की तरह लड़खड़ा रहा था। इन्सानकी बुद्धि 'त्रिकोण' में फँस गयी थी और उसका भूखा शरीर कुत्तेकी तरह हवामें टँगा हुआ था। पतनकी पराकाष्ठा यह कि लोग इस आत्मघाती, मानवद्रोही प्रेत-जीवनको आधु-निकताके ऊँचे-ऊँचे फ़लसफ़ेमें इस क़दर लपेटते थे कि इनसे बचकर सही रास्तेपर चलनेवाले अपनेको बेवकूफ़ मानकर बीभत्स

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धुएँमें खो गये थे। यों लगता सबको कि चहल-तौबा और गतिमयताका झटका इस बातका सबूत है कि गाड़ी पतनकी ओर तेज़ीसे लुढ़क रही है, पर उसमें सवार हर व्यक्ति पतनकी तेज़ रफ़्तारका रस ले रहा था, उसे रोकना भले ही मुश्किल रहा हो, उसपर-से कूदकर अलग होना तो सम्भव था ही, पर हवाकी फरफराहट और जलते शरीरपर उसकी छुवनका मोह 'आत्मघाती शटक' से नीचे उतरने भी नहीं देता था। बड़े-बड़े शहरोंकी गलियोंमें खुलेआम नग्न मैथुनकी चर्चा होती, बीटनिक्स और हिप्पियोंकी नक़लमें शराब, गाँजा और भाँगके प्रयोग चलते। गाली-गलौज, थुक्का-फ़जीहत, नंगई-बेशर्मी धीरे-धीरे राष्ट्रीय नारा और उद्देश्य बन गयी।"

"तो क्या आप समझते हैं, युद्धके कारण वे चीज़ें बन्द हो गयीं?"

मैं जानता हूँ कि बन्द नहीं हुईं। बन्द कैसे होंगी, युद्धसे बड़ा अनैतिक शायद ही दूसरा कोई कार्य हो। इसलिए भावनाओंके पदार्थीकरणकी प्रक्रियाके रुकनेका तो सवाल ही नहीं उठता। नोच-खसोट, बेईमानी, घूसखोरी, ब्लैक मार्केटिंग सब चालू हैं। बल्कि पहलेसे बढ़ी ही हैं। सेक्स आज भी व्यक्तिगत चीज़ न रहकर भीड़की चीज़ ही है। उसका बाज़ारूपन ज्योंका त्यों है। किन्तु उसमें एक परिवर्तन आया है। उसके साथ अनजाने ही कुछ मूल्य जुड़ गये हैं। विवशता और संकटजन्य मूल्य। अब ड्रेनपाइप पहनकर सीटी बजाते, अश्लील चेष्टाएँ करते, गाँजा, शराब, भाँगमें धुत पड़े नायकोंका स्थान लपटोंसे जूझते सैनिकों, फ़ायरब्रिगेडके आत्मबलिदानी कार्यकर्ताओं, रेडक्रॉसके स्वयंसेवकों, जान जोखममें डालकर यातायातको चालू रखनेवाले ड्रायवरों, परिस्थितियोंके क्रूर पंजेसे निरन्तर साहसपूर्ण ढंगसे लड़ते नवयुवकोंने ले लिया है। सारा फ़ैशन, चटक-मटक, फ़ालतू बहसें और ओछे प्रदर्शन, कूल्हे मटकानेवाली अदाएँ हवा हो गयी हैं। एक नयी संकटजन्य सामाजिकता जन्म ले रही है। अपनेको राष्ट्रके रूपमें उबारनेकी इच्छाने हिमालयसे कन्याकुमारी तकके पूरे देशको एकताके सूत्रमें बाँध दिया है। पूरा देश उबल रहा है। सारे देशकी रगोंमें एक ही रक्त प्रवाहित हो रहा है। भारतीय भाषाओंमें इतनी निकटता, इतना समन्वय और आदान-प्रदान शायद ही कभी हुआ हो। आज मद्राससे लेकर कश्मीर तक परस्पर विचार-विनिमय, बातचीत, रोने-हँसने, प्यार करने और चीखने-कराहनेकी भाषा हिन्दी हो गयी है। न तो इसे संसद्ने किसीपर आरोपित किया, न तो किसीने जबर्दस्ती थोपा, फिर ऐसा करिश्मा कैसे हो गया! कहाँ गयी भाषावार प्रान्तीयता, हिन्दी साम्राज्यवादका हौवा—क्या हुईं वे महान् विकट समस्याएँ जिन्हें सुलझानेमें सरकार पसीनेसे लथपथ हो जाती थी और तेलीके बैलकी तरह अँटौतल लगाये एक ही परिधिमें घूमती रहती थी। समाजद्रोही, देशद्रोही-तत्त्व जो छिपे थे, नाना प्रकारके जन-कल्याणवादी नारोंकी आड़में अपना कार्य कर रहे थे, सामने आ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गये। अब अग्नि-लपटोंमें स्नान करनेवाली जनताको गुमराह नहीं किया जा सकता। यही है इस युद्धका आर्डियल (अग्नि-स्नान !) और यही है इसका रीसरेक्शन (निष्कृति)।

"तो आप इसीकी प्रतीक्षामें थे ?"

"मैं ही नहीं बेटे, सामाजिक राजनीतिको सही ढंगसे समझनेवाला हर व्यक्ति इसी प्रतीक्षामें था। आजसे ४० वर्ष पूर्व विलियम सरोकिनने भविष्यवाणी की थी—"इन्द्रियबोधपरक यह संस्कृति युद्ध और खूनी क्रान्तियोंके लिए सर्वाधिक उर्वर भूमि है। यह बीमार खोखली संस्कृति यदि नष्ट नहीं हो जाती और तर्कमूलक विचारप्रधान (आइडियाश्नल कलचर) संस्कृतिमें बदल नहीं जाती तो बीसवीं शताब्दीका उत्तरार्ध भयानक युद्धों और नरमेधका इतिहास बन जायेगा। यह सर्वाधिक खूनी शताब्दीका सर्वाधिक खूनी संकट है। युद्ध - क्रान्ति, बिखराव, आत्महत्या, मानसिक रोग, ग़रीबी, अकाल, इस संकटके लक्षण और यही इसके परिणाम हैं। कीटाणुग्रस्त व्यक्तियोंके अस्वस्थ मनके इर्द-गिर्द केन्द्रित इस संस्कृतिका और कोई नतीजा हो ही नहीं सकता।" (द क्राइसिस आव अवर एज, पृ० ३२६)

"इससे बचनेका और कोई उपाय नहीं ?"

"कोई उपाय नहीं, जितना ही अधिक हम अपनी कुछ न सीखनेकी ज़िदपर अड़े रहेंगे, और जितना ही अधिक हम स्वतन्त्र रूपसे अपनेको बदलनेसे कतरायेंगे, उतना ही अधिक पीड़ामय दौरसे गुज़रना होगा, उतना ही क्रूर अग्नि-स्नानका अनुभव होगा, उतनी ही निर्मम परिवर्तनकारी शक्तिकी चपेट होगी, उतना ही विकट विनाशका नृत्य होगा।"

"फिर पिताजी, यह जानते हुए भी आप परेशान क्यों हैं ?"

"मोह है बेटे, मिथ्या मोह—जो आत्माको शान्त नहीं रहने देता। 'अणु-युद्धमें कुछ न बचेगा'की चिन्ता हृदयको मथ डालती है। सामान्य क्षेत्रीय युद्ध जहाँ हमारे राष्ट्रको जीनेकी नयी शक्ति देगा, वहीं अगर अणु-युद्ध शुरू हुआ तो सब-कुछ जलकर खाक हो जायेगा। मनुष्य शायद समाप्त हो जायेगा। यह एक ऐसा युद्ध होगा जिसमें अच्छा बुरा, अपराधी-निरपराध, सत्य-असत्य, न्याय-अन्याय सभी कुछ समानभावसे भस्म हो जायेगा।"

■

उनका सोचना कितना सही था। आज नयी सहस्राब्दीकी इस बेलामें चतुर्दिक् फैले ध्वंसके बीच इस खन्दकमें बैठा मैं उस चेहरेको याद करके सिहर जाता हूँ। रेडिओ अब हमेशाके लिए बन्द हैं। वर्षोंसे अखबारके दर्शन नहीं हुए, पर अचानक पता नहीं क्यों शरीरमें कँपकपी होती है और मैं विक्षिप्तकी तरह ताकता रह जाता हूँ। मैं इस घड़ीमें विगत सहस्राब्दीको अपनी 'हिवाकुशा विक्षिप्त पीढ़ी' की ओरसे श्रद्धांजलि दे रहा हूँ। इति। ■■

काम्मा कोठी, दुर्गाकुण्ड,
वाराणसी-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

DELUXE PAPER MART
13/17, Dadi Seth Agiary Lane,
BOMBAY-2
for
WASTE PAPER & CUT PIECES
PAPERS & BOARDS
BUYERS & SUPPLIERS

DELUXE BOOK MFG. DEPOT
Gomark Bhavan,
Masjid, Bridge, BOMBAY-9

MANUFACTURERS OF
ALL KINDS OF
EXERCISE & ACCOUNT BOOKS.

With Compliments from :

Ramdas Sobhraj & Sons

9, Sutar Chawl,
Bombay-2

MANUFACTURERS OF PLAYING CARDS

Telephone : 325364

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

('उत्तरशती' का शेषांश : पृ० १६ से आगे)

गिरीश पाण्डेय : १-मैं शान्त और स्थिर भावसे उस कौलेप्सको देखना चाहता हूँ, तबतक, जबतक दुनियाका एक हिस्सा होनेके नाते मेरी भी परिसमाप्ति न हो जाय। २-मैं चाहूँगा कि अगर कोई व्यक्ति बचा रहे तो वह व्यक्ति हो जिसके हृदयमें करुणा हो, जो दूसरोंको माफ़ कर सके और जिनकी उन मूल्योंमें आस्था और विश्वास हो जिसका अवमूल्यन हम निरीह-से बने देखते हैं। कौन जाने उस पारसे नये भविष्यकी धवल कोमल किरणें मुझे दिखें।

गुलाबदास ब्रोकर : १-अच्छा ही होता है, यह तमाशा खत्म होता है। २-किसीको नहीं—जिनको मैं पूर्णभावसे प्रेम करता हूँ उनको तो एकदम ही नहीं। कारण इसमें कहीं कोई ऐसा सार रहा नहीं लगता। ३. एक भी नहीं, क्योंकि कल्पान्तर क्या, शताब्दी तक भी याद रह सके ऐसा वाक्य बोलनेकी गुंजाइशका मैं अपने आपमें अनुभव नहीं करता।

घनश्याम रंजन : १-पुकारेंगे किसीको नहीं। जो होगा उससे जूझनेके लिए अपनेको तैयार करेंगे। २-मैं अपने अलावा किसीको बचा सकूँगा तो वह राष्ट्रपति होगा न प्रधान मन्त्री। वह वही व्यक्ति होगा जो उस क्षण मेरे पास होगा—निकट होगा। ३-वह मेरा अतीत था। यह मेरा वर्तमान है। वह मेरा भविष्य होगा।

चन्द्रकान्त देवताले : १-सबसे पहले तो शायद चीखकर ही जिजीविषाको समाप्तिपूर्वका आकाश दूंगा और फिर शायद किसीको पुकारूँगा भी पर सहायताके लिए नहीं, सहायताका प्रश्न ही कहाँ उठेगा ? फिर क्यों पुकारूँगा ? शायद प्रेम करते हुए मरनेके लिए। हो सकता है जैनेन्द्रजी कह दें—यह भी एक प्रकारकी सहायता और सुविधाकी ही माँग है। मैं नहीं जानता ! २-प्रेमिकाको, यदि हुई तो, नहीं तो पत्नीको। किसी भी क्षेत्रके नायक या नायिकाको बचानेका प्रश्न ही कहाँ ? ३-आज जब उस संकटकी कल्पनाके सन्दर्भमें सोच रहा हूँ तो लगता है—बावजूद पूरी ईमानदारीके भी अतिरिक्त सजगता काम कर रही है। मुमकिन है जितने भी उत्तर इन प्रश्नोंके आवें उनके विपरीत हर किसीका आचरण हो ? यह सब सोचना ही रोमांचक है। पर आज तो यही लगता है कि अतीत और भविष्यसे कटा हुआ उस समय यही कह पाऊँगा : यह मेरा वर्तमान है।

जगदीश चतुर्वेदी : १-न ज़ोरसे चीखूंगा, न सहायताके लिए किसीको पुकारूँगा। इस अनिवार्य नियतिपर मैंने सृजन-स्तरपर काफ़ी सोचा है। अपनी 'मृत्यु-माँग' शीर्षक कविताकी ये पंक्तियाँ दोहराऊँगा :

"आज मैं खुश हूँ
आज मैं नाचूँगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज मैं पियूँगा
रक्त में भीगी चर्बी-भरी शराब"
२-राजनीति, परिवार (इसमें प्रेमिका भी सम्मिलित है) और चित्रपटके नायक-नायिका सभी अर्थहीन हैं। मैं इन्हें, इन परम्परागत समूहों और व्यक्तियोंको नहीं बचाना चाहूँगा। ३-अतीत : अर्थहीन। वर्तमान : कड़ुआ और तिक्त। भविष्य : शान्त और निर्वासन-भरा एकान्त।

जफ़र अहमद : १-पुकारूँगा—अपने-आपको। सवालात खासे दिलचस्प हैं। मगर पहला प्रश्न पढ़कर कोई सनसनी नहीं हुई। लगा ऐसी हालतसे तो इसी साल तीन बार पहले भी गुज़र चुका हूँ : पहली बार २७ मई '६७ को जब अचानक मेरी जवान बहन मर गयी। फिर २७ जून '६७ को जब अम्मी भी हमें छोड़ गयीं। और तीसरी बार २२ अगस्तकी रातको जब कुछ मज़हबी पागलोंने घरके साथ-साथ उसकी एक-एक चीज जलाकर मुझे अपने ही शहरमें शरणार्थी बना दिया—"यह मेरा वर्तमान है।" मगर मैं मायूस नहीं हूँ। २-प्रेमिका। ३-यह मेरा वर्तमान है।

जितेन्द्रकुमार मित्तल : १-जड़ हो जाऊँगा। २-प्रेमिकाको। ३-वह मेरा भविष्य है।

दण्डमूडि महीधर: १-पुत्रको। २-पत्नी। ३-यह मेरा वर्तमान है।

धनंजय वर्मा : १-स्वागत, हम इस पलकी तैयारी करते, प्रतीक्षारत थे। २-परिवार, जिसमें एक मित्र भी शामिल हैं। क्योंकि इनके बिना जीवनके कोई मायने नहीं। ३-आह! मौत, जो जीवनका बड़ा सत्य है, और उसकी भूमिका भी।

नगेन्द्र : १-आपके इस परिपत्रके विषयमें सोचूँगा। २-'ज्ञानोदय'के सम्पादकको—जिसे अभी मेरे ये उत्तर प्रकाशित करने हैं। ३-हिन्दीके सम्पादक भी कैसे कल्पनाशील हैं।

परेश : १-दुनिया कौलेप्स होनेका अर्थ है हदसे हद वाई० एम० सी० ए० की इमारतका ढह जाना, मैं ऊपरकी मंज़िलमें रहता हूँ—अत: खिड़कीसे कूदनेका समय नहीं भी रहा तो भी मलवेसे निकल सकूंगा—क्योंकि वह काठका होगा। यही खयाल बसमें यात्रा करते समय रहता है कि वह लुढ़की तो खिड़कीसे निकलनेकी कोशिश करूंगा-चीख-पुकार मुझसे नहीं होती। २-इन दिये हुए नामोंको दो वर्गोंमें रखना होगा, पहला खुदका परिवार, दूसरा वर्ग राजनयिक या फ़िल्मी अभिनेताओंका। दूसरे वर्गमें मैं किसीको भी नहीं बचाना चाहूँगा। हाँ, लाल बहादुर शास्त्रीको बचानेका सवाल होता तो मैं अपनी जानकी क़ीमतपर भी बचाता। पहले वर्गमें हम मृत्युके आनेतक यह निर्णय नहीं कर पायेंगे कि किसको बचाना है क्योंकि घरके छोटेसे छोटे बच्चेको भी हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्युके हवाले नहीं कर सकते—और इसी अनिर्णयमें स्वयं भी मृत्युके ग्रास बन जायेंगे। भट्टिनी और 'महावराह'में चुनाव करना मुश्किल नहीं था, भट्टने 'भट्टिनी'को ही चुना और महावराहको डूब जाने दिया। ३-मैं इनमें-से कोई भी पंक्ति नहीं बोलूँगा।

प्रभाकर माचवे : १-मैं इस दुनियाको छोड़कर चन्द्रलोक या मंगललोकको भागनेकी कोशिश करूँगा। दुनिया चाहे मरे, मैं बच जाऊँ। २-परिवार, चूँकि अन्य दोनों यानी रोटी देनेवाली संस्था या शासन-यन्त्रसे मेरे सम्बन्ध अब केवल उपयोगितावादी हैं। परिवारसे सम्बन्ध अभी वैसे नहीं बन गये हैं। सारे सम्बन्ध पहले प्रेमसे शुरू होते हैं। जिसमें प्रत्यापेक्षा निहित है—धीरे-धीरे ये अपेक्षाशून्य होते जाते हैं। ३-(कोई शब्द या वाक्य कल्पान्तर तक नहीं जियेगा। यह जानकर) राम-राम! यह भी कोई दुनिया है!

या—मुझे सन्तोष है कि दुनियाकी ऐसी हालत मैंने नहीं बनायी। अब उससे-राम-राम।

प्रमोद सिन्हा : १-जड़ताकी स्थितिमें होंगे। २-माँ ३-वर्तमान भयानक''''''''भ''''य''''ा''''न''''क''''क''''क''''क''''''। पूरी पंक्ति बोल भी नहीं पाऊँगा।

प्रियदर्शी प्रकाश : १-चारों ओर कौलेप्स होती दुनियाके बीच मुझे अपनी मृत्यु सामने दिखाई देगी और मैं निस्सन्देह निरीह और निर्विरोध उसके आगे समर्पित हो जाऊँगा या चूँकि ऐसे अवसरपर प्राप्त एक क्षणका समय मेरे लिए काफ़ी महत्त्वका होगा, इसलिए शायद अपने बचनेकी नाउम्मीदीके बावजूद छटपटाऊँगा या कनाट-सर्कसके खण्डहरोंमें शराबकी दूकानें खोजता हुआ दौड़ूँगा और किसी भी एक दूकानमें घुसकर खूब शराब पिऊँगा। २-दुनियामें चूँकि अकेला मैं बचा रहूँगा, इसलिए हो सकता है दुनियाको पुनः बसानेका महान् दायित्व मुझे महसूस हो। ऐसी स्थितिमें शायद मैं किसी एक मादाको बचानेका प्रयास करूँ। ३-कौलेप्स होती दुनिया हालाँकि मेरा वर्तमान होगी, तो भी हर भयानक क्षणको 'अनदेखा' कर देनेकी सहज मानवीय प्रवृत्तिके कारण शायद मैं कहूँगा, 'यह मेरा भविष्य होता।' इसके पीछे न सिर्फ़ मेरे जीनेकी ललक होती है, बल्कि मृत्युके संत्रासको कुछ और आगे टालनेकी इच्छा भी।

बच्चन : १-एक दिन बुझ जायेगा सूर्य
प्रकाशित जिससे सब संसार,
एक दिन बुझ जायेगा चाँद,
निशाका सुन्दरतम श्रृंगार,
एक दिन बुझ जायेंगे दीप
गगनके सब, खद्योत, विचार,
अर्थ क्या रखता बुझना सोच
मचाना तेरा हाहाकार।'
(हलाहल)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२-परिवार-संगिनी—क्योंकि इससे फिर सृष्टि सम्भव हो सकेगी।

'हाय प्रेयसि मिल हम-तुम साथ
नियति के रच कोई षड्यन्त्र,
पकड़ सकते यदि यह सम्पूर्ण
जगत् का दुःख संकटमय यन्त्र,
न क्या हम करके चकनाचूर
मिटाते इसका सत्त्व समूल,
बनाते एक नया संसार
हृदय के सपनों के अनुकूल।'
(खैयामकी मधुशाला।)

३-"नाशके दुःखसे कभी
दबता नहीं निर्माणका सुख
प्रलयकी निस्तब्धतासे
सृष्टिका नवगान फिर-फिर
नीड़का निर्माण फिर-फिर।' (सतरंगिनी)

बनारसीदास चतुर्वेदी : १-अरे! सब काम अधूरा पड़ा रह गया। डाक निबटानी थी 'सब ठाठ पड़ा रह जायेगा, जब लाद चलेगा बंजारा', विश्वमें पुनर्निमित होनेपर फिर जन्म लेकर अपना काम पूरा करूँगा। २-निश्चयपूर्वक परिवारको। आजीविका देनेवाली संस्थाकी चिन्ता मैंने कभी नहीं की। पार्लमेण्टकी सदस्यताके दिनोंमें भी बराबर बारह वर्ष सोता रहा। मित्र-मण्डली अपनी फ़िक्र खुद कर लेगी, और शासन-तन्त्र तो सारी खुराफ़ातोंकी जड़ है। वे कल जहन्नममें जानेवाले हों तो आज ही चले जावें। ३—उस समय मैं बन्धुवर बच्चनकी यह कविता गुनगुनाऊँगा :

'मुझे यदि निश्चय भी हो जाय,
घिरौंधा शब्दों का सुकुमार,
बनाता जो मैं निशि में बैठ
सुबह को मिटकर होगा क्षार—
और निश्चित भी कुछ यह बात
आह, निर्मित करने की चाह!
करूँगा उसका ही निर्माण
देखता जो मिटने की राह।'

बालकृष्ण राव : १-शायद बिलकुल कुछ भी नहीं। 'सोचने' की स्थिति ही न होगी। २-शक्ति हो या न हो, यदि दुनिया नष्ट होने जा रही हो तो सचमुच किसीको भी न बचाना चाहूँ। दुनिया ही न होगी तो कोई भी बचकर क्या करेगा? पर यदि दुनियाका कुछ हिस्सा बचनेवाला हो तो मैं बचाना चाहूँगा अपनी पत्नीको और अपने कुत्ते हेमूको। ३-इसलिए या इस आशासे कि मेरे बाद लोग मेरे मुँहसे निकली अन्तिम बात याद रखेंगे, मैं शायद ही कुछ कहना चाहूँगा। पर एक बात जानता हूँ। यदि अपने जीवनके अन्तिम क्षण मैं इलाहाबादके सिवा कहीं और हुआ, और यदि उस समय बोलनेकी शक्ति शेष रही तो शायद यही कहना चाहूँगा कि कोई मुझे तुरन्त इलाहाबाद पहुँचा दे।

बीनामाथुर : १-ज़ोर-ज़ोरसे चीखनेका मन होगा लेकिन जानती हूँ कि यह चीखना व्यर्थ होगा अतः चीखते-चीखते शायद अचानक जड़ हो जाऊँ। २-प्रेमी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३–यही मेरा वर्तमान है, मैं मांसके लोथड़ेकी तरह पड़ी हूँ–और देखती हूँ–धरतीमें दरारें पड़ते, चारों ओर गीला लावा फैलता है।

भंवरमल सिंघी : १–जब दुनिया फिरसे बने तो आजकी तरहकी दुनिया न हो। २-मैं अपनी मित्र-मण्डलीको बचाना चाहूँगा ताकि मित्रताके जरिये फिरसे अपनी पसन्दका संसार बनाकर रह सकूँ। ३-यदि हम इस सत्यको समझ लें कि जीवन एक चिरन्तन मैथुन है तो हजारों वर्षोंसे चली आती हुई पाप और पुण्यकी परिभाषाओंके भ्रमजालसे सदाके लिए बच जायें।

भवानीप्रसाद मिश्र : १–कुछ न सोचनेकी कोशिश करूँगा। २-जो सबसे पास उस समय होगा उसीको। शरीरकी मर्यादाके कारण। इच्छाका तब कोई उपयोग नहीं हो सकता। ३–हे राम!

मंगलेश डबराल : १–मेरे अबतकके आत्म-निर्णय और परिवेशसे सम्बद्ध स्थितियोंके आधारपर यह निश्चित ही है कि समूची दुनियाके कौलेप्स होनेके बिन्दुपर मैं जड़ हो जाऊँगा। सर्वथा जड़ हो जाऊँगा—लेकिन भोगे हुए सारे समयके नामपर एक लम्बी और अपने अस्तित्वसे भी कुरूप चीख मारनेके बाद।····२-अपनी माँको बचा लूँगा—इसलिए कि माँके माध्यमसे मैंने यह एक सत्य पाया है कि मैं जीवित हूँ और अपने आस-पासकी चीजोंको टटोल सकता हूँ। ३–"यह मेरा वर्तमान है" शायद एक कठोर और स्याह स्वरमें प्रलयसे पहले बोलूंगा!····

मधुराय : १–पता नहीं, शायद धूम्रपान-की इच्छा करें। २-कोई नहीं, खुद भी नहीं, पता नहीं। ३-बोर मत करो।

महीप सिंह : १. खूब जोर-जोरसे चीखूंगा। किसीको नहीं पुकारूँगा। जड़ नहीं हो पाऊँगा। २–बचा सका तो सिर्फ प्रेमिका-को बचाऊँगा। ३–प्रलयसे पहले अपने वर्त-मानके विषयमें ही शायद कुछ बोल पाऊँ।

महेन्द्र भल्ला : १–तीसरे महायुद्धमें ही दुनिया शायद कौलेप्स करे। लेकिन पिछले कई बरसोंकी आशंकाके बावजूद यह लगने लगा है कि तीसरा महायुद्ध कभी नहीं होगा हाँलाकि वह कभी भी छिड़ सकता है। यह वैसे ही है जैसे मैं, दूसरोंकी तरह यह 'विश्वास' नहीं कर पाता कि मैं मरूँगा—हाँलाकि मैं जानता हूँ कि मौत आयेगी ही। इसलिए, मुझे दुनियाके ध्वस्त होनेपर कभी विश्वास नहीं होता। २–हाँ, उसके ध्वस्त होने-की कल्पना जरूर की जा सकती है और इस कल्पनामें कुछ भी किया जा सकता है, किसी-को भी बचाया जा सकता है। ३-लेकिन अगर प्रलय आ ही जाय तो मैं तभी बता पाऊँगा कि मैं क्या करूँगा क्योंकि स्वयं मैं भी तभी जान पाऊँगा—अपने कुछ कर पाने या न कर पानेके बारेमें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोना गुलाटी : १—ठहाका लगाऊँगी। २-मुझे इन शब्दोंमें निहित कनोटेशन्स पसन्द नहीं इसलिए किसीको भी नहीं। ३-अतीत : अहम् ब्रह्मास्मि। वर्तमान : नीत्शे वा कोढ़। भविष्य : सुपरमैन।

रणजीत : १-चीखूँगा ताकि जो कोई भी मेरे नज़दीक हो वह और नज़दीक आ जाये। पुकारूँगा अपनी पत्नीको। जड़ हो जाऊँगा उसे अपनी बाँहोंमें घेरकर। २-प्रेमिका-पत्नीको। ३-अतीत : प्रमाद मेरा अतीत था, वर्तमान : प्रयत्न मेरा वर्तमान है, भविष्य : चन्द उपलब्धिपूर्ण पुस्तकें मेरा भविष्य होता।

रमेश कुन्तलमेघ : १-अपनी अधूरी रचनाएँ। २-परिवार, मेरे बाद मुझे 'भावित' रूपमें बचा रखनेवाला वही होगा। ३-सुबह फिर कभी ज़रूर आयेगी और हम इतिहासमें पुनर्जन्म लेंगे।

रमेश सत्यार्थी : १-मैं जोरसे चीखूंगा। २-मैं प्रेमिकाको बचाऊँगा। ३-बोलूंगा : "वह मेरा भविष्य होता।"

रामदरश मिश्र : १-कुछ भी नहीं, कुछ अनुभव मात्र करूँगा जो बताया नहीं जा सकता। २-परिवारको, क्योंकि वही समीप है, उस समय भी रहेगा तथा वह एक मूर्त और स्पष्ट चीज है। शेष अमूर्त है तथा समीप भी नहीं रहेंगे। ३ मन-ही-मन मैं शायद किसी कविताकी (जो शायद मेरी ही होगी) पंक्ति गुनगुनाऊँगा, बोलूँगा कुछ नहीं।

लीलाधर जगूड़ी : १-क्या जड़ हो जायेंगे? हाँ। २-प्रेमिका (जो चित्र कविने भेजा था उसका ब्लाक हम नहीं दे पाये हैं। —सं०) ३-यह मेरा वर्तमान है।

विष्णु प्रभाकर : १-यह आज ही आपको कैसे बताऊँ? वह अवसर आने दीजिए आप-पास हों तो, पूछ देखिए। २-यह रहस्य आपको क्यों बताऊँ? कोई बता भी न सकेगा। इस क्षण और उस क्षणमें बहुत फासला है। ३-अभी तो मैं स्वयं भी नहीं जानता। फिर कल्पान्तरकी चिन्ता मैं क्यों करूँ।

सुमित्रानन्दन पन्त : १-मानव चेतना इतनी पथरा गयी होगी कि उसके लिए विध्वंसके अतिरिक्त दूसरा रास्ता ही न रहा होगा। २-जब सारी दुनिया ही समाप्त होने जा रही है तो किसी एकको बचानेकी सम्भावना ही निरर्थक प्रतीत होगी। ३-नयी या भावी सभ्यताका निर्माण मानव-प्रेमकी नींव या आधार-शिलापर हो।

श्याम परमार : १-शायद मैं कुछ नहीं सोच पाऊँ। उस स्थितिमें सोचनेका मूल्य ही क्या होगा? कौन कह सकता है कि उस वक़्त सोचनेकी स्थिति भी रहेगी या नहीं। २-मैं अपने परिवारको बचाना चाहूँगा। क्योंकि उसके रहते कमसे कम मैं भाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खण्डहरोंमें अपनेको अकेला महसूस नहीं करूँगा। ३–मेरा कोई अन्तिम वाक्य नहीं होगा। उसे मैं किसके लिए बोलना चाहूँगा? जब सारी दुनिया ही समाप्त होनेवाली हो तो बोले हुए वाक्यका उपयोग ही क्या होगा।

हजारीप्रसाद द्विवेदी : (प्रिय रमेशजी, उत्तर भर दिये, आवेशमें नहीं।—ह० प्र० द्विवेदी) १–बच जाती तो अच्छा होता। यह दुनिया नष्ट होने योग्य नहीं है। यह बहुत सुन्दर है, बहुत सुन्दर। इसने मनुष्यको जन्म दिया है। मनुष्य, अपार सम्भावनाओंका महान् भण्डार। २–परिवार और सम्मित्र-मण्डलीको। क्योंकि संसारके सर्वश्रेष्ठ रत्न 'प्रेम'का साक्षात्कार मुझे यहीं हुआ है। ईश्वरको पारिवारिक रूपमें या मित्र-रूपमें देखना सबसे बड़ा दर्शन है। परिवार और मित्रके अभावमें यह दृष्टि मिल ही नहीं सकती। (क्यों?) यह आपको नहीं पूछना चाहिए। दो मिनिटमें क्या जवाब दिया जा सकता है भला? यह 'क्यों' सिर्फ़ यह सूचित करता है कि आप मन-ही-मन निश्चित करते हैं कि दुनिया दो मिनिटमें नष्ट नहीं होगी। ठीक ही समझते हैं आप। दुनिया काफ़ी मज़बूत बनी है। ३–"मरिते चाहि ना आमि सुन्दर भुवने!"

हबीब क़ैफ़ी : १–खुदको पुकारूँगा। २–किसीको भी नहीं। ३–अतीत : ईश्वर। वर्तमान : मेरा माहौल और मैं। भविष्य : खला (अन्तरिक्ष)।

हंसराज रहबर : १–मुझे मालूम है दुनिया दो मिनिट क्या दो हजार शताब्दीमें भी खत्म होनेवाली नहीं, इसलिए मैं तत्काल सोचनेकी सरदर्दी ही मोल नहीं लेता। २–आपको अपनी बातपर खुद विश्वास नहीं वरना जब सारी दुनिया समाप्त होनी है तो किसीको बचानेका सवाल ही कहाँ पैदा होता है। ३–मैं तो अपने अखण्ड विश्वास-के साथ बराबर लिख रहा हूँ और ऐसी कई कृतियाँ छोड़ जाना चाहता हूँ जिन्हें लोग न सिर्फ़ हमेशा याद रखेंगे बल्कि उनसे ऐतिहासिक विकासकी राह खोजनेमें सहायता लेंगे।

अन्तिम उत्तर :

हरिशंकर परसाई : १–यह कि दूसरे लेखक भी मर रहे हैं या नहीं। ऐसा तो नहीं कि मैं मर जाऊँ, बाक़ी सब कहानी लिखते रहें। २–किसीको नहीं। अलगसे ये कोई ज़िन्दा नहीं, रह सकते। परिवारको बचा लूँ मगर आजीविकाकी संस्थाको कोई न बचा पाया तो, परिवार वैसे भी भूखा मरेगा। सबको साथ ही मर जाना चाहिए। ३–सारी दुनिया दो मिनिट बाद समाप्त हो जायेगी, तो 'लोग' नहीं बचेंगे। ज़मीनके भीतर और बहुत ऊपर आसमानमें कुछ जीवधारी बचेंगे। उनसे मैं कहना चाहूँगा—'आदमी होनेसे भरसक बचें!"

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

AUTHORISED DISTRIBUTORS FOR PAPER & BOARDS
ROHTAS INDUSTRIES Ltd., DALMIANAGAR

TRIVENI TRADELINKS

Manufacturers Representative

PAPERS, BOARDS, ALLIED PRODUCTS.

32/34/36, Anant Wadi, 37, 3rd Floor, Kalbadevi, Bombay-2

१७ वर्षोंसे निरन्तर कलापूर्ण मुद्रणकी
उत्तरोत्तर प्रगतिमें एक
महत्वपूर्ण कड़ी--

आनन्द प्रेस, भागलपुर-२ (बिहार)

आटोमेटिक मशीनोंपर मोम लगे बहुरंगे साबुन-लेबुल, पावरोटी-रैपर, बीड़ी-लेबुल व तेल-लेबुलोंके विख्यात मुद्रक।

शुभ विवाह, दीपावली, वाणी-अर्चना, बधाई एवं सभी शुभ अवसरोंके लिए उपयुक्त उत्तमोत्तम कार्डोंके निर्माता।

अपने लेबुलोंके लिए हमें लिखें—

फोन { कार्यालय ४६७
{ निवास ५२३

व्यवस्थापक, आनन्द प्रेस,
भागलपुर-२ (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

For supply of

- ⋆ PAPER ⋆ BOARDS ⋆ STRAW BOARDS
- ⋆ PRINTING INKS & ALLIED LINES
- ⋆ LARGEST HOUSE IN GUJARAT
- ⋆ SAURASHTRA & CUTCH

Please Contact :

Kalyan Paper Mart

Importers & Wholesale Stockists :

646, Char Rasta,

NAVA DARWAJA ROAD, **Ahmedabad.**

Distributors

- ⋆ ROHTAS INDUSTRIES LTD. DALMIANAGAR
- ⋆ THE RATLAM STRAW BOARDS MILLS LTD., RATLAM
- ⋆ HOOGHLY INK CO. (BOMBAY) LTD., BOMBAY
- ⋆ STANDARD PULP & PAPER FACTORY, NASIK

INDIA'S

LARGEST GYPSUMS PRODUCER

Suppliers to :

SINDRI FERTILIZER FACTORY

CEMENT, COAL & POTTERY INDUSTRIES

BIKANER GYPSUMS LTD.,

BIKANER (Rajasthan)

Managing Agents :

Natural Science (India) Private Ltd.

135, Biplabi Rashbehari Basu Road,

CALCUTTA-1

Calcutta Office :
135, Biplabi Rash Behari Basu Road,
CALCUTTA-1
Post Box No. G. P. O. 2721
Phone : 22-8601 (2)

Regd. Office :
Sadul Club Building,
Bikaner,
Rajasthan
Phone : 16, Bikaner
798 ,,

Delhi Office :
B/19, Asaf Ali Road,
NEW DELHI
Phone 27-1354

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबकी पसंद का ताश — पापुलर

सब जगह घरों में तथा क्लबों में ताश के खिलाड़ी वर्षों से पापुलर ताश के पत्तों को ही पसंद करते हैं। क्योंकि यह उच्च स्तर के बढ़िया सख्त बोर्ड से बनाया जाता है। आकर्षक डिज़ाइनों में मिलता है और इसे फेंटने और खिसकाने में आसानी होती है।

आज ही पापुलर ताश की एक गड्डी खरीदिये।

पापुलर फाइन आर्ट लिथो वर्क्स प्राइवेट लिमिटेड,

१३३-सी, वकोला, सान्ताक्रुज (पूर्व)
बम्बई-५५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
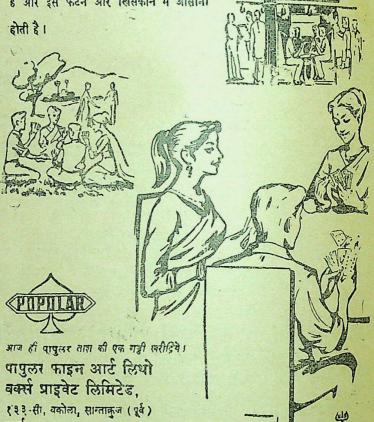
शान्तिनिकेतन से शिवालिक

सम्पादक
शिवप्रसाद सिंह

मूल्य २०.००

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीका व्यक्तित्व, जिसे हिन्दीक्षेत्रकी जीवित सांस्कृतिक गरिमाका प्रतिरूप भी कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। यह पुस्तक जहाँ आचार्य श्री द्विवेदीके व्यक्तित्वका विश्लेषण करती है वहीं उनके कृतित्वका गम्भीर अध्ययन-परीक्षण भी प्रस्तुत करती है। यह एक सुखद संयोग है कि उन्हींके हाथोंमें समर्पित होकर यह कृति हिन्दी साहित्यके विगत चालीस वर्षोंकी प्रगतिके प्रति श्रद्धाका प्रतीक-भी सहज ही बन गयी है।

आचार्य द्विवेदीका व्यक्तित्व ऊपरसे जितना सीधा-सादा लगता है उसका विश्लेषण उतना ही कठिन है। यह इसलिए कि ऊपरका शान्त जल सचेत भावसे तलके आन्दोलन-आलोड़नको पूरी तरह संयमित और नियमित किये हुए है; और यही कारण है कि उनके व्यक्तित्वके विश्लेषणका पदार्थ केवल उनका ही व्यक्तित्व नहीं, वे तमाम अन्तरधाराएँ भी होती हैं जो पिछले चार दशकसे हिन्दी साहित्यके निर्माणका समवाय कारण रही हैं; अवश्य ही वे उसकी शक्ति और सीमाएँ भी रहीं, प्रेरणा और बाधाएँ भी।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीका सांस्कृतिक मानव और उसकी बहुविध आधुनिक गतिमयता स्वयंमें इतनी विरल और विलक्षण वस्तु है कि आजके आस्थाहीन, कुण्ठित, निराश और सन्त्रस्त पीढ़ीके लिए यदि वह एक मिथक लगे तो आश्चर्य नहीं! धुर प्राचीनसे अद्यतन आधुनिक तकका पूरा क्षितिज जिस दृष्टिमें बँधा हो या इस प्रयत्नका विषय ही बना हो—वह दृष्टि अपनी समग्रताके कारण, या फिर अपनी उपलब्धि और असफलताका सच्चा साक्ष्य होनेके कारण ही, नयेसे नये रचनाधर्मोंके लिए निस्सन्देह एक महत्त्वपूर्ण विरासत है! आवश्यकता इसे सहज प्राप्त मानकर सन्तुष्ट होनेकी नहीं बल्कि पूर्ण विश्लेषित करके उसकी सारी सम्भावनाओंको आत्मसात् करनेकी है!···

अभिनन्दन ग्रन्थोंकी भरकम कायासे रंचमात्र प्रतिस्पर्धा न रखते हुए भी 'शान्तिनिकेतनसे शिवालिक' अपनी सार्थकताके प्रति संकोचहीन है; क्योंकि इसकी धारा न तो 'शोध' की शिलाओंसे आहत है और न ही शिथिल तटबन्धके कारण अनियमित!···

आचार्य श्री द्विवेदीकी षष्टिपूर्तिके अवसरपर प्रस्तुत : डिमाई आकारके ५०० पृष्ठोंमें अद्वितीय सामग्री। आचार्य श्री द्विवेदीके दुर्लभ छायाचित्र। अपनी प्रति शीघ्र प्राप्त कर लें।

भारतीय ज्ञानपीठ

कलकत्ता : वाराणसी

विक्रय-केन्द्र ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञापन-अनुक्रम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदय

शेष शताब्दी विशेषांक-२

दिसम्बर १९६७

मूल्य : १.५० :: पृष्ठ : १५० से अधिक

२५ दिसम्बरको प्रकाश्य

●

कुछ शीर्षक :

- ब्रह्माण्डका स्वरूप : रमेश वर्मा
- जीनियागरी उर्फ़ आनुवंशिक हेरफेर : प्रेमानन्द चन्दोला
- तैंतीस वर्ष बाद दक्षिणध्रुव : डॉ० सिरोहीसे एक भेंट : रमेशदत्त शर्मा
- तीन बम छह हज़ार आँखें : सुरेन्द्रनाथ सक्सेना
- चाँदपर पहुँचनेसे पहले : अधीरकुमार राहा
- जापानी बच्चोंकी नज़रमें २१वीं सदी : सुधा शर्मा
- १ जनवरी, २००१ : अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार
- मृतप्रदेशका निरुद्ध संगीत : धनंजय वर्मा
- जब श्मशान नहीं रहेंगे : अमृता भारती
- २० वीं सदी : कालके अथाह सागरमें एक बिन्दु : ओंकार ठाकुर
- ३३ साल बादकी दुनिया : हरीश अग्रवाल
- शताब्दीके मोड़का अख़बार : प्रेमनाथ चतुर्वेदी
- सदियोंसे परे एक नयी सदी : राजेन्द्र अवस्थी
- मिस वर्ल्डका प्रेस-वक्तव्य : विश्वेश्वर
- एक शताब्दीकी मौत : भीमसेन त्यागी
- उगे हुए लोग : मृणाल पाण्डेय
- उसी डालपर बैठकर उसीको काटना : दूधनाथ सिंह
- शताब्दीके सीमान्तपर : गंगाप्रसाद विमल
- एक तिहाईसे पहले दो तिहाई : लक्ष्मीचन्द्र जैन

शेष शताब्दी विशेषांक-२

९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मशीनों से
तेल
अधिक सस्ता
लुब्रिकेशन
की
समस्याओं
या
आवश्यकताओं
के लिए
मिलें

- शुगर फैक्ट्रीज़
- सीमेन्ट फैक्ट्रीज़
- कॉटन मिल्स
- जूट मिल्स
- पेपर मिल्स
- स्टील वर्क्स
- कोल माइन्स
- पावर स्टेशन्स
- ट्रैक्टर्स
- मोटर गाड़ी के प्रत्येक पार्ट्स

टाइड वॉटर ऑयल कं० इंडिया लि०

कलकत्ता : बम्बई : मद्रास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Guruk
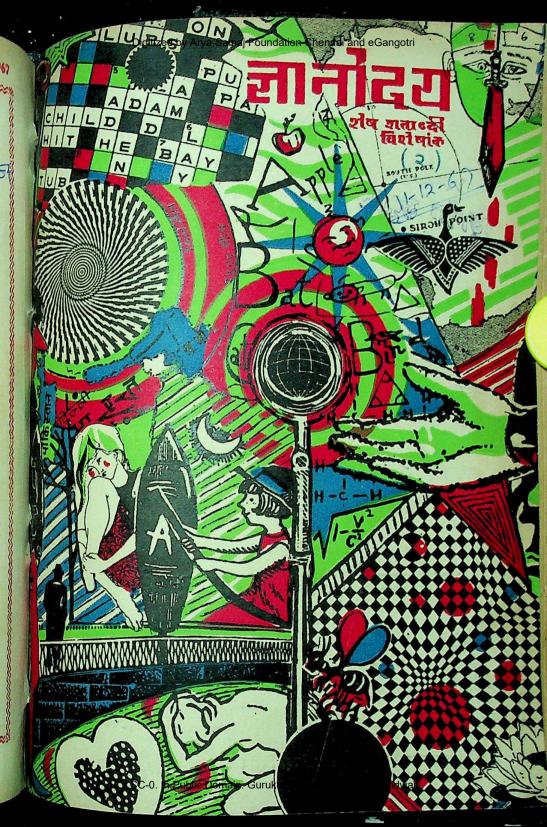
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेष
शताब्दी
विशेषांक : दो

०
०
०

ज्ञा नो द य
आधुनिक भावबोध, कला-संचेतना
और नवीनताका प्रतिनिधि।...

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन। वर्ष : उन्नीस : : अंक : छह : दिसम्बर सड़सठ। मूल्य डेढ़ रुपया। वार्षिक : पन्द्रह रुपया।...

सम्पादक : लक्ष्मीचन्द्र जैन, रमेश वक्षी। नौ, अलीपुर पार्क प्लेस कलकत्ता-सत्ताईस।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञा । नो । द । य

दिसम्बर १९६७

■

इस अंककी परिसमाप्तिपर श्री रमेश बक्षी ज्ञानोदय-से विदा ले रहे हैं। कुशल और तत्पर सहयोगीके रूपमें रमेशजीका योगदान ज्ञानोदयके लिए सराहनीय रहा है। वह एकाग्र रूपसे स्वतन्त्र सर्जनात्मक लेखनमें दत्तचित्त होना चाहते हैं तथा अपनी अन्य साहित्यिक योजनाओंको क्रियान्वित करना चाहते हैं। भारतीय ज्ञानपीठ-परिवारकी शुभकामनाएँ उनके साथ हैं।

—लक्ष्मीचन्द्र जैन

■

० ०

तीन वर्ष तथा चालीस अंकोंके बाद कलकत्ता तथा 'ज्ञानोदय' छोड़ते समय मैं भारतीय ज्ञानपीठ, सभी लेखक-लेखिकाओं तथा मित्रोंका आभारी हूँ कि उनका सहज सहयोग मुझे हमेशा मिलता रहा और इस स्नेहके कारण ही मैं स्वयंको अधिक सम्पन्न स्थितिमें देख रहा हूँ। ...

—रमेश बक्षी

१० दिसम्बरके पश्चात् :
२, बिड़ला फ़्लैट्स,
आर्यसमाज रोड, नयी दिल्ली–५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक भावबोध,
कला-संचेतना
और
नवीनताका
प्रतिनिधि

ज्ञा।नो।द।य

▪

शेष शताब्दी विशेषांक-२

▪

दिसम्बर १९६७
वर्ष : १६
अंक : ६
पूर्णाङ्क : २३४

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

▪

'शेष शताब्दी : एक कोलॉज'
मुखपृष्ठ : र० व०

अ।नु।क्र।म

सह-सामग्री :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित राष्ट्र के सर्वोच्च साहित्यिक पुरस्कार (एक लाख रुपये) द्वारा इस वर्ष सम्मानित :

गणदेवता !

● बंगलाके मूर्धन्य उपन्यासकार ताराशंकर वन्द्योपाध्यायका अद्वितीय और अद्भुत उपन्यास :

गणदेवता !!

● भारतीय जीवनकी परम्परागत सांस्कृतिक चेतनाका जीवन्त रेखांकन, भारतीय जन-जागरणके परिप्रेक्ष्यमें मानव-मनकी सरल-जटिल अभिव्यक्ति, जन-गणके देवत्व रूपकी प्रतिष्ठा करनेवाला मोहक शिल्पसे ग्रथित जन-जीवनका गद्यात्मक महाकाव्य-जैसा उपन्यास : विविध चरित्रोंके उदात्त-अनुदात्त क्रिया-कलापोंका हृदयग्राही विवरण :

गणदेवता !!!

● मूल बंगलामें गणदेवता 'चण्डीमण्डप' और 'पंचग्राम' शीर्षकोंके अन्तर्गत अलग-अलग खण्डोंमें प्रकाशित हुआ है, भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित हो रहे इस हिन्दी रूपान्तरमें दोनों पुस्तकें एक ही जिल्द 'गणदेवता'में समाहित हैं। मूल्य : १६ रुपये

प्राप्ति-स्थान :
भारतीय ज्ञानपीठ
३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग
दिल्ली–६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया काल और नये महाग्राम
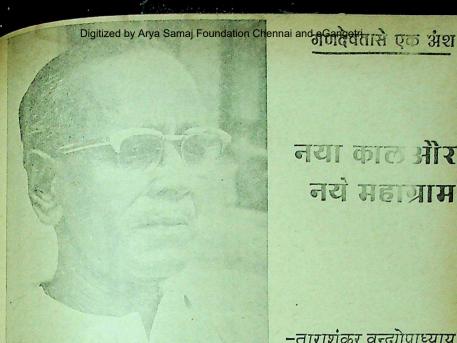
–ताराशंकर वन्द्योपाध्याय

चारेक दिन बाद। रथयात्रा थी उस दिन।....

पिछली रात नयी ऋतुकी बारिश हो गयी थी। आकाश फटकर जैसे पानी पड़ा हो। चारों ओर पानी-ही-पानी हो गया। ज़ोरोंकी उस बारिशमें किसान माथेपर चटाईकी छतरी-सी डाले काममें जुट पड़े थे। टूटी मेड़ोंका मुँह बन्द कर रहे थे, चूहोंके बिल बन्द कर रहे थे। पानीको रोककर रखना है। पाँवके नीचेकी मिट्टी मक्खन-सी मुलायम हो गयी थी। उससे सोंधी गन्ध आ रही थी। बदलीके दिनकी ज्योतिके पड़नेसे पानी-भरे खेत चक-चक कर रहे थे। बीच-बीचमें बीज-धानके पौधे घने होकर सब्ज़ ग़लीचे-से लग रहे थे। हवामें हिल रहे थे धानके पौधे, मानो अदृश्य लक्ष्मी देवी मेघ लोक-से उतरकर कोमल चरणों धरतीपर आकर विराजेंगी—इस भावनासे ग्रामीण किसानोंने आसन बिछा रखे हैं।

उसी बारिशमें यतीन घरसे बाहर रास्तेपर उतरा। उसके साथ दरोग़ाजी थे। दो-चार चौकीदारोंके सिरपर उसका असबाब-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्तर। देवू, जगन, हरेन—गाँवके सभी लोग उस नजारेमें खड़े थे। यतीनका अनुमान सत्य निकला। उसको यहाँसे जानेका आदेश आ गया। अब उसे सदरमें अधिकारियोंकी नज़रके सामने रखनेका प्रबन्ध किया गया। चौखट पकड़े मलिन मुँह खड़ी थी पद्म, आज उसके सिरपर घूँघट नहीं था। उसकी दोनों आँखोंसे आँसू बह रहे थे। उसके पास खड़े थे फतिंगा और गोबरा—सन्न और उदास!

यतीन पहले तो शंकित था। सोचता था, पद्म कुछ कर न बैठे। यही आशंका ज़्यादा थी कि मूर्छा रोगवाली पद्म मूर्छित हो जायेगी। लेकिन यतीनको इस आशंकासे निश्चिन्त रखकर पद्म सिर्फ़ रोयी। फतिंगा और गोबरा बड़े शान्त थे। पद्मने उससे कोई बात नहीं की।

फतिंगाने पूछा, "तुम चले जाओगे बाबू?"

"हाँ! देख, माँके पास तू अच्छी तरहसे रहना फतिंगा! हाँ? मैं चिट्ठी लिखकर खोज लूँगा।"

सिर हिलाकर हाँ करते हुए फतिंगाने पूछा, "तुम अब लौटकर नहीं आओगे बाबू?"

गरदन हिलाकर हँसनेकी कोशिशमें यतीनने एक लम्बा निःश्वास छोड़ा। उसके बाद पद्मसे बोला, "माँ, जब छूट जाऊँगा—छूटूँगा तो आखिर एक दिन ज़रूर ही—तो तुम्हारे पास आऊँगा।"

पद्म चुप ही रही।

यतीनने कहा, "सावधानीसे रहना! घरमें देखभाल करनेवाला कोई नहीं है।"

मन-ही-मन रोते हुए भी अबकी पद्मने हँसकर हाथ ऊपर उठाते हुए आसमानकी ओर देखा।

यतीनकी आँखोंसे आँसू आ गये। अपने ऊपर जब्त करके वह बोला, "जब जैसा हो, गुरुजीसे कहना, उनकी राय लेना।"

पद्मका चेहरा खिल उठा—"हाँ, गुरुजी तो हैं ही! फिर आँखें पोंछकर बोली, "तुम ठीकसे रहना!"

नलिन, वह चित्रकार लड़का भी, भीड़में चुपचाप खड़ा था। वह चुपचाप आगे बढ़ा और चुपचाप प्रणाम करके अपनी आदतके अनुसार चुपचाप ही चला गया। यतीन उसकी ओर देखकर मुसकराया।

हरेनने उसका हाथ पकड़कर कहा, "गुडबाइ ब्रदर!"

जगनने कहा, "रिलीज़ होनेपर हमें खबर मिले।"

सतीश बाउरीने आकर प्रणाम किया। मुड़ा हुआ एक मैला-सा काग़ज़ उसे देते हुए बेवक़ूफ़-सी हँसी हँसकर बोला, "यह गीत है हमारा। आप लिख लेना चाहते थे। मैंने बहुत दिन हुए लिखवा रखा था। दे नहीं पाया था।"

यतीनने काग़ज़को हिफ़ाज़तसे जेबमें रख लिया।

अजब है! दुर्गा नहीं आयी!

दरोग़ाने कहा, "अब चलिए यतीन बाबू!"

यतीन सख्त क़दमों आगे बढ़ा—"चलिए!"

देवू भी उसकी बग़ल-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ते चला। पीछे-पीछे जगन, हरेन, और भी बहुतेरे। रास्तेमें चण्डीमण्डपके किनारे श्रीहरि घोष खड़ा था। मजदूर चण्डीमण्डप-का छप्पर खोल रहे थे; वर्षासे गिर पड़ेगा। उसके बाद वह ठाकुर-बाड़ी बनवायेगा। श्रीहरिने भी मुसकराकर उसे नमस्कार किया।

गाँवसे बाहर वे बैहार-में पहुँच गये। यतीनने कहा, "अब आप लोग लौट जायें।"

सब लौट गये, केवल देबूने कहा, "चलिए मैं बाँध तक चलूँगा। वहाँ-से मैं महाग्राम जाऊँगा—न्यायरत्नके यहाँ। उनके यहाँ रथयात्रा है।"

रास्तेमें सूने बैहारके पोखरेके किनारे एक पेड़-के नीचे खड़ी थी दुर्गा। उसे किसीने नहीं देखा। लेकिन वह उनकी ओर ताकती हुई जैसी खड़ी थी, वैसी ही खड़ी रही। सभी चुपचाप जा रहे थे। दुःखसे सबके शब्द खो गये हों मानो। दरोगाजी

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा : श्री ताराशंकर वन्द्योपाध्याय-का अभिनन्दन

(ज्ञानपीठ समाचार)

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित संविधान अनुसूचित (पहले १४ और अब) १५ भारतीय भाषाओंसे चुनी गयी सर्वोत्कृष्ट सृजनात्मक कृतिपर प्रति वर्ष दिये जानेवाले साहित्यिक पुरस्कार-के लिए १९२५ से १९५९ के बीच प्रकाशित साहित्यमें-से सुप्रसिद्ध बंगला कथाकार श्री ताराशंकर वन्द्योपाध्यायका उपन्यास 'गणदेवता' (चण्डीमण्डप तथा पंचग्राम) एक लाख रुपये राशि-के पुरस्कारके लिए चुना गया था। विगत ११ मईको नयी दिल्लीमें प्रवर परिषद्की बैठकमें सर्वसम्मतिसे ताराबाबूके उपन्यास 'गणदेवता' को १९६६ के ज्ञानपीठ-पुरस्कारका सम्मान देनेकी घोषणा की गयी थी (देखिए ज्ञानोदय–जून १९६७) अब उन्हें पुरस्कार-राशि, वाग्देवी प्रतिमा तथा प्रशस्ति-पत्रकी भटसे अभिनन्दित करनेके लिए नयी दिल्लीके मावलंकर हॉलमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५, १६ और १७ दिसम्बरको भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा एक समारोह आयोजित किया गया है। पिछले वर्ष यही पुरस्कार-समारोह १९६५ के ज्ञानपीठ-पुरस्कार विजेता मलयालम कवि श्री जी० शंकर कुरुपके अभिनन्दनार्थ १९ नवम्बरको नयी दिल्लीमें आयोजित किया गया था। इस वर्ष समारोहके साथ 'गणदेवता' का नाट्य-रूपान्तर श्री ओम् शिवपुरीके निर्देशनमें दिल्लीके प्रसिद्ध नाट्य-दल 'देशान्तर'-द्वारा प्रदर्शित किया जायेगा। समारोहके साथ ही तीन सत्रोंमें एक विचार-गोष्ठीका आयोजन भी किया गया है जिसमें प्रमुख साहित्यकार तथा विचारक भाग लेंगे। विषय है—'सर्जनात्मक साहित्यके सन्दर्भमें परिवेश और मूल्योंका प्रश्न।' इसी अवसरपर पुरस्कार-सम्मानित उपन्यास 'गणदेवता' (दोनों भाग एक ही ज़िल्दमें) का हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित किया जा रहा है। जिसकी प्रतियाँ समारोह-स्थलपर लेखकके हस्ताक्षर सहित विक्रयके लिए उपलब्ध होंगी। इस अवसरपर ज्ञानपीठ-द्वारा हिन्दी तथा अँगरेज़ीमें स्मारिका भी प्रकाशित की जा रही है जिसमें ताराबाबूका जीवन-वृत्त तथा ज्ञानपीठकी पुरस्कार-समितियोंका परिचय भी रहेगा।

श्री ताराशंकर वन्द्योपाध्यायका जन्म २५ जुलाई १८९८ को लाभपुर, ज़िला—बीरभूम, पश्चिम बंगालके एक ज़मींदार-परिवारमें हुआ था। आप स्वर्गीय हरिदास वन्द्योपाध्यायके ज्येष्ठ पुत्र हैं। १९२८ से ताराबाबूने कहानियाँ लिखना शुरू किया था। पहली कहानी 'कल्लोल'में प्रकाशित हुई थी। अबतक ताराबाबू १०० से अधिक पुस्तकें लिख चुके हैं जिनमें-से ४० से अधिक उपन्यास हैं। आपको १९४० में 'शरतचन्द्र-स्मृति-पुरस्कार' १९५५ में 'रवीन्द्र'-पुरस्कार तथा १९५६ में 'साहित्य अकादमी-पुरस्कार' प्राप्त हो चुका है। ज्ञानपीठ-पुरस्कार ताराबाबूको प्राप्त सर्वोच्च सम्मान है तथा उनके लेखनका उपयुक्त अभिनन्दन भी।

० ० ०

उक्त समारोहका विवरण 'ज्ञानोदय' के जनवरी अंकमें प्रकाशित किया जायेगा।

तक चुप थे। सबकी पीड़ाने मानो उनके हृदय-को छू लिया था!

यतीनको बहुत-सारी बातें याद आ रही थीं, बहुत-बहुत स्मृतियाँ! एक-ब-एक बैहारकी ओर निहारकर उसमें भावान्तर आ गया। यह दूर तक फैला हुआ बैहार एक दिन हरे पौधोंसे भर जायेगा—धीरे-धीरे हेमन्तके सुनहले रंगसे चमक उठेगा। सोनेकी फ़सलसे किसानोंके घर भर जायेंगे।

दूसरे ही क्षण जीमें आया—फिर? वह धान जायेगा कहाँ?—उसे अनिरुद्धकी गिरस्तीकी छवि याद आयी। और भी बहुतोंके घरकी याद आयी। टूटा-फूटा घर, सूना आँगन, अभावसे पीड़ित मुखड़े, महामारी, मलेरिया, क़र्ज़का बोझ, दुबले अधनंगे अबोध शिशुओंका दल। फतिंगा और गोबरा—बंगालके भावी पुरुषोंके नमूने!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और फिर याद आया— प्रज्ञा उसके माथेपर अशोक-षष्ठीका टीका दे रही है ! उसे पढ़ी हुई सांख्यिकी-की बात सहसा बड़ी तुच्छ लगी। अधूरा सत्य—महज़ वस्तुगत हिसाब। लेकिन यह दुनिया मात्र हिसाबसे सँभलनेकी चीज़ नहीं है। यह बात उससे एक दिन न्यायरत्नने कही थी। उनकी याद आ गयी। सिर झुकाकर बार-बार मन-ही-मन उन्हें प्रणाम करते हुए उसने स्वीकारा कि संसार और संसारका कोई भी आदमी हिसाबके दायरेमें बंधा नहीं है। न्यायरत्न हिसाबसे परे हैं—परि-मापसे अलग। और उसके पासका यह आदमी—देबू गुरुजी ? अधपढ़ा खेतिहरका लड़का, हृदय-की उदारतासे अपनी क़ीमतके अंकोंको पार कर गया है—कितना, कहाँतक—इसका लेखा यतीन नहीं लगा सका है। और पार किया कैसे यह भी अंक-शास्त्रका एक अतिरिक्त रहस्य है।

हिसाबकी इसी भूलके फेरेसे तो बची हुई है यह धरती। एक बार एक धूमकेतुकी टक्करसे इसके चूर-चूर हो जानेकी बात थी। बड़े-बड़े हिसाब लगाकर ही उस परिणामकी घोषणा की गयी थी। हिसाबमें ग़लती नहीं हुई थी, लेकिन जाने किस रहस्य-मयके इशारेसे ग़लतीसे धरती उस धूमकेतुके बग़लसे बचकर निकल गयी।

नहीं, तो, उस समाज-शृंखलाका तो सारा कुछ बिखर गया है। गाँवोंकी वह सनातन व्यवस्था—नाई, लुहार, कुम्हार, ताँती—आज अपना-अपना काम छोड़ चुके हैं, अपने पेशेसे परे हैं। एक गाँवसे पाँच गाँवका बन्धन, पंचग्रामसे सप्तग्राम, नवग्राम, दस ग्राम, बीस ग्राम। शत, सहस्र ग्रामके बन्धनकी गाँठें बिखर गयी हैं।

महाग्रामका 'महा' विशेषण बिगड़कर महूमें बदल गया है। न केवल अर्थमें बल्कि वास्तविक परिणतिमें भी उसकी महा-महिमा खो चुकी है। अठारह टोलेका गाँव आज कुछ घरोंकी बस्ती बन गया है। बूढ़े न्यायरत्न एकान्तमें महाप्रयाणके दिन गिनते जा रहे हैं।

नदीके उस पार नया काल नये महाग्रामकी रचना कर रहा है। नये कालकी उस रचनामें जो रूप निखरेगा, उसे यतीनने अपनी किताबोंमें पढ़ा है—कलकत्तेमें उसने अपने जन्म-स्थानमें प्रत्यक्ष देखा है। उसकी याद आते ही सिहर उठना पड़ता है, लगता है कि सारी दुनियाकी रोशनी गुल हो जायेगी, हवाका प्रवाह थम जायेगा, सारी सृष्टि द्रष्टा-द्वारा रौंदी हुई नारी-जैसी सारहीन कंगालिन बन जायेगी ! जर्जर सदय, कलेजेमें हाहाकार, बाहर चमक-दमक, होठोंपर बनावटी हँसी ! अभागिन सृष्टि ! साख्यिकीके नियमसे उसकी परिणति—क्षय रोगीका तरह तिल-तिल करके मृत्यु ! लेकिन तो भी आज वह हताश नहीं। सारी सृष्टिमें मनुष्य अंकशास्त्रसे अलग रहस्य है। धरतीके समुद्र-तटकी बालुकामें एक कणके समान ब्रह्माण्डमें व्याप्तिके भीतर यह पृथ्वी, इस पृथ्वीमें जो जीवन-रहस्य है, वह रहस्य ब्रह्माण्डके ग्रह-उपग्रहके रहस्यका अतिक्रम है। एक क्षण जीवन प्रकृतिकी प्रतिकूलता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्युकी अमोघ शक्ति, सब कुछको पार करके सौ, हज़ार, लाख करोड़ों-करोड़ धाराओंसे युग-युग उच्छ्वसित होकर महा-प्रवाह ही बहता जा रहा है। वह सारी बाधाओंको पार करेगा। आनन्दमयी प्राणवान् यह सृष्टि अपार है उसकी शक्ति—अपने जीवन-विकासकी समस्त विरोधी शक्तियों-को वह नष्ट करेगी। इसमें उसे कोई सन्देह नहीं। भारतका जीवन-प्रवाह सारे बाधा-विघ्नोंको ठेलता हुआ फिर तेज़ीसे दौड़ेगा।

न्यायरत्न जीर्ण हैं। उनका युग बीत चुका है। वे नहीं रहेंगे। लेकिन उनकी याद, उनका आदर्श नया जन्म ग्रहण करेगा। यतीन हँसा। न्यायरत्नके पोते विश्वनाथकी याद आ गयी। वह आयेगा। देवू घोष, गाँवोंकी टूटती हुई श्रृंखलाके युगमें टूटने-बननेके क्रममें श्रीहरि पाल कंकनाके बाबू, थानेके जमादार दरोग़ाकी लाल आँखोंकी परवाह न करके नये रूपमें जाग खड़ा हुआ है—महामारीके हमलेको उसने रोका है। देवूको छातीसे छाती लगाकर गले मिलते हुए उसने साफ़ महसूस किया कि उसके हृदयमें समयकी वाणी उमड़ रही है। सारी बाधा, सारे विघ्नको दूर करके जीवनकी सार्थकताके अटूट अदम्य आग्रहकी वाणी!

उत्तेजनासे विप्लववादी यतीनका शरीर थर-थर कर उठा। यह चिन्ता उसके विप्लवकी थी। आनन्दसे उसकी आँखमें दमक उठी एक अनोखी जोत। उसे यही खुशी थी, यही सन्तोष था कि उसने अपना कर्तव्य किया। अपने बन्दी-जीवनमें इस बस्तीमें देवूके जागरणमें उसने मदद की। क़ैद उसके अपने जीवनके जागरण, भाव-प्लावनमें बाधा नहीं दे सकी। नये युगके घषर्णकी प्रचेष्टा इसी प्रकारसे बेकार होगी—मनुष्य जियेगा। भय नहीं! भय नहीं!

बाँधपर खड़े होकर देवूने कहा, "तो अब विदा यतीन बाबू! नमस्कार।"

यतीनने कहा, "नमस्कार देवू बाबू! विदा!"—उसने देवूके दोनों हाथ अपने हाथोंमें लेकर उसके मुँहकी ओर देखा। सहसा बोल उठा:

"उदयेर पथे सुनि कार वाणी—भय नाइ
ओरे भय नाइ।"
निःशेष प्राण जे करिवे दान क्षय नाइ
तार क्षय नाइ॥"

उसके बाद-अचानक मुँह फेरकर वह तेज़ीसे चलने लगा। देवू उसकी ओर खड़ा देखता रह गया। उसकी आँखोंसे आंसू बहने लगे। यह निरा सूना अकेला जीवन—बिलू और मुन्ने चले गये। जगन, हरेन आ-आकर अब वैसा हल्ला नहीं करते, सारे गांवसे वह कटता-सा जा रहा है! आज यतीन बाबू भी चल दिये! कैसे बीतेंगे दिन उसके। किसे लेकर वह ज़िन्दा रहेगा—सहसा उसे न्याय-रत्नकी कहानी याद आ गयी। कहां है, वह शालग्राम कहाँ है उसका? आसमानकी ओर ऊपर ताककर उसने खोये हुएके समान हाथ बढ़ाया—भगवान्!

टाला पार्क, कलकत्ता-२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीसवीं शताब्दी
विगत और अनागत

लक्ष्मीचन्द्र जैन

■

आज जो ३० वर्षका युवक है और बम्बई-जैसे किसी महानगरमें रहकर नाइलोनका सूट पहनकर एलेक्ट्रिक ट्रेन-द्वारा अपने तेरह-मंज़िले ऑफ़िसमें काम करने जाता है, लिफ़्टसे चढ़ता-उतरता है, एयरकण्डीशण्ड रेस्त्राँमें कोना-कॉफ़ी पीता है, सिनेमा-स्क्रीनपर थ्री-डाइमेन्शनवाली फ़िल्म देखता है, तत्काल होनेवाली घुड़दौड़ घर बैठे-बैठे टेलीविज़नपर देखता है और यदि साधन-सम्पन्न हुआ तो सुपरसौनिक जेट विमान-द्वारा यात्रा करके एक ही दिनमें ब्रेक-फ़ास्ट एक महाद्वीपमें, लंच दूसरेमें और डिनर तीसरे महाद्वीपमें लेता है.... उसे क्या सामान्य तौरपर यह कल्पना होती है, या यह ध्यान रहता है कि जब वह उत्पन्न हुआ था तब भारतमें इनमें-से शायद एक भी सुविधा सुलभ नहीं थी ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस शताब्दीके पिछले छह दशकोंपर दृष्टिपात करते हैं तो लगता है कि इसने किसी जंगलमें जन्म लिया होगा। अभी सन् १९०३ ही की तो बात है कि राइट ब्रदर्सने हवाई जहाजको एक विश्वसनीय रूप दिया था और १२ सेकेण्डकी उड़ानका रिकार्ड क़ायम किया था। सन् १९२० में हवाई उड़ानका रिकार्ड कुल जमा १७८ मील फ़ी-घण्टा था, जिसने संसारको चकित कर दिया था.... आज तो, ख़ैर, स्पेस-रॉकेटोंका ज़माना है और ५ हज़ार मील फ़ी-घण्टाकी उड़ान सुनकर बुद्धि चकराती नहीं। वैज्ञानिक और प्राविधिक प्रगतिका हाल यह है कि सन् १९५० में शब्दकी गतिका अतिक्रमण करनेवाले हवाई जहाज नियमित उड़ानमें आये और १० वर्ष भी न बीतने पाये कि रूसने २४ अक्तूबर १९५७ को इस शताब्दीका ही नहीं, समूचे मानव-इतिहासका आश्चर्यजनक करिश्मा कर दिखाया कि आकाशमें कृत्रिम उपग्रह छोड़ दिया और पृथ्वीके गुरुत्वाकर्षणसे मुक्त होकर अनन्त अन्तरिक्षकी महायात्राओंकी सम्भावनाओंको साकार कर दिया और, अगले दशक बीतते-न-बीतते अन्तरिक्ष यात्राके अनेक आश्चर्यजनक रिकार्ड कायम हो गये—१९६१ में यूरी-गागरिनकी अन्तरिक्ष यात्रा, १९६२ में दो व्यक्तियोंकी अन्तरिक्ष भेंट, १९६३ में एक नर और एक नारीका मिलन—विश्वका सर्वाधिक रोमांचक हनीमून—वैलेरी और तेरेश्कोवा—१९६५में रूसी यान लूनाका चन्द्रमाकी धराका स्पर्श, १९६६में एक और अमरीकी रॉकेट-द्वारा बाह्य अन्तरिक्षका टेलीविज़न-चित्र और दूसरी ओर रूसी यानका चन्द्रमापर आवास और अब रूसने लूना ९ के द्वारा चाँदकी धरापर झण्डा गाड़ देनेके बाद १८ अक्टूबर १९६७ को आकाश-यान वीनस ४ को या कमसे कम उसके यन्त्र-वाही पैराशूटको शुक्र ग्रहपर उतार दिया—पृथ्वीसे ८ करोड़ किलोमीटर दूर।

तो, यह है बीसवीं शताब्दीका वयस्क रूप; बीसवीं शताब्दी जो अपने कैशोर्य तक घुटनोंके बल चली और प्रौढ़ होते ही अन्तरिक्षमें उड़ान भरने लगी। यह घुटनोंके बल चलना नहीं तो और क्या कि १९०५से पहले ग्रामोफ़ोनसे परिचय नहीं था, और १९११ से पहले मोटर कार एक पेटेण्टेड अजूबा थी। और जो वयस्क हुई तो ऐसी कि दो-दो प्रलयंकर महायुद्ध ठान लिये, हिरोशिमा और नागासाकीको एटम बमसे पलक झपकते भस्म कर दिया; हाइड्रोजन बम बना लिया; प्रक्षेपास्त्रोंसे आकाशको आकुल कर दिया, दूरमार रॉकेटोंको इस प्रकार मोर्चेपर रख दिया कि ज़मीनका कोई चप्पा ऐसा न बचे जिसे ४-५ मिनिटमें ही बमकी मारसे स्वाहा न किया जा सके। और, अब जॉन्सन और कोसीगिन रातको सोते हैं तो एक विशेष टेलीफ़ोन—नितान्त विशेष—पास रखा रहता है जिसका उपयोग किसी एक विशेष क्षणके लिए निश्चित है—जब वायुसेनाका सर्वोच्च शासक-अधिकारी घण्टी बजाकर कहे कि दुश्मनने प्रक्षेपास्त्र फेंका है, हम एटम या हाइड्रोजन बम छोड़ने-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की अनुमति चाहते हैं—और केवल एक शब्दके उत्तरपर संसारका अस्तित्व और अनस्तित्व टिका होगा—'ना' या 'हाँ'।

बीसवीं शताब्दीका वास्तविक और विषम संकट यह है कि एक क्षणमें सम्पूर्ण संहारकी उक्त सम्भावनाके मुक़ाबलेमें है संख्यातीत रूपसे बढ़ती हुई समग्र मानव जाति जिसकी आयुको लम्बीसे लम्बी अवधि तक दीर्घायित करनेका प्रयत्न चल रहा है विश्वके सभी शासन-तन्त्रोंका, समाज-सेवी संस्थाओंका, प्रत्येक व्यक्तिका अपना-अपना। हम सबको बीसवीं शताब्दीका आशीर्वाद है कि "वत्स, तुम दीर्घकाल तक जीवित रहो कि जल्दी मर सको; तुम दीर्घकाल तक स्वस्थ रहो कि अपने सहजात-समाजको जल्दी मार सको···" इस अभिशप्त आशीर्वादका आधार? आधार यह कि प्रत्येक प्रत्यूष एक लाख नवजात शिशुओंका मुख देखती है। संसारकी वर्तमान जनसंख्या पौने तीन अरब—२, ७५०, ०००, ०००—से अधिक है। प्रत्येक ४५ वर्षमें जनसंख्या दुगनी हो जाती है। इस हिसाबसे बीसवीं शताब्दी समाप्त होते-होते संसारकी आबादी ६ अरब हो जायेगी। अभी संसारमें सर्वाधिक आबादी चीनकी है, ७१ करोड़; भारतकी है, लगभग ५० करोड़। शताब्दीके अन्तमें जो पहला दशक आयेगा—अर्थात् सन् २०१२, उसमें जन-संख्याका गणित एक विचित्र चमत्कार दिखायेगा—भारतकी आबादी तिगुनी हो जायेगी, १५० करोड़, चीनसे अधिक अर्थात् भारत संसारमें सबसे बड़ी आबादी-वाला देश! जय हे भारत-भाग्य-विधाता! यह इसलिए कि जहाँ चीनकी आबादी प्रति-वर्ष ०·५ प्रतिशतके हिसाबसे बढ़ती है, वहाँ भारतकी २·४ प्रतिशतसे। जनसंख्याका दैत्य ऐसा विकट मांसभक्षी है कि वह भारतको ही नहीं, समूचे विश्वको खा जायेगा; यहाँतक कि मानव जातिके इतिहासको निगल जायेगा। हालत यह है कि अगले हज़ार वर्षतक भी मानव जाति जीवित रह सकेगी या नहीं, इसका भी भरोसा नहीं; क्योंकि ७०० वर्षोंमें पृथ्वीके पाँच करोड़ बीस लाख वर्गमीलपर जब उस समयकी जन-संख्या फैलेगी तो एक व्यक्तिको केवल १ वर्गफ़ुट जगह मिलेगी। अब यदि गणितके इस तर्कका उत्तर यह दिया जाये कि यह कल्पना बड़ी अमानुषिक है कि यह विज्ञानके प्रत्यक्ष चमत्कारोंको नकारती है; कि अन्तरिक्षकी विजयका अभिप्राय ही यह है कि मानव नये लोकमें बसे; कि भविष्यका एक-एक भवन इतना ऊपर उठता चला जायेगा कि एक-एक नगर बसा होगा; कि समुद्रके तलपर भी नगर बसेंगे; कि आकाशमें चलते-फिरते भवनोंके यान दौड़ेंगे···तो इसका प्रत्युत्तर कुछ नहीं हो सकेगा क्योंकि जन-संख्याके गणितकी कल्पना अपनी जगह ठीक है और विज्ञानके चमत्कारोंकी सम्भावना अपनी जगह।

लेकिन प्रश्न उठता है, अभी इस शेष शताब्दीका और इस शताब्दीके अगले ३३ वर्षोंमें जन-संख्याके दबावको सहनेवाले उस तीसवर्षीय युवकका, जिसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदाहरण लेकर मैंने यह लेख शुरू किया। उस युवकके सामने स्थिति यह है कि जन-संख्याका विस्तार ही नहीं हो रहा है, यह विस्तार शहरोंकी ओर बढ़ रहा है और खेतीको छोड़कर उद्योगोंकी ओर बढ़नेवाले लोग गाँवोंको भी शहर बनाते चले जा रहे हैं। यह प्रक्रिया सारे विश्वमें हो रही है। शताब्दीके प्रारम्भमें खेतीको जीविकाका साधन बनानेवाले लोगोंकी जो संख्या ३८ प्रतिशत थी, आज वह मात्र ९ प्रतिशत रह गयी है। शहरोंमें आकर विपन्न आदमी पेट ज़रूर भर लेता है, लेकिन उसके जीवनकी जो दुर्गति होती है वह भयावह है। कलकत्ते-जैसे शहरमें आज १५ प्रतिशत व्यक्ति दुकानों और गद्दियोंमें रहते हैं, ३० प्रतिशत लोगोंके पास एक-एक कमरा है जिनमें दो-दो परिवार रहते हैं, १७ प्रतिशत लोग बिना किसी ठौर-ठिकानेके जहाँ-तहाँ पड़ रहते हैं। लाखों लोग ऐसे हैं जो टाँग फैलाकर सोने लायक़ जगहके लिए दस रुपये मासिक किराया देते हैं, और पाँव सिकोड़कर सोनेके लिए पाँच रुपये मासिक देते हैं। रहने-बसनेके साथकी दूसरी समस्याएँ भी कम भयंकर नहीं। शौचालयोंकी दमघोट बदबू, खुली नालियोंमें बहता हुआ मल, पानीकी कमी, नहाने और कपड़े सुखानेके लिए स्थानका अभाव। ऊपर-से, एक मोहल्लेमें एक ही समय हज़ारों चूल्हे जलनेका धुआँ, आकाशसे उतरकर ज़मीन-पर फैल-फैलकर साँस रुद्ध करनेवाला मिलों और फैक्टरियोंका धुआँ और उसमें मिला हुआ लाखों आदमियों और जानवरोंका निःश्वास····ऊपरसे आदमियों, ट्रामों, बसों, मोटरोंका शोर,···आश्चर्य है कि आदमी रह कैसे रहा है? यों, यह रहना भी क्या कि हर दस आदमियोंमें एकको दमा, पाँच-को खाँसी या धसका, अनेकोंको टी॰ बी॰, या जिगर या तिल्ली या कैन्सर····

बढ़ी हुई और बढ़ती हुई आबादी तथा औद्योगीकरणके और भी फल प्रत्यक्ष हैं—हर आदमीकी निगाह दूसरेकी जेबपर, बड़ी सभ्य और वैज्ञानिक छीना-झपटीके लिए···· आप सरकारी दफ़्तरोंमें काम करते हैं तो आप जुड़े ही हैं किसी-न-किसी रूपमें कर-वसूलीके धन्धेसे—लाइसेंस फ़ीस, जल कर, ज़मीन-कर, हाउस-टैक्स, चुंगी, बिक्री-कर, एक्साइज़, इन्कम-टैक्स। पटी पड़ी हैं दीवारें पोस्टरोंसे, सिनेमाके पोस्टर, नाटक और नृत्यकार्य-क्रमोंके पोस्टर, आम जलसोंके पोस्टर कि अमुक राजनैतिक पार्टी या सामाजिक संस्था या धार्मिक दल आपसे चन्दा चाहता है या वोट। अखबारोंके विज्ञापन—तरह-तरहकी चीज़ें उपयोगकी और उपभोगकी। नयेसे नये डिज़ाइन, नयेसे नये शृंगार-प्रसाधन, नया टूथपेस्ट और नयी सिगरेट, फ़ाउन्डेशन क्रीम, और ब्लीचिंग क्रीम, रूज़ और लिपस्टिक, शैम्पू और बाथ-सॉल्ट, नेल पॉलिश और आइ-ब्रो पेंसिल···मतलब यह कि बीसवीं शताब्दी आधुनिक औद्योगिक सभ्यताके मूलभूत सिद्धान्तपर अमल करनेमें एक्सपर्ट हो गयी है—ज़रूरतें बढ़ाओ, माँग पैदा करो, माँग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरी करो और नयी-नयी माँगें पैदा करो…

उद्योगोंपर आश्रित शहरी सभ्यताका एक रूप यह भी है कि खाने-पीने, रहन-सहन और पोशाकके मामलेमें समानता आयी है। भारतका उदाहरण ही लें। हर रेस्त्राँमें लगा-बँधा सामान—चाय और टोस्ट और आइसक्रीम आदि-आदि। बंगालका रसगुल्ला और दक्षिणका इडली-दोसा हर शहरमें प्राप्त है। हर व्यक्ति मजदूर, कारीगर, बाबू और ड्राइवर रेडीमेड ड्रेस पहनता है—पतलून और बुशशर्ट और फुल ओवर, अमीर और ग़रीबका अन्तर अब फ़ैशनमें नहीं, केवल इस बातमें है कि रेस्त्राँमें कौन कितनी डिशें ऑर्डर देता है, कितने मँहगे या सस्ते चाय-घरमें जाता है या सूती पहनता है या टेरीलीन…

बीसवीं शताब्दीके शेष तैंतीस वर्षोंमें विज्ञान निश्चित रूपसे और भी प्रगति करेगा, टेक्नॉलॉजी (प्राविधिक विद्या) का विस्तार होगा और इस सब प्रगति तथा विस्तारके केन्द्रमें मानव ही होगा। मानवोंमें जो शासक हैं उनका एक लक्ष्य है और जो शासित हैं उनका दूसरा। शासक चाहता है प्रभुत्व और अपने अहंकारकी तृप्ति, शासित चाहता है भोजन, कपड़ा, सुख-सुविधा और शान्ति। लेकिन आज शासित—उसे जनता ही कहें—को पता है कि शासक दम्भ कितना ही करे, आखिर है वह जनताके हाथका खिलौना। ब्रिटेनमें चर्चिल और भारतमें, काँग्रेस-किंग्स। दूसरी ओर शक्तिकी महत्ताके क्षेत्रमें उतरे हैं नये नायक—अन्तरिक्ष-विज्ञान और हाइड्रोजन-बमके शास्ता वैज्ञानिक तथा बड़े-बड़े कारखानोंके उत्पादनका संचालन करनेवाले विशेषज्ञ—'टेक्नॉक्रैट'। इन सबके आचरण और चिन्तनकी क्रिया-प्रतिक्रियासे ही संचालित होगी राजनीति और समाज-व्यवस्था।

बाह्य अन्तरिक्षका ज्ञान मनुष्यको मद नहीं विनम्रता देगा कि जिस एक पृथ्वीके सन्दर्भमें हम विश्वके भूगोल-खगोलकी कल्पना करके करोड़ों मीलोंमें व्याप्त महाकाश और अन्तरिक्षकी कल्पना करते हैं उनसे करोड़ों गुना बड़े कई करोड़ भूगोल-खगोल ब्रह्माण्डके शून्यमें चक्कर काट रहे हैं। तब आदमीका अहंकार…किस बातका ?

- शेष शताब्दीमें विज्ञानका मुख्य लक्ष्य होगा अन्तरिक्ष-यात्राके कार्यक्रमको आगे बढ़ाकर मानवको चाँदपर ले जानेका प्रयत्न और शुक्रग्रहसे आगेके ग्रहों तक यान पहुँचानेका प्रयत्न और सम्भव हो तो मनुष्यको उनपर उतारनेकी चेष्टा।
- पृथ्वीकी जन-संख्याको क़ाबूमें करनेके लिए राष्ट्रसंघ तथा विश्व संस्थानोंकी ओरसे सामूहिक प्रयास;
- संसारकी आबादीको भरपेट भोजन देनेकी दिशामें वैज्ञानिक खेती और बड़े-बड़े फ़ॉर्मोंका संचालन। रासायनिक भोजनकी टिकिया;
- एटमकी शक्तिसे ऊर्जा या बिजलीका व्यापक प्रयोग;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- सूर्यकी किरणोंसे चलनेवाले बिजली-घरों के निर्माणका प्रयत्न;
- समुद्रके अन्दर मानव-निवासके योग्य भवनोंका निर्माण;
- स्वचालित यन्त्रोंका उपयोग जो घर-गृहस्थीका सब कार्य स्वयं निमटा दें;
- व्यक्तिगत हेलीकॉप्टर और व्यक्तिगत प्लेटफ़ॉर्म;
- कृत्रिम चाँद जो रातमें उजाला कर सकें, कृत्रिम बरसात जो खेतोंको पानी दे सके;
- प्रयोगशालामें कृत्रिम गर्भाधान-द्वारा प्राणोंके निर्माणका प्रयोग;
- मनुष्यके मस्तिष्क, विचारों, भावनाओंको जाननेके लिए एलेक्ट्रोनिक्सका प्रयोग। नैतिकताके प्रश्न पुरानी मान्यताओंसे मुक्त होंगे—नयी नैतिक दृष्टिका उदय होना, वह अपने-आपको स्थापित करेगी;
- इच्छित नींद और मनोवांछित स्वप्नों की व्यवस्था;
- विज्ञान धर्मकी ओर बढ़ेगा और धर्म विज्ञानकी ओर। मनोविज्ञान चिकित्सा-विज्ञानका सहायक होगा।
- जुकाम और कैन्सरकी अचूक औषधिकी खोज…

अध्येताओंका मत है कि सम्भावना यही है कि राजनैतिक दृष्टिसे अमेरिका और रूस ही सर्वोपरि सबल तथा सम्पन्न राष्ट्र रहेंगे। जापानका पद ऊँचा उठेगा। अफ्रीका-के राष्ट्र अधिक जाग्रत होंगे, यद्यपि पारस्परिक कलह और प्रतिद्वन्द्विता भी चलेगी। कमसे कम पचास देश अणुबम क्लबके सदस्य होंगे। पिछड़े देशोंकी स्थिति सुधरेगी किन्तु आर्थिक दृष्टिसे सम्पन्न देश और अधिक समृद्ध हो जायेंगे। पिछड़े देशोंके सामने चुनौतियाँ-ही-चुनौतियाँ हैं।

■■

भारतीय ज्ञानपीठ,
९ अलीपुर पार्क प्लेस
कलकत्ता-२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको और आपके परिवारको
बौद्धिक समृद्धिके लिए अपनी
शुभकामनाओं सहित :

भारतीय ज्ञानपीठ

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन, राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र - प्रतिष्ठाकी साधिका तथा भारतीय भाषाओंकी सर्वश्रेष्ठ सर्जनात्मक साहित्यिक कृतिपर प्रतिवर्ष एक लाख रुपये पुरस्कार-योजना प्रवर्तिका विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ
कलकत्ता ० दिल्ली ० वाराणसी

कृपया
६ पैसे का
डाक-टिकिट
लगायें

विक्रय-व्यवस्थापक
भारतीय ज्ञानपीठ,
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग,
दरियागंज, दिल्ली-६ ।
DELHI-6 (INDIA)

कृपया
यहां
टिकिट
लगाइए

व्यवस्थापक,
मासिक 'ज्ञानोदय',
९, अलीपुर पार्क प्लेस,
कलकत्ता-२७
CALCUTTA-27

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

भारतीय ज्ञानपीठके नवीनतम

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा अन्य महत्त्वपूर्ण प्रकाशनोंमें-से अपनी रुचि की पुस्तकें संलग्न कार्ड-द्वारा मँगानेमें आपको सुविधा होगी—

भारतीय ज्ञानपीठ
प्रकाशन ■ ■

नाम ....

पता ....

....

कृपया निम्नांकित पुस्तकें ऊपर लिखे पते पर भेज दें :

० वी० पी० द्वारा (अथवा)

० पुस्तकोंका मूल्य .... मनीऑर्डर-द्वारा भेजा गया है।*

पुस्तक-नाम

१.
२.
३.
४.
५.
६.
७.
८.
९.
१०.

*वी० पी० अथवा मनीऑर्डर—दोनोंमें-से जिस आधारपर पुस्तकें मँगाना हो, कृपया उसे ✓ चिह्नित कर दें।

निम्नांकित नम्बर तथा दिनांकके अनुसार मनीऑर्डरसे १५.००/चेकसे बैंक-कमीशन सहित १६.०० भेज दिये हैं, कृपया मुझे ज्ञानोदयके 'शेष शताब्दी विशेषांक' नवम्बर १९६७ से ग्राहक बना लीजिए तथा विशेष उपहार-योजनानुसार निम्नलिखित सामग्री उपर्युक्त शुल्कमें भेजिए—

ज्ञानोदय ■

१. 'शेष शताब्दी विशेषांक' ३.००

२. दिसम्बर १९६७ से अक्तूबर १९६८ तकके ११ अंक १६.५०

३. महानगर विशेषांक १–२ (अथवा कोई पुराना उपलब्ध विशेषांक) ४.००

२३.५०

नाम ....

पता ....

....

मनीआर्डर-रसीद/चेक-नम्बर .... दिनांक ....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ आकाशके रहस्य ॥ यह उस दिनकी बात है, जब 'आकाश-यात्राएँ कल्पनाकी दुनियासे निकलकर सम्भावना-जगत्में पहुँच चुकी हैं'—इस वाक्यके सत्त्व तक पहुँचनेमें हमारी शताब्दीने बहुत-कुछ सहयोग दिया है। उसी यात्राकी एक यात्रा..........

ब्रह्माण्डका स्वरूप

■

रमेश वर्मा / सितम्बरकी एक शाम। सूरज डूब चुका है। एक विशालकाय रॉकेट क्षेपण-गद्दीपर खड़ा है। तेज़ रोशनीमें नहाया हुआ, स्थिर। सारी तैयारियाँ हो चुकी हैं। घण्टोंसे 'काउण्ट डाउन' जारी है। एक-एक घण्टा, एक-एक मिनिट करके समय बीत चुका है। अब चन्द सेकण्ड रह गये हैं। वक़्त लगातार बीत रहा है लेकिन ठहर गया-सा लगता है। पासकी इमारतमें यन्त्रोंके सामने अनेक यान्त्रिक बैठे हैं। खामोश। कहने-करनेको मानो कुछ बाक़ी नहीं रह गया है।

तब—"ज़ीरो !"

रॉकेट सहसा प्राणवान् हो उठा है। भीषण गर्जन। शक्तिशाली इंजन चालू हो उठता है। सुनहरी लपटोंका अम्बार निकल रहा है। गर्जन बढ़ता जा रहा है। रॉकेट हिलता है और धीरे-धीरे उठने लगता है। रफ़्तार तेज़ होती जाती है। मौजूद लोगोंकी आँखें उसके साथ आसमानकी ओर उठती जाती हैं।....रॉकेट अब एक छोटा-सा चमकदार बिन्दु रह गया है। वह आकाशकी गहराईकी ओर रवाना हो गया है। अनन्तकी ओर।

■

बंजर, वायुहीन ज़मीन। आसमानमें सोनेके रंगका तीखा सूरज चमक रहा है। इस ज़मीनको मानवका स्पर्श पहले कभी नहीं मिला। घण्टों पहले एक आकाशयान पृथ्वीसे आकर यहाँ उतरा था। वह सुनहली लपटोंपर सवार था और ज़मीनकी धूलने गुबारके गुब्बारे बनाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका स्वागत किया था। अब उसके वायु-दाब पम्प चलने लगे हैं। आकाशयात्री इस नयी ज़मीनपर उतरनेकी तैयारीमें है। दरवाज़ा खुलता है और एक-एक करके कई आदमी भारी-भरकम आकाश-वस्त्र पहने हुए सूरजकी तपायी हुई ज़मीनपर पाँव रखते हैं।

ज़मीन अजानी है। काले आसमानपर असंख्य तारे टिमटिमा रहे हैं। लाखों-करोड़ों तारे जिन्हें आदमीने पृथ्वीसे कभी नहीं देखा। पृथ्वीका वायुमण्डल सदा उसकी दृष्टिको सीमित किये रहा। और इस अजनबी ज़मीनका रंग भूरा है। सब जगह कंकड़ बिखरे हैं। सामने एक विशाल ज्वालामुख रोशनीमें दमदमा रहा है। दूर हज़ारों मीटर ऊँचे पहाड़ोंका सिलसिला है। सिलसिला कहीं-कहीं टूट गया है। पहाड़ोंके गहरे काले साये धरतीपर पड़ रहे हैं। चारों ओर अटूट ख़ामोशीका राज है। हवाकी सरसराहट तक नहीं।

इस ख़ामोशीको तोड़नेवाले पृथ्वीवासी यहाँ ज़बर्दस्ती चले आये हैं। दो आदमी ज्वालामुखपर चढ़ गये हैं। क्षितिजमें उन्हें एक हरी-नीली गोल चकत्ती-सी उदय होती दीखती है। जैसे ख़ूब बड़ा-सा चन्द्रमा। उसपर महाद्वीपों और महासागरोंको पहचाना जा सकता है। कुछ स्पष्ट, कुछ बादलोंसे ढके हुए।

■

एक और बंजर दुनिया। एक और आसमान। लेकिन तसवीर बदल गयी है। सूर्यंसे दूर जाते हुए आकाशयानके यात्री दूरसे उसे पास आता देख रहे हैं। आसमानमें एक विशाल लाल गोला, कहीं-कहींपर भूरे हरे रंगके हिस्से, ध्रुवोंपर बर्फ़की परतें। आकाशयान ज्यों-ज्यों पास आता गया है उन्हें ज़्यादासे ज़्यादा विवरण दीखते गये हैं। सतहपर लम्बी-सीधी रेखाएं जो शताब्दियोंसे पृथ्वीके ज्योतिषियोंको परेशान करती रही हैं, ख़ूबसूरत तूफ़ानोंमें घुमड़नेवाले पीले बादल, धुआँसे आरम्भ होकर लगातार फैलती जानेवाली काई।

आकाश-यात्रियोंको पहलेसे बहुत-सी बातें मालूम थीं। इस दुनियाका आसमान काले रंगका नहीं, गहरे बैंगनी रंगका होगा। सूरजकी किरणोंमें उतनी तपिश न होगी जितनी पृथ्वीपर होती है। रेगिस्तानी मैदान होंगे, लाल पहाड़ियाँ होंगी, उथली घाटियाँ होंगी। और यहींपर अनेक सवालोंके जवाब होंगे। जवाब, जिनका इन्तज़ार करोड़ों वर्षोंसे किया जा रहा है, जो आकाश-यात्रियोंके प्रत्यक्ष अन्वेषणके बाद ही मिल सकते हैं। और यात्री अब वहाँ पहुँचने ही वाले हैं।

■

एक और आकाशयान। तेज़ रफ़्तारसे सूरजसे दूर भागता हुआ। एक-एक ग्रह गुज़रता जा रहा है। एक छोटा-सा प्रकाश-बिन्दु पास आता जा रहा है। महीनों-वर्षों पहले आकाशयान अपनी लम्बी यात्रापर रवाना हुआ था। एक-एक कर ग्रह पीछे छूटते गये थे। मंगल, लघुग्रह, बृहस्पति,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शनि—सब बहुत-बहुत पीछे रह गये हैं। लेकिन यात्रा अभी खत्म नहीं हुई। मंज़िल अभी भी बहुत दूर है। सौरमण्डलकी बाहरी सीमापर कहीं एक ग्रह है—छोटा-सा, अजाना, सूरजसे इतनी दूर कि उसकी सतह हमेशा अँधेरेमें रहती है, भयानक सर्द, गर्म जीवन-पनपानेवाले ग्रहोंसे कल्पनातीत दूर।

आखिर आकाशयान वहाँ क्यों जा रहा है? कोई खज़ाना नहीं है वहाँ। आकाश-यात्रियोंको वहाँ भयानक खतरों और शायद मौतके सिवा कुछ नहीं मिलेगा। लेकिन आदमीको कमसे कम एक बार तो उस तक पहुँचना ही है। इस यात्राका यही एकमात्र कारण है। और यान अपने सफ़रपर बढ़ा जा रहा है। मंज़िलसे पहले कोई पड़ाव नहीं।

▪

आकाशमें कहींपर एक आकाशयान मात्र एक प्रकाश-बिन्दु रह गया है लेकिन तीव्र गतिसे बढ़ता जा रहा है। पृष्ठभूमिमें तारोंका पैटर्न है। आकाशयान बहुत-बहुत पहले सौरमण्डलके ग्रहोंको पीछे छोड़ चुका है। पृथ्वीके दूरदर्शी अब उसे देख नहीं सकते। उसके सामने सिर्फ़ खालीपन है, काला खालीपन। फिर भी आकाशयान आगे बढ़ा जा रहा है। उसका वेग लगातार बढ़ता जा रहा है। उसकी मंज़िल अकल्पनीय दूर है, तमाम प्रकाश-वर्ष दूर।

एक भी यात्री नहीं जानता कि वे मंज़िल तक पहुंचेंगे भी या नहीं। कब पहुँचेंगे, क्या मालूम! लेकिन इससे क्या अन्तर पड़ता है? आदमीने जब पहली बार आकाशकी ओर देखकर जिज्ञासा की थी, तभीसे एक शक्ति उसे भीतरसे प्रेरित कर रही है। आकाशयान इसीलिए तीव्रतर वेगसे बढ़ा जा रहा है। मानवको अपनी नियतिसे भेंट करनी है।

▪

पाँच तसवीरें। भविष्यकी पाँच कल्पनाएँ। कुछ बरस पहले ये कथा-साहित्यकी सीमामें आतीं। अति कल्पनाशील मस्तिष्ककी उपज। लेकिन अब ज़माना बदल चुका है। भविष्यमें ये ही तसवीरें यथार्थ बनेंगी, इसमें शायद ही किसीको सन्देह हो। आकाश-यात्राएँ कल्पनाओंकी दुनियासे निकलकर सम्भावना-जगत्में पहुँच चुकी हैं। भविष्य ब्रह्माण्ड—एक सर्वथा नये ब्रह्माण्ड—का साक्षी बनेगा। इस साक्ष्य तक पहुँचनेमें हमारी शताब्दीका अंशदान अभूतपूर्व है। ब्रह्माण्डको समझनेमें हजारों वर्षोंकी मानवीय उपलब्धिको मात्र बीसवीं सदीकी उपलब्धिसे समतुलित किया जा सकता है। और हमारी शताब्दी अभी तो अपनी उम्रका दो-तिहाई हिस्सा ही पार कर सकी है। उसकी एक-तिहाई ज़िन्दगी अभी बाक़ी है। यह शेषांश निश्चयतः महत्त्वपूर्ण और युगान्तरकारी होनेको है। आकाश-यात्राके नये चरण ब्रह्माण्डके खाकेमें नये रंग भरेंगे लेकिन ब्रह्माण्डकी शबीहको ज्यादासे ज्यादा पूरा करनेमें महत्तम योग होगा आधुनिक ज्योतिषका—आधुनिक ज्योतिष, जो स्वयं क्रान्तिके परिवर्त्तनोंसे गुजर चुका है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुज़र रहा है।

■

आदि मानवकी सबसे बड़ी उपलब्धि थी—'जिज्ञासा'। आगामी पीढ़ियोंको यह विरासतमें मिली। जिज्ञासासे ज्ञान प्राप्त हुआ। ज्ञानने जिज्ञासाको तीव्र किया। यह क्रिया एक बार शुरू होकर फिर कभी नहीं रुकी। दवाके साथ बढ़नेवाले मर्ज़की तरह, ज्ञान और जिज्ञासा दोनों बढ़ते गये। हर नये ज्ञानकी प्राप्तिके साथ-साथ यह नया एहसास भी हुआ कि अभी बहुत कुछ प्राप्त करना शेष है। सर जेम्स जीन्सके शब्दोंमें : 'हम जितना अधिक जानते जाते हैं उतना ही अधिक जान पाते हैं कि कितना कुछ जाननेको अभी शेष है।'

जिज्ञासु आदिमानवने आकाशके रहस्योंके उद्घाटनके लिए उसकी ओर ताका था। आजके विज्ञ ज्योतिषी भी यही करते हैं। नयी ज्ञान-प्राप्तिका उपाय मात्र एक है : आकाशको अनवरत देखते रहना और एक-एक बूँद ज्ञानकी प्रतीक्षा करते रहना। ब्रह्माण्ड अत्यन्त कृपण है। अपने रहस्योंको गोपन रखना उसे खूब आता है। आसानीसे एक सूत्र भी वह आदमीके हाथ नहीं आने देता। लेकिन आदमी अपनी आदिम प्रवृत्तिसे मजबूर है। इसी मजबूरीका तक़ाज़ा है कि वह नयेसे नये तरीक़ेसे आकाशको निहारता है, ब्रह्माण्डका स्वरूप पहचानना चाहता है। वह जानता है कि यह काम समय, श्रम, धन और मेधासाध्य है। वह मंजिल तक पहुँचेगा ही, इसका भी कोई आश्वासन नहीं। फिर भी....

आकाशके अनन्त असीम अन्धकारमें कुछ सीमा तक प्रवेश पानेमें आदमीने सफलता पायी है। ज्योतिष सबसे पुराना विज्ञान है। लेकिन ब्रह्माण्ड उससे कहीं पुराना है। शुरूमें ज्योतिषकी प्रगति धीमी थी। ब्रह्माण्डका एक खाका था। सूर्य, चन्द्रमा, 'पंचदेव' (बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति, शनि) तथा तारे। अनेक देशोंमें अनेक कल्पनाएं थीं। आकाश एक तारोंजड़ा चँदोवा था या फिर उलटा गोलार्द्ध। वह सीमित था। हमारे देशमें ब्रह्माण्डका केन्द्र सूर्य था। पश्चिमी देशोंमें पृथ्वी। पन्द्रहवीं सदीमें जाकर पोलैण्डवासी पादरी निकोलस कोपर्निकस युरॅपको मनवा सके कि ब्रह्माण्डका केन्द्र पृथ्वी नहीं, सूर्य है। जब सत्रहवीं सदीके पहले दशकमें इटलीवासी गैलीलियोने अपनी अनगढ़ दूरदर्शितासे आकाशको निहारा, तो तसवीरमें नये रंग भरने लगे। अज्ञात आकाश 'ज्ञात' की सीमामें बँधने लगा। ज्योतिषकी प्रगति तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम हो उठी। ब्रह्माण्डके रहस्य खुलते गये। बीसवीं सदीने इसमें अप्रतिम योग दिया। इसपर भी पिछले दो दशकोंका ज्योतिष तो विलक्षण है। पारम्परिक प्रकाश दूरदर्शियों और अधुनातन रेडियो-दूरदर्शियोंसे नयी जानकारी तीव्र गतिसे प्रवाहित हुई है, हो रही है। इसे समन्वित करके एक सम्यक् चित्र बना पाना मुश्किल, लगभग असम्भव है। आगामी तैंतीस सालोंमें यह प्रवाह और अधिक तेज होनेको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैनचेस्टर (ब्रिटेन) का जॉड्रेल बैंक रेडियो-दूरदर्शी →
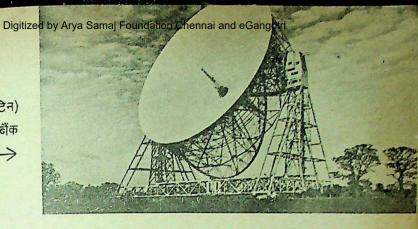
५० फुट लम्बा परिभ्रामी एरियल जो हॉलमडेल (न्यूजर्सी, अमेरिका) की आकाश-अन्वेषण-प्रयोगशालामें स्थित है। →
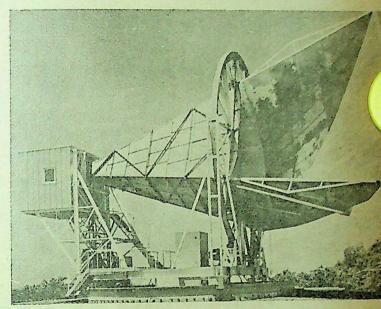
रंगपुर स्थित निजामिया-वेधशाला। →
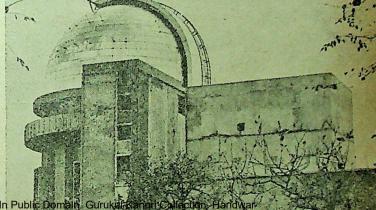
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। यानी ब्रह्माण्डका स्वरूप स्थिर कर पाना और अधिक मुश्किल हो जानेको है।

ब्रह्माण्डका स्वरूप अनिश्चित रहे, यह नयी बात नहीं। नया सिर्फ़ इतना है कि जितनी नाटकीयताके साथ और जितनी जल्दी-जल्दी यह स्वरूप आज बदल जाता है, उतना पहले कभी नहीं बदला। उन्नीसवीं सदी तक ब्रह्माण्डका एक खाका था : हमारी मन्दाकिनी (आकाशगंगा) और उसके केन्द्रपर स्थित सूर्य। तब :

० आकाशगंगाकी आकृति कुम्हारके चाक-जैसी है। सूर्य उसके बाहरी भागमें स्थित है। आकाशगंगाके बीचमें दीखनेवाली नीहारिकाएं शायद आकाशगंगासे परे स्थित दूसरी मन्दाकिनियां हैं। (विलियम हर्शेलका सिद्धान्त, अठारहवीं शताब्दी)।

० सूर्य वस्तुतः आकाशगंगाके केन्द्रसे बहुत दूर है। (हार्लो शेप्ली-द्वारा सिद्ध, बीसवीं शताब्दीका तीसरा दशकारम्भ)।

० अनेक नीहारिकाएँ सचमुच हमारी आकाशगंगासे परे हैं और ब्रह्माण्ड लगातार फैल रहा है। (एडविन हबिल-द्वारा सिद्ध, बीसवीं शताब्दीका तीसरा दशकान्त)।

० दूसरे विश्व-युद्धके बाद अमेरिकाके पैलोमार प्रकाश-दूरदर्शी (लेंसका व्यास २०० इंच) ने अपनी तेज़ आँखें आकाशपर गड़ायीं तो शेप्ली और हबिलकी धारणाओंकी पुष्टि हुई। १९५० तक महसूस होने लगा कि ब्रह्माण्डमें काल और स्थान-सम्बन्धी नियमितता है।

० लगभग इसी समय एक नये ज्योतिष—रेडियो ज्योतिष—का विकास। कार्ल जान्स्की और जॉर्ज रेबरकी धारणाओंकी पुष्टि कि तमाम रेडियो-उत्सर्जन आकाशगंगामें ही जन्म लेते हैं। टॉमस गोल्डका विरोधी मत कि रेडियो-तारकोंको निश्चय ही हमारी आकाशगंगासे परे होना चाहिए।

० १९५१ में एक नया मोड़। ७० करोड़ प्रकाश-वर्ष दूर स्थित एक रेडियो-उत्सर्जक नीहारिकाका पता पहले केम्ब्रिजके रेडियो दूरदर्शीसे लगा, फिर पैलोमार प्रकाश-दूरदर्शीसे उसे देखा गया। गोल्डकी बात सच सिद्ध हुई। १९५९ में ४ अरब ५० करोड़ प्रकाश-वर्ष दूर स्थित रेडियो-उत्सर्जक नीहारिका देखी गयी।

० रेडियो-नीहारिकाओंकी पहचानके प्रयत्नोंके दौरान एक अन्य करिश्मेके दर्शन हुए, जिन्हें 'तारावत् रेडियो उत्सर्जक' अथवा संक्षेपमें 'क्वासार' नाम दिया गया। केम्ब्रिजकी सूचीमें दर्ज लगभग ४०० क्वासारोंको प्रकाश-दूरदर्शी-द्वारा देखनेकी कोशिश की जाने लगी। दिसम्बर १९६० में एलेन सैण्डजने एक क्वासारका चित्र लिया। चार्ल्स हैज़र्डने ऑस्ट्रेलियाकी पार्क्स-वेधशालासे एक अन्य क्वासार (इसी-२७३)-का चित्र खींचा, तो ब्रह्माण्ड-विज्ञानमें खलबली मच गयी। फ़रवरी १९६३में मार्टेन श्मिट्ने इसे पूरी तरह पहचाना। तब अनेक क्वासारोंके चित्र लिये गये। रेडियो-ज्योतिषियोंके अनुसार इनकी दूरी कमसे कम ८ अरब प्रकाश-वर्ष होनी चाहिए। यानी ब्रह्माण्डकी उम्र १० अरब प्रकाश-वर्ष होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्माण्डकी उम्र ? प्रश्न जितना संगत है, उतना ही गूढ़ । इसका उत्तर देना आसान नहीं । वैज्ञानिकों और ज्योतिषियोंने समय-समयपर इस सवालसे जूझनेका हौसला दिखाया है । सिद्धान्त जन्मे हैं, क़ब्रमें दफ़न हुए हैं, फिर जन्मे हैं ।

■

ब्रह्माण्डके जन्मके बारेमें पहला गम्भीर प्रयास अल्बर्ट आइन्स्टाइनका था । यह प्रयास उनके 'सामान्य सापेक्षिकता सिद्धान्त' (१९१६) में निहित है । इससे पहले ब्रह्माण्ड विज्ञान, धर्म, पुराणकथा, फलित ज्योतिष और दर्शनका अजीबोग़रीब मिश्रण था । आइन्स्टाइनके उपर्युक्त सिद्धान्तके प्रतिपादन-से कुछ बरस पहले विलियम हर्शेल (द्वितीय)-ने आकाशगंगासे परेके तारोंको देखा था और पाया था कि ब्रह्माण्ड हमारी समस्त कल्प-नाओंसे कहीं अधिक सुन्दर और जटिल है । हर्शेलकी खोजको महत्त्व देते हुए आइन्स्टाइन-ने १९१७ में ब्रह्माण्डका एक नमूना पेश किया :

'ब्रह्माण्ड सीमित है और उसके भीतर मौजूद प्रेक्षकको मन्दाकिनियाँ सचल नहीं मालूम पड़तीं ।'

लेकिन हबिलकी १९२० की खोजने सिद्ध कर दिया कि आइन्स्टाइन ग़लतीपर थे । हबिलकी खोजका सीधा अर्थ यही था कि ब्रह्माण्ड सीमित नहीं है । यह खोज एक वैज्ञानिक-वैचारिक क्रान्तिकी जन्मदात्री बनी । सोचा गया कि एक ज़मानेमें ब्रह्माण्ड-का सम्पूर्ण द्रव्य गर्म गैसके पिण्डमें एक समान सघन रूपसे मौजूद था । यह भी पता लगा कि हबिलके प्रेक्षणों और आइन्स्टाइनके सिद्धान्तके कुछ परिणामोंमें सहमति है । फलस्वरूप तीन सिद्धान्त जन्मे :

० बेल्जियमके वैज्ञानिक लमेत्रने महा-विस्फोट - सिद्धान्तका प्रतिपादन किया (१९२७) । अबसे लगभग १० अरब वर्ष पहले घनीभूत द्रव्यके एक 'आदि परमाणु'-का विस्फोट हुआ और उसमें निहित सघन द्रव्य इधर-उधर छिटक गया । बादमें यही द्रव्य जमकर तारों और मन्दाकिनियोंमें बदल गया । ये तारे और मन्दाकिनियाँ ही अब अनन्त आकाशमें फैलते जा रहे हैं । इस सिद्धान्तके अनुसार, ब्रह्माण्ड एक निश्चित द्रव्य मात्रासे बना है; इसलिए उससे निर्मित मन्दाकिनियोंकी संख्या सीमित ही हो सकती है । यानी एक समय ऐसा भी आयेगा जब मन्दाकिनियोंकी सारी ऊर्जा समाप्त हो जायेगी और वे राखकी ढेरियाँ मात्र रह जायेंगी ।

'महाविस्फोट-सिद्धान्त' में एक बड़ा दोष है । अगर ब्रह्माण्डका जन्म केवल एक विस्फोटके फलस्वरूप हुआ तो उसमें मौजूद सभी रासायनिक तत्त्वोंका निर्माण भी एक साथ हो गया होगा । लेकिन आजके भौतिकीविद् जानते हैं कि इस तरहके विस्फोटसे सिर्फ़ हीलियम गैसका निर्माण हो सकता था, अन्य किसी भी तत्त्वका नहीं ।

० हॉवर्ड पी. रॉबर्ट्सन और रिचर्ड सी. टॉलमनने स्पन्दित ब्रह्माण्ड-सिद्धान्त प्रतिपादित किया (१९२९) । ब्रह्माण्ड एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अज्ञात लयात्मक ढंगसे फैलता और सिकुड़ता है। मन्दाकिनियोंका जन्म एक विस्फोटशील नाभिकसे हुआ था और अब वे आकाशमें बाहरकी ओर भागी जा रही हैं। अपने जन्म-बिन्दुसे एक निर्धारित दूरी (जिसका पता नहीं है) पर पहुँचनेके बाद वे सिकुड़ने लगेंगी और फिर अपने मूल रूपमें आ जायेंगी। यही चक्र अनन्त काल तक चलता जायेगा।

लेकिन एक सीमित संख्यामें स्पन्दनोंके बाद ब्रह्माण्डकी सारी ऊर्जा खतम हो जायेगी और उसके स्पन्दन रुक जायेंगे। तब ?

• टॉमस गोल्ड, हर्मन बाण्डी और फ्रेड हॉयल-द्वारा प्रतिपादित **समतुलित अवस्था-सिद्धान्त** (१९४५) के अनुसार, ब्रह्माण्डकी पिण्डसंख्या सदा स्थिर रहती है, यानी पुरानी मन्दाकिनियाँ मरती और नयी मन्दाकिनियाँ जन्म लेती रहती हैं। मन्दाकिनियोंमें हाइड्रोजन गैस लगातार बनती रहती है और बाहरकी ओर फैलती रहती है। किसी बड़े तारेका विस्फोट होता है, उसमें मौजूद रासायनिक तत्त्व बिखर जाते हैं और आकाशमें जन्मे द्रव्यके साथ मिल जाते हैं—इसे नये तारे आत्मसात् कर लेते हैं।

ब्रह्माण्डका घनत्व अपरिवर्त्तित रहता है—यह सिद्धान्त कहता है। लेकिन अगर कभी हमें पता चला कि मन्दाकिनियोंके बीचकी दूरियाँ ठीक वही नहीं हैं जैसी हम जानते हैं तो फिर इस सिद्धान्तका क्या होगा ? इसके अलावा, 'कुछ नहीं'से 'कुछ' (हाइड्रोजन) कैसे बनती रहती है ? हॉयलने स्वयं स्वीकार किया था कि द्रव्यका वह 'सर्जित' हो जाना एक 'विचित्र धारणा' मालूम पड़ सकती है। यह सिद्धान्त द्रव्य और ऊर्जाकी अविनाशिताके नियमका विरोधी मालूम पड़ता था। इस प्रत्यक्ष 'विरोध'को 'अ-विरोध' सिद्ध करनेके लिए उन्होंने भारतीय युवा वैज्ञानिक जयन्त विष्णु नार्लिकरके साथ मिलकर एक नये गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्तको जन्म दिया (१९६४)। इस नये सिद्धान्तके अनुसार, ब्रह्माण्डके प्रसारकी ऊर्जासे ही द्रव्यका निर्माण अपने आप हो जाता है। इसे उन्होंने 'सृजन-क्षेत्र' (क्रियेशन फ़ील्ड, या संक्षेपमें सी-फ़ील्ड) कहा। यह सी-फील्ड क्या है ? ब्रह्माण्डमें विशाल तारे और रेडियो-तारक जलते-जलते अपना ईंधन समाप्त करनेके बाद सिकुड़ जाते हैं, धसक जाते हैं या फिर स्पन्दित होने लगते हैं; ऐसा होनेपर ऋणात्मक ऊर्जा पैदा होती है। यही ऋणात्मक ऊर्जा नये द्रव्यको जन्म देती है और इस तरह ब्रह्माण्ड समतुलित अवस्थामें बना रहता है।

लेकिन अक्तूबर १९६५ में हॉयलने 'समतुलित अवस्था-सिद्धान्त'को अपूर्ण और अपर्याप्त ठहराते हुए अस्वीकृत कर दिया—"...ऐसा लगता है कि इस विचारको, कम-से कम इसके वर्त्तमान प्रचलित रूपको, त्यागना होगा।" किन्तु क्यों ? क्या कुछ अपूर्व घटित हो गया ?

उस वर्ष १३ जूनको रविवार था। उस दिन वीएतनाम-युद्धने एक नया मोड़ लिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस दिन दुनियाकी आबादीमें १,७०,००० की गिनती और बढ़ गयी। और उसी दिन ब्रह्माण्डके बारेमें सोचनेका आदमीका नज़रिया बदल गया। उस दिन कैलिफ़ोर्निया-स्थित माउण्ट विल्सन और पैलोमार वेधशालाने आकाशकी गहराइयोंमें उपस्थित अनेक अभूतपूर्व आकाशीय पिण्डोंकी खोज की। घोषणाके उत्तरदायी थे एलेन सैण्डेज।

१९६३ में पहले क्वासारको 'देखने'के बाद जब एकके बाद अनेक क्वासारोंकी पहचान जारी रही, तब सैण्डेजको कुछ अजीब-सा लगा। उनके मस्तिष्कमें प्रश्न उभरा कि क्या ये सचमुच इस सीमा तक बहुसंख्य हैं। क्वासारोंकी पहचानके यत्नोंके दौरान उन्हें अपनी फ़ोटोग्राफ़ी-प्लेटोंपर ऐसे पिण्ड भी दिखलाई पड़े जो क्वासार-जैसे दीखनेके बावजूद रेडियो-स्रोतोंकी स्थितिमें नहीं थे। गहन अध्ययनके बाद पता चला कि ये नये पिण्ड नीले रंगके तारों-जैसे थे और उनका पता ज्योतिषियोंको पिछले ३० सालोंसे था। तब सोचा गया था कि ये पिण्ड हमारी आकाशगंगाके प्रभामण्डलमें स्थित सद्यःजात तारे हैं; सैण्डेजने अपने एक सहयोगी फ़िलिप वरोके साथ मिलकर पता लगाया कि अत्यधिक चमकीले नीले तारोंके साथ-साथ कम चमकीले नीले तारे भी हैं। गहन निरीक्षणने सिद्ध किया कि ये कम चमकीले नीले तारे वस्तुतः अत्यधिक शक्तिशाली और भारी हैं, अत्यन्त विशाल दूरियोंपर स्थित हैं और हमारी आकाशगंगाके साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। सैण्डेजने इन्हें 'तारावत् नीहारिका' (क्वासी-स्टेलर गैलेक्सी) नाम दिया। इन्हीं नीहारिकाओंके साक्ष्यपर हॉयल ने 'समतुलित अवस्था-सिद्धान्त'को अपर्याप्त ठहराया। जयन्त नार्लिकरने उसी वर्ष एक नया सिद्धान्त प्रस्तुत किया कि ब्रह्माण्ड वास्तवमें एक बुलबुलेकी तरह है और उसीके भीतर हम रहते हैं।

यानी ब्रह्माण्ड क्या है, हमें ठीक मालूम नहीं। उसकी उम्र ? कम-से-कम १४ अरब प्रकाश-वर्ष। लेकिन.... ?

■

ब्रह्माण्डके जन्म और मरणके बारेमें तमाम 'लेकिनों के बावजूद, ब्रह्माण्डकी शबीह कुछ इस तरह उभरती है कि उसमें मौजूद पिण्डोंको चार श्रेणियोंमें रखा जा सके :

० तारोंके विशाल चक्राकार समूह, जिन्हें सामान्य मन्दाकिनी कहा जा सकता है। प्रत्येकमें लगभग १ खरब तारे हैं और इन्हें ही सर्वाधिक संख्यामें देखा जा सकता है।

० सभी मन्दाकिनियाँ कमो-बेश रेडियो-उर्जा उत्सर्जित करती हैं, लेकिन कुछकी रेडियो-ऊर्जा अत्यधिक तीव्र होती है। इन्हें रेडियो-मन्दाकिनी कहा जा सकता है। प्रकाश-दूरदर्शीसे ये अजीबोग़रीब दिखलाई पड़ती है, मानो कोई उथल-पुथल हो रही हो।

० रेडियो-ऊर्जाके शक्तिशाली उत्सर्जक जो बहुत दूरीपर मौजूद होनेके कारण सुई-की नोक जैसे दीखते हैं—इन्हें रेडियो-क्वासार कहा गया है।

० रेडियो-क्वासार-जैसे दीखनेवाले पिण्ड जो रेडियो-ऊर्जाका उत्सर्जन नहीं करते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्हें शान्त क्वासार कहा जा सकता है।

क्या ब्रह्माण्डकी यह शबीह अन्तिम है? कौन कह सकता है? ज्योतिषके चरण पिछले दो दशकोंकी भाँति तीव्र हैं। शान्त क्वासारोंकी खोजके बाद प्रकाश और रेडियो-ज्योतिषियोंका पारस्परिक विवाद समाप्त हो चुका है। पुनः प्रकाश-दूरदर्शियोंकी अनिवार्यतापर जोर दिया जाने लगा है। उत्तरी और दक्षिणी दोनों गोलार्द्धोंमें नयी प्रकाश-वेधशालाओंकी स्थापनाकी योजनाएँ हैं:

—१९७३ तक कूनाबराब्रान (न्यू साउथ वेल्स, ऑस्ट्रेलिया) में एक प्रकाश-दूरदर्शी काम करने लगेगा। ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलियाके संयुक्त तत्त्वावधानमें निर्माणाधीन इस दूरदर्शीके लेंसका व्यास १५० इंच होगा। यह दूरदर्शी किट पीक-(एरिज़ोना, अमेरिका) दूरदर्शी-जैसा होगा।

—पाँच राष्ट्रोंके 'यूरोपीय दक्षिणी वेधशाला संघ'ने ला सिला (चिले) में एक प्रकाश-दूरदर्शीकी स्थापनाका निश्चय किया है। इसके लेंसका व्यास १४० इंच होगा।

—'महारानी एलिज़ाबेथ द्वितीय वेधशाला' (कैनाडा) में १४० इंच व्यासके लेंस वाला दूरदर्शी निर्माणाधीन है।

—कैलिफ़ोर्निया विश्वविद्यालयकी योजना दक्षिणी गोलार्द्धमें एक २०० इंच लेंसवाला दूरदर्शी स्थापित करनेकी है। वह इसके लिए आंस्ट्रेलिया या चिलेमें उपयुक्त स्थानकी खोजमें है।

—सोवियत संघ एक २३६ इंच लेंस-वाला दूरदर्शी स्थापित करना चाहता है।

—अमेरिकाके सहयोगसे उस्मानिया विश्वविद्यालय (हैदराबाद) में एक दूरदर्शीका निर्माण किया गया है।

जॉड्रेल बैंक (ब्रिटेन) और पार्क्स (ऑस्ट्रेलिया) के रेडियो-दूरदर्शियों-जैसा विशाल एक रेडियो-दूरदर्शी ऊटकमण्डके समीप स्थापित किया जा रहा है। 'टाटा मूलतत्त्व गवेषणा संस्थान'के तत्त्वावधानमें निर्माणाधीन यह दूरदर्शी स्वर्गीय डॉ० भाभा का स्वप्न था। यह स्वप्न यथार्थ बनकर ब्रह्माण्ड-विज्ञानमें महत्त्वपूर्ण योग देगा।

इन प्रकाश और रेडियो-दूरदर्शियोंके अलावा अन्य उपकरण भी बन रहे हैं। मसलन, श्मिट् कैमरे, जो तारोंके विशाल क्षेत्रोंके फ़ोटो इस तरह खींचते हैं कि उनका विरूपण नहीं होने पाता। अनेक वर्षोंसे पैलोमारका ४८ इँच व्यासवाला कैमरा संसार-का सबसे बड़ा श्मिट् कैमरा रहा है। अब वहीं एक दूसरा कैमरा स्थापित किया जा रहा है जिसके लेंसका व्यास ६० इंच होगा। जर्मनीमें ८० इंच व्यासवाला कैमरा लगाया जायेगा। पिछले साल कलगूरा (आस्ट्रेलिया) में किट पीक सौर दूरदर्शी-जैसा एक यन्त्र कार्यरत है। और इन सबसे अलग, निकट भविष्यमें ही शक्तिशाली दूरदर्शी रॉकेटोंपर बैठकर पृथ्वी-परिक्रमा कक्षामें पहुँचेंगे और वायुमण्डलके आवरणसे मुक्त रहकर आकाश-का निरीक्षण करेंगे। तब निश्चय ही हमारे ज्ञानकी परिधि और बढ़ेगी। इस परिधिका प्रसार ज्योतिषके नये रूपोंके विकासके फल-स्वरूप भी होगा। एक सर्वथा नवीन 'न्यूट्रिनो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्योतिष' के चरण आगे बढ़ रहे हैं। 'एक्स-रे ज्योतिष' फलप्रद सिद्ध होने लगा है और एक्स-रे उत्सर्जक तारों व मन्दाकिनियोंकी तलाश जारी है।

■

वैज्ञानिकोंके दीर्घकालीन प्रयत्न क्या भविष्य में कभी ब्रह्माण्डकी शबीहको अन्तिम रूप दे सकेंगे ? आखिर आदमी जटिलतम उलझनों-को भी समझने और सुलझानेमें समर्थ है। लेकिन ब्रह्माण्डकी जन्म-कुण्डली बना पाना इतना आसान नहीं है। पिछले २० सालोंकी ज्योतिषकी प्रगति और गत १० सालोंकी रॉकेट-विज्ञानकी प्रगतिने मानवको इतना आश्वस्त नहीं रहने दिया है। फ्रेड हॉयलके शब्दोंमें : "३० साल पहलेके अत्यधिक प्रगति-शील ज्योतिषी भी आजके परिणामों, परि-कल्पनाओं और समस्याओंको विलक्षण मानने-पर मजबूर हो जाते हैं।....अगले २० सालों-की प्रगति हमें कहाँ ले जायेगी, कोई नहीं जानता। आजका ज्योतिषी भविष्यकी कल्पना करनेमें उतना ही अक्षम है, जितना ३० साल पहलेका ज्योतिषी आजकी कल्पना करनेमें था।"

इसके बावजूद प्रगति जारी रहेगी। शक्तिशाली प्रकाश-दूरदर्शी अरबों प्रकाश-वर्ष दूर तारों और नीहारिकाओंको पहचानते रहेंगे। रेडियो-दूरदर्शी ब्रह्माण्डकी गहराइयों-से आनेवाली 'आवाज़ें' सुनते रहेंगे। और रॉकेट छूटते रहेंगे। ग्रहों-उपग्रहोंकी यात्राएँ होती रहेंगी। ज्योतिष और आकाश-विज्ञान दोनों पारस्परिक सहयोगसे ब्रह्माण्डकी गुत्थियोंको सुलझानेका यत्न करते रहेंगे। लेकिन ब्रह्माण्डकी शबीहको अन्तिम स्पर्श दिया जा सकेगा क्या ?... शायद कभी नहीं !

■ ■

एस. २०६, ग्रेटर कैलाश
नयी दिल्ली-१४.

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति
और उपलब्धि-परिचायिनी मासिकी

ज्ञानपीठ पत्रिका

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित

● सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, जगदीश

● मूल्य :
६.०० वार्षिक, ००.५५ पैसे प्रति

'ज्ञानपीठ पत्रिका' हिन्दीमें अपने प्रकार-का प्रथम प्रयास है, और कदाचित् अन्य भारतीय भाषाओंको देखते हुए भी, जिसका प्रयत्न एक ऐसा अध्ययन प्रस्तुत करना है जो लेखक-प्रकाशक-विक्रेता-पाठक चारोंके 'अक्षर-जगत्'की गतिविधि, नयी प्रवृत्तियों, समस्याओं एवं समाधान, और विकास-उन्नतिकी दिशा-भूमिका सम्यक् परिचय दे, तथा परस्पर विचारोंके आदान-प्रदानका पथ प्रशस्त कर सके।

सम्पर्क-सूत्र : भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हनुमान वनस्पति से

कम खर्च में भोजन तैयार करिये

यह खाना बनाने में कम व्यय होता है

यह वीटामीन ए और डी से परिपूर्ण है और गले को नुकसान नहीं पहुंचाता।

इससे तैयार किया हुआ भोजन एवं मिठाइयां देर तक स्वादिष्ट रहती हैं।

यह दानेदार व बिल्कुल सफेद है। यह स्वास्थ्यपूर्ण ढंग से ऐसे टिनों में पैक किया जाता है जो प्रयोग के बाद दूसरे कामों में आसानी से इस्तेमाल किये जा सकें।

निर्माता—

रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

CJHY-33

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ तैंतीस वर्ष बाद ॥ दक्षिण ध्रुवपर कलाका नगर :

दक्षिण ध्रुवके सपने

(डॉ० सिरोहीसे एक भेंट)

रमेशदत्त शर्मा । वैज्ञानिक खोज या गवेषणा कोई भी क्यों न हो, उसकी प्रक्रिया एक ही है—जान हथेलीपर रखकर पहले कुछ लोग किसी रहस्यकी तह तक जाकर उसे उघार कर रख देते हैं, अद्‌भुत प्राकृतिक घटनाओंके पीछे जो नियमबद्ध प्रणाली है, उसका पता लगा लेते हैं, जो अगम था उसे गम्य और जो अगोचर था उसे गोचर बना देते हैं, अनजाने बीहड़ प्रदेशोंमें जाकर लाखों वर्षसे अछूती-पड़ी धरतीको रौंद आते हैं। इसके बाद वैज्ञानिक-गवेषकोंका एक दूसरा वर्ग आता है जो पहली पीढ़ी-द्वारा ज्ञात तथ्यों और प्रदेशोंका मानवके कल्याणके लिए क्या उपयोग हो सकता है—इसकी जोड़-तोड़ लगाता है और तब वे खोजें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सारी दुनियाकी हो जाती हैं। हवा, पानी, और बिजलीसे लेकर एटम तक और नयी दुनियासे लेकर उत्तर और दक्षिण ध्रुवों तक-की खोजकी यही कहानी है।

जहाँ सिर्फ़ बर्फ़ है, और बर्फ़के सिवा कुछ नहीं है, जो सात महीने तक ठण्डे अँधेरे-में डूबा रहता है—ठण्ड इतनी कि 'धीरज' भी जम जाये--१९१५ में अर्नेस्ट शेकल्टन नामक गवेषकका जहाज़ 'एंड्यूरेंस' बर्फ़ीले वैडेल समुद्रमें जम गया था—उस दक्षिण ध्रुवपर आज कोई दर्जन-भर देशोंके झण्डे फहराते हैं। बर्फ़तोड़क जहाज और ट्रैक्टर बर्फ़की छाती रौंदते हुए हिम-युगके कान बहरे किये देते हैं, विमान उतरते हैं और परमाणु-शक्तिसे चलनेवाले बिजली-घर दक्षिण ध्रुववासी वैज्ञानिकोंको ताप और प्रकाश देते हैं। मनोरंजन-गृहोंमें फ़िल्मों, पुस्तकों और तरह-तरहके खेलोंसे वे अपना मनोरंजन करते हैं। ये लोग लाखों वर्षकी सीमा लाँघकर हिम-युगको परमाणु और रॉकेट-युगमें कायान्तरित कर रहे हैं—क्या २००० ई० तक ये सचमुच ही दक्षिण-ध्रुवकी कायापलट कर देंगे।

आजसे पाँच वर्ष पूर्व दक्षिण-ध्रुवकी बर्फ़पर भारतीय प्रतिभाकी अमिट छाप छोड़कर आनेवाले डॉ० गिरराजसिंह सिरोही मेरा प्रश्न सुनकर मुसकुराते हैं-"दक्षिण-ध्रुव चाहे स्वर्ग बन जाये, पर मैं तो वहाँ दुबारा जानेका नहीं।"

मैंने कहा, "१९२९ में जब अमरीकाके डीपफ़्रीज़-अभियानोंके संचालक एडमिरल ड्यूफ़ेक दक्षिण-ध्रुवकी यात्रापर गये तो वे भी यह सोचकर लौटे थे कि 'अब दुबारा मैं कभी नहीं आऊँगा।' पर तबसे पाँच-छह बार वे वहाँ जा चुके हैं। फिर आप..."

डॉ० सिरोही बीचमें ही टोक देते हैं—"नहीं, ड्यूफ़ेककी बात और है, मैं एक तो दक्षिण-ध्रुववाला अपना काम पूरा कर चुका हूँ, दूसरे, सोचता हूँ कि उस खोजका अब अपने देशकी फ़सलोंको नया मोड़ देनेके काम में उपयोग किया जाना चाहिए। हाँ, भारत-के दूसरे नवयुवक-वैज्ञानिक दक्षिण-ध्रुव जाकर इस महान् अभियानमें योग दें, तो मुझे बड़ी खुशी होगी।"

"अच्छा, मान लीजिए, आजसे तैंतीस वर्ष बाद कोई भारतीय टोली दक्षिण-ध्रुवपर पहुँचती है, तो उसे वहाँ क्या देखनेको मिलेगा?" मैं पूछता हूँ।

"देखिए, ज्योतिषमें तो मेरा क़तई विश्वास नहीं है, जो मैं कोई भविष्यवाणी करूँ; लेकिन यह तो मैं भी मानता हूँ कि जो सपने देखते हैं, वे ही सपनोंको सच भी कर सकते हैं। हर बात यथार्थकी भूमिपर उत-रनेसे पहले, कल्पनामें उगती है।" फिर जैसे अपनी प्लाण्ट-फ़िजिओलॉजी लेबोरेटरी-के कक्षमें बैठे-ही-बैठे डॉ० सिरोही आजसे तैंतीस वर्ष बादके दक्षिण-ध्रुवपर पहुँच जाते हैं—"मैं देखता हूँ कि सन् दो हज़ारमें दक्षिण-ध्रुवपर क़दम रखनेवाले नौजवान पहलेके सभी यात्रियोंसे अधिक भाग्यवान् होंगे। आवाज़से तेज़ दौड़नेवाले विमान उन्हें घण्टे-दो घण्टेमें वहाँ पहुँचा देंगे। कितना

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचित्र अनुभव है यह भी कि अभी दो घण्टे पहले आप दिल्लीमें हों, और फिर लाखों वर्ष पीछेके हिम-युगमें लौट जायें। दक्षिण-ध्रुवमें पहुँचनेपर ये लोग वातानुकूलित कक्षोंमें रहेंगे जो कहीं अधिक आरामदेह होंगे—इमारतें बिलकुल नये ढंगकी होंगी; नयी हलकी-फुलकी पर मज़बूत मिश्रधातुओंसे बनी हुईं। उनपर बर्फ़ीले तूफ़ानोंका कोई असर नहीं होगा और हर इमारतमें आधुनिकतम सुविधाएँ होंगी—मनोरंजनकी, खाने-पीनेकी, नहानेकी, सोनेकी और कार्य करनेकी। कमरेको मर्ज़ीके माफ़िक गर्म किया जा सकेगा। खिड़कियाँ होंगी ऐसे पारदर्शी पदार्थकी जिसपर बर्फ़ न जम सके और उनके पार फैले बर्फ़के विस्तारको देखा जा सकेगा। वे चाहें तो बड़े हलके वातानुकूलित कपड़ोंमें बाहर आकर बर्फ़पर कबड्डी खेल सकते हैं। स्कीइंग कर सकते हैं।"

लगता है जैसे डॉ० सिरोही स्वप्न नहीं देख रहे, बल्कि उनके सामने वह सब कुछ घट रहा है और वे 'आँखों देखा हाल' सुनाते जा रहे हैं—"जब दक्षिण-ध्रुवपर दिन-ही-दिन होते हैं, रोशनी-ही-रोशनी, अँधेरा ग़ायब होकर अकेलेपनसे जूझते मनुष्योंके मनमें शरण लेता है, तब वे लोग सौर-शक्तिको निचोड़कर उससे तरह-तरहके काम लेंगे। उन दिनों परमाणु घरोंकी छुट्टी कर दी जायेगी और सारी ऊर्जा सूरजसे ली जायेगी। मैं देखता हूँ कि बर्फ़के ऊपर इस्पात की चादर बिछाकर उसमें रासायनिक खाद मिली मिट्टी भर दी गयी है और सैकड़ों

डॉ० गिरराजसिंह सिरोही

एकड़के खेत लहलहा उठे हैं। बाहरके मौसम की मारसे बचानेके लिए उन्हें 'फाइटोट्रॉन'में रखा हुआ है, जिनमें फ़सलके हिसाबसे गरमी और नमी रखी जा सकती है। यहाँकी विशुद्ध जीवाणुविहीन हवामें फ़सलें खूब फलती-फूलती हैं। कोई ताज्जुब नहीं कि यहाँ से यह जीवाणुविहीन हवा, हवाबन्द डिब्बोंमें भरकर दुनिया-भरके अस्पतालोंमें भेजी जाये और वहाँ अनेक रोगोंके उपचारमें काम आये। क्योंकि इस हवामें कोई भी रोगाणु जीवित नहीं रह पायेगा। आपको जुकाम हुआ है, बस दक्षिण-ध्रुवकी हवा सूँघी और जुकाम ग़ायब !"

"वैसे हम भी तो घर बैठे ही दक्षिण-ध्रुवकी हवा खा रहे हैं !" मैं ध्यान दिलाता हूँ। फिर पूछता हूँ, "मान लीजिए, दक्षिण-ध्रुवपर हम हवाखोरीके लिए निकलते हैं, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या शून्यसे सौ-सवा सौ डिग्री नीचे तापमान पर भी घूम सकेंगे ?"

"क्यों नहीं," डॉ० सिरोही बताते हैं—"इस बारेमें प्रसिद्ध दक्षिण-ध्रुवारोही एडमिरल डयूफ़ेकका खयाल है कि तब पोशाक ऐसी होगी कि उनमें अत्यन्त सूक्ष्म बैटरियाँ लगी होंगी और उनका सम्बन्ध उन महीन तारोंसे होगा जो टोपीसे लेकर जूतों तक सारी 'वनपीस' पोशाकमें फैले होंगे। साँस लेनेके लिए ऐसी व्यवस्था होगी कि हवा अन्दर जाते-जाते अपने-आप गर्म होती जाये। सिरके ऊपर इस पोशाकमें दो एण्टीना लगे होंगे, जिनसे प्रसारित होनेवाले संकेतों-द्वारा तूफ़ानमें खोया आदमी अपनी बस्ती तक पहुँच सकेगा। सात महीनोंका गहरा अन्धकार····जब सूर्य उधरसे मुँह फेर लेता है···· वह परमाणु-शक्ति इस निबिड़तमका वक्ष विदीर्ण करके रख देगी। बहुत सम्भव है कि कोई कृत्रिम उपग्रह दक्षिण-ध्रुवके आकाशपर सूर्यकी जगह ले ले। नहीं तो प्रकाश-व्यवस्था ऐसी होगी कि इन सात महीनोंमें किसीको सूरजकी कमी न खलेगी। आज वहाँ सिर्फ़ पाँच-छह महीने ज़िन्दगी नज़र आती है, पर तब पूरे साल रौनक़ रहेगी।"

"लेकिन यहाँ आकर लोग करेंगे क्या ?"

मेरे इस प्रश्नके उत्तरमें डॉ० सिरोहीके चेहरेपर वही भाव आता है जो किसी भी वैज्ञानिकसे उसके कार्यका व्यावहारिक महत्त्व जाननेवाले पत्रकारोंके लिए अपरिचित नहीं है। बड़ी दृढ़ताके साथ एक-एक शब्दको तौलते हुए डॉ० सिरोही बताते हैं—"यहाँ आकर २००० ई० के नौजवान वह महान् कार्य करेंगे, जिसका आज हम सिर्फ़ सपना देख सकते हैं। और मुख्यरूपसे वह काम होगा दुनियाके मौसमका नियन्त्रण। आज सूखा पड़ता है, बाढ़ आती है—लाखों लोग तबाह हो जाते हैं—अकाल पड़ते हैं—ये सब मौसमकी मेहरबानियाँ ही तो हैं। दक्षिण-ध्रुवके ये वैज्ञानिक सात महीने पहले ही मौसमके बारेमें ऐसी भविष्यवाणी कर देंगे, जिसपर कोई सन्देह नहीं किया जा सकता। मुझे लगता है जैसे मेरे सामने दक्षिण-ध्रुवके मौसम-अनुसन्धान-केन्द्र खड़े हैं, मौसम-उपग्रहोंसे सूचना ग्रहण करते हुए, गुब्बारे उड़ाकर मौसमके भेद मालूम करते हुए, 'बम्बल-बी' नामक झूलेदार कुरसी-जैसे यन्त्रपर बैठे हुए वैज्ञानिक जेट-प्रणालीके ज़रिये इधरसे उधर भागते दौड़ते नजर आते हैं। उनके चेहरोंपर जिज्ञासा और ज्ञानकी मिली-जुली दीप्ति है। वह अनुसन्धान-केन्द्र-२ से निकलता हुआ नौजवान अच्छी वर्षा होनेकी भविष्यवाणी करके निकला है–खिलखिलाता हुआ। केन्द्रके बाहर टिड्डीकी तरह टाँगें फैलाये खड़े 'ग्रासहॉपर' यन्त्रको देखता है, तो रुक जाता है। यन्त्रके पास आकर वह उसके पुर्जोंका सूचना-पट देखता है—सब ठीक है····ऊपर वायुमण्डलमें चल रही उथल-पुथल, तापमान, दाब, हवाकी शक्ति और दिशा सम्बन्धी सभी सूचनाएँ इस यन्त्र-द्वारा ठीक-ठीक ढंगसे प्रसारित हो रही हैं।····अपनी हलकी-फुलकी पोशाकमें कूदता-फाँदता यह युवक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बम्बल-बी' यन्त्रमें जा बैठता है और वह झूलेदार कुरसी उसे अपने घर पहुँचाती है। उसकी पत्नी और बच्चे उसका स्वागत करते हैं। बच्चे अभी स्कूलसे लौटे हैं।"

"दक्षिण-ध्रुवपर बच्चे ?" मैं अपने-आपको नहीं रोक पाता और डॉ० सिरोही-का सपना बीचमें ही तोड़ते हुए पूछता हूँ, "क्या ये लोग दक्षिण-ध्रुवपर पहुँचकर आबादी बढ़ानेका महान् कार्य भी जारी रखेंगे ?"

डॉ० सिरोही हँसते हुए कहते हैं, "तो क्या तुम २००० ई० में भी नारीको दक्षिण-ध्रुव नहीं जाने दोगे। नारी नहीं पहुँचेगी तो वहाँका अकेलापन कौन तोड़ेगा। जानते हो, आज दक्षिण ध्रुवकी नारीविहीन दुनियामें लोग बिना परिवारके कितने परेशान रहते हैं !"

"मतलब यह कि २००० ई० में लोग यह प्रयोग भी करेंगे कि दक्षिण-ध्रुवपर नारीके कोमल रजत-चरण पड़वाकर देखा जाये कि क्या होता है !" मैंने कहा, "यानी वैज्ञानिक भी बिना नारीके भरी-पूरी दुनियाकी कल्पना नहीं कर सकते ?"

"कैसे कर सकते हैं, आखिर वैज्ञानिक भी तो हाड़-माँसके इनसान हैं !" वैज्ञानिक सिरोहीके भीतर बैठा हुआ मानव बोला।

"वह तो ठीक है, पर दक्षिण-ध्रुवपर महामायाको ले जानेसे पहले, अस्पतालों और जेलोंका उचित प्रबन्ध होना चाहिए।"

फिर हम दोनों ही खिलखिला उठते हैं।

बात आगे बढ़ाते हुए डॉ० सिरोही बताने लगते हैं—"बढ़ती हुई आबादीका एक बड़ा भाग ध्रुवोंपर बसाया जा सकेगा—यह अपने आपमें बहुत बड़ी उपलब्धि होगी। इन प्रदेशोंसे लगे समुद्रोंमें-से छोटे-छोटे श्रिम्प और क्रिल तथा बड़े-बड़े सील और ह्वेल-जैसे प्राणी भूखी दुनियाके काम आ सकेंगे।"

भूखका ज़िक्र छिड़ते ही हम दोनोंकी निगाहें कलाई-घड़ियोंपर गयीं, जहाँ सन् '६७ के नवम्बर मासका समय टिक-टिक कर रहा है। तैंतीस वर्ष बादके दक्षिण-ध्रुवका सपना आनेवाली पीढ़ीके लिए छोड़कर हम भारतीय कृषि-अनुसन्धानशालाकी पादप-क्रिया-विज्ञान-प्रयोगशालासे बाहर निकलते हैं। जामुनके पेड़ोंकी लम्बी क़तार पार करके ईस्ट पटेल नगरकी सड़कपर आ जाते हैं जहाँ ठण्डी हवा, स्कूटरों-बसोंका शोर, अजनबी चेहरे और अपनी-अपनी धुनमें भागते हुए लोग हमें वर्तमानकी धरतीपर उतार देते हैं। डॉ० सिरोही पास रहते हैं। मैं बस स्टैण्डपर खड़ा '१०–ए' का इन्तज़ार करने लगता हूँ। यों ही जेबमें हाथ डालता हूँ—मूँगफलीके कुछ छिलके। निकालकर फेंक देता हूँ। अभी-भी आँखोंमें जेट-प्रणाली-से चलनेवाली कुरसी—'बम्बल-बी' घूम रही है, जिसपर बैठकर चन्द मिनटोंमें राणाप्रताप बाग़ पहुँचा जा सकता है। पर जानता हूँ, अभी आधा घण्टे तक बस नहीं मिलनेवाली। फिर मिचमिचाती आँखोंमें सपनोंके छिलके करकने लगेंगे। तो क्या आँखें ही नोंचकर फेंक दूँ ? ■ ■

डी–३, राणाप्रताप बाग़,
दिल्ली–७,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
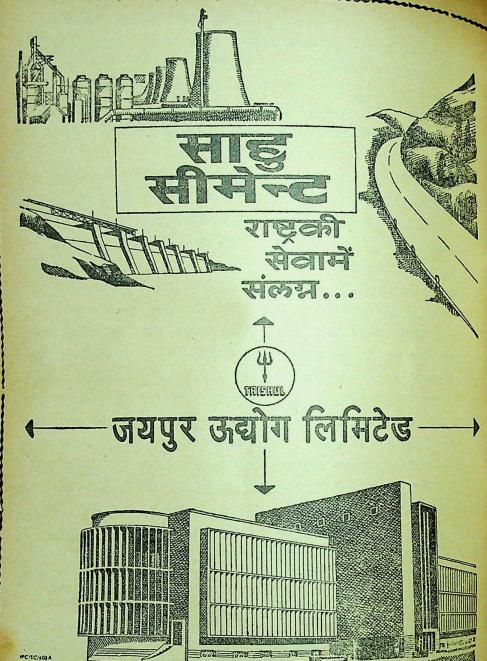
॥ अनुवंशिक हेरफेर ॥ 'रसायन-विज्ञानकी शाखा कीमियागरीकी तरह जीव-विज्ञानकी शाखा जीनियागरी (एलजेनी) है। यह एक नया विज्ञान है जो जीनोंकी कारीगरी और वैज्ञानिकोंकी जादूगरीका करिश्मा है। भविष्यमें प्राणियों और पौधोंके काया-पलटकी सम्भावना जीनियागरीमें विद्यमान है।...

जीनियागरी

■

प्रेमानन्द चन्दोला / हालकी भौतिकीय विज्ञानकी सफलताएँ अपेक्षतया अधिक प्रसिद्ध और मार्केकी रही हैं, लेकिन देखा जाये तो इस बीच जीवविज्ञान-सम्बन्धी प्रगति और भी अधिक सनसनीखेज़ रही है। ऐसा लगता है कि जीवविज्ञानसे सम्बद्ध प्रगति लोगोंकी निगाहमें कम आ पायी है। जीवधारियोंके रासायनिक संघटन और उनके अभिलक्षणों, जीवोंके उद्भव और सजीव पदार्थोंके कृत्रिम संश्लेषणसे सम्बद्ध खोजोंने जीववैज्ञानिक अनुसन्धानको पूर्णतया बदलकर एक नयी दिशा दी है। सबसे अधिक मनोरंजक आधारभूत कार्य आनुवंशिकता या पैतृक परम्परा सम्बन्धी अनुसन्धानमें हुआ है। आनुवंशिक या पैतृक पदार्थके स्वभावकी व्याख्या करके उसके गुणोंको स्पष्ट रूपसे समझा गया है। इन अधिकांश अनुसन्धानोंमें जीव-विज्ञानियोंने शरीरकी इकाई या कोशिकाका अध्ययन आधारभूत आणविक स्तरपर किया है।

विज्ञानमें कल्पना करना और सपने देखना अबतक वैज्ञानिक कल्पित कथाओं और उपन्यास-लेखकों तक ही सीमित था, परन्तु ऐसी अजीबोग़रीब बातें जब कुछ-कुछ खरी उतरने लगीं तो गम्भीर वैज्ञानिक भी प्रेरित होकर इस नये खेलमें शरीक हो गये। जॉर्ज ऑरवेलकी भविष्यवाणीके अनुसार भावी जीवन भले ही उतना अत्युक्तिपूर्ण न हो पर दुनियाके महान् वैज्ञानिकोंकी टोलीकी भविष्यवाणी भी कम अचरजपूर्ण नहीं है। वैज्ञानिकोंकी भविष्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाणी है कि जीव-विज्ञानके क्षेत्रमें अनेक क्रान्तिकारी खोजें होंगी और इनमें आनुवंशिक हेरफेर अर्थात् सन्ततिमें लक्षणोंके आमूल चूल परिवर्तनकी चौंकानेवाली वैज्ञानिक क्रान्ति विशेष रूपसे उल्लेखनीय है।

● शरीरकी इकाई यानी कोशिका :

जीवधारियोंके शरीरमें असंख्य छोटे-छोटे कक्ष होते हैं। इन कक्षोंको कोशिका या 'सेल' नाम दिया गया है। अनेक कोशिकाओं-के समूह मिलकर अंग और विभिन्न अंग मिलकर शरीर बनाते हैं। रक्त भी जीवित तरल कोशिकाओंका समूह है। इस प्रकार कोशिका शरीरकी इकाई है और सारे क्रिया-कलाप, उद्दीपन, प्रतिक्रिया, वृद्धि, परिवर्धन, चेतना, जनन, मृत्यु यानी सब कुछ कोशिका-में ही होता है। कोशिका ही जीवनकी कुंजी है। इसीमें ही जीवितकी संज्ञा प्रदान करने-वाला पदार्थ जीवद्रव्य (प्रोटोप्लाज्म) रहता है। यह विविध आकार-प्रकारकी होती है और प्रत्येक कोशिका अपने प्रकारके कार्यकी विशेषज्ञ होती है।

कोरी आँखसे कोशिका दिखलाई नहीं पड़ती। सूक्ष्म निरीक्षणके लिए सूक्ष्मदर्शी व इलेक्ट्रोन-सूक्ष्मदर्शीकी सहायता लेनी पड़ती है। औसत कोशिकाका आकार व्यासमें एक सेण्टीमीटरके १/२,००० भागके बराबर होता है। यह एक सूक्ष्म व जटिल स्वचालित रासायनिक फ़ैक्टरी है जिसकी सम्पूर्ण प्रक्रियाकी हमें सराहना करनी ही होगी। यह रासायनिक सूप या रससे सराबोर रहती है और शरीरकी जरूरतकी चीज़ोंको आवश्यकतानुसार ग्रहण करती है। कोशिका-में प्रायः सभी चीजें पायी जाती हैं, जैसे कि तेल, वसा, मोम, मण्ड, रेजिन, एलकोहल, शर्करा और सबसे महत्त्वपूर्ण पदार्थ प्रोटीन।

कोशिकाका पदार्थ या जीव-द्रव्य, कोशिका द्रव्य (साइटोप्लाज्म) कहलाता है, और इसके बीचमें अधिक घना व गाढ़ा पदार्थ होता है जिसे केन्द्रक या न्यूक्लियसकी संज्ञा दी गयी है। यह केन्द्रक ही कोशिकाका निर्देशक व नियन्त्रक होता है। इसीमें जीवनका सार और रहस्य गर्भित होता है। हमें इसीका द्वार खोलना है कि इसका क्या रोल और क्या महत्त्व है?

प्रत्येक केन्द्रकमें धागे-जैसी संरचनाएं होती हैं, जो आनुवंशिक या पैतृक गुणोंसे सम्बद्ध होती हैं। सूत्र-जैसी आकृतिके कारण इन्हें गुणसूत्र या क्रोमोसोम नाम दिया गया है। ये कोशिकाकी गतिविधिका संचालन करनेके अतिरिक्त सम्पूर्ण जीवन-कलापोंके नियन्त्रणका महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। गुण-सूत्र ही एक पीढ़ीसे दूसरी पीढ़ीमें आनुवंशिक निर्देशोंका वहन करते हैं। ये जोड़ोंमें होते हैं और मानवमें २३ जोड़े होते हैं अर्थात् ४६। तेईसवाँ गुणसूत्रका जोड़ा विशेष प्रकारका होता है जिसे 'लिंग-गुणसूत्र' (सेक्स क्रोमोसोम) कहते हैं। प्रत्येक गुण-सूत्रके जोड़ेमें दो पृथक् 'अर्द्ध' होते हैं। लिंग गुणसूत्रके दोनों अर्द्ध स्त्री-जनन-कोशिकामें समान और नर कोशिकामें असमान होते हैं। समान इसलिए कि स्त्रीमें दोनों अर्द्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'एक्स' (X-X) और असमान इसलिए कि नरमें ये 'अर्द्ध' एक्स और वाई (X-Y) होते हैं।

प्रत्येक मानवके जीवनका आरम्भ एक सूक्ष्म कोशिकासे होता है जो दो विपरीत जनन-कोशिकाओं—माताकी रजके अण्डाणु और पिताके वीर्यके शुक्राणु—के परस्पर मिलनेसे बनती है। अण्डाणु तथा शुक्राणु दोनोंमें २३-२३ गुणसूत्र होते हैं जो मिलकर पुनः ४६की संख्या स्थापित कर लेते हैं। गर्भ-धारणके समय ही शिशुका लिंग निर्धारण हो जाता है। यदि स्त्री अण्डाणु 'एक्स' गुणसूत्रवाले शुक्राणुसे मिलता या निषेचित होता है तो दो 'एक्स' (X-X) गुणसूत्रोंके कारण शिशु लड़की होगी, और यदि अण्डाणु
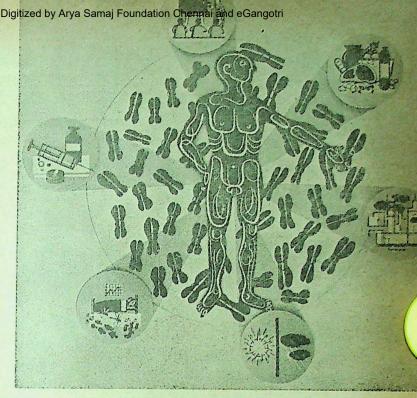
मानव शरीरके चारों ओर चक्रके अन्दर आनुवशिक पदार्थ या जीनोंवाले गुण-सूत्र (क्रोमोसोम)। ये २३ जोड़े यानी कुल ४६ हैं। चक्रके बाहर प्रतिनिधि कारक।

'वाई' गुणसूत्रवाले शुक्राणुसे निषेचित होता है तो 'एक्स-वाई' (X-Y) गुणसूत्रोंके कारण शिशु लड़का होगा।

प्रत्येक निषेचित अण्डाणुके गुणसूत्रोंमें जीवनके निर्देश निहित होते हैं और इन्हीके आधारपर वह अण्डाणु या कोशिका विशिष्टतया मानव या मूषक, कुत्ते या कुकुरमुत्तेमें परिवर्धित होती है। इन ४६ सूक्ष्म फीतों या धागोंमें ही मानव-सृजनके सारे निर्देश अंकित होते हैं। क्या ग़ज़बकी बात है? और यही ग़ज़बकी बात जीवविज्ञानियोंको शताब्दियोंसे परेशान किये हुए थी। तीन शताब्दी पहले उन्होंने अनुमान किया था कि शायद प्रत्येक अण्डाणुमें पूर्ण परिपक्व मानवकी मुड़ी-तुड़ी पूर्ण प्रतिकृति होती है, जो पहले शिशु और फिर मानवमें परिवर्धित हो जाती है। पर कितना ग़लत सोचते थे वैज्ञानिक भी उस समय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन यह अवश्य है कि प्रकृति सचमुच जीवन-निर्देश लिखती या देती है। अण्डाणुका आस-पाससे रसायन ग्रहण करना; उनका उपयोग; विभाजन व नयी कोशिकाओंका निर्माण; फिर इन कोशिकाओंका यकृत्, मस्तिष्क, आमाशय, हाथ-पैर आदि अंगोंमें रूपान्तरण; यह सब कुछ इन्हीं गुप्त संकेतोंपर चलता है। पिछले दस-पन्द्रह वर्षोंमें जीव-विज्ञानकी सबसे सनसनीखेज़ उपलब्धि यह है कि हम इन निर्देशोंको देख सकते हैं, क्योंकि ये अब गूढ़ न रहकर भौतिक या स्थूल हो गये हैं। वैज्ञानिकोंने इस गूढ़ संकेत-लिपिको समझना शुरू कर दिया है ताकि भावी प्रयोग ठोस व पुष्ट बुनियादपर आधारित हों।

बारीकीसे अध्ययन करनेपर ज्ञात होता है कि गुणसूत्रोंमें आनुवंशिकतासे सम्बद्ध अन्य छोटी इकाइयां भी होती हैं जिन्हें 'जीन' कहकर पुकारा गया है। ये जीन गुणसूत्रमें पंक्तिरूपमें विन्यस्त होते हैं। इलेक्ट्रोन-सूक्ष्मदर्शीकी सहायतासे इन्हें देखा जा सकता है। ड्रोसोफिला या फलमक्खी, फफूँदियों, विषाणुओं, बैक्टीरिया आदिके निरूपणसे ज्ञात होता है कि ये जीन भी अन्य सूक्ष्म कणिकाओंके बने होते हैं। गुणसूत्रोंमें विन्यस्त ये जीन ही आनुवंशिक गुणोंका निर्धारण करते हैं। रासायनिक कारिन्दों या एंजाइमोंके माध्यमसे ये शरीरकी समस्त क्रिया-विधिपर प्रभाव डालते हैं और इनके अभावमें हमारा शरीर बस निर्जीव गठरीकी मानिन्द रहता है।

जैसे गुणसूत्र जोड़ोंमें होते हैं उसी तरह जीन भी होने चाहिए न। जीन-युग्मके दोनों सदस्य या लक्षण प्रायः विपरीत होते हैं और उनका प्रभाव समान नहीं होता। उदाहरणके लिए यदि किसी गिनी पिगमें काले बालोंवाले दो जीन हैं तो बाल काले होंगे और सफ़ेद बालोंवाले दो जीन हैं तो बाल सफ़ेद होंगे। किन्तु यदि एक काले बालोंवाला और दूसरा सफ़ेद बालोंवाला जीन हो तो? क्या उसका रंग मिला-जुला अर्थात् भूरा होगा? नहीं उसके बाल बिलकुल काले होंगे। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि काले रंगका जीन सफ़ेद रंगके जीनपर हावी होता है यानी उसके प्रभावको आच्छन्न कर देता है। अतः ऐसे प्रमुख जीनको प्रभावी और आच्छादित हो जानेवाले जीनको अ-प्रभावी जीन कहते हैं।

● जीनकी कारीगरी, विज्ञानकी जादूगरी :

रसायन-विज्ञानकी शाखा कीमियागरी (एलकेमी) की तरह जीव-विज्ञानकी शाखा 'जीनियागरी' (एलजेनी) है। यह एक नया विज्ञान है जो जीनोंकी कारीगरी और वैज्ञानिकोंकी जादूगरीका करिश्मा है। जीवोंमें कृत्रिम रूपसे रासायनिक छेड़-छाड़ या विकिरण आदि विविध चेष्टाओंके उत्प्रेरणसे विविध प्रकारके जीव व नस्लें उत्पन्न करना ही जीनियागरी है। इस बढ़ते विज्ञानके फलस्वरूप भविष्यमें प्राणियों व पौधोंके कायापलटकी अनेक सम्भावनाएँ हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एच० जे० मुलर दुनियाका पहला जीनियागर था। उसने ही पहले-पहल एक्स-रे विकिरण-द्वारा जीन-परिवर्तनकी तरक़ीब निकाली। इसी आधारपर विकिरण-द्वारा गेहूँके लाल जीनको शर्बती रंगके जीनमें बदलकर शर्बती रंगका गेहूँ अस्तित्वमें लाया गया। ड्रोसोफिला या फलमक्खीपर काफ़ी अरसेसे प्रयोग हो रहे हैं और हम इसके आभारी हैं कि इसने अपनी जान देकर हमारा ज्ञानवर्धन किया है। जीन परिवर्तन-की डण्डी घुमाकर एक ही जाति या एक ही प्रकारकी फलमक्खीको मुड़े, सीधे या छोटे पंखोंवाली, लाल या सफ़ेद आँखोंवाली; काले या भूरे शरीरवाली, विभिन्न प्रकारके टाँगोंवाली या जैसी चाहो वैसा बनाया जा सकता है। वैसे मूलरसे पहले गुरु मार्गन ड्रोसोफिलापर ये प्रयोग आरम्भ किये थे परन्तु जीनियागरीके ध्येयसे नहीं। मक्खियों-के कायापलट सम्बन्धी इन अनुसन्धानोंके पुरस्कारस्वरूप मॉर्गन और मुलरने क्रमशः १९३३ और १९४६ में नोबल पुरस्कार प्राप्त किये।

जैसे विकास अमीबासे आरम्भ होकर मानव तक पहुंचा है उसी तरह लगता है, वैज्ञानिकों-द्वारा जीनोंकी कारीगरीका कमाल भी मक्खीसे शुरू होकर और मानव तक पहुंचकर कई गुल खिलायेगा। भारतीय कृषि अनुसन्धान-संस्थान, नयी दिल्लीमें ऐसे ही प्रयोगोंसे रंग बदलते खाद्यान्न, फल और सब्जियाँ देखनेको मिलेंगी। गामा विकिरण-से गेहूँकी विभिन्न क़िस्मोंको बदला गया है। तोतेकी प्रिय मिर्च लाल रंग भूलकर नारंगी रंगमें रंग जाती है। ट्रॉम्बेके भाभा परमाणु-केन्द्रमें असामान्य बड़े दानेवाली मूँगफली-विकसित की गयी है। सब्जियोंका राजा आलू भी इतनी बड़ी और बढ़िया क़िस्मका बना दिया गया है कि उसे महाराजा या शहंशाह आलू कहना उचित होगा।

पौधोंपर जीन-परिवर्तन-द्वारा मनचाहे प्रकारके पौधे उत्पन्न किये जा सकते हैं। अनेक बालों, बड़े दानों व अधिक उपज-वाले गेहूँ आदिकी क़िस्में विकसित की जाने लगीं तो भूखे भारतको और क्या चाहिए। इस सन्दर्भमें भारतके डॉ० स्वामिनाथन और डॉ० अठवाल विश्वचर्चित विभूतियाँ हैं, जिन्होंने अधिक उपजवाली गेहूँ, बाजरा आदि-की उन्नत क़िस्में उत्पन्न की हैं और उत्पन्न करते जा रहे हैं। यह भी आश्चर्य नहीं कि किसी दिन बादामसे भी बड़े गेहूँके दानेवाली क़िस्में लहलहाने लगें। फिर तो कम भूमिमें ही अधिक उपज होने लगेगी और इससे अधिक बड़ी उपलब्धि और क्या होगी।

सामान्यतया जीन पीढ़ी-दर-पीढ़ी नक़ल करता जाता है। परन्तु कभी-कभार यह ग़लती कर बैठता है, इसलिए बदल जाता है। यह क्या बदलता है, इसका प्रभाव ही बदल जाता है। जीनके इस परिवर्तनको उत्परिवर्तन या म्यूटेशन कहा गया है। जीनके बदलनेका अर्थ है मर्यादा तोड़ देना। उदाहरणके लिए, काला रंग उत्पन्न करनेवाला जीन उत्परिवर्तनके कारण भूरा रंग उत्पन्न करनेवाला या किसी भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंगको न उत्पन्न करनेवाला हो सकता है। बदला हुआ जीन मौलिक जीनकी तरह स्थायी हो जाता है। फिर वह नये रूपमें उत्पादन करता चला जाता है। कभी-कभी गुणसूत्रोंके टूटने और टूटे भागोंके पुनर्विन्यासके कारण भी परिवर्तन हो जाते हैं।

मानव समेत सभी जीव-जातियोंमें हुए अब तकके उत्परिवर्तनोंमें कुछेक ही लाभदायक वरना अधिकांश हानिकारक या घातक सिद्ध हुए हैं। मृत्यु, वन्ध्यता, दुर्बलतावाले दोषी जीनोंके कारण जीव लुप्त हो जाता है और ओजवाले जीनोंके कारण परिरक्षित रहता है। इनकी बदौलत ही भूवैज्ञानिक युगोंके अनन्तर जीव-विकास हुआ है।

१९२७ में मुलरने घोषणा की थी कि विकिरणमें रखी फलमक्खियोंकी सन्ततिमें आनुवंशिक अपसामान्यताएँ आती हैं। तबसे वैज्ञानिक प्राणियों व पौधोंमें ताबड़तोड़ अनुसन्धान-कार्यमें लगे हैं। अध्ययनके बाद पाया गया कि सभी विकिरण अगर गुणसूत्रों व जीनों तक पहुँचते हैं तो उनमें अवश्य उत्परिवर्तन पैदा करते हैं। विकिरण गुणसूत्रोंके तोड़नेका कार्य भी करते हैं। विभिन्न विकिरणों—जैसे न्यूट्रोन, एक्स-रे गामा किरणों, रेडियोऐक्टिव उत्पादों—आदिका प्रभाव क़रीब एक-सा ही होता है।

• जीवन—किसका चमत्कार ?

जीवनका आरम्भ एक सूक्ष्म कोशिकासे होता है और यही कोशिका नौ महीनेकी अवधिके उपरान्त मानव-शिशुमें परिवर्धित हो जाती है। यह अकेली कोशिका कैसे जानती है कि कौन रसायन कैसे ग्रहण करने हैं? कैसे वृद्धि करनी है? कब और कैसे विभाजन करना है? कैसे दो, चार, आठ, सोलह....और अनगिनत कोशिकाओंमें विभाजन करके खून, मांस, हड्डी, तन्त्रिका आदि अंग बनाने हैं? क्यों विशिष्ट रूपसे मानवका शिशु मानव, चूहेका बच्चा चूहा और ह्वेलका बच्चा ह्वेल होता है? सच, यह सब कुछ कितना जटिल और विलक्षण है। लेकिन वैज्ञानिक इस सोच-विचारमें ही पड़े रहते तो कर चुके थे अपना काम। यह सब अन्धविश्वासके सहारे न छोड़कर वे समस्या सुलझानेमें जुट गये। गत कुछ वर्षोंमें उन्होंने इस गूढ़ बातका पता लगा ही लिया। वे ज़िन्दगीकी तह—कोशिका और उसके केन्द्रककी अन्तर्वस्तुओं—तक गहरे पैठ गये और जटिल गर्भमें छिपे रहस्यके मोती बीन लाये।

और तो और, वैज्ञानिकोंने प्रयोगशालामें कृत्रिम रूपसे रसायनों-द्वारा जीव-सृजन-कार्य भी आरम्भ कर दिया है। इस सन्दर्भमें डॉ० फ़ॉक्स, मिलर और ओपेरिन तथा भारतके डॉ० कृष्णबहादुर और प्रोफ़ेसर पर्तीके नाम विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं।

विस्मयकी बात यह है कि जीवोंकी रचना करनेवाले रासायनिक पदार्थ स्वयं तो बेजान होते हैं पर कुछ विशेष सक्रियताके कारण जीवोंको जानदार बना देते हैं। ऐसे ही हैं अमीनो अम्ल। अमीनो अम्लोंके बिना जीवन असम्भव है क्योंकि ये प्रोटीन निर्माणके लिए अति आवश्यक हैं और प्रोटीन जीव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीरोंके लिए। अतः प्रोटीनोंको यदि हम जीवनका ही पर्याय मानें तो अत्युक्ति न होगी। और इन अमीनो अम्लोंने ही भारतीय वैज्ञानिकोंको प्रेरित किया।

उन्होंने प्रयोगशालामें कृत्रिम रूपसे आदि या प्राग्जैविक-कालके वातावरणको स्थापित कर वैसी ही रासायनिक अभिक्रियाओंके लिए उपयुक्त माध्यम बनाया। पैराफ़ार्मेल्डीहाइड, पोटेशियम नाइट्रेट, फ़ेरिक क्लोराइड और पानीके मिश्रणको 'स्टेरीलाइज्ड' अवस्थामें ५०० वाटके बिजलीके बल्बकी ओर उन्मुख करके अमीनो अम्लोंका निर्माण किया गया। अमीनो अम्ल बन जानेके बाद इनके अणु जब परस्पर मिलते हैं तो उनसे बननेवाली छोटी इकाइयोंको पेप्टाइड तथा उनसे कुछ और बड़ी इकाइयोंको, जिनपर जीवन आधारित है, प्रोटीन कहते हैं। तदुपरान्त 'स्टेरीलाइज़' किये अमीनो अम्लोंको प्रकाशमें रखनेसे पेप्टाइड बनाये गये। फिर विलयनके ही कुछ उत्प्रेरक प्रोटीनों या एंजाइमोंने अभिक्रियाके माध्यमसे संजीवनीका कार्य किया और रासायनिक अजीवित विलयनोंके सम्पिण्डित अणुओंको जीव-अणुओंमें परिणत कर दिया। भारतीय वैज्ञानिकोंने इनका नाम 'जीवाणु' (जीवित अणु) रखा। इन जीवाणुओंमें जीवित पदार्थोंकी तरह वृद्धि, विभाजन (उत्पादन) व उपापचय-सक्रियताके गुण थे। इनकी तुलना आरम्भिक केन्द्रकहीन कोशिकाओंसे की जा सकती हैं जिनसे कि केन्द्रकयुक्त कोशिकाएँ और फिर आदि जीव उत्पन्न हुए।

कृत्रिम रूपसे जीव-सृजनके बाद शनैः-शनैः इनको किसी भी तरहसे परिवर्तित किया जा सकता है। यहाँतक कि अमीबासे लेकर मानव तक विकसित किया जा सकता है। विभिन्न जीनों और गुणसूत्रसंख्याके कारण ही जीव भिन्न होते हैं। अतः विशेष गुणसूत्र संख्यारोपणसे जीव विशेष बनाया जा सकता है और इस विधिसे एक जीव दूसरे जीवमें भी बदला जा सकता है।

● आनुवंशिकताका आधार-अणुः

गुणसूत्रका रासायनिक दृष्टिसे सूक्ष्म अध्ययन करनेसे ज्ञात होता है कि उसका प्रमुख घटक एक मालानुमा लम्बा अणु है। इस आधार अणुका नाम है डी० एन० ए० या डीऑक्सीराइबोन्यूक्लीइक एसिड। यही आनुवंशिकताका असली घटक या वाहक है और इसीमें जीवनिर्माणके सारे निर्देश अंकित होते हैं। १९५३ में कैम्ब्रिजके दो युवा वैज्ञानिकों, डॉक्टर वाटसन और क्रिक, ने डी० एन० ए० के आकारसे सम्बद्ध सिद्धान्तका प्रतिपादन किया था।

यह डी० एन० ए० छोटे चार परमाणुओंकी एक लम्बी शृंखला है जो परस्पर चढ़ी हुई दो लड़ियोंके रूपमें होती है। परमाणुओंके इन चार छोटे समूहोंके नाम एडिनीन, थाइमीन, साइटोसीन और ग्वानीन हैं। डी० एन० ए० के इन्हीं चार समूहोंके अनुक्रममें पैतृकताकी सारी इबारत लिखी होती है। निर्देश देनेमें तारके मोर्स

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोर्डके 'डॉट और डैश' की तरह डी० एन० ए० कोड इन चार जोड़ी परमाणु-समूहोंका उपयोग करता है।

वैज्ञानिकोंका विश्वास है कि एक आनुवंशिक वाक्यकी इबारतके लिए क़रीब १,००० डी० एन० ए० अक्षरोंकी आवश्यकता होती है और इनसे तब एक आनुवंशिक इकाई या जीन बनता है। इस प्रकार दूसरे अनुक्रमसे दूसरा जीन बनता है। गुणसूत्रोंके 'अध्याय' में जीन 'वाक्य' के रूपमें है। अनुमान किया गया है कि मानवमें क़रीब १० करोड़ जीन होते हैं, जो विभिन्न लक्षणोंके लिए उत्तरदायी होते हैं।

आनुवंशिक विज्ञानियों-द्वारा मानवके जीन-मानचित्रका बनाना शीघ्र ही सम्भव हो जायेगा। तब हमें अगर अधिक महत्त्वपूर्ण जीनोंका अनुक्रम मालूम पड़ जाये और खुदा-नखास्ता कोई चीज़ गड़बड़ हो जाये तो हम उसे जीन मानचित्रके अनुसार सही कर सकते हैं। इस प्रकार विभिन्न लक्षणोंके जीनों व उनके परिणामोंमें मनचाहा परिवर्तन कर सकते हैं। बुद्धिसे सम्बद्ध जीनोंमें परिवर्तन करके हम क्या-क्या कर सकते हैं। इसके बारेमें अधिक क्या कहना। ऐसे परिवर्तनोंसे काफ़ी खलबली मचेगी और 'कु' तथा 'सु' दोनोंकी सम्भावना रहेगी। फिर अपनी बुद्धिमत्ता व जीवन-अवधिको दुगना करना, रंग बदलना, बुढ़ापेकी अवधिको काफ़ी कम कर देना आदि बातें मानवके लिए आसान हो जायेंगी। फिर मानवकी इच्छापर है कि वह मानवको मानव रहने दे या अमानव, कुमानव अथवा सुमानव बना दे।

विशेष प्रकारके जीनों-द्वारा ही प्रोटीन विशेष बनता है। दूसरे शब्दोंमें, हमारे गुणसूत्रोंमें प्रत्येक जीनका एकमात्र कार्य होता है—अपने प्रकारका प्रोटीन बनाना। अमीनो अम्लोंके कृत्रिम तारतम्यसे विभिन्न प्रकारके प्रोटीन प्रयोगशालामें बनाये जा सकते हैं और बनाये जा रहे हैं।

डी० एन० ए०के अतिरिक्त आर० एन० ए० या राइबोन्यूक्लीइक एसिड, राइबोसोम आदि घटक हैं जो अमीनो अम्ल और प्रोटीन निर्माणमें महत्त्वपूर्ण योग देते हैं। ये डी० एन० ए० और आर० एन० ए० क्रमशः आर्थर कोर्नबर्ग और सेवेरो ओकोआ नामके अमरीकी वैज्ञानिकों-द्वारा कृत्रिम रूपसे संश्लेषित किये जा चुके हैं और दोनोंको इस महान् कार्यके लिए १९६० का मेडीसनका नोबल प्राइज़ मिल चुका है। आनुवंशिक परिवर्तन या डी० एन० ए० के रूपान्तरणके लिए वैज्ञानिक अनेक युक्तियाँ काममें ला सकते हैं। इसके लिए उन्हें कोशिकासे डी० एन० ए० निष्कासित कर फिर इसके धागोंको एक-दूसरेसे अलग करना होगा। इसके उपरान्त असली बात जो है वह यह है कि, आनुवंशिक लिपिके निर्देशोंमें सूक्ष्म यानी परानिश्चित परिवर्तन करना होगा। और अन्तमें मनचाहे रूपके इस परिवर्तित डी०एन०ए० को पुनः कोशिकामें स्थापित करना होगा।

● जीन-परिवर्तनसे जीव-परिवर्तन : इस प्रकार सारांश रूपमें पुनः यह दोहरा दें कि जीन-परिवर्तनसे जीव-परिवर्तन हो सकते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। गेहूँ, धान, मक्का आदिकी नयी क़िस्में और ज्वारकी बौनी क़िस्मकी तरह यदि मानवकी बौनी क़िस्म भी उत्पन्न की गयी तो लिलिपुत द्वीपके ६ इंची मानव साकार हो जायेंगे। वैज्ञानिकोंको खब्त भी सवार हो सकते हैं। अभी बन्ध्य मक्खियाँ उत्पन्न की गयी हैं तो बादमें बन्ध्य मानव भी उत्पन्न किये जा सकते हैं।

ऐसा भी हो सकता है कि 'शुक्राणु बैंक' स्थापित कर दिये जायें और गुणसूत्रोंके जन्मजात रोग उत्पन्न करनेवाले जीन जन्मके पहले ही नष्ट कर दिये जायें। फिर जीनोंको स्वस्थ, मेधावी, उत्तम, सौन्दर्ययुक्त व नीरोग लक्षणोंसे विभूषित कर दिया जाये तो होनेवाली सन्तति तदनुरूप गुणोंसे परिपूर्ण होगी। कुंजी घुमाकर मनुष्यको जिधर चाहें उधर मोड़ सकते हैं। उसके मस्तिष्कमें आजके युद्धकी बर्बरता, ईर्ष्याकी भावना और अशान्तिकी घुटनके बदले मैत्री व भाई-चारेकी मिठास, प्रेमकी चाह और शान्तिकी पुलक भरी जा सकती है। किन्तु मानव-मन यदि दूसरी ओर प्रवृत्त हुआ तो? तो वह शून्य मस्तिष्कका, गूँगा, डरपोक प्रकारका मानव भी बना सकता है। वह शेरके शरीरमें बकरी या गीदड़का स्वभाव भर सकता है और फिर और कुछ हो, न हो, शेर और बकरी एक घाट पानी पी सकते हैं। लेकिन इसके अतिरिक्त इसका उलटा और अन्य कई विकल्प भी हो सकते हैं। अतः आनेवाले इन वर्षोंमें हमें देखना है कि जीनियागरीके करिश्मोंसे आगे आगे होता है क्या? ■■

२१, निकल्सन स्क्वेयर,
नयी दिल्ली।

Hearty Diwali Greetings
from

W. S. Atkins Private Limited

Planning, Engineering & Management Consultants

27. Free School Street,
CALCUTTA-16.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ अगली यात्राएँ ॥ प्लेनेटोरियममें जब चाँदका स्वरूप विस्तृत रूपमें देखते हैं तो वह बहुत ही बदशक्ल लगता है। उस समय यह सोचना आश्चर्यजनक लगता है कि क्या कल शरद्-पूर्णिमाकी रात यही चाँद हमारे लिए 'सुन्दरतम' था। उसी सन्देहास्पद चाँदके बारेमें कुछ और विवरण··· ··· ··· ··· ···

चाँदपर पहुँचनेसे पहले···

■

अधीरकुमार राहा / उपन्यासकार एच० पी० वेलसने चन्द्रलोककी यात्राकी एक कहानी लिखी थी। इस कहानीमें यात्रियोंको बेरोक-टोक चाँदपर चलते-फिरते दिखाया गया। वे चार मंज़िलकी ऊँचाई तक उछलकर पार हो रहे हैं। चाँदपर नदी जितनी चौड़ी दरारें तथा चाँदकी ज़मीनपर बहुत बड़े-बड़े प्रागैतिहासिक फूल खिलते देख रहे हैं।

यह गुगाह सिर्फ़ वेलसने ही की हो—ऐसी बात नहीं, बल्कि तमाम साइन्स फ़िक्सनके लेखकोंने, जिन्होंने चन्द्रलोककी अभियानकी कहानी लिखी है, उन्होंने भी नायक-नायिकाओं-को चाँदकी ज़मीनपर बेरोक-टोक चलते-फिरते दिखाया है। इन लोगोंने मान लिया था कि चाँदका ऊपरी भाग पृथ्वीकी तरह ही ठोस है।

मगर जो लोग वाक़ई चाँदपर आदमी भेजनेके काममें जुटेंगे, उन्हें चाँदकी ज़मीनके बारेमें इस तरह मनगढ़न्त बातोंपर निर्भर रहनेसे काम नहीं चलेगा।

इतने खर्चके बाद जो यान भेजा गया, चाँदपर पहुँचकर वह अगर आदमियों-सहित 'घप्प'से धूलके सागरमें डूब जाये, सब-कुछ लेकर खस्ता बिस्किटकी तरह मिट्टीके नीचे दब जाये तो फिर चाँदपर आदमी भेजनेसे क्या लाभ ? चाँदसे आदमी साबित वापस लाया जाये—तब न उसे जयमाल मिलेगी ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सन्दर्भमें हम मामलेमें दखल देनेवाले 'प्रेमी'-जीवोंकी बात भूलनेसे काम नहीं चलेगा। महाकाशमें कुत्ता भेजकर एक्सपेरिमेण्ट करते ही, विश्वके सारमेय-प्रेमी जिस क़दर चिढ़ गये थे, उसके बाद अगर कोई अन्तरिक्ष-यात्री अजाने चांदमें जाकर भगवान्‌को प्यारे हो गये तो क्या सारमेय-प्रेमियोंके काउण्टरपार्टके तौरपर मानव-प्रेमी उन ख़ूनी वैज्ञानिकोंको छोड़ देंगे ?

विज्ञान-कथाकारोंके लिए ये दिक़्क़तें नहीं हैं। वे सिर्फ़ अपने नायक-नायिकाओंके ही सृष्टिकर्त्ता या रखवाले नहीं, उनके चन्द्रलोककी दुनियाके भी विश्वामित्र विधाता हैं। अगर एक पंक्तिमें लिख दिया कि चांदकी ज़मीन सख़्त और कड़ी है तो साथ ही यात्री लोग चाँदकी ज़मीनपर बड़े मज़ेसे चलने-फिरने लग गये।

मगर बेचारे इंजीनियर, वैज्ञानिक, टेक्नीशियन जिन्हें इस युगमें वाक़ई चांदपर आदमी भेजकर उन्हें वापस लाने हैं—उन बेचारोंको इस जादूका पता नहीं है। जैसे तबीयतमें आये उस तरह चांदकी ज़मीनको वे सख़्त और ख़तरेसे ख़ाली नहीं बना सकते। अगर चाँदपर जाकर यात्रियोंको निर्भरयोग्य कड़ी ज़मीन न मिले और इस कारण उन्हें चन्द्रलोकमें देह त्यागना पड़े, तब तो विश्वके सैकड़ों 'सोसाइटी फ़र दी प्रिवेन्शन ऑफ़ क्रुयेल्टी टू ह्यूमैन' के सदस्य न केवल उनकी 'गर्दनकी माँग' लेकर दौड़ आयेंगे, बल्कि साथ-ही-साथ सैकड़ों पोथी-पतरा भी ले आयेंगे। क्योंकि पेशेवर हों या शौक़िया, इस [illegible] चन्द्र-भू-विज्ञानियोंने कभी भी बेहिचक यह नहीं कहा कि चांदकी ज़मीन अपने दोनों हाथ उठाकर आदमियोंको अपने सीनेपर उतरनेके लिए आश्वासन दे रही हो। चांदकी ज़मीनका भार सहनेकी क्षमताके बारेमें इन चन्द्रदर्शियोंने कुछ शक और अनुमानकी बात कही है। फिर किस बूतेपर उन क़ीमती यानोंको मौतके मुँहमें ढकेल दिया गया ?

इसीलिए चांदकी ज़मीनके बारेमें लम्बे अरसेके सन्देह और अनुमानसे ही चांदकी ज़मीनकी बात शुरू की जा सकती है।

चांदकी गोलाईके दो रंग हैं। उपली रूपहली और बीच-बीचमें काले-काले धब्बे। मानो पूनमके चाँदपर कालिख पोतनेके लिए ही ये धब्बे हैं। ये रूपहला भाग ही चांद की ऊँची ज़मीन है, जिसे महादेश अंचल कहा जा सकता है। यहाँ अनगिनत छोटे-बड़े गड्ढे, पहाड़, दीवारोंसे घिरे हुए वृत्ताकार प्रान्तर, बड़े पहाड़की तरह ऊँचे टीले, पर्वतमाला, दरारें, गहरी खाई—चांदकी ज़मीनका सबसे ऊबड़-खाबड़ और सँकरीली जगहें ये हैं। ये काले-काले धब्बे चांदके 'समुद्र' हैं। आसपासकी उच्चभूमिसे औसत दो मील नीची समतल भूमि है। यहां कुछ-कुछ गड्ढे हैं। मगर संख्याओंमें वे बेहद कम हैं।

शुरू-शुरूमें भू-विज्ञानियोंने दूरबीनसे चाँदकी इस भू-प्रकृतिको देखकर उससे चांदकी ज़मीनकी प्रकृतिका अनुमान लगानेकी कोशिश की थी। १९६५ में चांदके महा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देशमें गड्ढोंकी बहुतायतकी व्याख्या करते हुए अँगरेज वैज्ञानिक राबर्टने कहा, "चाँद-का ऊपरी भाग जब नरम रहा, उस समय उसके अन्दरूनी गैस तथा जलीय भाप बड़ी तेज़ीसे निकल आया। चाँदके ऊपरी भाग बड़े-बड़े फफोले तथा बुलबुलेके तौरपर उभर आये। उन फफोलों और बुलबुलोंकी मीनारों-के धँसते ही चाँदके सीनेमें अनगिनत गड्ढे बन गये। चन्द्रत्वचा भेदकर अन्दरकी गैस निकल आयी थी, इसलिए इस इलाक़ेकी ज़मीन नरम और भुरभुरी है। चाँदका सबसे पुराना भाग यही है।

हुककी रायकी ओर शुरू-शुरूमें वैज्ञा-निकोंने ध्यान ही नहीं दिया। क्योंकि भीतर-की गैसके कारण उभरी बुलबुले-फफोलेके मीनारोंके गिरते ही अगर गड्ढे बने हैं, फिर साबित बुलबुले और फफोलोंके दो-एक नमूने अवश्य दीखने चाहिए। सभी ध्वंस हो गये हों—यह नहीं हो सकता। जबकि १९३० से पहले तक बड़े-बड़े टीलों-जैसी इन संस्थानों-को किसीने नहीं देखा।

हालाँकि सागरका काला रंग देखकर ही सागरकी ज़मीन किस चीज़से बनी है उसके बारेमें पहले ही अनुमान किया जा चुका था। पृथ्वीमें भी ऐसी काली ज़मीन-वाली बहुत-सी जगहें हैं। दक्षिण भारत और अमरीकाकी कोलम्बिया नदीकी घाटी-की मिट्टी इसी तरह काली है। असलमें यहाँ-की मिट्टी रूपान्तरित लावा है। इसीलिए इस तरह काली है। उसे देखकर ही चन्द्र-भू-विज्ञानियोंको लगा था, क्या चाँदकी

चन्द्रमाके आकाशमें चमकती पृथ्वी: सम्पूर्ण पृथ्वीका यह पहला छाया-चित्र अमेरिकी 'आर्बिटर ५' खोज यान द्वारा चन्द्रमाके निकट-वर्ती आकाशसे (३४३००० किलोमीटरकी दूरीसे) ८ अगस्त १९६७को लिया गया और पृथ्वीको तीन दिन बाद प्रसारित किया गया। इससे एशिया, अफ्रीका, हिन्दमहासागर, और युरॅपका कुछ भाग दीख रहा है। पृथ्वीका प्रकाशित भाग का प्रायः ५/६ इसमें आ गया है। भारत, अरब, तुर्की, इटली, मिस्र आदि स्पष्ट देखे जा सकते हैं।

मिट्टी भी इसी तरह लावासे भरी हुई है?

बादमें, चाँदकी ज़मीनकी रोशनी फेंकने-की क्षमता देखकर इस अनुमानका समर्थन मिला था। साधारण तौरपर चाँदके ये समुद्र ५ प्रतिशत सूरजकी रोशनी फेंकते हैं। ज्वालामुखी पहाड़से निकला हुआ लावा भी इसी मात्रामें सूरजकी रोशनी फेंकता रहता है। रंग-बिरंगे वीक्षणयन्त्रके परीक्षणके बाद देखा गया था कि सिर्फ़ लावा ही नहीं, चाँद-सागरकी मिट्टीमें सालफ़ाइड और आयरन ऑक्साइड भी हो सकता है।

रोशनी फेंकनेकी क्षमता जाँचकर शुरू-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुरूमें महादेश अंचल की जमीनकी प्रकृतिके बारेमें भी यह पता चल गया था। यह उजला महादेश-अंचल ५० प्रतिशत सूरजकी रोशनी फेंकता है। पृथ्वीमें ज्वालामुखी, राख, ग्रानाइट और बैसाल्टकी तरह आग्नेय पत्थर, झामा, कोमार्टज, प्रोफ़ाइरिज और सूक्ष्म-स्वच्छ धूलिकणोंकी इस मात्रामें रोशनी फेंकनेकी क्षमता है। इसीसे अनुमान लगाया जाता है कि चाँदकी उच्च भूमिवाले अंचलमें भी ये सब पदार्थ हैं।

इसके बारेमें सन्देहमुक्त होनेकी दिशामें चाँदका परिवेश बाधा बन गया था। चाँदकी ऊपरी त्वचा चाहे जिस वस्तुसे बनी क्यों न हो, उसका वर्त्तमान रूप सम्पूर्ण निघात

शताब्दीके सीमान्तपर…

इस जागरण के बाद वह रोशनी स्वप्न जब भी टूटेगा
सहस्र नाग मणियों की चकमक का अतीत
अपने लिए पायेगा
इतिहासहीन अँधेरी कन्दराओं के खुले द्वार।
पर क्या होगा। जागरण स्वप्नों का क्या होगा
उस ब्रह्माण्ड नाद का क्या होगा
इस दृश्य संसार के आवेगों का
इस स्पर्श का
इस आवेश का
जो अपने चित्रों को आखरों में
ध्वनियों में अमिट समझता है।
वह शताब्दी के सीमान्त पर चहलकदमी करता हुआ
इन सबको किन-किन अँधेरे खम्भों पर
स्मृति-चिह्नों की तरह लटकायेगा।
वह कब इस रोशनी के अन्तिम भ्रम को
अँधेरी गुफाओं के अन्तिम दरवाज़ों पर छोड़ेगा
वह एक दिन की प्रतीक्षा में बैठा
कब हमारी दुनिया के कैलेण्डर की
आख़िरी तारीख़ घोषित करेगा।
कब। कब। आख़िर कब?

इस म
उसे कु
उसके
इन्द्रिय
उसके
इतिहा
उसके
आकाश
इन छो
और ए
वह बन
बैठा है
वह बन
हम सब
अपने स
इस अ
सन्तही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस मानव-संस्कृति को उसी रास्ते जाना है
उसे कुछ भी कह लो।
उसके बाद शब्द नहीं रहेंगे, वर्ण, ध्वनियाँ और
इन्द्रिय। चेतनाएँ कुछ भी नहीं
उसके बाद
इतिहासहीन समय फैलाव। और फैलाव और कुछ नहीं
उसके बाद एक घने या तरल या किसी हवा में
आकाशचारी अन्धकार अपने पंख फैला कर
इन छोटी चीज़ों को समेट लेगा
और एक गोलाकार। लम्बे कार्पेट में बन्द कर देगा
वह बन्द भविष्य
बैठा है शताब्दी के सीमान्त पर
वह बन्द भविष्य
हम सबके किये हुए कर्मों का परिणाम
अपने सम्पूर्ण निर्णय में
इस अधूरेपन का नियत। बैठा है
अन्तहीन अँधेरी गुफा के द्वार पर।

—गंगाप्रसाद विमल

तथा हलकी मात्रा-में महाकर्षके अधीन होनेके ही कारण बना है। इसीलिए चाँदके पहाड़के पत्थर, समुद्रका लावा, धूलि-कण पृथ्वी-जैसा होगा ही—इसका क्या भरोसा? अलग-अलग प्राकृतिक हालतमें होनेके कारण अगर इनकी प्रकृति और भारवहन-क्षमता अलग-अलग हो तो?

दूरबीनोंकी क्षमता जैसे-जैसे बढ़ने लगी, चाँदका भूदृश्य और भी अच्छी तरह दिखाई देने लगा। उससे चाँदकी जमीनके बारेमें सन्देह तथा अनिश्चय भी बढ़ने लगा।

जिस सागरका वक्ष कभी जमे हुए लावेका मान लिया गया था, बड़ी-बड़ी दूरबीनसे परीक्षा कर देखा गया कि उसके ऊपरके कुछ गड्ढोंमें धूलकी तहें जमी हैं। कुछ गड्ढोंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधा हिस्सा बन्द हो गया है और उसने घोड़ेके नालका आकार ले लिया है। कुछका साराका सारा अंश डूबा हुआ है, केवल थोड़ा-अंश उभरा हुआ है। मगर यह धूल आयी कहाँसे ? किसने यह धूल बनायी ?

वायुप्रवाह निरन्तर पृथ्वी-पृष्ठको घिस-घिसकर और इन्सान अपने रोज़ी-रोटीके धन्धोंके लिए गाड़ी-घोड़े, कल-कारख़ाने चलाकर, खेती-बाड़ी करके, तरह-तरहसे पृथ्वीमें धूलकी सृष्टि कर रहे हैं। चाँदपर आदमी नहीं है, आबोहवामें कोई हलचल नहीं है, फिर धूल कहाँसे आयी ?

खोजमें मरे हुए चाँदपर भी धूलके स्रोत कुछ कम नहीं निकले ! चाँद और पृथ्वीकी युगल यात्रामें महाशून्यके बीचसे उल्काणुपात हो रहे हैं। ध्रुवप्रदेशमें जमे समुद्र-गर्भकी मिट्टी-में मिले उल्काणुके नमूने इकट्ठा करके देखा गया है कि पृथ्वीमें साल-भरमे जिस परिमाणमें उल्का-पात होते हैं, उससे दस लाख सालमें यहाँ कई फ़ुट धूल जमनी चाहिए। आबोहवा-मण्डलसे हीन चाँदमें इस उल्काधूलिका परि-माण और भी अधिक होना चाहिए। क्योंकि गिरनेके बादसे वे एक ही जगहपर पड़े हुए हैं। पृथ्वीकी तरह आदमियोंके कारण, वायु प्रवाह और आँधी-पानी-द्वारा स्थानान्तरित नहीं हो पाये।

इस तरह चाँदपर धूल जमी है। दूसरा एक तरीक़ा और है, जिससे चाँदने खुद ही धूल तैयार की है। उसके दिन और रातके सबसे ऊँचे और सबसे नीचेके तापमानमें काफ़ी फ़र्क़ है। फलस्वरूप सृष्टिके आदिसे लेकर निरन्तर उसकी ऊपरी त्वचाके इसी तरहके संकोचन और प्रसारणसे भी उसका कुछ अंश चूर-चूर होकर धूल बन जानेकी बात पैदा होती है। फिर वायुमण्डल-हीन चाँदमें जो उल्कापिण्ड बेरोक-टोक आ गिरे हैं उन्होंने भी चाँदकी ज़मीनको चूर-चूर करके धूलि-कणोंकी सृष्टि की है।

चाँदके सीनेमें जो थोड़ी-सी धूल जमी रह सकती है—ग्रहणके समय चाँदके ताप-मानका द्रुत क्षय देखकर ही ऐसा सन्देह किया गया था। ऐसा भी देखा गया है कि उस वक़्त घण्टे-भरमें १०० से २०० डिग्री तक चाँदका तापमान घट गया है। उस समय चाँदकी त्वचासे ताप निकलकर महाशून्यकी ओर चला जाता है। जिससे चन्द्र-देह इस तरह ठण्डी पड़ जाती है। प्रश्न यह है कि इतनी जल्दी तापक्षय क्यों होगा ? ऊपरी त्वचाका ताप जैसे विकरित हो जाता है, उसी तरह चाँदके अन्तस्तलसे ताप ऊपरकी ओर उठकर क्षय हुए तापकी पूर्ति क्यों नहीं कर सकता ? जैसा कि रात्रिमें पृथ्वीमें होता है।

पृथ्वीकी त्वचाका तापमान रात्रिमें विकरित होनेपर भी ऊपरका वायुमण्डल उसका कुछ अंश रोक रखता है, और अन्त-स्तलका तापमान ऊपरी त्वचामें आ जाता है। इसीलिए रातके अन्धकार घिर आनेके बाद भी उतनी जल्दी पृथ्वीका तापक्षय नहीं होता। सम्भव है, चाँदकी ऊपरी सतहमें ऐसी कोई चीज है, जो कि ताप-नियन्त्रकका काम कर रहा है और ग्रहणके समय वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाँदके अन्तस्तलका ताप ऊपर उठने नहीं देता। यह काम धूलिकणोंका आवरण भी कर सकता है।

इसीसे अनुमान लगाया जा रहा था कि चाँदकी ऊपरी सतहपर कुछ परिमाणमें धूलिकण हैं। मगर धूलि-स्तर ज़्यादा मोटी नहीं है। उम्मीद की गयी कि इनके नीचे सख्त जमा हुआ लावा होगा। खासकर समतल भूमिके सागरकी ज़मीन ऐसी हो सकती है।

मगर वैज्ञानिकोंने वहाँ भी अड़ंगा लगाया।

उन्होंने कहा, चाँद-सागर अगर लावेसे ही भरा हुआ हो, फिर भी यह लावा सख्त या ठोस नहीं है। क्योंकि चाँदका महाकर्ष पृथ्वीका $\frac{1}{6}$ भाग है, जिसके कारण उबलते हुए लावाके भीतरसे पृथ्वीसे कहीं अधिक परिमाणमें, और अधिक वेगसे, तथा बहुत बड़े-बड़े बुलबुलेके आकारमें चाँदके अन्तस्तलके जलीय भाप और गैस निकल सकी थी। उससे लावा झाँमेकी तरह पोपले हो गये हैं। इसपर धूल जमकर कड़ी मिट्टीकी तरह दीखेगी मगर असली स्थिति बेहद ही खतरनाक होगी। उसपर पैर पड़ते ही शायद पातालमें जा गिरेंगे!

पृथ्वीसे बेतार और तापतरंग भेजकर भी बादमें इस मतका कुछ समर्थन मिला था। पता लगा था कि चाँदकी सतहके नीचे ही झामेकी तरह पोपली पत्थर रह सकती है।

इसके बाद १९५५ में अँगरेज वैज्ञानिक टॉमस गोल्डकी राय प्रचारित होनेपर चाँदकी ज़मीनके परिवेशको लेकर और भी दिक़्क़तें उठ खड़ी हुईं। गोल्डने कहा, पृथ्वीकी तरह आबोहवाके धक्केसे भूमिक्षय न होते हुए भी एक अलग तरीक़ेसे चाँदका भूमिक्षय हुआ है। विपुल-विराट् धूलकी परतें जमी हैं। यह धूलकी परतें कई मील तक गहरी भी हो सकती हैं। आदमीके चाँदपर उतरते ही उसकी धूलि-समाधि हो जायेगी!

इस विपुल धूलिका स्रोत कहाँ है, उसकी व्याख्या करते हुए गोल्डने सूरजकी ओर उँगली उठायी। वहीसे दौड़े आ रहे हैं रंजन रश्मि, बेहद बैंजनी रश्मि, द्रुतगामी सौर-कणिका, प्रोटोन, इलेक्ट्रोन! ४५० करोड़ वर्षोंसे ऐसी ही सारी तेजस्क्रिय कणिका सोख-सोखकर खाईकी दीवारसे झर रहे हैं रेणु-कण—लोन लगे हुए दीवारकी पलस्तरकी तरह। उसके बाद यह चूर्णित रेणु महाकर्षीय खिंचावमें नीचेकी ओर उतरकर सागरके गर्भमें बड़े-बड़े खड्डकी सतहपर जम रहे हैं। इसीलिए सागरका गर्भ काला है। छिलका उतरा हुआ उच्चभूमिका बदन केंचुल उतरे हुए साँपकी तरह उजला है।

गोल्डकी रायकी साधारण तौरपर स्वीकृति न मिलनेके बावजूद चाँदके धूलि-स्तरके बारेमें उन्होंने जो 'डर' पैदा कर दिया था, वह बरक़रार रह गया।

बहुत क़रीबसे जाँचनेके बाद भी चाँदकी मिट्टीका सम्पूर्ण परिचय नहीं मिल पायेगा। उसके लिए चाँदकी ज़मीनपर यन्त्र उतारकर जाँचना होगा। इस कड़ीमें काम शुरू किया था लूना–९ (वजन ९९ पौण्ड) और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वेयर–२ ने (वज़न २९९ पौण्ड, क़रीब एक मोटे आदमीके बराबर)। चाँदके पृष्ठपर उतरकर स्वच्छन्द खड़ा रहनेके बावजूद इससे सन्देहमुक्त नहीं हो सकते कि अलग जगहकी, या अगल-बग़लकी ज़मीनपर ४-५ टनका चन्द्रयान खड़ा रह सकेगा या नहीं, लौटनेके समय रॉकेट ऊपर उछालनेकी प्रचण्ड विक्रिया वह ज़मीन सह सकेगी या नहीं ?

इसके लिए ही चाँदकी जमीनको खोद-खोदकर देखना चाहिए। कमसे कम दस बारह फ़ीट तक खोदकर देखना पड़ेगा कि ऊपरी सतहका गठन कैसा है, शक्ति कितनी है तथा किस उपादानसे बनी है। उपादानका पता लगानेके लिए चाहिए कि मिट्टी खोदकर उसकी रासायनिक परीक्षा की जाये। मई महीनेके शुरूमें भेजा गया सर्वेयर–३ को यही काम करना था। उसने लोहेके हाथसे चाँदकी ज़मीनको १० इंच गहरा खोदा, चाँदके ढेलोंको देखा-परखा। इससे पहले सोवियत लूना–१३ ने भी, सुना है कि, यही काम किया था, मगर उसके नतीजेका पता नहीं चला।

चाँदकी मिट्टीकी बनावट पृथ्वीकी तरह है—सर्वेयर–३ की इस सूचनाके बारेमें अभी भी सन्देहसे परे नहीं हो पा रहे हैं, कमसे कम चन्द्रयान उतारनेकी दिशामें। गहरी ड्रिलसे दस-बारह फ़ुट नहीं खोदनेसे और मिट्टीके रासायनिक परीक्षा न कर पाने तक अन्तरिक्ष-यात्री निर्भय हो सकेंगे—इसमें सन्देह है।

इसके अलावा एक जगह थोड़ी-सी मिट्टी खोदनेपर सारी जगहोंकी मिट्टीके बारेमें पता चल पायेगा—इसका भी क्या भरोसा ? अलग ग्रहके आदमी अगर सहारा रेगिस्तानके किसी एक स्थानपर अपना सर्वेयर–३ भेजकर, जमीन परीक्षा करके, यान उतारनेकी बात सोचते हैं और उतारते समय संचालनकी त्रुटिके कारण सहाराके कई सौ मील दक्षिणमें उनका यन्त्रयान उतरता है, तो वे लोग अफ़्रीकाके घने जंगल-में जा गिरेंगे। इसीलिए उतरनेसे पहले लम्बे-चौड़े इलाक़ोंकी परीक्षा करनी होगी। सुना गया था, अमेरिका शायद सर्वेयरकी कड़ीमें १७ यन्त्र भेजेगी। इनमें-से कुछ चाँद-की ज़मीनको और भी गहराईसे खोदेंगे, मिट्टीकी रासायनिक जाँच करेंगे। कुछ स्वचालित यन्त्र चल-फिरकर जमीनके भारवहन-क्षमताके बारेमें बतायेंगे। सोवियत-समाचारसे पता चला कि उन लोगोंने भी स्वचालित ट्रैक्टर भेजनेकी बात सोची थी। अमेरिकी सूत्रसे एक बार पता चला था कि इस सर्वेयरकी कड़ीमें एक यन्त्र चाँदकी मिट्टी खोदकर कैप्सूलमें भरकर उसे पृथ्वीपर रासायनिक परीक्षाके लिए भेजेगा। यह कार्यक्रम अभी भी है या नहीं, उसके बारेमें पता नहीं चल रहा है। रहनेपर चाँदमें पहुंचनेसे पहले आदमीके हाथमें चाँदकी मिट्टी ज़रूर लग जायेगी !

■■

[अनु० : कंचनकुमार]

१० गोखले रोड,
के–१, फ्लैट नं० १,
कलकत्ता-२०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ एक औरतसे इण्टरव्यू ॥ नया क्या है ? युद्ध···महायुद्ध···भुखमरी···महामारी···बेकारी···अणुबम···बनते-बिगड़ते राष्ट्र···नये-नये आविष्कार···तानाशाह···देश···काल···स्थिति···पुरुष···स्त्री···कुछ भी तो नहीं ! तब···कुछ तो नया होगा···हाँ··· ?············?

सदियों से परे एक नयी सदी !

राजेन्द्र अवस्थी / वही और वैसी ही शाम ! ऐसा ही आजका सवेरा था—सूरजका वही धुलापन और आकाशमें, पुती हुई स्याहीको सोखनेके बादके धब्बे ! धूप—कुछ झुकी हुई, उभरी हुई ! छायाएँ—काँपती और फैलतीं ! सरसराती हवा—कभी इधर, कभी उधर, कभी खिचती और कभी खींचती !

शाम न उदास है, न भरी-पूरी ! बचपन और बुढ़ापेके बीच दबे हुए उभारके पास भी और दूर भी । क्या कुछ है, मेरी समझमें नहीं आता ! यूं कितनी शामें आयीं और गयीं हैं ! एकरस बीतते अतीतके सामने सब अ-रस (नीरस नहीं) हो गया है ! इसलिए मेरा मन कुछ भी समझ नहीं पा रहा । अनुभव और प्रस्तुतिसे दूर वह खोया है, शायद अपने-आपमें । बिगड़ी हुई आँखके परदों-जैसी शाम मेरी मेज़ पर आकर सीधे बैठी है। मैं उसे देख रहा हूँ और उससे एक साथ ढेर-से सवाल पूछनेका जी होता है । मैं आखिर पूछ ही बैठता हूँ— "आपका नाम ?"

"आप ही बताइए !"

"मैं जानता तो आपसे पूछता क्यों ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"बिना नाम जाने ही और कुछ पूछ लीजिए, नाममें ही क्या है !"

"यानी आप अपना नाम नहीं बताना चाहतीं ?"

"मैंने तो यह नहीं कहा।"

"तो ?"

"....।"

मैंने देखा, वह खिसकने लगी है। हाथ बढ़ाकर उसे पकड़नेकी कोशिश की तो उसने हँसते हुए कहा, "इण्टरव्यू देना मेरा धर्म नहीं है। न मेरे पास इतना समय है ! जो है, उसका उपयोग कभी कोई करता है ! मुझे याद है, एक बार, सैकड़ों साल पहले किसीने इसी तरह पराभव और विजयके लिए मुझे चुना था—यानी वह समय जब न दिन हो, न रात ! उसने तुम्हारी तरह पाखण्ड नहीं किया, नाम पूछनेका ! सभ्यताकी दौड़में तुम्हारे-जैसे मूर्ख लोग छोटी-छोटी बातोंमें ऐसे ही समयको खो देते हैं—नाम जानने-जैसी बातोंमें। कई बार प्यार-मोहब्बतकी दुनिया नाम पूछनेमें ही चली जाती है ! आखिर इस अ-सार्थक संज्ञासे इतना लगाव क्यों ? हर जगह, हर सीमापर एक संज्ञा लाकर ही खड़ी कर दी जाये—क्यों आखिर ? व्याकरण-कोषसे क्या 'संज्ञा' नहीं निकाली जा सकती ! यह निकल जाये तो इसके अर्थ विशेषण ले लेंगे और फिर देखिए।..."

अपनी बात पूरी किये बिना वह चुपचाप सरककर न जाने कहाँ ग़ायब हो गयी ! मैंने हाथ बढ़ाकर चारों ओर टटोलना चाहा, परन्तु सब निरर्थक ! बहुत हाथ मारा तो एक और चीज़ हाथ लग गयी—निहायत लिजलिजी, छिपकलीकी तरह बेहूदा और दुर्गन्ध-भरी !

बिना मेरे कुछ पूछे वह मेरी दोनों हथेलियोंमें मक्खनकी तरह फिसलकर लेट गयी। अपनी चमकदार आँखोंसे वह मुझे निहारने लगी। मैंने वे आँखें देखीं—पता ही नहीं लगा, कितनी थीं। उनमें कुछ नीली थीं—गायकी आँखोंकी तरह, कुछ लाल थीं—मछलियोंकी तरह, कुछ हरी थीं—टिड्डियोंकी तरह, और कुछ मखमली-सी बीरबहूटियों-जैसी नरम, कोमल और अपनी ओर खींचती हुई। उसका पूरा बदन फिसलकर मेरी दोनों हथेलियोंके बीच सीधा पसर गया ! सिरके ऊपर (जाने बाल थे या नक़ली रेशमके धागे !) अमरबेल-से फैले छितनेको एक नये उभारके साथ झटका देकर उसने करवट बदली और मेरे ठीक आमने-सामने हो गयी। मेरी ओर देखकर वह मुसकरायी और बोली, "मेरा नाम औरत है !"

"अच्छा !" मैं अभी तक यह नहीं भूला था कि इसके पहले इसी जगह जो चीज़ थी, उसने अपना नाम बतानेसे इनकार कर दिया था। यह बिना पूछे अपना नाम बता रही है ! उसने मेरी ओर अजीब-सा संकेत करते हुए दोहराया—"मेरा नाम औरत है ?"

"जी....मैंने सुन लिया..." मैंने टूटे हुए शब्दोंमें कहा, "लेकिन आप अब भी....!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अब भी क्या ?" वह लिजलिजी आवाज़में बोली।

"आप अब भी औरत हैं ?"

"हाँ !" उसने कहा, "कल भी थी, आज भी हूँ और कल भी रहूँगी। तुम्हें अचरज होता है ?"

मैंने सिर हिला दिया, क्योंकि उसकी नरम मुद्राओंके बावजूद मेरे मनमें भयकी एक सुरसुरी दौड़ गयी थी। उसने उसी तरह लेटे हुए कहा, "मुझे पहचानना तुम्हारे वश-का नहीं है ! तुम्हें मिटाकर भी मैं औरत रहूँगी। तुम जानते हो न, कई कीड़े ऐसे होते हैं, जो एक बार मिलकर मिट जाते हैं। क्यों ? उन्हें उनकी औरत खा जाती है ! मैं यही प्रयोग आदमी नामके जानवर पर करना चाहती हूँ ! अभी तक वह अपने तौर-तरीक़ोंसे हमें मिटानेकी कोशिश करता रहा है ! हमें छोड़कर भी हमारे पीछे भागता रहा है। हमें दुत्कार कर भी, हमें ही जिन्दगी मानता रहा है ! यानी वह हमारी मुट्ठीमें बन्द होकर भी जब चाहे मुट्ठी खोलकर बाहर जाता और फिर भीतर आता रहा है ! हमने वर्षों यह सहा, विद्रोह करना चाहा, उठना-उभरना चाहा, परन्तु हर बार आदमी नामके लिजलिजे और लचीले जानवरने हमें मजबूतीसे पकड़कर विवश कर दिया ! वह भोगकर दुतकारता रहा, दुतकारकर भोगता रहा ! हम इसे इसलिए सह रही हैं कि इसीमें हमारे प्राण पनपते हैं लेकिन अब इन पनपते प्राणोंकी जड़ खोदकर हम इन्हें अमरबेल बना देंगी। ठीक उस दिन,
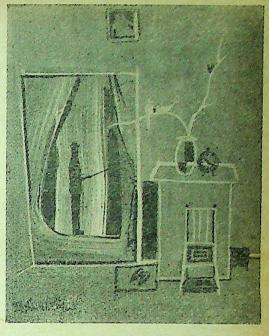
रात : भाऊ समर्थ

जिस दिन मकड़ीकी तरह या बिच्छू या मधु-मक्खीकी तरह हम आदमी नामके जानवरको आहार बना लेंगी....!"

वह एकाएक ज़ोरसे उछली, जैसे उछल-कर वह मेरा मुँह नोच लेगी। ऐसे ही जैसे अबतक कोई प्रेमी अपनी प्रेमिकाको न पानेकी निराशामें उसका मुंह नोचता रहा है या तेजाबसे विकृत करता रहा है। उसने अपनी दसों अँगुलियाँ सामने कीं। उनके नाखून एक-एक इंच लम्बे थे, सामनेसे नुकीले और खूनी लाल रंगवाले। उन्हें दिखाकर वह मुसकरायी। बोली, "डरो मत। इनका ग़लत उपयोग नहीं करूँगी। तुम्हारे बिना मेरा अस्तित्व ही क्या है ? आदमीसे सुन्दर और कोई चीज़ इस दुनियामें नहीं है !....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आओ !"

उसकी आँखोंमें देखते-देखते प्यारका एक नया सैलाब उमड़ आया। अभी क्या था, अभी क्या है ! मुझे लगा, यह सब एक बड़े नाटक-की भूमिका है। उसने एकाएक मेरे पास आकर स्वयं मुझे आलिंगनमें कस लिया। अपने घने बालोंको मेरे चेहरेपर डालते हुए वह एकदम मौन हो गयी। मैं छटपटाने लगा ! बहुत कोशिश की पर छूटनेका रास्ता नहीं मिला तो मैंने अपनेको एकदम आसान और रिक्त छोड़ दिया। निस्पन्द और निश्चल ! उसने अपने चेहरेको उठाते हुए कहा, "यही चाहिए था'''जिस दिन तुम अपने को यूँ सरेण्डर कर दोगे, सबसे ज़्यादा सुखी रहोगे।"

वह मेरे सिरहाने बैठ गयी और मेरे, बालोंको, आँखोंकी पलकोंको, मेरी छातियोंको पेटको और फिर पूरे शरीरको हलके-हलके सहलाने लगी। उसकी नुकीली आँखोंमें ओस-जैसी नमी उतर आयी थी। थोड़ी ही देरमें वह सिसकने लगी और फिर फूट-फूटकर रो पड़ी। मुझे अचरज हुआ। मैंने पूछा, "क्या बात है ?"

"कुछ नहीं !" उसने अपने दोनों हाथ मेरे ऊपर बाज़की तरह बिछा दिये, ताकि मैं उठ न सकूँ। फिर उसने अपने आप कहा, "तुम्हारे लिए रो रही हूँ। तुम मुझे कितना ग़लत समझते हो ! तुम्हीं ग़लत समझने लगे तो मेरा क्या होगा ! तुम्हारे बिना मैं कभी कुछ नहीं रही ! जब-जब मैंने कुछ बननेकी कोशिश की है, मैं टूटी हूँ।"

मैं आँख बन्द किये इस नाटकको देखता रहा। मैंने उसी स्थितिमें कहा, "अब ग़लत नहीं समझूँगा। अबतक समझा, उसके लिए माफ़ी माँगता हूँ।"

वह कितनी ख़ुश हुई, कह नहीं सकता। उसका अट्टहास चारों ओर फैल गया। लेकिन इस बीच एक बड़ा दर्द उभरा और मैं उठकर बैठ गया। मैंने अपने मनको कड़ा किया। यह नाटक चलता रहा, तो समय यूँ ही गुज़र जायेगा ! मैंने उठते ही उसके सौन्दर्यका गुणगान किया। उसके भीतर छिपी हुई ख़ूबियाँ कह डालीं। मैं पूरी तरह उस नाटकमें शामिल हो चुका था। यह मेरा एक पाखण्ड था। मैं जानता हूँ, कोई औरत कभी ख़ूबसूरत नहीं होती। ख़ूब-सूरती आदमीकी आँखोंका गुण है ! लेकिन बहुत बार बहुत चीज़ें मरज़ीके ख़िलाफ़ सोचनी और कहनी पड़ती हैं। मैं उठकर दूसरी कुरसीपर जा बैठा। मैंने कहा, "थोड़ी कामकी बातें कर लें।"

"ओफ़ !" उसने अँगड़ाई ली और बोली, "यानी अबतक बेकामकी बातें होती रही हैं ! यह मेरी इन्सल्ट है ! यू ईडियट ! डैम !"

मैंने देखा, गालियोंकी एक क़तार उतर-कर मेरे सामने बिखरने लगी। मैं चुपचाप आँखें लगाये उसके बदलते चेहरे, बदलती आवाज़ों और बदलती हरकतोंको देखता रहा। उसने अपने ही नाख़ूनोंसे अपने बाल खींचने शुरू कर दिये। फिर अपना ब्लाउज वह फाड़ने लगी। सुनहरे गोटवाली अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काली साड़ी फाड़कर उसने टुकड़े-टुकड़े कर दी! तब भी वह बचे हुए कपड़ोंके उन टुकड़ोंको भी फाड़ती रही, जो उसके जिस्म-के साथ सटे हुए थे। मैंने कहीं अवरोध नहीं किया। कितनी बदसूरत! कितनी घिनौनी! जल-हीन और सूखी हुई पथरायी आँखें! वह बोली, "लीजिए, कहिए क्या काम है?"

मैंने इशारा करते हुए कहा, "बैठिए।"

लोहेके पुतलेकी तरह वह एक कुरसी खींचकर बैठ गयी और आगेके आदेशोंके लिए मेरी ओर देखने लगी। मैंने कहा, "मुझे आपका इण्टरव्यू लेना है!"

"लीजिए!" उसकी आवाज़ फटी हुई और सख्त थी।

"तो आप औरत···?"

मैं कह ही रहा था कि उसने रोककर कहा, "तो अबतक आप मुझे कुछ और समझते रहे हैं?"

"जी नहीं! आप कुछ और हो ही नहीं सकतीं!····मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूँ।"

"पूछिए।"

"कहते हैं, आप भविष्य-ज्ञानी हैं। दुनियाका भाग्य आपकी मुट्ठीमें हैं। क्या यह सही है?"

"हो सकता है।"

"तो बताइए, आज क्या होगा?"

वह खूब जोरसे हँसी। बहुत देर तक हँसती रही। फिर एकाएक गम्भीर हो गयी। उसने प्रश्न किया, "अबतक क्या हुआ है?"

"कुछ भी तो नहीं···बहुत कुछ हुआ है!" मैं सही बात कह ही नहीं सका।

"घबराओ नहीं," उसने कहा, "जल्दी की ज़रूरत नहीं है। बहुत समय है। एक अनन्त, अ-काल मेरे सामने ठहरा है! इसे कोई नहीं छीन सकता। मैं प्रकाशको रोक सकती हूँ। इस स्थितिको बरसों अपनी मुट्ठीमें बाँधकर सीधा खड़ा रख सकती हूँ। इसलिए बहुत इत्मीनानसे बातें करो!—और घबराओ नहीं!"

मैंने अपना प्रश्न दोहराया—"आज क्या होगा?"

उसने व्यंग्य-भरे स्वरोंमें कहा, "तुम्हारी समझमें ऐसे नहीं आयेगा। तुम मेरे प्रश्नोंका उत्तर दो। तुम क्या जानना चाहते हो, मुझे मालूम है।"

थोड़ा रुककर उसने पूछा—"कल क्या हुआ था?"

"मुझे याद नहीं!"

"जो याद न रहे, वह कोई होना हुआ?"

"नहीं!"

"तो समझ लो कल कुछ नया नहीं हुआ।"

मैंने अपना बायाँ हाथ सिरपर रखते हुए कुछ याद किया और बोला, "हाँ, एक बात याद आयी। पड़ोसीकी लड़की वसु-न्धराको कल कोई भगा ले गया था। तब खूनके प्यासे एक सौ आदमियोंने शपथ ली थी कि जो भी उसे भगा ले गया है, उसका वे क़त्ल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर देंगे। यह वाक़या एक बड़ी घटना है!"

मैंने उसकी ओर देखा। वह निर्विकार और दृढ़ भावसे बोली, "वे कुछ नहीं कर सकते! सब नपुंसक और मूर्ख हैं! भगने और भगानेका काम नया नहीं है। इसका सम्बन्ध कहीं और है। लैला-मजनू, रोमियो-जूलियट—इन्हें तो जानते हो न?"

मैंने सिर हिलाकर हामी भरी, तो उसने कहा, "कोई किसीको भगा नहीं सकता! प्यार अपने आप भाग जाता है और जिनके हाथसे प्यार छूट चुका होता है या चुक जाता है या दग़ा दे जाता है, वे यूँ ही तमाशा खड़ा किया करते हैं। देख लेना—कल वसुन्धराका भाई उसके पैर पड़ेगा। बाप कन्यादानके लिए तड़पेगा और प्रेमी अपनेको लानत भेजेगा। वह उसी तरह दृढ़ रहेगी और जो झुण्डके झुण्ड मर्द अपनी ताक़तका तमाशा दिखाने खड़े हैं, वह उन सबको दुतकारती हुई दूसरी ओर निकल जायेगी।"

उसकी बातोंमें वज़न था। मुझे लगा, अब सँभलकर बातें करनी चाहिए। मैंने पूछा, "अकाल, भुखमरी, महायुद्ध—इनसे कब त्राण मिलेगा?"

"कभी नहीं!" उसने कहा, "ये सब आयाम पुराने हैं। आदि कालसे युद्ध होते आये हैं और अनन्त तक चलते रहेंगे। युद्ध अनिवार्य है।"

उसने अपनी ओर देखा और देखकर अपनी नज़रें अपनी ही देहपर केन्द्रित करते हुए बोली, "युद्ध क्यों होते हैं, जानते हो?"

मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना उसने कहा, "युद्ध मेरी शक्ति है! मूँछसे लेकर पूँछ तक सब स्त्रीलिंग हैं। लड़ाइयाँ भी मेरे कारण हुई हैं। ज़रा मेरी बातको ग़ौरसे सोचो। अँगरेज़ीमें भी राष्ट्रको 'शी' ही तो कहते हैं!"

"और अकाल?" मेरा अगला प्रश्न था।

"कीड़ोंके पंख क्यों निकलते हैं—बता सकते हो?"

"नहीं!"

"बुद्धिसे काम लो!" उसने किसी महाज्ञानीकी तरह उत्तर दिया, "अकाल तभी पड़ता है, जब आदमीके पंख निकलते हैं! इसी तरह महामारियाँ फैलती हैं और फैलती रहेंगी।" उसने अपनी सधी हुई दृढ़ आवाज़में कहा, "मित्र, कभी किसी ज़मानेमें कोई नयी बात नहीं हुई। नयी बात शायद तभी हुई है, जिस दिन यह दुनिया बनी है और बनी हुई दुनिया न कभी मिटती है और न मिटकर कभी नयी बनती है। कुछ मिथ्या भ्रम पालनेके तुम आदी हो! उनसे मुक्ति लो....!"

वह उठकर खड़ी हो गयी और कमरेमें यहाँ-वहाँ घूमने लगी। घूमते हुए उसने मेरे पास आकर मेरी पीठ पर अपना हाथ रखा, तो मेरा पूरा शरीर तार-तार हो गया। मैंने कहा, "दूर रहो!"

"क्यों?"

"अभी मैं और काम कर रहा हूँ।"

उसने हाथ नहीं हटाया। बोली, "यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्पर्श क्या नया है ?" अपने आप अँगड़ाई लेते हुए उसने कहा, "नहीं···! तुम्हारे दिमाग़में एक पुरजा है। वह तुम्हें हमेशा धोखा देता है। उसकी बात मानकर ही तुम किसी चीज़को नया समझते हो। वरना यह स्पर्श शताब्दियों, सहस्राब्दियों पुराना है। आदमीके साथ आया है! उससे सिहरनेकी क्या बात है ?"

मैंने यहाँ प्रसंग बदलना ठीक समझा, क्योंकि वह स्पर्श उसके इस समझानेके बावजूद मेरे लिए पुराना नहीं था। मैंने पूछा, "दुनिया कितना विकास कर गयी! अणुसे लेकर परमाणु तक····! आगे क्या होगा ?"

"वही होगा जो हम चाहेंगी।"—एक गर्वोक्तिके साथ वह फिर उस पूरे कमरेमें घूमने लगी। सामने आकर उसने कहा, "देखो, सब कुछ इसी गहराईमें बनता है। आदमी रातमें ही बढ़ता है। फ़सलोंके अंकुर रातको ही फूटते हैं। पैरका जूता रातमें ही छोटा हो जाता है। बादशाहत रातमें ही बदलती है। शादी-ब्याह-जैसे जश्न रातमें ही होते हैं। अधिकांश मौतें रातमें होती हैं। तानाशाह एक रातमें बनते और दूसरी रातमें बिगड़ते हैं। बुद्धि और योजनाओंका केन्द्र रात है! युद्ध और शान्तिके बीचकी दीवार रात्रि है! यानी वह एक औरत है, जिसकी छायामें दुनिया बदलकर अपनेको नया कहती है। यह सीमा-रेखा न रहे तो····!"

उसने अपनी बड़ी-बड़ी आँखें मेरे चेहरे पर गड़ाकर आगे कहा, "तुमने भूगोल पढ़ा है? उत्तर और दक्षिण ध्रुवके बारेमें जानते हो ? वहाँ यह सीमा-रेखा एक लम्बे अन्तरालके बाद आती है। उसका परिणाम क्या हुआ है, बतानेकी ज़रूरत नहीं। इसलिए औरतको पहचानो! उसीने अणु दिये, वही आगे कुछ और देगी! तुम चन्द्रमाके ऊपर पहुँचनेके बारेमें पूछोगे। लेकिन वहाँ पहुँचकर करोगे क्या ? औरतसे मुक्ति वहाँ भी नहीं मिलेगी। तुम्हारी कामेन्द्रियाँ वहाँ पहुँचकर अधिक सचेत हो जायेंगी, क्योंकि तुम सूर्यके ज़्यादा पास होगे। कभी अणुका टुकड़ा खाकर देखो। तुम्हारी हालत जिस तरह दयनीय होगी, समझ जाओगे। तब तुम्हें मेरी चाह और अधिक होगी! मैं तुमसे एक छोटी-सी बात पूछती हूँ—यह बताओ कि हमने जब, जो चाहा, क्या वही नहीं हुआ ? हुआ है, तो मैं ही तुम्हारा भविष्य हूँ····।"

वह एकाएक चुप हो गयी। खिसकते-खिसकते वह एक कोनेमें चली गयी और अपनी फटी हुई साड़ी, फटा हुआ ब्लाउज और दूसरे कपड़े उसी तरह पहनने लगी। जब वह कपड़े पहन रही थी तो मेरे पूरे जिस्ममें एक भयंकर पीड़ाने क़ब्ज़ा कर लिया था। मैं पूरी ताक़तके साथ अपने दर्दको दबा रहा था। वह कपड़े पहनकर लौटी तो उसे मेरी वेदनाका भान हो गया। उसने निहायत ठण्डी हँसीसे मेरे गलेमें अपनी दोनों बाँहें डाल दीं। बोली, "इसी दर्दसे मुक्ति पानेके लिए रात्रि होती है। यहींसे कालका भेद शुरू होता है। यहीं आकर आज, कल बनता है। भूत और भविष्यकी सीमा-रेखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखना चाहते हो तो मेरी ओर ध्यानसे देखो।"

वह एक सीधे डण्डेकी तरह तनकर खड़ी हो गयी और एकटक मुझे देखने लगी। मैं उसकी ओर अनजाने देखने लगा, तो उसने कहा, "तुम्हारा वर्तमान मेरी आँखोंमें है। यही 'आज' है। मेरे वक्षोंके साथ तुम्हारा 'कल' बँधा हुआ है। वह तुम्हारा भविष्य है और कमरके नीचे तुम्हारा बीता हुआ 'कल' यानी 'अतीत' है! और इनकी सीमा-रेखाएँ—एक गलेके पास है, दूसरी कमर-में! इन्हें पहचान लो, सारी चिन्ताओंसे मुक्त रहोगे!"

उसने पास आकर मेरा दाहिना हाथ पकड़ लिया। बोली, "तुम पुरुष हो, दुनिया-के सबसे सुन्दर प्राणी! तुम्हारे लिए मैं तीनों कालोंको लुटा देती हूँ, लेकिन तुम्हारी बुद्धि तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ती—उसीके भ्रममें तुमने नये और पुरानेका भेद किया और भटकते रहे! आओ, उठो और अपनी बुद्धि मेरे हवाले कर सुखका जीवन व्यतीत करो!"

उसकी बातोंमें बड़ी मिठास थी, लेकिन.... लेकिन यह क्या, वह तो मुझसे मेरा पुरुषत्व छीन रही थी। क्या यही नया है! क्या यहींसे नयी सदीका आरम्भ होगा? इति-हास यहींसे करवट लेगा? मेरे सामने एक बड़ा प्रश्नचिह्न था—युद्ध हमेशासे होते आये हैं। राज्य बनते और मिटते रहे हैं। महा-मारी और भुखमरी कब नहीं रही। ज्ञान-विज्ञानका विकास और शोध-अनुसन्धान कब नहीं हुए? धरती बदली है, नक़्शे नये बने हैं! तब? इक्कीसवीं सदीमें नया क्या हुआ? मेरा मस्तिष्क घूमने लगा और ज़ोरों-से चक्कर खाकर अपनेको खो बैठा। थोड़ी देर बाद मैंने देखा, मेरा सिर उसकी गोदमें है और वह मेरे सिरके भीतरकी शिराओंको यहाँ-वहाँ कर रही है। मैंने जब आँखें खोलीं तो उसने कहा, "गड़बड़ी यहीं है। मेरे सिरके भीतर ऐसी शिराएँ नहीं हैं। इसी-लिए वह स्थिर है! मेरा कहा मान जाओ। बात छोटी-सी है। मैं तुम्हारे मस्तिष्ककी अग्रगामी शिराओंको अभी निकाले डालती हूँ।"

"नहीं! नहीं!" मैं अपना सिर खींचते हुए ज़ोरसे चिल्लाया—"यह नहीं हो सकता। अब तक नहीं हुआ, अब कैसे होगा?"

वह ज़ोरसे हँसी। बोली, "इतनी जल्दी भूल गये! तुम तो नयी सदीमें कुछ नया ढूँढने आये थे! फिर?"

"आया तो था..." मैं अपना सिर खुज-लाने लगा।

"तब?"

"तब कुछ नहीं!"

"मेरी एक बात और मान लो..." उसने कहा, "अपने देशके झण्डेमें मेरा आज-का चित्र अंकित कर दो। हर देशके झण्डेमें वही चित्र अपने आप अंकित हो जायेगा। हर औरत एक होती है न; देश-काल और युगके परे!"

"पुरुष भी तो...." मैंने मुँह खोला, तो उसने ज़ोरका अट्टहास किया—"नहीं, पुरुष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक नहीं होता। एक घरके दो पुरुष एक नहीं होते, फिर देश-कालके पुरुषोंकी बात तो अलग है।"

मेरी बुद्धिने तुरन्त साथ दिया और मैं उठकर खड़ा हो गया। मैंने कहा, "इसका अर्थ यह है कि दुनियामें नया कुछ नहीं है, नया केवल पुरुष है!"

उसका हँसना अब बन्द हो गया था। उसकी आँखें गुबरीले कीड़ेकी तरह भयंकर हो गयी थीं। नाक फैल गयी थी। ओठ जोंककी तरह सिमट गये थे और गरदन समुद्रके बीच लटके हुए धरतीके सख्त टुकड़े-की भाँति दिखने लगी थी! उसके सारे फटे हुए कपड़े अपने आप सिल गये थे और पहलेकी तरह उसकी देहसे लोच और नर-माईके सारे चिह्न मिट चुके थे। वह मुझे निहायत बदसूरत और बदबूदार लग रही थी। मुझे लगा, यहाँसे तुरन्त भाग जाना चाहिए, लेकिन जैसे ही मैंने भागनेके लिए अपने क़दम उठाये, वह ज़ोरसे चीखी और धड़ामसे ज़मीनपर गिर पड़ी। मैं बेतहाशा उसकी ओर लपका। उसे उठाकर मैंने सीधा लिटा दिया। थोड़ा पंखा किया। मुँहमें पानीके छींटे मारे। वह घरघराती हुई आवाज़ें मुँहसे निकालती रही। फिर एकाएक उसके मुँहसे फेन निकलना शुरू हो गया! अपने कपड़ोंकी परवाह किये बिना मैं उस फेनको पोंछने लगा। उसका नाम ले-लेकर मैंने प्यार-भरे शब्द दुहराये। फिर अपनी गोदमें उसका सिर रखकर मैंने उसके बाल सह-लाये। मुझे भय था, कहीं एक बड़ी हत्या-का जघन्य पाप मेरे सिरपर न टूट पड़े। किसलिए निकला था, क्या होने लगा! मैंने अत्यन्त आर्द्र-स्वरोंमें उसकी अभ्यर्थना की और परेशानीसे उसे सचेत करनेके यत्न करता रहा। थोड़ी देर बाद एकाएक उसने अपनी आँखें खोलीं। उसकी नन्हीं-सी आँखोंमें एक पूरा सपना तैर रहा था। उसने अपनी दोनों बाँहें मेरे गलेमें डालते हुए अपना चेहरा ऊपर उठाया और बोली, "यही नया है, और इस दुनियामें कुछ भी नया नहीं!" उसके बाल छितराकर मेरे चेहरेपर बिखर चुके थे और मैं, मैं नहीं था, मैं अपनेको खो चुका था! मैं कहाँ था, मुझे नहीं मालूम!

■ ■

सम्पादक : नन्दन

हिन्दुस्तान टाइम्स, नयी दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
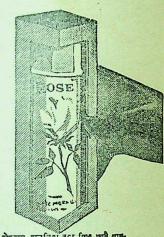
॥ ३१ दिसम्बर, रविवार, २०००॥ एक और कल्पना आपके सामने है उस 'पृथ्वीय' नारीकी जो आजकी नैतिकताके अनुसार अनैतिक है और अश्लील भी। आप भारतीयता-विरोधी आरोप उसपर लगा सकते हैं···लेकिन यह भी हो सकता है कि नारीके साथ ही आरोप लगानेवाली मनःस्थिति बदल जाये···········

मिस वर्ल्डका प्रेस-वक्तव्य

विश्वेश्वर / बन्धुओ, भारतने जो बड़े-बड़े आरोप मुझपर लगाये हैं, उनकी सूचना मुझे विदेशोंमें मिल गयी थी। विदेशोंमें भारतीय दूतावासोंके अधिकारी मुझे समय-समयपर आत्मीयतासे सलाह देते रहे कि जो 'हरकतें' मैं कर रही हूँ, उन्हें न करूँ, क्योंकि इससे देशकी इज़्ज़तपर बट्टा लगता है। अख़बारोंमें छपे आरोपोंकी कतरनें मेरे सचिवने प्रायः रोज़ ही मेरे सामने रखी हैं और मैंने फाड़कर रद्दीकी टोकरीमें डाल दी हैं।

मैं कुछ घण्टे पहले ही दिल्लीके हवाई-अड्डेपर उतरी हूँ और अशोका होटलमें ठहरी हूँ। मुझे खुशी है कि आप मुझे बोलनेका अवसर दे रहे हैं, लेकिन मैं यह भी जानती हूँ कि आपमें-से अधिकांश संवाददाता मुझे देशद्रोही कह देनेके लिए उत्सुक हैं। जो भी कह रही हूँ, उसे आप कोई दूसरा ही रंग देकर प्रकाशित करेंगे, लेकिन मुझे इसकी परवाह नहीं है। मुझे भारतके उन तथाकथित आदर्शोंकी भी परवाह नहीं है जो आज सन् २००० में निहायत फूहड़ हो चुके हैं। आश्चर्य कि भारतीय अब भी उनसे चिपके हुए हैं। असलमें यह भारतीय मानसके बुढ़ापेका प्रतीक है। बूढ़ा मानस कोई चीज़ जल्दी स्वीकार नहीं करता और यदि स्वीकार कर लेता है तो उसे जल्दी छोड़ता नहीं है। भारत जबतक आजकी नयी संस्कृतिको स्वीकार करेगा, तबतक तो यह भी पुरानी पड़ चुकी होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको याद रखना चाहिए कि मैं 'मिस इण्डिया' नहीं 'मिस वर्ल्ड' हूँ। भूल जाइए कि मैं 'भारतीय' हूँ। अब तो मैं 'पृथ्वीय' हूँ। सम्पूर्ण पृथ्वीमें मेरे सौन्दर्य-की चर्चा है। जैसे कोट-पतलून 'पृथ्वीय' हो चुके हैं, उसी तरह मैं भी देश-देशान्तरकी सीमाओंको लाँघ चुकी हूँ। यदि मेरे नये, विराट् रूपकी आप कल्पना कर सकें तो जितने भी आरोप मुझपर लगे हैं, सब अपने-आप व्यर्थ हो जायें। जो भी मैंने विदेशोंमें किया है, वह आपमें-से शायद ही किसीको आपत्तिजनक लगा होता, यदि मैं भारतकी न होकर रूस या अमेरिकाकी, जापान या इंग्लैण्डकी युवती होती। तब आप मेरी हरकतोंको—माफ़ कीजिएगा, 'हरकत' ग़लत शब्द है, मेरी गतिविधियोंको—आपने मात्र कौतूहलसे देखा होता या उनका मखौल उड़ाकर आप अन्य कार्योंमें व्यस्त हो गये होते। एक सम्भावना यह भी है कि मेरी गतिविधियोंकी पर्याप्त जानकारी ही आपको न मिलती। दुनियामें कहाँ क्या हो रहा है, इसे भारतीय संवाददाता भी बहुत कम जानते हैं। उन्हें अधिकांशतः राज-नीतिक घटनाओं व सम्भावनाओंकी जान-कारी होती है, लेकिन नित नये सामाजिक परिवर्तनोंका हलका सामान्य ज्ञान भी उन्हें या भारतीय जनताको नहीं है। यदि होता तो मुझपर आरोप क्यों लगते कि मैंने न्यूड मॉडलके रूपमें अमेरिकामें पोज़ देकर भारत-माताकी इज़्ज़त धूलमें मिला दी है!

यही तो दिक़्क़त है! आज, सन् २००० में अधिकांश राष्ट्रोंने स्वयं को नर-रूपमें पह-चानना शुरू कर दिया है। वे अपने लिए 'शी' या 'इट' के बजाय 'ही' लिखने लगे हैं, लेकिन भारत है कि अपनी इतनी विशालता (भूमिकी) के बावजूद 'माँ' ही बना हुआ है! जैसा कि भारतीय समझते हैं, औरतों-को बहुत आसानीसे अपमानित किया जा सकता है। यदि भारत 'माँ' न होकर 'बाप' या 'भाई' होता तो मेरी गतिविधियोंसे भारतीयोंको इतनी चोट न पहुँचती। पुरुष आसानीसे अपमानित नहीं होते—विशेषकर इस देशमें, जिसने मुझे पैदा करनेका दुर्भाग्य झेला है।

जो सुन्दरी मिस वर्ल्ड चुनी जाती है, वह इन्द्रधनुषकी तरह होती है। इन्द्रधनुष कपड़े नहीं पहना करता। उसकी सारी ख़ूबसूरती नंगी होती है—और इन्द्रधनुषों-पर अकेले भारतका या अकेले किसी भी देशका हक़ नहीं होता। जो मिस वर्ल्ड है—यानी मैं—आप क्यों उससे आशा रखते हैं कि वह बुरक़ेमें रहेगी? तब तो आप किसी भी ठूँठको बुरक़ा पहना दीजिए और सोच लीजिए कि यही मिस वर्ल्ड है—और उसकी तसवीरें सारी दुनियामें प्रकाशित करवा दीजिए। लेकिन मिस वर्ल्ड तभी मिस वर्ल्ड हो सकती है, जब वह अपने बुरक़ेमें-से बाहर आये।

यहाँ आप समझ लीजिए—बल्कि जान लीजिए कि बुरक़ेमें-से बाहर आनेकी कोई सीमा नहीं होती। अगर केवल चेहरा उघाड़ देनेको ही आप बुरक़ेमें-से निकल आना सम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते हैं तो आप सचमुच 'भारतीय' हैं, लेकिन विदेशोंमें—पश्चिमी देशोंमें—बुरक़े नहीं होते। वहाँ तो जब मिस वर्ल्ड-को बुरक़ेमें-से बाहर निकलना होता है तो वह सभी वस्त्रों-में-से बाहर आ जाती है और उसकी ख़ूबसूरती इन्द्रधनुषकी तरह आबाल-वृद्ध सबको उल्लसित करती है! आप इन्द्रधनुष-को बुरक़ा पहना सकते हैं क्या?

इसके अलावा, आप वस्त्र-हीनतासे इतने घबराते क्यों हैं? क्या आसाममें, केरलमें, बस्तर, छत्तीसगढ़ या उड़ीसामें आज भी ऐसी औरतें नहीं हैं, जिनके शरीरपर कोई कपड़ा नहीं होता या नाममात्रको ही होता है? क्या ये औरतें भारतीय नहीं हैं? अगर कोई इनके फ़ोटो खींचे और ले जाकर किसी विदेशी दुकान या घरमें टाँग दे तो क्या आप एतराज़ उठा सकेंगे? फिर यदि मेरे ही फ़ोटो खींचे गये हैं तो भारतपर कौन-सा आसमान टूट पड़ा है?

मैंने वहाँ न्यूड फ़िल्मोंमें भी काम किया। मुझे इसके लिए बहुत अच्छी धन-राशि दी गयी। शायद आप इस

बस्तर (२०वीं शताब्दी)

अ-बस्तर (२१वां शताब्दी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
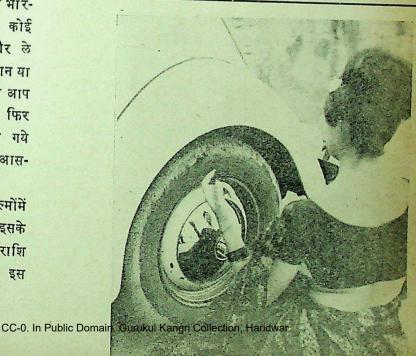
धन-राशिसे चिढ़े हुए हैं, लेकिन नौकरी करना क्या अपने शरीरोंको किरायेपर उठाना नहीं है ? मैंने भी इसी प्रकार कुछ घण्टोंके लिए अपना शरीर किराये पर उठा दिया। अगर मैं कोई मकान होती तो लोग मुझमें आकर रहते और किराया देते। अगर मैं वैज्ञानिक होती तो लोग मेरे आविष्कारोंको बेचकर मुझे रायल्टी देते। चूंकि मैं एक सुन्दरी हूँ, उन्होंने मेरी सुन्दरताको काग़ज़पर उतारा और मुझे इसकी क़ीमत चुका दी। सुन्दरताके उतरते ही वे काग़ज भी सुन्दर हो गये और जिनकी आँखें उन काग़ज़ोंपर ठहरीं, उनके हृदय-पटलों पर सुन्दरता अंकित हो गयी। यह प्रक्रिया मेरी सुन्दरताका मात्र स्थानान्तरण ही है। यह कुछ ऐसा ही है कि एक समाचार आपने कहींसे लिखकर, लिफ़ाफ़े-द्वारा कहीं और भेज दिया। इसमें मान-अपमानका सवाल कहाँ है ?

उन्होंने मेरी सुन्दरताको सेल्यूलाइड पर उतारा। काग़ज़पर तो केवल मेरी स्थिर सुन्दरता उतारी जा सकती है, लेकिन पूर्ण सुन्दरता स्थिर नहीं होती। नारीकी सुन्दरता तो गतिमें ही पूर्ण सार्थकता पाती है। ज़रा तकनीकी रुख अपनाइए और माइक्रोस्कोप लगाकर देखिए। तभी आपको पता चलेगा कि एक-एक क़दमपर नारीका शरीर कितना आन्दोलित होता है। हँसते समय गालोंमें गढ़े पड़ते हैं न ? तब गालोंका ख़ूबसूरती कितनी बढ़ जाती है ! जब आप गालोंकी ख़ूबसूरतीसे नहीं घबराते तो कन्धोंकी खूबसूरतीसे क्यों घबराते हैं.... जिस तरह डॉक्टरके लिए किसी आदमीकी नाक और शिश्नमें कोई अन्तर नहीं होता, उसी तरह जिस औरतका अंग-अंग सुन्दर हो, उसे आप कैसे कह सकते हैं कि वह एक अंगकी सुन्दरता उजागर करे और एक अंग-की न करे ?

तो, उन्होंने न्यूड फ़िल्मोंमें मुझे काम देकर, मेरे सौन्दर्यकी थिरकनोंको सेल्यूलाइड-पर उतारा। गम्भीरसे गम्भीर अख़बारों व पत्रिकाओंमें उस फ़िल्मका विज्ञापन किया गया। सबसे अपील की गयी कि जिस मिस वर्ल्डको आपने केवल स्थिर तसवीरोंमें और कपड़ोंमें देखा है, उसे चलते-फिरते और कपड़ोंसे बाहर देखिए—आप विभोर हो जायेंगे। भारतमें नारीका सौन्दर्य देखकर लोग विभोर नहीं होते। लोग सिर झुका लेते हैं और आगे निकल जाते है। देखते हैं तो केवल कनखियोंसे। आप अपनी पत्नी, माँ या बापके साथ कहीं जा रहे हों और सामनेसे कोई सुन्दरी महकती हुई गुज़रे तो आप कभी न कह सकेंगे, "ओह ! कितना बढ़िया फूल !" आप ऐसा ढोंग करेंगे, जैसे उस सुन्दरीको आपने देखा ही नहीं। यह केवल फूहड़ता नहीं, सौन्दर्यका अपमान भी है, सौन्दर्यसे भयाक्रान्त होनेकी स्थिति है। आप सौन्दर्यको सहजतासे क्यों नहीं लेते ? क्योंकि औरतोंके लिए सुन्दरता उनकी सहजता है। औरतें होती ही सुन्दर होनेके लिए हैं—जिस तरह मर्द होते हैं धन कमानेके लिए और उस धनको औरतोंपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्योछावर करनेके लिए।

सन् २०००में भी भारतका सेन्सर इतना दक़ियानूस है कि मेरी न्यूड फ़िल्में भारतमें अभी बरसों तक न आ सकेंगी। यदि कभी आप हांगकांग जायें या अरब देशोंमें ही पहुँचे जायें—ज़्यादा दूर क्यों, यदि आप पाकिस्तान ही पहुँच जायें तो वहाँ सार्वजनिक थियेटरोंमें भी मेरी न्यूड फ़िल्में आप देख सकेंगे। सच कहती हूँ—और यह मेरा दावा नहीं, मेरा आत्मविश्वास है—कि उन फ़िल्मोंमें मुझे नग्न देखकर आप विभोर हो जायेंगे। यदि आप उत्तेजित भी हो जायें तो क्या बुरा है, क्योंकि बहुत ही ख़ूबसूरत कोई नज़ारा देखकर—चाहे वह प्रकृतिका हो या नारीका—हम उत्तेजित होकर ही किलकते हैं। जिस तरह हमें बहादुरीकी फ़िल्में उत्तेजित करती हैं, उसी तरह यदि ख़ूबसूरतीकी फ़िल्में भी उत्तेजित करें तो इसमें अपमानित कैसे हो जाता है कोई देश? पुनः मैं वही फूलोंवाली उपमा सामने रख रही हूँ—जिस तरह आप किसी फूलको महकनेसे नहीं रोक सकते, उसी तरह मिस वर्ल्डको सुन्दर दीखनेके लिए वस्त्रोंमें-से बाहर आनेसे कैसे रोक सकते हैं?

मैंने 'पेण्टिग विथ न्यूड्स'के एक सार्वजनिक समारोहमें भी भाग लिया। भारतमें इस घटनाने तहलक़ा मचा दिया है, यह मैं जानती हूँ—जबकि वास्तवमें यह कोई घटना ही नहीं है। यदि भारतीयोंका सामान्य ज्ञान ज़रा भी तीक्ष्ण होता तो मुझे अभी यह बतानेकी ज़रूरत न पड़ती कि 'पेण्टिग विथ न्यूड्स'की परम्परा पश्चिममें लगभग पैंतालीस साल पुरानी हो चुकी है। चार-पाँच बार यह परम्परा दकियानूस और बोर भी घोषित की जा चुकी है, लेकिन इसे अब पुनर्जीवन व नया उत्साह मिलने लगा है।

भारतका पेण्टर बाज़ारमें जाकर योग्य ब्रशकी तलाश करता है या नहीं? तब वह उन ब्रशोंको जगह-जगहसे छूता भी होगा। मिस वर्ल्ड प्रतियोगितामें जितनी भी लड़कियाँ आयी थीं, वे सब 'पेण्टिग विथ न्यूड्स'-के समारोहमें थीं। उनमें-से केवल पाँच लड़कियोंको पेण्टिगके लिए चुना जाना था। कलाकारोंने—पचाससे भी ज़्यादा प्रतिशत महिला-कलाकारोंका था—सभी लड़कियोंको जगह-जगह छूकर देखा। कलाकार हमारे उभारों और कटावोंके कड़ेपन या मुलायमियतका अन्दाज़ा लेना चाहते थे। हम सब निर्वस्त्र थीं। निर्वस्त्र होना तो पश्चिमकी नारीके लिए एक नितान्त सहज स्थिति हो गयी है। और क्यों न हो! दिनोंदिन पश्चिमकी नारी सुन्दरसे सुन्दर होती जा रही है। वह कपड़े इसलिए नहीं पहनती कि उसे अपनी शर्म या ख़ूबसूरतीको ढाँककर रखना है, बल्कि इसलिए कि कहीं उसे ठण्ड न लग जाये। जहाँ 'पेण्टिग विथ न्यूड्स'का समारोह हो रहा था, वह एयर-कण्डीशण्ड जगह थी। कपड़े उतारकर भी हमें कोई सिहरन न हुई। दो-एक महिला-कलाकार भी नग्न थीं, शेष अर्द्धनग्न थीं। दर्शकों तथा जजोंकी गैलेरीमें बैठे अधिकांश सम्मानित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोग भी अर्द्धनग्न या नग्न ही थे। शायद वे सब किसी विशेष समितिके सदस्य रहे हों।

हमें एक ब्रश ही समझकर, हमें जगह-जगह छूकर जो चुनाव किया गया, उन पाँच लड़कियोंमें-से एक मैं भी थी—मुझे तो खैर होना ही था। चुनावके बाद लगभग दो दर्जन पेण्टिंग्स तैयार की गयीं।

मोटे काग़ज़के बड़े-बड़े रौल एक परदेके पीछे रखे थे। रौलमें-से एक-एक काग़ज़ जनताके सामने मंचपर बिछाया जाता। हर काग़ज़पर हम पाँच लड़कियाँ कलाकारके इशारोंके अनुसार लुढ़कती रहतीं और पेण्टिंग बन जाती। आँख, कान व मुँहको बचाकर हर लड़कीको किसी एक रंगसे सान दिया गया था। मैं सिरसे पैर तक चटख लाल रंगसे सनी हुई थी। रंगमें जाने कैसी सुगन्ध थी कि मैं मस्त हुई जा रही थी। छोटे उरोजों व छोटे ही नितम्बोंवाली एक लड़की काले रंगसे सनी हुई थी। शेष लड़कियों-पर क्रमशः हरा, पीला और सफ़ेद रंग डाला गया था। पीले रंगकी लड़कीको सबसे पहले इशारा किया गया। वह हमसे अलग होकर मंचपर बिछे काग़ज़के बीचमें चली गयी। काग़ज़के एक छोरसे लेकर बीच तक उसके नन्हें-नन्हें पैरोंके चिह्न बनते रहे। वह लम्बी दाढ़ीवाला एक कलाकार था, जिसने—भारतमें वह हनुमानजी होते हैं न,—वैसा जाँघिया पहन रखा था। बस, एक ही वस्त्र। उसके संकेतके अनुसार पीली लड़की लेट गयी। कभी वह बायें लुढ़कती, कभी दायें। कभी चित्त होकर घिसटती, कभी पट होकर। कभी केवल कमरसे ऊपर हिलती, कभी केवल नीचे। कलाकारने संकेत दिया कि स्थिर हो जाओ। वह स्थिर हो गयी। मंचके ऊपरसे एक यान्त्रिक हाथ नीचे आया। उसने बड़ी नज़ाकतसे पीली लड़की-को उठा लिया और काग़ज़से दूर, हम लोगों-के साथ खड़ा कर दिया। जगह-जगहसे पीला रंग हट जानेके कारण लड़कीका शरीर झाँकने लगा था।

उसके बाद हरे रंगकी लड़की काग़ज़पर लुढ़कती रही। बादमें मेरा, यानी लाल रंगसे सनी लड़कीका नम्बर आया। मुझे मेंढककी तरह बैठकर बार-बार उछलनेके लिए कहा गया। मैंने वैसा किया। सारे काग़ज़पर मेरे हाथ-पैर व घुटनोंके लाल निशान पड़ गये। यान्त्रिक हाथने मुझे उठाकर काग़ज़से बाहर खड़ा कर दिया। मेरे बाद वह लम्बी, छरहरी, काले रंगसे पुती हुई लड़की काग़ज़पर आयी। उसने काग़ज़के बायें हिस्सेमें थोड़ा-सा दाग़ बनाया ही था कि कलाकारने उसे उठा दिया। सबसे बाद-में आयी सफ़ेद लड़की। कलाकारने उसे काग़ज़के बीचमें, पैदल चलकर नहीं जाने दिया। उसने उसे मंचपर बकरीकी तरह चारों हाथ-पैरपर खड़ा कर दिया। छतमें-से निकले यान्त्रिक हाथने उसे कमरसे उठा लिया। उसे हवामें झुलाता हुआ वह काग़ज़-के बीचमें जाकर स्थिर हो गया। लड़की हवामें अधर टँगी हुई थी। उसे उस कला-कारने समझाया कि वह क़रीब तीन फ़ुटकी ऊँचाईसे, यान्त्रिक हाथ-द्वारा, काग़ज़पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिरायी जायेगी और वह जिस मुद्रामें गिरे, उसी मुद्रामें पड़ी रहे। तीन फ़ुटकी ऊँचाई से एकदम पट गिरना····लड़कीको शक हो आया होगा कि उसे चोट आयेगी, लेकिन कलाकारने आश्वासन दिया कि ऐसा नहीं होगा। फिर उसने न जाने क्या सोचकर तीनके बजाय दो फ़ुटकी ऊँचाईपर उसे अधर लटका दिया। सहसा यान्त्रिक हाथने लड़कीको छोड़ दिया। वह पेण्टिंगपर गिरी और ज्यों-की-त्यों पड़ी। पेण्टिंग्स बननेके दौरान लगातार उत्तेजक संगीत होता रहा। लड़की पड़ी रही और उस कलाकारने लगभग एक नृत्य ही कर डाला उस विराट काग़ज़के चारों ओर। प्रायः एक मिनिट बाद यान्त्रिक हाथ नीचे आया। उसने सफ़ेद लड़कीको उठा लिया और हम लोगोंके पास ला खड़ा किया। उसने मुझे हँसकर बताया कि उसके उरोज बहुत पिस गये। मैं बोली कि अगर उरोज बड़े न होते तो पसलियों-पर चोट आती। आप लोगोंको यह सारी बातचीत अनैतिक लग रही है न? लेकिन हम लोग इस तरह बोल रही थीं, मानो जुकामकी चर्चा कर रही हों।

कुनकुने पानीसे हम पाँचोंके शरीर यान्त्रिक हाथों-द्वारा साफ़ किये गये, क्योंकि गीली पेण्टिंग्सपर लुढ़कने-घिसटनेके कारण हमारे मूल रंगोंमें दूसरे रंगोंके क़तरे आ चिपके थे। साफ़ होते समय मुझे लगा, जैसे मैं कोई भेड़ होऊँ और मेरी ऊन उतारी जा रही हो। सफ़ाईके पश्चात् हमें पुनः मूल रंगोंसे पोत दिया गया। अब दूसरा कलाकार मंच-पर आया। वह एक महिला थी और नग्न थी। वह सुन्दर नहीं थी। वह काली थी। या शायद उसने काला रंग लगाया हो···· उसके संकेतोंके अनुसार लुढ़क-लुढ़ककर हम युवतियाँ पेण्टिंग्स बनाती रहीं। बनते ही सब पेण्टिंग्स बिजली-द्वारा सूखनेके लिए भेज दी जातीं····

■

आप कभी न्यूयॉर्क जायें तो वहाँके टूरिस्ट-सहायक-केन्द्रोंसे अवश्य सम्पर्क स्थापित करें। उनसे कहें कि सबसे नज़दीकका वह पार्क कहाँ है, जहाँ विश्व-सुन्दरियोंके उरोजोंके नमूने गेट पर लगे हुए हैं। पार्कोंमें क्यारियाँ होती हैं और पार्कोंमें गेट होते हैं। क्यारियों-में फूल होते हैं और गेटोंपर उरोजोंके सुन्दर-सुन्दर जोड़े। आप हंसोंके जोड़े गेट-पर लगा सकते हैं तो उरोजोंके जोड़े क्यों नहीं? फिरसे मैं कहूँगी कि आपका सामान्य ज्ञान ज़ीरो है, वरना आपके चौंकनेकी बारी न आती। उरोजोंको मिल रहा यह राष्ट्रीय सम्मान भी पश्चिमकी सभ्यतामें पच्चीस साल पुरानी बात है। शुरूके पाँच वर्षों तक विश्वमें केवल एक गेट ऐसा था, जिसपर अनेक सुन्दरियोंके उरोजोंके नमूने आर्ट-पीसेसके रूपमें लगे हुए थे। उनका कुछ विरोध भी हुआ था लेकिन विरोध करनेवाले दक़ियानूस या मूर्ख थे। उनमें-से किसीने भी आकर उन उरोजों पर पथराव क्यों नहीं किया? लेकिन वे उन्हें देखने ज़रूर आये होंगे! कायर कहींके!···· रोज़ उन उरोजोंको सुगन्धित जलसे स्वच्छ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया जाता था और स्कूल जाते बच्चे ठहर कर देखते। वह गेट—उसका तो ऐतिहासिक महत्त्व है—आज भी रोममें मौजूद है। उस ऐतिहासिक गेटपर किन-किन लड़कियोंके उरोजोंके नमूने लगाये जायें, इसका निर्णय करनेके लिए सुन्दर उरोजोंवाली लड़कियों-को एक प्रतियोगितामें बुलाया गया था। यह हुआ रोममें, किन्तु अमरीकियोंने इसे ज़रा सुविधाजनक रूप दिया है। जो लड़की विश्व-सुन्दरी बनकर आती है, उसीको अमरीका भी चुन लेता है और उसके उरोजों-के साँचे तैयार करता है। यह काम कोई ख़ूबसूरत सुराही तैयार करने-जैसा ही है।

मैं देख रही हूँ कि कुछ संवाददाताओंके हाथ काँप रहे हैं। उनसे मेरा निवेदन है कि वे अपनी कँपकँपीपर क़ाबू पायें और यही महसूस करें कि वे किसी कुम्हारसे बातें कर रहे हैं···मेरे उरोजोंपर प्लास्टर ऑफ़ पेरिस लगाकर, उसपरसे एक साँचा तैयार किया गया। उस साँचेसे स्टेनलेस स्टीलका एक साँचा बना। तब इस नये साँचेके अनेक प्रतिरूप एक कारखानेमें उत्पादित हुए, जिन्हें देशके प्रमुख पार्क-अधिकारियोंको भेज दिया गया। उन अधिकारियोंने उन साँचों-परसे मेरे उरोजोंके नमूने ढलवा लिये और '२०००, मिस···फ़ॉम इण्डिया, ४१ इंचेन्स' इतना लिखकर, इसके ऊपर उरोजोंको फ़िट कर दिया।

मैं पच्चीसवीं लड़की हूँ, जिसके उरोज इस तरह प्रमुख पार्कोंके गेटपर लगे हैं। मुझसे पहले चौबीस विश्व-सुन्दरियोंको यह राष्ट्रीय सम्मान मिल चुका है। सम्मान! कितना व्यापक, सामाजिक, सुन्दर, सुरुचि-पूर्ण, यान्त्रिक किन्तु कलात्मक, तीव्र, तीखा, पदार्थवादी, स्थायी! अब आप यह नहीं कह सकते कि शरीर नष्ट हो जाता है, केवल नाम बच रहता है। अब शरीर भी बच रहता है। पार्कोंके गेटोंपर, पत्रिकाओंके मुख-पृष्ठोंपर, मर्दोंकी पत्रि-काओंके भीतर, सेल्यूलाइडकी रीलोंमें—पीढ़ी-दर-पीढ़ी! और एक भारत है, जहाँ सौन्दर्यका सम्मान करना तो दूर, उसे कुचल कर फेंक दिया जाता है। उसे रौंदा जाता है, उसे अनैतिक घोषित किया जाता है, मात्र अपनी वासनाके दमनकी एक कसौटी माना जाता है····न जाने क्या-क्या फूहड़ताएँ हैं इस देशमें! मैंने क़रीब पचास साल पुराने अहमदाबादकी सड़कोंके फ़ोटोग्राफ़ एक पत्रिकामें देखे हैं। क्या आप इनकार कर सकते हैं कि औरत-गाड़ियाँ चलती थीं? यानी, बैल-गाड़ियोंमें बैलोंके बजाय औरतों-को जोता जाता था? और ऐसी औरत-गाड़ियोंमें बैठते थे स्वयं उन्हीं औरतोंके भाई, बेटे, पति, पोते!···ठीक है, आज इक्कीसवीं सदीमें औरत-गाड़ियाँ भारतमें नहीं हैं, लेकिन दिलपर हाथ रखकर पूछिए, अगर वैसी गाड़ियाँ आज भी होतीं तो क्या आप उन्हें अनैतिक कहते? आप हद-से-हद यही कहते कि हमारा देश ग़रीब है—लोग शारीरिक श्रमका महत्त्व समझते हैं!

भारतको इसमें भी आपत्ति रही है कि मैं केन फ़िल्म फ़ेस्टिवल देखने गयी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़ेस्टिवलकी फ़िल्मोंकी अनेक अभिनेत्रियाँ वहाँ अपने प्रेमियों, पतियों, प्रोड्यूसरोंके साथ आयी हुई थीं। अधिकांश फ़िल्मोंमें वे नग्न अवतरित हुई थीं। कई फ़िल्मोंमें उन्होंने अपने यौन-अंगोंको पूरे परदेपर फैलाकर दिखाया था…उन्होंने कहा कि जिस तरह कान, नाक, मुँह, आँख वगैरह हैं, उसी तरह यौन-अंग भी हैं। जब कान, नाक, मुँह, आँख परदेपर आ सकते हैं तो यौनांग क्यों नहीं ? और मैं उन अभिनेत्रियोंके साथ खुले समुद्रमें नग्न होकर नहायी। हम बहुत सारे लोग थे और जब हम नहाकर बाहर निकल रहे थे, हमें अनेक फ़ोटोग्राफ़रोंने घेर लिया। उन्होंने कहा कि हम आपकी ख़ूबसूरती अपने कैमरेमें बन्द करना चाहते हैं। मुझे लगा कि मैं इत्रकी सौदागर हूँ और इन फ़ोटोग्राफ़रों-को सिर्फ़ एक-एक फ़ाहा चाहिए। मैंने या किसी भी लड़की अथवा अभिनेत्रीने कोई एत-राज़ न उठाया और वे हमें क्लिक करते रहे।

■

आरोप अनेक हैं। मैं उन सबको नकारती हूं। मैं सुन्दर हूँ और केवल सुन्दर दिखाई पड़ी हूं। मैं अपने देशमें विदेशोंके लिए जासूसी करती हूं या नहीं, अबतक कितने प्रेमियों-की नाक मैं काट चुकी हूँ, मैं कितना झूठ बोलती हूँ, कितना फ़्लर्ट करती हूँ, कितनी शराबखोरी करती हूँ—वग़ैरहसे भारतको कोई सरोकार नहीं है। उसकी सारी आपत्ति मेरे शरीर-प्रदर्शन तक ही सीमित है, जबकि भ्रष्टाचारकी शुरूआत शरीरसे नहीं, मस्तिष्क-से होती है। मैं किस शैलीमें सुन्दर लगती हूँ और किस शैलीमें नहीं, इसका चुनाव करना सिर्फ़ मेरा काम है, भारतका नहीं। मैंने अपनेको नग्न होकर भी सुन्दर महसूस किया है और कपड़ोंमें भी। अभी मैं आप लोगोंके सामने कपड़े पहनकर खड़ी हूँ। कम-से कम मुझे तो कोई अन्तर न आयेगा, यदि मैं प्रेस-वक्तव्य देनेके लिए नग्न होकर सामने आ जाऊँ और न्यूज़-रीलोंमें, टेलीवीज़नके परदोंपर, फ़ोटोग्राफ़ोंमें, अखबारोंमें अपने उसी रूपमें दिखाई दूँ। कपड़े मैंने आप लोगोंकी सुविधाके लिए पहने हैं, वरना आपकी निगाहें अपनी नोट-बुकोंपर टिकती ही नहीं। मैं बोलती रहती और आपकी निगाहें उठी रहतीं और अन्तमें पता चलता कि आप कुछ सुन ही नहीं पाये हैं।

अगर आपका सारा एतराज़ मेरे भार-तीय होनेपर है—और मुझे यही लगता है—तो बखुशी आप मेरी नागरिकता छीन सकते हैं। चित्रकारों, वैज्ञानिकों, नर्तकों, संगीतज्ञों और सुन्दरियोंकी कोई राष्ट्रीयता नहीं होती। उनकी सिर्फ़ अन्तर्राष्ट्रीयता होती है। बल्कि… मैं स्वयं अपनी ओरसे निवेदन कर रही हूँ कि आप मेरी नागरिकता छीन लीजिए, ताकि लोग यह न कहें कि नागरिकताका त्याग मैंने किया। नागरिकता छोड़नेके बजाय नागरिकता छिन जाना कहीं बेहतर है। मेरी मदद कीजिए। मुझे अपनी सहज-ताओंकी ओर जाने दीजिए। प्लीज़ !…. ■ ■

द्वारा : मनहर चौहान,
के०-१०३, कीर्तिनगर,
नयी दिल्ली—१५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ साठोत्तर जन्म ॥ बीसवीं सदीकी उस आख़िरी रातकी कल्पना कीजिए जब इक्कीसवीं सदीके प्रारम्भमें एकाध घण्टा बाक़ी रह जायेगा। सोचिए, उस समय वह युवा या वह युवती किस मनोमन्थनमें-से गुज़रेगी जिसका जन्म ही सातवें दशकमें हुआ है।···

एक शताब्दी की मौत

■

भीमसेन त्यागी / वह सारी रात सो नहीं सका था। जरा आंख झपकी थी कि फिर वही ख़याल आ गया। वह हड़बड़ाकर उठा। बराबर लेटी आभाको देखा। अलावमें धीमी-धीमा आंच जल रही थी। आभाका अर्धनग्न शरीर बहुत उत्तेजक लगा। वह सो रही थी। निश्चिन्त। लम्बी पलकें कपोलोंपर झँपी थीं और सौन्दर्यका सर्प उनपर पहरा दे रहा था। विराट्के भीतरका पशु कसमसाने लगा। उसका हाथ धीरेसे उठा और आभाके सोये हुए कपोलको छूनेको हो आया। तभी और भी भीतरसे किसीने उसे टोका। वह अपनेको झटका देकर उठा और गुफाके बाहर आकर एक शिलापर बैठ गया।

बर्फ़के फाहे धीरे-धीरे ज़मीन पर गिर रहे थे। चाँदनी हवामें ज़हर घोल रही थी। भीतरके पशुने एक बार फिर उसे मुसकारा। लेकिन तभी भीतरके भीतरने झटका दिया और वह सब कुछ एक साथ झटककर खड़ा हो गया····नहीं, यह नहीं हो सकता। उसने जिस कड़वी ज़िन्दगीको जिया है, उसे फिरसे जन्म नहीं दे सकता। आभा और वह दो ही तो हैं, जो उस ज़िन्दगीको फिर धरतीपर ला सकते हैं। वह ब्रह्मा है। लेकिन पौराणिक ब्रह्मा-जैसी सनातन भूल वह नहीं करेगा! आभाके नारीत्वका हर क्षण उसे ललकारता है लेकिन इस ललकारको वह सुन नहीं पाता। सुनना नहीं चाहता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह फिर शिलापर बैठ गया। चाँद आकाशमें काफ़ी ऊपर उठ आया था। अब उसकी किरणें सीधी पड़ रही थीं। समय क्या हो गया होगा? वह उठकर गुफामें गया। वैज्ञानिक सभ्यताके जो थोड़े-से चिह्न उसके पास बाक़ी बचे थे, उनमें एक कैलेण्डर घड़ी भी थी। इस घड़ीको देखते उसने समयका एक बड़ा हिस्सा बिताया है और बड़ी मुस्तैदीसे एक दिनका हिसाब रखा है। इस घड़ीके कारण ही वह जानता है कि आज रात ठीक बारह बजे बीसवीं शताब्दी मर जायेगी या मुक्त हो जायेगी। किसी तरह यह शताब्दी बीत जाये तो वह जीत जायेगा और आभा हार जायेगी। नहीं, वह भी जीत जायेगी! वह जानता है—समयकी मापमें एक शताब्दी कोई अर्थ नहीं रखती, फिर भी वह इस शताब्दीके मृत्यु-क्षणका बड़ी उत्सुकतासे इन्तज़ार करता रहा है।

उसने गुफामें बनायी ताक़में-से घड़ी उठाकर समय देखा। शताब्दीकी मौत होनेमें एक घण्टा बाक़ी था। घड़ी कलाईमें बाँधकर वह फिर बाहर शिलापर आ बैठा। बचपनमें उसने बहुत-सी टाँगोंवाले एक नन्हें कीड़ेको चिकने फ़र्शपर रेंगते देखा था। फिर वह देर तक बैठा देखता रहा था कि कीड़ा कितनी देरमें कितनी दूर रेंगता है! समय उसी कीड़ेकी गतिसे रेंग रहा था···यह बीसवीं शताब्दी—इतिहासकी सबसे भयावह शताब्दी—कैसी कोलाहलपूर्ण थी! उसका जन्म इस शताब्दीके सातवें दशकमें हुआ था और उसने इसके केवल तीन दशक देखे हैं लेकिन इन तीन दशकोंमें ही जो इतिहास बना है, वह उससे पहलेके मानव-जातिके सम्पूर्ण इतिहाससे ज़्यादा भयावह है····

उसने होश सँभाला है तो इस एक शताब्दीमें दो विश्व-युद्ध हो चुके हैं और तीसरेकी तैयारियाँ चल रही हैं। इनसान अपनेको धोखा देनेके लिए अकसर सोचता है—तीसरा युद्ध नहीं होगा। शक्तिका सन्तुलन उसे नहीं होने देगा। लेकिन यह सोचना केवल ऊपरी सतहपर है। भीतर-भीतर युद्धकी भयावह तैयारियाँ चल रही हैं। विश्व दो गुटोंमें विभाजित हो गया है और विभाजनकी सीमा-रेखा दिन-प्रतिदिन निखरती आ रही है। विभाजनका आधार आर्थिक है और अर्थ-नीति ही राजनीति, जीवन-नीति या मात्र नीति रह गयी है।

गुटोंमें भी गुट हैं। एक गुट दूसरेके आन्तरिक गुटोंको उकसाकर, अपने विरोधीको कमज़ोर करनेके प्रयत्नोंमें लगा रहता है। छोटे देश आन्तरिक युद्धोंके कारण त्रस्त हैं। उनके समर्थक बड़े देश, जो शान्तिके समय छोटे देशोंकी जनताको भर-पेट अन्न भी नहीं दे पाते, युद्ध छिड़ते ही बहुमूल्य युद्ध-सामग्री उदारतापूर्वक देने लगते हैं।

इनसान तीसरे युद्धके आतंककी छायामें सिसक रहा है। पृथ्वीपर जीवन नितान्त अरक्षित हो गया है, इसलिए चाँदपर घर बसानेके सपने देखे जाने लगे हैं। अणु और अन्तरिक्ष-प्रतिस्पर्धाके केवल दो क्षेत्र रह गये हैं। इन क्षेत्रोंमें दोनों बड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजनैतिक गुट एक दूसरेको पीछे छोड़ जाना चाहते हैं....

उसने घड़ीपर नज़र मारी। मुश्किलसे पाँच मिनिट बीत पाये थे। समय जाम हो गया है, शायद। लेकिन बीसवीं सदीके ये अन्तिम दशक....समयका चक्र कितनी तेज़ीसे घूमता रहा था! जितनी वैज्ञानिक प्रगति पहले वर्षोंमें होती थी, वह दिनोंमें हो रही थी। शताब्दीके अन्तिम चरण तक पहुँचतेपहुँचते प्रगति चरम सीमा तक पहुँच चुकी थी। निर्वाहकी तमाम सुविधाएँ विज्ञान सहज ही उपलब्ध कर देता था। जनसंख्या असाधारण रूपसे बढ़ गयी थी लेकिन उत्पादनके साधन उससे भी तेज़ीसे बढ़े थे। कृषिका पूरी तरह वैज्ञानीकरण हो गया था और जनसंख्याके केवल पाँच प्रतिशत लोग सम्पूर्ण विश्वके लिए पर्याप्त खाद्य तथा अन्य कृषि-पदार्थ उत्पन्न कर रहे थे। जनसंख्याका एक बड़ा भाग वैज्ञानिक खोजों और कलात्मक सृजनमें व्यस्त था। ज्ञान-विज्ञानकी शिक्षा तथा मनोरंजनके साधनोंका नवीनीकरण हो गया था और शताब्दीके मध्यमें उनका जो रूप रहा था, वह पूरी तरह लुप्त हो गया था। पुस्तकें संग्रहालयोंमें रखी दर्शनीय वस्तुओंके रूपमें ही देखी जा सकती थीं। आप किसी वैज्ञानिक विषयकी जानकारी चाहते हैं? फ़ौरन एक 'टेब्लेट' लीजिए और आरामसे लेट जाइए। उस विषयकी अधुनातन जानकारी आपके मस्तिष्ककी शिराओंको मिलनी शुरू हो जायेगी। इसी तरह आप कहानी, कविता या संगीतका कार्यक्रम सुनना (महसूस करना) चाहते हैं तो आपको पुस्तक पढ़ने या रिकार्ड बजानेकी आवश्यकता नहीं है। एक 'टेब्लेट' लेकर आप अपने प्रिय कहानीकार, कवि या संगीतकारकी रचनाका आनन्द ले सकते हैं और बादमें एक और 'टेब्लेट' लेकर पहलीके प्रभावको दूर कर सकते हैं। समाचार-पत्र, टेलिफ़ोन, रेडियो, टेलिविजन आदिका भी जीवनमें कोई स्थान नहीं रह गया था। संवाद-वहनके अधिक द्रुतगामी साधन उपलब्ध थे, जो हर समय 'स्पॉट-न्यूज़' प्रेषित करते रहते थे।

संसारमें केवल दो सरकारें रह गयी थीं। बाक़ी तमाम देश उसमें-से किसी एकका अंग बन गये थे। दोनों सत्ताओंमें भयंकर वैमनस्य और प्रतिस्पर्धा थी और दोनोंने ऐसे विनाशकारी परमाणु-आयुध तैयार कर लिये थे, जो एक ही विस्फोटमें समूचे विश्वका विनाश कर सकते थे। और आखिर वह विस्फोट हुआ....

विराट जबसे गुफाके बाहर आया, तभीसे ठण्ढ महसूस कर रहा था। लेकिन महसूस करना नहीं चाहता था, इसलिए बैठा रहा था। बर्फ़का वेग बढ़ता ही जा रहा था। आखिर वह उठा और फिर गुफामें चला आया। अलावकी आँच और भी धीमी पड़ गयी थी। उसने कुछ सूखी लकड़ियाँ उठाकर अलावमें डाल दीं। आभाने करवट बदल ली थी और अब उसकी शरीरका एक बड़ा हिस्सा नग्न हो गया था। विराटको लगा—आभा भी तो एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलाव है....

वह अलावके पास आकर बैठ गया और ठंढको भगानेकी कोशिश करने लगा। तीन बरस हो गये, यह ठण्ढ उसे बराबर सता रही है। अलाव उसे अपनी तरफ़ खींचता है। वह खिंचना चाहता है; लेकिन खिंच जाना नहीं चाहता। ये तीन बरस....कैसी तपस्वियों-जैसी ज़िन्दगी है! तपस्वियोंको वनमें दूसरे तपस्वी तो मिलते होंगे! और कोई नहीं तो मृग और सिंह-शावक, मयूर और सर्प? लेकिन यहाँ तो कोई भी नहीं, सिवाय आभाके। और आभा, वह तो दहकता हुआ अलाव है....

सारी पृथ्वी कैसे दहक उठी थी! उसने दूरसे, काफ़ी दूरसे, देखा था—पृथ्वीका गोला आतिशबाज़ीके चरखेकी तरह चिंगारियाँ छोड़ रहा था। विराटने अपने यात्री-नियन्त्रित यानकी गति धीमी कर दी थी और धीरे-धीरे पृथ्वीकी ओर उतरने लगा था....

वे—यानी वह और आभा—चाँदपर उतरनेवाले पहले यात्री थे। उनका यान चाँदपर उतरा तो लगा था जैसे उन्होंने एक साथ कई जीवन पा लिये हैं। उदास, बीहड़ मैदान और बौनी प्रकृति। जीव-जन्तुओंका निशान तक नहीं। वे दोनों यानसे उतरे और कुछ देर इधर-उधर घूमते रहे। उसने ताम्र-पत्र एक शिलापर ठोंक दिया और वहीं अपने राष्ट्रका झण्डा गाड़ दिया। झण्डा गाड़ते ही एक प्रश्न-चिह्न सर्पके फनकी तरह उसके मस्तिष्कमें खड़ा हो गया—क्या हम चाँदकी धरतीको भी उसी तरह टुकड़ोंमें बाँट लेंगे? आज पृथ्वीके पहले मनुष्यके यहाँ आनेके साथ-साथ राजनीतिका विष भी आ गया है!

कुछ देर वे दोनों चाँदके अजनबी सौन्दर्य-को निहारते रहे। फिर आकाशकी ओर नज़र उठायी। आकाश एकदम काला था और सूर्य रक्तिम वर्ण।

"वह रही हमारी पृथ्वी!" विराटने आह्लादसे भरकर कहा। आभा उसके साथ सटकर खड़ी हो गयी और वे देर तक दूसरे नक्षत्रके वासियोंकी तरह अपनी पृथ्वीको देखते रहे।

वे चाँदपर पहुँच ज़रूर गये थे लेकिन वहाँ बहुत देर रहना सम्भव नहीं था। वैज्ञानिकोंने बहुत पहले मालूम कर लिया था कि चाँदपर ऑक्सीजनका नितान्त अभाव है। वहाँ जितनी भी देर रहा जा सकता है, कृत्रिम ऑक्सीजनके सहारे ही। चाँदमें जल-का भी अभाव है। वहाँकी भूमि एकदम बंजर है। छोटी-मोटी झाड़ियोंके अलावा किसी भी क़िस्मकी वनस्पति नहीं है। चाँद-की जलवायुमें कोई बड़ा परिवर्तन किये बिना वहाँ रह सकना सम्भव नहीं है।

"तो चल?"

आभाने स्वीकारमें गरदन हिलायी और वे दोनों फिर यानमें आकर बैठ गये। यानने आधेसे अधिक रास्ता तय कर लिया था कि उन्होंने देखा—पृथ्वीका गोला अचानक लाल रंगमें बदल गया है। नज़दीक पहुँचे तो पाया कि भयंकर विस्फोट हुआ है और सम्पूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पृथ्वी पिघले हुए काँचकी तरह खौल उठी है! बचपनमें पढ़ा था कि प्रारम्भमें पृथ्वी पिघलते हुए लावेका गोला थी। तब वह ऐसा ही गोला रही होगी शायद—उसने सोचा और आभाकी तरफ़ देखा। आभा बुरी तरह भयभीत थी। शायद वह कुछ कह नहीं पा रही थी···

उस समय आभा किस क़दर भयभीत हो उठी थी और अब कैसी निश्चिन्त सोयी है! यह वही आभा है····वह आभाकी पलकोंको धीरेसे देखने लगा। कहीं ऐसा न हो कि दृष्टि-स्पर्शसे उसकी नींद टूट जाये! आभा सचमुच कितनी निश्चिन्त है! इसे ज़रा भी एहसास नहीं कि कुछ देर बाद एक शताब्दी मर जायेगी। इसके लिए तो यह शताब्दीका मरना नहीं, एक नयी शताब्दीका जन्म है। कह रही थी, "कल तो हम नयी शताब्दीमें साँस लेंगे!" आभाको अभी साँस लेनेका मोह है, इसीलिए इसकी शताब्दी जन्म लेगी। लेकिन समय जन्म कब लेता है? वह तो हमेशा मरता ही है। मरता है और मारता है····

आभाके शरीरने एक बार फिर उसका ध्यान खींच लिया। चाँदपर जाते समय जो एक-एक जोड़ा कपड़े उनके पास थे, वे इन तीन सालोंमें लगभग फट चुके हैं और नये कपड़ोंकी तमाम सम्भावनाएँ उस भयानक विस्फोटके साथ समाप्त हो गयी हैं। धरती एकदम बंजर हो गयी है। उसमें कोई भी पेड़-पौधा नहीं उगता। यहाँ—पहाड़पर—फलोंके कुछ पेड़ बच गये थे, उन्हींके सहारे जीवन चल रहा है। तमाम नदियों और झरनोंका पानी भी विषाक्त हो गया है। यहाँ केवल एक झरना है, जिसका पानी पेय है····

पहाड़की चोटीसे गिरते झरनेकी ध्वनि रातके सन्नाटेको चीरती गुफामें आ रही थी। उसने घड़ीपर नज़र मारी। मुश्किलसे पच्चीस मिनिट बीत पाये थे। शताब्दीके मरनेमें अभी पैंतीस मिनिट बाक़ी थे। बैठे-बैठे कमर दुखने लगी तो वह बिस्तरपर आभाके बराबर लेट गया। आराम मिला। वह आभाके ऊपर हाथ रख लेता तो और भी आराम मिल सकता था! हाथ धीरेसे उठा लेकिन तभी उसने वापस खींच लिया। वह झटकेके साथ उठ बैठा और घुटनोंपर माथा टिकाकर उसे धीरे-धीरे दबाने लगा····

"इस मरती हुई इनसानियतको हम फिरसे ज़िन्दगी दे सकते हैं!" आभा कहती है। लेकिन इनसानियतने तो ख़ुद ही अपनेको मारा है··· वे चाँदपर पहुँचे तो पृथ्वीसे बधाईके संकेत आने शुरू हो गये थे। पहला संकेत राष्ट्रपतिका था और दूसरा राष्ट्र-कविका। राष्ट्र-कविने कवितामें ही अपनी बधाई भेजी थी। वह चाँदपर पहुँचनेवाली पहली कविता थी :

"ओ, सभ्यता के सूरज!
चाँद पर पहुँचने के लिए बधाई!"

उस बेचारे कविको मालूम था कि जबतक सभ्यताका सूरज चाँदसे लौटेगा, तबतक यह सभ्यता आत्महत्या कर चुकी होगी! और हो भी क्या सकता था? जिस सभ्यता-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की प्रगतिका आधार ही वैमनस्य और प्रतिस्पर्धा हो, उसका और दूसरा अन्त हो भी क्या सकता था ? उफ़् ! कैसा भयंकर विस्फोट था ! यान पृथ्वीके निकट पहुँचा तो समुद्रमें आगकी लहरें उठ रही थीं ! जो भी वनस्पति और जीव-जन्तु वहाँ रहे होंगे, लहरोंने उन सबको मथकर लावा बना दिया था। ज़मीनकी हालत समुद्रसे भी बदतर थी। चारों तरफ़ लावेकी भयंकर नदियाँ बह रही थीं। ज़ोरके धमाकेके साथ विस्फोट होता और बड़े-बड़े भू-खण्ड टूटकर लावेकी नदीमें मिल जाते। पूरेके पूरे शहर पानीपर तैरती काग़ज़की नावोंकी तरह लावेपर तैरते और उसीमें ग़र्क हो जाते····

यान देर तक ज़मीनकी सतहसे काफ़ी ऊपर घूमता रहा और वे उस भयानक विध्वंसको आतिशबाज़ीके खेलकी तरह देखते रहे। आखिर एक ऊँचे पर्वतका कुछ हिस्सा लावेके महासमुद्रके ऊपर उभरा दिखाई दिया। यह पर्वत आल्पस था या रॉकी या फिर हिमालय, यह तय कर पाना बहुत मुश्किल था। उसने यानको धीरेसे पर्वतकी एक घाटीमें उतार दिया और वे एक बार फिर जीवनकी सम्भावनाओंपर विचार करने लगे। वैज्ञानिक सभ्यताके शेष चिह्नोंके रूपमें उनके पास जो कुछ बच रहा था, उसमें सबसे महत्त्वपूर्ण यह यान ही था। लेकिन उस घाटीमें शुरू होनेवाले आदिम जीवनमें यान-जैसी चीज़का कोई महत्त्व नहीं था। जिस प्रकार अन्तरिक्ष-यान महत्त्वहीन हो गया था, उसी प्रकार अन्तरिक्ष-वेषभूषा भी। उनके पास जो ऑक्सीजन-बॉक्स थे, उनका भी कोई इस्तेमाल नहीं था। अब, उनके पास जो कामकी चीज़ें बची थीं, उनमें कुछ 'फ़ूड-टेबलेट्स' थीं, जो पाँच-सात रोज उन्हें भोजनकी चिन्तासे मुक्त रख सकती थीं। दोनोंके पास एक-एक घड़ी, मौसमके चश्मे और एक-एक जोड़ा कपड़े थे। इस सम्पत्तिके साथ उन्होंने अपनी नयी दुनिया बसायी। एक गुफ़ाको घर बना लिया और यानमें-से सीटें निकालकर बिस्तर तैयार कर लिये।

उस सुनसान दुनियामें उन दोके अलावा तीसरा प्राणी नहीं था। इसीलिए भय भी नहीं था। लेकिन था भय। और किसीसे नहीं तो उन दोनोंको एक-दूसरेसे भय था····

अलावमें जलती सूखी लकड़ियाँ चटख रही थीं और पूरी गुफा रौशन थी। आभाका अर्धनग्न ताँबई शरीर और अधिक दिपने लगा था। विराटने एक नज़र उसे देखा। लगा जैसे स्वयं उसके भीतर कहीं सीसा गल रहा है ! वह तेज़ीसे आभाके ऊपर झुका। ओठ उसके ओठोंके बिलकुल ऊपर आ गये। वह उनके रसमें डूबने ही वाला था कि विराटके भीतरके किसी विराट्ने झटका दिया और वह सीधा बैठ गया। साँस तेज़ीसे चल रही थी और शिराओंमें दौड़ते रक्तकी गति बढ़ गयी थी। घड़ीपर नज़र मारी। तीन मिनिट अभी भी बाक़ी थे। वह तेज़ीसे उठा और एक बार फिर बाहर शिलापर आकर बैठ गया।

बर्फ़का वेग और बढ़ गया था। दिशाएँ सफ़ेदीमें डूब गयी थीं। उसने राहतकी साँस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ली। तीन मिनिट—सिर्फ ये तीन मिनिट किसी तरह बीत जायें तो…तो वह बच सकता है, आभा भी बच सकती है….तभी उसे लगा—उसका पूरा शरीर अकड़ता आ रहा है। उसने अपनी दोनों मुट्ठियाँ कसकर भींचीं और पूरे शरीरकी उमेठनी अँगड़ाई ली। अँगड़ाई लेते समय उसके दिमाग़का कोई पुर्ज़ा चटखकर टूट गया। वह हाँफता हुआ उठा और तेज़ीसे गुफामें दाखिल हो गया।

■ ■

डी ११।१६ मॉडल टाउन
दिल्ली–९

उसी डालपर बैठकर उसीको काटना[१]

मौन के विराट अश्वत्थ से जो मुझे ले गये
वाक्[२] और अर्थ के समुच्चय-बोध तक,
वे मेरे गुरुजन नहीं थे। वे दिशाहारा थे।
अपने ही तर्कों के गलित वाग्जाल से पराजित।
उद्भ्रान्त।

उसके पूर्व कभी भी उन्होंने चुनौतियाँ नहीं स्वीकारी थीं
उसके पूर्व कभी भी उन्होंने निर्मम किन्तु आत्म-परिशोधक
पराजय का मुँह नहीं देखा था
उसके पूर्व कभी भी उन्होंने इतिहास की निहाई पर सिर नहीं रखा था।
वे केवल आप्त-वाक्य उद्धृत कर गर्व से निरीह जनता को फाड़ते हुए
प्रतिष्ठा के बिल में घुस जाया करते थे
उन्होंने परस्पर सहमति की चिकनी बैसाखियाँ लगा रखी थीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे झूठी सन्तुष्टि के काले अँधेरे में परम निश्चिन्तता से
उलटे लटके हुए, सोये-सोये सड़ रहे थे
उन्हें सिर्फ़ अपच था, उन्हें सिर्फ़ बार-बार, रह-रह उल्टियाँ-सी आती थीं
जिन्हें भोली जनता में शास्त्र-विवेचन का नाम दिया जाता था
अपने अस्वास्थ्य और असंशय और कायर अहम् की भीड़ में सुरक्षित थे वे।
वे सफ़ेदपोश, वे गौरांग, वे तथाकथित अहिंसक, नक़ली
विद्वत्ता के ताम्र-पत्र धारी वे असल में
सत्य के नक़ाबपोश, कुण्ठित हत्यारे थे।
काव्य और शास्त्र का समागम उनके लिए महज़ अय्याशी[3] थी।
कहीं कोई मुँहामुहीं नहीं थी सचमुच की,
उनकी जर्जर अय्याशी को आर-पार चीर देने वाली
वह वाक् की कटार····लपलपाती
उसके पूर्व
कहीं नहीं थी।

सदियों के बाद उन्हें अचानक वह वाक् की कटार लपलपाती दिख गयी थी
जिसने उनकी अभिसन्धि की पिटारी को झटके से खोल दिया था
जिसने उनके मुलम्मा-चढ़े स्वर्णिम सिंहासन को यहाँ-वहाँ खरोंच दिया था
जिसने उन्हें अपदस्थ कर, बारिश में भींगी हुई चिकनी
और काली मिट्टी में घुटनों तक उतार दिया था
जो उनकी सन्तुष्टि के अँधेरे में एक गहरे
रक्त-वर्ण घाव की तरह आकर ठहर गयी थी
जो उनकी प्रतिष्ठा के सुनहरे बिल में गर्म-गर्म
तरल शीशे-सी गलगल करती हुई भर गयी थी
जिसने उनकी सुरक्षा की दीवार में बाहर की हवा के लिए
एक छोटा-सा, जलता हुआ छेद कर दिया था
जिसने उनके शब्द-उपदंश में हलका-सा नश्तर लगा दिया था
जिसने उनकी चमड़ी के नीचे बहते हुए गन्दे परनालों को खोलकर
सारी निरीह जनता को नाक बन्द करने और
स्तब्ध रह जाने पर विवश कर दिया था···

मौन के विराट अश्वत्थ से जो मुझे ले गये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाक् और अर्थ के समुच्चय-बोध तक,
वे मेरे गुरुजन नहीं थे। वे दिशाहारा थे।
अन्दर से टूटे-दयनीय। अपने ही जर्जर
अध्याश वाग्जाल से पराजित—विक्षुब्ध।
दिशा-दिशा, नगर-नगर, गाँव-गाँव
जंगल-जंगल भटकते हुए—परेशान।
बदले की धुँधआती आग में धुँआते हुए
नंगे। विरूप। विक्षिप्त। भयाक्रान्त।

बदले की धुँधुआती आग में धुँआते हुए
उन्हें कोई महामूर्ख चाहिए था,
उन्हें कोई काला-कलूटा, भदेस एक
मिट्टी का माधो चाहिए था—
मछलियाँ पकड़ता हुआ काल्लू मल्लाह
या गायें चराता हुआ बुद्धू गोपाल
या हल चलाता हुआ गबदू हलवाहा
या लकड़ियाँ काटता हुआ मोलू लकड़हारा;
(ये सारे काम उनकी नज़र में महज़ मूर्खता के पर्यायवाची थे।)
जो सहज ही उनकी चकाचौंध से चकित रह जाय
अपने भोलेपनको, अपनी निरीहता को, मिट्टी में सँवरायी
अपनी सज्जनता को, जो श्रद्धा-गद्गद हो अर्पित कर दे
जो उनके दिये हुए कृत्रिम गूँगेपन को
महज़ एक भोली-सी लालच में ओढ़ ले
और उसे मौन का विशाल अश्वत्थ घोषित कर
वाक् की कटार को साबुत ही लील जाय,
जो उनके मोर्चा लगे ताम्र-पत्रों की रक्षा में योग दे
जो उनकी टूटी बैसाखियाँ फिर जोड़ दे
जो उनकी छिपी हुई कायर बर्बरता को बल दे
जो बिना जाने ही सिंहासन-रक्षा में उनका सहयोगी हो
जो अपने निपट भोलेपन में 'सच' के दोनों नेत्र फोड़ दे
और उन्हीं की तरह 'ब्राह्मण' कहलाने का
झूठा अधिकार प्राप्त करे…

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मौन के विराट अश्वत्थ की उस ऊँची डाल पर बैठा था
वह मेरा कृष्णकाय, गहरा, प्रशान्त और अँधियारा मौन ।
वह ऊँची डाल सदियों से वन्ध्या हो चुकी थी[४] ।
मौन के विराट अश्वत्थ में वह वन्ध्या डाल चुपचाप
हरा-हरा ज़हर बन अन्दर को रेंग रही थी
वह वन्ध्या डाल--मेरे उस कृष्णकाय, गहरे, प्रशान्त और अँधियारे मौन में
अपना वह कृत्रिम गूँगापन चुपचाप घोल रही थी ।
वह वन्ध्या डाल अपने उस कृत्रिम गूँगेपन से
वाणी के अनहोने सच को लगातार-लगातार
अपमानित कर एक घुटन भरे, बदबूदार कमरे में बन्द कर रही थी ।
वह वन्ध्या डाल—चारों ओर, अनवरत, असीम
अन्तः-स्थित फैल रही थी—अन्दर-अन्दर····
जनता के मन में, निर्णय क्षणों में, शासन-तन्त्र में,
बच्चों की आँखों में, योद्धा के पौरुष में
कवि के असीम काव्य-मौन में····

वह उनकी समझ में नहीं आया—मौन के विराट अश्वत्थ की
उस ऊँची डाल पर--कृष्णकाय, गहरे, अँधियारे, प्रशान्त उस
मौन का बैठना····वह उनकी समझ में नहीं आया---
शब्दहीन खट्-खट् से, शब्दहीन, एकाकी, दृढ़ निरन्तरता से आँख मूँद
आत्म-तल्लीन हो, शब्दहीन हवा में चमचमाती
मौन की कुल्हाड़ी से उस गूँगे मौन को छिन्न-भिन्न करना,
वह उनकी समझ में नहीं आया--मेरा
उसी डाल पर बैठकर उसी को लगातार काटना
अन्दर और बाहर के कृत्रिम गूँगेपन को
एक साथ काटकर अलग कर देना,
वह उनकी समझ में नहीं आया····
कवि का वह आदिम दायित्व-बोध--
उस वन्ध्या डालके साथ ही मेरा वह, कटकर
धरती की अमर युवा-ख़ुशबू में गिरना---
और 'नष्ट' हो जाना--
निश्चय ही वह उनकी समझ में नहीं आया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहास का वह नंगा पटाक्षेप ।

मौन के विराट अश्वत्थ से जो मुझे ले गये
वाक् और अर्थ के समुच्चय-बोध तक
वे मेरे गुरुजन नहीं थे । अपने ही जर्जर
अट्टहास वाग्जालसे पराजित । स्तम्भित । मदान्ध ।
नंगे । विरूप । विक्षिप्त । उद्भ्रान्त--
वे दिशाहारा थे ।

१. महाकवि कालिदासके सम्बन्धमें विख्यात लोक-अनुश्रुति । वैसे लोक-अनुश्रुतिमें केवल मनोरंजक अंश ही शेष रह गया है । निहितार्थ (जिसे यहाँ खोजनेका प्रयास किया गया है ।) कुछ और भी हो सकता है । कि वह वृक्ष काव्य-रचना (सक्रियता) के पूर्वका मौनका विराट अश्वत्थ भी हो सकता है, जिसकी एक डालपर वह बैठा हुआ वह उसीको काट रहा है ।···कि सत्ताधारी वर्ग (हर क्षेत्रमें) अपनी सत्ताको सुरक्षित रखनेके लिए और अपनी भ्रष्ट मानसिकता, पद-लोलुपता, कायरता और छद्म व्यक्तित्वको चलाते चलनेके लिए वाणीके चकाचौंधका उपयोग कर जघन्य अपराध करता है । कि इतिहासमें ऐसे जघन्य अपराधियोंके साथ एक-न-एक दिन कोई-न-कोई 'नंगा सच' टकराता ही है और अन्ततः उन्हें ··। कि वह 'नंगा सच' अपनी कलात्मक सक्रियता तक पहुँचनेके पूर्व चुपचाप अपने अन्दर और अपनेसे बाहरके उस सामाजिक ऐतिहासिक और सांस्कृतिक बाँझपनको काटकर अलग कर देता है···। यह निहितार्थ एक सनातन सत्य भी है और आज हमारे बीचका कठोर और अन्धा ऐतिहासिक सन्दर्भ भी । जाहिर है कि यह कविता लिखनेकी प्रेरणाभूमि आजके हमारे बीचका यह कठोर और अन्धा ऐतिहासिक, राजनैतिक सन्दर्भ ही है ।···यह टिप्पणी प्रस्तुत कविता-की तह तक पहुँचनेके लिए थोड़ी-सी आसानी देनेके लिए दी जा रही है । क्योंकि इस लोक अनुश्रुति-का यह निहितार्थ मेरी नितान्त अपनी व्याख्या (या कल्पना) है । अतः इस टिप्पणीके लिए मुझे क्षमा किया जाये ।

२. वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये···(कालिदास, 'रघुवंश', प्रथम सर्ग, श्लोक १)

३. काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम् (हितोपदेश)

४. कभी-कभी अचानक किसी हरे-भरे पेड़की एक डाल अलग-सी दिखाने लगती है । उसकी पत्तियोंका आकार-प्रकार पेड़की पत्तियोंसे बिलकुल अलग हो जाता है । और पूरी डालमें गोल-गोल ऊबड़-खाबड़ गूमड़े निकल आते हैं । उसमें फल-फूल आने बन्द हो जाते हैं । देहातोंमें इसे डालका 'बंझा' (वन्ध्या = बाँझ) हो जाना कहते हैं । ऐसी डालको लोग काट देते हैं । कई बार ऐसा भी होता है कि किसी घने और विशाल पेड़में यह डाल काफ़ी दिनों तक छिपी रहती है और पकड़में तब आती है जब उस शाखाकी दूसरी डालें भी उसी तरह बंझा (वन्ध्या) होने लगती हैं । इसीलिए देहातोंमें लोग काफ़ी सावधान रहते हैं और ऐसी डाल दिखी नहीं कि तुरत काट देते हैं ।···मैं नहीं जानता, वनस्पति-शास्त्री इसकी क्या व्याख्या करते हैं । बहरहाल···।

■ ■

१५, लूकरगंज, ओ० टी० रोड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ कुछ नमूने ॥ बीसवीं शताब्दीके चेहरे :

उगे हुए लोग

मृणाल पाण्डे / तू आ गया रे चार्ली ?....बस, और कुछ काम नहीं तेरा सिवाय दूध चट करनेके और मूँछोंपर ताव देनेके। बस ऐसे ही बैठा-बैठा म्याऊँ-म्याऊँ किये जायेगा और पंजोंको चाट-चाटकर सारी देहका मैल पोंछता रहेगा !....उधर क्यों बैठा है, इधर आ ! हाँऽ...व्येऽबात !....देख, आज फिर कचरेका ड्रम गलीके बीचो-बीच उलट गया है। अब यहाँसे मेरे साथ सबकी प्रतिक्रियाएँ देखना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ले, कहनेकी देरी थी कि आ गये भोला परशादजी। वो ऽ नुक्कड़पर बैठकर नेतागिरी करते हैं। दो-दो चुनावोंकी हारके बाद अब इनकी नेतागिरीका दायरा मुहल्लेके चबूतरेके इर्द-गिर्द ही बँधकर रह गया है। मैंने अपनी इसी खिड़कीपर बैठे-बैठे इनका उत्थान-पतन देखा है। क्या माला डालकर गुज़रे थे पन्द्रह साल पहले। कभी गलीके बच्चोंके सिर थपथपाते; कभी विनयसे दुहरे होते किसी मुहल्लेवालेकी पीठपर बड़ी आत्मीयतासे हाथ रखते—"हाँ-हाँ, शब ये कूड़ा (पिच्च्) शाफ़ करवाना होगा। बश अपने राजके यही शुख हैं—मिनटोंमें गन्नगी दफा !...." चुटकी बजाकर छूमन्तर होनेका भाव। आजकल बूढ़े दन्तहीन हाथीकी तरह शैथिल्यसे इसी चबूतरेपर पड़े रहते हैं। पर हाय रे दम्भ ! अभी भी कभी-कभी वही पुराने लटके कि हर नवागन्तुकसे मिज़ाजपुरसी—"क्यों भाई, शब ठीक-ठीक ? कोई तकलीफ तो नहीं ?"...फिर हारुँ-उल-रसीदाना अदासे—"हाँऽऽ जरा गन्नगी कभी-कभी हो जाती है, पर यूँ निशाखातिर रहो, क्यों भाई है ना ?...." श्रोताके होठोंकी वक्रताका मैं यहाँसे ही कल्पनामें अनुमान लगा लेती हूँ। उस मोड़ तक आते-आते उसका साथी खुलासा करता है—"यार, ये हैंगे एक साले लोकल नेता भोला बाबू। दो चुनाव हार चुके हैं, पर अकड़ वही मिनिस्टरोंवाली।"—फिर कभी-कभी ऊपर हमारे घरको देखकर परिचय देता है—"ये यहाँका सबसे पुराना घर है। एक एंग्लो इण्डियन बुढ़िया रहती है यहाँ। बाल-बच्चे, मरद सब मर-खप गये, बस अपनी बिल्ली गोदमें रखे इसी खिड़कीपर मूरत-सी जड़ी रहती है। न खुद कहीं आती-जाती है; न किसीको आने देती है अपने घर।"....पर जबतक नवागन्तुककी जिज्ञासा-भरी आँखें दीवारकी लतरपर रेंगती खिड़कीके भूलते फ्रेम और धुँधले लेसके परदोंके बीच मुझे ढूँढना शुरू करती हैं, मैं वहाँसे उठकर दूसरे किवाड़के छेदमें-से आरामसे उस शख्सका मुआयना करती रहती हूँ—यूँ घूरा जाना मुझे क़तई नापसन्द है।....पर तू मान, न मान चार्ली, मुझे यहाँ बैठे-बैठे भी मुहल्लेके हर आने-जानेवालेकी खबर रहती है।

....ले, मैं भी कहाँ उलझ गयी। हाँ, तो देख, भोला परशाद क्या नफ़ासतसे लाँग उठाकर कचरेको लाँघ गया, और अब शहीदाना अदासे हाथ फैलाकर क्या कह रहा है—'भाइयो, गजब है ! मने कि—माताओ, बहनो और आप लोगोंके सबके होते हुए भी इस कचड़े (पिच्च्)के ड्रमकी सुरक्षाका कोई प्रबन्ध नहीं।...." इस आम मुनादीके नक्कारेके साथ ही कई अदद सिर खिड़कियों-दरवाज़ोंके फ्रेमोंमें आ लटके हैं।

बग़लके दुमंज़िलेसे झाँकती वो पीली-सी सक्सेना बाबूकी बहू। गाय-जैसी ढीली-ढाली देह, गाय-सी निर्विकार आँखें, और गाय-सा ही सुभाव ! एक-दो मिनिट यहाँ खड़ी रहकर अब खिसक गयी। शायद अपने पाँचवें बच्चेके पोतड़े धोने। अरे, लोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहते हैं, औरतोंको पढ़ाओ-लिखाओ, उनसे मरदोंकी गुलामी न करवाओ, पर मैं कहती हूं चार्ली, ऐसी गायनुमा औरतोंको चूल्हे-चक्कीके दायरेसे निकालकर भरी दुनियाके बीच छुट्टा छोड़ भी दें तब भी ये सिर्फ़ जुगाली करती हुई पीठसे मक्खियाँ हँकाती रहेंगी।

और ले—ये निकलीं बागची बाबूकी 'गिन्नी' (गृहिणी)। पारसी फ़ैशनका ज़माना गुजर गया पर इनकी लेसदार 'जाकिटें' और पत्तीदार बाल समय-कालसे परे हैं। पीछे-पीछे दुमकी तरह उनकी सदा घबरायी फिरनेवाली बेटी पूँटी भी है। माँके कठोर अनुशासनने उसका अपना व्यक्तित्व ही सुखा डाला है। "की रे पूँटी! बाबा हाम जेहाँ जायेगा तूम जेरूर आयेगा! हियाँ किया काम तुमारा?"—बिचारी पूँटी! चुपचाप दुम दबाकर खिसक रही है छोकरी!....मेरा भाई हेनरी कहता था, दुनियामें दो तरहके लोग होते हैं—उगे हुए लोग, और उगानेवाले लोग। उगे हुए वो जिनके जनमसे ही चक्कर चालू हो जाता है कि एक दिन अपनी पत्तियोंमें ही गुँथे-गुँथाये करमकल्लेकी माफ़िक पक-पकाकर हड़प्प; न कोई शिकवा न शिकायत! उगानेवाले वो जो साले अपनेको इन करम-कल्लोंका बड़ा भारी रखवाला समझते हैं, पर उनके पैरोंमें भी जड़ें फूटी रहती हैं; बस अपनी शाखें हिला-हिलाकर ये अपनेको बड़ा दादा जताते हैं। तो शायद पूँटी पहली श्रेणीमें है, उसकी माँ दूसरीमें!

....पर हेनरी समझ नहीं पाया कि एक तीसरा दर्जा भी है, उन लोगोंका, जो क्यारी-के बाहर खड़े-खड़े अकेले ही ये तमाशा देखते हैं, मेरी मानिन्द, ख़ुद उसकी मानिन्द। पर कभी-कभी लालचमें ये लोग बाड़ेके अन्दर घुसकर शामिल हो जाते हैं, और फिर अक-सर उनका अन्त हेनरीकी तरह ही होता है....छोड़, क्या बताऊँ तुझे, उस बीभत्स लाशको देखने 'फ़्यूनरल' तक तो मैं गयी नहीं।....ख़ुद मेरा ही खाविन्द बिचारा रॉबर्ट, अपने नज़ले, और मुर्गियोंमें दबा-दबाया हुआ एक उगे हुए करमकल्लेसे क्या बेहतर था? अभी भी जैसे 'होम-स्वीट होम' की तख़्तीके बग़लमें लटकती मटमैली तसवीरसे उसकी सहमी आँखें मुझसे पूछती रहती हैं: "डार्लिंग, रातको दही खा लूँ? नुक़सान तो नहीं करेगा?"....पच्चीस साल हो गये उसकी मौतको। अब तो बुढ़िया डोरिस काम कर जाती है, उसका बेटा बैंकसे पेन्शन ला देता है—उसीसे तो तेरी-मेरी दूध-रोटी चलती है रे चार्ली! मेरा अपना डगलस तो बापसे पहले ही दग़ा दे गया था।....ख़ैर....

वो देख, ये कौन है रे? लगता है, चश्मा लगाना पड़ेगा।....अरे हाँऽ, ये तो वो है, शर्मा बाबूका विनोद! बस लड़कियोंकी बस आनेका टाइम हुआ नहीं कि साहबज़ादे तीरकी मानिन्द यह जा, वह जा। देख, एक मिनिट कूड़ेके पास ठिठका, फिर जेबसे रूमाल निकालकर नाकपर, और सर्रऽऽ!

भोला बाबू, लगता है, ऐसे ही मौक़ेकी तलाशमें थे। नुक्कड़से उनकी आवाज़का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पटाखा छूटता है—ये हैं हमारी आजकी पीढ़ीके नौजवान ! यानी कि पहले देखा कचरेकी ढेरीको, फिर नाक ढँककर चल दिये।…मने कि इसी अनदेखा करनेकी आदतने तो भारतवर्षको डुबाया है, समझे मिसिरजी ! मैंने तो हरी बाबू—(अरे यार, वही एजूकेशन मिनिस्टर, अपना दोस्त है वो) उससे कहा कि यार, हमारी (पिच्च्) शिक्षा-प्रणाली सड़ चुकी है। ये पतलूनें, ये सिगरेट, पच्छिमने तो सा'ब 'रुइन' कर दिया 'रुइन' !—सारी भारतीय संसकीरतको घुन लगा दिया है…"

"घुन लगा होगा तेरे दिमाग़में, तेरे मनिश्टरोंकी मनिश्टरीमें। ज़रा हमारे लल्ला-ने पतलून क्या पहनी हैगी कि जानो तुम्हें पलीता दिखा दिया !"—मन्दिरसे लौटती विनोदकी दादीके रेडार-यन्त्रोंने उन्हें अबतक घटनासे अवगत करा दिया था।—"अरे खाने-खेलनेकी उमिर हैगी, अपने जमानेमें तैंने क्या नहीं किया हैगा ? आती तो थी तेरी कारमें भी वो खादीवाली बहिनजी !"

भोला बाबूका मनिश्टरी स्वर अब रुँआसा लग रहा है—"हेः हेः अरे माँजी, आप तो खामखा…मैं तो कूड़ेके कारन…अब आप ही लोगोंको कष्ट…"

"अरे ऐसा ही दरद है तो जाकर सीधा क्यों नहीं कर देता, उस टीनको ! हर हफ़्ते यही होता है—(पिछले हफ्ते याद है रे, बागची गृहिणीसे कूड़ेमें पड़ी मछलीकी जूठन-पर इनका बड़ा महनामथ मचा था)—और हर हफ़्ते तू यूँ ही लिक्चर देवे है। अपने पास रख ये सीख-सलाह…" भुनभुनाई बुढ़िया बड़बड़ाती हुई कंचे-सरीखी लुढ़कती अपने घरकी खोहमें समा गयी।—भोला बाबूका स्याह चेहरा और भी स्याह हो गया होगा।…सुन, सुन रे, क्या कह रहा है अब ?…"ठीक है, आओ भाइयो ! शर्मा-जीऽ ! पण्डित मिसिरजीऽऽ ! अरे सक्सेना सा'ब ! आइए, हाथ लगाइए ज़रा…अकेले तो…" पर मैं भी जानती हूँ, भोला बाबू भी जानते हैं, कोई नहीं आयेगा। चबूतरे-पर अब भोलानाथ अकेला खड़ा है, बाँहोंको दरख्तकी शाखोंकी तरह ऊपर उठाये !

… कुछ देर बाद बाँहें तरोइयोंकी तरह लद्‌से नीचे आ जायेंगी, और उसके कुछ क्षण बाद अपने नॉर्मल स्वरमें भोलाबाबू फिर किसी नवागन्तुकसे पूछ रहे होंगे—"क्यों सा'ब, सब ठीक-ठाक? हे…हे…हे…"

ड्रमको कल मेहतरानी फिर सीधा कर जायेगी; सक्सेना बाबूकी गायनुमा पत्नी पोतड़े सुखायेगी या बच्चेको दूध पिलाती हुई मक्खियाँ हँकायेगी; विनोद फिर साय-किल लेकर लपकेगा…। सब भूल चुके होंगे कि एक कितना हास्यास्पद और शर्मनाक नाटक यहाँ हो चुका है।

…सब, शायद सिवाय तेरे-मेरे; क्योंकि तू ही तो गवाह है चार्ली, कि हर हफ़्ते जब बाड़ेके सन्नाटेसे जी घबराने लगता है, तो आधी रातको चोरोंकी तरह दबे पाँव जाकर मैं ही इस कचरेके ड्रमको उलट देती हूँ। ■■

द्वारा—श्री ए० पाण्डे, (एस. डी. ओ.)
(नीमच म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ १ जनवरी, सोमवार, २००१ ॥ राजनीति, भूगोल, दर्शन सभी प्रकाश-त्वरासे आगे बढ़ें तो आजकी और कलकी दुनियामें ज़मीन-आसमानका अन्तर आ जायेगा। फ्रेंच ज्योतिषीकी घोषणाके अनुसार तीसरे संहारक युद्धके बाद क्या होगा...? एक तसवीर यह भी हो सकती है ... ...

मा भैः

अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार । बीसवीं शतीका अन्त हो गया। (भारत में विक्रम संवत्‌के अनुसार बीसवीं सदीका अन्त १९४३ ई० में ही हो गया था। भारतके नये ब्रिटिश-रंगी शासकोंने शक संवत् चलाया है, जो ५७ साल पीछे रहता है।) इक्कीसवीं शतीका प्रारम्भ हो गया। नया युग आया। रोमके पोपका शान्ति-सन्देश प्रसारित हुआ। नवीन ऐतिहासिक युगमें पुनः पाँच सहस्र वर्ष पहले कुरुक्षेत्रके मैदानसे उठी वाणी सुनाई दी :

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्धो, लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः।
ऋतेऽपि त्वा न भविष्यन्ति सर्वे येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः॥

२१वीं शताब्दीके विषयमें फ्रेंच ज्योतिषीने भविष्यवाणी की है कि २०२० ई० में, १९८० से भी भयंकर सर्व-संहारक युद्ध होगा। युरॅप, अमेरिका का आर्थिक वैभव समाप्त हो जायेगा।

लाल क़िलेपर 'विश्व-विजयी तिरंगा झण्डा ऊँचा रहे हमारा' की स्वर-लहरीके साथ तिरंगा फहराते हुए, तोपोंके निनाद, और भारत माँकी जयकी तुमुल जयध्वनिके मध्य राष्ट्रपतिने कहा : "यह झण्डा विश्व-शान्तिका झण्डा है।" भारतके राष्ट्रपतिने विश्वको कहा : 'इस झण्डेके नीचे आइए तथा ऋषियोंकी इस वाणीके साथ :—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मा भैः' विश्वको अभय प्रदान किया।

'ज्ञानोदय' ने १००० पृष्ठोंका विशेषांक निकाला—'विगत शताब्दी और नवागत शताब्दी'। सम्पादकने आशा प्रकट की—नूतन वैज्ञानिक प्रगतिके कारण अणुशक्ति भारतके गाँवोंमें चूल्हे जलायेगी, और झोपड़ियोंको आलोकित करेगी। १ पैसा प्रति यूनिट बिजली मिलेगी। एवं लोहा और एलूमीनियमके मिश्रणसे बने लौहेलूमीनियम इस्पातकी बनी रेलें, जहाज़, विमान और मोटरें आजकी अपेक्षा दुगनी चालसे चलेंगी।

पत्रने इसको सत्य सिद्ध करनेके लिए विशेषांकका दाम १ रुपया रखा था। यह मुद्रण जगत्में एक नवीन क्रान्ति थी।

१ जनवरी २००१ के दैनिक पत्रोंमें मुख्य एवं आकर्षक समाचार था :

० मारीशस—हिन्दमहासागरका प्रवेश द्वार—द्वीपकी पार्लमेण्टने सर्वसम्मतिसे निश्चय किया है कि मारीशस भारत-संघका एक अविभाज्य अंग होकर रहेगा। मारीशसकी राजभाषा हिन्दी और फ्रेंच होगी। साथ ही कहा गया कि प्रवेश-पत्र लेकर प्रतिनिधिमण्डल स्पेशल चार्टर्ड विमानसे दिल्लीके लिए रवाना हो गया है।

० मारीशसकी इस घोषणासे द० अफ्रीकाके समान लन्दन विषण्ण और चिन्तित है। उसको भय है कि ब्रिटिश गायना और डच गायना ही नहीं सम्पूर्ण वेस्ट इण्डीज भारत-संघमें सम्मिलित होगा। यूरोपियनोंके प्रभुत्वका अन्त हो जायेगा। १९१९ में एच० जी० वेल्सकी की गयी भविष्यवाणी ८१ साल बाद सच हुई। नवीन एशियाका उदय हो रहा है। यह नयी शताब्दी एशियाकी होगी।

० वाशिंगटन और मास्को इस बातमें सहमत हैं कि हिन्देशियासे भयभीत सिंगापुर और मलेशिया (फ़िलीपीन समेत) भी भारत-संघमें सम्मिलित होंगे। मारीशसने रास्ता बना दिया है। सीलोन (श्रीलंका) बर्मा और अदनका भारतमें विलय होना अनिवार्य था। ये, तो, ब्रिटिश-शासन-कालतकमें भारतके एक भाग थे। पर मारीशसने नवीन भारत-संघका निर्माण किया है। यह 'कामनवेल्थ' से भी अधिक बड़ा होगा। विश्व-शान्तिकी स्थापनामें यह सबसे बड़ा स्थायी तत्त्व होगा और भावी युद्धोंसे अलिप्त रहेगा।

० आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्डमें भी चिन्ता प्रकट की गयी, भय प्रकट किया गया कि फिजी भी अब मारीशसका अनुसरण करेगा। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्डको जापानियों एवं एशियाइयोंके लिए अपना द्वार खोलना पड़ेगा। तोकियोने तो इस समाचारपर हर्ष प्रकट किया और भारतके राष्ट्रपतिको बधाईका तार भेजा। तारके अन्तमें कहा गया था : 'एशियाके बाँकपन भारतका जापान अभिनन्दन करता है'।

० पेकिंगमें मारीशस और भारतके विरोधमें रोष और क्षोभ-भरे प्रदर्शन हुए। चीनने विश्व-संघकी बैठक तुरन्त बुलानेकी माँग की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतमें इस अवसरपर विशेष उत्सव मनानेका आयोजन हो रहा है। राष्ट्रपतिने प्रतिनिधियोंके स्वागतमें आयोजित महोत्सवमें भाग लेनेके लिए एक लाख व्यक्तियोंको आमन्त्रित किया है। इसमें अफ़ग़ानिस्तानके शाह, नेपाल-नरेश, तिब्बतके दलाई लामा, राज्यपालों एवं रियासती नरेशोंको भी आमन्त्रित किया गया है। इस आयोजनके स्वागताध्यक्ष कश्मीर-नरेश कर्णसिंहको बनाया गया है। पालमसे राष्ट्रपति-भवन तकका मार्ग इस प्रकार सजाया गया है जैसे अयोध्याने अपनेको रामके राज्याभिषेकोत्सवपर सजाया था। राम-कृष्ण, सीतारामके राज्याभिषेक, सीता

• भविष्यकी दुनिया कैसी होगी ?

क्या आप विश्वास करेंगे—समृद्धशाली देशोंमें अमरीका व रूसके बाद जापानका नम्बर। ग़रीब और अमीर देशोंके लोगोंके जीवन-स्तरमें और अधिक अन्तर। लन्दनसे सिडनी एक घण्टेमें। मानव-मस्तिष्क और कम्प्यूटरके बीच सीधा संचार-सम्बन्ध। निम्न स्तरके कामोंके लिए बुद्धिमान जीव-जन्तुओंका उपयोग।

ये बातें सन् २,००० तक या इसके कुछ वर्ष बाद सही हो सकती हैं। यह कोई हवाई-क़िले नहीं हैं, बल्कि वैज्ञानिकों और भविष्य-आयोजकोंकी भविष्यवाणी है, जिसे वे सही होनेका दावा करते हैं। अब इस प्रकारकी भविष्यवाणियोंपर अमरीका, ब्रिटेन व कुछ अन्य देशोंमें करोड़ों रुपया ख़र्च हो रहा है। वैज्ञानिकोंका कहना है कि विज्ञान और टेक्नालॉजी अब इतनी प्रगति कर गये हैं कि हमें यह नहीं कहना चाहिए कि हमारी भविष्यकी दुनिया कैसी होगी, बल्कि कहना चाहिए कि हम अपनी दुनियाको किस प्रकार बनाना चाहते हैं। इसी भविष्यवाणीपर उद्योगों, सैनिक तैयारियों और सरकारकी भावी योजनाएँ आधारित होंगी।

वैज्ञानिक-भविष्यवाणीका जन्म अमरीकामें १९५० के बाद हुआ और अब भी वहाँ इस विषयको सबसे अधिक महत्त्व दिया जा रहा है। अमरीकी उद्योग इसपर हर वर्ष पाँच करोड़से दस करोड़ डॉलर ख़र्च करते हैं। अमरीका और इंगलैण्डमें इस विषयका अध्ययन करनेके लिए बड़ी-बड़ी संस्थाएँ बन गयी हैं। गत सितम्बरमें ओसलोमें वैज्ञानिकों और विज्ञान-लेखकोंका एक सम्मेलन भी हुआ था, जिसमें भविष्यकी दुनियापर विचार-विमर्श हुआ और वैज्ञानिकोंमें पर्याप्त मतैक्य पाया गया।

—हरीश अग्रवाल

९७। मा भैः। अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार। ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

माता-द्वारा दी गयी मालाके मनके तोड़ते पवनपुत्र हनुमान्‌के चित्र जगह-जगह लगाये गये हैं। स्कूलोंमें इनको करनेकी व्यवस्था की गयी है। भारतमें पुनः राम-कृष्णका युग आया है। इस युगको लानेवाले और मन्त्र-द्रष्टा महर्षि दयानन्दका सर्वत्र जय-जयकार हो रहा है। उसका भारतका सार्वभौम चक्रवर्ती राज्यकी स्थापनाका स्वप्न साकार होता प्रतीत होता है।

■

इस दिनका दूसरा महत्त्वपूर्ण समाचार है कि तुर्की, इजराइल और ईरानने अरब राष्ट्रोंके गुटको चेतावनी दी है कि स्वेज़ नहरके तटपर-से अरब सैनिक मोर्चाबन्दी हटा ली जाये। यदि उसको नहीं हटाया गया तो तीनों मिलकर उसको तोड़ देंगे। क़ाहिराको नोटिस दिया गया है कि मिस्र अफ़्रीकी देश है। अरब इसको ख़ाली कर दें। इस नोटिसपर सूडानके नीग्रो-नेताके भी हस्ताक्षर हैं।

तीसरा समाचार है कि अमेरिकाके नीग्रो, लेटिन अमेरिका और कनाडामें बसे भारतीयोंके साथ मिलकर सशस्त्र युद्धकी तैयारी कर रहे हैं। एक कनाडियन सिखको उन्होंने अपना नेता चुना है। कनाडाके फ़्रेंचोंने भी नीग्रो-नेताओंको पूरी सहायता देनेका वचन दिया है। पश्चिमी यूरोपके राष्ट्रोंने फ़्रान्सके अनुरोधपर नीग्रो-नेताओंको युद्ध-सामग्री देनेका आश्वासन दिया है।

समाचार-पत्रके पहले पृष्ठपर-के मध्य भागमें एक नक़्शा दिया गया है। इसके साथ समाचार दिया गया है कि बाह्य व अन्तर मंगोलिया संयुक्त होगा। मंगोलिया चीनी सत्ताकी अधीनतासे मुक्त हो गया। भारतके प्रधान मन्त्री तथा राष्ट्रपतिने मंगोलियाको बधाईके तार भेजे हैं। शुभ कामनाके सन्देशोंमें भारतका पहल है, यह ध्यान देनेकी बात है। पेकिंगके समान मास्को भी इस समाचारपर कोई टिप्पणी नहीं कर रहा है।

मंचूरियाने भी स्वाधीनताकी घोषणा की। पोर्ट आयर और डेरिनपर स्वाधीन मंचूरियाकी पताका फहरा रही है। जापान और कोरियाने स्वाधीन मंचूरियाका अभिनन्दन किया है और सबसे पहले उसको मान्यता प्रदान की है। कैण्टन और नानकिंग भी पेकिंगसे अलग हो गये हैं। पेकिंगका फ़ौजी शासन डाँवाडोल है, लड़खड़ा रहा है। चेकियांग, होनान, क्वाण्टुम, जेचुआन और यून्नान प्रान्तोंमें गृह-युद्ध छिड़ गया है। बौद्ध, कनफ़ूशियस और कम्युनिस्ट परस्पर लड़ रहे हैं। ईसाई और मुसलमान तटस्थ हैं।

पीटर दी ग्रेट-द्वारा स्थापित, ज़ारों-द्वारा बढ़ाया गया, कम्युनिस्टों-द्वारा रक्षित एवं विस्तारित रूसी साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। हिटलरका स्वप्न पूरा हुआ। यूक्रेन और श्वेत रशिया पूर्ण स्वाधीन हो गये। काकेशिया, ताजकिस्तान, उजबेकिस्तान और साइबेरिया रूसी संघसे अलग हो गये। मास्कोने इनकी स्वाधीनता स्वीकार की है। पर, साथ ही यह आशा प्रकट की है कि ये भविष्यमें भी रूसी महासंघके सदस्य बने रहेंगे। सोवियत संघका संविधान यूनिटोंको

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संघसे अलग होनेकी स्वाधीनताको स्वीकार करता है। हम इस नवीन परिवर्तनका हृदयसे स्वागत करते हैं।

सिकियांगके तुर्कोंने घोषणा की है कि सिकियांगको सर्वप्रथम अशोकके पुत्र कुणालने बसाया। सिकियांग अपनी सुरक्षा भारतके साथ रहनेमें देखता है। अतः सिकियांग घोषणा करता है कि उसको भारतका एक प्रान्त माना जाये। सिकियांगको भविष्यमें रूस और चीनकी रण-भूमि बनानेसे बचानेके विचारसे हमने यह निर्णय किया है। हमें विश्वास है कि महान् भारत संघ हमको अपना अंग बनाना स्वीकार करेगा, और मध्य एशियामें शान्ति, व्यवस्था और क़ानूनका राज्य स्थापित करनेमें सहायक होगा तथा सिकियांगको स्थायी संरक्षण प्रदान करेगा। इस घोषणाकी, मास्को और पेकिंगमें क्या प्रतिक्रिया हुई, यह अभी ज्ञात नहीं हुआ है।

■

विश्वका बाजार अब तोकियो और बर्लिन हो गये हैं। १९८० के महायुद्धने जर्मनीको संयुक्त कर दिया। यूरोपियन कामन मार्केट पश्चिमी यूरोपियन संघमें बदल गया। यद्यपि रूसी चढ़ाईका भय तिरोहित हो गया था। क्योंकि बाल्कन राष्ट्रोंने अपना एक पृथक् संघ बना लिया था। पश्चिमी यूरोपियन संघमें इंग्लैण्डके सिवाय स्केण्डेनेवियन देश (डेन्मार्क, नार्वे और स्वीडन) भी इसमें सम्मिलित थे। यह मुख्यत: आर्थिक संघ था। शनैः-शनैः एक पार्लमेण्ट और एक सरकारकी ओर बढ़ रहा था। अमेरिकाका वर्चस्व यूरोपसे समाप्त हो गया था, जिसका प्रारम्भ मार्शल योजनासे हुआ था। इंगलैण्ड इसमें सम्मिलित हुआ था, पर सशर्त। शर्त यह थी कि हांगकांग, बेहरीन, दक्षिणी अरेबिया इत्यादि उसके साम्राज्यके अवशेषोंकी रक्षा सम्पूर्ण संघ करेगा। इस कारणसे भी यूरोपियन पार्लमेण्टकी स्थापना शीघ्र हो सकी। परन्तु इरेबियन प्रायद्वीप (स्पेन-पुर्तगाल) के अलग रहते हुए यूरोपका संघ अपूर्ण रहता था। लेकिन पुर्तगाल मोजाम्बिक और अन्य अफ़्रीकी उपनिवेशोंका त्याग करनेको प्रस्तुत नहीं था। इस स्थितिमें फ़्रान्स, बेल्जियम और इटली तथा ब्रिटेन अफ़्रीकामें अपने आर्थिक साम्राज्यको संकटमें पाते थे। इस वास्ते स्पेन और पुर्तगाल यूरोपियन संघसे अलग ही रहे।

यूरोपियन संघमें प्रवेश करते हुए कुछ और शर्तें भी ब्रिटेनने रखी थीं। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्डके कच्चे मालके आयातपर शुल्क न लिया जायेगा।

यूरोपियन संघकी भाषा फ्रेंच और जर्मन ही रही, अँगरेज़ी इसमें स्थान न पा सकी। फलतः अँगरेज़ीका अन्तर्राष्ट्रीय जगत्से प्रभाव क्षीण होने लगा। इसका स्थान हिन्दीने लिया। जापानीने प्रतिस्पर्धा नहीं की। नवीन विश्व संघकी मान्य भाषाओंमें अरबीको स्थान नहीं मिला। हिब्रू भी मान्य नहीं हुई। चीनी, रूसी, अँगरेज़ी, स्पेनिश और हिन्दी ये पाँच भाषाएँ मान्य घोषित की गयीं। अफ़्रीकी देशोंने अँगरेज़ीको छोड़कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीको अपनाया। साक्षरता-प्रसारकी दृष्टिसे इसको सरल पाया। नागरी लिपिको नागरी अंकोंके साथ अपनी बोलियोंके लिए स्वीकार किया। अफ्रीकासे रोमन लिपिका बहिष्कार हो गया। क्योंकि स्वाभिमानी अफ्रीकी देश पराधीनताके सब चिह्न समाप्त कर रहे थे। मूर्तियाँ नष्ट करनेकी अपेक्षा लिपिका अन्त करना अधिक अच्छा समझा। अफ्रीकी नागरी लिपिमें मराठीके समान ळ ने भी स्थान पाया। इसके कारण भारतके संविधानसे भी अँगरेज़ी भाषा और रोमन अंक निष्कासित कर दिये गये। भारतका नया संविधान हिन्दीमें बनाया गया। अस्पृश्यताके समान ब्रिटिश क़ानूनोंको समाप्त कर दिया गया। नया भारतीय दण्ड विधान सरल हिन्दीमें बनाया गया। भारतका नाम 'भारतवर्ष' घोषित किया गया। अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओंमें भारतवर्ष नामने स्थान पाया। ग्रीकोंका दिया नाम 'इण्डिया' दासताका अवशेष माना गया। मलयालम, तेलगू और कन्नड़के विद्वानोंने नागरी लिपिको स्वीकार किया। असमिया और गुजरातीने भी नागरी लिपिको स्वीकार किया। सिख यह नहीं कर सके, अतः पंजाबसे बाहर बौद्धिक क्षेत्रसे बाहर हो गये। बंगलाने भारतसे बहिष्कृत होनेके भयसे नागरी लिपिको स्वीकार किया और संस्कृत ग्रन्थोंको पुनः नागरीमें प्रकाशित किया। इससे कलकत्ताके बंगाली प्रकाशकों, विशेषतः 'वसुमती' के यहाँ अप्रत्याशित रूपसे समृद्धि बढ़ी। इससे हिन्दी विरोधी बंगाली विद्वानोंपर बंगालके लोग ही थूकने लगे और उनको अभारतीय कहने लगे। बंगालमें नूतन जन-क्रान्ति हुई। 'भद्र लोगोंका प्रभाव समाजपर-से जाता रहा। केवटों, नमः शूद्रोंका प्रभाव बढ़ा। नये नेतृत्वका उदय हुआ। यह भारतीय मनोवृत्तिका था।

भारत सरकारके दफ़्तरमें ऐयर आयंगर मुदलियार इने-गिने रह गये। पर नायर पिल्लेका प्राधान्य हो गया। दिल्लीसे अँगरेज़ीके हटने और हिन्दीके स्थान लेनेसे दुःखी केवल सिख और तमिल ही हुए। हिन्दीभाषी तीसरे और दूसरे वर्ग तक ही रहे। हिन्दीभाषी जगत्में इसके कारण विद्याभ्यास और विदेश पर्यटनपर अधिक ज़ोर दिया जाने लगा। विश्व-विद्यालयोंमें आन्दोलनों और हड़तालोंका अन्त हो गया। साक्षरता तेज़ीसे बढ़ी।

भारतसे ही नहीं सम्पूर्ण एशिया और अफ़्रीकासे एंग्लो-अमरीकाका प्रभाव समाप्त हो गया। चीनके अन्तरद्वीपी मिसाइलोंसे अधिक हानि नीग्रो विद्रोह एवं गृह-युद्धने की। मोटर उद्योगका केन्द्र 'डेट्रियट' धूलमें मिल गया। फ़ार्मोंमें आग लग गयी। पर नीग्रो-जातिका क्रोध शान्त नहीं हुआ। १९१४ के महायुद्धसे पहलेकी स्थितिमें अमेरिका पहुँच गया। भारतको छोड़कर और किसीने उसका क़र्ज़ नहीं चुकाया। पर अमेरिका भी दक्षिणी अफ़्रीकाके समान श्वेतांग सभ्यताके अभिमानका त्याग न कर सका। नीग्रो लोगोंने सामूहिक रूपसे ईसाई धर्मको छोड़ दिया। एक नूतन अफ़्रीकी-नीग्रो-धर्मको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म दिया। इसमें सत्य समानता और दयाको मुख्य स्थान दिया गया। इसका कोई धर्म-ग्रन्थ नहीं था, कोई धर्मशास्त्र नहीं था। इसका मूल मन्त्र था : दया धर्मका मूल है। पाप मूल अभिमान।"

यह सरल धर्म, विधि-निषेधोंसे मुक्त, नीग्रो समाजमें तेज़ीसे फैला।

▪

सितम्बर १९८० से प्रारम्भ हुआ बीसवीं शतीका तीसरा विश्व युद्ध नवम्बर १९८३ में चीनके आत्मसमर्पणके साथ समाप्त हुआ। संग्रामका कारण विभक्त कोरिया, विभक्त वियतनाम, विभक्त जर्मनी और विभक्त भारत, विभक्त पाकिस्तान, विभक्त कश्मीर, एवं अरब-इजराइल संघर्ष हुआ। चीनकी बढ़ती सैनिक शक्ति एवं अफ्रीकामें बढ़ता उसका प्रभाव अमेरिका और रूसको मित्र बनाने और चीनका विरोधी बनानेका कारण हुआ। पूंजीवाद और कम्युनिज़मकी यह मैत्री नाजीवाद और कम्युनिज़मकी मैत्रीसे भी अधिक विनाशक सिद्ध हुई। जर्मनी, फ्रान्स और पाकिस्तानने चीनका पक्ष लिया। रूमानिया और अलबानिया तटस्थ रहे। इजराइलको चीन, फ्रान्स और जर्मनीने संरक्षण दिया। इथोपियाको छोड़कर अफ्रीकी देशोंने चीनका पक्ष लिया। अरब राष्ट्र रूसके समर्थक थे। क्यूबा और मैक्सिकोने चीनका पक्ष लिया। पनामा और यूरुमले और अर्जेण्टाइनाने उनका अनुसरण किया। अतः अमेरिका अपने देशकी सुरक्षासे निश्चिन्त न रह सका अमेरिका भी रणक्षेत्र हो गया। चीनकी रण-योजना और रण-नीति सफल हुई। तुर्कीने रूसका और ईरान-ने पाकिस्तानका साथ दिया। इजराइलने अरबोंकी संयुक्त सेना—११ लाखसे भी अधिक बड़ी सेना—को आत्मसमर्पण करनेके लिए बाध्य किया। यह उसने जर्मनीकी सहायतासे किया।

भारत तटस्थ नहीं रह सका। पहले दो महायुद्धोंके समान इस तीसरेमें भी वह एक आधारभूत अड्डा (बेस) बना। मित्र राष्ट्र-जन-शक्ति और अर्थ-शक्तिके बलपर लड़े। सिक्किम और सादिया मिल जाने-से चीनके चारों ओर घेरा डालना सम्भव हो गया। चीन और पाकिस्तानको कहीं भी मिलने नहीं दिया। रूसी और अमेरिकी सेनापतियोंके नेतृत्वमें भारतके तीस लाखसे अधिक सैनिक चीनमें फैल गये। यांग्त्सी घाटी भारतीय शूरवीरोंके रक्तसे लाल हो गयी। जैसे दूसरे महायुद्धमें दक्षिणी इटली भारतीय रक्तसे रंजित हो गया था। गढ़वाली, राज-पूत, मराठे और घुड़सवार पूर्वीय अद्भुत वीरतासे लड़े। चीनियोंको नेफाका पुराना अनुभव बदलना पड़ा।

दक्षिण-पूर्व एशिया और पश्चिमी एशिया-में लड़ाई भारतके अड्डेसे लड़ी गयी। उत्तरसे चीनपर रूसी सेनाने और दक्षिणसे अमेरिका-ने चीनपर आक्रमण किया। भारतीय सैनिक दोनों ओरसे लड़े। साइबेरियासे रूसी भागे, पर भारतीय नहीं। व्लाडीवोस्टक यदि रूसके पास रहा तो भारतीय शूरताके कारण। पोर्ट आर्थर और डेरिन चीनसे छीना गया, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमेरिकी बेड़ा और भारतीय रक्तसे। भारतीय सैनिकोंका वक्ष:स्थल लेनिन पदकोंसे चमक उठे।

इस कारणसे भारत क़र्ज़दार देशसे पुन: महाजन देश हो गया। डॉलर-पावना बहुत बढ़ गया। दूसरे महायुद्धमें भारतने २५ लाख सेना मित्र राष्ट्रोंको दी थी। तीसरे महायुद्धमें उसने ५० लाख सेना दी और क़र्ज़दारसे पुन: महाजन हो गया। पर भारतीय जनता मँहगाईसे मारी गयी। ५ रु० किलो चावल और गेहूँ बिका। चीनी अदृश्य हो गयी। गुड़ १० रु० भेली मिला। सामरिक आवश्यकताको प्राथमिकता देनेसे मूल उद्योग धड़ाधड़ स्थापित हुए। जहाज़, मोटर, टैंक, विमान, मिसाइल, उद्जन बम भारतमें तैयार होने लगे। युद्ध-सामग्रीके लिए अमेरिका, जापान और भारतपर निर्भर था। रूस भी भारतपर निर्भर था। इनके कारखाने नष्टप्राय हो गये थे। कम्युनिज़्मने पूँजीवादसे हाथ मिलाया, इससे राष्ट्रवादका बल बढ़ा। स्तालिनका दल प्रबल हुआ। दूसरे महायुद्धके समान रूसी अभियान प्रबल रूपमें प्रकट हुआ। पीटर दी ग्रेट और ज़ार पूजे जाने लगे। इससे यूक्रेन और श्वेत रशिया, सोवियत संघसे अलग हो गये। यह संवैधानिक रीतिसे हुआ। रूसी संविधान सोवियत संघमें सम्मिलित यूनिटोंका संघसे अलग होनेका अधिकार स्वीकार करता है। परन्तु यह अधिकार १६ यूनिटोंको ही प्राप्त था सबको नहीं। १९८० के महायुद्धने रूसको बाध्य किया कि वह यह अधिकार अपने सब यूनिटोंको दे। रूसकी सीमा घटकर यथार्थ रूस तक आ गयी। यह भी हिन्दी भाषिक भारतसे क्षेत्रफलमें बड़ा था। परन्तु हिन्दी भाषिक भाग एक प्रान्त नहीं हुआ। भारत इस कारण निर्बल रहा। केन्द्रीय सत्ताको बलवान बनानेमें हिन्दी भाषी प्रान्तोंने पूरे मनसे योग नहीं दिया। प्रान्तिक एवं आंचलिक तथा जात-पाँतसे मुक्त न हो सके।

चीनी विमानोंका एक दल कलकत्ताको उद्ध्वस्त करने जा रहा था। परन्तु, मशीन बिगड़ जानेसे वह सबके सब ढाका और इसके आस-पास गिर गये। इसके साथ उद्जन बमोंका भारी विस्फोट हुआ। इनसे उठी आगकी ज्वाला कलकत्तेसे दिखाई पड़ती थी। कलकत्तेके बदले समस्त पूर्वी पाकिस्तान ही हिरोशिमा-नागासाकी बन गया। विनष्ट पाकिस्तानको पहचानना कठिन था। भवभूतिकी यह उक्ति सच प्रतीत होती थी :

"पुरा यत्र स्रोता:
पुलिनमधुना तत्र सरितां,
विपर्यासे यातो
घनविरलभाव: क्षितिरुहाम्।
बहोर्दृष्टं काला-
परिमितममन्ये वनमिदं,
निवेश: शैलानां
तदिदमिति बुद्धिं द्रढयति॥"

■

इस समय पूर्वी पाकिस्तानके नागरिकोंने बंगालके राज्यपालसे सहायता माँगी। राज्यपालने पूर्वी पाकिस्तानको भारतका एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रान्त पुनः बन जानेकी सलाह दी। इसके अभावमें सहायता-कार्य आक्रमण माना जाता। दो लाख नागरिकोंके हस्ताक्षरसे प्रवेश-पत्र दिया गया और विभक्त बंगाल १९१२ के समान पुनः संयुक्त हो गया। इसके साथ ही पूर्वी बंगालसे इस्लाम भी समाप्त हो गया। बंगालमें नूतन सामाजिक क्रान्ति हुई। नया नेतृत्व उत्पन्न हुआ। इसके नेता केवट, नमः शूद्र और अन्य पिछड़े वर्गोंसे आये। घोस-बोस-बनर्जी-चटर्जीका नेतृत्व समाप्त हुआ। पूर्वी भारत मगधके समान एक प्रान्त हो गया। असम, बंगाल, बिहार और उड़ीसा-के एक प्रान्त बन जानेसे पूर्वी भारतका व्यवसाय और व्यापार तेजीसे बढ़ा। भाषा-की समस्या संस्कृतमयी हिन्दीने पूरी की। क्रियायें और सर्वनाम हिन्दीके रहे। शब्द सबके मिले-जुले रहे। नागरी लिपि होनेसे वर्णमाला और लिपिमें एकता स्थापित हुई। केन्द्रीय सरकारपर १३ करोड़ आबादीके पूर्वी भारतके आगे हर बातमें झुकना पड़ता। डॉ० विधानचन्द्र राय और डॉ० श्रीकृष्ण सिंह जिस कार्यको नहीं कर सके, उसको चीनी विमानोंके दलने कर दिया। मलाया वा वर्मा, चटगांव, खुलना और कलकत्ता बन्दरगाह बढ़ते व्यापारके लिए पूरे नहीं पाये गये, अतः एक जनवरी २००१ को वरुण सूत्रके पाठके साथ एक नये बन्दरगाहके निर्माण करनेके लिए शिलान्यास रखा गया। पूर्वी भारतमें २१वीं शताब्दीका प्रारम्भ इससे हुआ।

पश्चिमी पाकिस्तानपर रूसी सहायतासे तुर्की, अफ़ग़ानिस्तानने आक्रमण किया। ईरानने पाकिस्तानको मदद दी। तीन दिन बाद ही पाकिस्तानने नयी दिल्लीको मदद देनेके लिए कहा। चीनी मदद मिलनेका रास्ता भारत और रूसने रोक दिया था। नयी दिल्लीने इस्लामाबादको सूचित किया वह पूर्वी पाकिस्तानका अनुसरण करे। इस्लाम पाकिस्तानकी रक्षा नहीं कर सका। इसकी प्रतिक्रिया भीषण हुई। बीसवीं और उन्नीसवीं शतीमें हुए मुस्लिम परिवारोंने पूर्वजोंका धर्म ग्रहण कर लिया। पक्थों (पठानों) का भी अभिमान जागा। अफ़ग़ा-निस्तानका नाम पक्थनिस्तान हो गया और यह पुनः भारतका एक प्रान्त हो गया। राष्ट्रीयताशून्य इसलाम राष्ट्रवादकी लहरमें बह गया।

१ जनवरी २००१ को विश्वकी जन-संख्या इस महा संग्रामके कारण ६ अरब तक पहुँची। वह चार अरब ही रही। परन्तु घरोंकी बनावट बदल गयी। बाहरकी दीवाल पक्की रही। पर अन्दरकी भित्तियाँ पार्टीशनके समान रहीं। आवश्यकतानुसार कमरोंकी संख्या बढ़ाना, छोटा-बड़ा करना सम्भव हो गया। रसोई-घरकी दीवारमें रिफ्रीजीटर (शीत कपाट) लगा दिया गया। इसमें फल-मुरब्बे, यानी पके पदार्थको रखने-की व्यवस्था की। पके पदार्थ सदा ताज़े रहें, इनका स्वाद बिगड़े नहीं, पोषक तत्त्व कम न हों, यह विज्ञानने किया।

यही नहीं, विज्ञानने हर मास इच्छा-नुसार ताजी फ़सल लेना सम्भव कर दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूधमें स्निग्धताका प्रमाण प्रत्येक परिवार अपनी आवश्यकताके अनुसार कर सकता था। अनाजकी पोषक शक्ति बढ़ जानेसे आहारकी मात्रा कम हो गयी। बासीको ताजा बनानेका नया ज्ञान प्राप्त हो जानेसे आहारकी समस्या उत्पन्न नहीं हुई। अनेक रोगोंको जड़-मूलसे दूर करनेकी ओषधियाँ ढूँढ़ निकाली गयीं। चन्द्र किरणोंसे मिश्रित ओस कणसे अनेक रोग दूर हो गये। कैंसर-पर विजय प्राप्त कर ली। सद्यः मृतको जिलानेकी संजीवनी बूटी ढूँढ़ ली गयी। अन्तरिक्ष-भ्रमणकी इच्छाने २८००० फ़ुट ऊँचाईपर ओद्जनकी सहायताके बिना रहना सम्भव कर दिया। अतः १५०० मील लम्बी हिमालय सीमापर सघन बस्ती बस गयी। भारतकी बढ़ती जनसंख्याकी समस्या हिमालयने विज्ञानकी सहायतासे दूर कर दी। वक्ष (आकसिस) नदीके तटसे लेकर सादिया तक पर्वतीय मार्ग बन गया। इसको ट्रकोंके लायक़ बनानेका निश्चय किया गया। इसका प्रारम्भ २००१ को अफ़ग़ानिस्तानके राज्यपालने किया।

हिमालयकी सीमापर बस्ती बस जानेसे घोड़ों और खच्चरोंका भाग्य पुनः जाग उठा। घोड़ोंकी अनेक नस्लोंका संवर्धन किया। पुनः घुड़सवार सेना और हस्ती सेनाका संगठन किया। हाथियोंके लायक़ टैंक बनाये गये। घुड़सवार तोपची भी प्रशिक्षित किये गये। इसने लाखों भारतीयोंको रोज़गार दिया। मृतप्राय आयुर्वेद हिमालयकी जड़ी-बूटी पाकर एलोपैथीको कहीं पीछे छोड़ गया। शल्य चिकित्सकोंके शल्य कार्यके उपकरण पुनः हिमालयमें उत्पन्न बाँसके बनने लगे। इनकी धारपर लोहा व पारेका पानी चढ़ा होता था। इनकी धार हड्डी तकको चीर सकती थी। इसको कभी ज़ंग नहीं लगता था। नाड़ी-शास्त्रकी महत्ता बढ़ी। मानव-आयु बढ़ी। १०० से पहले मानवकी मृत्यु होना विज्ञानने अकल्पनीय और अचिन्त्य बना दिया। शिशु-मृत्युकी संख्या विश्व-भरमें न्यूनतम हो गयी। यमराज परास्त हो गया।

फलतः भारतके विश्वविद्यालयोंने संस्कृत न जाननेवालेको महाविद्यालयमें भरती करनेसे इनकार कर दिया। भारतके मेडिकल कॉलेज आयुर्वेदाचार्य और भिषगाचार्यकी उपाधि देना स्वीकार किया। पुराने एम० बी० बी० एस० बेकार और निरुपयोगी हो गये। इंजीनियर अपनेको विश्वकर्मा कहने लगे। भारतके बनाये विमान अपने आप भारतमें जब चाहे रुक जाते थे, ठहर जाते थे और उतर आते थे। द्यौ (आकाश) और अन्तरिक्षमें विमानोंके ठहर जानेसे भारतकी सामरिक शक्ति बहुत बढ़ गयी। चन्द्र-किरणों और सूर्य-किरणोंसे साधित ओषधियाँ और शस्त्रोंके कारण भारतकी गणना विश्व-शक्तिमें होने लगी। भारतकी आक्रामक-शक्ति बढ़ गयी थी।

मध्य एशियाके नवोदित राष्ट्रों एवं संयुक्त मंगोलियाने रूस और चीनकी टक्करमें आकर पिस जानेके भयसे भारतका संरक्षण स्वीकार किया। इसके कारण ह्यून सांग और अन्य चीनी यात्री अपने साथ भारतसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य ग्रन्थ भाण्डार ले गये थे, वह सब और उनका चीनी अनुवाद पटना वापस आ गया। इनको भी राहुल कक्षमें स्थान दिया गया। इन प्राप्त ग्रन्थोंमें धनुर्वेद भी निकला। ऋषि दयानन्द ढाई पन्ने ही इस ग्रन्थके पा सके थे। इसी समय बर्लिनसे भी जर्मन टीका-के साथ धनुर्वेद प्रकाशित हुआ। भारतका पहला बिजलीसे चालित यात्री जहाज़ पेरिस और तोकियोके लिए रवाना हुआ।

१ जनवरी २००१ की शाम विश्व-भ्रमणके लिए भारतके राष्ट्रपति अणुशक्तिसे चालित अन्तरिक्ष-यानसे याकोहामाके लिए रवाना हुए।

विश्व-संघके विशेष अधिवेशनका भारत-के राष्ट्रपतिने प्रारम्भ सायंकाल ७ बजे किया। इस प्रकार नये युगका श्रीगणेश हुआ। भारतके राष्ट्रपतिने विश्वको आश्वा-सन दिया कि भारत ब्रह्मास्त्र, पाशुपतास्त्र सदृश विनाशक एवं सर्वसंहारक शस्त्रास्त्रोंका संरक्षण कार्यमें ही व्यवहार करेगा। इस घोषणाका सर्वत्र अभिनन्दन किया। इसको भारतकी शक्तिका एक प्रमाण माना गया।

विश्वका शक्ति-सन्तुलन बदल गया। यूरोप अमेरिका और रूसके प्रभावसे मुक्त हो गया। परन्तु अफ़्रीकापर यूरोपियनोंका आर्थिक प्रभुत्व क़ायम रहा। पश्चिमी यूरो-पियन संघके बननेसे यूरोपकी शक्ति बहुत बढ़ गयी। पश्चिमी यूरोपने ईसाई धर्मका प्रचार करनेमें सक्रिय सहायता देना बन्द कर दिया। क्योंकि मिशनरियोंका प्रचार व्यापार-वृद्धिमें बाधक था। व्यापारपर-से सब प्रति-बन्ध हटा दिये गये थे। संरक्षणात्मक कर भी अनावश्यक माना गया। अमेरिकाके समान अफ़्रीका और एशियाने इसका स्वागत किया। अरबोंका प्रभुत्व जमानेकी प्रवृत्तिके कारण एशिया-अफ़्रीकी संघका प्रभाव विश्व-संघमें घट गया। चीन और रूससे निराश देशोंने पुनः यूरोपकी शरण ली। परन्तु इस-पर भी ब्रुसेल्सका स्थान लन्दन नहीं ले सका। फ्रांक-मार्क मुद्राने स्टर्लिंग पौण्डका स्थान लिया। अमेरिकाका स्वर्ण-भण्डार सोनेकी क़ीमतको चढ़नेसे रोकता रहा। विश्व संघसे दक्षिण अफ़्रीका बाहर ही रहा।

दक्षिण-पूर्व एशियाका भी एक संघ बन गया। लैटिन अमेरिकामें भी उत्तरी और दक्षिणी संघ बन गये। इनकी शक्ति कनाडा-अमेरिकाके बराबर हो गयी।

इस रीतिसे विश्व-संघ अनेक संघोंका एक बड़ा संघ बन गया। अफ़्रीकी देश ही अपना कोई संघ नहीं बना सके। पूर्वी अफ़्रीका, केनिया, संजानिका, यूगाण्डा भी एक नहीं हो सके। क्योंकि नेताके प्रश्नपर ये अटक गये। इथोपिया भी अफ़्रीकी संघ नहीं बना सके। पश्चिमी अफ़्रीकाके देशके क़बीलों-में झगड़े चलते रहे। यूरोपियनोंने इन देशों-की सेनामें नौकरी कर ली। विश्व-संघके लिए ये देश एक कठिन समस्या हो गये।

१ जनवरी २००१ को हरद्वारमें गंगा-तटपर बैठे एक वैदिक संन्यासी विश्व-शान्ति-की स्थापनाके लिए प्रार्थना कर रहे थे :—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"स्वस्ति मात्रे उत पित्रे नो अस्तु
स्वस्ति गोभ्यः जगते पुरुषेभ्यः।
सुभूतं सुविदत्रं नो अस्तु
ज्योग एव दृशेम सूर्यम् ॥
स्वस्ति नो दिवो अग्ने! पृथिव्या
विश्वायुर्धेहि यज्याय देव।
सचेमहि दस्म! प्रकेतैः
उरूष्या णः उरूभिः देवशंसैः ॥

फिर सम्पूर्ण सामनेके वनप्रान्त (चण्डी पर्वत)-को गुँजाते हुए गंगाके कलरवसे भी उच्च-स्तरमें संन्यासी मण्डलने खड़े होकर प्रार्थना की—

शं नो वातः पवतां शं नः तपतु सूर्यः
शं नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु ॥
शान्ता द्यौः शान्ता पृथिवी
शान्तम् ईदमु उ अन्तरिक्षम्।
शान्ताः उदन्वतीः आपः
शान्ता नः सन्तु ओषधीः।
शान्तानि पूर्वरूपाणि शान्तं
नो अस्तु कृताकृतम्।
शान्तं भूतं च भव्यं च
सर्वमेव शम अस्तु नः ॥"
सर्वाणि शं भवन्तु मे शं मे
अस्तु अभयं मे अस्तु ॥

साढ़े तीन अरब साल पुराने राष्ट्रने (सृष्टि संवत्‌के अनुसार) नया जीवन पाया और अँगड़ाई ले उठ खड़ा हुआ और विश्व-शान्तिकी रक्षाके लिए उद्यत हुआ।

विक्रम संवत्‌के अनुसार भारतने १९४३ ई०में २१वीं शतीमें प्रवेश किया था। उसने पुनः विक्रम संवत्‌को स्वीकार किया। ईसवी संवत्‌को एशियापर यूरोपकी प्रभुताका चिह्न माना और उसका भारतसे अन्त हो गया। भारत सरकारने मनुके द्वारा दी गयी इस विरासतको पूरा करनेका भारतकी ६० करोड़ जनताको विश्वास दिलाया—

"एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥"

विद्वानों एवं कलाकारोंकी मण्डलियाँ विश्व परिभ्रमणको निकलीं। मुग़ल गार्डनमें इसको शाही स्वागतके साथ विदाई दी गयी। यह मण्डली और यह सांस्कृतिक दल चाँदनी चौक, कनाट प्लेसको इस तरानेसे गुँजाते हुए पालम एरोड्रमकी ओर रवाना हुआ :

"विश्व विजयी तिरंगा प्यारा
झण्डा ऊँचा रहे हमारा॥"
■ ■

इतिहास सदन
एम ११८, कनाट सर्कस
नयी दिल्ली-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FOR

NON-FERROUS METAL

VIZ

Brass & Copper Rods, Sheets, Wires Phos, Bronze Sheets Rods & Wires, Copper Tapes, Strips & Busbars, Gas Welding Rods, Brass Strips & Tapes, Gun Metal & Bronge Castings Tinsolder & White Metal

ENQUIRE

ORIENT TRADERS

42/1, Strand Road,

CALCUTTA-1.

Telegram : RODWIRE *Telephone* : 33-9771-3

Phone : 5201

Agrawal Paper Stores

98, K. P. Kakkar Road,

Allahabad-3

Sole Agent :

Rohtas Industries Ltd.

(Paper & Boards)

Dalmianagar.

Paper Merchants & Stationery Manufacturers.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ एक अभागे बिन्दुपर ॥ शेष शताब्दीके बादकी कोई एक तिथि---अणु-परमाणु बमोंके ख़त्म न होनेवाले किसी बिन्दुपर...ही क्राइड विद ए लाउड वायस, लज़ारस ! कम फ़ोर्थ ! एण्ड ही देट वाज़ डेड केम फ़ोर्थ बाउण्ड हैण्ड एण्ड फ़ुट विद ग्रेव-क्लोद्ज ।...

—सेण्ट जॉन

मृत प्रदेशका निरुद्ध संगीत

धनजंय वर्मा । सब शान्त हो गया : नीरव और निश्शब्द, सारी गतिपर एक अनन्त विराम । सारा रूपाकार यथावत् है, मगर प्राणात्मा, अदृश्य रन्ध्रसे जैसे सोख ली गयी । यह कैसे हुआ ? परिणामपर पहुँचा हुआ मैं इसकी कौन-सी व्याख्या करूँ ?

...याद आता है । उस अन्धी गुफामें सतहसे फ़ुटों नीचे, रोशनीकी एक किरणकी लालसामें, आत्मभक्षी होकर मैंने जाने कितना अरसा काट दिया । अपने ऊपर जीवनका संगीत और गति महसूस होती रही थी लेकिन जाने अचानक क्या हुआ, पूर्वसे या पश्चिमसे या दोनोंसे दिशाओंको कँपाती महागति और महाध्वनिकी टक्करका महाविस्फोट सुना था—आज भी याद आता है । फिर सब कुछ शान्त हो गया, धीरे-धीरे सब डूब गया, सब लुप्त और ध्वस्त....क्या इस पटाक्षेपका एकमात्र दर्शक मैं ही रह गया हूँ !....कोई नहीं है, कहीं नहीं है....आसपास कहीं मानुष-गन्ध नहीं, सब ओर मौतका सन्नाटा है....आकाश तक, क्षितिज तक !

हताशामें, इन बढ़े हुए नखों और दाँतोंसे मिट्टी खोद-खोदकर मैं अपनी उस क़ब्रसे सतह-पर आया तो क्या इस सामूहिक मृत्युका साक्षात्कार करनेके लिए ?....पीले सूर्य और भूरे चाँदकी कुहरीली-धूमिल रोशनीमें प्रेतोंकी तरह निश्शब्द खड़े मकानों, उनमें मृत लोगोंको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखने और बेजान सुनसान गलियोंमें दौड़ते हुए अपने ही पैरोंकी धप्-धप् ध्वनिके गूँजते हुए रवसे भयभीत होकर और और भागते रहनेके लिए ?

····यह क्या हुआ ?····सब ज्योंका त्यों है। लोग बैठे हैं, लेटे हैं, किसी कामके लिए उद्यत मुद्रामें हैं कि ज्योंके-त्यों शेष हो गये ?····न हिलते हैं, न डुलते हैं। इन्हें कौन-सा महासाँप सूँघ गया ! खिड़कियों और देहरियोंपर विषादकी प्रगाढ़ रेखाओंके क्रॉस ढोते हुए चेहरे और अज्ञात अपराधोंके लिए अग्निपरीक्षा भोगते हुए मानव-शरीर, जिनकी आँखें, सुदूर भविष्यकी ओर पथरायी निगाहोंसे देखती हुई ऐंठ गयी हैं, बुतकी तरह जड़ हो गये हैं। धूसर मैदानों और सुनसान रास्तोंपर जो भी चीज़ जहाँ जैसी थी, वहीं ज्योंकी-त्यों खड़ी है—बसें, ट्रामें, रेलगाड़ियाँ सारा सिलद्दूत ! यह मायानगरी है या वास्तविकता—बीभत्स और शीतल तथा बेजान !····

····इस शान्तिसे क्या कोई नहीं लौटेगा ? इन सुनसान गलियारोंमें क्या फिर बेचैन रातोंका सिलसिला शुरू न होगा ? इस उड़ती हुई पीली धूल और कुहरेकी चपेटमें सारी सृष्टि आ गयी है। कोई भी जीव तो नहीं है। मुर्दा-श्मशान-भूमिमें उद्भ्रान्त भटकती हवाओंसे राख और धूल उड़-उड़कर सारे आकाशको ढाँप रही है और अब वह दम्भ सोया पड़ा है जो निश्चय और विश्वाससे इस सृष्टिकी लयमें परिवर्तन चाहता था।

····बेजान सूखी वनस्पति, क्रॉसकी तरह आकाशमें ताकते ठूँठ और खँखाड़ पेड़, भून दी गयी पत्तियाँ और अलावमें पककर पपड़ायी ज़मीनकी सतह, शान्त-निश्चल बर्फ़की सिलकी तरह सरकती सरिताएँ और गन्दी-कीचड़-भरी विशाल फटी आँखोंसे सरोवर और सागर !····सारे स्पन्दन निलम्बित हो गये हैं। मटमैली चाँदनीमें सहस्रों छायाएँ भटकती हैं और सारी पृथ्वी अज्ञात प्रेतोंका नाचघर बन गयी है। चारों ओर सूखी हड्डियोंकी खड़खड़ाहट और खोपड़ियोंके रन्ध्रोंसे सिसकारती हवाओंका स्वर सुनाई देता है या प्रेत-हास्य ? भुतहा मकानोंमें प्रेत-चीखें सारी खण्डहर पृथ्वीमें गूँज रही हैं और सारे पूजागृह, जो बूचड़खाने बन गये थे, इन अनुगूँजोंको गहरा कर आकाशमें छितरा देते हैं। आद्या लयको निरुद्ध कर मृत्युको निलम्बित करनेका दम्भी मनुष्य, सूखी अस्थियोंमें कितना असहाय और निस्सम्बल नज़र आ रहा है। इनपर जब माँस-मज्जाका शृंगार था और हृदय धड़कता था, इस खोपड़ीकी खोखलमें जब नक्षत्रोंकी गतिका रहस्य जान लेनेका दर्प था तब तो वह सृष्टिका सर्वशक्तिमान् चेतन-अंश था—आज कैसा जड़-शुष्क पाषाण-सा गतिहीन और निराश्रित पड़ा है ! अब क्या यह कभी उठकर खड़ा हो सकता है ?

····इतिहास और परिवर्तनकी गति स्थगित है। दिनको, सूर्यपर ग्रहणकी छायाओंसे बादल मँडराते हैं और पृथ्वीपर बिखरे हुए परमाणुओंकी रेणुकी अजस्र वर्षा होती है। ऊजाड़, सूखी और वन्ध्या धरतीकी इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाममें ता-हद्दे-नज़र, मौत रातकी खामोशी बनकर घनीभूत होती है और अपने काले-काले डैनोंके सायोंमें सारी सृष्टिको ढाँपती है। अन्धकार, अन्धकारावृत्त है। सरिताओं और झरनोंका कलरव चुप है। सागर शान्त है और आकाश शून्यमें टँगा बीभत्स खोखल-सा औंधा पड़ा है। मनुष्यके दुर्भाग्यको प्रगाढ़ती हुई हथेलियोंकी रेखाओं-से सूने तार, आकाशकी ओर ताकते हुए दैत्योंकी तरह खड़े खम्भोंपर टँगे हैं या छायाहीन वृक्षोंमें फँसकर सिकुड़ी हुई आँतों-से धरतीपर बिखरे हैं।

... कहाँ और कब सोचा था कि मौतकी प्रलयंकर आँधी सब-कुछ बहा ले जायेगी। मनुष्यकी दुर्धर्ष और दुर्दमनीय जिजीविषाको कुण्ठित कर देगी; लेकिन क्या वह मौतकी आँधी थी? यह तो मनुष्यकी अन्धी जीवैषणा थी, जिसने स्वयं मौतका रास्ता तय किया। यह मृत्यु-शंख तो स्वयं मनुष्यका फूँका हुआ था। वह ज़िन्दगी जीनेमें शेष हो गयी; वह ज्ञान नाशकी कगारपर आकर रुका नहीं, अथाह शून्यमें डूबता चला गया, मृत्युसे बचने और भागनेकी शताब्दियोंकी सतत भागदौड़ मृत्युके अनन्त गर्भमें ही विलीन होती गयी। अभ्रध्वज सौध और पातालगामी दुर्गम मार्गोंका निर्माता, सृष्टिव्यापी विजयका अश्वमेध करनेवाला विज्ञान स्वतन्त्र हुआ भी तो मृत्युका वरण करनेके लिए। वे संकल्प और निश्चय चले गये। समयने, बच्चोंकी स्लेटपर लिखी खड़ियाकी इबारत-सा उन्हें पोंछ दिया—अब उनका पता भी नहीं है। काग़ज़ों और पुस्तकोंके ढेर, रुके हुए पुर्जों और मशीनोंके अम्बार, काले-काले दैत्योंकी तरह थूथन लटकाये या जबड़ा उठाये खड़े हैं। ये कभी मनुष्यकी विजयके प्रतीक थे, आज उसका मर्सिया गा रहे हैं, फ़ातिहा पढ़ रहे हैं।

... अणु-परमाणुको तोड़-बिखेरकर, छोटी-छोटी जुगनुओंके क्षणजीवी प्रकाशमें वासन्ती उपवनोंकी हरियाली और शान्तिको मानवीय चीखों और आहोंमें परिणत कर, पवित्र निर्झर-आत्माको यन्त्रागारोंमें क़ैद कर जिन विशाल प्रेतोंका आह्वान हुआ था, उन्हींने सारी विभव-राशिको यातनागार जो बनाकर ताण्डव किया, उसका ही यह अन्तिम दृश्य है।

...नैश गगनको मथती-खँगालती और मृत्यु-गन्धको अनन्त मैदानोंमें फैलाती हुई ये पागल हवाएँ, धरतीका वक्षःस्थल फाड़कर आकाशसे समरस कर देनेवाले ये विकराल मेघखण्ड; शत-शत खण्डोंवाले सौधोंको धीरे-धीरे लीलते जाते ये दलदल और हिममण्डित शिखरोंको डुबो देनेवाले ये सागर क्रमशः, शनैः-शनैः, बढ़े चले आ रहे हैं और सूने नगर-महानगर, शताब्दियोंकी सभ्यता और संस्कृतियोंको क्रोड़में दबाये धरतीके गर्भमें प्रतिक्षण विलीन हो रहे हैं।

...अब प्रत्यावर्तनकी आशा व्यर्थ है। लुप्त और ध्वस्त इस मृत-प्रदेशके अन्तिम संस्कारपर यह मर्सिया क्यों? जो नियत था, उसपर विलाप क्यों? वह किसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए ? विकासकी वह उतनी प्रलम्बित यात्रा; सिसयाते बर्फ़ानी मौसम और तड़कती-उबलती धूपमें अँधेरे गह्वरों और अकल्प्य सरिताओंको पार कर बोध और स्पन्दनकी वह यात्रा महाध्वंसकी इस कालरात्रिमें जब यहीं रुकनी थी, तब क्या ? सृजन और संहारको पृथक मानकर हम क्यों चले ? जन्मपर उल्लास और मृत्युपर विलाप क्यों ? एक ही केन्द्रकी वृत्तात्मक गतिमें बिन्दुओंका यह द्वैध और भेद क्यों ? सतत् मृत्यु और नाशके निरन्तर यज्ञकी इस पूर्णाहुतिका यह धूम पागल गतिसे भाग रहे नक्षत्रों तक उठना चाहता है। वह श्यामा-नियति, जिसने अतीतका अबाध अवलोकन किया और आगतकी अदृष्ट लिपि पढ़ी-लिखी है, जिसने प्रत्येक चुनौतीको, अन्धड़में उड़ते रेतके ढूहकी तरह, समाप्त कर दिया है, सारी धरतीपर पसरकर अट्टहास करती है।

····ओ पिता ! तेरी मृत्युकी घोषणापर मृत शताब्दीकी मानव-जय-यात्रा (!) शुरू हुई थी, अनास्था और सन्त्रास उसके पाथेय बने थे और नारकीय मृत्यु—मंजिल। तेरे पुनर्जन्मसे इस मृत-प्रदेश और असंगत विश्वमें फिर कोई लय आये, संवादी-मन्त्रगान गूँजे, आस्था और विश्वासके शिखरोंपर नये मनुष्यकी रचनाका यज्ञ प्रारम्भ हो और जीवनका अगरुधूम दिशा-दिशामें फैल जाये ! ····

१३१, आज़ाद रोड,
नरसिंहपुर (म० प्र०)

Gram : "ARBE TRADE" Phone : 22-9055

R. B. TRADING CO.

71-A, Netaji Subhas Rd. (Room No. D/s 11). CALCUTTA-1.
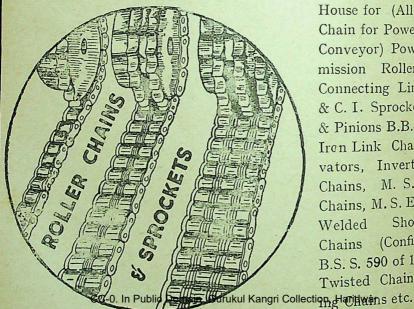
House for (All Types of Chain for Power, Load & Conveyor) Power Transmission Roller Chains, Connecting Links. M. S. & C. I. Sprocket Wheels & Pinions B.B. Malleable Iron Link Chain for Elevators, Inverted Tooth Chains, M. S. Balance Chains, M. S. Electrically Welded Short Link Chains (Confirming to B.S. S. 590 of 1949) M.S. Twisted Chains & Locking Chains etc.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ एक डायरी ॥ मई १९८५। मैंने पूर्व दिशासे चलना शुरू किया था या पश्चिमसे, मुझे नहीं मालूम और न मुझे यही मालूम है कि मैं इस समय कौन-सी दिशाके आकाशमें हूँ, और यह सुबहका वक़्त है या शामका ? बस, आनेमें और इस समय चलना समाप्त कर देनेमें मुझे जो एक-जैसा लग रहा है, वह यही कि आकाश बहुत लाल है, जैसा सुबहको होता है, जैसा शामको होता है। जब मैंने पहली सुबह आँखें खोली थीं तो पाया था कि मेरे चारों तरफ़ बहुत कुहरा है और उसमें सीपके आकारके रोशनीके असंख्य टुकड़े हैं जो मेरे चारों तरफ़ तैर-तैरकर स्वप्नोंकी रचना कर रहे हैं।...

जब श्मशान नहीं रहेंगे

अमृता भारती । मैंने दूसरी तरफ़ निगाह डाली थी तो पाया था कि कुछ गुफाएँ हैं और उनके अन्धकारमें बहते हुए पानीकी नीली रोशनी है। मेरे तीसरी ओर बड़ी-बड़ी खन्दकें और ऊँचे पहाड़ थे और चौथी तरफ़ शून्य आकाश—बेहद नीला, बेहद कोमल; अपनी निस्पन्दतासे हृदयमें भय भर देनेवाला। मैंने अपनी दृष्टि सीपके आकारवाले प्रकाशके टुकड़ोंकी ओर केन्द्रित कर ली थी और निश्चय किया था कि इनकी सत्यताका पता लगाना होगा। अगर ये स्वप्न हैं तो इन्हें साकार करना होगा, केवल मरीचिकाएँ हैं तो इन्हें चूर-चूर कर रेतीले-कणोंमें बदल देना होगा। मैंने नीले आकाशकी तरफ़ अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क़दम बढ़ा दिये थे। यह [illegible] पहला दिन था।

नवम्बर १९८६। मैं उस बड़े मकानके ऊपरी बरामदेमें पड़ी आरामकुरसीमें बैठी थी। आज मेरे भीतर बड़ी निश्चिन्तताका भाव था, जैसे अब कुछ नहीं करना है, किसीसे मिलना भी नहीं है, कुछ कहना भी नहीं है। जैसे सोचना भी जो है, वह केवल इसलिए कि उससे अपनी वर्तमान स्थिति तक पहुँचनेकी प्रक्रिया समझमें आती है, जीवनकी गति और उसकी प्रकृति समझमें आती है। ब्राउनिंगने कहा था : 'सो, अर्थ हैज़ गेण्ड बाई वन मैन द मोर, एण्ड द गेन ऑफ़ अर्थ मस्ट बी हैवन्स गेन टू'। क्या मुझसे भी पृथिवीने कुछ ज्यादा पाया है, और पृथिवीकी यह प्राप्ति क्या स्वर्गकी प्राप्ति भी हो सकती है? दरअसल मनुष्यकी अपनी प्राप्ति ही सबकी प्राप्ति है। अगर वह महसूस करता है कि उसने कुछ पाया है तो मानना चाहिए कि उससे औरोंने भी पाया है।

मैं अपनी प्राप्तिको क्या नाम दूँ? प्रेमकी परिपूर्णता कहूँ, कलाकी या जीवनकी?....

कलाकी विदग्धतासे पहले मेरे हृदयमें प्रेमकी आकुलताने जन्म लिया था। इच्छा थी ऐसे सत्यको पानेकी, जो मरीचिका-जैसा सुन्दर हो। धीरे-धीरे सत्यकी प्रतीति खो गयी और मन मरीचिकाओंके इन्द्रधनुषी रंगोंमें विचरने लगा। उनकी सम्मोहन-शक्तिको मैंने प्रेमकी शक्ति माना और अपने हृदयका कक्ष चारों तरफ़से खोल दिया। मैंने प्रकाशकी उम्मीद की थी और सोचा था कि मेरी साँसें उन्मुक्त होंगी। प्रतीक्षामें मेरी आँखें बन्द थीं, इसलिए मैं नहीं देख सकी थी कि मेरे आसपास क्या सृष्ट हो रहा है! साँसके घुटनेपर पता लगा था कि कक्षमें प्रकाश नहीं कुहरा है, जिसमें रोशनीके टुकड़े इधर-उधर तैर रहे हैं और उनसे बहुत मीठी ध्वनियाँ आ रही हैं। उन टुकड़ोंको मैंने पहले दिन देखा हुआ सीपाकृत सत्य समझा और उन ध्वनियोंको आत्माका संगीत।

जीवनमें क्षतोंके क्षण आरम्भ हो गये थे, पर जीवन उनका अभ्यस्त न हो सका, उन क्षणोंसे परिचित तक न हो सका। अक्षत रहनेकी इच्छा और इन क्षणोंकी स्थितिने अग्निदाह दिया। आहत अस्तित्वको जोड़ने और सँवारनेमें इतना कष्ट झेलना पड़ेगा, यह मालूम न था। मैंने अपनी इच्छाको दूषित किया था, उसे उसकी मूल स्थितिमें ले जानेके लिए मैं किसी भी परीक्षासे गुजर जानेके लिए तैयार थी।....इस कालमें मुझे अपना व्यक्तित्व झुलसा हुआ-सा लगता था।... महीनों....बरसों निकले... मेरा प्रेम अपनी निकटतासे मेरी अन्तर-शक्तियोंको जगाता रहा, और क्षतोंका दर्द क्रमशः कम होता चला गया। एक सुबह आँख खुलते ही मैंने प्रतीति की कि आज नया सूर्योदय हुआ है। अग्निस्नान पूरा हो चुका था।

उस बीचकी अवधिमें मृत्यु मुझे बहुत आकर्षक लगती थी, अब भी लगती है, लेकिन इन दोनों अनुभूतियोंमें कोई साम्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है। तबकी मृत्यु मृत्युपरक थी, अब मृत्यु भी जीवन-जैसी लगती है····प्रेमकी कृतार्थता इसीमें है कि वह मृत्यु न रहने दे। मुझे ऐसा लगता है :

'मैं इस पृथिवी से पार की
एक और पृथिवी हूँ'

पृथिवी, आकाश, जल, वायु, अग्नि—इनके अन्तर्निहित सूक्ष्म रूपको जान लेते ही मृत्युका कठोर भयावह आस्तरण खिसककर गिर जाता है और लगता है, अरे जीवन और मृत्यु तो एक ही हैं, अपने रूपमें, प्रकृतिमें, गुणमें और अस्तित्वमें।

दिसम्बर १९८६। मेरा एक स्वप्न था कि मैं अपने पूर्व जन्मों और आगामी जन्मोंको जान सकूँ। बहुत दिनों तक यह स्वप्न स्वप्न और इच्छा ही बना रहा, अभीप्सा नहीं हो सका। जबतक कोई चाह अभीप्साका रूप धारण नहीं कर लेती तबतक वह किसी ऊँचे आकाशके पार नहीं देख सकती।····मैं अपनेको अखण्ड रूपमें जानना चाहती थी और पूर्व जन्मों तथा आगामी जन्मोंकी इयत्तामें ही जीना चाहती थी। मुझे अपना वर्तमान अपने अतीत और भविष्यसे विच्छिन्न-सा लगता था।···· लेकिन क्रमशः परदे खुलने लगे और बहुत सूक्ष्म संकेतोंमें बातें होने लगीं। दृश्यों और शब्दोंकी भंगिमाओंकी बुनावट अत्यन्त महीन होनेके बाद भी उनकी अनुभूति बहुत तीव्र और परिचित होती थी। उनकी विदग्धता हर पल मुझे मेरे वर्तमानसे परे ले जाती थी। लेकिन ऐसा बहुत दिनों तक नहीं रह सका, मेरा अतीत मेरे वर्तमानसे जुड़ने लगा और मेरे आसपासके प्रिय सम्बन्ध मेरे सामने स्पष्ट होने लगे। प्रेमकी जन्मान्तरीण शक्तिका परिचय मुझे मिल चुका था।

अक्टूबर १९८७।

'स्वर्ग एक द्वार खोलता है
मेरी ऊपर उठी हुई आँखें देखती हैं
कि अन्तरिक्ष से परे के
दिव्य लोकों में जाने के लिए
आकाश ने अपने भीतर
एक खाई खोद रखी है'

मैं सामने देखती हूँ : शरद्के सफ़ेद बादलोंने एक चित्र बनाया है। आगे बहुत-से देवदूत हाथोंमें अनेक वाद्य लेकर बजाते हुए जा रहे हैं (मैं सुन नहीं पाती) और पीछे चार सफ़ेद मेघ-खण्डोंने चारों तरफ़से एक आकाश-खण्डको घेर लिया है—बीचमें खुली रह गयी है एक नीली झील जो सातों समुद्रोंसे भी ज़्यादा विशाल और गहरी है। वही है वह द्वार-जो मुझे पार ले जायेगा।

जनवरी १९९० (एक मृत्यु अन्तहीन)। मैंने उस ऊँचे भवनकी खिड़कीसे झाँककर देखा था कि कुछ दूर एक पारिजात-वृक्षके नीचे एक समुद्रने मानव देह धारण की है। उसने मुझे इशारेसे बुलाया था और मैंने भी अपनी स्वीकृतिको संकेतमें बता दिया था। यह मेरे शयन-कक्षकी खिड़की थी। मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसीके सहारे तकिया रखकर दीवारसे लग गयी थी। मेरी निगाह दरवाज़ेकी तरफ़ गयी थी, वहाँ गुलाबी रंगका परदा पड़ा हुआ था। दरअसल ये परदे नहीं थे, दरवाज़ेके ऊपर लगी रोशनीका प्रभाव था जो नीचेकी तरफ़ बहता था। इस प्रकाशमें संगीतका हलका-सा प्रवाह था जो द्वारसे गुज़रनेपर कुछ तीव्र हो उठता था। रंगोंके अनुरूप ही संगीतकी ध्वनियाँ भी थीं। उन ध्वनियोंको सुनने मात्रसे रंगोंको पकड़ा जा सकता था।....मेरी आँखोंमें दोनों दरवाज़ोंके रंग मिल गये थे और ध्वनियाँ भी एकबारगी ही नीली और गुलाबी हो उठी थीं।

मुझे कमरेमें किसीके होनेका एहसास हुआ था। मैंने देखा था, सामने एक पर्वत है—नीला; उसके-मेरे बीच एक झीना आवरण है और उसके पार एक देव-विग्रह ठीक उसी पर्वतकी ऊँचाईमें विद्यमान है। आवरणके हटते ही सब विलय हो गया था, बस एक नीला आलोक कमरेमें व्याप्त था, जिसकी प्रभा गुलाबी थी। उस मीठे प्रकाशमें मैंने एक शिशुको आकृत होते देखा था :

'यह एक नया अविर्भाव था
सृष्टि में सृष्टि का'

द्वारसे गुजरनेपर संगीत कुछ तीव्र हो गया था। मैंने पाया था कि मैं अब अपने उसी कमरेमें नहीं हूँ : यहाँकी रोशनी पन्नेकी तरह हरी और गहरी थी और उसके चारों तरफ़ गहरे पीले रंगका मण्डल था। मैंने पृथिवीके हरे कठोर स्पर्शको महसूस किया था और छतसे आती हुई उस गहरी पीली धूपको भी, जिसने फ़र्शको काफ़ी हद तक गर्म कर दिया था। मेरी आँखें तप रही थीं और चलनेमें बहुत आयास करना पड़ रहा था। मेरी दृष्टि द्वारकी ओर थी, जिसपर अनेक रंगोंका विद्युत्-आवरण था और जिसकी अनुभूति बहुत आकर्षक और तीव्र थी।....मेरे क़दम डगमगा रहे थे और मेरी आँखोंमें इन्द्रधनुषी रंगोंका जुलूस था। मैंने जान लिया था कि मुझमें संकल्प-शक्तिका अभाव है। मेरी गति रुक गयी थी और मैं वहीं फ़र्शपर बैठ गयी थी। दरवाज़ेकी स्वर-लहरियाँ बार-बार तेज़ होती थीं—जो आवागमनकी सूचक थीं? मुझे अपने आसपास अनेक फुसफुसाहटें, प्यार और घृणाके शब्द सुनाई दे रहे थे। मैं बेहद थक गयी थी और अकेली हो जाना चाहती थी। आवाज़ें कम होकर धीरे-धीरे लुप्त हो गयी थीं। मेरी इच्छा थी कि मैं अपनेको विद्युत्-प्रवाहोंमें डाल दूँ और उनके भीतरका संगीत सुनूँ। मुझमें संकल्प जाग गया था और मैंने देखा था :

'आकाशमें पृथिवीसे असम्पर्कित गोल-गोल मंच बने हैं, सब बिलकुल अलग, एक दूसरेसे स्वतन्त्र। आकाशमें ही थमी एक पुल-जैसी दीखनेवाली पगडण्डीसे एक अनिन्द्य सुन्दरी युवती चलकर आती है। उसकी वेशभूषा प्राचीनकालीन नगरवधुओं-जैसी है, उसने अनेक सुवर्ण-आभरण पहन रखे हैं, माथेपर मुकुट है। वह एक मंचपर सबसे अलग खड़ी हो जाती है। नीचे बहुत शोर है, शायद वे सब पृथिवीके लोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, जो उस अकेली नारीके बारेमें हाथ ऊँचे कर-करके विवाद कर रहे हैं। वह चाहती है कि उससे एक प्रश्न न पूछा जाये। उस अवांछित प्रश्नका दर्द उसके बेहद दीप्ति-मान व्यक्तित्वको नीलावरित करता है। पर वही प्रश्न उठता है—केवल वही प्रश्न भालेकी नोक-सा—

'तुम्हारे माता-पिता कौन हैं?'

उसका शरीर थरथरा जाता है, लेकिन उसके व्यक्तित्वकी ऊँचाई और महिमा वैसी ही बनी रहती है। सामने मंचोंपर देव और ऋषि बैठे हैं, यज्ञ और दानसे दिशाएँ आर्द्र हो उठी हैं। उसकी निगाह उन सबपर एक साथ केन्द्रित हो जाती है। उस दृष्टिके केन्द्री-करणमें उत्तर न दे पानेकी विवशता है और स्वयं एक प्रश्न है।

सब ऋषियों और देवोंके मुखसे एक ही बात निकलती है:

'यह हमारे कुलकी है: हम ऋषियों और देवोंके कुलकी।'

दृश्य लुप्त हो गया था। मैंने अपनी आत्माकी प्रतीति की थी और जीवनमें प्रेम-की अनन्यताको समझा था। द्वारसे गुजरते हुए संगीतकी मीठी ध्वनियोंमें सौपाकृत प्रकाश-बिम्बोंका संगीत मिल गया था: यह आत्मा-का संगीत था।

'मुझे महसूस हुआ कि मेरी साँसें तेज हो गयी हैं लेकिन उनमें कहीं कोई अवरोध नहीं है। वे ऊपरसे नीचे या नीचेसे ऊपर न जाकर नाभिके पास आगे और पीछे जा रही थीं। मुझे अपनी नाभिके नीचे एक विलक्षण ज्योतिर्मय दिव्य देह बैठी हुई दिखाई दी और मैंने पाया कि मैं उसके चरणोंमें बैठी हूँ। तथा मेरा एक और शरीर कमरेमें दूसरी ओर खड़ा है। इसके बाद यही दृश्य मैंने हृदयके पास देखा और तब लगा कि वह दिव्य देह मेरी भौंहोंके बीच खड़ी हो गयी है। उसका मस्तक जिस आकाशको छू रहा था, वह अनन्त था और उसके चरण जिस भूमिपर टिके थे, वह अदृश्य थी। मैंने उसके विराट् व्यक्तित्वकी व्याप्तिकी प्रतीति की।

बहुत आहिस्तासे मेरी साँस मुक्त हुई थी और अब उसकी गति नासिकामें-से थी। एक बहुत तीव्र निःश्वासने मेरे सामने एक समुद्रका निर्माण किया था: मैं उसके नीचे लेटी थी और उसके ऊपरी भागमें बहुत-सी रंग-बिरंगी मछलियाँ तैर रही थीं।

एक और निःश्वासने मेरे पैरोंके नीचे एक आकाश सिरजा था, करोड़ों-करोड़ों नक्षत्रोंसे भरा हुआ। मैं ऊपर बैठी नीचेके उस सौन्दर्यको प्रसन्न दृष्टिसे देख रही थी।....'

मैं अपने-आपमें लौट आयी थी और अब मैं जहाँ थी, उस कमरेके परदे गहरे नीले रंगके प्रकाशसे बने थे। पूरे कक्षमें केवल इसी एक रंगकी प्रभा व्याप्त थी, बेहद शीतल, जड़ीभूत कर देनेवाली। मैंने अपने चारों तरफ़ देखकर किंचित् ऊष्माकी माँग की थी: अलग-अलग टुकड़ोंमें बँटी हुई अग्नि-ज्वालाएँ प्रकट हुई थीं: मेरे सामने श्मशानका दृश्य प्रस्तुत था। मैं उसके किनारेसे गुजर रही थी। यह दृश्य मुझे रुचिकर नहीं लग रहा था। मैंने एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशालकाय दण्डधारी आदमीसे पूछा था :

'ये श्मशान किसने बनाये ?'

'आदमीने !'

'क्या यह व्यवस्था बदली नहीं जा सकती, श्मशानों और क़ब्रिस्तानोंकी व्यवस्था ?'

उसके उत्तरसे पहले ही मैं बहुत आगे जा चुकी थी। मेरी आत्माने कहा था :

'अब और नहीं होंगे श्मशान
क्योंकि केवल
पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश, वायुको
सौंपकर
अपने आपको
उसके ऋणसे
उऋण नहीं हुआ जा सकता
जिसकी इच्छा
हमारे जन्म का कारण है !'

एक बार फिर संगीत आहत हुआ था, और उसकी मधुर तीव्र ध्वनियोंने मुझे बताया था कि मैं और आगेके किसी कक्षमें हूँ। मेरी आँखें बाहरसे खुली रहकर भी बहुत भीतर चली गयी थीं। इस कक्षमें दीवारें नहीं थीं, खिड़कियाँ भी नहीं। बस सामने एक झीनी यवनिका पड़ी थी जिसमें पारिजातका एक वृक्ष चित्रित था। मैं मन्त्रमुग्ध-सी उसकी ओर बढ़ रही थी, यवनिकाके हिलनेसे वह वृक्ष भी हिल उठता था। और अनेक वाद्योंकी मधुर ध्वनियाँ एक साथ बज उठती थीं। उसमें हज़ारों फूलोंके बिम्ब उभारे गये थे। मैंने देखा था कि उन फूलोंके बीचसे बेहद कोमल सफ़ेद और जोगिया रंग की दीप्ति निकल रही है, फूलोंकी खुशबू चारों तरफ़ व्याप्त है। अपनी पिछली यात्रामें मैंने जितने भी रंग देखे थे, जितनी भी ध्वनियाँ सुनी थीं और जितनी भी सुगन्धें सूँघी थीं, उनके उत्सका पता मुझे लग गया था।

मैं उस वृक्षके नीचे पहुँच गयी थी— वहीं जहाँ मैंने समुद्रको देह धारण करते देखा था। लेकिन मेरे वहाँ पहुँचते ही वह मानव देहधारी समुद्र पिघलने लगा था.... कैसा विराट् और भयावह था वह दृश्य। मैंने अपनेको समर्पित कर दिया था और उसी पल मेरे मनका भय लुप्त हो गया था। मैंने पाया था कि मैं समुद्रकी ऊँची-ऊँची लहरोंकी कोमलतामें लिपटती जा रही हूँ, और धीरे-धीरे खुद भी पिघलती जा रही हूँ। मेरी देहका पृथिवी-तत्त्व बहुत कोमल हो गया था : बेहद मृदु और पारगामी। मैं सबको सबका अंश सौंप देती हूँ—ओफ़ कितना हलकापन है और कैसी गति। मेरा शरीर बिजलीसे भी ज़्यादा दीप्तिमान हो गया था, उससे भी अधिक प्रवहमान। मैं उस नीलिमामें अनल-रेखाकी तरह बहती जा रही थी।

एक सोनेके पंखोंवाला पक्षी आकाशकी डालपर बैठा अनाहत गान गा रहा था।

■ ■

२ सप्तर्षि, फोर्थ रो,
सान्ताक्रूज़ (पूर्व) बम्बई-५५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर प्रदेश एजेन्सीज़

वितरक

रोहतास इण्डस्ट्रीज़ लि०, डालमियानगर

के

हर प्रकारके कागज व वनस्पती (घी)

५८।३ बिरहाना रोड,
कानपुर (उ० प्र०)

फोन : ३२१८२

Cable :
"BOLTSWALA" Calcutta-1
,, Delhi

Phone :
33-4441
22-6262

Ramjilal Ramsaroop

**62-1 A, Netaji Subhas Road,
Calcutta.**

**Manufacturers' Representatives
Importers & Exporters**

Stockists of :

**Bolts, Nuts, Rivets, Washers, Woodscrews,
Hinges & Coach Screws Etc.**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Gram : ABRASCAST *Phone* : 23-1935

Abrasives And Castings Ltd.

AVENUE HOUSE
1, Chowringhee Square
CALCUTTA-1

Manufacturer of :

SHOTS & GRITS : For Shot Blasting, Marble Cutting, Polishing etc.

GRINDING MEDIA : (Balls & Cylpebs) For Cement Mills, All Kinds of Quality Castings Ferrous and Non-Ferrous.

Phone : 44176

DELUX AND LUXURIOUS
BIG AND SMALL CARS
AVAILABLE ON HIRE

CONTACT

GOVT.-APPROVED TRANSPORTERS

ROAD TRAVELS

TOURIST TRANSPORTERS

25/33, 'A' Block
Connaught Place
NEW DELHI

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ २०वीं सदी ॥ यदि चिन्तन-पक्षको लें तो नीत्सेका नकार अब पुराना पड़ चुका है। यहाँतक कि जिस अस्तित्वको लेकर हज़ार बातें हुईं, उसका दर्शन भी अब सार्त्रके तर्कोंसे परे हो गया है। 'बियाण्ड द आउटसाइडर' में कोलिन विल्सनने जिसे 'नव-अस्तित्ववाद' कहा वह वायवी चीज़ है...फिर...अस्तित्वके नये और पेचीदे संघर्ष कभी समाप्त नहीं होनेके...............

नकारात्मक उत्तरोंका खोखला अवकाश

ओंकार ठाकुर / आखिर आदमी करे तो क्या? आज ध्वंस, विघटन, पीड़ा, कड़वाहटकी जितनी चर्चा हो रही है, पहले नहीं हुई थी। उस युरॅपमें भी नहीं जहाँकी धरती दो-दो महायुद्धोंके कारण काँप-काँप जाती थी। उस दिन एक अमेरिकन कह रहा था—"मिस्टर ठाकुर, यू आर लकी, यू आर इन इण्डिया!" में उसका दर्द समझ गया था। अपने देश अमेरिकामें भी उसे शान्ति नहीं मिली और वह शान्तिकी खोजमें निकल पड़ा। विज्ञानने, यह सही है, हमें मशीनी पुर्जा बनाकर प्रकृतिकी अनन्त शक्तियोंका परिचय दिया, देश और कालकी व्यापक खाईको मिटाकर हमारी मुट्ठीमें क़ैद कर दिया, लेकिन उसने हमारे साथ एक क्रूर मज़ाक़ भी किया। विज्ञानने जाने किन अभिप्रायोंके लिए संसारके परम्परागत मूल्योंको विघटित कर दिया। बीसवीं शताब्दीके उत्तरार्धमें भी आदमी तमाम जोखिमोंसे भरा है, वह बनावटी व्यवहारोंकी क्षतिके कारण छटपटा रहा है, वह जीवनको सार्थकता प्रदान करनेके प्रयत्नमें उदासीन बनता जा रहा है। यहाँतक कि नीत्सेको कहना पड़ा, 'ईश्वर तो मर चुका है।' लेकिन यह भी उतना ही सही है कि हर विचारकको अपने युगमें अपनी दिशा खोज लेनी पड़ती है, वह विद्रोहपूर्ण प्रतिक्रियाओंसे चाहनेपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी छुटकारा नहीं पा सकता। कालके अनन्त प्रवाहमें हर चिन्तक अपना घरौंदा बनाता और तोड़ता है। उसे अपना घरौंदा तोड़नेका समय न मिले तो यह कार्य किसी दूसरेके हाथों होता ही है। विद्रोहपूर्ण प्रतिक्रियाओंसे अछूता नहीं रहा जा सकता। फिर वह कोई भी हो। नीत्से, कीर्केगार्द, कामू, रिल्के, काफ़्का, सार्त्र, दास्तोवस्की या युंग या वर्दिएफ़। कालको ये चिन्तक खण्डोंमें अवश्य बाँट देते हैं, उसकी अनन्ततापर आँच नहीं आने देते। कालके सामने व्यक्तिगत मूल्योंकी उपेक्षा करनेवाली राजनीति हो, प्रजातन्त्रका ढोंग हो या आदर्श राजकी स्थापनाकी कोशिशें, सब फीके पड़ जाते हैं। अपनी बाँहोंमें काल सब कुछ समेटकर अट्टहास करता हुआ आगे निकल जाता है। बच रहती है तो गर्द—सुविधाके लिए उसे 'आधुनिकताका' नाम दे दिया जाता है।

जार्ज आर्वेलका उपन्यास '१९८४' विभिन्न मनःस्थितियोंमें मैंने पढ़ा है। मैं आर्वेलके निष्कर्षोंसे असहमत होते हुए भी, इस आतंकपूर्ण उपन्यासमें व्यक्तिके स्वत्वके विलयनको लेकर उठाये गये प्रश्नमें एक अर्थ पाता हूँ। हक्सलेने भी इससे सहमति प्रकट करते हुए लिखा है कि आर्वेलकी यथार्थ कल्पना' सत्यके अत्यधिक निकट माननी चाहिए।

मेरा निश्चित मत है कि नीत्से और कीर्केगार्दने यही तथ्य एक भिन्न रूपमें हमें दिया है। इन दोनोंकी मान्यता थी कि भोगी हुई अनुभूतियोंके कारण ही जीवनका वास्तविक रूप मनुष्यको दिख जाता है, लेकिन शीघ्र यह एक रूप विलीन हो जाता है, नये रूपमें। जीवन इस प्रकार टुकड़ोंमें बँटा हुआ रहता है कि अकसर चिन्तक, वैज्ञानिक भी परीक्षणके इन विषम क्षणोंको आत्मसात् नहीं कर पाते। शताब्दियोंके अनुशासनके फलस्वरूप ही मानव-मूल्योंसे हमारा साक्षात्कार होता है। बीसवीं शताब्दीके बीते वर्षोंमें हमें मानव-मूल्योंकी उपलब्धिकी इच्छाने उद्वेलित अवश्य किया है। स्टीफ़ेन जार्ज और निकोलाई हार्टमैनने इसे स्वीकारा है। लेकिन बीसवी शताब्दीका व्यक्ति आत्मचिन्तन-परक होनेके साथ ही मानव-मूल्योंके प्रति अकारण उदासीन हो गया है। इस उदासीनताके लिए मनुष्यको उत्तरदायी कहा जाता है। आदमीने अपना विशिष्ट कुछ खोया है, तो वह है दृष्टिकोणका आरम्भ-बिन्दु। यह आरम्भ-बिन्दु क्या है?—ऐसे प्रश्न किये जाते रहे हैं। हर पीढ़ीमें और हर सदीमें ये प्रश्न शून्यमें तैरते रहे हैं और इन प्रश्नोंने आदमीको निराश ही किया है। उसे दिया कुछ नहीं। आदमीके हाथ निरर्थकता लगी है।

इसीलिए हमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए जब यह कहा जाता है कि इस समूची शताब्दीका उत्तरार्ध एक घुटन-भरी उदासीसे अनायास भर गया है। व्यक्ति और सारा समाज किसी तटस्थ अदृश्य शक्तिके सम्बन्धोंको सुलझानेके भगीरथ प्रयासमें लगा हुआ है। हम यह भी तो सरलतासे नहीं विस्मृत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर सकते कि युद्धोत्तर विश्वमें विशेषतः युरॅपके उबाऊ और आत्मरक्षात्मक वातावरणने बीसवीं शताब्दीको न केवल निरर्थकता, सन्त्रास, भयानकता और चुभन-भरे अविश्वाससे भर दिया है, बल्कि विश्व-मानसको उन्मथित कर दिया है। वैचारिक यन्त्रणाका अवसान अब नहीं हो सकेगा और मानव-मनका शेष असन्तोष आनेवाले वर्षोंमें व्यक्त होता रहेगा—बग़ैर किसी प्रयत्नके।

लेकिन यह स्पष्ट समझ लेना आवश्यक है कि उन्नीसवीं शताब्दीका उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दीका पूर्वार्ध जिस मूल्यहीनताकी भयावह स्थितिमें जकड़ गया था, आज भी उससे त्राण नहीं पा रहा है। कालको हम इतनेसे भी न समझ पायें तो यह हमारी मानसिक दयनीयता है। यह तो सच है कि आजसे सौ बरस पहले विज्ञान घुटनों चल रहा था, संयन्त्र सँभल नहीं पाये थे, लेकिन यह कोई तर्क नहीं है। हो सकता है, कालके उस विशिष्ट खण्डमें कोई एक भू-भाग अणु, परमाणु, समय, गतिको हमसे ज्यादा ही समझता रहा हो। हमारा आजका ज्ञान उसके सामने एक छोटा बिन्दु हो। आजकी वैज्ञानिक उपलब्धियोंपर हम गर्व किस बूतेपर करते हैं? इसका उत्तर हमारे पास नहीं है। संचित ज्ञानपर हम गर्वित बने घूमते हैं। यह दिवा-स्वप्न भी हो सकता है। बहुत-से प्रश्नोंपर विज्ञान भी चुप रहा आता है, या उन सवालोंको वह स्वीकार लेता है। बादमें चाहे उसका स्वर नकारात्मक हो जाये।

काल अपने-आपमें स्थूल भौतिकवाद-जैसी चीज़ नहीं है। उससे मुक्तिका उपाय भी नहीं है। यह हमारे मानसका खोखलापन है कि हम कालको अपनी सुविधानुसार अस्तित्वजन्य मान लेते हैं। वर्तमान सदी कालके एक खण्डमें बन्दिनी है और एक सीमित सार्थकताका बोध हमें कराती रहती है। विश्वकी प्रयोगशालाएँ लाख-लाख आधुनिक संयन्त्रोंसे भरी रहनेके बावजूद भटकनके मध्य मानव-समाजको दिशा-संकेत-भर दे जाती हैं, निकटताका अहसास होनेपर। फिर भी इसे मानवकी नियति नहीं माना जा सकता। बीसवीं शताब्दीका महत्त्व इस कारण और अधिक हो सकता है कि आइन्सटीनने सापेक्ष्यवादका नाम लिया और आदमीको कालका वास्तविक ज्ञान कराया। लेकिन यह आदमीकी विवशता है कि वह प्रकाशसे अधिक गति अभी नहीं पा सका। कब पायेगा—यह भी अनिश्चित है। आइन्सटीनने जहाँ विश्वको ला खड़ा किया है, उस बिन्दुसे आशा बंधी है कि आदमी आगे जाकर अपने-आपको कमसे कम तुच्छ तो नहीं समझेगा। लेकिन सत्य इससे अलग है। अपने अनगिनत दावेके बावजूद मनुष्य आज भी उतना ही बौना है, जितना गुफाओंमें रहनेवाला मानव था। हमारी यह विवशता अपने-अपने ढंगसे यास्पर्स, हेडेगर या दॉस्तोवस्कीने व्यक्त की है। कालका यह विशिष्ट बिन्दु एक और अर्थमें स्मरण किया जायेगा कि विज्ञान, कला, दर्शन, साहित्य आदिकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पकड़ होनेके साथ ही आजका आदमी एक प्रकारके मिथ्या सन्तोषको सर्वोपरि मानकर अदृश्यमें भागता जा रहा है। पहले मनुष्य जंगलोंमें घूमता रहता था, फिर वह गुलाम बनाया गया, फिर उसने मुक्तिकी साँस ली। इस प्रकार कालके अनन्त प्रवाहमें मनुष्य समय-समयपर राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक स्वतन्त्रताका अधिकारी रहा है, स्वामी भी। तब उसने नये मूल्योंकी खोज की। यही उसकी उपलब्धि रही है, जिसे सुविधाके लिए आधुनिकता कहा जाता है। आधुनिकताका अर्थ नहीं रह जाता यदि व्यक्तिकी दृष्टि वैज्ञानिक न हो जाती। इसे शाश्वत मूल्य भी कहा जाता है। सार्त्रने 'रिपब्लिक ऑफ़ साइलेंस' में लिखा है: "हम भूतकालमें इतने ज़्यादा स्वतन्त्र नहीं थे, जितना जर्मन आधिपत्यके समय....हम एक साधारण कथनके अर्थमें जीवित रहे आये कि आदमीका जीवन क्षणभंगुर है....व्यक्तिके जीवनका रहस्य उसका अपना 'ईडिपस कॉम्प्लेक्स' नहीं है, किन्तु उसकी मृत्यु तथा अत्याचारोंको सहते रहनेकी शक्ति है, सीमा है...अकेलेपनमें पूर्ण उत्तरदायित्व।" सार्त्र व्यक्तिकी सत्ताको अक्षुण्ण रखनेका हिमायती है। सार्त्र मनुष्यके गुण-दोषोंकी अनावश्यक रूपसे व्याख्या नहीं करता, उसके लिए ये गुण शाश्वत नहीं हैं। आदमीका समूचा अस्तित्व ही संचालित है और आदमीको समूह-जीवनमें रहना ही पड़ता है। वह उससे त्राण नहीं पा सकता। यही कारण है कि कालके आगे मनुष्य बौना दीखने लगता है।

१९ वीं शताब्दीके उत्तरार्धमें रूसके कीव शहरमें जन्मे चिन्तक निकोलाई वर्दिएफ़ अन्य चिन्तकोंसे इस अर्थमें विशिष्ट हैं कि उन्होंने दो राजक्रान्तियोंके पतनके साथ महायुद्धोंकी विभीषिकाको पहचाना था और आदमीको कालका एक चेतन अणु कहा था। वह जो कभी मिटता नहीं है, अपना रूप बदल लेता है। साथ ही वर्दिएफ़ कालखण्डका महत्त्व स्वीकार नहीं करता। वह कर्ममें विश्वास रखता है—द मीनिंग ऑफ़ द क्रीएटिव एक्ट। उसके अनुसार आदमी ढहकर फिर नयी सृष्टिका निर्माण करता है। काल और सीमाओंके बारेमें उसके क्रान्तिकारी विचारोंसे उस समयके शासक असन्तुष्ट हो गये थे। उसे देशसे निकाला गया था। इस तरह वर्दिएफ़ने बीसवीं सदीका एक पहलू हमारे सामने रखकर यह कहना चाहा था कि कितनी ही सदियाँ निकल जायेंगी—आदमी कालको अपनी बाँहोंसे समेट नहीं पायेगा।

ईसासे सैकड़ों वर्ष पूर्व यूनानी कवयित्री सैफ़ोने अपने समयकी अतृप्त वासना और कुण्ठाको पहचाना था। उसी कालमें भारतने मनुष्यके मनमें अमृत खोजा था। यूनानमें तब हत्या, अपराधकी बहुतायत थी। एक ही कालखण्डमें यह होता रहा। आजके अनेक आन्दोलनोंके सूत्र महाभारत, उपनिषद्, पुराण आदिमें मिले हैं। इसका कारण केवल यही है कि आधुनिक या बीसवीं शताब्दी समूचे कालखण्डका एक

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुच्छ भाग है। सारे आन्दोलन, आदमी या देशकी मनोदशा, नरसंहार, अपराध-भावना इतिहासकी पुस्तकका एक पन्ना है। इस सदीकी संस्कृति यदि कुछ है तो वह एक जलकी नन्हीं बूँदकी तरह। वह धूमिल हो सकती है, वह अपना रूप बदल सकती है।

बीसवीं सदीका असन्तोष, वास्तविक यथार्थसे आत्मसंघर्ष, त्रासदीय अवस्था, मानसिक शिथिलता, खोखलेपनका अहसास, विभिन्न जीवन-पद्धतियाँ, दुश्चिन्ता समूचे कालका एक बहुत मामूली-सा हिस्सा ही बनकर रह जाते हैं। ये सब एक परमाणुके बराबर भी नहीं। इस सदीका भार आदमीको ज़्यादा प्रतीत होता हो तो यह उसकी सीमाओंके कारण है। वह बहुत कम सहेजकर रख पाता है। काफ़्काने यही सोचा था और उसे सांसारिक वस्तुओंके मध्य खोखला-सा कुछ महसूस हुआ था। १९१३ में उसने लिखा था : "मैं एक काल-कोठरीकी दीवारसे अपना सिर टकराकर रह जाता हूँ, इस काल-कोठरीमें न तो दरवाज़े हैं और न खिड़कियाँ।"

आइन्स्टीनके सापेक्षवादको इस कसौटीपर कसा जाये तो निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि बीसवीं सदी-जैसी अलग कोई चीज़ या सत्ता नहीं है। समूची सदीको सरलतासे पकड़ा जा सकता है, यदि मनुष्य गतिपर अधिकार कर ले। गतिकी पकड़ ही तबसे वैज्ञानिकोंका लक्ष्य बन गयी है। हर दिन एक-न-एक यान आकाशकी ओर भागता दीखता है। लेकिन यह सिर्फ़ अन्धी दौड़के अलावा कुछ प्रतीत नहीं होती। कोई सीमा न हो, दिशाहीन सब कुछ हो और आदमी भाग रहा हो बेतहाशा। सापेक्ष्यावादके कारण अठारहवीं या उन्नीसवीं शताब्दीका तनिक भी महत्त्व नहीं रह गया है। आइन्सटीनने इतना तो किया कि मनुष्यको फिर आगे ला खड़ा किया। यह अलग बात है कि अभी भी उसके पैर नहीं जम पा रहे हैं और वह लगातार एक विशाल दलदलमें फँसता जा रहा है। सापेक्ष्य तत्त्व निरन्तर परिवर्तित होते रहते हैं, अतः आज की जा रही अन्तरिक्षकी यात्राका कल कोई अर्थ नहीं होगा। सुननेमें यह अनहोनी बात लगे, लेकिन है यह सत्य। कितने-कितने नक्षत्र-ग्रह घूम रहे हैं। वे सिर्फ़ जगा पा रहे हैं तो जिज्ञासा ही। फिर कालके अथाह सागरमें तैरनेवाले हम जीवनके चरम मूल्योंकी चर्चा किस बूतेपर करते हैं? यह हमारा अभीष्ट न भी हो तो भी उसकी निरर्थकतासे इनकार तो नहीं किया जा सकता। स्पेंगलरने कहा था कि इन दिनों हमें मूल्योंकी चर्चा करना बन्द कर देना चाहिए। उसका कोई अर्थ नहीं है। दॉस्तावस्कीकी भाषामें कहूँ तो मनुष्यकी जिजीविषामें नवीन क्रान्तियोंका बीज अंकुरित हो रहा है। लेकिन हम यह दावा नहीं कर सकते कि आगामी तीस-चालीस सालोंमें मानवीय जीवनका क्या और कहाँ पड़ाव होगा। आदमी एक महान् यात्रामें अनजाने लीन रहा आता है। आस-पासका खण्डित जीवन उसे मुक्ति नहीं दे पाता। कालकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कसौटीपर मनुष्य [illegible] और [illegible] पर निपट अकेला है और कई सदियाँ मिलकर भी उसे कैसा भी अर्थ नहीं दे पातीं। उसके लिए हरेक शताब्दी एक लम्बी, बेहद लम्बी यात्राका एक भरपूर डग भी नहीं है। बीसवीं शताब्दी आदमीके जीवनके चन्द वर्षोंका कोई भी अर्थ नहीं दे पा रही। हर गणित यहाँ आकर रुक गया-सा लग रहा है। यह हमारा भ्रम नहीं हो सकता। हो सकता है, आदमी गुमराह हो गया हो, और वह फिर सही मोड़को पहचान ले। लेखक या कलाकार अपनी विभिन्न व्याख्याओंसे जीवनपर रोशनीकी कुछ किरणें ही डाल पाते हैं, लेकिन ये व्याख्याएं शीघ्र ही चमककर बुझ जाया करती हैं। कितने भू-भागपर वात्स्यायन जीवित है?

हर शताब्दी अपने प्रवाहमें बहती रहती है और अनगिनत मृत-क्षणोंको ढोती रहती है।

इस अर्थमें बीसवीं शताब्दीकी एक ही मौलिक विशेषता हो सकती है और वह यह है कि इस अभिशप्त शताब्दीने शायद सबसे ज़्यादा अंशोंमें व्यक्तिको उसकी गरिमा प्रदान की, उसे जर्जरित फ़ॉर्मूलोंसे छुटकारा दिलाया। जीवनको अर्थ देनेकी कोशिश उसने की। यह अवश्य है कि एक क़ैदसे परिचय पानेके पश्चात् भी आदमी मुक्तिकी साँस नहीं लेने पाया कि उसे ढेर-ढेर संघर्षों, अपराधों, कुहरीले अंधेरोंने घेर लिया। इसे कालकी क्रूरता कहना तर्कसंगत नहीं होगा। प्रवाहमें बहनेवाला या उसकी चपेटमें आने- [illegible] नहीं पहचानता तो उसका दोष ही है यह। कामूने अपने निबन्ध 'ले अमादे' में पराजित, थके-हारे, दिशाहीन फ्रान्सको नया सन्देश दिया था और कहा था कि यदि दुनिया समाप्त भी हो जाये तो क्या—संस्कृति तो अमर है। यानी कामूने कालको चुनौतीके रूपमें ही स्वीकारा था। और वह भी उस वक़्त जब संहार और ध्वंसका खतरनाक दौर चल रहा था और युरॅप महायुद्धकी लपटोंमें घिरा चीख रहा था। कामूने जीवनकी विसंगतिको अच्छी तरह पहचाना था। वह बीसवीं शताब्दीके अभिशापको समझ गया था। हो सकता है, यह एक सापेक्ष्य तत्त्व हो जिसे कामूके चिन्तनने महसूसा हो। हर शताब्दीकी अनेकानेक व्याख्याएँ सम्भव हैं। हर शताब्दी अपनी सामर्थ्यके सहारे अन्वेषणके लिए प्रयत्नशील रही आती है। हर शताब्दी अपनी उपलब्धियोंको चरम उपलब्धि कहना चाहती है, बावजूद इसके हर शताब्दीके भाग्यमें या हिस्सेमें सिर्फ़ सूचीभेद्य अन्धकार आता है।

बीसवीं शताब्दी इसका अपवाद नहीं है। अजनबीपन बढ़ गया है। दूरियाँ कम होनेके साथ ही आन्तरिक दूरियाँ बढ़ गयी हैं; इतनी कि आदमी चकित है, लेकिन उतना असहाय भी है। ईसापूर्व ५०० के क़रीब भावनाका जन्म स्वीकार करनेवाला यास्पर्स अस्तित्ववादकी चर्चा करता है, हेडगरके शब्दोंमें यह 'संसारमें रहना' है। यानी हरेक शताब्दी झूठी है। उसका अस्तित्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्दिग्ध है। कालका सूत्र उलझा हुआ और बेहद लम्बा है।

अन्तरिक्ष-यात्रा, तत्त्वोंका विश्लेषण, राजनैतिक साँचे, निर्मम कालवाद, मानवीय अनुभूतियोंकी सार्थकता, चिकित्सा-शास्त्रकी आस्था और साथ ही संकट-बोधको, पिछली शताब्दियोंके सन्दर्भमें एक आकर्षणकी संज्ञा दी जा सकती है।

कालकी छातीपर शताब्दियोंसे लाखों मैगाटनके विस्फोट होते रहे हैं, एक ग्रह ही क्यों हज़ारों स्थानोंमें ये विस्फोट हो रहे हैं, होते रहेंगे। इन विस्फोटोंका अर्थ नहीं है। यह पाना नहीं आदमीका खोना है। उससे आदमीका हीन-भाव जाहिर हुआ है।

आनेवाले तीन दशक हमें कोई भी निष्कर्ष दें, कितने ही कल-कारखाने हमारी आबादियाँ घेर लें, विज्ञान हमें कितना ही चमत्कृत करे, खगोल-शास्त्री लाख-लाख घोषणाएँ करें, चिन्तक नश्वरताकी बात करें, दूरियाँ बिन्दु बन जायें, यह धरती सिर्फ़ शून्यमें घूमती रहेगी। आधुनिकताका हर दावा सदियों पुराना है, अजन्ताके भित्ति-चित्र कभी आपने देखे हों, उनके सही रंगोंमें, तो यह स्वीकार सहज किया जा सकता है।

संयन्त्रोंका जमाव, बारूदोंका ढेर, अणु-शक्तिका ज्ञान, दिशाहीन चिन्तन, प्रवहमान घटनाओं, ग्रहों-नक्षत्रोंकी आसक्ति—बीसवीं शताब्दीको परभाषित नहीं कर सकते। बीसवीं शताब्दी बेमानी यात्राका एक पड़ाव कहा जा सकता है। क्षण-भरके लिए जहाँ यात्री रुककर फिर चल पड़ता है, देर तक न रुकनेका असन्तोष लिये।

अथाह जल-राशिकी कल्पना भी नहीं की जा सकती, उसकी सम्पूर्णतामें। भले ही हम दावेमें जीते रहें।

बीसवीं शताब्दीका अर्थ सिर्फ़ इसी होनेमें है। वह हमें अपने होनेका अहसास-भर देती है। हमें उसके लिए प्रतिश्रुत होना चाहिए। जो वह उद्घाटित कर रही है, उसे समझना चाहिए। तभी इस सदीका अर्थ हम ग्रहण कर पायेंगे, अन्यथा नहीं। यह जीवन्त सत्य है, किसी प्रकारका आवेश नहीं।

मँहगाई और तबाही, दायित्वभाव और आतंक, अरक्षाका भय, हमारे सरपर तैरते हुए वेगवान स्पुतनिक, आर्थिक असमानताका अहसास, भीतरी घुटन, दयनीय बने रहनेका संस्कार—इन सबके बावजूद बीसवीं शताब्दीके शेष वर्ष हमें जीते रहनेका आमन्त्रण दे रहे हैं। भीड़ और जुलूसोंमें साँसें लेते हुए हम आगे बढ़ते ही जा रहे हैं। दूसरा विकल्प भी तो नहीं है।

■ ■

१६१०, राइट टाउन,
जबलपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

JAY TRADING COMPANY

STOCKISTS IN ALL KINDS OF TIMBER
& MANUFACTURERS OF PACKING BOXES

H. OFF.

119/B, Mahatma Gandhi Road, Cal-7

WORKS.

105/1 Ultadanga Main Road, Cal. 4

Head Office : 34-7169

Works : 35-3493

With Best Compliments of

Manilal & Bros.

Chawri Bazar, Delhi-6.

Stockists For :

DUNLOP INDUSTRIAL PRODUCTS,

TURNER-ASBESTOS TEXTILES & JOINTINGS,

MILL STORES & HARDWARE ETC.

Phone : 261634

Grams : ALTOOLS

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Cable : INDVALVE, CALCUTTA

Phone : H. O. 24-5301
Works : 17, G. T. Road,
KONNAGAR

INSIST ON

CAST IRON AND CAST STEEL VALVES

SLUICE-GATE-GLOBE-REFLUX-DIAPHRAGM-
LUBRICATED-AMMONIA-CHLORINE AND BUTTERFLY Etc.

for

Water Works, Sugar Mills, Chemical Plants, Coal Washery,
Fertilizer and Various Other Industrial Units.

Send your enquiries to :

Bhutoria Engineering Works Limited

Bhutoria House. 8, Lindsay Street,
CALCUTTA-16

With Best Compliments of :

The Bharat Carbon & Ribbon Mfg. Co. Ltd.

Regd. Office : N-75, Connaught Circus, New Delhi-1

Factories :
Calcutta & Faridabad

Sales Head Office :
6, Ring Road, Lajpat Nagar-IV, New Delhi-14.

A National Enterprize of International Standards

MAKERS OF KEYS TO YOUR COMMUNICATION
"T Y P I X"
CARBONS AND RIBBONS
"C O P Y M A S T E R"
STENCIL PAPER AND DUPLICATING INK

Serve your requirements through Nationwide Marketing
Organisation with Divisional Offices at

BOMBAY * CALCUTTA * MADRAS * KANPUR * BANGALORE
AHMEDABAD AND HYDERABAD.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FOR YOUR REQUIREMENTS
OF
SPARE PARTS
FOR
ALL TYPES OF CATERPILLAR
AND
OTHER EARTHMOVING MACHINERY

Letourneau, G. M. Engine Oliver, Euclid Dumpers, Cummins Engines and Allis Chalmers Etc. Please Contact–

G. P. Tractor Spares Co.

12-E Kamla Nagar, Delhi-7

Phone : 226877 *Gram* : TRACWALA

If you have not succeeded in procuring the Antirust, Anticorrosive, Oil repelleant and Water proof-Waxed Kraft Paper, Printed-Wax-Paper and Waxed-Grease-proof paper of highest quality so far in Rolls and Sheets–

Please Contact :

Crescent Paper Waxers

Office :
Bharat Nagar,
342, Grant Road, Bombay-7
Tel : 376695 & 375259

Factory :
Wagle Estate,
Thana
Tel : 593336

H. O. AT CALCUTTA.

Tent House,
P/33 Mission Row (Ext)
Calcutta-13

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ नज़र पत्रकारकी ॥ एक्स्पो-६७ में नीदरलैण्डका मण्डप :
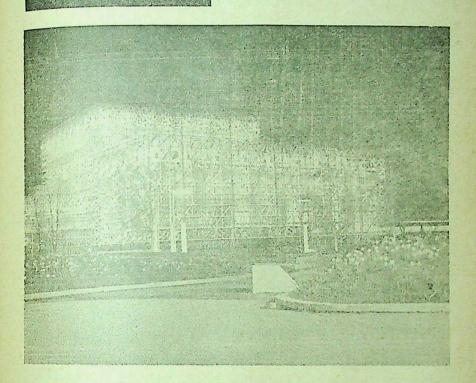
३३ साल बादकी दुनिया

हरीश अग्रवाल । ● मानव सौरमण्डलके छोर तककी यात्रा कर सकेगा और वह सूर्यसे कुछ लाख मील रह जायेगा ।

● मानवको असीमित मात्रामें सूर्य, परमाणु और उद्जन ऊर्जा पृथ्वीपर प्राप्त हो सकेगी ।

● इस असीमित ऊर्जासे मानवकी अनेक समस्याएँ हल हो जायेंगी । ताजा पानीकी कमी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं रहेगी, समुद्रसे प्रचुर मात्रामें खनिज निकाले जा सकेंगे और पृथ्वीसे भी खनिज आसानीसे उपलब्ध होंगे।

● कतिपय रसायन मानव व्यवहारमें संशोधन करनेकी क्षमता रखते हैं। इसलिए पागलपन-जैसे रोगोंका इलाज इन रसायनोंसे सम्भव हो जायेगा।

● मानव अपनी भावी उत्पत्तिपर नियन्त्रण कर सकेगा। इस तरहके इंजेक्शन या गोलियाँ आ जायेंगी जिससे हमेशाके लिए जन्म-नियन्त्रण हो सकेगा। यह भी सम्भव है कि जन्मसे पहले ही भ्रूणके गुण मालूम हो जायें, और उनमें परिवर्तन किया जा सके।

● प्रयोगोंसे सिद्ध हो गया है कि मानव जैविक दृष्टिसे मरेगा नहीं। मानवको बर्फ़-

२१वीं सदीका जापान : बच्चोंकी नज़रमें

अपनी बहुमुखी प्रगतिके कारण जापानने सारी दुनियाका ध्यान खींच लिया है। जो देश भौगोलिक दृष्टिसे इतना छोटा होते हुए और द्वितीय विश्वयुद्धमें मटियामेट होनेके बाद भी इतनी द्रुतगतिसे प्रथम पंक्तिमें आ खड़ा हुआ है, इक्कीसवीं सदीके सूर्योदयमें उसका क्या रूप होगा—इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। पिछले दिनों वहाँके स्कूली बच्चोंने एक प्रतियोगितामें भाग लेते हुए चित्रों तथा निबन्धोंके माध्यमसे २००० ई० के जापानका जो दृश्य खींचा है, वह बताता है कि ये बालक अपने देशके भविष्यके प्रति कितने आशावान् हैं।

निबन्ध-प्रतियोगितामें पुरस्कृत एक बारह वर्षीय जापानी लड़कीका विश्वास है कि इक्कीसवीं सदीमें उसका घर लकड़ीका नहीं, इस्पातका बना होगा। छतपर हेलीकौप्टर होगा और गैरेजमें एक आधुनिक मोटरकार। उसका निश्छल बाल-स्वभाव इस आशामें व्यक्त होता है कि "....तब दुनियामें बुरे आदमी नहीं होंगे और सब लोग सुखी जीवन बिता सकेंगे!" एक बारह वर्षीय छात्र कहता है—"औद्योगिक शोर-गुल, कृषि-सम्बन्धी रसायनोंकी भरमार, सड़क-दुर्घटनाएँ, बूढ़े लोगोंके रोग, ये सब इक्कीसवीं सदीमें बीती बातें हो जायेंगी। यात्रा करना अधिक सुरक्षित, सस्ता और आसान हो जायेगा....।" तेरह वर्षीय छात्र हिरोशी ओयामाका विचार है कि "इक्कीसवीं सदीकी दुनिया 'ऊँची छलाँग'की दुनिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगी, और हम अपने माता-पिता तथा उनके पूर्वजों-द्वारा रखी गयी नींवपर अपनी पूरी ताक़तसे छलाँग लगायेंगे।"

यासुओ कावाहारा नामक १२ वर्षीय लड़केने अपने गाँव-का चित्र खींचा है—"यह हरे समुद्रपर जहाज़ोंकी तरह है। जहाज़ोंके बेड़ेकी तरह—चपटे, गोल, वर्गाकार जहाज़ !....मेरी कल्पना इन्द्रधनुषकी तरह आकाशके पार झाँकती है। यह ऊँची और ऊँची उठती जाती है, जबतक कि इक्कीसवीं सदीकी चमकदार दुनियामें नहीं पहुँच जाती। अब यहाँ नयी सदी है। मेरा गाँव मेरे सामने है।

वहाँ धानके खेतोंमें फैली धूपके बीच हमारे घर खड़े हैं। इन गुम्बदनुमा घरोंके कमरे वातानुकूलित हैं और ताप, गरमी और हवा सबका नियन्त्रण स्वचालित यन्त्रसे होता है। परमाणुशक्तिके कारण उत्तरी इलाक़ेका जाड़ा भी अब उतना 'कठिन' नहीं रह गया। बर्फ़ हटायी जा सकती है और फ़सलोंको उचित गरमी दी जा सकती है। सारे साल फूल खिलते हैं। जंगलके बीच पार्कमें टेनिस और वॉली-बाल खेली जा सकती है।....पूजास्थल और देवमन्दिर जैसे पहले थे, वैसे ही हैं।....पूजास्थलके बीच एक संगीत-कक्ष है।....गाँवके पश्चिमी छोरपर, जहाँ कभी मेरा घर था, आज एक बड़ा सरोवर है....बहुत बड़ी-बड़ी सुन्दर सड़कें हैं। पर बिजलीके खम्भे नहीं हैं (अर्थात् प्रकाश-व्यवस्था ऐसी है कि बिजलीके खम्भोंकी ज़रूरत नहीं)। फलोंके बाग़ हैं: बॉटनिकल गार्डन हैं, और डेरी-फ़ार्म हैं। कृषिसम्बन्धी वस्तुओंके लिए फ़ैक्टरियाँ हैं....।"

— सुधा शर्मा

में जमानेके प्रयोग सफल हो गये हैं। असाध्य रोगोंका इलाज होनेपर इस तरहके मानवको पुनः जीवित किया जा सकेगा। लेकिन अधिक जनसंख्याके कारण मानवको अमर रखनेकी जरूरत नहीं पड़ेगी।

● सूटकेसमें रखे जानेवाले परमाणु-बम बन जायेंगे।

● मौसमपर नियन्त्रण सम्भव हो जायेगा, मनचाही वर्षा होगी, रेगिस्तान नहीं रहेंगे।

● संचार और सूचना-के क्षेत्रमें क्रान्ति आ जायेगी। कम्प्यूटरों, टेलीविज़न-टेलीफ़ोन, लेसर किरणों, संचार-उपग्रहोंका प्रचार बढ़ेगा। पुस्तकालय, काग़ज़के काम और टाइपिस्टके काम 'समाप्त' हो जायेंगे, आजकल-जैसे अख़बार नहीं रहेंगे। व्या-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारिक यात्राओंके स्थानपर टेलीविज़नसे काम हो जाया करेंगे।

अगले ३३ साल या उससे पहले ही या बादमें होनेवाली कुछ घटनाओंका उल्लेख हमने यहाँ किया है। वास्तवमें अगली घटनाओंकी भविष्यवाणी भूत और वर्तमानको लेकर ही की जा सकती है और विज्ञान व टेक्नालॉजीमें यह बात और भी सही बैठती है। अबसे ५० साल पहलेके लोगोंको हम पिछड़ा समझते हैं, जब कि ५० साल बादके लोग हमको पिछड़ा समझेंगे। लेकिन प्रगति निर्भर करती है विज्ञानके उपयोगपर ही। पिछले
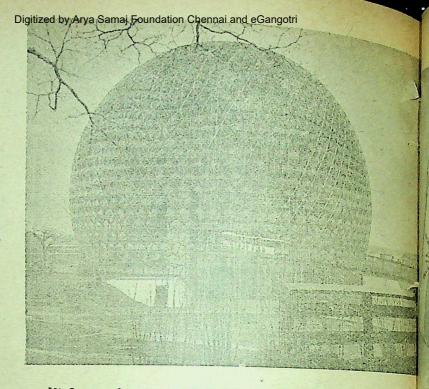
५० वर्षमें विज्ञान और टेक्नालॉजीकी जिस तरह तेज़ प्रगति हुई उतनी कभी नहीं हुई। हो सकता है, भविष्यमें यह प्रगति और तेज़ीसे हो।

लेकिन कम्प्यूटर, स्वचालित मशीनें, टेलीविज़न, अतिस्वन विमान आदि चीज़ें समृद्धिशाली और अमीर देशोंके लिए उपयोगी हो सकती हैं, सारा सवाल ग़रीब देशोंकी समृद्धिका है, संसारके आधेसे ज़्यादा लोगोंको खाना-कपड़ा देनेका है। क्या यह भूखा संसार अगले ३३ सालमें अपना पेट भर सकेगा, क्या विज्ञान इनकी रक्षा कर सकेगा और क्या अकाल नामकी चीज़ हमेशाके लिए मिट सकेगी ?

यदि हम विज्ञानके पिछले इतिहासको देखें और आनेवाले विज्ञानपर निगाह डालें तो देखेंगे कि अब कुछ वर्षसे विज्ञानके क्षेत्रमें विश्व-सहयोग बढ़ रहा है और यह उपयोगी सहयोग बढ़ेगा ही, कम नहीं होगा। पहले अन्तरराष्ट्रीय भू-भौतिक वर्ष मनाया गया, अन्तरराष्ट्रीय जैव कार्यक्रम आरम्भ किया गया और अब अन्तरराष्ट्रीय जलदशाब्दी भी आरम्भ हुई है। ये सब कार्यक्रम संसारके भौतिक, रासायनिक,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोरिका कोशिजुका, १५ वर्षीय छात्राने अपने चित्रमें भविष्यके समुद्रतटका दृश्य अंकित किया है—समुद्रकी तलहटीमें बसा एक नगर। आधुनिक समुद्र वैज्ञानिकों-द्वारा की गयी प्रगति इस काल्पनिक चित्रको वास्तविक सम्भावनाको बल देती है। पिछले दिनों हो प्रसिद्ध सागर-गवेषक कमाण्डर कास्तों ने एक मानवनिर्मित कक्षमें पूरा एक महीना सागरकी तलहटीमें बिताया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
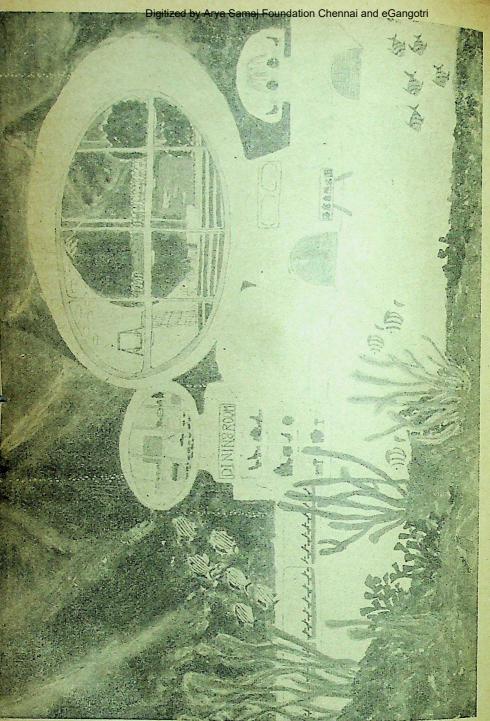
११ वर्षीय छात्र शुंजी इकेडा-द्वारा चित्रित भविष्यके मालवाहक टैंकरकी रूपरेखा यह बताती है कि जापानमें बच्चोंको वैज्ञानिक जानकारी देनेके साधन कितने समुन्नत हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैविक व अन्य साधनोंकी खोज-खबर लेनेके लिए हैं और अपनी पृथ्वीके बारेमें आगे छानबीन करनेके उद्देश्यसे आरम्भ किये गये हैं, जिससे इस जानकारीसे सभी लोगोंको लाभ पहुँचे। हो सकता है कि यदि भूखे लोगोंका दबाव बढ़ा तो भविष्यमें कोई 'भूखा संसार वर्ष' मनाया जाये। कुछ वैज्ञानिकोंका कहना है कि विकासशील देशोंमें समस्याएँ इतनी अधिक बढ़ जायेंगी कि वैज्ञानिकों और इंजीनियरोंको इन समस्याओंको सुलझानेका काम सौंप दिया जायेगा। विज्ञानका महत्त्व और बढ़ेगा और इसलिए इसपर अधिक धन खर्च किया जायेगा।

अब हम अपने देशमें ही कृषिके क्षेत्रमें कुछ क्रान्तिकारी बातें होती देख रहे हैं। हो सकता है कि इनका चमत्कार इतना बढ़े कि अगले ३३ सालमें हमारी खाद्य-समस्या सदाके लिए मिट जाये। हमें आधुनिकतम टेक्नालॉजीका लाभ मिलता रहेगा और हम उसका उपयोग करते रहेंगे। इस समय हमारी खेतिहर जनसंख्या ७० प्रतिशत है। वैज्ञानिक साधनों और यन्त्रीकरणके कारण यह जनसंख्या कम होकर १०-१५ प्रतिशत तक पहुंच सकती है, जैसा कि अमरीकामें गत ५० सालमें सम्भव हो गया है। देशमें उद्योग भी बढ़ेंगे, इसलिए पेशेवर कामोंके लिए डॉक्टर, इंजीनियर, ठेकेदार, बढ़ई, बिजलीवाले, मकान बनानेवाले आदि-जैसे प्रशिक्षित व्यक्ति अधिक संख्यामें पूछे जायेंगे।

बीसवीं शताब्दीके अन्त तक जनसंख्या ८० से ९० प्रतिशत बढ़ जायेगी, इसलिए खाद्यान्न-उत्पादन और जनसंख्या-वृद्धिमें रस्साकशी जारी रहेगी। अमीर देश ग़रीब देशोंको खाद्यान्न और अधिक मात्रामें भेजेंगे। यह भी सम्भव है कि लोगोंको परम्परागत भोजन छोड़कर कुछ कृत्रिम और वैज्ञानिक विधियोंसे बनाये गये खाद्यान्नका इस्तेमाल करना पड़े।

यदि मानवने विज्ञान और टेक्नालॉजीका उपयोग मानवके हितके लिए किया तो एक समृद्धिशाली संसारकी कल्पना की जा सकती है, अन्यथा नहीं। एक ओर जहाँ शान्ति-स्थापनाकी शक्तियाँ हैं, दूसरी ओर संसारको हथियारोंसे लैस करनेकी भी शक्तियाँ हैं। तो इन दोनों शक्तियोंमें खींचतान होती रहेगी और जहाँ नये-नये क्षेप्यास्त्रों व रक्षा-व्यवस्थाके लिए खोज बढ़ेगी वहाँ शान्तिके लिए भी अनुसन्धान आगामी २०-२५-३० सालमें बढ़ेगा। एक ओर जहाँ बम बने हैं, दूसरी ओर उनसे बचावके साधन भी बनाये जा रहे हैं। विकिरणसे पीड़ित व्यक्तियोंका इलाज भी सम्भव हो गया है। तो यह मानवका दिमाग़ बड़ा अजीब है जो अपने विनाश और निर्माण दोनोंकी संरचना स्वयं करता रहता है। फिर भी हम यदि मानवके भविष्यके निराशावादी पक्षकी ओर ध्यान न दें, तो हम कह सकते हैं कि सन् २००० में सारी मानव-जाति जीवित रहेगी। लेकिन फिर भी ग़रीब देशोंका भविष्य ज्यादा उज्ज्वल नहीं दिखाई देता। हाँ, इन देशोंमें जबतक स्वयं काम करने, विज्ञान व टेक्नालॉजीका अधिकतम उपभोग करने, निरक्षरता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूर करने और ग़रीबोंका जीवन-स्तर ऊँचा करनेके लिए पूरी तरहसे प्रयत्न नहीं होता तबतक उनके अच्छे भविष्यकी कल्पना कैसे की जा सकती है। विज्ञानके उपयोगके लिए अन्धविश्वास दूर होना ज़रूरी है। यह उस समय और भी ज़रूरी है जब कि विज्ञानका प्रभाव धर्म और समाजपर बराबर बढ़ रहा है। तो क्या हम अगले ३३ सालमें एक ऐसे विश्वका उदय मानें जिसमें मानव मान्यताओं-पर आधारित ईश्वर-रहित अन्तरराष्ट्रीय मानवीय धर्मकी प्रतिष्ठापना हो। जनतन्त्र, विज्ञान व टेक्नालॉजी यह प्रदर्शित करते हैं कि इस प्रकारका संसार सम्भव है। केवल यह ज़रूरी है कि ज़रूरतमन्द और ग़रीब लोगोंको संसारके सुख-साधनोंसे पृथक् न रखा जाये, इनका समान वितरण हो। इसके साथ-साथ सभी लोगोंको अपने-अपने रीति-रिवाज और सांस्कृतिक मूल्य पूरी तरह-से बनाये रखनेके लिए प्रोत्साहित किया जाये।

■ ■

२६।१६० लाजपतनगर-४
नया दिल्ली-१४
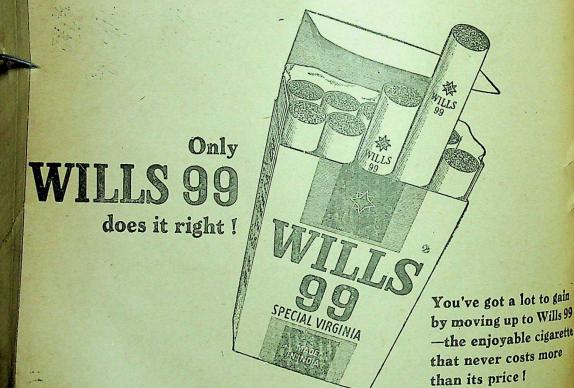
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ अखबार-नवीसी ॥ मिरर सोलर टेलीस्कोप :
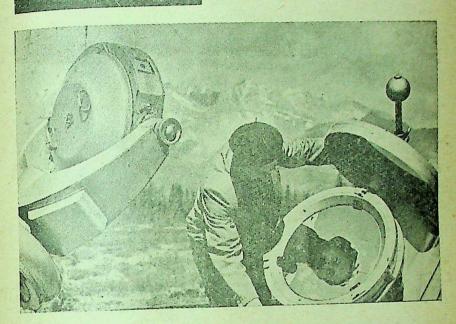
शताब्दीके मोड़का अख़बार

प्रेमनाथ चतुर्वेदी । 'शताब्दीके मोड़का अख़बार' केवल खबरवाहक नहीं होगा। उसमें खबरें होंगी अवश्य, परन्तु विशद व्याख्यासहित। उसमें 'क्या' कम होगा, पर 'कैसे' और 'क्यों' अधिक। 'समाचार पत्र' के जीवनमें जो बातें गत तीन-सौ वर्षमें नहीं हुईं, वे आगामी ३० सालमें हमारे सामने आ जायेंगी। यह परिवर्तन तीन दिशाओंमें परिलक्षित होंगे—पाठक, पत्रकार और प्रेस। पाठकको कब और कैसा समाचार-पत्र पढ़नेको मिलेगा? समाचार-पत्रमें काम करनेवाले पत्रकारोंको किन-किन परिस्थितियोंमें कैसे, कैसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कितना काम करना पड़ेगा ? मशीनी प्रगतिको देखते साधनोंके प्रयोगके आधारपर प्रेसका भावी स्वरूप कैसा होगा ?— इन सब बातोंपर समष्टि और सम्यक् रूपसे विचार करनेके बाद ही हम शताब्दीके मोड़के अखबारकी परिकल्पना कर सकते हैं।

सर्वप्रथम पाठककी माँगपर विचार कर लें। समाचार-पत्रका भावी पाठक रेडियोका श्रोता और दूरदर्शक (टेलीविज़न) का प्रयोगकर्ता होनेके साथ-साथ आजसे कहीं अधिक प्रबुद्ध और सजग होगा। खबरोंके बड़े-बड़े शीर्षक उसे आकर्षित नहीं करेंगे, क्योंकि अधिकांश समाचार तो उसके लिए बासी हो चुके होंगे। विशेष घटना-चित्र भी वह दूरदर्शक (टेलीविज़न)पर देख चुका होगा। ऐसी स्थितिमें वह समाचार-पत्र तब ही पढ़ेगा जब उसमें कुछ विशेषता होगी। इस विशेषताके लिए समाचार-पत्रको विचारपरक, क्षेत्रीय समस्याओं और जनहितकी ओर ध्यान देनेवाला बनना होगा। भावी प्रबुद्ध पाठक प्रचारकके स्थानपर विचारक पत्रको अधिक मान्यता देगा। निर्भीकतासे न्यायका समर्थन करनेवाले समाचार-पत्र ही उसकी कसौटीपर खरे उतरेंगे। पाठकके पास समयकी कमी होगी, इसका ध्यान रखते हुए पत्रका स्वरूप और सम्पादन बड़ा ही व्यवस्थित होगा। आज जैसे कोई-कोई समाचार-पत्र प्रथम पृष्ठपर कुछ मुख्य समाचारोंका संकेत दे देते हैं, उससे आगे काम नहीं चलेगा, पाठककी सुविधाके लिए किसी-न-किसी पृष्ठपर समाचारोंकी ही नहीं विज्ञापनोंकी वर्गीकृत सूची भी देनी होगी। यही नहीं, समाचारके पृष्ठ भी निश्चित होंगे कि किस प्रकारकी बात किस पृष्ठपर मिलेगी। इसके साथ ही वह अपने पत्रको सब प्रकारसे सुन्दर और सुपाठ्य देखना चाहेगा।

कुछ लोगोंको यह भय है कि रेडियो और दूरदर्शक (टेलीविज़न) की प्रतिद्वन्द्विताके कारण समाचार-पत्रोंका प्रभाव शताब्दीके अन्त तक बहुत कम हो जायेगा। यह कोरा भ्रम है। पहली बात तो यह है कि जन-संचारणमें रेडियो, टेलीविज़न और समाचार-पत्र एक दूसरेके पूरक हैं, प्रतिद्वन्द्वी नहीं। सबके अलग-अलग क्षेत्र और स्वरूप भिन्न हैं। पाठक, श्रोता और दर्शकका भेद जब-तक रहेगा तब-तक किसी पक्षको कोई भय नहीं। प्रबुद्ध व्यक्ति लिखितको अधिक मान्यता देता है, तथा देता रहेगा। फिर पाठक अपनी इच्छा और रुचिके अनुसार अपनी सुविधानुसार अपनी चीज़ पढ़ता है। अनगिनत समाचार और बहु प्रकारके विचारोंके पुंजसे मनोनुकूल सामग्रीको चुनकर पढ़नेकी स्वतन्त्रता उसको समाचार-पत्रमें ही मिलती है। पाठक समाचार-पत्रकी कतरनका भविष्यमें प्रयोग कर सकता है। व्यक्तिकी यह वृत्ति समाचार-पत्रके लिए संजीवनी बनी रहेगी।

पाठककी इन माँगोंकी पूर्तिके लिए समाचार-पत्रमें काम करनेवाले पत्रकारोंको अपने पत्रका विशेष 'व्यक्तित्व' बनाना होगा। इस व्यक्तित्व-निर्माणके लिए उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाचारोंके चयन, ज्ञानवर्धक विश्लेषण तथा पाठकके निकटकी समस्याओं पर विशेष ध्यान देना होगा। शताब्दीके मोड़का समाचार-पत्र कवल मनोरंजनका साधन न होकर ज्ञानके साधारणीकरणका माध्यम भी होगा। जापानका प्रमुख दैनिक आशाही शिमबुन आज भी अपने पाठकोंको ज्ञान-विज्ञानकी उच्चतम शिक्षा देनेका प्रयास करता है। हमारा भावी समाचार-पत्र सामान्य पाठककी ज्ञान-पिपासाको शान्त करनेका सरल और सस्ता साधन बनेगा।

जैसा हमने ऊपर कहा है कि प्रबुद्ध पाठक मामूली समाचारसे सन्तुष्ट न होगा। उसे 'कैसे और क्यों' के प्रश्नोंका उत्तर चाहिए ही। आजकल भी इन प्रश्नोंका कभी-कभी और कहीं-कहीं उत्तर मिल जाता है, पर सामान्य रूपसे नहीं। १९६७ के अगस्त-सितम्बर मासमें उत्तर भारतके विभिन्न भागोंमें बाढ़ और वर्षाका प्रकोप तथा बाहुल्य रहा। उनसे विनाश भी हुआ। भावी पत्रकारको पाठककी तुष्टिके लिए यह जानकारी देनी होगी कि वर्षा और बाढ़ आनेका कारण क्या था; सिंचाईकी विभिन्न व्यवस्थाओंमें कहाँ कमी रही और क्यों, उन सबके लिए उत्तरदायी कौन है तथा भविष्यमें क्या-क्या सुधार किये जा सकते हैं। वह यह भी जानना चाहेगा कि बाढ़ और वर्षाका समाज पर क्या असर पड़ा। उसके लिए द्रुतगतिसे विश्वस्त आँकड़े जुटाने होंगे और साधिकार जानकारी देनी होगी। पाठकके महत्त्वको ध्यानमें रखकर उसके विचारोंको प्रधानता देनेकी प्रवृत्ति भी समाचार-पत्र अपनायेंगे। ऐसे समाचार-पत्र प्रभावशाली और लोकप्रिय भी बहुत होंगे, सन्देह नहीं।

मनुष्य सौन्दर्य-प्रमी है और रहेगा। अतः समाचार-पत्रके आकर्षक बनाये जानेकी कलाका विकास अपनी चरम सीमापर पहुँच जायेगा। रेखा-चित्र, फ़ोटो, नक़्शे, व्यंग्य-चित्र मुख्य आकर्षण होंगे। रंगीन चित्रोंका प्रयोग सामान्यतः करना होगा। कहीं-कहीं छपाई भी रंगीन करनी होगी, किन्तु काग़ज़-की धरती सफ़ेद ही रहेगी। परिवारके सभी लोगोंके लिए लाभदायक बनानेकी दृष्टिसे पत्रकी सामग्रीका इस प्रकार वर्गीकरण करना होगा कि स्त्री, पुरुष और बालक अपनी-अपनी आवश्यकतानुसार अपने कॉलम और पृष्ठको तुरन्त ही पहचान सकें।

कार्यालयमें बैठकर सम्पादन-कार्य करने-वाले व्यक्तिपर समाचारों और विचारोंकी विविधताके साथ-साथ उनकी संख्याका इतना अधिक भार होगा कि आजकी तुलना-में भविष्यके पत्रकारोंकी कार्य-प्रणाली कुछ भिन्न होगी। सम्पादन-कार्यको अधिक सुचारु ढंगसे चलानेके लिए समाचारोंका वर्गीकरण पहले ही विभिन्न विभागोंमें कर दिया जाया करेगा। तीन दशक बाद फ़ोटो, समाचार और विचार प्रस्तुत करनेवाली एजेन्सियोंकी संख्या बहुत अधिक हो जायेगी तथा उनके प्रेषणके साधन इतने भिन्न होंगे कि कार्या-लयके पत्रकारको प्रति क्षण बड़ा ही सतर्क, जागरूक और प्रत्युत्पन्नमति होना होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाकी टाकी, वायर रेकार्टर और डाटेल प्रणालीके प्रयोगसे संवाद आनेकी गति आजके टेलीप्रिण्टरोंसे कई गुनी अधिक होगी। उदाहरणके तौरपर २७ जनवरी १९६६ को पेरिस-लन्दन-वाशिंगटनके बीच डाटेल प्रणालीके प्रयोगसे संवाद-वाहनकी गति २० गुनी अधिक हो गयी। भविष्यमें तो वह गति १०० गुनी तक पहुँच सकती है। फिर संचार-उपग्रहके सफल और अधिकाधिक प्रयोगसे संसारके हेरफेरके समाचार तथा चित्र और भी द्रुतगतिसे आने लगेंगे। इस प्रकारके प्रयोग जारी हैं कि समाचार-पत्रके लिए सामग्री जुटाने और उसका वर्गीकरण करनेमें कम्प्यूटरोंका इस्तेमाल किया जा सके। सम्पादकीय विभागमें इलेक्ट्रोनिक तथा विचारक मशीनोंका परीक्षण जारी है। पर अधिक व्ययसाध्य होनेके कारण बड़ेसे बड़े समाचार-पत्र भी उनका उपयोग न कर पायेंगे। परन्तु यह सम्भव है कि समाचार-एजेंसियोंके अनुरूप ही सम्पादकीय सामग्रीका इलेक्ट्रोनिक मशीनों-द्वारा संग्रह और वर्गीकरण करनेवाली संस्थाएँ संसारके विभिन्न भागोंमें स्थापित हो जायेंगी जो शताब्दीके मोड़के अखबारको मिनिटोंके अन्दर वांच्छित सामग्री देनेकी क्षमता रखेंगी। इस प्रकार मशीनी प्रयोगसे सम्पादकीय काम सरल हो जायेगा, जटिल भी और अति गतिशील भी।

अब आती है प्रेसकी स्थिति। इस ओर विज्ञानकी प्रगति हमें गतिकी तीव्रताकी ओर ले जा रही है। समाचार-पत्रके लिए सामग्री आने और पाठकको मिलनेके समयमें जितनी कमी हो सके उतना अच्छा। प्रेस-कार्यमें टेली-टाइप सेटिंग तथा फ़ोटो सेटिंग प्रणालीसे अधिक गति और शुद्धता आनेकी सम्भावना है। प्रेस टाइपकी गति अभी तो १८० गुनी तक बढ़ गयी है। भविष्यमें और बढ़ेगी। अब तो दूर-दूर स्थानोंसे एक ही समाचार-पत्रके एक ही समयपर प्रकाशित होनेवाले संस्करणके लिए एक स्थानपर ही पृष्ठ तैयार हो जाते हैं। तैयार पृष्ठोंको इलेक्ट्रोनिक संचारण प्रणालीसे दूसरे स्थानोंपर भेज दिया जाता है। आजकल संसारके १२ समाचार-पत्र इस प्रकार पृष्ठोंको भेज अनेक स्थानोंसे अपने संस्करण प्रकाशित करते हैं। सबसे पहले रेडियोसे समाचार-पृष्ठ भेजनेका सफल प्रयोग जापानी-पत्र आशाही शिमबुनने एक जून १९५९ को किया था। अब तो युरॅप और अमरीकाके अनेक पत्र इस प्रणालीका उपयोग करते हैं। इसी प्रकार टेलीफ़ोन केबिलसे समाचार-पत्रके पृष्ठोंको समुद्रपार भेजनेका प्रथम प्रयोग २३ मार्च १९६५ को किया गया। उस दिन लन्दनमें तैयार किया गया पत्र अमरीकाके विलमिंगटन नगरमें प्रकाशित हुआ। वह पत्र था लार्ड टामसनका ईवनिंग पोस्ट। प्रेसके अन्य विभागोंमें भी कम्प्यूटरों तथा अन्य वैज्ञानिक उपकरणोंका प्रयोग कार्यक्षमताको कल्पनातीत बढ़ा देगा। इस सब प्रगतिको देखते हुए यह कहा जा सकता है कि शताब्दीके मोड़का अखबार वास्तवमें अद्यतन होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतमें क्या होगा ? यह तो सर्व विदित है कि हम प्रयोगात्मक विज्ञानमें उनके देशोंसे पिछड़े हुए हैं। फिर भी निराश होनेकी कोई बात नहीं। हमने प्रगति की है और शताब्दीके मोड़ तक अधिक प्रगति करनेकी क्षमता हममें आ रही है। संसारके विकासशील देशोंकी प्रगति हमें उस ओर बढ़नेको बाध्य करेगी। यदि भारत आगामी दशकमें अपनी खाद्य-समस्याको सुलझा लेगा, तो उससे अगले दो दशकमें हमारी प्रगतिके चरण वामनके डगोंके अनुरूप होंगे। तब शताब्दीके मोड़पर अनेक भारतीय पत्र प्रेसकी अद्यतन सुविधाओं और वैज्ञानिक उपकरणोंका प्रयोग करने लगेंगे। समाचार-पत्र अधिक सुन्दर, विचार-प्रधान और सुव्यवस्थित होंगे। प्रबुद्ध पाठककी तुष्टि करनेकी क्षमता उनमें होगी। दिल्लीसे किसी-न किसी प्रेस मालिकका अँगरेजीमें अन्तरराष्ट्रीय समाचार-पत्रका प्रकाशन जारी हो जायेगा। कोई उद्योगपति हिन्दीमें ऐसा राष्ट्रीय दैनिक पत्र प्रकाशित करेगा जिसके रेडियो संचार-प्रणालीसे उत्तर भारतकी विभिन्न राजधानियोंमें एक साथ समान संस्करण प्रकाशित हुआ करेंगे। क्षेत्रीय भाषाओंके पत्र संख्यामें अधिक होंगे और उनकी प्रगति वैज्ञानिक ढंग पर होगी। सम्भवतः उनमें-से अनेक नागरी लिपिका प्रयोग करने लगें। आजकी तुलनामें शताब्दीके मोड़का अखबार हर दृष्टिसे सुन्दर, वर्गीकृत, तुष्टिकारक और शिक्षाका सरल माध्यम होगा।

■ ■

अर्जुन मुहल्ला, पाठशाला मार्ग,
मौजपुर, शाहदरा, दिल्ली-३२

पी० के० बागला एण्ड कं०

इण्डियन फाइबर डीलर्स

६, क्लाइव रो

कलकत्ता-१

फोन : २२-०८२१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
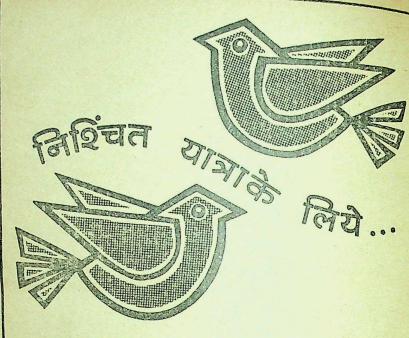
पी एन बी
ट्रैवलर्स चैक्स्

यात्रा पर निकलते समय पी एन बी ट्रैवलर्स चैक लेलें। कोई खतरा नहीं। चिंता नहीं। बेखटके यात्रा कीजिए। गुम जाने पर ट्रैवलर्स चैक पुनः प्राप्त किये जा सकते हैं। विभिन्न मूल्यों में उपलब्ध।

पी एन बी ट्रैवलर्स चैकों पर कोई कमीशन नहीं लगता।

पंजाब नैशनल बैंक

PR-PNB-6716-H-3

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी शताब्दी के नाम

हिन्दी-नवलेखनके एक और
समर्थ हस्ताक्षरकी
उत्तेजक कृति
नये साहित्यके प्रत्येक प्रेमी पाठकके लिए
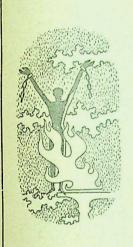
दूधनाथ सिंहकी एक साथ पहली बार चुनी हुई ४३ कविताओं, २ कहानियों और ६ चिन्तनात्मक निबन्धोंका संग्रह है यह—'अपनी शताब्दीके नाम'। कविताएँ ऐसी जो कविके अकेले अनुभवोंसे निःसृत होकर अन्दर और बाहरके तमाम नैतिक अनुमानोंको काटती हुई आजके संसारमें मनुष्यकी अनधिकृत स्थितिको उसके उसी रूपमें व्यक्त करती हैं। कहानियाँ तो मर्मस्पर्शी हैं ही, चिन्तनात्मक निबन्धोंमें सृजन-सम्बन्धी पक्षोंपर नितान्त मौलिक ढंगसे सोचने-विचारनेका भी लेखकका एक सार्थक प्रयत्न है। 'अपनी शताब्दीके नाम' जहाँ रचनाकारकी उपलब्धिका एक निजी दस्तावेज़ है वहीं उसके सृजनके अन्तरंग एकान्त तक पहुँचनेकी अतृप्त अग्रिम छटपटाहट भी है।

मूल्य चार रुपये

भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रस्तुत

भारतीय ज्ञानपीठ
प्रधान कार्यालय : कलकत्ता
प्रकाशन कार्यालय : वाराणसी
विक्रय-केन्द्र
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिनिधि संकलन
सिंहल कहानियाँ

सम्पादक
भदन्त आनन्द कौसल्यायन

अनुवादक
भिक्षु सावंगी मेधंकर

सागर-पार किन्तु भारतके बहुत निकटकी भूमि—सिंहलमें लिखी गयी आधुनिक कहानियोंका यह संकलन प्रस्तुत है हिन्दीमें पहली बार ! सिंहलके सब इक्कीस समकालीन यशस्वी कथाकारोंकी चुनी हुई नयी कहानियाँ हैं ये : कहानियाँ भी वही जो सिंहलके सुधी पाठकों और मर्मज्ञ समीक्षकों-द्वारा प्रतिनिधि कही-मानी गयीं; और जो सिहल-कथाकी विविध प्रवृत्तियोंको साधिकार रेखांकित भी करती हैं।

यह संकलन हिन्दीके कथा-प्रेमी पाठकोंके लिए तो अनिवार्य है ही, उन अध्येताओंके लिए भी है जो विभिन्न भाषाओंकी साहित्यिक प्रगतिके प्रति सहज ही जिज्ञासु रहते हैं। मूल्य ५.००

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

विक्रय-केन्द्र
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग
दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ खोये हुए बम ॥ १७ जनवरी १९६६ को उस रहस्यमय रोमांचक दुर्घटनाके दिन भी स्पेनके दक्षिणी पूर्वी तट पर स्थित विलारिकोज गाँवके लोग खेतोंके काममें लगे थे। दिनके लगभग दस बजकर बाइस मिनिटपर एक भयानक विस्फोटसे सारा गाँव काँप गया। सभीकी भयभीत आँखें आकाशकी ओर उठ गयीं। दो वायुयान जिनमें एक अमरीकी बी-५२ बमवर्षक था और दूसरा के-सी-१३५ जेट टेंकर, जलते हुए धरतीकी ओर तीव्रगतिसे गिरते आ रहे थे। ये वायुयान ईंधन भरनेके लिए आपसमें सम्बन्ध स्थापित करते समय टकराकर ध्वस्त हो गये थे। इनके जलते हुए भाग भयसे स्तम्भित विलारि-कोज-निवासियोंकी ओर गिरने लगे।

३ बम और ६ हज़ार आँखें

■

सुरेन्द्रनाथ सक्सेना / मृत्युकी घोषणा सुनाते हुए इन विमानोंके टुकड़े जब धरतीपर दिल हिला देनेवाली आवाज़के साथ गिरे, स्त्रियों और बच्चोंकी चीखें निकल गयीं। पलक झपकते ही लोगोंने आश्चर्यसे देखा कि अनेकों खेत क्षतिग्रस्त हो गये हैं, लेकिन किसी भी ग्रामवासीको खरोंच तक नहीं आयी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपर हवामें विविध रंगोंके पेराशूट उतरा रहे थे। इनमें-से कुछ हवाके बहावके साथ सागरतटकी ओर जा रहे थे और कुछ गाँव-की धरतीके नज़दीक आते जा रहे थे। पैरा-शूटसे उतरे तीन घायल आदमियोंको शीघ्र ही अस्पताल भेज दिया गया। उसी समय पासके पोले मेयर्स गाँवकी पूर्वी सीमापर एक टमाटरके खेतके समीप स्थित पत्थरकी दीवारपर कोई भारी वस्तु कर्णभेदी धमाके-के साथ गिरी। आस-पासके मकानोंकी शीशे-की खिड़कियाँ इस धमाकेसे चूर-चूर हो गयीं। मकानके स्वामी घटनास्थलपर पहुँचे। उन्होंने मिट्टी फेंक-फेंककर उस अज्ञात वस्तु-की अग्नि-पिपासा शान्त की और पैरोंकी ठोंकरें मार-मारकर उसे खेतसे दूर कर दिया। यदि उस समय उन्हें यह पता चल जाता कि वे जिस वस्तुपर ठोकरें मारनेका साहस कर रहे हैं, वह प्रलयंकारी हाइड्रोजन बम (उदजन बम) हैं तो शायद भयके मारे उनके हृदयकी गति ही रुक जाती।

सम्पूर्ण विश्वको सर्वनाशमें झोंक देनेकी शक्ति रखनेवाली इस महान दुर्घटनाकी सूचना शीघ्र ही अमरीकाकी १६ वीं वायुसेनाके मेजर जनरल डेल्मर-विल्सनको मिल गयी। वे इस दुर्घटनाके अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्वको भली प्रकार समझते थे क्योंकि उन्हें यह रहस्य ज्ञात था कि बी-५२ बमवर्षकमें चार हाइड्रोजन बम रखे थे। इन बमोंका शीघ्रसे शीघ्र पता लगाकर उन्हें वापस लाना परम आवश्यक था। विल्सनने तत्काल ही आण-विक दुर्घटनाओंपर नियन्त्रण करनेवाले दल-को वायुयान-द्वारा घटनास्थलपर पहुँचनेका आदेश दिया।

स्पेनकी सरकारने अमरीकाको महत्त्वपूर्ण हवाई अड्डे और अपनी वायु-सीमामें बम-वर्षकोंको उड़नेकी सुविधाएँ दे रखी हैं। इस दुर्घटनासे स्पेनकी जनतापर अमरीका विरोधी प्रभाव पड़नेकी आशंका थी। अतः अमरीकी सरकारने हाइड्रोजन बमोंको अत्यन्त द्रुतगतिसे खोज निकालनेके लिए पूरी शक्ति लगा दी। बमवर्षक बी-५२ उन वायुयानोंमें-से था जिनका एक दल सदैव परमाणु-शस्त्रों-से सुसज्जित होकर अमरीका तथा उसके मित्र-देशोंकी रक्षाके लिए आकाशमें चक्कर लगाता रहता है। इस प्रकार यह दुर्घटना अमरीकी रक्षा-व्यवस्थाकी कटु आलोचना-का कारण भी बन सकती थी।

अमरीकाको यह भी भय था कि कहीं खोये हुए हाइड्रोजन बम या उनके कोई भाग कम्युनिस्ट देशोंके गुप्तचरोंके हाथों न पड़ जायें। इसलिए दुर्घटनास्थलके चारों ओर कड़ा पहरा बैठा दिया गया। स्पेनकी सर-कारको सही तथ्योंकी सूचना भी दे दी गयी।

• हाइड्रोजन बमोंकी खोज

विलारिकोज़ नगरके किन्हीं अज्ञात स्थानों-पर पड़े वे विनाशकारी चार बम जहाँ एक ओर स्पेन तथा अमरीकाका सिर-दर्द बने हुए थे वहीं दूसरी ओर स्थानीय जनतामें बुरी तरह भय व्याप्त होता जा रहा था। हाइड्रोजन-बमोंका विस्फोट किसी भी क्षण उनके जीवनको समाप्त कर सकता है, यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोच-सोचकर लोगोंकी जान निकली जा रही थी।

दुर्घटनाके बाद शीघ्र ही स्पेनी पुलिस घटनास्थलपर पहुँच गयी। धरतीपर गिरे वायुयानोंके टुकड़ोंको चारों ओरसे रस्सियों-द्वारा घेर दिया गया। स्पेनी और अमरीकी उच्च अधिकारियों तथा परमाणु-विशेषज्ञोंने हाइड्रोजन बमोंकी रोमांचकारी खोज पूरे-ज़ोर-शोरके साथ शुरू कर दी। हेलीकोप्टर्सकी भी सहायता ली गयी। खोज पार्टीको तीन दलोंमें बाँट दिया गया। हर दलने भिन्न-भिन्न दिशाओंमें अपना काम प्रारम्भ किया। खोज-कार्य सरल न था। सैकड़ों एकड़ भूमिमें विभिन्न फ़सलें लहरा रही थीं। कुछ भूभाग ऐसा भी था जो गड्ढों, कुओं, नहरों और पुरानी सुरंगोंसे घिरा था। किन्तु इन सभी कठिनाइयोंकी चिन्ता न करते हुए पसीनेसे लथपथ खोजकर्त्ताओंने एक-एक इंच भूमि छान मारी। शीघ्र ही स्पेनी पुलिस दलको भूमिपर पड़ी यानकी पूँछसे कुछ दूरीपर एक हाइड्रोजन-बम पूर्ण सुरक्षित रूपमें मिल गया। खोजियोंका उत्साह बढ़ा। तीन-चार घण्टोंके अथक परिश्रमसे दूसरा बम गाँवके समाधिस्थलके समीप मिल गया। तीसरा बम पोलेमेयर्स गाँवकी पूर्वी सीमापर खोज लिया गया।

● रेडियोसक्रियताका संकट :

तीन बम तो मिल चुके थे पर एक अन्य समस्या उत्पन्न हो गयी थी। दो हाइड्रोजन बमोंके विस्फोटक खोल तोड़कर बाहर
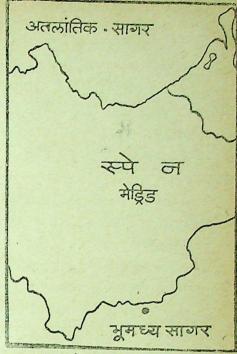
● पोलेमेयर्स विलारिकोज—सागरका वह स्थान जहाँ बम गिरा।

निकल गये थे। इसके फलस्वरूप अन्दरूनी आणविक सामग्रीके किनारे भी बाहर आ गये थे और विस्फोटने उनका वाष्पीकरण कर दिया था। ग़नीमत यही थी कि अभी-तक अणुओंका विस्फोट न होनेके कारण आणविक शक्तिका महाविनाशकारी प्रादुर्भाव न हो सका था। बमोंकी जो सामग्री बाहर-बिखर गयी थी उससे केवल एल्फ़ा रेडियेशन-की सम्भावना थी। एल्फ़ा किरणोंकी सीमा अणुके टूटनेके बाद उसके केन्द्रसे विसर्जित होनेवाली अत्यन्त घातक गामा किरणोंकी अपेक्षा अत्यन्त कम होती है। एल्फ़ा किरणें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव खालको भी भेदनेमें असमर्थ होती हैं। इन बमोंमें प्रयुक्त होनेवाला प्लूटोनियम सुरक्षाके साथ हाथमें उठाया जा सकता है। वायुके सम्पर्कमें आनेपर यह अघुलनशील हो जाता है। इसे हटानेके लिए शरीर और भूमिको पानीसे अच्छी तरह धो देना ही पर्याप्त होता है। अतः दुर्घटनास्थलको पूर्ण रूपसे शुद्ध बनानेकी दृष्टिसे सबसे पहले विशेषज्ञोंने एल्फ़ा किरणोंकी उपस्थितिका पता लगानेवाले यन्त्र-द्वारा रेडियो-सक्रियताकी सीमाको निश्चित किया। धूलको उड़नेसे रोकनेके लिए पानीसे भरे १६ ट्रकों-द्वारा प्रतिदिन हज़ारों गैलन पानी भूमिपर डाला गया। इसके पश्चात् रेडियो सक्रिय धरातलकी ऊपरी मिट्टीको खुरचकर आणविक कचरा दफ़नाये जानेवाले स्थानको भेज दिया गया। रेडियो सक्रिय भूमिपर उगी फ़सलोंको काटकर उनके स्वामियोंको पूरा मूल्य देनेकी व्यवस्था कर दी गयी।

• चौथा हाइड्रोजन बम रहस्यके गर्भमें:

लेकिन अभी चौथा हाइड्रोजन बम रहस्य ही बना हुआ था। इसकी खोजके लिए बाहरसे हज़ारों आदमियोंको बुलाया गया। वायुयानों-द्वारा घटनास्थलके धरातलके छायाचित्र खींचकर पूरी नाप-तौलके साथ उसकी रूप-रेखा बनायी गयी। विशेषज्ञों-द्वारा बारह मील लम्बे और आठ मील चौड़े घटनास्थलकी चप्पे-चप्पे भूमिका निरीक्षण किया गया। खोजियोंने बारह बार विस्तृत खोज की पर अन्तमें असफलता ही मिली।

जिन लोगोंसे दुर्घटनाका आँखों-देखा वर्णन सुना गया था उनमें मछुआरा फ़ान्सिस्को सिमो ओटर्स भी था। उसने तटसे क़रीब साढ़े पाँच मील दूर सागरके वक्षपर हाइड्रोजन-बमको पैराशूट सहित गिरते देखा था। विशेषज्ञोंका अनुमान भी यही था कि हाइड्रोजन-बम पैराशूट-द्वारा हवाके साथ बहता हुआ समुद्रमें गिरा होगा। अतः हाइड्रोजन-बमकी खोजके लिए सागरके अन्धकारपूर्ण अथाह तलमें जाना ही निश्चित किया गया।

• भयावने सागर-तलकी रोमांचकारी खोज :

इस कार्यके लिए अमरीकासे 'एल्विन' नामकी विशेष पनडुब्बी आयी। यह बाइस फ़ुट लम्बी पनडुब्बी ७५०० फ़ुट तक गहरे पानीमें जानेकी शक्ति रखती थी। रियर एडमिरल ग्वेस्टने वायुयान-द्वारा विभिन्न ऊँचाइयोंपर उड़कर ध्वस्त वायुयानके सागर तलमें पाये जानेवाले टुकड़ोंके स्थानोंका अध्ययन कर सागरका १२० वर्ग मील क्षेत्र खोजके लिए निर्धारित किया। चार सुरंग हटानेवाले जलयान अपने यन्त्रों-द्वारा वायुयानके छोटे-से छोटे भागको सागर तलसे निकालनेमें जुट गये।

मिजार और ड्यूटन नामके विशेष खोजोंमें प्रयुक्त होनेवाले जलयान अपने विशेष केमरे तथा अन्य यन्त्रों-द्वारा अथाह गहराईको भेदकर सागर-तलके चित्र खींचने लगे। इन चित्रोंके आधारपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सागर-तलका प्लास्टिक निर्मित नमूना बनाया गया। इस नमूनेसे पता चला कि सागर-तल बड़ी ऊबड़-खाबड़ तथा नौ हज़ार फ़ुट तक गहरी घाटियोंसे युक्त है। सागर-तलसे प्राप्त बम-वर्षक यानके टुकड़ोंके स्थानोंके अनुसार अन्वेषणका क्षेत्र २७.३३ वर्ग मीलमें सीमित कर दिया गया। खोज कार्यकी योजनाको विभिन्न गहराइयोंके अनुसार निश्चित किया गया। यद्यपि बम-अन्वेषणके कार्यमें अनेकों आणविक शस्त्रों तथा सागर विज्ञानके विशेषज्ञ, १३० फ़्राग मेन, आधुनिकतम साधनोंसे सुसज्जित जलयान तथा अनेकों पनडुब्बियाँ भाग ले रही थीं फिर भी यह कार्य उतना ही दुष्कर था जितना कि सघन अन्धकारमें किसी विकट वनमें पड़ी सुईको टार्चकी सहायतासे ढूँढ निकालना।

• मृत्यु भयसे काँपते ग्रामवासी :

एक ओर तो अपने प्राणोंकी बाज़ी लगाकर अन्वेषणकर्त्ता सागर तलको छान रहे थे, दूसरी ओर दुर्घटनास्थलके समीपवर्ती ग्रामवासियोंमें यह विश्वास घर करता जा रहा था कि वे रेडियोसक्रियताके शिकार हो चुके हैं और किसी भी क्षण यमदूत उनका द्वार खटखटाने धमक सकते हैं। गाँवोंकी फ़सलोंको शहरोंमें खरीदनेके लिए कोई तैयार नहीं होता था। कुछ लोगोंने अपनी सारी सम्पत्ति बेंचकर मृत्यु-भयसे दूसरे स्थानोंके लिए प्रस्थान कर दिया था। अनजान कोनेमें पड़ा हाइड्रोजन-बम किसी भी समय फूटकर प्रलयंकारी दृश्य उपस्थित कर सकता है—यह विचारकर साधारण व्यक्तियोंकी भूख, प्यास और नींद तक उड़ चुकी थी।

अमरीका और स्पेनकी सरकारें इन भयोंका निवारण करनेके लिए हर प्रकारके प्रयत्न कर रही थीं। अमरीकी सैनिक घटनास्थलपर उत्पन्न गेहूँ, टमाटर आदिको पानीसे धोनेके बाद अपने भोजनमें प्रयुक्त कर शंका-समाधान करनेमें लगे थे।

पश्चिमी जर्मनीमें स्पेनसे आयात की गया फ़सलोंको उनकी रेडियो सक्रियताकी जाँच गीगर काउण्टर्ससे करनेके बाद स्वीकार किया जाता था। इस तरह चारों ओर छायी बेचैनी, भय और निराशाके विरुद्ध भी अमरीकी सरकार संघर्ष कर रही थी।

• जब खोये हुए पैराशूटने सागर तल-पर आँख मिचौनी खेली :

१५ फ़रवरीको एल्विन तथा एल्यूमिनाट पनडुब्बियोंने संकटसे भरे अन्धकारपूर्ण सागर-तलमें बम खोजना शुरू किया। मछुआरे सिम्मों-द्वारा प्राप्त सूचनाके अनुसार निर्दिष्ट सागर-तलकी भली प्रकार जाँच करनेपर भी बमका कोई चिह्न भी न मिला। नये सूत्रोंके अनुसार अन्वेषण-क्षेत्रको एक हज़ार वर्ग ग़ज़ तक सीमित कर दिया गया। प्रत्येक पनडुब्बीने नित्य एक वर्ग ग़ज़ सागर-तलकी जाँच की। एल्यूमिनाट पनडुब्बीको (जिसमें टेलीफ़ोन, पानीके अन्दर सर्चलाइट-की व्यवस्था, दो टेलीवीजन केमरे, सोनार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि थे।) सागर-तलमें स्थित बेलनाकार पहाड़ियोंमें खोज करनेका कार्य सौंपा गया। एल्विन पनडुब्बीको अत्यधिक ढलवाँ दर्रोंमें बमकी खोजके लिए भेजा गया।

इन पनडुब्बियोंने सागरके गर्भसे बी-५२ बम-वर्षकके कुछ अंश तथा तटसे तीन मील-की दूरीपर पंख ढूँढ़ निकाले। अनेकों सप्ताहों तक पनडुब्बी चालक सागर-तलकी दुर्गम पहाड़ियों, खतरनाक दर्रों और ऊँची-नीची घाटियोंमें बमकी खोज करते रहे। इसके अतिरिक्त यह परीक्षा भी की जाती रही कि सागरकी मिट्टीमें रेडियो सक्रियता तो नहीं है। सौभाग्यवश अभी खतरनाक स्थिति नहीं आ पायी थी।

एक मार्चको 'एल्विन' जब दसवीं बार खोजपर निकली उसके चालक वेलिनटाइन विल्सनको सागर-तलपर एक जगह ऐसे चिह्न मिले जो किसी सिलेण्डर-जैसी वस्तुके धाराके साथ बहनेपर बने थे। लेकिन विल्सन सागरके ढलवाँ तलपर अपनी पनडुब्बीको धाराकी तीव्रताके कारण रोक न सका। तेरह दिनके उबा देने-वाले सतत प्रयत्नोंके बाद विल्सनको उपरोक्त चिह्नोंके पुनः दर्शन हुए पर दुर्भाग्य-वश पनडुब्बीकी बैटरी खत्म हो रही थी, विल्सनको ऊपर आना पड़ा। दो दिन परिश्रम करनेके पश्चात् विल्सनने एक बार फिर मनोवांछित चिह्नोंका पता लगा लिया। वह चिह्नोंका पीछा करता हुआ गहरे पानीमें उतरता चला गया। अन्तमें उसे किसी भारी वस्तुके चारों ओर लिपटा हुआ विशाल पैराशूट दिखाई दिया। प्रसन्नता-के अतिरेकसे विल्सन चीख पड़ा और उसने अपनी सफलताकी सूचना तत्काल एडमिरल ग्वेस्टको भेज दी।

पैराशूटमें लिपटी वस्तु एक पर्वतीय ढालपर सत्तर अंशके कोणमें पड़ी थी। सागरकी लहरका कोई भी धक्का उसे नीचे अथाह गहराईमें ढकेल सकता था। विल्सनने अत्यन्त सावधानीसे पनडुब्बीको पैराशूटके पास ले जाकर रोक दिया। सात घण्टे बाद एल्यूमिनाट उसका स्थान लेने आ गयी।

अब बमको अथाह गहराईसे निकाल-कर ऊपर लानेकी कठिन समस्या थी। दोनों ही पनडुब्बियोंमें बमको ऊपर लानेकी शक्ति नहीं थी। एल्विनमें एक मेकनीकी हाथ लगा था। सबकी आशाएँ इसीपर टिकी थीं। इस हाथके लौह पंजेमें एक नुकीला काँटा पकड़ा दिया। काँटेमें तीन हजार फ़ुट लम्बी पोली प्रोपाइलीनकी अत्यन्त पतली रस्सी सन्नद्ध थी। विल्सनने मेकनीकी हाथ-द्वारा पैराशूटसे पचास ग़ज़की दूरीपर लौह काँटेको गाड़ दिया। सागरकी सतह-पर इस रस्सीको एक पीपेसे बाँध दिया गया ताकि पैराशूटकी ठीक स्थितिका पता चलता रहे। इसके उपरान्त विल्सन मछली पकड़ने-वाले मज़बूत लोहेके काँटोंसे बंधी रस्सीमें दो सोनार ट्रान्सपोंडर्स (समुद्रमें अपनी स्थिति बतानेके लिए संकेत भेजनेवाले यन्त्र) लटका कर पैराशूटमें बाँधनेके लिए ले गया। लेकिन इस काममें बहुत जोखिम था। हलके धक्केसे ही हाइड्रोजन बम फूट सकता था अथवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय
ज्ञानपीठ
द्वारा
प्रस्तुत

डॉ० माताप्रसाद गुप्त
की
नवीनतम शोध-कृति

कुतब शतक और उसकी हिन्दुई

सुदीर्घ गवेषणा और महत्त्वपूर्ण शोध-उपलब्धियोंके सम्पुटमें, सूफ़ी प्रेमकाव्यका एक उत्कृष्ट नमूना उपस्थित करती है यह शोध-कृति। हिन्दीमें अपने ढंगकी यह अकेली रचना है और कदाचित् भारतकी अन्य भाषाओंमें भी। फ़ारसकी तथा अवधीकी भी अन्य सूफ़ी कथाओंसे एक अर्थमें यह सविशेष है: यह जीवनमें त्याग और बलिदानको अन्यतम महत्त्व देती है।

जो धारणा अबतक प्रकाशित सूफ़ी काव्य-साहित्यके आधारपर उसके सम्बन्धमें बनती रही उसमें यह संशोधनकी आवश्यकता प्रतीत करायेगी। विशेष द्रष्टव्य यह कि इसमें समस्त अप्रस्तुत विधान भारतीय जीवनसे लिया गया है। 'कुतबशतक और उसकी हिन्दुई' वास्तवमें एक शोधकृति है और साथके साथ भावी शोधकी भूमिकाकृति भी।

मूल्य ७.००

भारतीय ज्ञानपीठ
कलकत्ता :: वाराणसी
विक्रय-केन्द्र
३६२०।२१
नेताजी सुभाष मार्ग,
दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैराशूटमें पनडुब्बी फँस सकती थी। किन्तु विल्सनने खतरोंकी चिन्ता न करते हुए काँटे-को पैराशूटमें फँसा ही दिया। अब यदि वह अज्ञात वस्तु उस स्थानसे आगे बढ़ती, सोनार ट्रान्सपोडर्सके संकेतोंकी सहायतासे उस तक पहुँचा जा सकता था।

इसके उपरान्त वैज्ञानिकों-द्वारा हाइड्रोजन बमको बाहर निकालनेके उद्देश्यसे बनाया गया 'पूडले' नामक यन्त्र सागर-तल-पर पहुँचाया गया। इस यन्त्रके कई नुकीले और मजबूत पैर थे जो सरलतासे समुद्र-तलमें गड़ सकते थे। आधुनिकतम सोनार ट्रान्सपोडर्ससे यह सुसज्जित था। इसमें नाइलोनकी ३०० फ़ुट लम्बी तीन मज़बूत रस्सियाँ लगी थीं जिनके किनारोंपर अनेकों नुकीली उंगलियोंवाले काँटे थे।

एल्विनके मेकनीकी हाथने 'पूडले'की एक रस्सीको पैराशूटमें फ़ँसा दिया लेकिन तभी एक अनहोनी घटना हुई—पूडले सागर-तल-में लुढ़ककर गिर गया। एल्विन-द्वारा बारह घण्टे तक स्थितिको सुधारनेकी कोशिश होती रही पर हर बार रस्सियाँ आपसमें ही फँस-कर रह जातीं।

इसके बाद नवीनतम वैज्ञानिक उपकरणों-से युक्त 'मिजार' जलयानसे पूडलेकी सहायतासे हाइड्रोजन-बमको निकालनेका प्रयत्न किया। ट्रान्सपोंडर संकेतोंने धीमे-धीमे उस रोमांचपूर्ण कार्यको उचित रीतिसे सम्पन्न होते जानेकी सुखद सूचना देना प्रारम्भ किया। सभीके मुर्झाये चेहरे सफलताकी आशासे खिलने लगे। परन्तु कुछ ही क्षणों बाद बमको ऊपर खींचनेवाली मुख्य रस्सी टूट गयी और आशाओंपर सागरका नमकीन पानी फिर गया।

इस असफलताके कई दिनों बाद दो अप्रेल-को एल्विन पनडुब्बी पैराशूटको खोजनेमें सफल हो पायी। नवनिर्मित यन्त्र कर्वीको सागर-तलपर उतारा गया। तारोंसे नियन्त्रित किया जानेवाला यह अन्तर्सागरीय अन्वेषण यन्त्र ६६ फ़ुट ऊँचा, पाँच फ़ुट चौड़ा और तेरह फ़ुट लम्बा था। सागर-तलमें इसके सन्तुलनको स्थिर रखनेके लिए दोनों तरफ़ दो-दो टैंक बनाये गये थे। इसको चारों ओर गतिशील करनेके लिए तीन मोटर लगे थे। इसमें सोनार यन्त्र, टेलीविजन, केमरा और बमको जकड़नेके लिए शिकंजा लगा हुआ था।

● पैराशूट या सागरकी विशाल मकड़ी ?

बारह घण्टेकी कड़ी मेहनतके बाद कर्वी यन्त्र-द्वारा पैराशूटको पकड़नेमें सफलता प्राप्त की गयी। एल्विनपर बैठकर विल्सन सागर-तल-में स्थितिकी जाँच करने गया। जैसे ही पनडुब्बी पैराशूटके पास पहुँची वह अचानक खुल गया और 'एल्विन' उसके शिकंजेमें जकड़ गयी। पनडुब्बीमें बैठे दोनों चालकों-की जिन्दगी मृत्युके पंजेमें थी। विल्सनने बड़े जीवट और धैर्यका परिचय देते हुए एल्विन-को विशाल पैराशूटके जालसे एक-एक इंच करके धीरे-धीरे निकालना शुरू किया। पन्द्रह मिनिट तक विल्सनके बुद्धि-कौशल और पैराशूटके भयानक जालमें संघर्ष चलता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदाचार का तावीज़

हरिशंकर परसाई

परसाई—यानी सिर्फ़ परसाई ! जिनकी क़लमकी नोंक भीतर और बाहरकी विसंगतियों, झूठाचारों, पाखण्डों और सुन्दर मुखौटोंका बेलौस परदाफ़ाश करते कभी नहीं चूकती। और इसीलिए यह दावा करना ग़लत नहीं होगा कि 'सदाचारका तावीज़' हिन्दीके व्यंग्य-साहित्यमें अपने प्रकारकी अनूठी कृति है !

सब इकतीस व्यंग्य-कथाओंका संग्रह है यह 'सदाचारका तावीज़'। आकस्मिक नहीं होगा कि ये कहानियाँ आपको, आपके 'समूह' को एकबारगी बेतहाशा चोट दें, झकझोरें; और फिर आप तिलमिला उठें ! साथ ही आकस्मिक यह भी नहीं होगा जब यही कहानियाँ आपको अपने 'होने' का अहसास तो दिलायेंगी ही, ये विवश करेंगी कि औरोंके साथ मिलकर .खुद ही अपने ऊपर क़हक़हे भी आप लगायें ! हाँ, इन तीरमार कहानियोंका स्वर 'सुधार'का हरगिज़ नहीं, बदलनेका है; यानी सिर्फ़ इतना कि आपकी चेतनामें एक हलचल मच जाये ! मूल्य ३·००

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

३६२०/२१, नेताजी सुभाष मार्ग,

दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा। अन्तमें विजय विल्सनकी ही हुई। मुक्तिकी सूचना ऊपर पहुँचते ही हर्ष छा गया। ग्वेस्टने अपना जलयान ठीक उस स्थानपर ठहरा दिया जिसकी गहराईमें हाइड्रोजन बम पड़ा था। जलयान-द्वारा एक रस्सी नीचे फेंकी गयी जिसे विल्सनने मेकनीकी हाथ-द्वारा पैराशूटसे बाँध दिया। कर्वी यन्त्रको पैराशूटके और समीप पहुँचाकर उसकी रस्सी-द्वारा पैराशूटको फँसाया गया। कर्वी यन्त्रने पैराशूटसे आवृत्त वस्तुको ऊपर उठाना शुरू किया। उसी समय जलयानके टेलीविजन-द्वारा ज्ञात हुआ कि कर्वी यन्त्र भी पैराशूटमें बुरी तरह फँस गया है। बहुत प्रयत्न किये गये पर पैराशूटकी जकड़से कर्वी न छूट सका। अन्वेषण अधिकारी झुँझला उठे—यह पैराशूट है या सागरकी कोई विशाल मकड़ी?

तभी विल्सनने फिरसे साहस बटोरा और एल्विन पनडुब्बीको पैराशूटके समीप ले जाकर मेकनीकी हाथ-द्वारा टान्सपोडर्स लगा कर पैराशूटके ऊपरी भागको रस्सीसे बाँध दिया ताकि वह दुबारा खुलकर नया संकट न पैदा करे।

• पैराशूटमें छिपी वह रहस्यमय वस्तु क्या थी?

जलयानके भार उत्तोलक चक्रने घूमना शुरू किया और पैराशूटसे आवृत्त वह रहस्यमय वस्तु ऊपर आने लगी। अब भी सन्देह और द्विविधाका स्थान था। लहरोंसे उत्पन्न तनावके फलस्वरूप रस्सी न टूट जाये इसलिए उचित ऊँचाईपर पैराशूटको खींचकर गोताखोरोंको नीचे भेजा गया। जब गोताखोरोंने पैराशूटको उस अज्ञात वस्तुसे अलग किया उन्हें यह देखकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि वह खोया हुआ हाइड्रोजन-बम ही था। उन्होंने धातुकी मजबूत पहियोंसे बमको लपेटकर एक लोहेके तारसे बाँध दिया। शनैः-शनैः सफलताके साथ ऊपर खींच लिया गया।

• हाइड्रोजन बमोंका विस्फोट क्यों नहीं हुआ?

इसका रहस्य बताते हुए अमरीकी परमाणु विशेषज्ञोंने कहा कि हाइड्रोजन-बमोंकी आणविक सामग्रीका विस्फोट होनेके लिए यह आवश्यक है कि उसके चारों ओर रखे टी० एन० टी०-जैसे विस्फोटकका दबाव सभी तरफ़से समान रूपसे पड़े। यदि आकस्मिक धक्के या आग लगनेसे विस्फोटकसे उत्पन्न दबावमें ज़रा-सी भी असमानता आ जाती है तो असमान दबावके कारण आणविक शक्तिका प्रादुर्भाव नहीं हो सकता। यही कारण है जिससे अमरीकी हाइड्रोजन बमोंका विस्फोट उस समय तक असम्भव है जबतक कि पूर्व निश्चित प्रक्रियाके अनुसार सक्रिय करके उन्हें छोड़ा न जाये।

• दुर्घटनाका एक मूल्यांकन

चारों हाइड्रोजन बमोंको दुर्घटनाके दो माह उन्नीस दिन और बाइस घण्टेके रोमांचकारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

■ ■ माया दर्पण

श्रीकान्त वर्मा

'माया दर्पण'की कविताएँ भीड़से अलग—भाषा, लय और अनुभवके संसारमें एक नये क़िस्मकी खोज हैं। यह खोज कविताके आरम्भसे नहीं बल्कि अन्तसे शुरू होती है। एक पंक्ति जहाँ समाप्त होती है दूसरी वहीं नाटकीय जन्म लेती है! और इसका कारण यही—कि ये कविताएँ श्रीकान्त वर्माकी हैं—जो सभ्यतापर भी व्यंग्य करती हैं और असभ्यतापर भी!

'माया दर्पण'की कविताओंकी भाषा एक खतरनाक सम्भावनाओंवाली भाषा है जो हर चीज़को कविताकी सूलीपर चढ़ा सकती है; हर अनुभवको कविताके लिए शहीद कर सकती है!…और सारी विशिष्टताएँ छोड़ दें तो भी क्या इतना-भर काफ़ी नहीं कि 'माया दर्पण'की कविताएँ पढ़नेके लिए आप बाध्य हो जायें!

मूल्य ३.५०

भारतीय ज्ञानपीठ ■ ■

३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग
दिल्ली-६।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकटोंसे पूर्ण कठोर परिश्रमके बाद खोज निकाला गया। इस अभियानमें करोड़ों रुपये खर्च हो गये और खोज-कार्यमें लगे तीन हज़ार साहसी व्यक्तियोंकी छह हज़ार व्याकुल आँखें लगभग तीन माह तक प्रलयंकारी हाइड्रोजन-बमको सागरके तरल आलिंगनसे मुक्त करनेके स्वप्न देखतीं रहीं। ■■

सम्पादक, हिसार मिल पत्रिका
हिसार (हरियाणा)

Electrical & Mechanical Engineers
EVERYTHING SPARE PARTS.
A RELIABLE HOUSE FOR
INDIA MILLS STORES SUPPLY
Phone : 22-0753
14/2 Old China bazar street,
(2nd Floor)
CALCUTTA-1

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रकाशित हिन्दी कविताकी
तीन मानक कृतियाँ

अज्ञेय-द्वारा सम्पादित—

▪ तार सप्तक

गजानन माधव मुक्तिबोध, नेमिचन्द्र जैन, भारत भूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर, रामविलास शर्मा, अज्ञेय।

नया संवर्धित संस्करण। मूल्य ८.००

▪ दूसरा सप्तक

भवानी प्रसाद मिश्र, शकुन्त माथुर, हरिनारायण व्यास, शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय, धर्मवीर भारती।

प्रथम संस्करण मूल्य ४.००

▪ तीसरा सप्तक

प्रयागनारायण त्रिपाठी, कीर्त्ति चौधरी, मदन वात्स्यायन, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, विजयदेवनारायण साही, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना।

नया तीसरा संस्करण। मूल्य ६.००

भारतीय ज्ञानपीठ
विक्रय-केन्द्र
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक समर्पित महिला

मूल्य तीन रुपये

नरेश मेहताकी कहानियाँ

नयी हिन्दी कहानीके एक विशिष्ट कथाकार नरेश मेहताकी अद्वितीय कहानियोंका यह बहुप्रतीक्षित संग्रह अब आपके हाथों पहुँच रहा है।...कहानीके जिस नयेपनकी बार-बार चर्चा की जाती है कदाचित् नरेश मेहताकी कहानियाँ पहली बार उसका सार्थक प्रतिनिधित्व करनेमें सफल हुई हैं। एक विशेष बात यह कि नरेश मेहताकी कहानियाँ उनके रागात्मक बोधकी आधुनिक संचेतना, स्थितियोंकी कॉन्शस शालीनता, भाषाकी नयी अर्थवत्ता, पात्रोंके अभिनव परिपार्श्व, कविता-जैसी रसानुभूति करानेवाली संवेदनशीलता एवं यथार्थके नये सन्दर्भोंके कारण विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं।

आप देखेंगे कि 'एक समर्पित महिला'की कहानियोंकी सर्वाधिक प्रमुख विशेषता जहाँ इनकी अनूठी प्रतीक योजना और भाषाका कलात्मक सौष्ठव है वहीं अपने संश्लिष्ट गुणोंके कारण ये अभिव्यक्तिकी नयी मर्यादाएँ स्थापित करनेमें भी समर्थ हैं।

भारतीय ज्ञानपीठ

३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेष शताब्दी

मुखपृष्ठ : शब्दोंमें

[बिल्कुल बाँये ऊपर] एक चेहरा लालटेनकी तरह हिलता है अँधेरेमें। कहीं कोई फ़ानूस नहीं गुड्डे, कैसे बचेगी रो-श-नी! [उसके पास दाँये] क्रॉसवर्डका कंगूरेवाला मन्दिर। अपनी पसलियोंपर इक्के-दुक्के शब्द रखे....। दो अक्षरोंके बीच एक और अक्षर रख देनेकी सम्भावना पैदा करता है। अर्थ जो भी हो उसका, पहले खाली जगहके बीच कोई सार्थक अक्षर तो फ़िट कर। उस मन्दिरके बीच, किसी भी मशीनसे एक चक्र उठता है और खुदको देवताकी तरह प्रतिष्ठित कर लेता है....। देखा..मन्दिरमें वर्ड्स हैं, अँधेरे चौकोर हैं, खाली छेद हैं, लेकिन घण्टियाँ कहीं नहीं हैं..[और उसके नीचे] घूमता है प्रक्षेपण-चक्र—कभी हज़ार, कभी डेढ़ हज़ारकी गतिसे और चक्राकार स्वाहा बोलता जाता है....हर जगह समुद्र है, पैरोंपर, माथेपर....उसमें जहाज़ नहीं चलते, विस्फोटके परीक्षण होते हैं। केवल एक इच्छा है कि ये चक्र और ज़ोरसे घूमे, और ज़ोरसे, और ज़ोरसे..उस चक्रमें उँगलियाँ फँसा लेनेकी तबीयत है और फिर लहूलुहान उँगलियोंको किसीके शालीन दरवाज़ेपर पोंछ आनेको मन है। [चक्रके ठीक नीचे] एक उदास लड़की [उसके दाहिने] कच्ची उम्रका एक लड़का कल्पित घुड़सवारीमें खुश। [ऊपर] चाँद। [लड़कीके बाँये] सूखा हुआ दरख्त। [नीचे] एक पुल है जो किसी घरसे शुरू होता है और आँखोंको धोखा देनेवाली जगह तक पहुँचता है। पुलपर एक काला नक़ाबपोश चहलक़दमी कर रहा है और उससे आगे एटम, उसका ही ब्रह्मास्त्र। वह आज प्रदर्शक है।....हम भी गुज़रे हैं पुलपर-से। पुलोंपर-से गुज़रे

संकेत : १. ब्रैकेटमें—चित्रपर दृष्टि घुमानेके संकेत
२. बारीक अक्षर—चित्रका वर्णन
३. काले अक्षर—कोलाज जोड़ते समय भागते हुए विचार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं हम। अजीब बात है लेकिन उस पार पहुँच ही नहीं पाते। गोल रास्ते-जैसा पुल है। हर सुबह उसी जगह जा पहुँचते हैं जिस जगहको गालियाँ देकर आगे बढ़े थे। जिस जगह थूका था उसी जगहपर थककर बैठ जानेका उपक्रम···! ना, इत्ते उदास नहीं होते यार। आओ। उठो, मज़ाक़ करें— वसन्तकी प्रतीक्षा करें···

रुको, हालाँकि कोई नहीं रुकेगा, न आदमी, न एटम। फिर भी रुको··· क्या ऐसा नहीं हो सकता कि····देखो, यह भी अजीब हो गया है, आजकल कल्पना करनेसे मितली आती है। [बाँये घूमो] युडिली-युडिली-यू डी यू ि डी य ऽ ऽ। अपने शरीरमें-से उगकर एक हिप्पी सारे परिवेशपर हँसता है—'माई नेम इज रिंगो'··· यह लाँग-प्ले कहाँ चल रहा है आखिर जब कि पुल नक़बज़नी-पर उतर आया है। सड़कको सँभालनेवाली कमानी रह-रहकर थर्राती है [बिलकुल नीचे] हर तरहकी ग़लीज चीजें वहाँ हैं— दिल कचरेके ढेरमें अवमूल्यनके बाद। [कमानीके नीचे] कमरे हैं। वहाँ निर्वस्त्र व्यापार होता है। शरीरको ढँकनेकी ग़रजसे लैम्प पोस्टके पीछे लोग छिप जाते हैं। वहाँ बच्चे पैदा नहीं होते। संक्रामक कीड़े असंख्या-[illegible]य जनमते हैं, बहुत स्वस्थ साकार कीड़े— उनके पैरोंमें काला चक्का बँधा होता है। वे चाहे जहाँ स्की कर सकते हैं—जमीन-पर, गरदनपर, छातीपर····। वे पाँवोंमें सूर्यग्रहण बाँधकर उड़ते हैं। सहसा विक्षिप्त हो जानेको मन होता है कि लैम्पपोस्टपर उलटे टँग जायें या सड़क-पर फिसल जायें या जूतोंकी जगह कोई चक्का पहन लें····देखो, यह भी अजीब हो गया है, सोचते हैं तो थक जाते हैं जैसे कोई बोझ ढोकर ला रहे हों। [लैम्पपोस्टके दाँये] आँखोंको धोखा देनेवाली फ़र्श है। कलाका प्रतीक कमल है। कैसी ख़ूबसूरतीसे दिवालिया हुए हैं हम कि चित्रके नाम फ़र्श बनाते हैं····। वास्तुके नाम-पर छत सजाते हैं····। कविताके नामपर मुक्त छन्दोंमें विवशता रोते हैं····। कहानीके नामपर बेडरूमका नक़्शा बनाते हैं····। संस्कृतिकी याद आती है तो पुलके नीचे खिला कमलका फूल देखते हैं। वक़्तने ग़ज़ब ढाया कि कमल बग़ैर सूर्यके खिलता है····[फिर एकदम ऊपर बीचोंबीच] वहाँ एक बच्चेकी स्लेट पड़ी है। अ से अनार। अनार एक बना दिया। ए से एपिल। बचाओ इसे आदमकी नज़रसे। बी से बेट। सी से केट···· और दिन बीतते-न-बीतते चौथे आयामके सूत्र तक ज्ञान जा पहुँचता है। ऊर्जा। फ़ारमूले। साफ़्टलैण्डिग।···यार, कोई और चर्चा नहीं कर सकते कि जिससे ऊपर उठनेकी बजाय कुछ देर हम उस जगहपर ही रह सकें, जिस जगहपर अभी हैं? [फिर ऊपर। अब दाहिने] उत्तर नहीं मिलता गोल घूमते दक्षिण ध्रुव तक। वहाँ भी एक कम्प्यूटरका ही खयाल आता है जिसमें समीकरण और गुणन-भजन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फलके और कुछ नहीं। वहाँ एक त्रिपुटी है ना ! वहाँसे एक चाक़ू छूटता है—दिमाग़, नाक और ज़बान सब चाक़ू हैं। [नीचे] सिरोही पाइण्टपर एक पंछी फड़फड़ाकर उड़ता है। [और नीचे] एक उलझी हुई समस्याका काला चेहरा या काली समस्याका उलझा हुआ चेहरा....! उसकी आँखें आवेशसे लाल हैं। [उधर] एक तरफ़ हँसता हुआ विदूषक। [इधर] ग़ुस्सेमें तमतमाया निर्देशक। वह चाक़ू छूटता है, लपलपाता हुआ बेरोक गिरता है। वह कहीं भी, किसी भी देशके। किसी भी शहरके। किसी भी बस्तीके। किसी भी मकानमें बैठे। किसी भी स्वप्नके। किसी भी पुलपर गिर सकता है....। तो गिरने दो, गिरने दो उसे। उसे रोकनेमें वक़्त ज़ाया होगा। यह सही है दोस्त कि भयंकरसे भयंकर ग़ुस्से और हॉरर और हादसेमें भी मेरी तीसरी आँख नहीं खुली। दो आँखोंकी पुतलियाँ कठपुतलीकी तरह खुलती और बन्द होती रहीं। लेकिन अब जैसे तुम्हारे दिमाग़से चाक़ू छूटते हैं; मेरे माथेमें-से एक हाथ उभर आया है—[देख रहे हो ना हाथको—] तीसरा हाथ कि बीच यात्रा भी चाक़ू आ गिरे तो उसे हाथमें तौलिया लेकर झेल लेनेकी कोशिश करूँ...। मुझे लगा है [उकट दो सारे चित्रको] कि शताब्दीका यह तीसरा हिस्सा चाक़ू झेलनेका कैलेण्डर है।....ऐन इसी वक़्त उठकर कहीं चले जानेकी तबीयत है कि मुझे इस चित्र और खेलका साक्षी नहीं बनना....

—र० ब०

अनन्त शुभकामनाओं सहित—

विजय गोयनका

९३, सदर्न एवेन्यू

कलकत्ता

फ़ोन—४६-२६८५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar